बागमती की सद्गति!

डॉ दिनेश कुमार मिश्र

PSI

लोक विज्ञान संस्थान

देहरादून

बागमती की सद्गति!

© डॉ दिनेश कुमार मिश्र

प्रथम प्रकाशन : अक्तूबर 2010

प्रकाशक :
लोक विज्ञान संस्थान (People's Science Institute)
252, फ़ेज़-1, वसंत विहार
देहरादून-248006, उत्तराखंड
psiddoon@gmail.com

सज्जा एवं मुद्रण :
सिस्टम्स विज़न
ए-199, ओखला फेज़-1
नई दिल्ली-110 020
systemsvision@gmail.com

अपेक्षित सहयोग - ₹ 250/-

प्रकाशकीय

लोक विज्ञान संस्थान (People's Science Institute) के फ़ेलो दिनेश कुमार मिश्र की नई पुस्तक 'बागमती की सद्गति' आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुये हमें हर्ष हो रहा है। बिहार की बाढ़ आमतौर पर बागमती से शुरू होती है और कोसी या महानन्दा में जाकर समाप्त होती है। कोसी के बारे में, जहाँ जाकर बाढ़ पर बहस ठहर जाती है, दिनेश जी पहले ही अपनी पुस्तक 'दुइ पाटन के बीच में' बहुत कुछ लिख चुके हैं। 2008 में जब कोसी का पूर्वी एफ्लक्स बांध कुसहा में टूटा था तो उस समय कोसी और उसके तटबन्धों पर प्रामाणिक साहित्य के तौर पर यही पुस्तक उपलब्ध थी। यह महज़ इत्तिफाक था कि इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद 'Trapped! Between the Devil and Deep Waters' ठीक उसी समय प्रकाशित हुआ था। लोक विज्ञान संस्थान इन दोनों पुस्तकों का प्रकाशक होने के कारण खुद को गौरवान्वित अनुभव करता है। बागमती नदी पर उनकी नई पुस्तक पौराणिक काल से लेकर कल तक की घटनाओं पर एक दृष्टि डालती है। यह एक अनूठा संकलन है जिसमें इस नदी के साथ अब तक क्या हुआ, क्या हो रहा है और क्या होने को है–इन सारी बातों का समावेश है। इस नदी पर उपलब्ध सभी जानकारियों को दिनेश जी ने बड़े सलीके से एक जगह रखा है।

पुस्तक का लेखन-कार्य दिनेश जी ने अधिकांशतः बागमती घाटी क्षेत्र में ही रहते हुए संपन्न किया। आइ. आइ.टी. खड़गपुर के सिविल इंजीनियरिंग के विद्यार्थी के रूप में उनकी बाढ़ एवं सिंचाई के बारे में दक्षता तो है ही, उत्तर बिहार की नदियों के क्षेत्र में लगातार घूमते हुये उन्होंने धरातलीय वास्तविकताओं एवं सामाजिक अनुभवों को भी भली भांति देखा और परखा है। इस प्रकार प्रस्तुत रचना तकनीकी दक्षता एवं लोकप्रिय आंकाक्षाओं के प्रति संवेदना का एक ऐसा संगम है जिसे वर्तमान एवं भविष्य दोनों याद रखेगें। मिश्र जी की भाषा व शैली बिल्कुल सहज एवं लोकपरक है। वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों को सरल भाषा में पाठकों के सामने रखना उनका उद्देश्य भी रहा है।

बाढ़ के विषय में रुचि रखने वाले या भविष्य में नदियों पर काम करने वाले किसी भी व्यक्ति को बागमती नदी संबन्धी अब तक की घटनाओं, समस्याओं और बहस की जानकारी के लिए शायद किसी दूसरी जगह नहीं भटकना पड़ेगा। इस पुस्तक में जहाँ तकनीक और उसके हस्तक्षेप की सीमाओं, समाज की अपेक्षाओं, नदियों के साथ होने वाली राजनीति तथा परियोजना के भुक्त-भोगियों के मोह-भंग की चर्चा है, वहीं विकल्पों की ओर इशारे भी हैं।

पर्यावरण से जुड़े प्रश्नों के उत्तर खोजने और उनके कारणों की तलाश करने में अक्सर व्यक्ति या संस्थाओं के पूर्वग्रह के कारण भटकाव आता है और तब उनके द्वारा सुझाया गया समाधान भी दिशाहीन हो जाता है। किसी भी समाधान की मर्यादा और सीमा होती है जिसे समझना बहुत जरूरी है। दिनेश जी ने इस सारे आयामों से संलिप्तता रखते हुए भी उन्हें बड़े तटस्थ भाव से देखा है और यही इस पुस्तक की विशेषता है।

लोक विज्ञान संस्थान का विकल्पों के प्रति विशेष आग्रह रहा है और इस विषय पर हम लम्बे समय से काम कर रहे हैं। आम जन से दिनेश जी की सीधी वार्ता और उनकी समस्याओं के तथ्यपरक विश्लेषण का लाभ हमें और समाज को मिलता रहे इस शुभेच्छा के साथ हम कामना करते हैं कि उनकी लेखनी कभी रुके नहीं।

रवि चोपड़ा

लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून

People's Science Institute, Dehradoon

अपनी बात

17 नवम्बर 1952 की बात है जब पं० नेहरू ने सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ इरिगेशन ऐण्ड पॉवर के रजत जयंती समारोह में अपने उद्घाटन भाषण में कहा था, ''काश! कोई ऐसा बुद्धिमान और ज्ञानी पुरुष होता जो हमारी नदियों की कहानी लिखता। यह कहानी कितनी रोचक होगी... अगर कायदे से लिखी जाय तो यह कहानी बड़ी शानदार होगी। यह भी है कि इस काम का जिम्मा इंजीनियरों को नहीं दिया जा सकता क्योंकि यह उनका काम नहीं हैं। मैं इतना जरूर चाहता हूँ कि हर वह इंजीनियर जो इन नदियों पर काम करता है उसकी दृष्टि समस्याओं के प्रति कल्पनाशील हो। ऐसा होने पर जिस पानी के साथ आप काम कर रहे हैं वह पानी जिन्दा हो उठेगा। वह पत्थर भी जिसके साथ आप काम करेंगे, वह भी कोई न कोई कहानी सुनायेगा। मैं चाहता हूँ कि आप केवल बड़े इंजीनियर या सामान्य क्षमता के इंजीनियर ही न बनें वरन् एक साधारण और छोटा इंजीनियर ही बन कर देखें और तब ये मासूमियत भरी चीजें सोचें और उसे उन सभी लोगों के साथ बांटें जो आप के साथ काम कर रहे हैं।'' पं० नेहरू का कयास था कि यह कहानी इतिहास की किताबों में लिखी घटनाओं से कहीं ज्यादा जीवन्त होगी। इसमें नदियों के किनारे बसी सभ्यताओं और संस्कृतियों की कहानी होगी, नदियों के पवित्र पानी और सिंचाई की कहानी होगी, साम्राज्यों के उत्थान-पतन की कहानी होगी और यह गंगा घाटी के मैदानों में मानवता के विकास की कहानी होगी।

पं० नेहरू ने नदियों की कहानी लिखने वाले से बहुत बड़ी अपेक्षाएं रखी थीं। महाभारत काल में द्रौपदी ने भी अपने पति की योग्यता निर्धारित करते समय ऐसा ही वरदान मांगा तो उसे पाँच पुरुषों की सौगात मिली, तब जाकर कहीं उसके द्वारा स्थिर किये गये सारे गुण पूरे हो पाये। मैंने आज अकेले बिहार की एक नदी बागमती की कहानी लिखने की कोशिश की है और मैं बहुत ही विनम्रतापूर्वक यह कहना चाहूँगा कि मेरा कतई ''बुद्धिमान और ज्ञानी'' होने का दावा नहीं है और मैं अपने आप को अशान्त जिज्ञासा वाला एक 'साधारण और छोटा इंजीनियर' ही मानता हूँ। मुझे पं० नेहरू की बात अच्छी लगी और मैंने अपनी सामर्थ्य भर यह कहानी लिखने की गुस्ताखी की। पूरी कहानी कहने में शायद चार अन्य विद्वानों का साहचर्य जरूरी होता।

उधर प्रख्यात नदी चिन्तक आचार्य काका साहेब कालेलकर का बागमती के बारे में विचार था कि इतनी छोटी नदी की ओर किसी का ध्यान नहीं जायेगा... लेकिन बागमती ने एक ऐसा इतिहास प्रसिद्ध स्थान अपनाया है कि उसका नाम लाखों की ज़बान पर चढ़ा हुआ है। पता नहीं क्यों काका साहेब को दो देशों से गुज़रती हुयी 600 किलोमीटर लम्बी नदी छोटी लगी। इस नदी के किनारे विष्णु और शंकर का वास था। इस नदी के पानी को गंगा से कई गुना पवित्र मान कर धर्मग्रन्थ उसे मोक्ष की धारा मानते हैं। शान्ति का विस्तार ऐसा कि यह क्षेत्र सदियों से मनीषियों का साधना केन्द्र बना रहा। सूखी लाठी तक में अंकुरण की क्षमता रखने वाली इस नदी के उर्वरक गुण के कारण यह इलाका कभी धन-धान्य से जरूर सम्पन्न रहा होगा। इसमें से बहुत सी चीज़ों का लोप हो गया फिर भी बहुत कुछ बाकी है।

यह पुस्तक इन्हीं सब आयामों की कहानी है जिसमें बागमती के महात्म्य से लेकर उसकी चुहल तक की चर्चा है। कोसी के बारे में सभी जानते हैं कि वह चंचल नदी है और पूर्णियाँ से धारा बदलते हुये दरभंगा तक चली आयी। बड़े लोगों की बातें बड़ी होती हैं। मगर बागमती दरभंगा में कमतौल से लेकर मुजफ्फरपुर में मीनापुर तक घूमती रही, यह बात कितनों को मालुम है? फर्क बस इतना ही है कि इस घाटी के किसानों को नदी के पानी का उनके इलाके में घूमना बुरा नहीं लगता था, इससे उनके खेतों की उर्वरता बढ़ती थी।

इस नदी का आधुनिक काल लगभग वहीं से शुरू होता है जब नेहरू जी ने नदियों की कहानी लिखने का सुझाव दिया था। हम लोगों के यहाँ इतिहास लिखने का रिवाज़ ज़रा कम है इसलिए सूचनाओं का हमेशा अभाव बना रहता है। गंगा घाटी की नदियों का मसला अंतर्राष्ट्रीय होने के कारण सूचनाओं पर पाबन्दी कुछ ज्यादा ही है। आम तौर पर जल-संसाधन विभाग इसका फायदा उठा कर कोई मामूली सी सूचना भी देने से पहले पचास तरह के

सवाल पूछता है और सूचना के अधिकार के तहत सूचना मांगने पर उलटी-सीधी या आधी-अधूरी जानकारी देता है। बाघिन को खूंटे से बांध कर दुह लेना आसान है मगर सूचना निकालने में धैर्य और शौर्य की पूरी परीक्षा हो जाती है। यह सूचनाएं सरकार द्वारा नियुक्त समितियों को भी नहीं दी जाती हैं और इन्तिहा तब होती है जब कुछ वर्षों पहले तक विभाग के अभियंता प्रमुख (अब अवकाश प्राप्त) रहे व्यक्ति को, जो बिहार सरकार द्वारा नियुक्त एक तकनीकी समिति के अध्यक्ष थे, अपनी रिपोर्ट में लिखना पड़ा कि 'बार-बार रिमाइन्डर भेजने और खुद जाकर संपर्क करने के बावजूद' उन्हें सूचना नहीं मिली। मेरे लिए एक रास्ता बचता था कि विधान सभा, विधान परिषद् या लोक सभा जैसी संस्थाओं की कार्यवाही रिपोर्टों से जानकारी लेने की कोशिश करूँ क्योंकि वहाँ जो भी होता है वह सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध होता है और वहाँ बातें भी शपथबद्ध होकर कही जाती हैं। मैंने इस सुविधा का काफी फ़ायदा उठाया है मगर इस स्रोत की भी मर्यादाएं हैं।

इस पुस्तक के पहले से चौथे अध्याय में नदी के मूल तथा महात्म्य, उसकी बदलती धाराओं, बाढ़, सिंचाई तथा नेपाल में प्रस्तावित बांध की चर्चा है। पांचवें अध्याय में राहत कार्यों की जरूरत, उसके प्रति प्रशासकों और भुक्त भोगियों का नजरिया और राहत मांगने वालों पर लाठी-गोली के प्रयोग की घटनाओं की चर्चा है। अध्याय छः से आठ में बागमती घाटी में पानी की बाढ़ के समय प्रचुरता को लेकर उभरे द्वन्द्व और संघर्षों की घटनाओं का वर्णन है जो किसी भी संवेदनशील व्यक्ति को झकझोर देने की क्षमता रखती हैं। अध्याय नौ, दस और बारह में बागमती घाटी के ऊपरी और निचले क्षेत्रों की समस्याओं और उनके समाधान के लिए अब तक किये गये प्रयासों और उसके परिणामों की चर्चा है। अध्याय ग्यारह इन परियोजनाओं में पिछले 50-55 वर्षों की पुनर्वास की स्थिति को पारिभाषित करता है।

अंतिम अध्याय तेरह में पिछले लगभग दस वर्षों में हमने इस घाटी में सरकार द्वारा किये गये प्रयासों की समीक्षा की है तथा कुछ ऐसे काम सुझाये हैं जिनको स्वीकार कर लेने से स्थिति में कुछ सुधार जरूर आ सकता है। बाढ़ समस्या का पूरा-पूरा समाधान कर देने और पांच वर्षों में खेती लह-लहा देने के वायदे राजनीतिज्ञ ही कर सकते हैं। किसी भी काम की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसे हासिल करने के लिए कितनी मेहनत की गयी। केवल 'मनोरथ' से कोई काम सिद्ध नहीं होता।

फ़ारसी में एक संयुक्त शब्द होता है 'हर्फ़े-मुकर्रर' जिसका अर्थ होता है दुबारा कही गयी बात। इस पुस्तक का एक-एक शब्द या भाव मुझसे पहले किसी न किसी के द्वारा कहा जा चुका है और इस लिहाज़ से इस पुस्तक में नया कुछ भी नहीं है। बस, यह पुस्तक इन सारी बातों को एक क्रम में रखने की कोशिश भर है। ऐसी बात कहना जो पहले कभी कही ही न गयी हो आदमी को फरिश्ता बनाता है और ईश्वरत्व की ओर ले जाता है। एकदम नई बात कहना मेरे जैसे 'साधारण और छोटा इंजीनियर' के लिए संभव नहीं है। मैं अपनी ज़मीन नहीं छोड़ना चाहता हूँ। आशा है पाठकगण इस मर्यादा का ध्यान रख कर ही इस कहानी का मूल्यांकन करेंगे।

25 सितम्बर 2010 **(दिनेश कुमार मिश्र)**

भनसपट्टी, सीतामढ़ी

उद्‌गार

“ हमारे यहाँ सक्षम की परिभाषा थोड़ी भिन्न है। जिसके पास खोने के लिए कुछ भी नहीं था वह सक्षम था, वह गरीब भूमिहीन पुनर्वास में गया और जिसके पास घर-द्वार, खेती-बाड़ी थी वह उसे छोड़ कर जाने में अक्षम था, वह पुरानी जगह पर ही रह गया। ”

“ मैंने लोगों से पूछा कि यहाँ की नाव क्या हुई तो लोगों ने बताया कि चूंकि नाव पुरानी हो गयी थी इसलिए यहाँ के बी०डी०ओ० साहब ने उसको चिरवा कर जलावन में लगा दिया। ...यहाँ पर जो 20-22 नावें थीं उनको पुरानी करार कर बी०डी०ओ० साहब ने उनको चिरवा कर जलावन में लगा दिया है। ”

“ आपने ठेहा देखा है? यह लकड़ी का वह टुकड़ा होता है जिसे जमीन में थोड़ा गाड़ देते हैं और उसी पर रख कर गंड़ासे से चारा काटते हैं। गंड़ासे की हर चोट ठेहे पर पड़ती है और वह धीरे-धीरे कट कर समाप्त हो जाता है। हमारी स्थिति ठीक वैसी ही है। हर साल थोड़ा-थोड़ा कर के नदी हमारी जिन्दगी को कम कर रही है और हम चोट खाने के अलावा कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं हैं। ”

“ वहाँ एक ओर जरूरतमन्द और परेशान हाल लोग थे तो दूसरी ओर मौके का फायदा उठाने वाले क्षमतावान सरकारी अफसर। ऐसी परिस्थितियाँ भ्रष्टाचार की उत्पत्ति के लिए खाद-पानी का काम करती हैं और थोड़े ही दिनों में यह खेती लहलहाने लगती है। बागमती परियोजना में यह कहानियाँ गढ़ी नहीं गईं, बस दुहराई भर गईं। ”

“ खेतों पर गाद की जगह बालू पड़ने लगा। इस परिस्थिति से निपटने के लिए किसानों की तैयारी नहीं थी जिससे किसानों को नुकसान पहुँचने लगा और उनकी हालत खराब होने लगी। स्थानीय रोजगार खतम हो गया और पहले मजदूर और बाद में किसान भी पलायन के लिए मजबूर हुए। ”

“ मैंने यहाँ ब्लॉक में भुगतान के लिए बात की तो मुझसे कहा गया कि डुमरा जाइये। वहीं पैसा मिलेगा। डुमरा गए तो वहाँ का किरानी घूस मांगता है। यहाँ पेट में दाना नहीं है, उस कफन घसीट को घूस कहाँ से देंगे? एक हजार रुपया मांगता था। वहीं सीतामढ़ी में मेरी एक बेटी रहती है उससे कुछ पैसा लेकर दिया। ”

“ बरसात में तो मौत दोनों के सामने खड़ी होती है चाहे वह तटबन्ध के अन्दर रहता हो या उसके बाहर। तटबन्ध के अन्दर रहने वाले लोग नदी के व्यवहार को फिर भी समझते हैं और अगर वह पानी की वजह से मरते हैं तो उनको मरते हुए देखा जा सकता है। बाहर वाला, जो कि सुरक्षित क्षेत्र में रहता है, जब वह तटबन्ध टूटने के समय मरता है तो वह बह कर कहाँ चला गया किसी को भी दिखाई नहीं पड़ता। ”

“ हम लोग कलक्टर से यह पूछने के लिए गए कि हम लोग इस देश के नागरिक हैं या नहीं जो हमें इस तरह खदेड़ा जा रहा है। अगर बागमती परियोजना के कारण हमारी नागरिकता समाप्त हो जाती है तो आप हुक्म कीजिये, हम नेपाल में जाकर बस जाते हैं। ”

“ यह इलाका टापू बनेगा जब रुन्नी सैदपुर से आगे चलता हुआ तटबन्ध हायाघाट में इसमें जुड़ जायेगा। जो पानी 10-15 किलोमीटर में फैल कर बहता है उसे पौन किलोमीटर में बहाइयेगा तो जो होगा वह किसी से छिपा है क्या? आज पानी खिड़की से होकर जाता है, कल छप्पर के ऊपर से जायेगा। दरभंगा से खगड़िया तक सब बरबाद होगा। ”

“ भांग और धतूरा भी पैदा नहीं होता इस अन्दर वाली ज़मीन पर। पहले दिल्ली-पंजाब लोग जानते नहीं थे, अब दिल्ली-पंजाब हमारी जरूरत हैं। बाहर से लोग पैसा न भेजें तो हमारे घरों में चूल्हा न जले। ”

आभार

इस पुस्तक की तैयारी में मुझे बहुत से मित्रों और शुभचिंतकों का सहयोग मिला है। बिहार की बाढ़ समस्या के बारे में मेरी पहली बातचीत रघुपति जी के सौजन्य से 25 सितम्बर 1985 को बिहार के भूतपूर्व चीफ़ इंजीनियर अखौरी परमेश्वर प्रसाद से हुयी थी। इस बातचीत के कैसेट मेरे पास अभी भी मौजूद हैं। मैंने बागमती क्षेत्र की पहली यात्रा रघुपति जी के ही साथ 1986 में की थी। उस समय मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मैं इस नदी पर कोई पुस्तक लिखूंगा। बाद में इस विषय में जब मेरी रुचि जगी तब मैंने जल-संसाधन विभाग-बिहार के बहुत से भूतपूर्व चीफ इंजीनियरों यथा सर्वश्री अवध कुमार, दिनेश प्रसाद वर्मा, सी० के० पाण्डेय, वाई० एन० सिंह, बसावन सिंह, पी० एन० त्रिवेदी, जगदीश पाण्डेय, राजेन्द्र उपाध्याय, कुबेर नाथ लाल, एस० सी० सिन्हा और अमल दासगुप्ता आदि से बहुत कुछ सीखा। यह सभी महानुभाव बिहार के जल संसाधन विभाग के महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर चुके हैं।

आइ०आइ०टी. (खड़गपुर), सिंचाई विभाग-उत्तर प्रदेश (लखनऊ), राष्ट्रीय पुस्तकालय और एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल (कोलकाता), बिहार विधान सभा, बिहार विधान परिषद्, सिन्हा लाइब्रेरी-पटना, बिहार रिसर्च सोसाइटी (पटना) और वैशाली विकास परिषद् (वैशाली), आदि में उपलब्ध दस्तावेज़ों से मुझे लिखने में बहुत सहायता मिली है। मैं इन सभी संस्थाओं के अधिकारियों को धन्यवाद देता हूँ। मा० उदय नारायण चौधरी ने मुझे बिहार विधान सभा और मा० ताराकान्त झा ने बिहार विधान परिषद् पुस्तकालय में पढ़ने की इज़ाज़त न दी होती तो इस पुस्तक का यह रूप कभी नहीं होता।

बागमती की पौराणिक गाथाओं को खोजने में नेपाल के राम मनोहर साह ने मुझे सूत्र दिये और सी० के० लाल ने बौद्ध साहित्य से मेरा परिचय करवाया। राज बिराज के देव नारायण यादव के साथ मैंने बागमती के उद्गम तक जाने का प्रयास किया और इस नदी के विस्तीर्ण क्षेत्र की यात्राएं मैंने रतन भंडारी और राम चन्द्र चटौत के साथ की। अजय दीक्षित और गोपाल शिवकोटी 'चिन्तन' ने मुझे नेपाल में नदी की समस्याओं के बारे में जानकारी दी। चन्द्र किशोर झा और नेपाल रेड क्रॉस के अधिकारियों ने मुझे गौर बाजार की समस्याओं से अवगत करवाया। मैं नेपाल के इन सभी मित्रों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

भाई ओम प्रकाश और मोती लाल के साथ मुझे कई बार बैरगनियाँ और उसके आस-पास का इलाका घूमने का मौका मिला। नागेन्द्र प्रसाद सिंह के साथ मैंने कई बार सीतामढ़ी/शिवहर जिले में बागमती की यात्राएं कीं। नागेन्द्र कुशवाहा (शिवहर) और नागेन्द्र पासवान (इब्राहिमपुर) ने अपने क्षेत्र की सामाजिक परिस्थितियों से मुझे अवगत करवाया। एडवोकेट अनिल कुमार सिंह ने पुनर्वास की स्थिति के बारे में मुझे तथ्यपूर्ण जानकारी दी। मैं इन सब को उनकी सदाशयता के लिए धन्यवाद देता हूँ।

सीतामढ़ी के जिस काला पानी के बारे में इस पुस्तक में ज़िक्र है उसे दिखाने में अथरी के सर्वश्री भूपेन्द्र सिंह और राम सेवक सिंह, बाराडीह के अध्यापक राम तपन सिंह और रामनगर के प्रेम शंकर सिंह ने मेरा मार्ग दर्शन किया। इसके बारे में पहली जानकारी मुझे सीतामढ़ी के प्रो० अवध किशोर से मिली थी। गोयनका कॉलेज सीतामढ़ी के भूतपूर्व प्रधानाध्यापक, प्रो० दरबारी सिंह और समाजकर्मी बिन्देश्वरी सिंह ने मुझे 1970 के दशक के बागमती-अधवारा योजना क्षेत्र में चले आन्दोलनों के बारे में बताया। इन्हीं लोगों के सौजन्य से मैं लोहासी-ओइना कांड का उद्भेदन कर पाया। मैं इन सबको साधुवाद देता हूँ।

पचनौर के महाबीर राय के साथ मैंने प्राय: पूरे सीतामढ़ी/शिवहर की खाक छानी और उनके साथ मुजफ्फरपुर के गायघाट तक की यात्राएं कीं। उसके बाद हायाघाट तक और उसके आस पास के क्षेत्रों में मैं मोरों (दरभंगा) के उमेश राय के साथ घूमता रहा। हायाघाट के नीचे बदलाघाट तक बरहेता के कृष्ण कुमार कश्यप और कुंडल के बबलू सिंह ने मेरी रहनुमाई की। यही काम खगड़िया में प्रेम कुमार वर्मा और एक बार फिर महाबीर राय ने किया। महिषी (सहरसा) के राजेन्द्र झा की चानपुरा में अमर नाथ चौधरी के यहाँ रिश्तेदारी होने की वजह से मुझे वहाँ संपर्क खोजना नहीं पड़ा। चानपुरा के प्रो० सतीश चन्द्र झा और नरेन्द्र चौधरी ने वहाँ का पूरा किस्सा मुझे बताया और महत्वपूर्ण जानकारियाँ दी। चानपुरा के बारे में मुझे मा० ताराकान्त झा, वर्तमान सभापति-बिहार विधान परिषद, ने काफी पहले बताया था। मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

बागमती के अध्ययन के क्रम में भनसपट्टी के पूर्व मुखिया कैलाश साह के घर पर मैं दो महीने के करीब रहा होऊँगा और वह मेरे साथ लम्बे समय तक घूमते रहे और सीतामढ़ी गोली कांड तथा औराई गोली कांड के बारे में जानकारी इकट्ठा करने में मेरी मदद की। रक्सिया के डॉ० मुहम्मद मुन्ने ने आस-पास के क्षेत्र की बहुत जानकारी मुझे दी। सतेन्द्र प्रसाद ने बागमती परियोजना से सूचनाएं एकत्र करने में मेरा साथ दिया। जितेन्द्र कुमार की सीतामढ़ी में संस्था होना मेरे बहुत काम आया। मेरी किसी भी जरूरत का ख्याल डॉ० रामबली सिंह रखते थे। कोड़लहिया के चन्द्र भूषण कुमार ने बागमती के ड्रेनेज और उसकी बदलती हुयी धाराओं के बारे में बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारियाँ मुझे दीं। मैं इन सबके सहयोग का आभार मानता हूँ।

दिल्ली के सर्वश्री डॉ० सुधिरेन्द्र शर्मा, राकेश भट्ट, गोपाल कृष्ण, हिमांशु ठक्कर, स्वरूप भट्टाचार्य, आशिष कुमार 'अंशु', विनय आदित्य तथा राहुल चौधरी ने बागमती की समस्या में बहुत रुचि ली। दिल्ली के स्तर पर आवश्यकता पड़ने पर सूचनाएं एकत्र करने में इन सभी ने मेरी बहुत मदद की। आते-जाते रहने तथा चित्रों सहित बहुत सी सामग्री उपलब्ध कराने के लिए मैं उन्हें याद करता हूँ। पुस्तक के मुद्रण में श्री विनय आदित्य के सहयोग ने इसका स्वरूप निखारा तथा श्रीमती अर्चना आदित्य के भाषा तथा व्याकरण संबन्धी बहुत से नुक्तों ने कथन का प्रवाह सुधारा। मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

प्रो० सी० पी० सिन्हा और डॉ० टी० प्रसाद से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।

बिहार विधान परिषद से संबद्ध सर्वश्री डॉ० भैरव लाल दास, डॉ० अजय कुमार सिन्हा और अरुण नारायण ने पुस्तकालय में साहित्य खोजने में मेरी मदद की। विधान सभा पुस्तकालय में सुश्री सुजाता मिश्र तथा डॉ० ए० के० सिंह ने दस्तावेजों की व्यवस्था मेरे लिए कर दी। मैं इन सब के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

दिनेश कुमार और मो० जमील असगर ने पुस्तक को संवारने में मेरी मदद की। रन्जीत के चित्रों का मैंने दिल खोल कर उपयोग किया। मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

सर्वश्री शिवानन्द भाई, रामचन्द्र खान, आचार्य नाज़िम रिज़वी, (स्व०) महावीर प्रसाद महतो और (स्व०) नागेन्द्र सिंह से मिले सहयोग के बिना मेरे तर्क का आधार खिसक जाता। वैशाली के भूतपूर्व विधायक (स्व०) नागेन्द्र जी ने बहुत से पुराने काग़ज़ात अपने संग्रह से मेरे हवाले कर दिये। डॉ० जसमीन कंठ ने जल-संस्कृति के बारे में मेरा ज्ञान वर्द्धन किया। उन सब के सहयोग के बिना पुस्तक का स्वरूप कभी प्रामाणित नहीं हो पाता। मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

डॉ० अजय कुमार (पटना) के सौजन्य से कृषि संबंधी बहुत सी सूचनाएं मुझे मिलीं, मैं उन्हें भी धन्यवाद देता हूँ। इसके साथ ही मैं उन सभी लोगों का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय मुझे दिया और मेरा ज्ञानवर्धन किया। इनमें से बहुत लोगों को मैंने उद्धृत भी किया है और यथासंभव कोशिश की है उनके विचारों को उन्हीं के शब्दों में रख सकूँ।

डॉ० जगन्नाथ मिश्र-भूतपूर्व मुख्यमंत्री, बिहार, श्री हरि किशोर सिंह-भूतपूर्व केन्द्रीय विदेश राज्य मंत्री, श्री गणेश प्रसाद यादव तथा गजेन्द्र प्रसाद सिंह-भूतपूर्व मंत्री, बिहार, पूर्व विधायक श्री राम स्वार्थ राय, विधायक श्री दिनकर राम, श्री रघुनाथ झा-पूर्व मंत्री, बिहार सरकार तथा सांसद, श्री नवल किशोर शाही-पूर्व मंत्री, बिहार सरकार तथा पूर्व सांसद नवल किशोर राय से मैंने बहुत कुछ सीखा। मैं इन सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ।

कवीन्द्र कुमार पाण्डेय हर तरह की विपरीत परिस्थितियों में भी मेरा साथ देते गये और खोज-खोज कर सूचनाएं और संपर्क लाने के साथ-साथ उन्होंने पुस्तकालयों में मेरे साथ बहुत समय बिताया। उनके सहयोग के बिना यह काम कभी पूरा नहीं होता। प्रमोद कुमार राय ने पटना और सीतामढ़ी दोनों जगहों में मेरा ख्याल रखा। ज़कीउद्दीन ने पता नहीं कितनी बार चेहरे पर कोई शिकन लाए बिना स्क्रिप्ट का प्रूफ निकाला होगा। इन सभी के प्रति मैं विशेष रूप से अपना आभार प्रकट करता हूँ।

लोक विज्ञान संस्थान-देहरादून के डॉ० रवि चोपड़ा ने प्रकाशन का भार अपने ऊपर लिया। सर्वश्री सलिल दास, दिनेश शर्मा और सुश्री पुष्पा जुयाल के सहयोग के लिए मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

सेन्टर फॉर वर्ल्ड सॉलिडैरिटी, हैदराबाद के सर्वश्री एम० वी० शास्त्री, डॉ० ज्ञान प्रकाशम् और बी० सोमाशास्त्री तथा डॉ० रुक्मिणी राव की रुचि, उत्साहवर्धन और सहयोग के बिना यह कार्य संभव ही नहीं हो सकता था। पुस्तक के प्रकाशन में सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट, मुंबई के सहयोग और समर्थन को मैं बड़ी कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार करता हूँ।

दिनेश कुमार मिश्र

भइया डॉ कैलाश कुमार मिश्र
और
भाभी श्रीमती जानकी मिश्र
को समर्पित

“ यह बड़ी अजीब बात है कि जिस एन०डब्लू०डी०ए० पर राज्य सरकार उसके हितों की अनदेखी का आरोप लगाती रही है, उसी के पास वह इन योजनाओं का डी०पी०आर० बनवाने के लिए चली जाती है। ”

“ ...1987 की अप्रत्याशित बाढ़ अवधि में कुल 104 स्थानों पर क्षति पहुँची जिनमें से 27 स्थानों पर दरारें पड़ीं और 77 स्थानों पर असामाजिक तत्वों के द्वारा तटबन्धों को काट दिया गया।'' सरकार ने यह नहीं बताया कि 27 जगह तटबन्ध अगर उसकी लापरवाही से टूटे तो क्या यह एक महान सामाजिक कार्य था? ”

“ टुकड़े-टुकड़े में हाथ में लिए गए कार्यक्रम समस्या का समाधान नहीं करते वह समस्या को सिर्फ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाते भर है। जिसके दरवाज़े पर समस्या पहुँचायी जाती है वह निश्चित रूप से कमजोर होता है। ”

“ बांध क्यों टूटता है? सरकार कह सकती है कि चूहों के बिल के कारण टूटता है, मैं कहता हूँ कि जब आप चूहों के बिल को नहीं बन्द कर सकते हैं तो आप क्या कर सकते हैं? अगर चूहों के बिल को नहीं बन्द कर सकते हैं तो आप को चूहे के बिल में ही चले जाना चाहिये। ”

“ मैं कुछ वर्षों तक असम में रहा था और एक ठेकेदार के लड़के को ट्यूशन पढ़ाता था। वहां भी नदियों पर तटबन्ध बने हुए हैं और वह अक्सर टूटते रहते हैं। मैंने एक बार ठेकेदार से पूछा कि आप लोग तटबन्ध को मजबूती से एक बार बांध क्यों नहीं देते कि कुछ दिन तक चले। उसका कहना था ''...एक बार ठीक से बांध देने पर कुछ साल चलेगा तो जरूर, पर इस बीच क्या हम लोग सारंगी बजायेंगे? हमको भी तो काम और पैसा चाहिये। ”

“ राज्य का जल-संसाधन विभाग बहुत बड़ा है, असंगठित है, उसमें जरूरत से ज्यादा लोग काम करते हैं... आज इस विभाग की जो व्यवस्था है, प्रबन्धन है, नियुक्त कर्मचारियों का स्वरूप तथा उनकी क्षमता है, उसकी पृष्ठभूमि में यह विभाग बहु-आयामी बड़ी परियोजनाओं का क्रियान्वयन करने में अक्षम है। ...फील्ड के स्तर पर तो हालात इससे भी बदतर हैं। ”

“ इसके अलावा 1993 में बागमती नदी के बसबिट्टा से लेकर रुन्नी सैदपुर तक जो 14 दरारें पड़ी थीं, उसको विभाग साफ तरीके से हजम कर गया। इस रहस्य की खोज की जानी चाहिये कि विभाग ने मांगने पर भी तटबन्धों के टूटने की घटनाओं की सूची नीलेन्दु सान्याल समिति को क्यों नहीं दी। ”

“ पुपरी से आगे मरीज नहीं जाता, उसकी लाश ही जाती है बरसात में। हम लोगों की मांग है कि जो कुछ भी पानी का नियंत्रण या वितरण करना है वह यथा संभव ऊपर की ओर कीजिये जिससे उसका वितरण आसान हो सके। सरकार कहती है कि हम नियंत्रण नीचे करेंगे और पानी को ऊपर भेजने का प्रयास करेंगे। उस हालत में जब नीचे एक मर्द पानी खड़ा होगा तब तो हमारे यहाँ टखने भर पानी पहुँचेगा। यह छोटी सी बात हम उन्हें कैसे समझायेंगे? नीचे अगर इतना पानी खड़ा होगा तो क्या उधर के गाँव वाले बांध को रहने देंगे? वह उसे काट देंगे। ”

विषय सूची

		पृ॰ सं॰
1.	बागमती कथा	1–22
2.	बागमती घाटी की सिंचाई समस्या	23–34
3.	बागमती घाटी की बाढ़ समस्या	35–53
4.	बागमती नदी पर प्रस्तावित नुनथर बांध	54–69
5.	रिलीफ़-नकारने से लेकर गोली खाने तक की यात्रा	70–82
6.	बागमती नदी और काले पानी की कथा	83–92
7.	लखनदेई तटबन्ध के कारण हुआ नरसंहार	93–97
8.	चानपुरा रिंग बांध	98–108
9.	अधवारा समूह की नदियों के नियंत्रण और सिंचाई व्यवस्था की स्थिति	109–115
10.	करेह कथा	116–125
11.	बागमती परियोजना और पुनर्वास	126–159
12.	जुड़वाँ शहर-भारत का बैरगनियाँ और नेपाल का गौर बाज़ार	160–163
13.	तुम्हीं बताओ कि क्या राह अख्तियार करें?	164–188

नक्शों की सूची

चित्र-1.1	उत्तर बिहार तथा उसकी नदियों का सूचक मानचित्र	1
चित्र-1.2	अपनी सहायक धाराओं सहित नेपाल में बागमती	3
चित्र-1.3	बागमती परियोजना का सूचक मानचित्र	7
चित्र-1.4	जेम्स रेनेल के समय की बागमती की धारा (1780)	9
चित्र-1.5	विलियम हण्टर द्वारा बतायी गयी बागमती की धारा (1877)	10
चित्र-1.6	ओ' मैली द्वारा तैयार किया गया बागमती का प्रवाह पथ (1907)	11
चित्र-1.7	बागमती की विभिन्न धाराएँ	12
चित्र-1.8	अधवारा समूह की नदियों का सूचक मानचित्र	15
चित्र-2.1	सिंचाई के कुछ पारम्परिक साधन	24
चित्र-6.1	काला पानी का सूचक मानचित्र	84
चित्र-8.1	चानपुरा और उसका रिंग बांध	99
चित्र-8.2	चानपुरा में निर्मित बांध की वर्तमान स्थिति (जून 2010)	106
चित्र-10.1	कोसी, कमला और बागमती का निचला छोर	116
चित्र-12.1	नेपाल का रौतहट जिला	163
चित्र-13.1	भारत की प्रस्तावित नदी जोड़ योजना	166
चित्र 13.2	तटबन्धों के अन्दर अवस्थित गाँवों में बाढ़ के पानी के पहुँचने का क्रम	186
चित्र 13.3	हेमपुर के पास कोसी के पूर्वी तटबन्ध में पड़ी दरार के कारण पानी का फैलाव	187

तालिकाओं की सूची

तालिका-1.1	बिहार में बागमती घाटी के जिलों का संक्षिप्त परिचय	17
तालिका-3.1	1962 में कोसी के तटबन्ध निर्माण के बाद तथा 1974 में कोसी नदी के तल की स्थिति	51
तालिका-11.1	पुनर्वास कार्यालय-बागमती परियोजना, सीतामढ़ी के अन्तर्गत पूर्ण रूप से पुनर्वासित परिवारों की ग्रामवार सूची	132
तालिका-11.2	अपूर्ण पुनर्वास वाले गाँवों का विवरण	135
तालिका-13.1	बिहार की विभिन्न नदियों के तटबन्धों में टूटन	174
तालिका-13.2	बागमती तटबन्ध में अब तक पड़ी दरारें (ढेंग से रुन्नी सैदपुर)	175

“ व्यवस्था की स्थिति बैलगाड़ी के एक ऐसे गाड़ीवान की है जो उस पर माल लाद कर काठी में लालटेन टांग कर सो जाता है और उसके बैल अपनी रफ्तार से चलते रहते हैं। बीच-बीच में अगर कभी गाड़ीवान की नींद खुलती है तो वह बैलों पर दो एक चाबुक चला कर उन्हें अपनी मौजूदगी का एहसास दिला कर फिर सो जाता है। ”

“ नेपाल से इसकी सहमति लेना भी कोई आसान काम है क्या? हम लोग बोलते रहते हैं? वोट लेना है तो भाषण भी चलता रहता है लेकिन यह सब संभव नहीं दिखता। यह स्थिति बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण है। जब हम सत्ता में होते हैं तब विपक्ष हमें दोष देता है, जब हम विपक्ष में होते हैं तो वही काम हम करते हैं। यह सारी बातें जनता के हितों के विरुद्ध जाती हैं। जनता जब किसी या सारी पार्टियों पर कुछ भी न करने का आरोप लगाती है तब वह एकदम सही होती है। इस पर राजनीति होनी नहीं चाहिये। पाँच साल लालू प्रसाद जी केन्द्र में मंत्री थे, 6-6 साल रामबिलास पासवान और नीतीश कुमार जी भी केन्द्र में मंत्री थे। क्यों नहीं तब कुछ हुआ? जनता खंडित है, उसका कोई संगठन नहीं है और इसलिए इन समस्याओं के प्रति कोई पार्टी भी गंभीर नहीं हैं क्योंकि उसे उनके वोट के अलावा और किसी चीज़ से मतलब नहीं है। ”

“ व्यावहारिक तौर पर जल-संसाधन विभाग, आपदा प्रबंधन विभाग के लिए काम का जुगाड़ करता है जिसकी उसे पहले से कोई जानकारी नहीं होती। अब जल जनित ‘विपत्ति’ का सारा दायित्व आपदा प्रबंधन विभाग पर आ जाता है। अच्छा यह होता कि इन दोनों विभागों को एक ही मंत्रालय के अधीन कर दिया जाए ताकि आपदा प्रबंधन विभाग को कम-से-कम यह पता तो रहेगा कि उसका सहयोगी उसके लिए क्या-क्या मुसीबतें पैदा करने वाला है। ”

“ दुर्भाग्यवश 14 सितम्बर 2006 के दिन जो नया पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन कानून (एनवरायनमेन्टल इम्पैक्ट असेसमेन्ट ऐक्ट 2006) प्रभावी हुआ उसमें अब तक चली आ रही बाढ़ नियंत्रण परियोजनाओं के मूल्यांकन का प्रावधान वापस ले लिया गया और आम जनता का अपनी बात कहने का वह रास्ता भी बन्द हो गया। अब सरकार को खुली छूट है कि वह बाढ़ नियंत्रण की इस योजना पर किसी बहस से बच निकले और अपनी मनमानी करे। ”

“ परियोजना ने न जाने कितनी जमीन अपने कार्यालयों के नाम पर खरीद कर बरबाद की। सीतामढ़ी में डुमरा के पास, शिवहर में, सुप्पी में, गम्हरिया में, देकुली मठ के पास और न जाने कहाँ-कहाँ किसानों की जमीन ली गयी। गम्हरिया के पास सरकार की कितनी जमीन बरबाद पड़ी है। मशीनों में जंग लग गया। सुप्पी कॉलोनी में प्रखंड कार्यालय चल रहा है वरना लोग खिड़की दरवाजे ले गए होते। ”

“ 27 की रात की खबर है कि पेट्रोमैक्स जला कर इंजीनियर लोग ताश खेलते रहे और नदी अपना काम करती रही, बांध के किनारे को काटती रही। यह आपके सिंचाई विभाग का काम है। इससे बढ़कर अक्षमता–अकर्मण्यता और अपराध की कहानी सिंचाई विभाग की और क्या हो सकती है? ”

“ जो अभियंता बांध के मेन्टीनेन्स के चार्ज में हैं उनको आप ससपेन्ड कीजिए। उन्हें मीसा के अन्दर, डी० आई० आर० के अन्दर बंद कीजिए। नहीं तो, इमर्जेन्सी का कोई माने नहीं है; क्योंकि कोई वजह नहीं है कि लोग मेन्टीनेन्स के चार्ज में रहें और बांध टूट जाय। ऐसा नहीं करेंगे, तो बाढ़ का दौर चलता रहेगा। आप दस-पाँच अभियंताओं को पकड़ कर बन्द नहीं करते हैं, जिनकी गलती से बांध टूटा है तो यह बाढ़ आती ही रहेगी। ”

1

बागमती कथा

1.1 परिचय

बागमती उत्तर बिहार के (चित्र-1.1) मिथिला अंचल की एक बहुत ही महत्वपूर्ण नदी है जिसका उद्गम नेपाल में काठमाण्डू से 16 किलोमीटर उत्तर-पूर्व दिशा में शिवपुरी पर्वतमाला में समुद्रतल से प्रायः 2800 मीटर ऊपर पड़ता है। नेपाल में इसे सप्त-बागमती भी कहते हैं जो कि मणिमती, रुद्रमती, हनुमती, विष्णुमती, भद्रमती, मनोहरा की बागमती के साथ सम्मिलित धारा है (चित्र-1.2)। नीचे चल कर इस नदी में कुलेखानी, कोखाजोर, मरिन, चण्डी तथा झांझ आदि नदियाँ मिल जाती हैं। पहाड़ों से उतरती हुई यह नदी भारत की सीमा को छूने के पहले 195 किलोमीटर की यात्रा तय कर लेती है। नेपाल के आठ जिलों नामशः काठमाण्डू, ललितपुर, भक्तपुर, कव्रे, मकवानपुर, सिंधुली, रौतहट और सरलाही होकर गुज़रने वाली बागमती नदी पहाड़ों से नुनथर के पास में उतरती है। यहाँ से यह लगभग 70 किलोमीटर सीधे दक्षिण दिशा में चल कर बिहार के सीतामढ़ी जिले में ढेंग के उत्तर शोरवतिया गाँव में प्रवेश करती है।

नेपाल में इन सभी नदियों के किनारे हिन्दुओं के बहुत से महत्वपूर्ण तीर्थस्थान हैं। विश्वास किया जाता है कि विष्णुमती और बागमती के संगम पर भगवान विष्णु का वास था और यह नदी उनके चरणों को छूते हुए बहती थी। बागमती और विष्णुमती के मध्य भाग को सिद्धभूमि कहते हैं। यहाँ पाप नहीं रहता है। हनुमती वह नदी है जिसके किनारे संजीवनी बूटी की खोज में जब हनुमान हिमालय आये थे और संजीवनी को पहचान न पाने के कारण पूरा का पूरा द्रोणगिरि पर्वत ही उठा कर उड़ गए थे तब इसी नदी के किनारे उन्होंने कुछ काल के लिए विश्राम किया था। इसी तरह मनोहरा और बागमती के बीच की भूमि धर्मवर्द्धिनी है और उसे धर्मभूमि कहते हैं। भगवान विष्णु द्वारा मणिपर्वत पर तपस्या करते समय उनके श्रम के कारण जो पसीना निकला उसी से तत्काल मणिमती नदी प्रवाहित हुई। मणिमती और बागमती के संगम को 'मैं जाता हूँ' कहने मात्र से ही मनुष्य के सारे पाप धुल जाते हैं। मान्यता है कि मणिमती और बागमती के संगम पर जो गोकर्णेश्वर तीर्थ है वहीं बैठ कर राक्षसराज रावण ने महादेव की आराधना की थी और वहीं पर की हुई तपस्या के फलस्वरूप उसे अभूतपूर्व शक्तियां प्राप्त हुईं। ऐसी ही किंवदन्तियों की कड़ी है नेपाल के गौर बाजार का बलरा गाँव जहाँ ग्रामवासियों का दावा है कि हनुमान जब द्रोणगिरी पर्वत को उठा कर ले जा रहे थे तब उन्हें प्यास लगी और वे बागमती के किनारे इस स्थान पर पानी पीने के लिए उतरे और इसे बलरा नाम दिया जो कि तीन नामों का मिश्रण है। बजंरगबली ने अपने नाम का 'ब', लक्ष्मण के नाम का 'ल' लिया क्योंकि लक्ष्मण को शक्ति न लगी होती तो वे यहाँ न आते और राम का 'रा' लेकर इस स्थान का नामकरण किया क्योंकि राम के

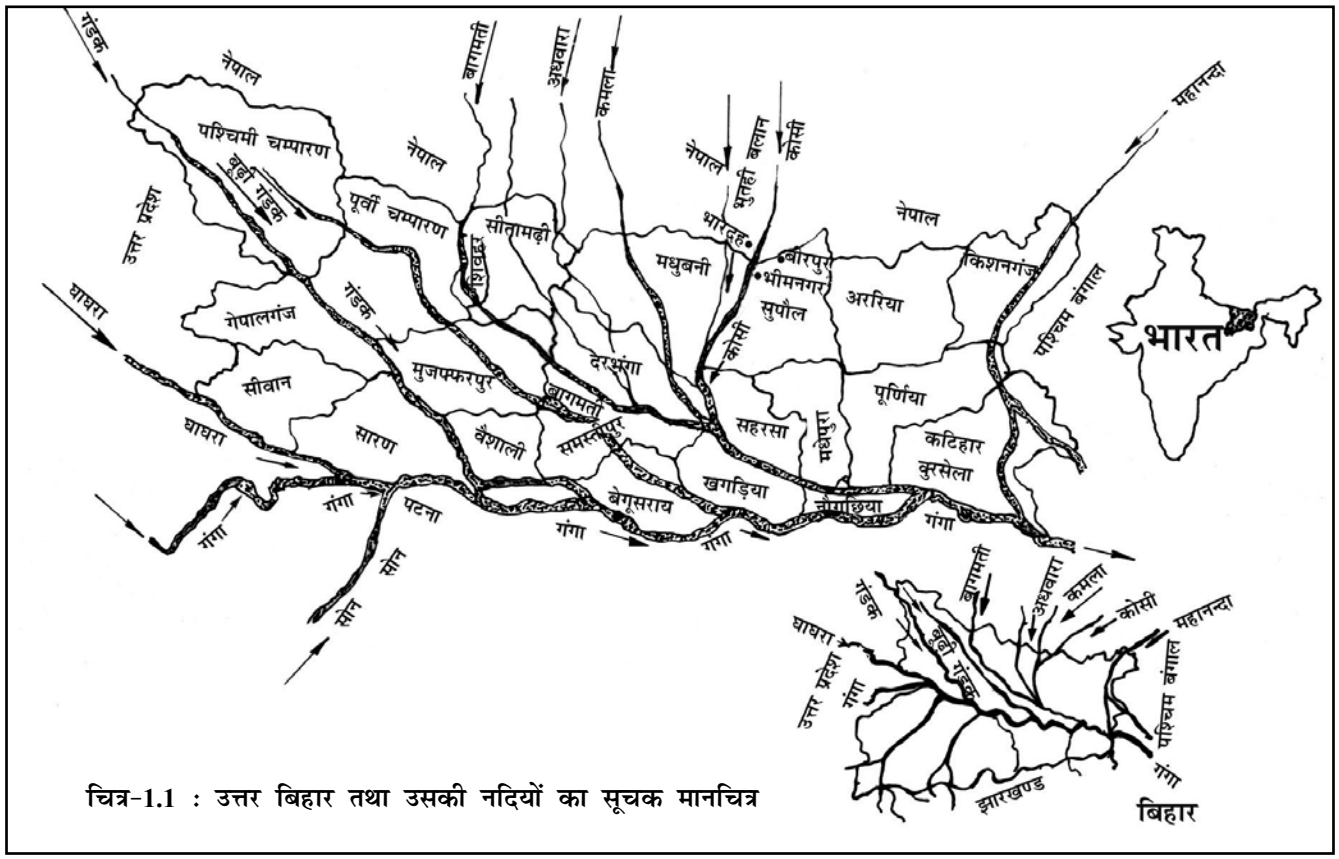

चित्र-1.1 : उत्तर बिहार तथा उसकी नदियों का सूचक मानचित्र

काठमाण्डू में बागमती और विष्णुमती का संगम-दुर्भाग्यवश यह नदियाँ अब कूड़े के ढेर से होकर बहती हैं।

आदेश के बिना भी उनका यहाँ आना संभव नहीं होता। इस तरह की अनेक कथाएं बागमती और उसकी बहुत सी सहायक धाराओं के बारे में प्रचलित हैं। बागमती नदी के विभिन्न आयामों की चर्चा करने के पहले हम उसके महात्म्य के बारे में थोड़ी चर्चा करेंगे।

1.2 पुराणों में बागमती

पौराणिक कथाओं और बौद्ध साहित्य में बागमती का नाम बड़ी प्रमुखता से उभरता है। स्कंदपुराण के हिमवत्खंड के नेपाल महात्म्य में बागमती के बारे में बहुत सी कहानियाँ मिलती हैं।

1.2.1 प्रह्लाद की तपस्या और शंकर के अट्टहास से उत्पन्न बागमती–प्रह्लाद की रक्षा के लिए भगवान विष्णु नृसिंह रूप धारण कर के हिरण्यकश्यप को मारने के बाद थक कर विश्राम करने के लिए हिमालय की ओर चले गए और मृगेन्द्र (सिंह) के रूप में वहाँ स्थित हुए। नृसिंह को खोजता हुआ प्रह्लाद भी उनके पीछे-पीछे गया और जब वे दिखाई नहीं पड़े तो उसने वहीं एक हजार वर्ष तक कड़ी तपस्या की। प्रह्लाद की तपस्या देख कर भगवान शंकर तक प्रसन्न हो गए और उन्होंने जोर से अट्टहास किया। महादेव के अट्टहास से हिमालय की कन्दरा से फेन, तरंग और माला से युक्त पुण्यजला, निर्मला वाङ्मती नदी निकली। महादेव ने प्रह्लाद से कहा, ''हे दैत्येन्द्र (प्रह्लाद)! मेरे वचन से यह नदी हिमालय से बाहर आई है अतः इस नदी का नाम निःसन्देह वाग्वती होगा।

वचनान्मय दैत्येन्द्र बहिर्याता चता नदी
अतोऽस्या वाग्वती नाम भविष्यति न संशयः ।

भगवान विष्णु यहाँ मृगेन्द्र रूप धर कर स्थित हुए थे अतः इस स्थान का नाम वैष्णव क्षेत्र होगा। इसके ऊपरी भाग में शिवलिङ्गमय शुभ स्थान है जो संसार में शिवपुरी नाम से प्रसिद्ध होगा। वाग्वती के उद्गम स्थल पर स्नान कर के जो शिवपुरी के दर्शन करेगा, उसके जन्मान्तरकृत पाप निःसन्देह नष्ट हो जायेंगे। ऐसा कह कर महादेव अर्न्तध्यान हो गए।''[1] वाङ्मती, वाग्वती आदि अनेक नामों का अपभ्रंश होते होते इस नदी का नाम अब बागमती हो गया है और यही नाम प्रचलन में है।

1.2.2 शंकर के पशुपति स्वरूप की साक्षी बागमती–बागमती से सम्बन्धित एक दूसरी कथा भी स्कन्दपुराण में कही गयी है। कहते हैं कि हिमालय के दक्षिण भाग में एक अति प्रसिद्ध श्लेष्मान्तक वन था। वह जंगल नाना प्रकार के पेड़-पौधों-लताओं से भरा पड़ा था और उसमें फलों के वृक्ष भी प्रचुर मात्रा में थे जिन पर बहुत से पक्षी निवास करते थे। बागमती नदी के किनारे स्थित इस सुरम्य वन को देख कर भगवान शंकर ने कैलास पर्वत तथा काशी छोड़ कर पार्वती के साथ श्लेष्मान्तक वन में रहने का निश्चय किया। उन्होंने सबसे छिपे रहने के उद्देश्य से मृग का रूप धारण किया और पार्वती मृगी-रूपा बन कर उनके साथ विहार करने लगीं। देवताओं की दृष्टि से दूर अदृश्य रूप में विराजमान भगवान शंकर के लिए सारा जगत व्यथित हो गया। देवताओं ने भगवान शंकर को खोजने के लिए सभी संभव प्रयत्न किये और उन्हें ग्राम, नगर, वन, नदी और पर्वतादि स्थानों पर खोजा। अन्ततः वे श्लेष्मान्तक वन पहुँचे जहाँ उन्होंने एक सींग और तीन नेत्र वाले सुन्दर और पुष्ट मृग

के रूप में महादेव को पहचान लिया। उनके साथ मृगी-रूपा पार्वती भी थीं। देवताओं ने शंकर की स्तुति की और उन्हें मृग-रूप त्याग करके कैलास या काशी चलने की प्रार्थना की मगर शंकर नहीं माने और न ही उन्होंने मृग रूप ही त्यागा। तब ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादि देवता मृग को बलपूर्वक अपने वश में करने की सोचने लगे और जैसे ही उन्होंने मृग के सींग पकड़ने की चेष्टा की, मृग रूपी शंकर कूद कर बागमती के दूसरे तट पर जाकर स्थित हो गए मगर इस भाग-दौड़ में उनके सींग के चार टुकड़े हो गए। इन चार टुकड़ों में से एक-एक टुकड़ा ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्र ने लेकर अपने-अपने लोकों में स्थापित कर दिया। चौथा टुकड़ा बागमती के दाहिने तट पर गिरा। शंकर ने उस रम्य वन को छोड़ कर जाने से मना कर दिया और कहा कि इस लोक में पशु रूप धारण करने के कारण उनका नाम पशुपति होगा। कहा जाता है कि बागमती के किनारे मृग के सींग का जो चौथा टुकड़ा गिरा वही वहाँ शिवलिंग बन कर स्थापित हो गया और बाद में इसी स्थान पर पशुपतिनाथ के नाम से शिवलिंग का पूजन होने लगा। पार्वती भी शंकर के साथ उनके पास रहना चाहती थीं। शंकर ने पार्वती से कहा कि तुम मेरे वात्सल्य के कारण मेरे साथ रहना चाहती हो अतः अब से भक्तगण तुम्हें वत्सला कह कर पुकारेंगे और तबसे पार्वती वत्सला नाम धारण कर वहीं बागमती के किनारे निवास करने लगीं।

बागमती के पूर्वी तट पर पशुपतिनाथ के नाम से प्रसिद्ध इस मन्दिर के बारे में एक दूसरी किंवदन्ती है कि ज्योतिर्लिंग के रूप में भगवान शंकर का यह सींग बहुत काल तक मिट्टी के नीचे दबा रहा और उसके ऊपर घास जम गई। किसी ग्वाले की एक गाय नियमित रूप से इस स्थान पर आती थी और अपना दूध वहीं देकर चली जाती थी। कुछ दिनों के बाद ग्वाले ने अनुभव किया कि उसकी दुधारू गाय दूध नहीं दे रही है तब उसने गाय पर नज़र रखना शुरू किया और अन्ततः उस स्थान को खोज निकाला जहाँ गाय के थन से दूध अपने आप निकल जाया करता था। ग्वाले ने उस स्थान को खोदा जहाँ उसे शिवलिंग मिला। इसके बाद धीरे-धीरे वहाँ ग्वाले इकट्ठा होकर पूजा-अर्चना करने लगे। कालक्रम में इस स्थान की महिमा बढ़ी और यहाँ विधिवत पशुपतिनाथ के भव्य मन्दिर का निर्माण हुआ।[2]

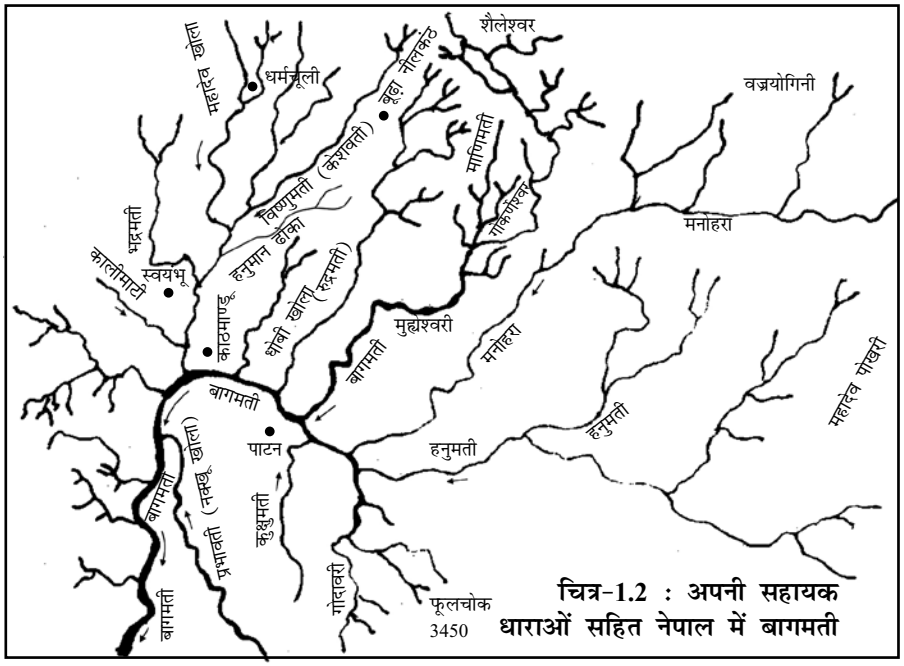

चित्र-1.2 : अपनी सहायक धाराओं सहित नेपाल में बागमती

1.2.3 दैत्यों ने बांधी बागमती–देवताओं ने किया मुक्त–कहते हैं कि चम्पकारण्य मण्डल में श्वेतका नाम की एक नगरी थी जो किसी भी मायने में इन्द्र की राजधानी अमरावती से कम सुन्दर और समृद्ध नहीं थी। वहाँ सूर्यकेतु नामक एक धर्मात्मा राजा राज करता था जो विष्णु का भक्त था। मिथिला के एक पराक्रमी राजा हंसध्वज से सूर्यकेतु का किसी तरह वैर हो गया और उसने सूर्यकेतु के राज्य पर चढ़ाई कर दी, उसके बहुत से योद्धाओं को मार डाला और सूर्यकेतु को खदेड़ दिया। राज्यविहीन सूर्यकेतु पर भारी विपत्ति आ पड़ी और वे कहाँ जाए और क्या करे ऐसा सोच ही रहा था कि वहाँ नारद जी प्रकट हो गए और राजा से उसकी चिन्ता का कारण पूछा। राजा ने सारी परिस्थिति नारद जी को समझायी तो उन्होंने उसे अपनी असुरक्षित राजधानी श्वेतका को छोड़ कर अपनी पत्नी और राजकुमारी चन्द्रावती के साथ हिमालय में मृगेन्द्र-शिखर पर जाकर रहने के लिए कहा। नारद जी के इस उपदेश को सुन कर राजा सूर्यकेतु अपनी पत्नी, पुत्री चन्द्रावती और बचे हुए योद्धाओं के साथ श्वेतका नगरी छोड़ कर मृगेन्द्र-शिखर पर निवास करने के लिए चले गए। नारद ने श्वेतकेतु के कल्याण के लिए दैत्यराज वाणासुर के पुत्र महेन्द्रदमन की कथा भी सुनायी।

शोणितपुर में एक दैत्यराज वाणासुर अपनी पतिभक्ता पत्नी रोहिणी के साथ सुखपूर्वक निवास करता था। इन दोनों को एक पुत्र की प्राप्ति हुई जिसके जन्म के समय पृथ्वी पर बड़ा भूकम्प आया और देवराज इन्द्र का बायां नेत्र फड़कने लगा। दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य ने इस बालक के जन्म के समय भविष्यवाणी की कि यह बालक इन्द्र को अपने पराक्रम से हरायेगा और इसलिए उन्होंने उसका नाम महेन्द्रदमन रखा। महेन्द्रदमन की एक अपूर्व सुन्दरी बहन भी थी जिसका नाम प्रभावती था। शुक्राचार्य ने महेन्द्रदमन को इन्द्रविजय के लिए तपस्या करने की सलाह दी और उसने रुद्रधारोदयतीर्थ में हजार वर्षों तक केवल वायु का सेवन करके तपस्या करते हुए ब्रह्मा को प्रसन्न कर लिया और उनसे अजेय होने का वर मांग लिया। शुक्राचार्य से अभिषेक करवा कर महेन्द्रदमन राजा बन गया और राजा बनते ही उसने इन्द्र को संवाद भेजा कि ब्रह्मा की कृपा से अब वह अजेय है अतः इन्द्र अपना राज्य उसके हवाले कर दें। बिना युद्ध किये हुए अपना राज्य न देने की बात कह कर इन्द्र ने महेन्द्रदमन को अपना पराक्रम दिखलाने के लिए ललकारा तो दैत्य अपने बड़े भाई शंखासुर और अनुज कच्छपासुर को आगे करके पूरी सेना लेकर इन्द्रपुरी पर चढ़ाई करने के लिए उद्यत हुआ। भयंकर युद्ध के बाद इन्द्र युद्धक्षेत्र से भाग खड़े हुए और आकाश में शरण लेने के लिए उड़ गए। तब महेन्द्रदमन विजेता भाव से इन्द्र की राजधानी अमरावती में प्रवेश के लिए प्रयत्नशील हुआ। उसी

समय ब्रह्मा जी ने वहाँ प्रकट होकर परमकीर्ति पाने पर महेन्द्रदमन की प्रशंसा की मगर साथ ही उसे इन्द्र की राजधानी अमरावती को छोड़ कर मृगेन्द्र-शिखर के पास अपनी नई राजधानी सुप्रभानगरी बसाने और वहीं जाकर रहने का आदेश भी दिया। ब्रह्मा जी की आज्ञा पा कर महेन्द्रदमन ने सुप्रभानगरी की ओर प्रस्थान किया। उसके चले जाने के बाद ब्रह्मा जी ने थके हारे इन्द्र से कहा कि मथुरा में कृष्ण जन्म के बाद महादेव के शाप से दग्ध कामदेव प्रद्युम्न नाम धारण करके उनके पुत्र के रूप में पैदा होगा और वही प्रद्युम्न इस महेन्द्रदमन को मार डालेगा।

उधर ब्रह्मा जी की आज्ञा से महेन्द्रदमन ने चन्दन पर्वत की उत्तर दिशा की उपत्यका में सुप्रभानगरी का निर्माण किया। उसने चन्दन पर्वत पर एक रम्य उद्यान बनाया जिसमें अपनी मृगलोचना बहन प्रभावती के रहने के लिए स्थान निश्चित किया। दैत्य ने मृगेन्द्र-शिखर के बाहर बहने वाली वाग्वती नदी की धारा को भी रोक दिया जिससे पूरा श्लेष्मान्तक वन सरोवर में बदल गया जिसे देख कर महेन्द्रदमन की खुशी का ठिकाना न रहा। वाग्वती का पानी सरोवर से आगे न जाने पाये इसकी रक्षा के लिए उसने अपने भाइयों शंखासुर और कच्छपासुर को नियुक्त किया। चन्दन पर्वत और श्लेष्मान्तक वन (अब सरोवर) में निवास करती हुई प्रभावती ने हिमालय पुत्री वत्सला देवी की आराधना करके उन्हें प्रसन्न कर लिया जिन्होंने उसे कृष्णपुत्र प्रद्युम्न की पत्नी होने का आशीर्वाद दिया।

वाग्वती का पानी घिर जाने के कारण जिस सरोवर का निर्माण हुआ उसके एक छोर पर सुप्रभानगरी थी जहाँ महेन्द्रदमन और प्रभावती का निवास था तो दूसरे छोर पर मृगेन्द्र-शिखर अवस्थित था जहाँ नारद जी ने सूर्यकेतु को रहने के लिए स्थान निर्धारित किया था। इस तरह सूर्यकेतु और महेन्द्रदमन अब आमने-सामने आ गए। सूर्यकेतु महेन्द्रदमन की कीर्ति और पराक्रम से परिचित था और उसने अपने आप को सुरक्षित और निर्भय बनाये रखने के लिए एक बार महेन्द्रदमन के पास दिव्य रत्नों का संग्रह भिजवाया। एक दिन महेन्द्रदमन का एक दैत्य सेवक किसी तरह मृगेन्द्र-शिखर पर आ गया और उसने वहाँ अप्सरातुल्य राजकुमारी चन्द्रावती को देखा और वापस जाकर उसने महेन्द्रदमन को बताया कि चन्द्रावती एक उत्तम स्त्री रत्न है और पृथ्वी पर महेन्द्रदमन के अलावा दूसरा कोई पुरुष नहीं है जो उसका पति हो सके। दैत्यराज ने सूर्यकेतु को उनकी कन्या राजकुमारी चन्द्रावती से अपने विवाह का प्रस्ताव भिजवाया जिसे राजा ने यह कह कर टाल दिया कि राजकुमारी अभी बालिका है और विवाह के सर्वथा अयोग्य है। यह संवाद भेजने के बाद भी राजा की चिन्ता कम नहीं हुई और वे किंकर्तव्यविमूढ़ हो कर अपने और राजकुमारी के भविष्य के बारे में सोचता रहा। श्वेतका नगरी का त्याग तो राजा के लिए कठिन था ही, दैत्य का राजकुमारी को मांगना तथा न दे सकने पर उत्पन्न होने वाला स्वाभाविक वैर तो और भी दु:ख देने वाला था। पराक्रमी दैत्य के इतने निकट रहते हुए उसका विरोध भी संभव नहीं था।

इसी समय वहाँ नारद जी एक बार फिर प्रकट हुए और उन्होंने सूर्यकेतु से कहा कि डरने की कोई बात नहीं है। आप चन्द्रावती का विवाह प्रद्युम्न से कर दीजिये और राज्य सहित सुरक्षित हो जाइये। उन्होंने स्वयं द्वारका जाकर श्रीकृष्ण से प्रद्युम्न को ले आने की बात भी सूर्यकेतु से कही।

द्वारका जाते समय नारद ने चन्दनगिरि शिखर पर प्रभावती को देखा और उससे पूछा कि क्या अभी तक तुम्हारे होने वाले पति, कृष्णपुत्र प्रद्युम्न इधर नहीं आये? उन्होंने प्रभावती को राजकुमारी चन्द्रावती का प्रकरण भी बताया और कहा कि वह चन्द्रावती के लिए प्रद्युम्न को लेने द्वारका जा रहे हैं और वत्सला देवी के आशीर्वाद से प्रद्युम्न प्रभावती से भी सम्बन्धित होंगे। नारद जी ने प्रभावती को वहीं रहने के लिए कहा मगर प्रभावती को डर था कि द्वार पर शंखासुर नाम के बहुत ही दुर्दान्त दैत्य का पहरा है। ऐसे में प्रद्युम्न का अभीष्ट कैसे पूरा होगा? प्रभावती को यह भी डर था कि प्रद्युम्न के प्रेम में फँस कर अगर वह अपने बड़े भाई महेन्द्रदमन के वध में भागीदार बनती है तो उसकी बड़ी जग-हंसाई होगी। प्रभावती को सांत्वना देते हुए नारद मुनि प्रद्युम्न को लाने द्वारका चले गए।

द्वारका पहुँच कर नारदजी ने श्रीकृष्ण को विधि के विधान की बात बताई और प्रद्युम्न को न केवल हिमालय भेजने के लिए प्रेरित किया वरन् स्वयं श्रीकृष्ण को भी अपने पुत्र प्रद्युम्न का पराक्रम और विजय पर्व देखने के लिए राजी कर लिया। प्रद्युम्न और दैत्यों में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें प्रद्युम्न ने शंखासुर और महेन्द्रदमन को पहले मार गिराया मगर कच्छपासुर को हरा पाना बहुत ही शौर्य और पराक्रम का काम था। कच्छपासुर ने, जिसे महेन्द्रदमन ने बिलद्वार की रक्षा के लिए नियुक्त किया था, प्रद्युम्न से घोर युद्ध किया। उस समय विष्णु-रूप में गरुड़ पर सवार श्रीकृष्ण भी आ गए थे। नारद ने प्रद्युम्न को बताया कि वाग्वती के पवित्र जल के सदा सम्पर्क में रहने वाला कच्छपासुर तब तक नहीं मरेगा जब तक वाग्वती से उसका सम्पर्क समाप्त न हो जाए। गरुड़ के पंखों की मदद से प्रद्युम्न कच्छपासुर को सरोवर के द्वार से दूर ले गए और उसे पीठ के बल लिटा कर मार डाला। कच्छपासुर के मारे जाने के बाद सरोवर का अवरोध समाप्त हो गया और उसका पानी एक बार फिर बह निकला। इस प्रकार तीनों दैत्यराज मारे गए, वाग्वती स्वतंत्र हो गयी और उसने स्त्री रूप में प्रकट होकर विष्णु-रूपी श्रीकृष्ण की आराधना की और उनसे गंगा से मिलने जाने की इच्छा व्यक्त की और उनका आशीर्वाद ले कर उस दिशा में प्रस्थान किया।

प्रद्युम्न ने चन्द्रावती और प्रभावती से विधिवत विवाह किया और उनके साथ द्वारका चले गए।[3]

1.2.4 चन्द्रमा की तपस्थली और गुरुपत्नी के साथ दुष्कर्म के पाप से मुक्ति–कथा प्रसिद्ध है कि एक बार चन्द्रमा ने राजसूय यज्ञ करने की सोची जिससे तीनों लोकों में वह अपना राज स्थापित कर सके। इसी उद्देश्य से वह देवताओं के गुरु बृहस्पति के पास गए कि वह उनका पौरोहित्य स्वीकार कर लें। बृहस्पति ने चन्द्रमा को राजसूय यज्ञ न करने की सलाह दी क्योंकि राजसूय यज्ञ की व्यवस्था करने और उसे सम्पन्न करने में बहुत श्रम और कष्ट होता है और यह अगर सम्पन्न हो भी जाए तो राजा के दायित्वों में अप्रत्याशित वृद्धि होती है और उसका निर्वाह करना भी कम कष्टदायक नहीं होता। इन उपदेशों का चन्द्रमा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उसने राजसूय यज्ञ करने की अपनी जिद नहीं छोड़ी और बृहस्पति को उसका यज्ञ सम्पन्न करवाना पड़ गया। चन्द्रमा के पराक्रम को देखते हुए किसी अन्य देवता को उसका विरोध करने का साहस नहीं हुआ। यज्ञ की समाप्ति के बाद जब चन्द्रमा का अभिषेक होने वाला था तभी उसकी दृष्टि गुरुपत्नी तारा पर पड़ी और तारा ने भी चन्द्रमा के संकेतों का प्रतिकार नहीं किया। काम के वशीभूत अहंकारी चन्द्रमा सभी देवताओं की उपस्थिति में तारा को अपने कक्ष में ले गया और उनके साथ रमण किया। बृहस्पति द्वारा

बार बार समझाये जाने के बाद भी कि पर स्त्री का हरण अगर पाप है तो गुरुपत्नी का हरण तो महापाप होता है, चन्द्रमा ने यह जघन्य कृत्य कर ही डाला। अन्याय की पराकाष्ठा तब हुई जब देवताओं के राजा इन्द्र ने भी चुप्पी साध ली। इस पर क्रोधित महादेव ने चन्द्रमा को दण्ड देने का निश्चय किया और वह उसका शिर विच्छिन्न करने ही वाले थे कि ब्रह्मा ने महादेव से चन्द्रमा को क्षमा करने की प्रार्थना की और प्रायश्चित करने के मार्ग का सुझाव देने को कहा।

महादेव ने चन्द्रमा को महापापी बताते हुए कहा कि यह यक्ष्मा रोग से पीड़ित होकर हमेशा क्षीण होगा और सभी देवों से बहिष्कृत होगा। ऐसा कह कर महादेव कैलाश चले गए। महादेव के शाप से चन्द्रमा कभी शान्ति से नहीं रह सका और यक्ष्मा के कारण उसका शरीर क्षीण होता रहा। प्रायश्चित के लिए वह बहुत से तीर्थों में घूमा। अन्ततः वह अगस्त्य मुनि के परामर्श पर श्लेष्मान्तक वन में वाङ्मती नदी के तट पर तपस्या में यह सोच कर स्थिर हुआ कि उसने गुरुपत्नी के साथ रमण करके पशुतुल्य कार्य किया है। उसने निश्चय किया कि जब तक वह इस दोष से मुक्त नहीं हो जायेगा तब तक वह अपनी तपस्या भंग नहीं होने देगा। कठोर तपस्या कर के चन्द्रमा ने महादेव को प्रसन्न कर लिया और शाप से मुक्त हो गया। वाङ्मती के स्नान, उसके जल का पान और वत्सला देवी (पार्वती) तथा पशुपतिनाथ के दर्शन से उसकी पापमुक्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ।[4]

1.2.5 पुण्य सलिला बागमती—पवित्रता का अगर कोई उदाहरण देना हो तो स्वाभाविक रूप से गंगा, यमुना, सरस्वती या नर्मदा का स्मरण हो आता है। कहा भी है,

'त्रिभिः सारस्वतं तोयम् सप्ताहेन तु यामुनम्
सद्यः पुनाति गांगेयम् दर्शनादैव तु नार्मदम्।'

अर्थात् सरस्वती नदी के पानी में स्नान और इसके पान से मनुष्य तीन दिन में पवित्र हो जाता है, यमुना नदी के पानी से पवित्र होने में एक सप्ताह का समय लगता है, गंगा तुरन्त पवित्र करती है और नर्मदा का तो दर्शन मात्र ही पवित्रता प्रदान कर देता है।[5] यह श्लोक जब भी लिखा गया होगा उस समय तो यह नदियाँ निश्चित रूप से पवित्रता की प्रतिमूर्ति रही होंगी मगर आज उनकी स्थिति दयनीय हो गयी है। नदियों की पवित्रता का यह बखान कुछ तो उनके प्रति श्रद्धा, कुछ परम्परा, कुछ वास्तविकता और कुछ स्थानीय रचनाकारों की अपनी भौगोलिक प्रतिबद्धता के कारण भी होता रहा होगा। अपने क्षेत्र विशेष की नदियों का गुणगान करते समय बहुत से साहित्यकार पवित्रता प्राप्त करने के लिए नदी के दर्शन लाभ की सीमा को लांघ कर उसे नदी के स्मरण मात्र से पवित्र कर देने की क्षमता तक ले गए। यानी नदी का स्मरण भर कीजिये और तन-मन सब निर्मल। प्रचलित साहित्य में बागमती नदी की पवित्रता प्रदान करने की क्षमता का बहुत वर्णन नहीं मिलता है और वह शायद इसलिए कि विशालता के क्रम में इस नदी का स्थान थोड़ा नीचे पड़ता है। मगर वाङ्मती और वेगवती दोनों नामों से इस नदी को सम्बोधित करता हुआ वराहपुराण बागमती के जल को भागीरथी के जल से भी सौ गुणा पवित्र मानता है और उसके अनुसार बागमती नदी में स्नान करने वाला व्यक्ति सीधे सूर्यलोक को प्राप्त करता है।

'हिमाद्रेस्तुङ्ग-शिखरात प्रोद्भूता वाङ्गमती नदी
भागीरथ्याः शतगुणं पवित्रं तज्जलं स्मृतम्।
तत्र स्नात्वा हरेर्लोकानुपस्पृश्य दिवस्पते॥[6]

वराहपुराण में ही एक अन्य सर्ग में कहा गया है ''...यह वेगवती नामक भागीरथी स्नान करने वाले मनुष्यों का सारा कलुष धो डालती है, कीर्तन करने से हृदय को पवित्र कर देती है और दर्शन मात्र से ऐश्वर्य प्रदान करती है। इस वेगवती नाम की भागीरथी के जल का पान करने से तथा इसमें स्नान करने से मनुष्यों की सात पीढ़ियाँ तर जाती हैं। इसके उद्गम स्थान पर देवता विचरण करते हैं जहाँ स्नान करने से मनुष्य कभी पुनर्जन्म धारण नहीं करता।''[7]

1.2.6 सूखी लाठी को अंकुरित करने में समर्थ बागमती—स्कंदपुराण के हिमवत् खण्ड के नेपाल महात्म्य में बागमती के जल की पवित्रता और सम्भवतः उर्वरता के बारे में बड़ा ही रोचक प्रसंग देखने को मिलता है। नेपाल महात्म्य के अनुसार काशी नगरी में प्रियातिथि नाम का एक गरीब ब्राह्मण रहता था जिसे उसकी सर्वलक्षणा, महाभागा, पतिव्रता पत्नी से चार पुत्र पैदा हुए जिनके नाम मेधातिथि, गुणनिधि, भरत और मलय थे। पहले तीन पुत्र तो बहुत गुणवान, पितृभक्त तथा हमेशा स्वाध्याय में लगे रहने वाले थे मगर चौथा पुत्र मलय चोरी, ठगी, जुआ और चुगलखोरी जैसे दुर्व्यसनों में लिप्त रहा करता था। बहुत प्रयासों के बाद जब मलय में कोई सुधार नहीं हुआ तो पिता और परिवार ने उसे त्याग दिया। घर से निकल जाने के बाद मलय में वेश्यागमन का एक अन्य दुर्गुण भी जुड़ गया। अब उसे सारे दिन उचित-अनुचित जो भी आय होती वह उसे रात में वेश्याओं के हवाले कर देता था। एक बार जब वह पूरे दिन के श्रम के बाद थक कर एक वेश्या के यहाँ सो रहा था तब उसे रात में प्यास लगी और उसने हाथ बढ़ा कर पास में रखे पात्र से पानी पीने की कोशिश की। मगर पात्र में रखे पेय का स्वाद उसे अद्भुत लगा तो उसने वेश्या से पूछा कि पात्र में क्या था? उनींदी वेश्या ने मलय को बताया कि उस पात्र में अगर पानी नहीं था तो वह अद्भुत स्वाद वाली वस्तु निश्चित रूप से मदिरा थी। वेश्या का उत्तर सुन कर मलय बड़ा दुःखी हुआ। उसने अपने पिता को कभी यह कहते हुए सुना था कि मदिरा पीने वाले ब्राह्मण का कभी उद्धार नहीं होता। ब्राह्मण होकर मदिरा पी लेने की घटना से वह बड़ा आहत हुआ और तब उसका विवेक जगा। उसको लगा कि काशी में ब्राह्मण कुल में जन्म लेने के बाद भी वह स्वाध्याय, ज्ञानार्जन, जप, तप, दान, पुण्य और मणिकर्णिका स्नान से विरत होकर न केवल वेश्यागामी हुआ वरन् उसने ब्राह्मणों के लिए सर्वथा निषिद्ध मदिरा तक का सेवन कर लिया।

प्रायश्चित्त का विचार लेकर वह काशी के मणिकर्णिका घाट पर गया और उसने वहाँ आये ब्राह्मणों को अपना परिचय देकर अपने पाप का प्रायश्चित पूछा तो ब्राह्मणों ने डाँट-डपट कर उसे भगा दिया। दुःखी मलय तब नदी में स्नान कर के बाबा विश्वनाथ का दर्शन करने के निमित्त गया और वहाँ से वह मुक्ति मंडप गया। वहाँ एक बार फिर उसने अपना परिचय देते हुए उपस्थित ब्राह्मणों से अपने पाप के प्रायश्चित का उपाय पूछा जिससे उसकी शुद्धि हो जाए। सभी ब्राह्मणों ने उसकी बातें सुन कर अपनी आँखें फेर लीं मगर एक विनोदी ब्राह्मण ने मज़ाक करते हुए मलय को एक लाठी दी और कहा कि मदिरा पान

करने वाले ब्राह्मण की शुद्धि तो नहीं होती पर तुम इस लाठी को लेकर तीर्थ यात्रा पर चले जाओ। जब इस लाठी में अंकुर निकल आयेगा तब वह अंकुर देख कर तुम्हारी शुद्धि हो जायेगी।

लाठी से अंकुर निकलने वाली असंभव सी घटना पर भी विश्वास कर के मलय उस ब्राह्मण को बार-बार प्रणाम करके तीर्थ यात्रा पर निकल गया और उसे घूमते-घूमते जब तीन वर्ष बीत गए तब वह देवदुर्लभ श्लेष्मान्तक वन में पहुँचा और बागमती नदी के किनारे जाकर स्थित हुआ। उसने पहाड़ के पास अपनी लाठी रख दी और स्नान करने के लिए बागमती नदी में उतर गया। स्नान करके जब मलय बाहर आया तब उसने अपनी लाठी में अंकुर देखा। परम नीच मलय ने अंकुर देख कर अपने आप को पवित्र हुआ माना और उसी वन में तपस्या करने के विचार से रहने लगा तथा परम पद को प्राप्त किया।[8]

यह कथायें तो मिथक ही हैं पर जिन लोगों ने भी इन्हें कहा या लिखा हो उन्होंने बागमती की पवित्रता, उसकी पवित्र करने की क्षमता और प्रवाह क्षेत्र की उर्वर धरती में सूखे बांस की लाठी में तत्काल अंकुरण करने की क्षमता का उद्‌घाटन करके नदी की महत्ता को उजागर करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। शायद नदी के इन्हीं गुणों के कारण उसे नेपाल में वही स्थान प्राप्त है जो भारत में गंगा को मिलता है। उसकी उर्वरता के गुण को तो इतिहासकार और वैज्ञानिक सभी समान और निर्विवाद रूप से स्वीकार करते हैं।

स्कंदपुराण कब लिखा गया, किसने लिखा, इन कथाओं की वास्तविकता क्या है, इन कथानकों की कोई प्रामाणिकता है भी या नहीं, इन विवादों में पड़े बिना हम इतना जरूर कहना चाहेंगे कि इस कहानी के माध्यम से कथाकार ने नदी के पानी की पवित्रता और उसके उर्वरक गुण को परखने की कल्पना की एक ऊँची उड़ान जरूर भरी थी। इतना तो कहा ही जा सकता है कि ऐसी कल्पनाएं अकारण नहीं होतीं।

1.2.7 बौद्ध दर्शन में बागमती–बागमती को बांध देने और उसके मुक्त होने की एक ऐसी ही कहानी बौद्ध धर्म ग्रन्थों में भी मिलती है। कहा जाता है कि हिमालय के दक्षिणी भाग में हिमाच्छादित पर्वतों के नीचे एक बहुत विशाल सरोवर हुआ करता था जिसकी रचना सत्‌चिद् बुद्ध ने की थी। नागों का निवास स्थान होने के कारण इस सरोवर को नागह्रद कहा जाता था। सतयुग में बन्धुमती नगरी से विपस्वी बुद्ध इस क्षेत्र में आये और उन्होंने नागह्रद के पश्चिम में स्थित एक पर्वत पर निवास किया और चैत्र मास की पूर्णमासी के दिन उन्होंने सरोवर में कमल के फूल का बीज स्थापित किया। जिस पहाड़ पर विपस्वी बुद्ध ने अपना निवास बनाया उसका नाम उन्होंने मात्रोच्च पर्वत रखा और अपने शिष्यों को भविष्य में होने वाली घटनाओं के बारे में बताया तथा उन्हें वहीं रहने के लिए आदेश दे कर वह वापस बन्धुमती नगरी की ओर चले गए। इस घटना को स्मरण करने के लिए चैत्र मास की पूर्णमासी के दिन इस स्थान पर प्रति-वर्ष मेला लगता है।

सतयुग में ही नागह्रद में विपस्वी बुद्ध द्वारा रोपित बीज से कमल का एक फूल खिला और उसके बीच से आश्विन मास की पूर्णमासी के दिन प्रकाश पुंज के रूप में स्वयंभू प्रगट हुए। स्वयंभू की कीर्ति सुन कर अरुणपुरी से शिखी बुद्ध उस स्थान पर आये और उन्होंने पास के एक पर्वत पर स्थित होकर पूजा-अर्चना की और ध्यान किया। उन्होंने कमल फूल से निकलने वाली किरण की आराधना की तथा मकर संक्रान्ति के दिन अपने शिष्यों को ध्यानोच्चशिखर पर रखा और उन्हें उपदेश दिया। आज भी इस स्थान पर मकर संक्रान्ति के दिन मेला लगता है।

इसके बाद त्रेतायुग में अनुपम देश से विश्वभू-बुद्ध उसी स्थान पर आये और उन्होंने एक अन्य पर्वत से स्वयंभू बुद्ध के दर्शन किये और उस पर्वत पर पेड़ों से गिरने वाले एक लाख फूलों से उनका पूजन किया। इस पर्वत का नाम उन्होंने फूलोच्च पर्वत रखा। उन्होंने भी अपने शिष्यों को उपदेश दिया और उन्हें वह स्थान बताया जहाँ से नागह्रद सरोवर के पानी को निस्सरित कर देना चाहिये। ऐसा कह कर विश्वभू-बुद्ध वापस अपने स्थान को चले गए।

इसके बाद त्रेतायुग में ही महाचीन से बोधिसत्व मंजुश्री उस स्थान पर आये और उन्होंने महामण्डप पर्वत पर तीन रात्रि निवास किया और वहीं से उन्होंने स्वयंभू के प्रकाश पुंज का दर्शन किया। इसके बाद उनके मन में नागह्रद के पानी को मुक्त कर देने का विचार आया। ऐसा सोच कर वह दक्षिण की तरफ गए और उन्होंने वरदा और मोक्षदा नाम की दो देवियों को फूलोच्च और ध्यानोच्च पर्वत पर स्थापित किया और स्वयं बीच में खड़े हो गए। इसके बाद उन्होंने पर्वत के बीच से नागह्रद को चीर दिया और उसके पानी को बहा दिया। नागह्रद से जब पानी बहने लगा तो उसके साथ बहुत से नाग तथा दूसरे जानवर भी बह कर बाहर जाने लगे तब बोधिसत्व मंजुश्री ने नागों के स्वामी कर्कोटक से वहीं रहने के लिए अनुरोध किया और इसी के साथ उन्होंने कर्कोटक को घाटी की सम्पूर्ण सम्पत्ति का स्वामी बना दिया।

मंजुश्री ने ही गुह्येश्वरी के पास बहुत से पेड़ लगाये और अपने बहुत से शिष्यों को उपदेश देते हुए वहीं रहने का निर्देश किया। उन्होंने धर्माकर नाम के राजा को वहाँ का शासक बनाया और वापस अपने स्थान को चले गए।

इसके बाद त्रेतायुग में ही क्षेमवती नगरी से क्रकुच्छन्द बुद्ध उस स्थान पर आये और उन्होंने गुह्येश्वरी को स्वयंभू के प्रकाश पुंज के रूप में देखा और उनको लगा कि जैसे उनके पूर्ववर्ती बहुत से बुद्धों ने कई पर्वतों को महत्वपूर्ण तीर्थ बना दिया है वैसे ही यह काम उन्हें भी करना चाहिये। ऐसा विचार कर वह उत्तर दिशा में एक ऊँचे पर्वत की ओर गए और वहीं रहने लगे। वहीं से उन्होंने अपने गृहस्थ शिष्यों और भिक्षुओं को स्वयंभू और गुह्येश्वरी के प्रताप का उपदेश दिया और 700 ब्राह्मण तथा छेत्री शिष्यों को दीक्षित किया लेकिन जब उन शिष्यों के अभिषेक की बात आई तब क्रकुच्छन्द बुद्ध को भान हुआ कि पहाड़ पर पानी तो उपलब्ध ही नहीं है। तब उन्होंने स्वयंभू और गुह्येश्वरी का आवाहन किया और उनसे पहाड़ पर पानी प्रवाहित करने का अनुरोध किया। इसके साथ ही उन्होंने पहाड़ पर अपना अंगूठा गड़ाया जिससे पहाड़ में छेद हो गया और उससे गंगा जी प्रगट हुईं। गंगा ने बुद्ध को अर्घ्य दिया और पानी के रूप में परिवर्तित होकर मकर संक्रान्ति के दिन वहाँ से बह निकलीं। धर्मशास्त्र गंगा के इस स्वरूप को बागमती नाम देते हैं।

बागमती की विभिन्न सहायक धाराओं के बारे में बौद्ध दर्शन की भिन्न मान्यताएं हैं। हिन्दुओं की विष्णुमती का वर्णन बौद्ध शास्त्रों में केशवती नाम से होता है। क्रकुच्छन्द बुद्ध ने बौद्ध भिक्षुओं को सबसे

पहले दीक्षित करना शुरू किया। क्षौर कर्म के पश्चात उनके बाल (केश) इसी नदी में फेंके गए थे। मणिमती नाम की नदी का यह नाम इसलिए पड़ा कि इसी नदी के किनारे राजकुमार मणिचूड़ ने अपने सिर की मणि अपनी प्रेमिका को उपहार में दे दी थी।[9]

1.3 बिहार में बागमती नदी

बिहार में बागमती से संबंधित पौराणिक या लोक-कथाएं प्रचलन में नहीं हैं मगर यहाँ इसके पानी की अद्‌भुत उर्वरक क्षमता का लोहा सभी लोग मानते हैं। यहाँ इस नदी को तीन अलग-अलग खण्डों में देखा जा सकता है–उत्तर बागमती, मध्य बागमती और दक्षिण-पूर्व बागमती।

1.3.1 उत्तर बागमती–नेपाल में लगभग 195 किलोमीटर की यात्रा तय कर के यह नदी बिहार के सीतामढ़ी जिले में समस्तीपुर–नरकटियागंज रेल लाइन पर स्थित ढेंग रेलवे स्टेशन के 2.5 किलोमीटर उत्तर में भारत में प्रवेश करती है (चित्र-1.3)। नेपाल में इस नदी का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 7884 वर्ग किलोमीटर है। ढेंग और बैरगनियाँ स्टेशन को जोड़ने वाली रेल लाइन पर बने पुल संख्या 89, 90, 91, 91A और 91B से होकर यह नदी दक्षिण दिशा में चलती है जहाँ लगभग 2.5 किलोमीटर नीचे भारत का जोरियाही नाम का पहला गाँव पड़ता है। यहाँ से 5 किलोमीटर दक्षिण चल कर बागमती खोरीपाकर गाँव में आती है। ढेंग से खोरीपाकर की दूरी साढ़े बारह कि०मी० है और यहीं से थोड़ा और नीचे चल कर देवापुर गाँव के पास उसके दाहिने किनारे पर लालबकेया नदी मिलती है। इस लम्बाई में नदी की प्रवृत्ति पश्चिम से होकर बहने की है मगर लालबकेया से उसका संगम स्थल प्राय: स्थिर रहता है। नदी की इस लम्बाई में बहुत ज्यादा परिवर्त्तन नहीं हुए हैं यद्यपि उसकी एक पुरानी धारा का ज़िक्र और रेखांकन जरूर मिलता है।

1.3.2 मध्य बागमती–सीतामढ़ी जिले में खोरीपाकर से लेकर दरभंगा जिले के कनौजर घाट (कलंजर घाट) के लगभग 106 किलोमीटर की दूरी में नदी की धारा हमेशा अस्थिर रही है और जबसे इन धाराओं का रिकार्ड रखा गया और उसके नक्शे बनाये जाने लगे तब से इन बदलती धाराओं की अस्थिरता का अन्दाजा लगता है। कनौजर घाट से पूरब दिशा में बढ़ती हुई यह नदी हायाघाट में दरभंगा-समस्तीपुर रेल लाइन के पुल नं० 17 के नीचे से बहती है। इस पुल से थोड़ा पहले इसमें अधवारा समूह की नदियों का सम्मिलित प्रवाह लेकर नदी के बाँये किनारे पर दरभंगा-बागमती आकर मिल जाती है और इसके बाद

चित्र-1.3 : बागमती परियोजना का सूचक मानचित्र

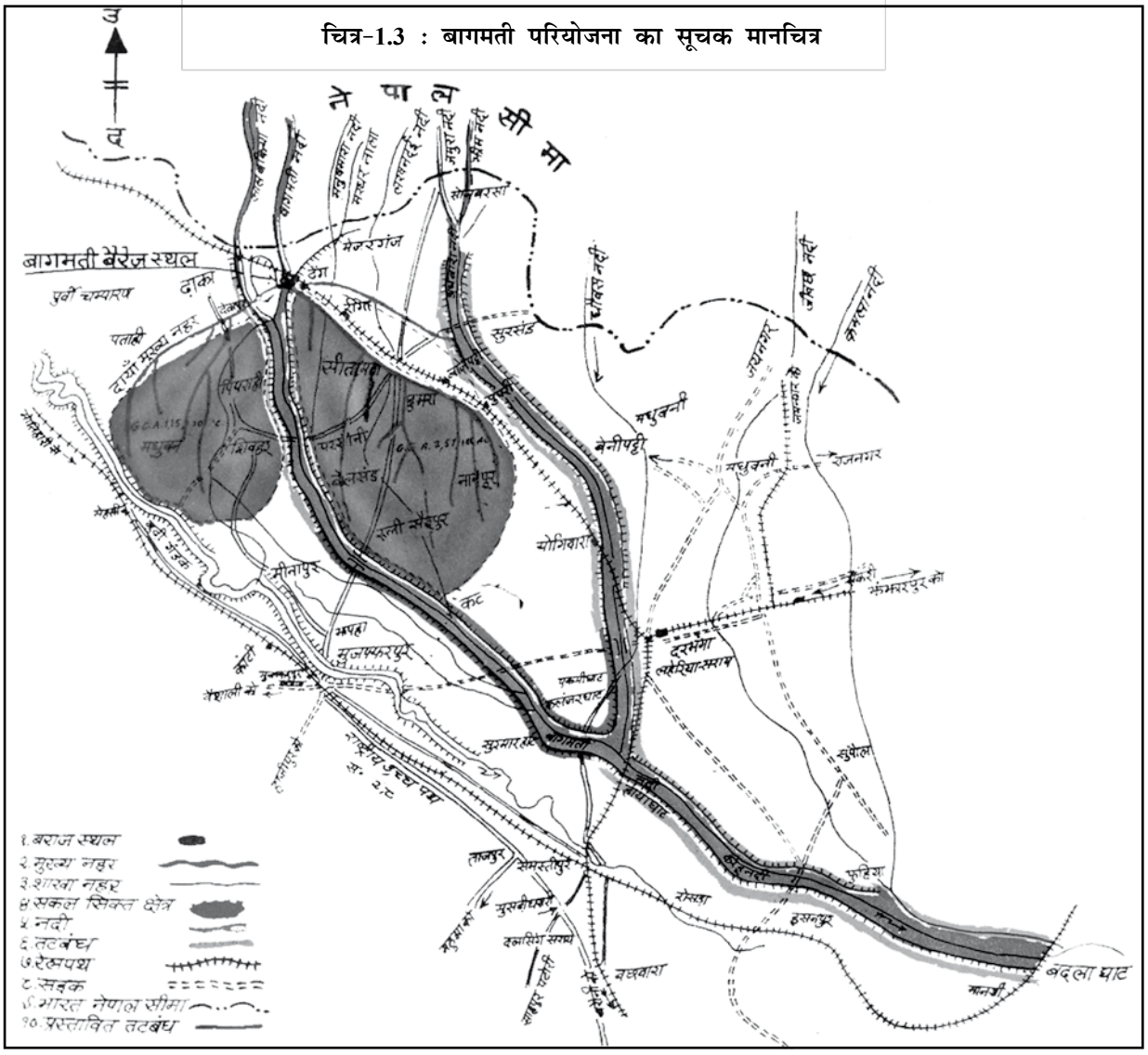

इस नदी का नाम करेह हो जाता है। मध्य बागमती की विभिन्न धाराओं के बारे में हम खण्ड 1.4 में चर्चा करेंगे।

1.3.3 दक्षिण-पूर्व बागमती–हायाघाट से लेकर खोरमार घाट तक, जहाँ यह नदी अंततः कोसी में मिल जाती थी, नदी की धारा एक बार फिर लगभग स्थिर है। इस दूरी में नदी के कगार व्यवस्थित तथा सुदृढ़ दिखाई पड़ते हैं। 1991 में खगड़िया जिले में महेशखुंट और बेलदौर को जोड़ने वाली सड़क में डुमरी के पास एक पुल बनाया गया। जहाँ यह पुल बनाया गया वहाँ कोसी और बागमती नदियाँ प्रायः एक किलोमीटर के अन्तर पर बहा करती थीं। पुल निर्माण के पहले बागमती नदी पर इसी जगह सोनबरसा घाट नाम का एक बहुत महत्वपूर्ण घाट हुआ करता था। जिस पुल का निर्माण हुआ उसमें शायद खर्च की कटौती को ध्यान में रख कर कोसी और बागमती को एक साथ समेट लिया गया जिसमें पुल तो कोसी के हिस्से में आया मगर पुल के पहुँच मार्ग ने बागमती का मुहाना बन्द कर दिया और इस तरह बागमती सोनबरसा घाट पर ही कोसी से मिलने को बाध्य हो गयी। पुल के निर्माण की वजह से सोनबरसा घाट की उपयोगिता स्वयं ही समाप्त हो गयी। हायाघाट से डुमरी पुल तक बागमती का यह निचला क्षेत्र 137 किलोमीटर लम्बा है।

बिहार में इस नदी की कुल लम्बाई 394 किलोमीटर तथा जल ग्रहण क्षेत्र लगभग 6,500 वर्ग किलोमीटर होता है। इस तरह नदी उद्गम से गंगा तक कुल लम्बाई लगभग 589 किलोमीटर और कुल जल ग्रहण क्षेत्र 14,384 वर्ग किलोमीटर बैठता है। बिहार के द्वितीय सिंचाई आयोग की रिपोर्ट (1994) के अनुसार बागमती के ऊपरी क्षेत्र काठमाण्डू के आस-पास सालाना औसत बारिश लगभग 1460 मिलीमीटर होती है जबकि चम्पारण में 1392 मि०मी०, सीतामढ़ी में 1184 मि०मी०, मुजफ्फरपुर में 1184 मि०मी०, दरभंगा में 1250 मि०मी० और समस्तीपुर में 1169 मि०मी० होती है। बिहार में बागमती घाटी में औसत वर्षा 1255 मिलीमीटर होती है। बागमती नदी में प्रतिवर्ष आने वाली गाद की औसत मात्रा ढेंग में एक करोड़ चार लाख छः हज़ार टन (पैंसठ लाख तीन हजार सात सौ पचास घनमीटर) है जबकि हायाघाट पहुँचते-पहुँचते यह मात्रा बहत्तर लाख तेरह हजार टन (लगभग पैंतालीस लाख आठ हजार घनमीटर) रह जाती है। इस तरह लगभग बीस लाख टन घन मीटर रेत/मिट्टी ढेंग और हायाघाट के बीच हर साल फैल जाती हैं।[10] इस गाद का अधिकांश भाग बाढ़ के पानी के साथ खेतों में फैलता है या फिर नदी की तलहटी में बैठ जाता है। इस मिट्टी को अगर ट्रकों में भरा जाए तो हर साल लगभग तीन लाख ट्रकों की जरूरत पड़ेगी।

1.4 बागमती की बदलती धाराएं

1.4.1 जेम्स रेनेल के सर्वे (1779) के समय की बागमती–भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के बाद कम्पनी ने यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन पर नज़र रखते हुए उनका सर्वेक्षण करवाया। नदी, पहाड़ और जंगलों पर उनकी आँख खास तौर पर गड़ी थी। उत्तर भारत की इस प्राकृतिक संपदा के निर्धारण के लिए ब्रिटिश सेना के एक मेजर, जेम्स रेनेल की नियुक्ति हुई। रेनेल ने बागमती का जो नक्शा तैयार किया (चित्र-1.4) उसके अनुसार छोटी और बड़ी बागमती नाम की दो धाराएं नेपाल से भारत में प्रवेश करती थीं। बड़ी बागमती मुजफ्फरपुर जिले (वर्तमान सीतामढ़ी) के डुमरी गाँव में प्रवेश करती थी और मनियारी और अखता गाँवों से होती हुई खोरीपाकर गाँव तक आती थी जहाँ इसके दाहिने किनारे पर लालबकेया नदी मिलती थी। यहाँ से आगे चल कर यह नदी पूर्वी चम्पारण के मेहसी से 16 किलोमीटर उत्तर-पूर्व पिपराखास में बूढ़ी गंडक से मिल जाया करती थी। यहाँ से यह नदी वर्तमान बकुआ

सिरनियां के पास बागमती और दरभंगा बागमती का संगम स्थल

नाले के मार्ग से दक्षिण-पूर्व दिशा में तुर्की होते हुए आगे बढ़ती थी। इसी प्रवाह में बंघरस नाम के गाँव के पास इसके बायें किनारे पर छोटी बागमती मिलती थी। अब यह संयुक्त धारा मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को नरमा के पास 19 किलोमीटर की दूरी पर और जारंग के पास 34 किलोमीटर पर मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग को पार करते हुए रोसड़ा आ जाती थी। रोसड़ा में बूढ़ी गंडक एक बार फिर आ कर इसमें मिल जाती थी और यह संयुक्त धारा गोगरी के पास गंगा में मिल जाती थी। रोसड़ा के नीचे तब बागमती की धारा वही थी जो आजकल बूढ़ी गंडक का मार्ग है। यह दिलचस्प बात है कि आज जो बूढ़ी गंडक नदी है वह सन् 1770 के दशक में बागमती की एक मामूली सी धारा मात्र थी जो कि इस नदी से नरहर पकड़ी गाँव के पास अलग होती थी और फिर रोसड़ा के पास उससे पुनः जुड़ जाती थी। उन दिनों सिकरहना (ऊपरी क्षेत्रों में बूढ़ी गंडक को इसी नाम से जाना जाता है) के पानी का कुछ भाग निश्चित रूप से बागमती की इस धारा से होकर बहता रहा होगा। ऐसा विश्वास किया जाता है कि 1770 से पहले रोसड़ा के नीचे जो बागमती की धारा थी वह हसनपुर-बागमती के नाम से जानी जाती थी और बदलाघाट से होकर गुजरती थी।[11]

उधर रेनेल द्वारा चिह्नित छोटी बागमती नेपाल से सीधे दक्षिण दिशा में बहते हुए परसौनी, बेलसंड और ओलीपुर गाँवों से होते हुए तुर्की से लगभग 8 किलोमीटर पूरब टेंगराहा गाँव के पास बड़ी बागमती से मिल जाती थी। बागमती की इस धारा को नदी की पुरानी धार कहते हैं जिसमें अब केवल बरसात में ही पानी आता है। यह धार अब लखनदेई नदी से मिलती है। कालान्तर में यह बड़ी बागमती नदी पूरब की ओर मुड़ गई और यह धारा सुगिया, हिरमा और चौथनी गाँवों से होकर बहने लगी। नदी की धारा के इस परिवर्तन का समय ज्ञात नहीं है।[12]

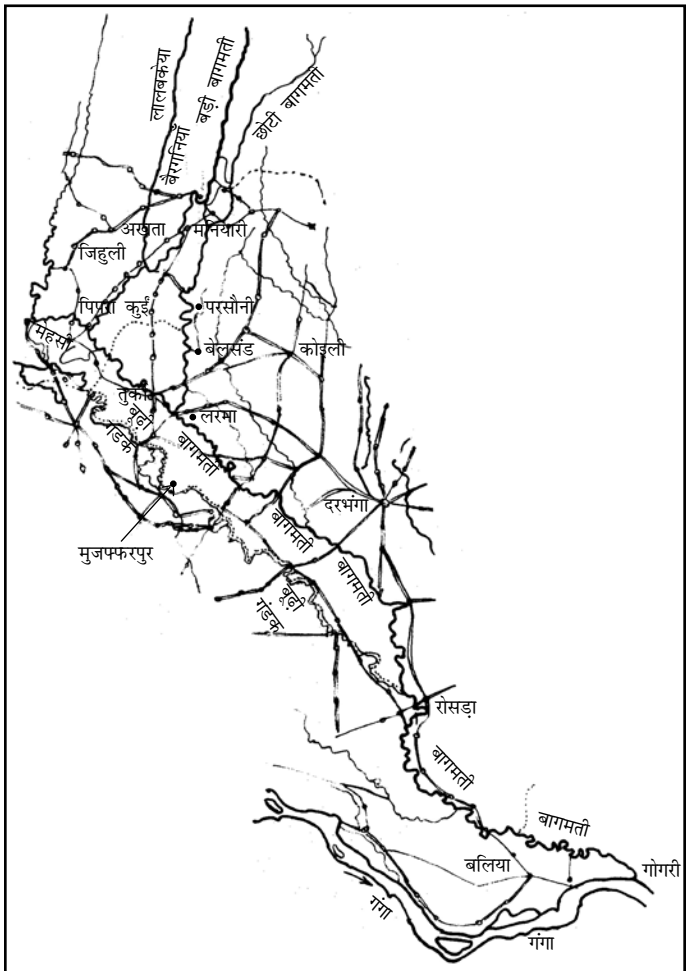

चित्र-1.4: जेम्स रेनेल के समय की बागमती की धारा (1780)

सन् 1810 में तुर्की के इर्द-गिर्द बागमती नदी के दाहिने किनारे पर कांटी के नील कारखाने के मैनेजर ने 26 मील (42 किलोमीटर) लम्बा एक तटबन्ध बनवाया था ताकि बागमती और छोटी गंडक (बूढ़ी गंडक) के बीच के दोआब की 90.25 वर्ग मील (231 वर्ग किलोमीटर) जमीन पर लगी नील की खेती और फैक्टरी की बागमती की बाढ़ से रक्षा हो सके। यह तटबन्ध उत्तर में चम्पारण जिले के मधुबन से लेकर दक्षिण में भुतही गाँव तक फैला हुआ था। स्थानीय लोग इसे तुर्की बांध या राजाबांध कहते थे। 1875 में बंगाल एम्बैन्कमेन्ट ऐक्ट के तहत सरकार ने इस तटबन्ध के रख-रखाव का अधिग्रहण कर लिया और उसे गंडक डिवीज़न के एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर के अधीन कर दिया। नील कम्पनी इस तटबन्ध का रख-रखाव ठीक-ठाक ढंग से ही कर रही थी क्योंकि 1810 से 1870 के बीच यह तटबन्ध मात्र दो बार ही टूटा था।[13]

1.4.2 विलियम हन्टर के समय की बागमती (1877)—हन्टर के अनुसार यह नदी नेपाल से भारतीय सीमा में सीतामढ़ी सब-डिवीज़न के मनियारी घाट गाँव के पास प्रवेश करती थी। अपने दाहिने किनारे पर अदौरी के पास लालबकेया के साथ संगम करने के बाद यह नदी तिरहुत और चम्पारण की सीमा बनाते हुए नरमा तक जाती थी (चित्र-1.5)। उसके बाद वह दक्षिण-पूर्व दिशा में बूढ़ी गंडक के समानान्तर बहते हुए रोसड़ा में ही बूढ़ी गंडक से संगम कर लेती थी। हन्टर के अनुसार ऊपरी क्षेत्र में इस नदी का प्रवाह बहुत तेज़ था और वह 7 मील प्रति घंटा (लगभग 11 किलोमीटर प्रति घंटा) तक हो जाया करता था। नदी में भयानक मोड़ थे जिनकी वजह से नदी में नाव चलाना बहुत मुश्किल होता था। हन्टर द्वारा दिये गए नक्शे में बागमती की पुरानी धार को दिखाया नहीं गया है मगर वह बागमती की पुरानी धार के अस्तित्व की तरफ इशारा जरूर करते हैं जो कि भारतीय भाग में मलै से शुरू होकर कालिया घाट के 3.5 मील (5.6 किलोमीटर) उत्तर-पश्चिम में बिलन्दपुर घाट के पास बागमती नदी की वर्तमान धारा में मिल जाती थी। ऐसा लगता है कि हन्टर ने मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग पर स्थित कोड़लहिया घाट को कालिया घाट का नाम दिया जो कि अंग्रेजी के उच्चारण दोष के कारण हुआ होगा। दाईं छपरा, बेलसण्ड और भगवानपुर की नील की फैक्टरियाँ इसी पुरानी धार के पूर्वी तट पर अवस्थित थीं और नदी के पानी का नील के उत्पादन में इस्तेमाल करती थीं। तुर्की के इर्द-गिर्द कांटी नील फैक्टरी के मैनेजर द्वारा बनाये गए तटबन्ध के बारे में भले ही यह कहा गया था कि यह बागमती और बूढ़ी गंडक के दोआब की 256 वर्ग किलोमीटर भूमि की बाढ़ से रक्षा करता था और वह 60 साल के अपने वजूद में सिर्फ दो बार टूटा था मगर हन्टर के अनुसार उसके ऊपर से अक्सर नदी का पानी छलक कर बागमती-बूढ़ी गंडक दोआब वाले हिस्से को तबाह किया करता था।[14] सरकार द्वारा तुर्की तटबन्धों के अधिग्रहण की यही वजह रही होगी।

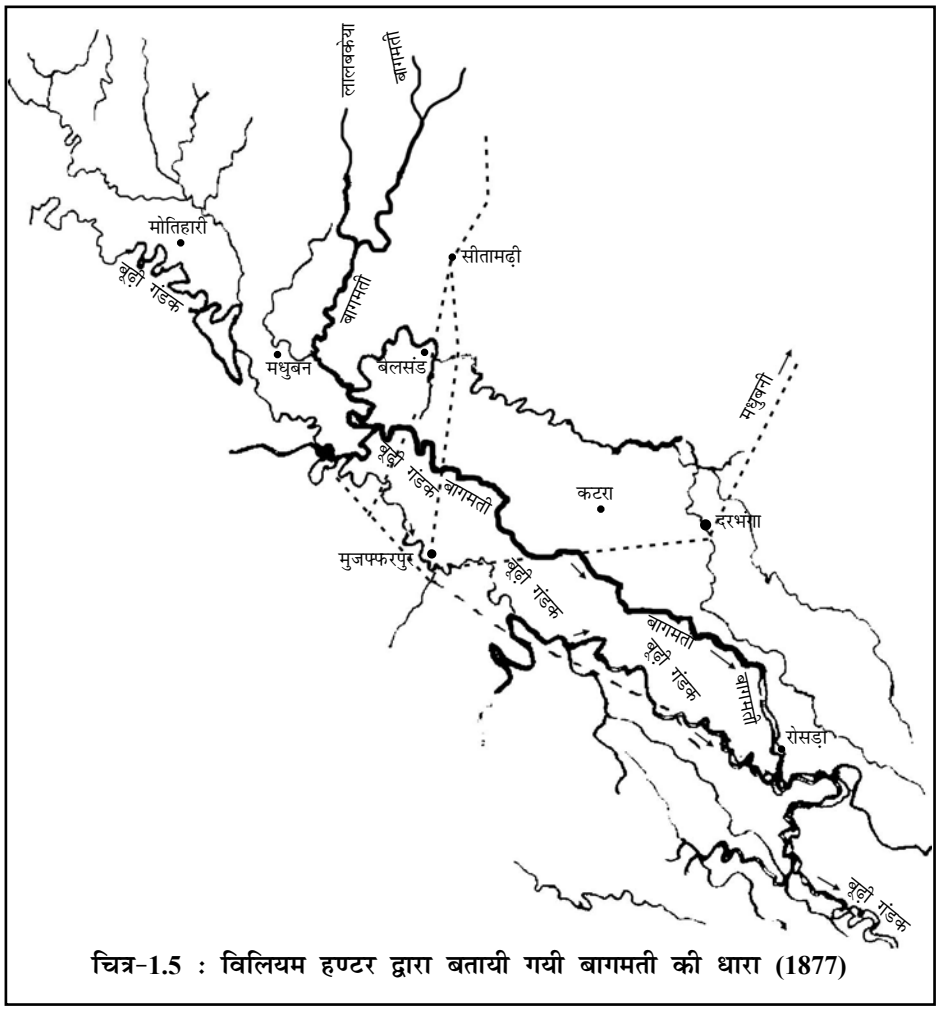

चित्र-1.5 : विलियम हण्टर द्वारा बतायी गयी बागमती की धारा (1877)

हन्टर के समय लखनदेई भारतीय सीमा में तिरहुत के इटहरा गाँव में प्रवेश करती थी। नीचे चल कर उसमें कई स्थानीय नाले मिल कर उसे नदी की मान्यता दिलवाते थे। अब इस नदी की चौड़ाई सतह पर लगभग 40 गज (लगभग 13 मीटर) और पेंदी में 20 गज (6.5 मीटर) थी और उसकी गहराई 15 फीट (5 मीटर) के आस-पास थी। दक्षिण की ओर पटनियाँ और सीतामढ़ी से हो कर बहने वाली यह नदी दरभंगा-मुजफ्फरपुर मार्ग से कोई 7 या 8 मील (लगभग 11 या 13 किलोमीटर) दक्षिण में बागमती से बेलौर गाँव के पास जाकर मिलती थी। इस नदी का पानी बरसात में जिस तेजी के साथ चढ़ता था, उतनी ही चुस्ती से उतर भी जाता था और इसलिए नौ-परिवहन के लिए इसे उपयुक्त नहीं माना जाता था यद्यपि इससे मौसम और स्थान के मुताबिक 100 से 500 मन के बोझ वाली नावें चलाई जा सकती थीं।[15] राजा पट्टी, डुमरा, बेलाही, शेरपुर और राजखंड की नील की फैक्टरियाँ लखनदेई के किनारे स्थित थीं। लखनदेई से संगम के बाद नदी अपने पुराने मार्ग से रोसड़ा तक जाती थी जहाँ उसका संगम बूढ़ी गंडक से होता था और यह गोगरी के पास गंगा नदी में समाहित हो जाती थी।

बागमती नदी के साथ समस्या यह है कि बरसात के समय उसके पानी में बड़ी मात्रा में गाद आती है जो नदी की धारा के इर्द-गिर्द जमा होने लगती है। मिट्टी का यह जमाव पानी के बहाव के रास्ते को घटाता है और नदी वह मार्ग खोजना शुरू करती है जिसमें उसे रुकावट का कम से कम सामना करना पड़े। इस रुकावट के कुछ कारण तो प्राकृतिक होते हैं मगर सड़कों, तटबन्धों और नहरों आदि के बेतरतीब निर्माण से भी नदी का स्वाभाविक प्रवाह बाधित होता है। परिस्थितियाँ अनुकूल होते ही नदी अपनी धारा बदल लेती है। कभी-कभी यह बदलाव संपूर्ण होता है यानी नदी पुरानी धारा को पूरी तरह छोड़ कर नई धारा में बहने लगती है या फिर नई धारा बन तो जाती है मगर पानी की मात्रा नई और पुरानी धारा में बंट जाती है। नदियाँ इसी तरह अपना स्वरूप और प्रवाह मार्ग बदलती रहती हैं। **मधुबनी-दरभंगा जिलों में दरभंगा-बागमती, अधवारा समूह, धौंस और लखनदेई जैसी नदियाँ कभी न कभी बागमती की ही धाराएँ रही होंगी यद्यपि इस परिवर्तन का काल निर्धारण अभी तक संभव नहीं हो सका है।**[16]

1.4.3 बागमती का 1905-15 के बीच का धारा-मार्ग–बागमती पर कांटी नील फैक्टरी के निलहे गोरों द्वारा तुर्की तटबन्ध के निर्माण से बागमती के पानी के साथ आने वाली गाद का दक्षिण की ओर जाना रुक गया। यही वजह थी कि मिट्टी के जमाव की वजह से बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बागमती ने लालगढ़ के उत्तर में एक नई धारा फोड़ ली थी। यह धारा ताजपुर के उत्तर से हो कर बहती थी (चित्र-1.6)। इस धारा के उत्तर की ओर खिसकने के कारण कोला नदी से बागमती का संगम भी उत्तर की ओर खिसक गया। कुछ ऐसा ही इस नई बागमती और लखनदेई के साथ भी गायघाट के दक्षिण-पूर्व में हुआ और वहाँ भी यह संगम स्थल उत्तर की ओर खिसक गया। अब तुर्की, मीनापुर, नरमा होकर आने वाली बागमती की छाड़न धारा, नई बागमती और लखनदेई एकाकार होकर दरभंगा जिले में प्रवेश करने लगीं। बागमती की इस धारा का मानचित्र मुज़फ्फरपुर के 1907 वाले गज़ैटियर में उपलब्ध है।

1.4.4 बागमती का 1915-1929 के बीच का धारा-मार्ग–1905 से 1915 के दस वर्षों के बीच बागमती की धारा कभी स्थिर नहीं रह पायी और वह वर्तमान मुज़फ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग में 9 से 16 किलोमीटर के बीच घूमती रही मगर इस रास्ते से उसका प्रवाह क्रमशः घटता गया। इसके साथ उत्तर में यह नदी हिरम्मा घाट के उत्तर-पश्चिम में नई-नई धाराएं फोड़ने लगी थी। धीरे-धीरे यह प्रवाह खनुआं घाट की ओर मुड़ने लगा और 1915 आते-आते बागमती खनुआं धार (इसे पहले सिपरी धार या सियारी धार भी कहा जाता था) से होकर बहने लगी। देखते-देखते इस धार की चौड़ाई 270 फुट से बढ़ कर 690 फुट तक बढ़ गयी। यह धार आजकल प्रायः सूखी हुई है और कोड़लहिया

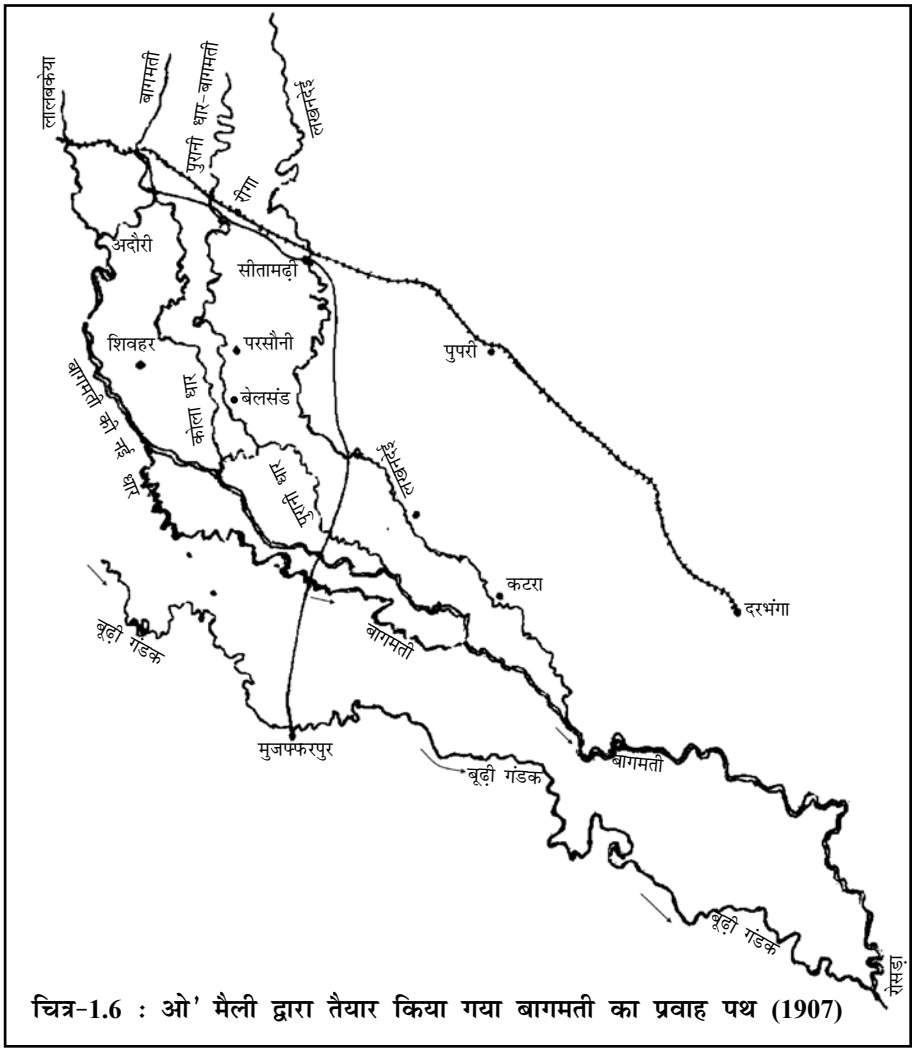

चित्र-1.6 : ओ' मैली द्वारा तैयार किया गया बागमती का प्रवाह पथ (1907)

गाँव में मुज़फ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को 19 किलोमीटर पर पार करती है (चित्र-1.7)।[17]

1956-57 के बीच बिहार में अच्छा खासा सूखा पड़ा था जिसमें राज्य सरकार की तरफ से इस धार की उड़ाही (खोद कर उसकी क्षमता बढ़ाना) करने की कोशिश की गयी थी। सरकार को उम्मीद थी कि ऐसा करने से सिंचाई की अतिरिक्त व्यवस्था की जा सकेगी। इस खुदाई के क्रम में ही इस धार का नाम खनुआं धार हो गया।

1.4.5 बागमती का प्रवाह (1929 से 1938)–1929 से 1938 के बीच बागमती की धारा में बहुत से परिवर्तन हुए। इनमें से कुछ कारण तो प्राकृतिक थे और कुछ मानव निर्मित जिनकी ओर हम पहले इशारा कर आये हैं। तुर्की तटबन्ध के निर्माण के बाद परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि बागमती की पुरानी धार का जो पानी टेंगराहा के पास बड़ी आसानी से नदी में चला जाता था वह बहुत कम हो गया क्योंकि गिद्धा घाट के पास बागमती उत्तर की ओर खिसकने लगी थी। हालत यहाँ तक बिगड़ी कि पुरानी धार का पानी बागमती में जाने के बजाय बागमती का पानी उलटे पुरानी धार में घुसने की कोशिश करने लगा जिससे पुरानी धार में पानी का लेवेल बढ़ने लगा। अब यह पानी उलटे ढलान के कारण पीछे की ओर बहुत दूर तक पुरानी धार में जा नहीं सकता था इसलिए नदी किनारे तोड़ कर नई धारा बनाने पर मजबूर हो गई।

कहते हैं कि 1929 में बिलन्दपुर के पास के गाँव नन्दना के ज़मींदार बच्चू बाबू ने बागमती की मिन्नत अरदास करके उसे अपने यहाँ आने का निमंत्रण दिया और 8 फुट चौड़ा एक नाला खोद कर नदी को अपने खेतों से जोड़ दिया। वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति कुछ अनुकूल थी और बागमती की धार सचमुच इस नाले की ओर मुड़ गयी। 1934 के भूकम्प ने नदी के लिए यह काम और आसान कर दिया था। यही नाला बाद में नन्दना बाहा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बागमती की धारा में इस बदलाव के कारण मुजफ्फरपुर सीतामढ़ी मार्ग के 10 से 18 किलोमीटर के बीच सड़क के दोनों तरफ बाढ़ का पानी भरने लगा जिसकी निकासी का एक ही संकरा सा रास्ता बरहोर बाहा का था जो मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग को 25 से 27 किलोमीटर के बीच पार करता था। 1937 में खनुआं धार प्रायः पूरी तरह सूख गई और अब सारा का सारा पानी इसी नन्दना बाहा और बरहोर बाहा के माध्यम से कनौजर घाट तक चला जाता था।[18]

उधर मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी के बीच 10.5 वर्ग मील (26 वर्ग किलोमीटर) क्षेत्र में फैला हुआ भरथुआ नाम का एक चौर हुआ करता था। यह ठहरे पानी की एक झील थी और इसमें पानी भरने वाले जितने नाले थे वे सब लम्बे समय से पानी के साथ गाद आने के कारण पटने लगे थे। 1936 में प्रख्यात साहित्यकार रामबृक्ष बेनीपुरी के आग्रह पर महात्मा गांधी सीतामढ़ी आये थे और उन्होंने नाव से इस चौर में भ्रमण भी किया था। बेनीपुर भरथुआ के बगल का गाँव था। गाँधी जी के भरथुआ आने के फलस्वरूप चौर के पानी की निकासी की माँग उठने लगी और गाँधी जी तथा बेनीपुरी जी के पुण्य-प्रताप से इस चौर से जल निकासी का काम दिसम्बर 1936 में शुरू हुआ और 1937 जुलाई में पूरा कर लिया गया। योजना यह थी कि जदुआ बाहा को खोद कर उसे लखनदेई में मिला दिया जाए जिससे चौर का पानी निकल जायेगा।[19] यहाँ तक तो सब ठीक चला मगर चौर में पानी का लेवेल कम होने पर जो नाले उसमें आकर मिलते थे उनकी सफाई अपने आप होने लगी। नतीजा यह हुआ कि बलुआ बाहा और मरने धार जैसे नाले पहले से कहीं ज्यादा सक्रिय हो गए। कुंडल गाँव के पास से एक नया नाला भी चालू हो गया जो भरथुआ में पानी लाता था।[20]

1.4.6 बागमती का प्रवाह (1938 से 1954)–1938 से 1954 के बीच बागमती कोड़लहिया घाट और रामपुरहरि गाँव के बीच मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को पार करती रही। 1954 में मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग के उत्तर-पश्चिम में, जहाँ पहले कभी सियारी धार का उद्गम हुआ करता था, बागमती ने अपने बायें किनारे पर एक नई धारा फोड़ दी जो

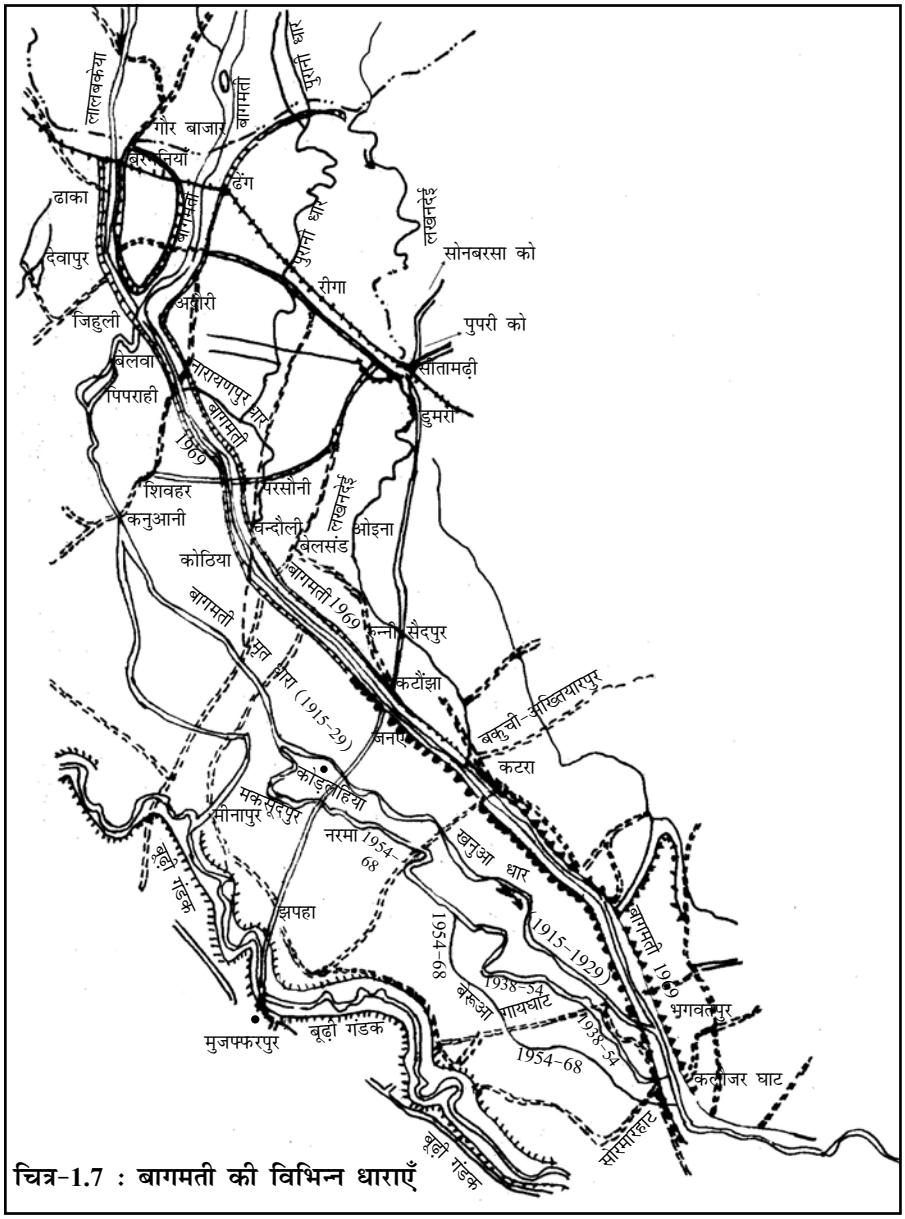

चित्र-1.7 : बागमती की विभिन्न धाराएँ

सियारी धार के दाहिनी तरफ पड़ती थी। सियारी धार का मुंह स्थानीय गाँव वालों ने बन्द कर दिया था। इस नई धारा ने मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को मकसूदपुर गाँव के पास पार किया और मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग को 36 किलोमीटर पर पार किया। कनौजर घाट के पास नदी फिर अपनी पुरानी धारा में आ गयी।[21]*

1.4.7 बागमती का प्रवाह (1969)– नदी का वर्तमान स्वरूप 1969 में उभरा जब यह अदौरी गाँव से एक किलोमीटर नीचे अपने बाँये किनारे को तोड़कर रतनपुर पकड़ी गाँव के पास कोला नदी में जा मिली थी। कोला नदी कभी बागमती की धारा रही होगी जो अब बागमती की गाद से काफी हद तक पट चुकी है। दरभंगा-नरकटियागंज रेल लाइन और ढेंग-मेजरगंज रोड तथा सिसउला से होते हुए यह नदी गिद्धा घाट से कोई 6 किलोमीटर उत्तर में दरियापुर गाँव के पास बागमती की पुरानी धार में मिल जाती है। कोला धार बहुत ही पतली और छिछली नदी है और आगे चल कर डुमरा से थोड़ा ऊपर मनुस्मारा (पुरानी धार) का साथ पकड़ लेती है। डुमरा से ठीक नीचे नदी के दाहिने किनारे पर बागमती की एक पुरानी धारा उससे आ मिलती है। इसके बाद का नदी का मार्ग वही है जो मनुस्मारा का प्रवाह मार्ग था। बागमती की यही धारा मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को कटौंझा के पास भनसपट्टी से लगभग 2 किलोमीटर पहले पार करती है। कटौंझा से 23 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व दिशा में आगे चल कर बागमती के बायें किनारे पर लखनदेई नदी मिलती है और उससे 10 किलोमीटर और नीचे चल कर बागमती की एक पुरानी धारा जिससे होकर बागमती 1915 से 1935 के बीच बहा करती थी, आकर दाहिने किनारे पर मिल जाती है। जब नदी कनौजर घाट पहुँचने को होती है, उससे थोड़ा पहले उसके दाहिने किनारे पर एक और मृत प्रायः धार बागमती से मिलती है।[22]

1.4.8 बागमती का प्रवाह (1974)–1969 के पहले तक बागमती नदी लहसुनियाँ, बेलवा, कनुआनी, मकसूदपुर, बेरुआ और सुरमार हाट होकर बहा करती थी। लेकिन 1969 की बाढ़ में लहसुनियाँ के पास नदी का मुँह बन्द होने लगा और अब नदी दोस्तिया, पकड़ी, धनकौल, कन्सार, कटरा, हसनपुर और सुरमार हाट होकर पूरी तरह बहने लगी। 1974 में इस नदी घाटी में भीषण बाढ़ आई थी और इसका पूरा इलाका प्रायः तीन सप्ताह तक पानी में डूबा रहा। बाढ़ के पानी के उतरने के बाद पता लगा कि लहसुनियाँ गाँव के पास से बागमती की एक धारा फूट पड़ी है जो कि थोड़ा नीचे जाकर बागमती से कनुआनी में मिल जाती थी। यह धारा 1970 तक सक्रिय रहने के बाद सूख चुकी थी। बेलवा से फूट कर निकलने वाली इस धारा ने पर्राहा, सरदारपुर और मीनापुर होते हुए बूढ़ी गंडक की ओर का रुख किया यद्यपि 1969 से पहले वाली धारा मकसूदपुर के पास 1974 में प्रायः सूख चुकी थी और उसकी सूखी हुई तलहटी में खर-पतवार ही उगता था।[23]

1.4.9 बागमती का 1983 वाला प्रवाह–1983 में बेलवा गाँव के पास नदी ने फिर अपनी धारा मोड़ने की कोशिश की और अब पानी बेलवा धार की एक ताजा निर्मित चैनेल से बहने लगा। अक्टूबर माह में नदी का अधिकांश पानी इसी चैनेल से बह रहा था। इसका परिणाम यह हुआ कि नदी की जो धारा दोस्तिया, पकड़ी, धनकौल, कन्सार आदि गाँवों से होकर 1969 में बहने लगी थी उसमें पानी कम हो गया। 1985 में खोरीपाकर गाँव के नीचे वर्तमान बागमती ने एक बार फिर बेलवा के पास दक्षिण-पश्चिम दिशा में अपनी पुरानी धारा

* यह दूरियाँ पहले मुजफ्फरपुर कलेक्टरेट से नापी जाती थीं। बाद में इनका निर्धारण ज़ीरो माइल से होने लगा। इसमें लगभग ढाई से तीन किलोमीटर का अन्तर हो जाता है।

में जाने की कोशिश की जो कई वर्षों तक जारी रही। यहाँ से बरसात के मौसम में नदी का लगभग 40 प्रतिशत प्रवाह इस बेलवा धार से निकल जाता है और मुजफ्फरपुर जिले में मीनापुर के पास बूढ़ी गंडक में मिल जाता है।[24]

1974 तथा 1983 की नदी की धारा में परिवर्तन की घटनाएं बागमती नदी पर तटबन्ध के निर्माण के बाद की हैं। ढेंग से लेकर रुन्नीसैदपुर तक नदी के दोनों तरफ तटबन्धों के निर्माण का काम 1971 में शुरू हुआ था और 1978 तक पूरा कर लिया गया था। यह तटबन्ध नदी की उसी धारा पर है जो उसने 1969 में अख्तियार किया था।

1.5 बागमती की सहायक धाराएँ

बागमती से संगम करने वाली और उसकी धारा से फूट कर निकलने वाली बहुत सी नदियाँ हैं। इनमें से कुछ मुख्य नदियों और कुछ छाड़न धारों तथा उससे फूट कर निकलने वाली धारों के बारे में हम प्रसंगवश यहाँ चर्चा करेंगे।

1.5.1 लालबकेया–यह नदी नेपाल में हेतौण्डा के पास चूरे पर्वतमाला से 1525 मीटर की ऊँचाई से निकलती है। 109 किलोमीटर लम्बी यह सदानीरा नदी नेपाल में लगभग 80 किलोमीटर की दूरी तय करके नेपाल के गौर बाजार कस्बे के पश्चिम से भारत में प्रवेश करती है। भारत में इसका प्रवेश सीतामढ़ी जिले के बैरगनियां कस्बे के पश्चिम गुआबाड़ी गाँव में होता है (चित्र-1.3)। भारत-नेपाल सीमा से 29 किलोमीटर दक्षिण जाकर यह नदी खोरीपाकर गाँव में बागमती से उसके दाहिने किनारे पर संगम कर लेती है। इस नदी का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 896 वर्ग किलोमीटर है। गर्मी के मौसम में नदी का प्रवाह बहुत कम हो जाया करता है। लालबकेया के पश्चिमी किनारे की जमीन ऊपर की ओर उठी हुई है मगर पूर्वी किनारे की जमीन कुछ दबी हुई है। इस वजह से बरसात के मौसम में नदी का पानी पूर्वी किनारे पर ही छलकने का प्रयास करता है। इस नदी में किनारों के कटाव की भी गंभीर समस्या है। नदी के भारतीय भाग में इसके दोनों किनारों पर तटबन्ध बने हुए हैं जिनका अब विस्तार नेपाल में भी कर दिया गया है। लालबकेया के पूर्वी तटबन्ध को किसी भी प्रकार की क्षति पहुँचने पर बाढ़ का सारा पानी नेपाल के रौतहट जिले के मुख्यालय गौर बाज़ार और भारत के सीतामढ़ी जिले के बैरगनियाँ शहर और उसके प्रखण्ड के गाँवों में घुस कर तबाही मचाता है।

1896-97 में बिहार में भयंकर अकाल पड़ा था और तब इस नदी के पानी से सिंचाई करने की बात सोची गयी यद्यपि सिंचाई से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण काम उस समय लोगों को रोजगार मुहय्या करना था। गंडक सर्किल के सुपरिन्टेंडिंग इंजीनियर बकली के अनुरोध पर बटलर नाम के एक इंजीनियर ने नदी पर एक वीयर बना कर नहर निकालने का प्रस्ताव किया जिससे खरीफ के मौसम में चम्पारण जिले के ढाका और पताही प्रखंडों की लगभग 6,000 हेक्टेयर तथा रबी के मौसम में 2,000 हेक्टेयर जमीन पर सिंचाई करने की योजना थी। परियोजना में नदी के दाहिने किनारे पर 5.2 किलोमीटर लम्बी मुख्य नहर और 22 किलोमीटर लम्बी दो शाखा नहरें निकालने का प्रस्ताव था। बाद में यह महसूस किया गया कि इतनी जमीन सींचने के लिए जितना पानी चाहिये उतना नदी में था नहीं। फिर भी यह नहरें उतनी ही क्षमता की बनाई गईं। इनका निर्माण मार्च 1901 में शुरू किया गया और 1904 में पूरा कर लिया गया था। इस नहर से नील की खेती तथा गन्ने की फसल को सींचने का अनुमान लगाया गया था।

1934 के बिहार भूकम्प के समय इस नहर की संरचना को काफी नुकसान पहुँचा था और इससे नहर की सिंचाई क्षमता काफी हद तक प्रभावित हुई थी। आज कल इस नहर प्रणाली से पूर्वी चम्पारण जिले की 4450 हेक्टेयर के आस-पास सिंचाई किये जाने की बात कही जाती है और तब से अब तक इस नहर प्रणाली के आधुनिकीकरण की बात चल रही है।[25]

1.5.2 लखनदेई–कहा जाता है कि इस नदी का मौलिक नाम लक्ष्मणावती है परन्तु हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' के अनुसार इस नदी का नाम लक्ष्मणा देवी ज्यादा जंचता है। उनका यह भी मानना था कि इस नदी का नाम मैथिल कोकिल विद्यापति की काव्य नायिका लखिमादेई के नाम पर लखनदेई पड़ा है।[26] यह नदी नेपाल में हिमालय के निचले हिस्से में मरिन खोला से निकलती है। 282 किलोमीटर लम्बी इस नदी का ऊपरी 112 किलोमीटर नेपाल में पड़ता है। कुल मिला कर 1061 वर्ग किलोमीटर जल ग्रहण क्षेत्र वाली इस नदी की बाकी 170 किलोमीटर लम्बाई भारत (बिहार) में पड़ती है और अनुमान किया जाता है कि इस नदी का अधिकतम प्रवाह 300 क्यूसेक के आस-पास होता है। यह नदी आजकल बागमती में बायें किनारे पर मुजफ्फरपुर जिले के कटरा प्रखंड के बकुची-अख्तियारपुर गाँव में मिल जाती है। इस तरह बकुची-अख्तियारपुर में आजकल लखनदेई का अस्तित्व समाप्त हो जाता है और यहाँ से आगे इस धारा को नये लोग बागमती ही कहने लगे हैं। बड़े-बुजुर्गों के बीच में दरभंगा जिले के कनौजर घाट तक बागमती की धारा लखनदेई के नाम से ही प्रसिद्ध है। 1954 में बिहार सरकार ने दरभंगा जिले में नदी के निचले हिस्से में लखनदेई की धारा की उड़ाही का काम करवाया था जिसमें उसे कोई ख़ास सफलता नहीं मिली वरन् उसने दूसरी समस्याओं को ही जन्म दिया।[27] इस नदी में पानी का प्रवाह तो बहुत ज्यादा नहीं रहता है मगर जो भी पानी बरसात में इस नदी में आता है वह दोनों किनारों को तोड़ कर बहता हुआ काफी तबाही पैदा करता है। नदी के किनारों पर कहीं-कहीं आस-पास के ग्रामीणों या पुराने समय के जमीन्दारों ने तटबन्ध बना रखे थे जिनका सरकार के अनुसार कोई डिज़ाइन या क्रम नहीं था। कहीं यह तटबन्ध नदी के बाईं तरफ हैं तो कहीं दाहिनी तरफ या फिर दोनों तरफ। एक अच्छी खासी लम्बाई में तटबन्ध कहीं भी नहीं हैं। बताया जाता है कि इन तटबन्धों में से कुछ का निर्माण दरभंगा राज की ओर से भी किया गया था क्योंकि नदी के बायें किनारे से छलकता हुआ बरसाती पानी दरभंगा शहर और महाराजा दरभंगा के महल तक चोट करता था। 2006 में बिहार सरकार ने एक कानून बना कर जमीन्दारों और रियासतों द्वारा बनाये गए तटबन्धों के रख-रखाव और मरम्मत का काम, जो कि तब तक राजस्व विभाग देखा करता था, उससे लेकर राज्य के जल-संसाधन विभाग के सुपुर्द कर दिया था। यह एक अलग बात है कि 2009 में जब लखनदेई के तटबन्धों में दरार पड़ी तो राज्य सरकार साफ मुकर गयी कि यह तटबन्ध किसी भी मायने में जल-संसाधन विभाग से सम्बद्ध हैं।[28] फिलहाल, 2010 में राज्य सरकार के जल-संसाधन विभाग द्वारा लखनदेई के तटबन्धों के निर्माण का काम शुरू हुआ है।

बकुची-अख्तियारपुर में बागमती और लखनदेई का संगम स्थल

बहरहाल, सांस्कृतिक दृष्टि से बागमती की तरह लखनदेई भी एक बहुत महत्वपूर्ण नदी है। यह नदी बिहार के सीतामढ़ी जिले से होकर बहती है और सीतामढ़ी के जिला मुख्यालय के बीच से इस नदी का प्रवाह होता है। ऐसी मान्यता है कि जगज्जननी सीता का जन्म यहीं हुआ था। कहा जाता है कि सीरध्वज जनक के राज्य काल में इस क्षेत्र में एक बार बारह वर्षों की अनावृष्टि के कारण भयंकर अकाल पड़ा। ऋषि-मुनियों, पुरोहितों और विद्वानों का सुझाव था कि अगर राजा जनक खेतों में स्वयं हल चलायें तो वर्षा होगी। राजा के लिए जो हल बनवाया गया उसमें सोने का फाल लगाया गया था और निर्धारित समय पर राजा हल चलाने के लिए खेत में उतरे। हल चलाने के क्रम में यह फाल जमीन में गड़े एक मटके से टकराया। मटके में राजा को एक कन्या दिखाई पड़ी। हल के फाल (सीता) से टकरा कर उत्पन्न हुई कन्या का नाम राजा ने सीता ही रख दिया। जनक (विदेह) की पुत्री होने के कारण उस कन्या को जानकी और वैदही भी कहा जाने लगा। विश्वास किया जाता है कि आज का सीतामढ़ी शहर ही सीता की जन्मस्थली है। सीतामढ़ी शहर में एक मन्दिर है जिसे जानकी मन्दिर कहते हैं। इस मन्दिर का इतिहास उपलब्ध नहीं है मगर जानकी के जन्म दिन चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी (जानकी नवमी) पर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। कुछ लोगों का मानना है कि सीता का जन्म शहर से लगे हुआ पुनौरा गाँव में हुआ था जहाँ एक आधुनिक मंदिर का निर्माण किया गया है।

1.5.3 अधवारा समूह की नदियाँ–पश्चिम में बागमती तथा पूरब में कमला के बीच छोटी-छोटी नदियों का एक समूह सक्रिय है जो कि उत्तर में नेपाल से भारत (बिहार) में प्रवेश करता है और मुख्यत: तीन धाराओं में बंटा हुआ दिखाई पड़ता है। इन नदियों को आम तौर पर अधवारा समूह की नदियों के नाम से पुकारा जाता है। भारतीय भाग में इन नदियों के विस्तार क्षेत्र में सीतामढ़ी जिले का उत्तर-पूर्वी भाग, मधुबनी जिले का पश्चिमी भाग और दरभंगा जिले का उत्तर-पश्चिम वाला क्षेत्र आता है। इसमें सीतामढ़ी जिले के पुपरी, सोनबरसा, परिहार, सुरसंड, बथनाहा और बाजपट्टी, मधुबनी जिले के हरलाखी, मधवापुर, बासोपट्टी, बेनीपट्टी, बिसफी तथा रहिका प्रखंड का कुछ भाग और दरभंगा जिले के केवटी, जाले, सदर, सिंहवारा, बहादुरपुर, हनुमान नगर और हायाघाट प्रखण्ड आते हैं। आगे चल कर सभी नदियाँ एक दूसरे में समाती हुई दरभंगा-बागमती के नाम से हायाघाट के पास बागमती में मिल जाती हैं।

अधवारा समूह की पहली मुख्य धारा में जमुरा, झीम, अधवारा, शिकाओ, बुढ़नद, मोहिनी और खिरोई नदियों का नाम आता है (चित्र-1.8)। इस समूह की नदियों में सबसे पहला नाम झीम नदी का आता है जो नेपाल की सीमा के अन्दर कलिन्जोर खोला और कुलिजर खोला के सम्मिलित प्रवाह से निर्मित होती है। झीम का उद्‌गम समुद्र तल से प्राय: 610 मीटर ऊपर शिवालिक पर्वत माला में होता है। सीतामढ़ी जिले में भारतीय सीमा से लगभग 16 किलोमीटर दक्षिण में झीम के बायें किनारे पर सिंघबाहिनी, अधवारा, गोगा और बांकी नदियों का सम्मिलित प्रवाह अधवारा के माध्यम से इसमें आ मिलता है और तब इस सम्मिलित धारा का नाम अधवारा हो जाता है। सोनबरसा के पास अधवारा से भटवलिया के निकट दाहिने किनारे पर जमुरा नदी संगम करती है। जमुरा नदी खुद लखनदेई के पूरब एक चौर से निकलती है। लखनदेई के पूरब एक दूसरे चौर से निकली शिकाओ नदी बाजपट्टी के उत्तर में अधवारा नदी से दाहिने किनारे पर आ मिलती है। इसी तरह पुपरी के उत्तर-पश्चिम से भदई चौर नाम की शृंखला से निकली हुई एक नदी बुढ़नद, ऐग्रोपट्टी होते हुए रानीपुर गाँव के पास अधवारा (अब इसका नाम खिरोई हो जाता है) से आकर मिल जाती है। यहाँ से खिरोई नदी पहले पुपरी-बेनीपट्टी मार्ग को पार करती है और फिर घोघराहा-कमतौल मार्ग तथा कमतौल रेलवे स्टेशन से लगभग

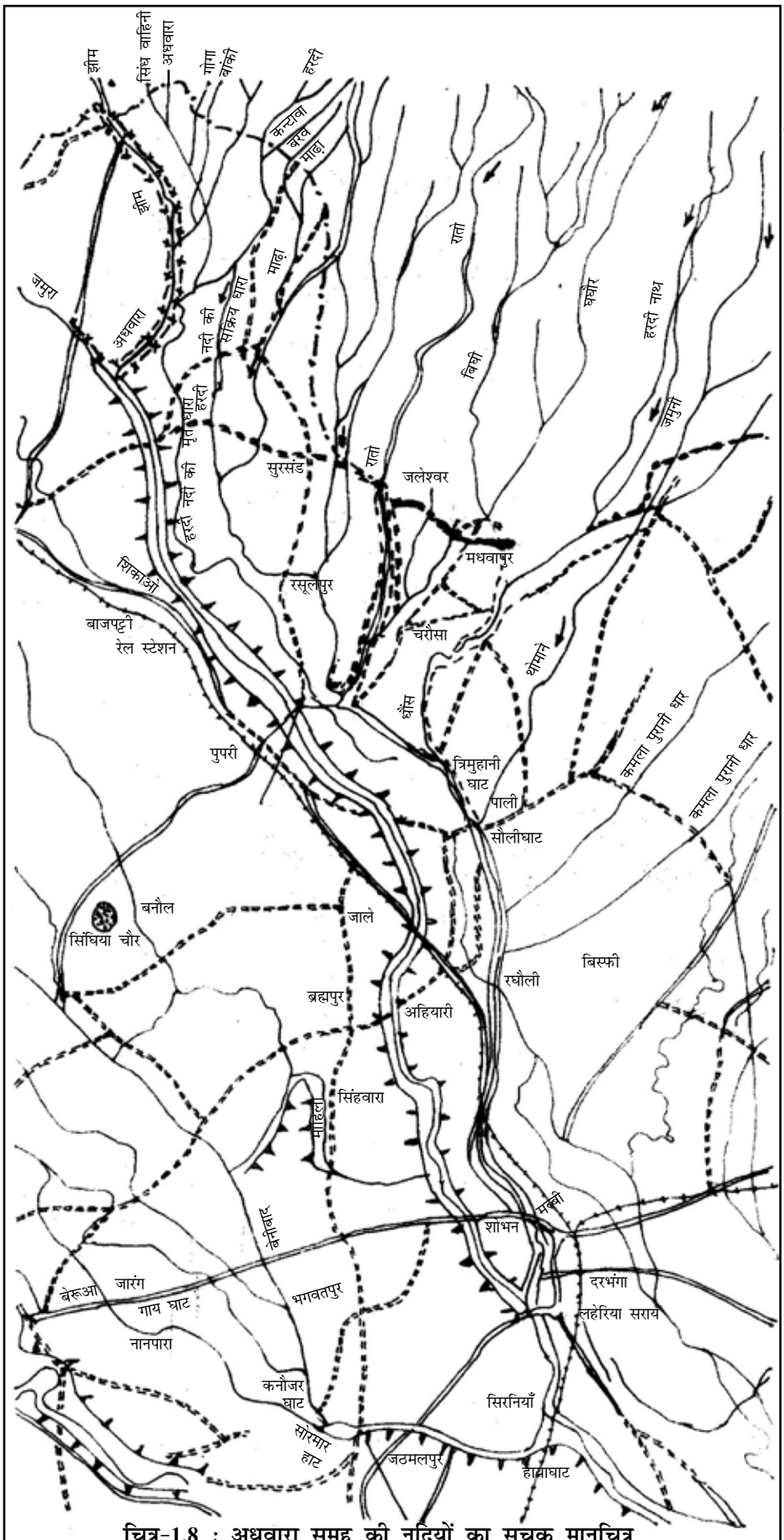

चित्र-1.8 : अधवारा समूह की नदियों का सूचक मानचित्र

1.6 किलोमीटर उत्तर में दरभंगा-सीतामढ़ी रेलवे लाइन को पार करती है। इसके दाहिने किनारे पर नीचे चल कर केतुका गाँव के पास मोहिनी नदी मिलती है। मोहिनी नदी में कुछ पानी लखनदेई नदी से छलक कर भी आ जाता है और कुछ पानी इसके स्थानीय जल-ग्रहण क्षेत्र से भी रहता है। केतुका से दक्षिण दिशा में जाती हुई खिरोई नदी मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग को शोभन गाँव के पास पार करती है और अन्ततः एकमीघाट के पास दरभंगा-बागमती में मिल जाती है।

अधवारा समूह की इन नदियों में खिरोई जिसका आदि नाम क्षीरोदकी था, बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है। कमतौल के दक्षिण इस नदी के पश्चिम किनारे पर ब्रह्मपुर तथा पूरब में अहियारी नाम के गाँव पड़ते हैं। कहते हैं कि ब्रह्मपुर गाँव में ही गौतम ऋषि का आश्रम हुआ करता था। विश्वामित्र के साथ सिद्धाश्रम से मिथिला जाने के क्रम में राम और लक्ष्मण गौतम आश्रम से गुजरे थे। वीरान पड़े इस आश्रम के बारे में राम ने विश्वामित्र से जिज्ञासा की थी जिसके उत्तर में विश्वामित्र ने बताया कि गौतम की पत्नी अहल्या के साथ देवराज इन्द्र ने गौतम का रूप धारण करके छल से सम्भोग किया था। इस संबंध के प्रति कहीं न कहीं अहल्या की भी स्वीकृति थी क्योंकि रूप बदलने के बाद भी अहल्या ने देवराज इन्द्र को पहचान लिया था मगर इन्द्र का सानिध्य पाने के लिए वह कमजोर पड़ गयी। इसी बीच जंगल में गए गौतम ऋषि वापस लौट आये। उन्होंने इन्द्र को अण्डकोष विहीन होने का शाप दिया तथा अपनी पत्नी को भी शाप दिया, ''दुराचारिणी! तू भी यहाँ कई हजार वर्षों तक केवल हवा पीकर या उपवास करके कष्ट उठाती हुई राख में पड़ी रहेगी। समस्त प्राणियों से अदृश्य रह कर इस आश्रम में निवास करेगी। जब दुर्धर्ष दशरथ कुमार राम इस घोर वन में पदार्पण करेंगे, उस समय तू पवित्र होगी। उनका आतिथ्य सत्कार करने से तेरे लोभ-मोह आदि दोष दूर हो जायेंगे और तू प्रसन्नता पूर्वक मेरे पास पहुँच कर अपना पूर्व शरीर धारण कर लेगी।''[29] ऐसा कह कर गौतम ऋषि अपना आश्रम छोड़ तपस्या करने के निमित्त हिमालय की ओर

कूच कर गए। विश्वामित्र ने राम को देवरूपिणी महाभागा अहल्या का उद्धार करने का आदेश दिया और राम ने उन्हें शाप मुक्त कर दिया। कहते हैं अहियारी ही वह स्थान है जहाँ अहल्या ने पुनः अपना शरीर प्राप्त किया था और गौतम ऋषि ने उन्हें पुनः स्वीकार किया था।

अधवारा समूह के दूसरे अंश के रूप में माढ़ा तथा रातो नदियों का नाम आता है। दोनों नदियाँ नेपाल में क्रमशः 610 मीटर ऊँचाई से निकलती हैं। माढ़ा नदी में बहुत सी छोटी-छोटी नदियों का पानी आता है और यह सुरसण्ड से 7 किलोमीटर पूरब में भारत में प्रवेश करती है। माढ़ा में रघपुरा के पास हरदी, रसलपुर के पास संघी और निहसा के पास रातो नदी आकर मिलती है। हरदी नदी खुद बरवे और कन्टावा आदि नदियों से मिल कर बनती है। कहते हैं कि बरवे का मूल नाम व्याघ्रवती है यद्यपि बागमती या अधवारा समूह की किसी भी नदी को स्थानीय लोग व्याघ्रमती बताना नहीं भूलते क्योंकि यह सारी नदियाँ बाघ (व्याघ्र) की ही तरह झपट्टा मारने के लिए मशहूर हैं। इसके बाद इन दोनों नदियों की सम्मिलित धारा सुरसरी के नाम से दक्षिण-पूर्व दिशा में चल कर धौंस नदी में मिल जाती है। रातो एक पहाड़ी नदी होने के बावजूद सदानीरा नदी है।

अधवारा नदी समूह का तीसरा मुख्य अंश धौंस, थोमने, जमुनी, बिघी और दरभंगा-बागमती का है। धौंस, नेपाल में तराई के पास की पहाड़ियों से निकलती है और इसमें बिघी, घोघरा, हरदीनाथ, जमुने और थोमने आदि नदियाँ आकर मिलती हैं। इनमें से जमुने नदी नेपाल में जनकपुर जिले के उत्तरी भाग से निकलती है और भारत के मधुबनी जिले में हरलाखी से तीन किलोमीटर उत्तर-पूर्व में प्रवेश करती है। इसके किनारे बिसौल नाम का एक गाँव पड़ता है जिसके बारे में कहा जाता है कि जब विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को सिद्धाश्रम से जनकपुर ले जा रहे थे तब उन्होंने इस गाँव में विश्राम किया था। यहीं से दोनों भाई फूल लाने के लिए 'फुलहर' गए थे जहाँ सीता जी भी गिरिजा का पूजन करने के लिए आयी थीं। राम ने सीता को पहली बार यहीं देखा था। फुलहर का मूल नाम पुष्पहर है और यहीं राजा जनक की फुलवारी थी, ऐसा कहा जाता है।[30] घोघरा और बिघी का संगम भारत-नेपाल सीमा के थोड़ा ऊपर होता है जबकि हरदीनाथ और जमुने एक दूसरे से प्रायः दोनों देशों की सीमा पर ही आकर मिलती हैं। धौंस के साथ माढ़ा-रातो समूह की नदियों का संगम मधुबनी जिले के बेनीपट्टी अनुमण्डल में त्रिमुहान घाट के पास होता है जबकि बुढ़नद (अधवारा, जमुरा और शिकाओ की सम्मिलित धारा) से धौंस का संगम करहारा घाट के पास होता है। सौलीघाट से थोड़ा उत्तर में धौंस में थोमने नदी आकर उसके बायें किनारे पर संगम करती है। थोमने से संगम के बाद धौंस का नाम दरभंगा-बागमती (व्याघ्रमती) हो जाता है जिसमें आगे चल कर कमला नदी की दो छाड़न धाराएं मिलती हैं। इनमें से पहली धारा का नाम सरसों कमला या बछराजा धार है जो रथौस में धौंस से मिलती है और दूसरी धारा का नाम छजरी कमला है जो कमलाबाड़ी के पास धौंस के बाएं किनारे पर आ मिलती है। बछराजा नदी कमला की एक छाड़न धारा है जो जयनगर से लगभग 20 किलोमीटर उत्तर नेपाल में कमला के दाहिने किनारे से निकलती है। बरसात के मौसम में नदी के प्रवाह में अपने जल-ग्रहण क्षेत्र से आने वाले पानी के साथ-साथ कमला नदी से छलकने वाला पानी भी शामिल हो जाता है। दरभंगा-बागमती कमतौल और रघौली होते हुए एकमी घाट पहुँचती है। यहाँ उसके दाहिने किनारे पर खिरोई नदी आकर मिल जाती है और अब अधवारा नदी का सारा पानी दरभंगा-बागमती के माध्यम से हायाघाट के पास दरभंगा-समस्तीपुर रेल लाइन की पुल संख्या 17 के उत्तर में बागमती नदी से मिल जाता है। अधवारा समूह की नदियों का हायाघाट तक कुल जल ग्रहण क्षेत्र 4908 वर्ग किलोमीटर है जिसमें से 2337 वर्ग किलोमीटर नेपाल में पड़ता है। यहीं से बागमती का नाम करेह हो जाता है। इस स्थान के आगे की नदी की संरचना के बारे में हम पहले ही बता आये हैं। यह क्षेत्र उत्तर में भारत नेपाल सीमा, दक्षिण में हायाघाट के पास करेह नदी, पूर्व में बेनीपट्टी में कमला नदी तथा पश्चिम में सीतामढ़ी जिले में लखनदेई नदी से घिरा हुआ है जिसका रकबा 3,000 वर्ग कि०मी० के लगभग है और इन सीमाओं के बीच लगभग 750 गाँव बसते हैं।

बिहार के जिन जिलों से होकर ये नदियाँ गुजरती हैं उनके बारे में एक संक्षिप्त जानकारी तालिका-1.1 में दी गयी है।

1.6 बागमती नदी और बाढ़

मिथिला क्षेत्र में बाढ़ के कई रूप देखने को मिलते हैं। उसी के अनुसार उनके नाम और परिभाषाएं भी अलग हैं। गर्मी के मौसम की शुरुआत में जब पहाड़ों पर बर्फ पिघलने लगती है तब यहाँ नदियों के पानी का रंग बदलने लगता है जो अमूमन लाल से काले रंग के बीच का होता है। इसे नदी का मजरना कहा जाता है। कुछ गुणी लोग पानी के रंग को देख कर आने वाली बरसात की भविष्यवाणी तक कर दिया करते थे। बारिश की शुरुआती तेज़ फुहारें गर्मी में उड़ती धूल को शान्त करती थीं। जैसे-जैसे समय बीतता था धन की बुआई शुरू होती थी और किसान यह आशा करता था कि रोपनी शुरू होने तक नदी उनके खेतों का एक-आध बार चक्कर काट लेगी। नदी के पानी का खेतों तक आना और वहीं बने रहना बाढ़ की परिभाषा में आता था। सिंचाई के लिए छः या उससे अधिक बार खेतों में पानी की जरूरत पड़ती थी। यह काम नदी बिना किसी लागत के पूरा कर दिया करती थी। कभी-कभी नदी का पानी गाँव के रिहाइशी इलाके में दरवाज़ों तक हिलोरें मारता था। बाढ़ की इस स्थिति को 'बोह' कहा जाता है।

25-30 साल के अंतराल पर ऐसे अवसर आते थे जब नदी इतनी ऊपर आ जाए कि उसका पानी घरों की खिड़कियों तक आ जाए और गाय-बैल-भैंस जैसे जानवर आधी ऊँचाई तक पानी में डूब जाएं तो वही बाढ़ 'हुम्मा' कहलाती थी। गाँव घर में पानी का स्तर और ज्यादा बढ़ना, उसमें लहरों का उठना तथा ऐसी स्थिति पैदा होना कि जानवरों को खूंटे से खोल कर छोड़ देना पड़े तो ऐसी बाढ़ को 'साह' कहते हैं। अपने पूरे जीवन काल में दो बार 'साह' का अनुभव करने और घटना को याद रख पाने लोग बहुत कम ही हुआ करते थे। इसके बाद अगर कुछ होता था तो वह 'प्रलय' की श्रेणी में आता था।

नदी के मजरने से लेकर बोह तक का समय समाज में उत्सव की तरह आता था। 'हुम्मा' में परेशानियाँ तो थी मगर वो जानलेवा नहीं होती थीं। 'साह' से लोग डरते थे पर इसका आगमन शताब्दी में एक-दो बार से ज़्यादा नहीं होता था। इन सबके बाद एक बहुत ही अच्छी फ़सल की आशा लोगों का मनोबल बढ़ाती थी। यह इसलिए हो पाता था क्योंकि पानी के रास्ते में स्कावटें नहीं थी, वह जितनी तेज़ी से चढ़ता था उससे ज़्यादा तेज़ी से उतर भी जाता था। बाढ़ के पानी के साथ-साथ गाद भी चारो ओर फैलती थी और ज़मीन की उर्वराशक्ति कायम रहती थी।

बागमती नदी घाटी में जहाँ एक ओर वर्षापात प्रचुर मात्रा में होता है वहीं बरसात के मौसम में नदी अपने पानी के साथ खासी मात्रा में गाद भी लाती है। नदी के प्रवाह में स्थिरता के नाम पर मात्र खोरीपाकर/अदौरी में बागमती और लालबकेया का संगम स्थल प्राय: स्थिर है और हायाघाट से लेकर बदलाघाट तक नदी की धारा में परिवर्तन के संकेत भी कम मिलते हैं। बिहार में नदी की बाकी 203 किलोमीटर लम्बाई में अस्थिरता का ही राजत्व चलता है। इसके कई कारण हैं–

1.6.1 पहाड़ों से उतरती नदी के ढाल में असामान्य परिवर्तन– पहाड़ों से उतरने वाली नदियों के प्रवाह में पानी के साथ-साथ बोल्डर, छोटे पत्थर, मोटा बालू, मध्यम आकार के कण वाला बालू, महीन बालू, सिल्ट के मोटे कण, मध्यम आकार के कण और महीन सिल्ट के कण होते हैं। पहाड़ों के तेज ढाल से उतरने वाला पानी इन सब को बहा कर ले जाने की क्षमता रखता है। मगर जैसे ही यह पानी तराई में उतरता है तो उसे चारों तरफ फैलने का मौका मिलता है और सपाट मैदानी क्षेत्र में बहने के कारण उसके वेग में भी कमी आती है। इसी के साथ नदी के पानी का अपने प्रवाह में लाए हुए पत्थर, बालू और सिल्ट को बहा कर ले जाने की क्षमता भी घटती है। नतीजा होता है कि पहले बोल्डर और बड़े आकार के पत्थर रुक जाते हैं, उसके बाद बालू और फिर हलका होने के कारण सबसे बाद में सिल्ट जमीन पर बैठती है। नदियाँ इसी तरह भूमि का निर्माण करती हैं और यह क्रम आम तौर से कभी रुकता नहीं है। किसी एक वर्ष में नदी के कछार में बैठी हुई यह गाद आने वाले वर्षों में नदी के प्रवाह के लिए अवरोध का काम करती है जिसे काट कर नदी अपने लिए नया मार्ग बना लेती है और उसकी धारा में परिवर्तन हो जाता है। नदी के पानी में जितनी ज्यादा गाद आयेगी, उसकी धारा के परिवर्तन की संभावनाएं भी उतनी ही ज्यादा होती हैं। हिमालय के एक नवजात और कच्ची मिट्टी का पहाड़ होने के कारण उससे निकलने वाली नदियों में गाद की भारी मात्रा रहती है और यही कारण है कि यह नदियाँ एक ही धारा में स्थिर नहीं रह पातीं। धारा के स्थिर न रहने से नदियाँ अपने कछार में घूमती रहती हैं और इस वजह से बाढ़ की स्थिति कष्टकर हो जाती है यद्यपि ऐसे कछारों की ज़मीन बहुत ही उपजाऊ होती है। बागमती नदी इसी शृंखला की एक कड़ी है। पहाड़ों से उतरने वाली इस नदी का ढलान मैदान पर उतरने पर एकाएक कम हो जाता है और कोसी से अपने संगम के स्थान तक नदी प्राय: सपाट भूमि पर चलती है।

ढेंग में नदी के तल का ढाल जो 53 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर रहता है वह हायाघाट पहुँचते-पहुँचते मात्र 14 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर रह जाता है और फुहिया में तो यह ढलान सिर्फ 4 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर हो जाता है। इतने ढलान पर पानी केवल सरक सकता है, बह नहीं सकता। इस तरह के पानी के रास्ते में छोटा सा भी अवरोध उसके प्रवाह को रोक देने या काफी पीछे तक ठेल देने के लिए पर्याप्त होता है। निचले इलाकों में लम्बे समय तक बाढ़ों के टिके रहने का यह एक महत्वपूर्ण कारण है।

1.6.2 नदियों की प्रवाह-क्षमता का कम होना–पहाड़ों से मैदानी इलाकों में प्रवेश करने पर पानी के साथ-साथ गाद पूरे इलाके पर फैलती है। गाद का कुछ हिस्सा नदी की तलहटी में भी जमा होता है और उसे छिछला बनाता है। इससे नदी की प्रवाह-क्षमता घटती है। उपलब्ध

तालिका-1.1
बिहार में बागमती घाटी के जिलों का संक्षिप्त परिचय

जिला	प्रखंड	ग्राम	क्षेत्र (वर्ग कि०मी०)	कृषि योग्य भूमि (हे०)	सिंचित भूमि (हेक्टर)	कुल जनसंख्या (2001)	पुरुष	महिला	जनसंख्या घनत्व व्यक्ति प्रति वर्ग कि०मी० (2001)	पुरुष स्त्री अनुपात (2001)	शिक्षित पुरुषों का प्रतिशत (2001)	शिक्षित महिलाओं का प्रतिशत (2001)	कुल साक्षरता प्रतिशत (2001)
मुजफ्फरपुर	16	1811	3176	247721	82964	37,43,836	19,41,480	18,02,356	1179	1000:928	60.19	35.2	38.91
दरभंगा	18	1269	2279	198415	38600	32,95,789	17,22,189	15,73,600	1446	1000:910	45.32	24.58	35.42
समस्तीपुर	20	1248	2904	254841	87000	33,94,793	17,60,692	16,34,101	1169	1000:928	57.59	31.67	45.13
शिवहर	5	207	443	45091	11000	5,15,961	2,73,680	2,42,281	1165	1000:885	45.54	27.43	37.01
सीतामढ़ी	17	835	2294	207100	73733	26,82,720	14,17,611	12,65,109	1169	1000:892	49.36	26.13	38.46
खगड़िया	7	306	1486	104000	87147	12,76,677	6,75,501	6,01,176	859	1000:890	41.33	23.18	32.78
मधुबनी	21	1111	3501	232724	138551	35,75,281	18,40,997	17,34,284	1021	1000:942	56.79	26.25	41.97

स्रोत : बिहार सरकार की विभिन्न रिपोर्टें।

सूचना के अनुसार बागमती नदी की बिना किनारे लांघे हुए प्रवाह-क्षमता मात्र 560 क्यूमेक (लगभग 19,700 क्यूसेक) है जबकि 1975 जैसी बाढ़ में नदी में ढेंग से होकर 3,033 क्यूमेक (लगभग 1,06,800 क्यूसेक तथा हायाघाट के पास 2,618 क्यूमेक (लगभग 92,150 क्यूसेक) पानी बहा था। अब अगर किसी नदी में उसकी प्रवाह-क्षमता से पाँच गुना या उससे अधिक पानी आ जाए तो आस-पास के इलाकों का बाढ़ के पानी में डूबना तय है। दुर्भाग्यवश बागमती नदी में उसकी प्रवाह-क्षमता का अतिक्रमण प्रायः हर वर्ष होता है। यहाँ एक चीज़ और ध्यान देने की है। आमतौर पर नदी जैसे-जैसे आगे बढ़ती है वैसे-वैसे उसमें दूसरी नदियाँ मिलती जाती हैं। स्थानीय जल-ग्रहण क्षेत्र का पानी सीधे भी नदी में आता है। इसलिए नदी जैसे-जैसे आगे चलती है, उसी अनुपात में उसमें आने वाले पानी की मात्रा भी बढ़ती जाती है। बागमती में 1975 में ढेंग में 1,06,800 क्यूसेक पानी बहा मगर उससे 196 किलोमीटर नीचे हायाघाट में नदी का प्रवाह अधिक होने के बजाय घट कर केवल 92,150 क्यूसेक ही पहुँचा। इसका सीधा मतलब होता है कि ढेंग से चला पानी हायाघाट पहुँचने से पहले ही एक बड़े इलाके पर फैल गया और हायाघाट से नीचे एक सीमित मात्रा में ही वह नदी तक पहुँचा। ऐसा बीच वाले इलाके की स्थल आकृति के कारण ही संभव हो सकता है जो एक तश्तरी की तरह है और जिसके आगे पानी तभी बढ़ेगा जब तश्तरी भर जाए। इसके अलावा इस बीच वाले इलाके में भी बहुत सी नदियाँ हैं और बागमती का पानी उनमें या उनके जल-ग्रहण क्षेत्र में घुस कर वहाँ भी बाढ़ की स्थिति को दुरूह बनाता है। ऐसा अक्सर होता है कि हायाघाट में नदी का प्रवाह ढेंग के मुकाबले सिर्फ आधा ही रह जाए मगर बीच वाले क्षेत्र में बाढ़ सामान्य से दुगनी हो जाए। इस तरह से बागमती के ऊपरी क्षेत्रों से आने वाला पानी बीच वाले क्षेत्र को डुबा कर ही हायाघाट पहुँचता है।

इस तरह की घटनाएं केवल बागमती के ही साथ नहीं होतीं। उसकी सहायक धाराओं की भी वही स्थिति है। लखनदेई जब भारत में प्रवेश करती है तो उसकी तलहटी का ढलान 1 मीटर प्रति किलोमीटर के आस-पास रहता है मगर जिस स्थान पर यह बागमती से संगम करती है वहाँ नदी के तल का ढलान मात्र 8 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर हो जाता है। मोहिनी नदी की सुरक्षित प्रवाह-क्षमता मात्र 17 क्यूमेक (लगभग 560 क्यूसेक) से 61 क्यूमेक (लगभग 1950 क्यूसेक) के बीच है जबकि उसमें आने वाला प्रवाह 400 क्यूमेक (लगभग 14,000 क्यूसेक) तक पहुँच जाता है। यही हाल दरभंगा-बागमती का भी है। जब यह नदी भारत में प्रवेश करती है तब उसके तल का ढाल 70 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर होता है मगर एकमी घाट पहुँचते-पहुँचते इसका ढाल मात्र 24 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर रह जाता है। हरदी नदी सीतामढ़ी-सुरंसड मार्ग के इर्द-गिर्द तबाही मचाती है और समय-समय पर अपनी धारा में परिवर्तन लाती है। कभी अधवारा से संगम करने वाली यह नदी अब माढ़ा में मिलती है जबकि माढ़ा खुद कभी एक धारा में स्थिर नहीं रह पाती। रातो भी कुछ अलग नहीं हैं। पाँच किलोमीटर चौड़े अनिश्चित मार्ग से बहने वाली इस नदी की प्रवाह-क्षमता मात्र 22 क्यूमेक (770 क्यूसेक) है जब कि इसमें 316 क्यूमेक (11,100 क्यूसेक) तक के प्रवाह का खतरा बना रहता है।[31]

1.7 बाढ़ एक प्राकृतिक आवश्यकता

मिथिला की भौगोलिक परिस्थितियाँ विशेष प्रकार की हैं। वर्षा की अधिकता है। नदियों के जल ग्रहण क्षेत्र की मिट्टी भुरभुरी है जिससे नदियों में भारी मात्रा में गाद आती है। नदी के किनारों के कटाव रोक सकने में भुरभुरी मिट्टी वाली गाद की क्षमता प्रायः नहीं के बराबर है। अतः, यहाँ बेसंभाल बाढ़ आना कोई अप्रत्याशित घटना नहीं होती। अत्यधिक मात्रा में गाद आने का मतलब है कि उसके भारी कण जमीन पर पहले बैठेंगे, उसके बाद मध्यम आकार के कण और उसके बाद ही नदी हलके कण दूर दराज़ के इलाकों में पहुँचाने में कामयाब होगी। यह भी तय है कि नदी की पेटी उत्तरोत्तर ऊँची होती रहेगी और उसके आस-पास की जमीन भी उसी अनुपात में ऊपर उठेगी। यह क्रम नियमित रूप से चलता है और नदियाँ इसी तरह से भूमि निर्माण करती हैं। नदी और उसके कछार के लेवेल के बीच संतुलन भी इसी तरह कायम रहता है। भारतवर्ष (बिहार) की बागमती घाटी में यह परिस्थितियाँ प्रकृति द्वारा तय करके दी हुई हैं अतः अगर कोई यह सोचता हो कि यह क्षेत्र पूरी तरह से बाढ़ मुक्त हो जायेगा तो यह दिवास्वप्न ही होगा। सच शायद यह है कि पानी की प्रचुरता और हर साल बाढ़ के पानी के साथ आने वाली गाद की वजह से ही इस घाटी की जमीन को अपूर्व उर्वरक क्षमता मिलती थी। पूरे साल इलाके में कभी भी पानी की कमी का न होना ही यहाँ बड़ी संख्या में लोगों को बसने के लिए प्रेरित करता रहा होगा। नदियों तथा उत्तर बिहार की जल सम्पदा का ही प्रताप है कि यहाँ की महिलाओं के सिर या कमर पर टिके घड़े अभी तक दिखाई नहीं पड़ते। देश के बहुत से हिस्सों में यह घड़े महिलाओं के अविभाज्य अंग के रूप में मौजूद रहते हैं। 2001 की जनगणना के अनुसार बागमती घाटी में पड़ने वाले जिलों में जनसंख्या घनत्व बिहार के अन्य जिलों की अपेक्षा कहीं ज्यादा था। सीतामढ़ी में जनसंख्या का घनत्व 1169 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था। यह संख्या शिवहर के लिए 1165, मधुबनी के लिए 1021, मुजफ्फरपुर के लिए 1179, दरभंगा के लिए 1446, समस्तीपुर के लिए 1169 तथा खगड़िया के लिए 859 थी। प्रति वर्ग किलोमीटर में इतने अधिक लोगों की रिहाइश अकारण नहीं हुई होगी क्योंकि अगर पानी की बहुतायत और बाढ़ इस क्षेत्र की मूल समस्या रही होती तो यहाँ के बाशिन्दे यह इलाका खाली करके कब के किसी सुविधाजनक जगह चले गए होते। वैसी परिस्थिति में जनसंख्या का यही घनत्व शायद राजस्थान, रायलसीमा, दण्डकारण्य और विदर्भ आदि क्षेत्रों में हुआ होता। पानी के साथ आने वाली गाद की उर्वरक क्षमता पर इंजीनियरों और किसानों की राय कभी-कभी नहीं मिलती है। बाढ़ वाले इलाकों में अमूमन अकाल नहीं पड़ता है। बाढ़ के समय लोगों को परेशानियाँ जरूर होती हैं मगर बाढ़ के बाद वाली फसल नियमतः जबर्दस्त होती है। यह कृषि उत्पादन बाढ़ में हुई फसल के नुकसान की भी क्षतिपूर्ति कर दिया करता है लेकिन आजकल प्रति हेक्टेयर रासायनिक खाद का उपयोग विकास की गति को नापने के एक पैमाने के रूप में इस्तेमाल होने लगा है। इसका सीधा मतलब है कि अगर किसी के खेत में रासायनिक खाद का उपयोग नहीं होता है या कम होता है तो वहाँ का किसान प्रगतिशील नहीं है और ऐसा क्षेत्र कृषि की दृष्टि से विकसित नहीं है। विचारधारा में यह नया परिवर्तन है।

अंग्रेजों ने जब भारत पर कब्जा जमाया तब उनकी नीयत हर संभव तरीके से देश को चूसने और अपनी तिजोरी भरने की थी। इसी लालच में उन्होंने देश में 'आधुनिक' सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण के काम शुरू किये। उनका अनुमान था कि अगर किसी स्थान को बाढ़ से मुक्त कर दिया जाए तो वहाँ सिंचाई की जरूरत अपने आप पड़ने लगेगी। इस तरह से जहाँ वे बाढ़ नियंत्रण जैसा लोक हितकारी काम करके उसके एवज में पैसा वसूल करने का सपना देख रहे थे तो दूसरी तरफ बाढ़ मुक्त इलाके में सिंचाई की व्यवस्था करके वह अपने फायदे को दुगुना कर लेना चाहते थे। गैर बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में उन्होंने अपनी ख्वाहिश को अंजाम तक पहुँचा दिया मगर यह तभी हुआ जब उन्होंने हमारी पारम्परिक सिंचाई व्यवस्था की रीढ़ तोड़ कर अपनी बनायी हुई व्यवस्था को थोपा। बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में जरूर उनको मुंह की खानी पड़ी। उन्होंने सोचा था कि नदियों पर तटबन्धों का निर्माण करके यह काम आसानी से कर लेंगे मगर इस काम में फायदे की जगह नुकसान होने लगा तो उन्होंने इस उपक्रम से अपना हाथ खींच लिया।

1.8 तटबन्धों की उपयोगिता का द्वन्द्व

तटबन्धों का निर्माण कर के बाढ़ नियंत्रण का प्रयास करना इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सर्वसुलभ परन्तु सर्वाधिक विवादास्पद तरीका है। बाढ़ नियंत्रण के लिए तटबन्धों के निर्माण और उनकी भूमिका तथा इस मसले पर पक्ष और विपक्ष की बहस में पड़े बिना यहाँ इतना ही बता देना काफ़ी है कि मुक्त रूप से बहती हुई नदी की बाढ़ के पानी में काफ़ी मात्रा में गाद (सिल्ट/बालू/पत्थर) मौजूद रहती है। बाढ़ के पानी के साथ यह गाद बड़े इलाके पर फैलती है। तटबन्ध पानी का फैलाव रोकने के साथ-साथ गाद का फैलाव भी रोक देते हैं और नदियों के प्राकृतिक भूमि निर्माण में बाधा पहुँचाते हैं। अब यह गाद तटबन्धों के बीच ही जमा होने लगती है जिससे नदी का तल धीरे-धीरे ऊपर उठना शुरू हो जाता है और इसी के साथ तटबन्धों के बीच बाढ़ का लेवेल भी ऊपर उठता है। नदी की पेटी लगातार ऊपर उठते रहने के कारण तटबन्धों को ऊँचा करते रहना इंजीनियरों की मजबूरी बन जाती है मगर इसकी भी एक व्यावहारिक सीमा है। तटबन्धों को जितना ज्यादा ऊँचा और मजबूत किया जायेगा, सुरक्षित क्षेत्रों पर बाढ़ और जल-जमाव का ख़तरा उतना ही ज्यादा बढ़ता है।

तटबन्धों के बीच उठता हुआ नदी का तल और बाढ़ का लेवेल तटबन्धों के टूटने का कारण बनते हैं। तटबन्धों के ऊपर से होकर नदी के पानी के बहने के कारण, तटबन्धों से होने वाले रिसाव या तटबन्धों के ढलानों के कटाव या उनके लिए-दिए बैठ जाने के कारण उनमें दरारें पड़ती हैं। तटबन्धों के टूटने की स्थिति में बाढ़ से सुरक्षित क्षेत्रों में तबाही का अन्दाज़ा सहज ही लगाया जा सकता है। कभी-कभी चूहे, लोमड़ी या छछूंदर जैसे जानवर तटबन्धों में अपने बिल बना लेते हैं। नदी का पानी जब इन बिलों में घुसता है तो पानी के दबाव के कारण तटबन्धों में छेद बड़ा हो जाता है और वे टूट जाते हैं।

किसी भी नदी पर तटबन्धों के निर्माण के कारण उस नदी की सहायक धाराओं का पानी मुख्य नदी में न जाकर बाहर ही अटक जाता है। बाहर अटका हुआ यह पानी या तो पीछे की ओर लौटने पर मजबूर होगा या तटबन्धों के बाहर नदी की दिशा में बहेगा। दोनों ही परिस्थितियों में यह नए-नए स्थानों को डुबोयेगा जहाँ कि, मुमकिन है, अब तक बाढ़ न आती रही हो। इस समस्या का जो जाहिर सा समाधान है वह यह कि जहाँ सहायक धारा तटबन्ध पर पहुँचती है वहाँ एक स्लुइस गेट बना दिया जाए। लेकिन स्लुइस गेट बन जाने के बाद भी उसे बरसात के मौसम में खोलना समस्या होती है क्योंकि अगर कहीं मुख्य धारा में पानी का लेवेल ज़्यादा हुआ तो उसका पानी सहायक धारा में उलटा बहने लगेगा और अनियंत्रित स्थिति पैदा करेगा। इसके अलावा अपने निर्माण के कुछ ही वर्षों के अन्दर स्लुइस गेट अक्सर जाम हो जाया करते हैं क्योंकि नदी की तरफ फ़ाटकों के सामने बालू जमा हो जाता है। इस तरह से लगभग बरसात के पूरे मौसम में स्लुइस गेट के होने या न होने से कोई फ़र्क नहीं पड़ता और सहायक धारा का पानी कन्ट्रीसाइड के सुरक्षित क्षेत्रों में फैलता ही है। इस तरह से स्लुइस गेट का संचालन बरसात समाप्त होने के बाद ही हो पाता है जब मुख्य नदी में पानी का स्तर काफ़ी नीचे चला जाए। इस बीच तथाकथित बाढ़ से सुरक्षित क्षेत्रों में जो नुकसान होना था वह हो चुकता है।

जब स्लुइस गेट काम नहीं कर पाते हैं तो अगला उपाय बचता है कि सहायक धाराओं पर भी तटबन्ध बना दिये जाएं जिससे कि बाढ़ सुरक्षित क्षेत्रों में उनका पानी न फैले। ऐसा कर देने पर मुख्य नदी के तटबन्ध और सहायक धारा के तटबन्ध के बीच वर्षा का जो पानी जमा हो जाता है, उसकी निकासी का रास्ता ही नहीं बचता। यह पानी या तो भाप बन कर ऊपर उड़ सकता है या ज़मीन में रिस कर समाप्त हो सकता है। तीसरा रास्ता है कि इस अटके हुए पानी को पम्प कर के किसी एक नदी में डाल दिया जाए। अब अगर पम्प कर के ही बाढ़ की समस्या का समाधान करना था तो मुख्य नदी या सहायक नदी पर तटबन्ध और स्लुइस गेट बनाने की क्या जरूरत थी? और अगर कभी दुर्योग से इन दोनों तटबन्धों में से कोई एक टूट गया तो बीच के लोगों की जल-समाधि निश्चित है।

कभी-कभी तटबन्ध के कन्ट्री साइड में बसे लोग भी जल-जमाव से निज़ात पाने के लिए तटबन्धों को काट दिया करते हैं। इसके अलावा, न तो आज तक कोई ऐसा तटबन्ध बना और न ही इस बात की उम्मीद है कि भविष्य में कभी बन पायेगा जो कभी टूटे नहीं। अतः दरारें तटबन्ध तकनीक का अविभाज्य अंग हैं जिनके चलते कन्ट्रीसाइड के तथाकथित सुरक्षित इलाकों में बसे लोग अवर्णनीय कष्ट भोगते हैं और जान-माल का नुकसान उठाते हैं।

तटबन्धों के कारण बारिश का वह पानी, जो अपने आप नदी में चला जाता, तटबन्धों के बाहर अटक जाता है और जल-जमाव की स्थिति पैदा करता है। तटबन्धों से होने वाला रिसाव जल-जमाव को बद से बदतर स्थिति में ले जाता है। इसके अलावा नदी की बाढ़ के पानी में ज़मीन के लिए उर्वरक तत्व मौजूद होते हैं। बाढ़ के पानी को फैलने से रोकने की वज़ह से यह उर्वरक तत्व भी खेतों तक नहीं पहुँच पाते हैं। इस तरह से ज़मीन की उर्वराशक्ति धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है। उर्वराशक्ति में गिरावट की भरपाई आजकल रासायनिक खाद से की जाने लगी है जिसका खेतों पर बुरा प्रभाव पड़ता है और इस तरह की खाद की नकद कीमत अदा करनी पड़ती है।

कभी-कभी स्थानीय कारणों से नदी के एक ही किनारे पर तटबन्ध बनाने पड़ते हैं। ऐसे मामलों में बाढ़ का पानी नदी के दूसरे किनारे

फैल कर तबाही मचाता है। अत: तटबन्धों द्वारा बाढ़ का नियंत्रण करना अपने आप को एक ऐसे चक्रव्यूह में फंसाना है जहाँ से निकलना बहुत मुश्किल होता है।

उधर इंजीनियरों के एक बड़े वर्ग का विश्वास है कि नदी पर जब तटबन्ध बना दिया जाता है तो उसके पानी की निकासी का रास्ता कम हो जाने से पानी का वेग बढ़ जाता है। धारा का वेग बढ़ जाने से नदी की कटाव करने की क्षमता बढ़ जाती है और वह अपने दोनों किनारों को काटना आरंभ कर देती है और अपनी तलहटी को भी खंगाल देती है जिससे उसकी चौड़ाई और गहराई दोनों बढ़ जाती है और उसका जलमार्ग पहले से कहीं ज़्यादा हो जाता है। नतीजतन नदी की प्रवाह क्षमता पहले से कहीं ज़्यादा बढ़ जाती है जिससे बाढ़ का प्रभाव कम हो जाता है। तकनीकी हलकों में आज तक इस बात पर सहमति नहीं हो पायी है कि नदी पर बना तटबन्ध बाढ़ को बढ़ाता है या कम करता है। अलग-अलग नदियों और उनमें आने वाली गाद का चरित्र अलग-अलग होता है-ऐसा कह कर इंजीनियर लोग किसी भी बहस से बच निकलते हैं या फिर किसी योजना को स्वीकार करने या उसे ख़ारिज करने के लिए अपनी सुविधा या अपने ऊपर पड़ने वाले सामाजिक और राजनैतिक दबाव के सन्दर्भ में इन तर्कों की व्याख्या करते हैं। तटबन्धों के पक्ष में और उनके खिलाफ़ यह दोनों तर्क इतने मजबूत हैं कि उन पर कोई भी अनजान आदमी उंगली नहीं उठा सकता। **व्यावहारिक सच्चाई यह है कि बाढ़ नियंत्रण के लिए किसी नदी पर तटबन्ध बनें या नहीं, यह फ़ैसला अपनी समझ और स्वार्थ के अनुसार राजनीतिज्ञ लेते हैं और इन अनिर्णित तर्कों का सहारा ले कर इंजीनियर सिर्फ़ उनकी हाँ में हाँ मिलाते हैं। इंजीनियरों का कद चाहे कितना बड़ा क्यों न हो, जैसी व्यवस्था है, उसमें राजनीतिज्ञ उन पर अपना फैसला थोपने में कामयाब होते हैं और बड़े से बड़े इंजीनियर उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।**

सच यह है कि दामोदर, महानदी, ब्राह्मणी आदि नदियों को नियंत्रित करने की अंग्रेजों की कोशिशें काम नहीं आईं और उनको लगा कि अगर कोई तटबन्ध, मान लीजिये, 10 साल तक ठीक-ठाक काम करता है और ग्यारहवें साल टूट जाता है तो इस एक साल में हुए जान-माल के नुकसान, तटबन्ध का पुनर्स्थापन तथा राहत और पुनर्वास पर होने वाला खर्च आदि सब मिला कर पिछले दस वर्षों में हुए फायदे पर भारी पड़ता था और इस तरह का बाढ़ नियंत्रण उनके लिए निश्चित रूप से घाटे का सौदा था। इसलिए उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से ही इस अनुष्ठान से हाथ खींच लिया मगर कोई ज़मीन्दार, राजा-महाराजा या जन-साधारण अपने पैसे से और खुद खतरा उठा कर कहीं तटबन्ध बनाता था तो वह उसे टोकने भी नहीं आते थे। बिहार की सबसे चंचल नदी कोसी को नियंत्रित करने के लिए अंग्रेजों ने सिर्फ गलचौरा किया और समस्या को टालते रहे। यह पूरी बहस अन्यत्र उपलब्ध है[32], अत: हम उसके विस्तार में यहाँ नहीं जायेंगे।

1.9 भारत की आज़ादी और तटबन्धों की वापसी

देश को आज़ादी मिलने के बाद 1952 तक अंग्रेज इंजीनियरों और प्रशासकों की विरासत बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में कायम रही मगर जब 1953 में कोसी नदी पर तटबन्धों के निर्माण की तकनीकी, प्रशासनिक, राजनैतिक, नैतिक, आदर्शवादी, सामाजिक, देशी और विदेशी विशेषज्ञों आदि से सभी प्रकार की स्वीकृति मिल गयी तब तटबन्धों के बाजार में फिर उछाल आया। कोसी पर तटबन्धों की स्वीकृति के बाद बाढ़ और उसके नियंत्रण पर सारी बहस समाप्त हो गयी और उत्तर बिहार की प्राय: सभी छोटी-बड़ी नदियों पर बिना किसी बहस-मुबाहसे के तटबन्धों के निर्माण का काम शुरू हुआ। 1990 से 2006 के बीच इन तटबन्धों के निर्माण में जरूर कमी आई या यूँ कहें कि इस तरह का कोई निर्माण हुआ ही नहीं। तटबन्ध निर्माण में यह ठहराव किसी विचारधारा या आदर्श के अधीन हुआ हो, ऐसा नहीं था। इसके मूल में जहाँ एक ओर अकर्मण्यता थी तो दूसरी तरफ राजनैतिक छल। विडम्बना यह थी कि जल-संसाधन विभाग के मंत्री महोदय प्राय: हर उपलब्ध मंच से तटबन्धों की भर्त्सना करते थे जबकि उनका विभाग तटबन्धों का निर्माण न कर पाने के लिए संसाधनों की कमी का रोना रोता था। जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार का वर्ष 1991-92 की वार्षिक रिपोर्ट कहती है (पृष्ठ-9), ''अब तक निर्मित तटबन्धों की कुल लम्बाई लगभग 3465 कि०मी० है, जिससे लगभग 29.28 लाख हेक्टर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा प्रदान होती है। 10 चालू तटबन्ध अभी निर्माणाधीन है। इनकी कुल प्रस्तावित लम्बाई 872.74 कि०मी० तथा लाभान्वित क्षेत्र 6,36,560 हेक्टर है। अब तक केवल 556.69 कि०मी० लम्बाई में उनका निर्माण हुआ है जिससे 3,18,110 हेक्टर भूमि को आंशिक सुरक्षा मिल रही है। निधि के अभाव में इन्हें पूरा करने में कठिनाई हो रही है। इसके अलावे निर्मित तटबंधों के रख-रखाव एवं सुरक्षात्मक कार्य कर बड़ी राशि सरकार को व्यय करना पड़ता है।'' जल-संसाधन विभाग की वार्षिक रिपोर्टों में लम्बे समय तक यह सूचना दुहरायी जाती रही। एक आम आदमी के लिए यह समझ पाना मुश्किल है कि सच मंत्री महोदय बोल रहे थे या उनके विभाग की रिपोर्ट। एक ओर जल संसाधन मंत्री द्वारा तटबंध की भर्त्सना और दूसरी ओर उनके विभाग की रिपोर्ट में निधि की कमी के कारण तटबंध न बना पाने के रुदन का अर्थ सामान्य जनता क्या निकाले? इस दौरान राज्य सरकार नेपाल में प्रस्तावित बांधों के हक में अखंड मंत्र जाप भर करती रही और नेपाल में बांध निर्माण का वास्ता देकर अपनी सारी जिम्मेवारियों से बचती रही। सत्ता परिवर्त्तन के साथ-साथ 2006 में तटबन्धों के निर्माण में फिर तेज़ी आयी है। सरकार ने बड़े पैमाने पर तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत करने का काम अपने हाथ में लिया है। इस प्रयास का क्या परिणाम निकलेगा यह तो भविष्य के गर्भ में है पर इतना जरूर कहा जा सकता है कि इसका सुफल या कुफल जब भी आयेगा तब इनके निर्माण से जुड़े सारे सम्बद्ध लोग या तो इस दुनियाँ में नहीं होंगे या इतने अप्रभावी और महत्वहीन हो चुके होंगे कि उनसे किसी उत्तर की किसी को कोई अपेक्षा ही नहीं रहेगी। उस समय जो लोग उत्तर देने के लिए उपलब्ध होंगे वह सारा दोष पिछली पीढ़ी के नेताओं और इंजीनियरों पर डाल कर खुद को पाक साफ बता कर निकल जायेंगे।

1.10 अब तक की प्रगति

जहाँ तक बागमती नदी का प्रश्न है, उस पर 1950 के दशक में दाहिने किनारे पर सोरमार हाट से बदलाघाट तक 145.24 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध का निर्माण हुआ। नदी के बायें किनारे पर हायाघाट से फुहिया के बीच 72 किलोमीटर लम्बे तटबन्धों का निर्माण हुआ। सरकार का दावा है कि इन तटबन्धों के निर्माण से 1140 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को बाढ़ से बचाया जा सका है।[33] इसके बाद 1971 और 1978 के बीच बागमती नदी के ऊपरी

हिस्सों में नदी के दायें किनारे पर 56.95 किलोमीटर तथा बायें किनारे पर 71.41 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध बनाये गए। इसके साथ ही लालबकेया तथा बागमती नदी के बीच स्थित बैरगनियाँ प्रखंड (जिला सीतामढ़ी) को बाढ़ से सुरक्षा देने के लिए 21 किलोमीटर लम्बाई का एक रिंग बांध भी निर्मित किया गया। सरकार का अनुमान था कि इन तटबन्धों/रिंग बांधों का निर्माण करके उसने 1849 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षित कर लिया है जिसमें बैरगनियाँ रिंग बांध के अन्दर के गाँव पूरी तरह से सुरक्षित हो गए हैं।[34] इस तरह से बागमती का बायाँ किनारा रुन्नी सैदपुर से हायाघाट तक तथा दाहिना किनारा रुन्नी सैदपुर से सोरमार हाट तक अभी भी खुला रह गया था। इन तटबन्धों का निर्माण करके सरकार को विश्वास हो चला था कि बीच के खुले हिस्से (रुन्नी सैदपुर से सोरमार हाट के बीच) में बाढ़ या तो नदी के पानी के फैलने से आती है या फिर पानी की निकासी होने वाली कठिनाइयों के कारण ऐसा होता है।[35]

इसके बाद लगभग तीस वर्षों तक बागमती परियोजना में सब कुछ शान्त रहा । तटबन्ध निर्माण का तीसरा दौर 2006 में शुरू हुआ जब रुन्नी सैदपुर से लेकर हायाघाट तक नदी के बाकी बचे लगभग 90 किलोमीटर लम्बे तटबन्धों के निर्माण को पूरा करने की कोशिश शुरू हुई है। 792 करोड़ रुपयों की अनुमानित लागत से बनने वाले इन तटबन्धों की मदद से रुन्नी सैदपुर से लेकर हायाघाट तक के क्षेत्रों की बाढ़ से रक्षा का प्रावधान है। इस प्रयास की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट हिन्दुस्तान स्टीलवर्क्स कन्सट्रक्शन लिमिटेड नाम की एक सरकारी संस्था ने बनायी है और उसी को इस परियोजना के क्रियान्वयन का जिम्मा दिया गया है। यह विस्तृत परियोजना रिपोर्ट एक निहायत ही घटिया किस्म का दस्तावेज है।[36] इसमें कोई तीन चौथाई हिस्से में 1983 में बनायी गयी विस्तृत परियोजना रिपोर्ट से उद्धरण मात्र दिये गए हैं और योजना के औचित्य पर न तो कोई आलेख है और न ही जनता और कृषि को होने वाले किसी संभावित लाभ की चर्चा है। इस रिपोर्ट में न तो बाढ़ से होने वाली क्षति और उसके कारणों का विश्लेषण है और न उसे समाप्त करने या कम करने की कोई दृष्टि नज़र आती है। इस रिपोर्ट में जब योजना के क्रियान्वयन के बाद होने वाले लाभ की कोई चर्चा नहीं है तो योजना से होने वाले अवांछित प्रभावों और उनके निदान के लिए किये जाने वाले प्रयासों का जिक्र कैसे होगा? इस रिपोर्ट में बाढ़ से सुरक्षा दिये जाने वाले क्षेत्र और उसके परिमाण तक का भी जिक्र नहीं है। अपना नाम जाहिर न किये जाने की शर्त पर बिहार के जल-संसाधन विभाग में काम कर चुके बहुत से वरिष्ठ इंजीनियरों का कहना है कि अव्वल तो हिन्दुस्तान स्टीलवर्क्स कन्स्ट्रक्शन लिमिटेड को इस तरह के काम का कोई अनुभव ही नहीं है और दूसरे यह सारा काम टुकड़े-टुकड़े कर के उनके हवाले किया गया है जिसकी कोई समेकित परियोजना रिपोर्ट बन भी नहीं सकती। वो यह भी मानते हैं कि जितने पैसे इस तथाकथित परियोजना रिपोर्ट के बनाने में खर्च किये गए उसके मुकाबले बहुत कम खर्च में जल-संसाधन विभाग यह काम खुद कर सकता था पर राजनीति ने यह होने नहीं दिया।

इस पूरे प्रकरण पर राजनैतिक हलकों में अगस्त 2009 में जबर्दस्त कीचड़ उछला था जब तिलक ताजपुर बागमती नदी का दाहिना तटबन्ध 1 अगस्त को टूट गया। कहा जाता है कि हिन्दुस्तान स्टीलवर्क्स कन्स्ट्रक्शन लिमिटेड को यह काम 2005 में तब दिया गया था जब बूटा सिंह बिहार के राज्यपाल थे और यहाँ राष्ट्रपति शासन था। पूर्व राज्यपाल ने इस आरोप को सिरे से खारिज कर दिया और वर्तमान सरकार को इसका दोषी बताया। इस पूरे मसले पर मीडिया तथा लोकसभा में गरमा गरम मगर अनिर्णित बहस हुई। विषयान्तर के कारण हम इसके विस्तार में नहीं जायेंगे।

यहाँ हम इतना जरूर कहना चाहेंगे कि जब योजना का आधार पत्र ही इतना दरका हुआ हो तो योजना के भविष्य का सहज ही अन्दाजा लगाया जा सकता है। यह बात अलग है कि सरकार का खुद का यह भी मानना है कि इस लम्बाई में नदी प्रायः समतल जमीन पर बहती है जिससे इसकी बाढ़ के पानी का कोसी या गंगा में निकासी होने में बहुत समय लगता है। अगर इन दोनों नदियों में से किसी में बाढ़ हो या पानी का ठहराव लम्बे समय के लिए हो जाए तो बागमती के पानी को भी ठहर जाना पड़ता है। यह ठहराव नदी से होने वाले कटाव को बढ़ाता है, तटबन्धों के ऊपर से नदी के पानी के बहने के रास्ते तैयार करता है और जल-जमाव को स्थाई बनाता है।[37] अगर कभी दैव योग से बागमती और कोसी के साथ-साथ गंगा में भी बाढ़ आ जाए तब गंगा के पानी को वापस इन नदियों में घुसने की परिस्थितियाँ पैदा हो जाती हैं और ऐसी परिस्थिति से निबटना आसान नहीं होता।[38] जब सरकार ही खुद इस बात को बिना कोई लाग-लपेट या बहाना बनाये या विकल्प सुझाये इतनी सादगी और साफगोई से कबूल करती है तो फिर किसी को कोई शिकवा-शिकायत की गुंजाइश नहीं बचती। यह भविष्य में होने वाली घटनाओं और उनकी जिम्मेवारी से बच निकलने के तरीकों की ओर इशारा भी है।

यहाँ एक बात और भी ध्यान देने लायक है। इंजीनियरों के अनुसार हायाघाट से लेकर बदलाघाट तक नदी की धारा स्थिर थी, उसके कगार स्पष्ट और ऊँचे थे और उस पर तटबन्ध बना देने से कुछ लोगों का भला हो जाने की उम्मीद थी। उसी तरह ढेंग से खोरीपाकर तक छिछला होने के बावजूद नदी की धारा में कोई खास परिवर्तन नहीं होता। जो भी परिवर्तन नदी की धारा में देखे गए हैं वे आम तौर पर खोरीपाकर के नीचे और कनौजर घाट के बीच में हुए है। अस्थिर प्रवाह वाली नदियों पर तटबन्ध बनाने पर सिद्धान्ततः इन्जीनियर परहेज करते हैं। शायद इसीलिए बागमती पर तटबन्धों के निर्माण की प्रक्रिया वहाँ से शुरू हुई जहाँ उसकी धारा स्थिर थी। योजना के दूसरे फ़ेज में ढेंग से रुन्नी-सैदपुर तक जो तटबन्ध बने उसमें भी वही सावधानी बरती जानी चाहिये थी मगर ऐसा हुआ नहीं। पता नहीं किस तकनीकी तर्क के आधार पर ढेंग से रुन्नी-सैदपुर तक तटबन्ध बनाये गए और क्यों बीच वाला हिस्सा, रुन्नी-सैदपुर से हायाघाट तक, खुला छोड़ दिया गया। हम चित्र-1.6 में देख आये हैं कि किस तरह इस दूरी के बीच नदी की धारा बदलती रही है। तटबन्ध निर्माण से बाढ़ नियंत्रण की कोशिश हमेशा से विवादास्पद रही है और अस्थिर धारा वाली नदियों पर तो यह विवाद और भी गंभीर हो जाता है। नदियों की धारा के स्थिर होने में हजारों वर्षों का समय लगता है न कि तीस वर्ष का जैसा कि बागमती परियोजना में मान लिया गया हुआ है।

1.10.1 अधवारा समूह की नदियों के नियंत्रण पर एक नज़र–जहाँ तक अधवारा समूह की नदियों का प्रश्न है तो 1960 के पूवार्द्ध में अधवारा नदी की तलहटी की सफाई जमुरा नदी और अधवारा के संगम स्थल से लेकर ऐग्रोपट्टी तक की गयी थी। इस सफाई से जो मिट्टी निकली उसी का इस्तेमाल नदी के किनारे तटबन्धों की शक्ल में कर लिया गया। इस योजना की अनुमानित लागत 50 लाख रुपये थी।[39]

इन तथाकाथित तटबन्धों के बीच का फासला 400 से 800 मीटर के बीच रखा गया और ऐसी उम्मीद की गयी थी कि 1954 की बाढ़ के समय नदी का जो प्रवाह 610 से 630 क्यूमेक (21,500 क्यूसेक से 22,000 क्यूसेक) के बीच था उसे सुरक्षित रूप से बहा ले जाने की समुचित व्यवस्था हो जायेगी। नदी में पानी बहने के लिए जो जगह नियत की गयी वह सर्वाधिक प्रवाह की क्षमता से आधी रखी गयी थी और इंजीनियरों को यह आशा थी कि उनका पुराना और घिसा-पिटा तर्क कि पानी को प्रवाह के लिए कम जगह मिलने पर उसका वेग बढ़ जायेगा और वह नदी की तलहटी खंगाल कर तथा किनारे काट कर उसके प्रवाह क्षेत्र को बढ़ा देगा और इस तरह बाढ़ नियंत्रण कर लिया जायेगा, एक बार फिर गलत साबित हुआ और समस्या जैसी थी वैसी ही बनी रह गयी और नदी की 80 किलोमीटर लम्बाई में किया गया यह काम प्रायः व्यर्थ हो गया।[40] समय-समय पर तटबन्ध टूटने की घटना ने बाढ़ की स्थिति को पहले से भी बदतर बना दिया। इससे कोई सबक न लेते हुए 1963-64 में नदी की सफाई और उसके फलस्वरूप तटबन्धों के निर्माण का एक दूसरा दौर खिरोई नदी पर ऐग्रोपट्टी से लेकर दरभंगा-बागमती से नदी के संगम एकमीघाट तक चलाया गया। तटबन्धों के विस्तार किये जाने की इस योजना पर 71.97 लाख रुपये खर्च किये जाने का अनुमान किया गया था।[41] जाहिर है इस काम में भी सफलता न तो मिलनी थी और न मिली।

इसके अलावा लहेरियासराय और दरभंगा शहर की दरभंगा-बागमती की बाढ़ से रक्षा के लिए 1970 के दशक के पूर्वार्द्ध में मब्बी से लेकर एकमीघाट तक शहर को घेरते हुए एक सुरक्षा बांध बनाया गया जिसे बाद में सिरनियाँ तक बढ़ाया गया। यह वही स्थान है जहाँ दरभंगा-बागमती हायाघाट के पुल संख्या 17 से पहले बागमती नदी से मिल जाती है और सम्मिलित धारा करेह नाम से आगे बढ़ती है। दरभंगा-लहेरियासराय शहर के रिंग बांध में चार स्थान ऐसे पाये गए जहाँ स्थानाभाव के कारण मिट्टी का बांध आगे ले जाना संभव नहीं था। ऐसी जगहों पर ईंट या कंक्रीट का पक्का काम करके जगह की कमी को पूरा किया गया।

अध्याय-2 और 3 में हम बागमती नदी घाटी में सिंचाई तथा बाढ़ों को उनके ऐतिहासिक सन्दर्भ में देखने का प्रयास करेंगे और उनसे निपटने के लिए व्यक्ति, समाज या व्यवस्था ने क्या-क्या कोशिशें कीं, उनके क्या परिणाम निकले और अब हम किस मुकाम पर खड़े हैं, इस विषय पर चर्चा करेंगे।

संदर्भ :

1. शर्मा, पं० केदार नाथ, नेपाल महात्म्यम् (स्कन्दपुराण), चौखम्बा अमर भारती प्रकाशन, वाराणसी-221 001, 1977, सप्तम अध्याय, श्लोक 48-60, पृष्ठ 52-54
2. उपर्युक्त, सप्तम अध्याय 7, पृष्ठ 52-54
3. उपर्युक्त, अध्याय, 7-11, पृष्ठ 51-91
4. उपर्युक्त, अध्याय 13-14, पृष्ठ 104-116
5. कूर्म पुराण की प्रसिद्ध उक्ति
6. वाराह पुराण, अध्याय 215, श्लोक 50-51, हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' द्वारा रचित पुस्तक 'बिहार की नदियाँ : ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सर्वेक्षण से साभार उद्धृत, पृष्ठ 252
7. उपर्युक्त, अध्याय 215, श्लोक 59-61-63, हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' की पुस्तक से साभार उद्धृत
8. शर्मा, पं० केदार नाथ, यथाकथित, पंचम अध्याय, श्लोक 25-77, पृष्ट 34-39, 1977
9. मुंशी, शिव शंकर सिंह तथा पंडित श्री गुणानन्द; History of Nepal-Mythology & Legends, Cambridge, 1877, Reprint, Sushil Gupta (India) Private Limited (Calcutta), 35, Chittaranjan Avenue, Calcutta 12, 1958, Chapter 1, page 45-47.
10. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission, Vol. V, Part I, Appendix 4, Bagmati Basin, Appendix 4/74 and 4/75, page 436/437, 1994.
11. उपर्युक्त, पृष्ठ 387
12. Ghosh, P. C.; Rai Bahadur; A Comprehensive Treatise on North Bihar Flood Problems, Superintendent, Government Printing, Bihar, Patna 1948, p. 32.
13. Hunter, W.W. A Stastical Account of Bengal, Vol. XIII, Tirhut And Champaran, Turner & Co., London, 1877, Reprint 1976, Concept Publishing Company, Delhi 110 035, p. 117.
14. उपर्युक्त, 32
15. उपर्युक्त, 24
16. Ghosh, Rai Bahadur P.C., A Comprehensive Teatise on North Bihar Flood Problems, Superintendent, Government Printing, Bihar, Patna, 1948, p-23.
17. उपर्युक्त, 32
18. उपर्युक्त, 33
19. उपर्युक्त, 33
20. उपर्युक्त, 33
21. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission, Vol. V, Part 1, Appendix-4, Bagmati Basin, 1994, पृष्ठ 388
22. उपर्युक्त, पृष्ठ 364-368
23. उपर्युक्त, पृष्ठ 388-389
24. उपर्युक्त, पृष्ठ 389
25. Prasad, Gagan; History of Irrigation in Bihar, Water & Land Management Institute, Phulwari Sharif, Patna 801 505, Bihar, Second Edition, March 1997 pp. 128-131.
26. त्रिपाठी, हवलदार 'सहृदय'; बिहार की नदियाँ, बिहार हिन्दी ग्रन्थावली, पटना, पृष्ठ 270, 1977
27. दास, नरेन्द्र नाथ; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 21 सितम्बर 1954, पृष्ठ 31-32
28. जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार, प्रेस विज्ञाप्ति संख्या 632, दिनांक 3 अगस्त 2009.
29. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण-प्रथम भाग, ब्रह्मकाण्ड-अध्याय-48/49, गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ 125-128, ग्यारहवाँ संस्करण, विक्रम संवत 2049.
30. त्रिपाठी, हवलदार-'सहृदय' यथाकथित, पृष्ठ 281
31. Second Bihar State Irrigation Commission, Appendix-4/15-16, pages 377-378 and 4/29-30 & pages 391-392, 1994.
32. मिश्र, दिनेश कुमार; दुइ पाटन के बीच में-कोसी नदी की कहानी, लोक विज्ञान संस्थान, 252, वसंत विहार, देहरादून, उत्तराखंड-248 006, 2007, पृष्ठ 11-40
33. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission, Appendix 4/100, Annexture-9, p. 470, 1994
34. उपर्युक्त, Annexture 4/109, p. 471
35. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission, Appendix 4/35, p. 397, op. cit.
36. Government of Bihar, Water Resources Department, Detailed Project Report of Bagmati Flood Control, Prepared by Hindustan Steel Works Construction Limited, 2006.
37. Report of the Second Bihar Irrigation Commission, Appendix 4/33 पृष्ठ 395
38. उपर्युक्त, पृष्ठ 394-395
39. बिहार विधान सभा वादवृत्त, 18 मार्च 1958, पृष्ठ 96
40. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission; op. cit., Appendix 4/39, p. 401.

2

बागमती घाटी की सिंचाई समस्या

2.1 बागमती एवम् अधवारा समूह घाटी की पारम्परिक सिंचाई व्यवस्था

कृषि और अन्न उत्पादन में सिंचाई का महत्वपूर्ण स्थान है। मिथिला के इस क्षेत्र में तालाबों और पाइनों के माध्यम से सिंचाई की एक समृद्ध पारम्परिक व्यवस्था रही है। बागमती घाटी के अधिकांश क्षेत्रों में खरीफ के मौसम में धान और उसके बाद के रबी के समय खेतों में केवल बीज छींट देने और बाद में जाकर फसल काट लेने के किस्से बताने वाले बुजुर्गों की तादाद अब जरूर दिनों दिन घटती जा रही है लेकिन इस घाटी की उर्वर भूमि तथा सतही और भूमिगत जल की सुलभ उपलब्धि ने यहाँ की कृषि को हमेशा सहयोग दिया है। 'पग-पग पोखर' की उपस्थिति को अपनी शान मानने वाले इस क्षेत्र में तालाबों की भरमार है जिनका वर्गीकरण आमतौर पर या तो उनके आकार, उपयोगिता, स्थान या फिर वर्ष के विभिन्न भागों में उनमें पानी की उपलब्धता से होता था। आकार के अनुसार इन्हें कूप, वापी, पुष्करिणी या तड़ाग का नाम दिया जाता था। बाद में ह्रद इसमें और जुड़ गया जो कि विराट आकार का और काफी गहरा तालाब होता था जिसमें अगर कई वर्षों तक बारिश न भी हो तो भी पानी की कमी नहीं पड़ती थी। सरोवर और पुष्कर इसी शृंखला के संचयन जलाशय थे।

महाभारत में भीष्म के माध्यम से वेदव्यास ने कोई तालाब कितने समय के लिए पानी संचित रख सकता है उसके अनुरूप उनका विभाजन किया है। उन्होंने इस तरह के तालाबों के निर्माण से मिलने वाले पुण्य की भी व्याख्या की है। हिन्दू संस्कृति में इस तरह के जल-स्रोतों का निर्माण एक धार्मिक कृत्य माना जाता रहा है और इसे अपनी कीर्ति रक्षा का सबसे सहज उपाय भी बताया गया है। कूप या कुएं इस शृंखला की सब से छोटी इकाई हुआ करते थे जो कि न केवल पेय जल के स्रोत थे वरन उनके आकार के अनुसार उनसे सिंचाई की भी संभावनाएं बनती थीं। कुओं से पानी निकालने का सबसे सुलभ साधन ढेंकुल का होता था जो कि लीवर के सिद्धान्त पर काम करने वाली एक संरचना है। इसमें Y के आकार के पतले वृक्ष के तने को सीधा जमीन में कुएं के पास गाड़ कर उस पर एक लम्बे बांस या लकड़ी को संतुलित किया जाता है। इस बांस या लकड़ी के एक सिरे पर मिट्टी का लोंदा छाप दिया जाता है और दूसरे सिरे पर रस्सी से बांध कर एक कूंड़ को लटका कर कुएं के अन्दर ले जाते हैं और पानी को ऊपर खींच लेते हैं (चित्र-2.1)। इसके अलावा कड़ीन और ढैंचा का उपयोग सतही जल को बहुत ही साधारण ढंग से खेतों तक पहुँचाने के लिए किया जाता था। रहट का जिक्र साधारणत: पानी को कुओं के अन्दर से ऊपर उठाने के साधन के रूप में आता है। मोठ, जो कि चमड़े का बना हुआ बड़ा थैला होता है, का प्रयोग भी पारम्परिक रूप से कुओं से पानी निकालने के लिए होता था जिसे कुओं पर एक घिर्री के जरिये लटका दिया जाता था। चमड़े के इस थैले को कुओं में उतारने और वापस खींचने का काम बैलों के माध्यम से होता था। सिंचाई के इस साधन का मिथिला में कोई उदाहरण नहीं मिलता मगर ढेंकुल, कड़ीन, ढैंचा और रहट का इस्तेमाल कुछ दशक पहले तक व्यापक रूप से होता था। इस संरचनाओं को चित्र-2.1 में दिखाया गया है। पेट्रोल, डीज़ल, मिट्टी के तेल, बिजली चालित पम्पों ने अब इन सभी साधनों का स्थान ले लिया है।

बागमती घाटी और अधवारा समूह के इस क्षेत्र में छोटी-छोटी नदियों का जाल सा बिछा हुआ है। इन छोटी-छोटी नदियों की धारा के सामने मिट्टी के अस्थाई बांध बना कर पानी के लेवेल को ऊंचा उठा दिया जाता था और फिर उसे अपनी सुविधा और आवश्यकतानुसार वांछित दिशा में मोड़ कर सिंचाई कर ली जाती थी। जमीन और नदी के तल का बहुत हलका ढलान इस तरीके से पानी के प्रबन्धन में बहुत मदद करता है और इससे न सिर्फ सिंचाई की व्यवस्था हो जाती थी वरन् नौ-परिवहन भी आसान हो जाता था जिससे सामान और कृषि उपज ढोने में बड़ी मदद मिलती थी।

स्थानीय किसान सूखे के साल में अधवारा समूह की नदियों जैसे हरदी, कन्टावा, रातो, माढ़ा, जमुने, शिकाओ, खिरोई, सोइली या फिर बागमती घाटी की बहुत सी छोटी-छोटी नदियाँ जैसे पुरानी धार, कोला धार या लखनदेई आदि नदियों को जगह-जगह बाँध कर उसके पानी को खेतों की तरफ मोड़ कर सिंचाई की व्यवस्था कर लिया करते थे। इसी तरह जहाँ तालाब जैसा कोई सतही पानी का स्रोत उपलब्ध हो वहाँ कूंड़ या कड़ीन जैसे माध्यमों से पानी को उठा कर फसल सींच ली जाती थी। इस इलाके की मुख्य फसल धान थी जिसमें से लगभग 60 प्रतिशत अगहनी धान हुआ करता था। यह धान जुलाई से अगस्त के महीनें में रोपा जाता था और दिसम्बर-जनवरी के महीनें में काट लिया जाता था। बाकी 40 प्रतिशत ज़मीन पर जून के महीने में भदई धान, मकई और मडुआ लगाने का रिवाज था। यह फसल सितम्बर तक घर आ जाती थी। अक्टूबर के अंत या नवम्बर की शुरुआत में खाली हुई ज़मीन पर खेसारी, चना, मटर, तेलहन और चीना छींट दिया जाता था। इस तरह से लगभग पूरे वर्ष कृषि कार्य चलता था और जीवन धारा सामान्य गति से चलती रहती थी।

पाइनों के माध्यम से सिंचाई व्यवस्था के बारे में अधवारा क्षेत्र के एक वयोवृद्ध किसान राम दरेस राय, ग्राम बंजरही, प्रखण्ड परिहार, जिला सीतामढ़ी ने लेखक को हरदी नदी के पानी का उपयोग करने का बड़ा दिलचस्प किस्सा बयान किया। बंजरही के ऊपर हरदी नदी में नेपाल से आने वाली दो छोटी-छोटी नदियाँ मिलती हैं जिनके नाम कन्टावा और गेरुका है। जहाँ यह तीनों नदियाँ मिलती हैं वहाँ आस-पास के गाँवों जैसे मलाही, फुलहट्टा, मजौलिया, बंजरही और शिवनगर आदि गाँवों के लोग रबी के मौसम में हरदी नदी पर मिट्टी का बांध बना कर नदी के पानी को किनारे से निकलने वाली नहर में ठेल दिया करते थे। इस नहर का निर्माण भी गाँव वालों ने पिछले वक्तों में अपने सामूहिक श्रम से किया

ढेकुल (लाठा)

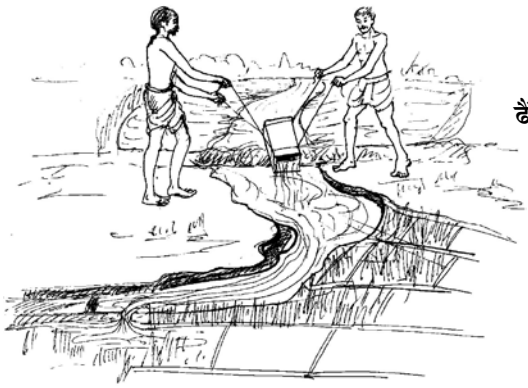

ढैंचा

लाठा-कड़ीन

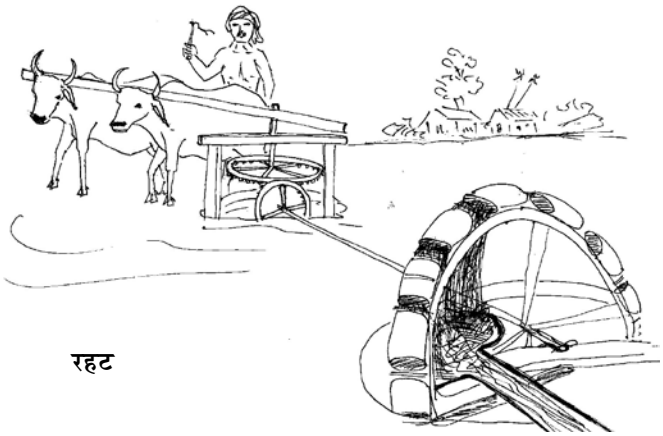

रहट

चित्र-2.1 : सिंचाई के कुछ पारम्पारिक साधन

था। कहते हैं इस नहर की गहराई और चौड़ाई इतनी थी कि उसमें अगर हाथी घुस जाए तो बगल से दिखायी नहीं पड़ता था। फिलहाल यह नहर काफी छोटी हो गयी है मगर इसका उपयोग अभी भी होता है। जब नदी में पानी का लेवेल बढ़ता है या फिर गाँव वाले मिल कर नदी को बांध देते हैं तब वह नदी के पानी को नहर में मोड़ देने में समर्थ हो जाते हैं। आगे चल कर इस नहर के दो भाग हो जाते हैं। एक हिस्सा मलाही, फुलहट्टा, शिवनगर, चनपुरा और मलियाबाड़ी होता हुआ आगे बढ़ता है। दूसरा हिस्सा मुजौलिया, बंजरही, जलेदर और नरगा होता हुआ आगे जाता है और दोनों तरफ के खेतों को सींचता जाता है।

राम दरेस राय कहते हैं कि उनके बाबा बताते थे, ''एक बार जब हरदी नदी पर बांध बांधा गया था तो आस-पास के गाँवों को खेतों की सिंचाई करने में समय लग गया और नीचे के गाँवों को पानी मिलने में देर हो गयी थी। तब वे लोग खुद यहाँ बांध काटने के लिए आ गए थे। सुलह-सफाई के लिए स्थानीय दारोगा को आना पड़ गया था और तब जाकर यह तय हुआ कि पानी लेने के लिए समय निर्धारित कर दिया

राम दरेस राय

जाए जिससे नीचे के इलाके वालों को कोई तकलीफ न हो। तब यह भी तय हुआ था कि पानी को एक सप्ताह से ज्यादा नहीं रोका जायेगा। यहाँ का निलहा साहब भी हाथी पर बैठ कर लोगों को समझाने आया था कि झगड़ा-झंझट से कोई फायदा नहीं होगा और सभी को पुलिस की कार्यवाही से बचना चाहिये। बाबा यह भी बताते थे कि हरदी नदी से होकर अंग्रेज लोग नावों के माध्यम से लकड़ी ले जाया करते थे। नदी में पानी कम होने पर कभी-कभी नावें फंस जाया करती थीं। तब नदी में मिट्टी का बांध बना कर पानी का लेवेल ऊपर उठाया जाता था और नावें आगे बढ़ जाया करती थीं। इस तरह नावों से लकड़ी और दूसरे सामान को ढोने में बहुत मदद मिला करती थी। राज्य में इमरजेन्सी के बाद जब कर्पूरी ठाकुर की सरकार बनी तो यहाँ के तत्कालीन विधायक

रामजीवन प्रसाद ने कोशिश की कि नदी पर बार-बार बांध बनाने की जगह कोई पक्की व्यवस्था कर दी जाए और नहर में पानी को नियंत्रित करने के लिए एक स्लुइस गेट का निर्माण कर दिया जाय। स्लुइस गेट तो बना मगर अब वह ध्वस्त हो चुका है और बांध तो कभी बना ही नहीं। बात फिर लोगों के आपसी सहयोग पर आकर टिक गयी है। बरसात में पानी अगर न बरसे या देर से बरसे तो लोग फिर मिल कर कोशिश करते हैं।''[1]

लगता है कि कर्पूरी ठाकुर के शासन काल में इन छोटी-छोटी नदियों से सिंचाई की कोशिश जरूर हुई थी। तब वे इसी जिले से चुन कर विधान सभा में पहुंचे थे। पास के रजवाड़ा पश्चिमी क्षेत्र में भी झीम नदी पर इसी तरह से स्लुइस बना कर आस-पास के गाँवों में सिंचाई करने का प्रयास किया गया था। यह एक अलग बात है कि वह स्लुइस गेट भी जाम हो गया और काम नहीं करता।

अभी हाल के वर्षों तक बेनीपट्टी के पास देपुरा गाँव में किसान कमला की बछराजा धार को बांध करके उसके पानी को हजमा नाले से देपुरा, नदौत और मुहम्मदपुर होते हुए बेनीपट्टी के चौर में पहुँचा दिया करते थे। यहाँ से देपुरा, नदौत, मुहम्मदपुर, भटहीसेर, बेनीपट्टी, पौआम, बिरौली, अधवारी और सलहा गाँवों के किसान रब्बी की फसल के लिए इस पानी का उपयोग कर लेते थे। यह इन गाँवों का परम्परागत स्रोत और साधन था। बेनीपट्टी में ही चम्मा टोल के उत्तर बछराजा धार के पूर्वी किनारे से एक नाला निकलता है जो नवकी पोखरा (बेनीपट्टी) में गिरता है और धोबघट पुलिया से फिर बाहर निकलता है। इस नाले से बरहा, कटैया, बनकट्टा, दामोदरपुर और बलिया तक सिंचाई होती है। बछराजा के पश्चिम से जो नाला निकलता है वह सरिसब, बेनीपट्टी, बेहटा, जगत और जगत एराजी को पानी देता हुआ सोइली धार में जा मिलता है।[2]

इस तरह की सामूहिक कोशिशों की एक भोंडी नकल 1957 के राज्य व्यापी सूखे में बागमती नदी की खनुआं धार पर की गयी थी। सरकार ने धुबौली, बिलन्दपुर और खनुआं में तीन अलग-अलग जगहों पर नदी की धारा के सामने छोटे-छोटे बांध बनवाये। कार्यक्रम यह था कि पहले धुबौली वाले बांध में ठहरे पानी से ऊपरी क्षेत्र में सिंचाई होगी और फिर यह बांध काट दिया जायेगा और पानी बिलन्दपुर तक आयेगा और वहाँ संचयित होकर नहरों के माध्यम से अगल-बगल की जमीन को सींचेगा। यह सिंचाई पूरी होने पर इस बिलन्दपुर वाले बांध को भी काट दिया जायेगा और पानी खनुआं पहुंचेगा और वहाँ भी पानी को संचित करके खेतों की ओर मोड़ दिया जायेगा और वहाँ भी सिंचाई हो जायेगी। लेकिन बांध बनने के बावजूद इनमें से कुछ भी नहीं हुआ। हथिया में उस साल पानी बरसा ही नहीं और धान जानवरों को खिलाने लायक भी नहीं बचा। विधायक नितीश्वर प्रसाद सिंह ने बिहार विधान सभा में इस पूरे प्रकरण की जांच की बात उठायी थी और दोषी व्यक्तियों को दण्डित करने का आग्रह किया था।[3]

सिंचाई की आधुनिक व्यवस्था ने इस इलाके में सदियों से चली आ रही पारम्परिक और सामूहिक सामाजिक व्यवस्था का विकल्प बनने का एक भोंडा प्रयास भर किया है। ढेंकुल, कड़ीन, ढैंचा और रहट अब देखने को भी नहीं मिलता। इन सबको डीज़ल चालित पम्पों ने विस्थापित कर दिया है। इसकी वज़ह से जो काम पहले मानव श्रम या बैलों के माध्यम से प्राय: बिना मूल्य हो जाता था अब उसके लिए पूंजी लगती है। कमला नदी और पश्चिमी कोसी नहर से सिंचाई के जो सपने देखे गए थे उन सपनों को हकीकत में बदलने की कोशिशें पिछले पचास वर्षों से जारी हैं मगर उनका कोई किनारा नहीं दिखायी पड़ता।

पुपरी थाने में नदियों के माध्यम से अधिकांश सिंचाई हो जाती थी इसलिए वहाँ तालाबों से सिंचाई का रिवाज नहीं था। फिर भी पोखरी खुदवाने के काम को यहाँ बड़ा ही पुनीत कार्य माना जाता है और उसे अपनी कन्या के समान ही पवित्र दृष्टि से देखा जाता है। कन्या के विवाह जैसे पैतृक दायित्व की तरह पोखरी का विवाह भी जट्ठ या जैठ के साथ उसी धूम-धाम से होता है जैसा कि बेटी के ब्याह का जश्न मनता है। जैठ, जो कि आम तौर पर साल के पेड़ का विराट तना होता है, पोखरी में गाड़ दिया जाता है और इसी जैठ की मौजूदगी से पोखरी के विवाहिता होने का अंदाजा लगता है। सभी मांगलिक कार्य जैसे विवाह के समय मिट्टी कोड़ने की रस्म आदि ऐसी ही विवाहिता पुष्करिणियों (पोखरी) के किनारे होती हैं। देख-भाल और रख-रखाव में जो तवज्जो विवाहिता पोखरियों को मिलती है वह साधारण पोखरियों को नहीं मिलती।

पुपरी थाने में कभी पांच बड़े बड़े तालाब हुआ करते थे जो कि कालक्रम में मिट्टी भर जाने के कारण मर गए और उन पर खेती शुरू हो गयी। तालाबों की यह बेदखली अभी भी रुकी नहीं है। मुजफ्फरपुर की (1901) सेटिलमेन्ट रिपोर्ट में बाबू नीलमणि दे ने बनौल के एक तालाब के बारे में लिखा था कि उसका क्षेत्रफल 60 एकड़ था। इस तालाब से शिवहर थाने के एक बड़े क्षेत्र में सिंचाई होती थी। शिवहर राज से इस तालाब की नजदीकी इसकी वजह रही होगी। पिछले वक्तों में बड़े बड़े तालाबों का निर्माण करवाना हिन्दुओं के लिए एक धार्मिक और पुण्य का काम माना जाता था। मुस्लिम शासन की स्थापना से बहुत पहले एक राजा शिवै सिंह का जिक्र आता है जिन्हें तिरहुत के लोग राजोखर तालाब के निर्माणकर्ता के रूप में याद करते हैं। कहा भी है,

''पोखर राजोखर और सब पोखरा
राजा शिवै सिंह और सब छोकरा।''[4]

2.2 ब्रिटिश हुकूमत की बागमती से सिंचाई की नाकाम कोशिश

बागमती नदी से नहरों द्वारा सिंचाई करने का पहला प्रस्ताव संभवत: 1875-76 ई० में किया गया था। यह प्रस्ताव तत्कालीन मुजफ्फरपुर (उस समय मुजफ्फरपुर में आज के सीतामढ़ी, शिवहर, मुजफ्फरपुर और वैशाली जिले शामिल थे) और दरभंगा (आजकल के मधुबनी, दरभंगा और समस्तीपुर जिले) के उत्तरी पश्चिमी इलाकों को सींचने के लिए साइमन ऐण्ड ब्रुक्स नाम की एक कम्पनी द्वारा तैयार किया गया था। इस प्रस्ताव में भारत-नेपाल सीमा से कोई 16 किलोमीटर नीचे बागमती नदी पर एक वीयर बनाने का प्रस्ताव किया गया था जो कि नदी के प्रवाह के सामने पूरब-पश्चिम दिशा में निर्मित होता। वीयर नदी के प्रवाह की दिशा के सामने बांधनुमा ऐसी एक पक्की संरचना होती है जिससे उसके पीछे नदी के पानी का संचय करके उसके लेवेल को उठाया जा सके

और इसकी मदद से पानी को नहरों में ठेला जा सके। नदी में पानी का प्रवाह अधिक होने पर इस पूरे प्रवाह को इस पक्की संरचना के ऊपर से भी बहाया जा सकता है। इस वीयर के निर्माण के फलस्वरूप नहरों से शाखाएँ निकाल कर 2,560 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र की सिंचाई कर लेने का प्रस्ताव किया गया था। प्रस्तावित मुख्य नहर में नौ-परिवहन की व्यवस्था की गयी थी और मुख्य नहर से निकलने वाली वितरणियाँ इस तरह से डिजाइन की गयी थीं कि वह नदी के प्राय: समान्तर चलतीं और नदी के पानी को बायें किनारे पर फैलने से भी रोकतीं जिससे एक हद तक बाढ़ से भी बचाव होता। उस समय इस पूरी योजना की अनुमानित लागत 27.5 लाख रुपये थी और इसे बहुत ज़्यादा मंहगी योजना बता कर भारत सरकार ने खारिज कर दिया था।

1896 में बिहार में भयंकर अकाल पड़ा और तब मिस्टर मिल्स नाम के राहत कार्यों के अधीक्षक ने जमला गाँव के पास से बागमती को सोरम नदी से जोड़ते हुए लगभग 16 किलोमीटर लम्बी एक नहर खोदने का प्रस्ताव किया। बागमती में जिस स्थान से नहर निकालने की बात कही गयी थी वहाँ एक हेड-वर्क्स बनाने का प्रस्ताव इस योजना में शामिल था। 1875-76 में साइमन ऐण्ड ब्रुक्स ने बागमती नदी के बायें किनारे पर वितरणियों की शक्ल में तटबंध का जो प्रस्ताव दिया था उसकी जगह अब सीधे तटबंध ही प्रस्तावित था और उसके साथ-साथ आवश्यकतानुसार पुलों और कलवर्टों का प्रावधान भी इस योजना में किया गया था। इस योजना में प्रस्तावित मुख्य नहर वही थी जैसा कि साइमन ऐण्ड ब्रुक्स ने सुझाया था। कुल मिला कर इस नहर से बागमती की विभिन्न छाड़न धाराओं का उपयोग करके रबी के मौसम में 600 क्यूसेक पानी का सिंचाई में उपयोग कर लिया जाना था। इस प्रस्ताव को एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर मिस्टर टूगुड के पास उनकी राय जानने के लिए भेजा गया और उन्होंने अपनी रिपोर्ट 1897 में सरकार को भेजी जिसमें कहा गया था कि इस योजना की लागत लगभग 2.5 लाख रुपये आयेगी और इससे 96,000 एकड़ जमीन की सिंचाई हो पायेगी। तत्कालीन बंगाल सरकार ने इस योजना को प्रशासनिक स्वीकृति दे दी और राहत कार्य के तौर पर फरवरी से जुलाई 1897 के बीच लगभग 6.4 किलोमीटर लम्बी नहर खोद डाली गयी। इस निमार्ण कार्य में भूमि अधिग्रहण तथा मिट्टी का काम मिला कर लगभग 70,000 रुपये खर्च हुए और करीबन 26,000 रुपये निर्माण सामग्री आदि इकट्ठा करने में लगे। सही संरचनाओं के अभाव में यह नहर किसी काम नहीं आयी। इस नहर का अब कोई अता-पता नहीं मिलता है।

अप्रैल 1897 में बंगाल के तत्कालीन चीफ इंजीनियर कर्नल मैकआर्थर ने सोन अंचल के तत्कालीन सुपरिन्टेडिंग इंजीनियर मिस्टर बकली को इस योजना की जाँच करके अपनी रिपोर्ट देने को कहा। 12 अप्रैल 1897 को दी गयी अपनी रिपोर्ट में मिस्टर बकली ने योजना को लाभदायक बताया और कहा कि इससे केवल रब्बी की सिचाई न करके खरीफ के बारे में भी सोचना चाहिये और इसके लिए यह जरूरी होगा कि नहरों पर पक्की संरचनाएं बनायी जाएं और नहरों का विस्तार किया जाए ताकि एक बड़े क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा मिल सके। पानी की लगातार उपलब्धता बनाये रखने के लिए उन्होंने नदी पर एक वीयर बनाने का भी प्रस्ताव किया।

चीफ इंजीनियर ने मिस्टर बकली के सारे प्रस्तावों से अपनी सहमति जतायी मगर नदी की धारा के सामने वीयर बनाने से उन्हें इत्तिफाक नहीं था। अब नया एस्टीमेट बनाने के लिए योजना को चंपारण कैनाल डिवीज़न के एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर मिस्टर बटलर के पास भेजा गया और बटलर ने जो योजना और जो एस्टीमेट बनाया उसकी राशि उन्होंने 9,09,154 रुपये बतायी जिसमें हेड-वर्क्स के साथ-साथ 16 किलोमीटर लम्बी मुख्य नहर शामिल थी और उसके साथ ही तीन साइफन, पुरानी धार पर एक एक्वीडक्ट, लखनदेई नदी पर एक वीयर, एक पुल-सह-रेगुलेटर और एक एस्केप चैनेल का निर्माण होना था। लगभग 80 किलोमीटर लम्बी वितरणियों और 88 किलोमीटर लम्बी छाड़न धाराओं का पुनरुद्धार भी इस योजना में शामिल था।

इस पूरी योजना को कलक्टर मिस्टर चैपमैन और कमिश्नर मिस्टर बोरडिलों के पास भेजा गया ताकि वह राहत कार्य के तौर पर किये जाने वाले इस निर्माण कार्य की आर्थिक समीक्षा कर सकें। इन दोंनों ही अफ़सरों ने योजना से अपनी असहमति जतायी और सरकार ने काम आगे बढ़ाने का अपना इरादा बदल दिया।[5]

भारत के पहले सिंचाई आयोग (1903) ने इस बागमती परियोजना पर अपनी टिप्पणी की थी। उसका मानना था, ''...फिर भी, ऐसा साफ झलकता है कि कोई बड़ी योजना बहुत ज्यादा फायदेमन्द नहीं हो पायेगी जबकि लेफ्टिनेन्ट गवर्नर की राय थी कि अगर यह योजना केवल (सूखे से) सुरक्षा के लिए हाथ में ली जाती है तब इसके निर्माण के पक्ष में दिये गए तर्क कुछ ढीले पड़ जाते हैं। ...थोड़ी बहुत आपत्तियों के साथ हम भी इस राय का समर्थन करते हैं। हमारे (आयोग के) सामने जो कुछ भी दस्तावेज रखे गए हैं उनके मुताबिक इस योजना की लागत चालीस से पचास लाख रुपयों के बीच आयेगी जबकि इससे मिलने वाला कुल राजस्व डेढ़ लाख रुपये के आस-पास ही हो पायेगा। इसमें से भी एक लाख रुपये के करीब तो हर साल सिंचाई के लागत खर्च में ही शेष हो जायेंगे। अगर पूंजी निवेश पर 5 प्रतिशत वार्षिक ब्याज देना पड़े, और निर्माण कार्यों के समय इतना तो लगता ही है, तब सालाना डेढ़ से दो लाख रुपयों के बीच हमेशा के लिए योजना पर खर्च करना पड़ जायेगा। लम्बे समय से इस जिले में काम का अनुभव रखने वाले एक कलक्टर का कहना है कि जिन इलाकों में इस योजना से सिंचाई मिलेगी वहाँ योजना न बना कर सूखा पड़ने पर अगर राहत कार्य चलाने पड़ जाएं तो एक साल में उस पर खर्च 25,000 रुपयों से ज्यादा नहीं होगा। इस तरह की बातें केवल अनुमान के आधार पर कही जाती हैं लेकिन राहत कार्यों पर आने वाला खर्च अगर इस से ज्यादा नहीं होता है तब हमारे पास यह मान लेने के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचता है कि इस तरह के खर्च में न पड़ा जाए जिसमें साल-दर-साल योजना पर डेढ़ से दो लाख रुपयों की चपत लगती रहे। लेकिन हमें यह बात भी आसानी से स्वीकार नहीं है कि एक ऐसी योजना जिससे डेढ़ से दो लाख एकड़ जमीन की सिंचाई संभव है उससे मिलने वाला सालाना औसत राजस्व डेढ़ लाख रुपयों से ज्यादा नहीं हो पायेगा और न ही प्रस्तावित 12 आने प्रति एकड़ का सिंचाई शुल्क ही हमें व्यावहारिक लगता है। बहुत मुमकिन है कि एक ऐसे जिले में, जहाँ एक औसत वर्षा वाले साल में किसान

को सिंचाई की जरूरत ही नहीं पड़ती वहाँ इससे ज्यादा सिंचाई शुल्क की वसूली न हो सके... लेकिन 50 लाख रुपये लागत वाली इस योजना से अगर एक सूखे के वर्ष में 2,00,000 एकड़ भूमि पर निश्चित रूप से सिंचाई उपलब्ध करवायी जा सके तब इस योजना को मंहगी योजना नहीं कहा जा सकता। एक निर्धारित समय के अन्दर अगर यह मुमकिन हो सके कि परियोजना से मिलने वाले कुल सालाना राजस्व को पूरे कृषि क्षेत्र में प्रति एकड़ 1 रुपया 4 आना सिंचाई शुल्क लगा कर ढाई लाख रुपयों के आस-पास पहुँचा दिया तब हमें जरूर लगता है कि इस योजना को निश्चित रूप से सिंचाई की सुरक्षा देने वाली योजना माना जा सकता है और तब तर्कसंगत मान कर योजना को भी स्वीकार करना पड़ेगा। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि योजना का विस्तृत एस्टीमेट तैयार किया जाए... हम इस बात से भी सहमत नहीं हैं कि 1896 में प्रस्तावित छोटी योजना के स्वरूप को पूरी तरह से खारिज कर दिया जाए और हमारा मानना है कि इसका क्रियान्वयन जिला स्तर पर जरूर किया जाए। डिस्ट्रिक्ट इंजीनियर मिस्टर डिज़्ली का सुझाव भी यही है कि या तो अभी या जब भी राहत कार्यों के अधीन कोई काम करना हो, तब इसे पूरा कर लिया जाए।''[6]

लगभग इसी समय की मुजफ्फरपुर की सेटिलमेन्ट रिपोर्ट में जिले में होने वाली सिंचाई की काफी चर्चा है। रिपोर्ट कहती है, ''... जहाँ तक सिंचाई का सवाल है उसके आंकड़े बहुत ही निराशाजनक हैं और अगर हाजीपुर परगने में सिंचाई को दरकिनार कर दिया जाए, जहाँ 8.6 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित होता है, तो पूरे जिले (उस समय का मुजफ्फरपुर) की सिंचाई का औसत एक प्रतिशत से भी कम रहता है। वह थाने जिनमें सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत जिले के सिंचित क्षेत्र के औसत एक प्रतिशत से ज्यादा है उनमें हाजीपुर 8.6 प्रतिशत, महुआ 3.2 प्रतिशत, मुजफ्फरपुर 2.1 प्रतिशत और पुपरी 3 प्रतिशत शामिल हैं। ...हाजीपुर में उपलब्ध सिंचाई का ही यह परिणाम है कि वहाँ की कृषि पर बारिश की कमी का कोई असर नहीं होता और उस इलाके में बहुत ज्यादा खुशहाली देखने को मिलती है।''[7]

रिपोर्ट आगे कहती है कि सीतामढ़ी में सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत केवल 0.4 है और यह सारा क्षेत्र पुपरी के आस-पास की निचली धान की जमीन का क्षेत्र है। इसके अलावा केवल मुजफ्फरपुर थाने का क्षेत्र ही ऐसा है जहाँ कुछ सिंचाई होती है और इसका प्रतिशत 2.1 होता है। इस थाने की जमीन 13 परगनों पर फैली हुई है। रेवेन्यू सर्वेक्षण की रिपोर्टों के अनुसार चकला नईं को छोड़ कर कोई भी ऐसी जगह नहीं है जहाँ लोग सिंचाई करते हों और यह सिंचाई भी सब्जी उगाने और पान की खेती के लिए ही की जाती है। इन इलाकों में काम करने वाले सहायक सेटिलमेन्ट अफसरों का मानना है कि इन थानों में सिंचाई के विकास की गति बहुत धीमी है। ...शिवहर थाने के अंचल की एक टिप्पणी में बाबू नन्द किशोर लाल, सहायक सेटिलमेन्ट अफसर का कहना था, ''...यहाँ पर सिंचाई व्यवस्था का रिकार्ड रखने वाला कोई रजिस्टर नहीं है। अगर कभी सूखे की स्थिति पैदा हो जाती है तब किसान अपनी कुछ जमीन कुओं और तालाबों के माध्यम से सींच लेते हैं।''[8] बेलसंड के अधिकारी बाबू भबतारण चटर्जी का मानना था कि, ''...इस अंचल में सिंचाई मुख्यत: तालाबों के माध्यम से होती है और ये तालाब यहाँ बड़ी संख्या में मौजूद हैं। यह सिंचाई उसी जमीन पर हो पाती है जो इन तालाबों के पास हैं। बाकी जमीन पर सिंचाई वर्षा पर ही निर्भर करती है।''[9] पारू थाने के अधिकारी बाबू माखन लाल चटर्जी लिखते हैं कि, ''...नियमत: इस इलाके में कोई सिंचाई होती ही नहीं है। तीन बड़ी नदियों को छोड़ कर यहाँ बड़ी संख्या में कुएं मौजूद हैं लेकिन उनका उपयोग सिंचाई में नहीं होता। किसानों के बीच यह आम धारणा है कि जिस तरह की मिट्टी इस इलाके में मौजूद है उस पर सिंचाई करने से फसल को फायदे की जगह नुकसान पहुँचता है और यह मान्यता उन सारे किसानों की है, चाहे वे पढ़े लिखे हों या अशिक्षित ही क्यों न हों।''[10]

रिपोर्ट के अनुसार कुओं का इस्तेमाल आमतौर पर पीने के पानी के लिए ही होता था। अगर यह कुआँ गाँव के बीच स्थित हो तब तो उससे वैसे भी सिंचाई का कोई सवाल नहीं उठता। सीतामढ़ी के उत्तरी क्षेत्र में जो 3.4 प्रतिशत सिंचित भूमि की बात कही जाती थी वह सिंचाई मुख्यत: सीतामढ़ी, पुपरी, बेलसंड, कटरा और मुजफ्फरपुर थानों में पाइनों के माध्यम से होती थी। जिले के उत्तरी क्षेत्रों में आहर और पाइन जैसी कोई व्यवस्था निश्चित रूप से कारगर हो सकती थी जैसा कि दक्षिण में गया में मौजूद है मगर इसकी इस इलाके में जरूरत ही नहीं पड़ती। जो कुछ भी सिंचाई यहाँ होती थी, वह तालाबों के माध्यम से हो जाती थी।[11]

सेटिलमेन्ट रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि इस इलाके की जमीन बहुत उपजाऊ है तथा उसमें नमी को रोक रखने की अद्‌भुत क्षमता है जिसकी वजह से किसानों को सिंचाई के फायदे को समझने की कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। मुजफ्फरपुर के दक्षिणी भाग के हाजीपुर, महुआ, लालगंज, पारू और मुजफ्फरपुर थानों में तो जो भी सिंचाई होती है वह ज्यादातर कुओं से होती है और उसका प्रतिशत 78 के नीचे नहीं जाता मगर सीतामढ़ी, शिवहर, पुपरी, बेलसंड और कटरा जैसे थानों में तो कुओं से होने वाली सिंचाई 15 प्रतिशत के ऊपर नहीं जा पाती। पुपरी में कुओं की स्थिति का वर्णन करते हुए बाबू चारु चन्द्र कुंअर का कहना था, ''...जहाँ तक कच्चे कुओं से सिंचाई का सवाल है तो मैं यह कहूँगा कि इस इलाके में यह असफल हुआ है। यह सच है कि यहाँ जमीन के 6 से 10 फुट नीचे पानी मिल जाया करता है मगर इस पूरे क्षेत्र में जमीन की निचली सतह में बालू है और उसकी वजह से कुओं की दीवारों को ढहते देर नहीं लगती। इससे बचने के लिए लोग चटाइयों या बांस की अस्थाई लाइनिंग कर देते हैं पर उससे भी कोई फायदा नहीं होता है।''[12]

पक्के कुएं इसका एक विकल्प हो सकते थे मगर इस पूरे इलाके की जमीन नीची है और पूरे इलाके में छोटी-छोटी नदियों का जाल बिछा होने के कारण जमीन बाढ़ में अक्सर डूब जाती थी जिससे कुएं भी पट जाते थे। यह भौगोलिक परिस्थिति सिंचाई के लिए कुओं को अव्यावहारिक बना देती थी। गाँव के बाहर बना कुआँ चाहे वह कच्चा हो या पक्का, देख-रेख की कमी से हमेशा खतरे में ही पड़ा रहता था।

पुपरी थाने में जिस 78 प्रतिशत सिंचाई की बात की जाती थी उसका मुख्य कारण अधवारा समूह की नदियाँ थीं जिनसे सीतामढ़ी थाने के कुछ क्षेत्रों की सिंचाई होती थी। इस व्यवस्था के बारे में पुपरी अंचल

के अधिकारी बाबू चारु चन्द्र कुंअर का कहना था, ''... अपनी बहुत सी छोटी-छोटी सहायक धाराओं के साथ अधवारा नदी इस क्षेत्र के पश्चिमी और उत्तर पश्चिमी हिस्से की सिंचाई करती है। जिन वर्षों में बारिश कम होती है उनमें स्थानीय किसान इन नदियों पर बांध बना दिया करते हैं। यह बांध नदी की धारा के सामने बनते हैं और इनकी एक शृंखला का निर्माण किया जाता है। एक बांध द्वारा नहर की मदद से सिंचाई कर लेने के बाद उसे काट दिया जाता था और पानी नीचे के बांध में जाकर रुक जाता था। इस तरह पूरा क्षेत्र सिंचित हो जाता था। कहीं-कहीं इस नदी और लखनदेई पर पाइनों का निर्माण कर के पानी को काफी दूर तक पहुँचा दिया जाता था।''[13] कुछ इसी तरह की व्यवस्था के बारे में राम दरेस राय ने लेखक को बताया था।

इन सारी कोशिशों और पृष्ठभूमि को देखते हुए इतना तो जरूर लगता है कि ब्रिटिश शासन बागमती नदी से सिंचाई के विकास के लिए उत्सुक था मगर यह काम वह पूरी तरह ठोंक-बजा कर करना चाहता था। उनके खर्चों में निर्माण में लगी पूंजी, उस पर लगने वाला ब्याज, रख-रखाव का खर्च तथा कर्मचारियों की तनख्वाह आदि का व्यय शामिल था। यदि कोई योजना इन शर्तों को पूरा नहीं करती थी तो उस योजना के प्रति उनका आग्रह बहुत कम रहता था। वे इस बात से भी परेशान रहते थे कि साधारण वर्षा वाले साल में किसान नहरों से पानी नहीं लेंगे और अगर वे पानी नहीं लेंगे तो पैसा भी नहीं देंगे। ऐसी हालत में योजना का खर्च बट्टे खाते में चला जायेगा। शायद यही वजह रही हो कि अंग्रेजों ने बाद के दिनों में योजना में कोई रुचि नहीं दिखायी।

2.3 एम0 पी0 मथरानी का बागमती सिंचाई परियोजना प्रस्ताव (1956)

आजाद भारत में एक बार फिर नये सिरे से बागमती से सिंचाई के प्रस्ताव जनता और जन-प्रतिनिधियों की ओर से आने लगे। 1953 में आयी भयंकर बाढ़ के बाद और कोसी योजना की स्वीकृति से पहले बिहार विधान सभा में ठाकुर गिरिजा नन्दन सिंह ने बागमती परियोजना का सवाल उठाया। उनका कहना था, ''...बागमती में कम से कम दस बार बाढ़ आती है और दस बार पानी निकलता है। मगर बागमती की पहले जो हालत थी वह धीरे-धीरे बदलती जा रही है। इतना ज्यादा सिल्टिंग हो गया है कि पानी निकलने में देर होती है। बागमती का पहले जो रुख था यदि उस स्थिति में आज उसे ला दिया जाए तो बागमती से लोगों को उपज के संबंध में भी फायदा होगा। ...ऐसी नदी जिस प्रदेश में हो, जिस एरिया में हो उसे अन्न का भण्डार समझा जाता है मगर सरकार का ध्यान उस तरफ अभी नहीं गया है।''[14]

पहली पंचवर्षीय योजना के अन्त में नदी पर बाढ़ नियंत्रण और सिंचाई परियोजना के निर्माण के लिए प्रस्ताव का स्वरूप कुछ-कुछ स्पष्ट होने लगा था। अब यह तय हुआ कि बागमती नदी पर दो अलग-अलग वीयर बनाये जायें। पहला वीयर नदी पर भारत नेपाल सीमा पर प्रस्तावित हुआ तो दूसरा वीयर परदेसिया गाँव में बनाने की बात उठी। इसी जगह से नदी की एक नयी धारा फूटती थी और यह जगह लालबकेया और बागमती के संगम से लगभग 13 किलोमीटर दक्षिण में तथा हिरम्मा गाँव से 24 किलोमीटर उत्तर में है। हिरम्मा में नदी की एक दूसरी धारा फूटती है।

बिहार के तत्कालीन चीफ़ इंजीनियर एम० पी० मथरानी की एक रिपोर्ट (1956) के अनुसार नेपाल के तराई वाले हिस्से से लेकर कमला से बागमती नदी के संगम तत्कालीन मुंगेर जिले के झमटा गाँव तक बागमती नदी के दोंनों किनारों पर बाढ़ सुरक्षा के लिए तटबन्धों का प्रस्ताव किया गया था। इस परियोजना का नाम बागमती तटबन्ध परियोजना था। प्रस्तावित वीयरों के निर्माण का उद्देश्य सिंचाई के साथ-साथ नदी की दिशा स्थिर करना तथा उसे एक हद तक नियंत्रित करने का प्रयास भी करना था। बागमती नदी का अक्टूबर महीने का प्रवाह 1500 क्यूसेक के आस-पास रहता है जिसमें से इस योजना में 750 क्यूसेक नेपाल के लिए नियत किया गया था और 750 क्यूसेक पानी भारत के हिस्से में आने वाला था। भारत नेपाल सीमा पर बनाये जाने वाले पहले वीयर के माध्यम से नेपाल में स्थानीय उपयोग के लिये 750 क्यूसेक पानी को उपलब्ध करवाना था जबकि भारत के लिए नियत 750 क्यूसेक में से 375 क्यूसेक पानी इसी वीयर से सिंचाई के लिए मिलना था। बाकी के 375 क्यूसेक पानी को वीयर के ऊपर से बहते हुए भारत में प्रवेश करना था जहाँ नीचे उसका उपयोग होता। पहले वीयर से आने वाले इस प्रवाह को हिरम्मा वाले दूसरे वीयर में अटका लेने की बात थी। प्रस्तावित पहले वीयर और दूसरे वीयर के बीच में ही लाल बकेया नदी बागमती से संगम करती है और यह उम्मीद की गयी थी कि दूसरे वीयर (हिरम्मा) में लालबकेया का कुछ पानी और शामिल हो जायेगा पर क्योंकि लालबकेया में इसी दरम्यान पहले से ही एक वीयर बना कर उसके पानी को पूर्वी चम्पारण की तरफ मोड़ दिया गया था इसलिए हिरम्मा में पानी की आमद पर कोई बहुत ज्यादा फर्क नहीं पड़ने वाला था।

हिरम्मा में प्रस्तावित वीयर से वहाँ की मुख्य नहर से कोई 350 क्यूसेक पानी मुहैया करवाने की बात थी। बागमती से फूट कर निकलने वाली एक धारा बिलन्दपुर गाँव के पास शुरू होती थी जिसे सियारी धार कहते हैं। पूरब की ओर बहती हुई यह धारा पहले मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी सड़क को कटौंझा के पास एक पुल से पार करती थी और लगभग 64 किलोमीटर की यात्रा तय करके मुजफ्फरपुर जिले के गायघाट प्रखंड में भागवतपुर (भगमतपुर) गाँव के पास लखनदेई नदी से मिल जाती थी। यह संगम स्थल मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग से लगभग 13 किलोमीटर नीचे पड़ता है। 1950 के दशक के पूर्वार्द्ध में सियारी धार की उड़ाही की गयी थी और इसी का उपयोग नहर के रूप में करने का प्रस्ताव किया गया था।

पूरब में लखनदेई, दक्षिण में सियारी धार और दक्षिण-पश्चिम में बागमती नदी से घिरे इस क्षेत्र का रकबा 330 वर्ग मील (लगभग 850 वर्ग किलोमीटर या 2,11,200 एकड़) है। 750 क्यूसेक उपलब्ध पानी से रब्बी के मौसम में प्राय: 11,000 एकड़ क्षेत्र पर सिंचाई करना मुश्किल नहीं होता, ऐसा मथरानी का मानना था।

इस कथित क्षेत्र में बारिश कम नहीं होती और इसका परिमाण 51 इंच के आस-पास रहता है और यह किसी भी मायने में धान के लिये

पर्याप्त होता है मगर समस्या तब आती थी जब दो बारिशों के बीच का अन्तर असामान्य रूप से बढ़ जाए और सिंचाई विभाग के अनुसार ऐसा अक्सर होता था। इस वजह से खरीफ की फसल पर आँच आती है। खरीफ की फसल बहुत कुछ हथिया नक्षत्र में बरसने वाले पानी पर निर्भर करती है। 1919 और 1933 के बीच के पन्द्रह वर्षो में, जिसके लिए आँकड़े उपलब्ध थे, हथिया में 9 सालों में वर्षा 1.5 इंच से भी कम हुई जबकि मात्र 6 वर्षो में बारिश 1.5 इंच से ज्यादा हुई। ऐसी परिस्थिति में खरीफ की फसल बचाने के लिए यह जरूरी माना गया कि सिंचाई का पुख्ता इंतजाम मौजूद रहे। सरकार का मानना था कि अगर खरीफ की फसल को सींचने की सुनिश्चित व्यवस्था कर दी जाती है तो यह फसल कभी भी मारी नहीं जायेगी और कुछ पानी रबी की फसल के लिए भी दिया जा सकेगा। 1956 में बागमती परियोजना में सिंचाई का जो प्रस्ताव किया गया था उसकी लागत 2,36,37,500 रुपये थी और उसमें 56,250 एकड़ जमीन पर सिंचाई कर लेने का अनुमान किया गया था।[15]

किसानों के कल्याण के लिए सुनिश्चित सिंचाई से बेहतर कोई बात नहीं होती और इस बात को सभी अच्छी तरह समझते हैं। इस पानी में बागमती जैसी नदी की अपूर्व उर्वरा शक्ति वाली गाद अगर मिल जाए तो होने वाली फसल की कल्पना मात्र से किसानों की बाछें खिल जाती हैं। सरकार की इच्छाशक्ति और इंजीनियरों के शिल्प-कौशल से जिस बागमती सिंचाई परियोजना का जन्म होना था, दुर्भाग्यवश वह शुभ मुहूर्त आज तक (2010) नहीं आया। सिंचाई के वायदे की केवल राजनीति हुई।

2.4 आर्थिक संकट, आश्वासन और राजनीति

1957 में बिहार में राज्य-व्यापी सूखा पड़ा था और उससे मुजफ्फरपुर जिला भी प्रभावित हुआ था जिसकी वजह से सिंचाई की मांग में स्वाभाविक रूप से तेजी आयी और आम तौर पर धारणा यह बनी कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में बागमती परियोजना को हाथ में लेने का समय बीत चुका है मगर तीसरी पंचवर्षीय योजना में इसे क्रियान्वयन के लिए जरूर शामिल कर लिया जायेगा। ऐसा मगर हुआ नहीं। अर्थाभाव के कारण यह योजना खटाई में पड़ गयी। सरकार द्वारा बागमती घाटी में सिंचाई की कोई व्यवस्था नहीं किये जाने की शिकायत करते हुए गिरिजा नन्दन सिंह ने एक बार फिर सरकार को चेताया, ''... बागमती क्षेत्र की जमीन अत्यधिक उर्वर है। बागमती द्वारा लायी गयी मिट्टी की खाद से यह पटी है। धान तथा रब्बी इस क्षेत्र की मुख्य फसलें हैं परन्तु यह क्षेत्र बराबर बाढ़ और सूखे का शिकार होता रहा है जिसके परिणामस्वरूप यहाँ के लोग भूखों मर रहे हैं। यद्यपि इस क्षेत्र से होकर अत्यधिक पानी बहता है, फिर भी कुछ छोटे-छोटे इलाकों को छोड़ कर यहाँ की खेती केवल स्थानीय वर्षा पर ही निर्भर है और जब वर्षा नहीं होती है तब अकाल की सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। सम्पूर्ण भू-भाग में वर्षा अनिश्चित तथा अनियमित रूप से होती है। इतना बड़ा तथा उर्वर भू-भाग देश में और कोई नहीं है जो इस प्रकार सूखे का बराबर शिकार होता है।''[16] मुजफ्फरपुर जिले के सीतामढ़ी अनुमण्डल में बाढ़ से लगातार होने वाले नुकसान का हवाला देते हुए उन्होंने केन्द्र तथा राज्य-सरकार से अपील की कि वह क्षेत्र की समस्याओं पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करें और तीसरी पंचवर्षीय योजना में बागमती योजना को शामिल करें।

इधर 1962 के चीन युद्ध की आशंका ने इस तरह की सारी योजनाओं पर प्रश्न चिह्न लगा दिये थे और उसका शिकार बागमती भी हुई। आशा की किरण एक बार फिर फूटी जब 11 नवम्बर 1963 को केन्द्रीय सिंचाई मंत्री डॉ० के० एल० राव सीतामढ़ी आये।

सीतामढ़ी में 12 नवम्बर 1963 को डॉ० राव ने बागमती-अधवारा सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा कि बागमती क्षेत्र की धरती बहुत उपजाऊ है और अगर इसकी बाढ़ से रक्षा की जा सके तो अन्न के उत्पादन में बहुत बढ़ोतरी हो सकेगी। विद्युत उत्पादन तथा अन्न उत्पादन करने वाली योजनाओं का हमेशा स्वागत होना चाहिये। उन्होंने बागमती पर बराज बना कर उसके दोनों किनारों पर नहरें निकालने का प्रस्ताव किया जिससे किसानों को सिंचाई की सुविधा मिल सके। नदी के किनारे तटबन्ध बनाये जाने के बारे में उनका कहना था कि यह योजना बहुत मंहगी होगी। इस सम्मेलन में बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री कृष्ण बल्लभ सहाय तथा सिंचाई मंत्री महेश प्रसाद सिन्हा भी मौजूद थे।[17] इस सम्मेलन को संबोधित करते हुए मुख्यमंत्री कृष्ण बल्लभ सहाय ने संसाधनों की कमी को पूरा करने के लिए बागमती बांड जारी करने का सुझाव दिया जबकि केन्द्रीय मंत्री डॉ० राम सुभग सिंह ने आश्वासन दिया कि केन्द्र उत्तर बिहार में जूट तथा गन्ने का उत्पादन बढ़ाने के लिए हर संभव सहायता करेगा।[18]

लेकिन केन्द्र द्वारा राज्य को आर्थिक सहायता देने के लिए जो कुछ भी कहा जाता रहा हो, सच यह था कि चीन से 1962 के युद्ध के बाद देश की आर्थिक स्थिति खराब थी और ऊपर से पाकिस्तान से लगी सीमाओं पर भी तनाव बढ़ रहा था। ऐसे में निर्माण कार्यों के लिए संसाधनों की भीषण कमी थी और सरकार कुछ विशेष कर सकने की स्थिति में नहीं थी। बिहार के सिंचाई मंत्री का कहना था, ''...आज हमारे लिए आर्थिक संकट है और हमारे जेनरल स्कीम के लिए सिर्फ 2 करोड़ 50 लाख रुपये का इस बजट में प्रोवीज़न किया गया है। आप देखेंगे कि हमने कितनी स्कीमों को पूरा किया है और कितनी रनिंग स्कीम हैं; जो योजना चल रही है उसमें हमारे कितने पैसे लगेंगे। ...सब से पहला काम सदन का है कि हम लोगों को परेशानी से बचावें और इसके लिए हमको पैसा दिला दें। आज बागमती का तकाजा है और यह नदी (बूढ़ी) गंडक में मिलना चाहती है।''[19]

इसके अलावा एक कड़वी सच्चाई यह है कि बिहार में बाढ़ का मुद्दा, भले ही वह थोड़े समय के लिए ही क्यों न हो, एकाएक इतनी तेजी से उभरता है कि उसके सामने सिंचाई का सारा मसला ही गौण हो जाता है। ऐसा कई बार हुआ है कि बिहार विधान सभा में सूखे और अनावृष्टि पर चर्चा होनी थी मगर ऐन मौके पर इतनी बारिश हो गयी कि स्थिति बाढ़ की बन गयी और सारी बहस का रुख दूसरी तरफ मुड़ गया। आज भी कोसी और गंडक परियोजनाओं में सिंचाई की बदहाली पर चर्चा इसलिए नहीं हो पाती है क्योंकि सारी बहस के बीच बाढ़ का मुद्दा छाया रहता है। वैसे भी सिंचाई की मांग में कभी उस आपातस्थिति का दर्शन नहीं होता जो बाढ़ के समय सहज भाव से बन जाती है। इसलिए सिंचाई का प्रश्न उठाने या उसे लेकर पार्टियों को राजनीति करने का भी मौका मिल जाता है। ऐसी ही शिकायत विधायक त्रिपुरारी प्रसाद सिंह

को व्यवस्था से थी जिसकी अभिव्यक्ति उनके बिहार विधान सभा में दिये गए बयान (1968) से होती है, ''...अभी तक सिंचाई के मामले में 20 साल से कांग्रेस सरकार का जो आधार रहा, वह तो राजनैतिक दृष्टिकोण था एवं वह तो राजनैतिक आधार था। उनके निकट जो लोग थे, जिनको वे प्रश्रय देना चाहते थे, वहाँ तो स्कीम ली गई, लेकिन ऐसे क्षेत्र जिनकी मंत्री के यहाँ पहुँच नहीं थी उनका क्षेत्र उपेक्षित रहा, ध्यान नहीं दिया गया। जब संविद की सरकार बनी तो हमारा विश्वास था कि बिना किसी राजनैतिक दृष्टि के तमाम क्षेत्रों में, जिन क्षेत्रों में कि पटवन के अभाव में हर साल मारा पड़ता है, दो-दो, तीन-तीन वर्ष में अकाल की लपेट में आना पड़ता है उसकी तरफ सरकार का ध्यान अवश्य जायेगा, लेकिन बहुत दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि उस संविद सरकार का भी दृष्टिकोण, जो 20 साल की कांग्रेसी सरकार का जैसा रहा वही दृष्टिकोण उनका भी रहा। सरकार बार-बार कहती है कि भारत सरकार हमारे रास्ते में बाधक है। यह कह कर बिहार की जनता को बरगलाया नहीं जा सकता है।''[20]

बागमती घाटी में सिंचाई के नाम पर विभिन्न सरकारों द्वारा बरगलाये जाने का सिलसिला अभी तक ख़त्म नहीं हुआ है। बागमती नदी द्वारा बाढ़ नियंत्रण और सिंचाई की जो भी मांगें उन दिनों उठती थीं उनके केन्द्र में कहीं न कहीं एम० पी० मथरानी द्वारा 1956 में तैयार की गयी परियोजना रिपोर्ट ही रहा करती थी क्योंकि वही एक उपलब्ध आधारपत्र था। आधिकारिक रूप से इस योजना को सरकार की स्वीकृति के लिए 1969 में प्रस्तुत किया गया और बिहार सरकार द्वारा इसकी प्रशासनिक स्वीकृति दिसम्बर 1970 में दी गयी। इस योजना के अनुसार बागमती नदी की जो धारा देवापुर, लहसुनियाँ, मकसूदपुर, कनौजर घाट, जठमलपुर और हाया घाट होकर बहती थी, उसके दोनों किनारों पर तटबन्धों का निर्माण करके 397 वर्गमील (1016 वर्ग किलोमीटर) क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया था।

2.5 नदी का धारा-परिवर्तन और योजना की स्वीकृति

मगर इसके पहले कि राज्य सरकार इस परियोजना को स्वीकृति प्रदान करती, बागमती नदी की धारा 1969 में लहसुनियाँ–देवापुर के पास बदल गयी। देवापुर में ही नदी पर बराज बनाने का प्रस्ताव किया गया था और इस बराज की मदद से सीतामढ़ी/शिवहर की 2.56 लाख एकड़ जमीन की सिंचाई करने की बात थी और जिस धारा पर तटबन्ध का प्रस्ताव किया गया था वह लगभग सूख गयी। 14 मार्च 1970 को पटना में एक संवाददाता सम्मेलन में बिहार के सिंचाई विभाग के राज्यमंत्री नरसिंह बैठा ने सूचना दी कि उत्तर बिहार की बागमती योजना के लिए स्वीकृति मिल गयी है। उन्होंने कहा कि पांच करोड़ अठहत्तर लाख रुपयों की अनुमानित लागत से बनने वाली इस योजना से 2 लाख 56 हजार एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी।[21]

मंत्री जी की इस घोषणा के बाद आम लोगों का योजना के प्रति उत्साहवर्धन स्वाभाविक था मगर अब तक जो बातें कही जा रही थीं और योजना का जो स्वरूप था उसमें लोगों को सिर्फ इतना ही पता था कि योजना के निर्माण के बाद क्षेत्र की सारी समस्याओं का समाधान हो जायेगा। बागमती परियोजना वास्तव में क्या है, इसके बारे में खास जानकारी, लोगों को नहीं थी। यह घोषणा भी केवल सिंचाई तक सीमित थी और बाढ़ नियंत्रण का क्या होगा उसके बारे में सरकार अब तक खामोश थी। इस संवाददाता सम्मेलन में सिंचाई विभाग के चीफ़ इंजीनियर भी मौजूद थे और एक सवाल के जवाब में उन्होंने इतना ही कहा था कि बाढ़ नियंत्रण वाली योजना की स्वीकृति शीघ्र मिल जायेगी। आर्यावर्त (पटना-17 मार्च 1970) अपने संपादकीय में लिखता है, ''...जब तक बागमती योजना का विस्तृत विवरण प्रकाशित नहीं किया जाता तब तक यह कहना कठिन है कि वह बागमती क्षेत्र के लोगों को स्वीकार होगी अथवा नहीं। बागमती योजना का जो प्रारूप बिहार सरकार ने तैयार किया था उसमें बागमती के दोनों ओर दूर तक तटबन्ध बनाने का सुझाव दिया गया था। किन्तु बागमती क्षेत्र के लोगों का सुझाव था कि इस नदी से अधिक से अधिक नहरें निकाल कर उसकी बाढ़ के प्रकोप को कम कर दिया जाए। किन्तु तटबन्ध बना कर उसके पानी को खेतों में जाने से रोका न जाए। बागमती क्षेत्र की ज़मीन जो उपजाऊ है वह बागमती की पांक (गाद) के कारण। यदि वहाँ तटबन्ध बना कर खेतों में नदी का पानी जाने नहीं दिया गया और पांक पड़ने नहीं दी गयी तो वैसी योजना से लाभ नहीं, हानि अधिक होगी।''

बागमती घाटी की उर्वर भूमि के मूल में इसी पांक की चर्चा प्राय: हर किसान करता है जिसकी ओर इस संपादकीय ने इशारा किया है। इस संपादकीय की भाषा स्पष्ट थी कि लोगों की अपेक्षाएं क्या हैं। इसमें किसी तरह की कोई अनिश्चितता नहीं थी जो राजनैतिक बयानों में देखने-सुनने को मिलती है। नदी के इस दुर्लभ गुण की ओर एक इशारा विधायक देवेन्द्र झा ने बिहार विधान सभा में किया था। उनका कहना था, ''...जब मैं प्राक्कलन समिति (सिंचाई विभाग) का सदस्य था तब मैंने सिंचाई विभाग के चीफ इंजीनियर से पूछा था कि बागमती के सिल्ट में और सिन्दरी के फर्टिलाइजर में कौन फसल के लिए ज्यादा बढ़िया खाद साबित होती है, तब उन्होंने जवाब दिया था कि बागमती नदी की सिल्ट का मुकाबला सिन्दरी का फर्टिलाइजर नहीं कर सकता है।''[22]

चीफ इंजीनियर के विचारों की पुष्टि बिहार के जल-संसाधन विभाग की बागमती परियोजना संबंधी प्राक्कलन समिति के 128वें प्रतिवेदन (1988) में भी की गयी है। समिति की रिपोर्ट कहती है, ''...सीतामढ़ी जिला जो बागमती सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण परियोजना आरम्भ किये जाने के पूर्व अन्न के मामले में सरप्लस जिला था, वह इस योजना के शुरू होने के बाद शनै: शनै: डेफिसिट का जिला बन गया। पिछले दो वर्षों से अधिकतम डेफिसिट का जिला बना हुआ है।[23]

कुछ समय बीतने के बाद जून के महीने में बागमती में बाढ़ आ गयी और पूरे बागमती क्षेत्र में फ़सल और सम्पत्ति को काफ़ी नुकसान पहुँचा। लगभग इसी समय राज्य के सिंचाई मंत्री ललितेश्वर प्रसाद शाही ने पटना में 2 जुलाई 1970 को एक संवाददाता सम्मेलन बुला कर घोषणा की कि बागमती बाढ़ नियंत्रण योजना की स्वीकृति मिल गयी है और उन्होंने इस मद में चौथी पंचवर्षीय योजना में राज्य में 6 करोड़ 80 लाख रुपये खर्च करने की बात कही। उन्होंने बागमती और महानन्दा बाढ़ नियंत्रण योजनाओं को शीघ्र प्रारम्भ करने का भी संकेत दिया।[24]

1969 की बाढ़ के बाद से नदी तो अब पिपराही, जाफरपुर, चन्दौली, कन्सार, पचनौर और रक्सिया होते हुए रुन्नी सैदपुर के रास्ते बह रही थी। नदी की धारा में एकाएक आये इस परिवर्तन के कारण बागमती नदी परियोजना पर एक बार फिर से विचार करना पड़ा। बदली परिस्थिति में देवापुर में प्रस्तावित बराज की साइट भी बदलनी पड़ी और अब बराज कहाँ बने, इसके लिए बिहार सरकार ने विशेषज्ञों की एक समिति बनायी जिसने भारत-नेपाल सीमा से 4 कि०मी० दक्षिण में गम्हरिया ग्राम के रमनगरा टोले में नये बराज का स्थान निर्धारित किया। बराज निर्माण के लिए यह स्थान उपयुक्त है या नहीं, इसके लिए एक दूसरी समिति का गठन हुआ जिसमें गंगा फ्लड कंट्रोल कमीशन, सेन्ट्रल वाटर कमीशन तथा राज्य सिंचाई विभाग के वरिष्ठ इंजीनियर शामिल थे। इस समिति ने भी रमनगरा में बराज के निर्माण का अनुमोदन कर दिया। यह 1973 की बात है।

2.6 ताकि काम चलता रहे और योजना भी बनती रहे

बराज के निर्माण स्थल को देवापुर से हटा कर रमनगरा ले जाने का फैसला केवल तकनीकी नहीं था। उसके पीछे और भी कारण थे जिनके ऊपर रोशनी डालते हैं बिहार सरकार के पूर्व मंत्री रघुनाथ झा, जिनका कहना है, ''...मूलत: योजना यह थी कि नुनथर में, जहाँ बागमती पहाड़ों से उतरती है, वहीं उस पर बांध बना दिया जाय। लेकिन इस बांध का मसला दो देशों की रजामन्दी पर निर्भर करता था और यह रजामन्दी जब नहीं हुई तब देवापुर (पूर्वी चम्पारण) के पास एक बराज बनाने की बात उठी। इस साइट के लिए स्थानीय जनता का जबर्दस्त विरोध था क्योंकि उनकी जमीन डूबती और सिंचाई उन्हें मिलती नहीं। उनका कहना था कि अगर बराज बनना ही है तो वह भारत-नेपाल सीमा के पास किसी ऐसी जगह बने जहाँ से देश में (बिहार में) अधिक से अधिक सिंचाई हो सके। इरादा था कि सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर और दरभंगा तक सिंचाई की व्यवस्था हो जाए मगर बराज की साइट अगर नीचे दक्षिण की ओर ले जायी जाती है तो सिंचाई कम ही क्षेत्रों पर होगी। तब तय हुआ कि बराज का निर्माण उत्तर में गम्हरिया गांव के पास किया जाय। इस बराज का शिलान्यास तत्कालीन मुख्यमंत्री चन्द्रशेखर ने 1984 में किया और उस समय तक बाढ़ नियंत्रण पर काम तो पूरा हो चुका था मगर सिंचाई की योजना पिछड़ती गयी। तटबन्ध निर्माण के बाद जब बाढ़ आयी तो पहले उसने ढेंग पुल के ऊपर तटबन्धों पर हमला करना शुरू किया और तटबन्धों को तोड़ने के साथ-साथ रेलवे लाइन को भी तहस-नहस करना शुरू किया। यह नदी कभी हम लोगों के गाँव अम्बा और बेलवा के पास से गुजरती थी, वह धारा भी बदल गयी और बाद में वह पिपराही, बेलसंड होकर बहने लगी। इधर तटबन्ध में बहुत से स्लुइस गेट बने हुए हैं पर वह इस तरह से बने हैं कि उनसे सिंचाई होती नहीं है। सरकार की कभी इच्छाशक्ति ही नहीं थी कि वह इस योजना को पूरा करती या इन स्लुइस गेटों को ठीक करती। स्लुइस गेटों को और नीचा बनाना चाहिये था ताकि उनसे होकर पानी नदी में जाता और जरूरत पड़ने पर नदी के पानी को सिंचाई के लिए भी उपयोग में लाया जाता।''[25]

दरअसल, 1956 में एम० पी० मथरानी ने बागमती योजना का जो स्वरूप प्रस्तुत किया था उसमें समय-समय पर सुधार होते रहे। 1965 में जब योजना को मूर्त्त रूप देने का प्रयास किया गया तो इसे बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई के दो विभिन्न अंशों में विभाजित किया गया। तब बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई के लिए क्रमश: 3.17 करोड़ रुपये तथा 5.78 करोड़ रुपयों की लागत की दो अलग-अगल योजनाएँ सिंचाई विभाग, बिहार सरकार द्वारा बनायी गयीं। बाढ़ नियंत्रण वाली योजना 1969 में जब केन्द्रीय जल तथा विद्युत आयोग द्वारा स्वीकृत हुई तब तक विभिन्न परिवर्तनों तथा लागत मूल्य बढ़ने की वजह से यह 6.54 करोड़ रुपयों की हो गयी। सिंचाई वाली योजना का अनुमोदन तब उसी प्रस्तावित लागत पर कर दिया गया था।

मूल सिंचाई योजना में बागमती तथा लालबकेया नदी के संगम के नीचे देवापुर गाँव के पास एक बराज बनाने का प्रस्ताव था। परन्तु 1969 की बाढ़ में बागमती अपनी पुरानी धारा कोला धार से बहने लगी और तब यह आवश्यक हो गया कि उस योजना को, जिसके लिए स्वीकृति मिल चुकी थी, छोड़ कर नए सिरे से सारी योजना का निर्धारण किया जाय। 1974-75 में बाढ़ नियंत्रण की एक और योजना का प्रारूप तैयार हुआ जिसकी तत्कालीन लागत 26.72 करोड़ रुपये आँकी गयी जिसका 1976 में पुनर्मूल्यांकन करके 36.20 करोड़ रुपये कर दिया गया। बागमती नदी के कोसी के माध्यम से गंगा में पानी निस्सरित करने के कारण बागमती पर कोई भी बाढ़ नियंत्रण की योजना नव-गठित गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग के दायरे में आ जाती थी अत: 1974-75 में गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग को प्रेषित बागमती योजना को उसके द्वारा किये गए संशोधनों से गुजरना पड़ा।

इसी प्रकार सिंचाई योजना में भी परिवर्तन हुए और 1973 में 22.55 करोड़ रुपयों की एक नई योजना बनी और क्योंकि यह प्राक्कलन अपने मूल प्राक्कलन 5.78 करोड़ रुपये से लगभग चार गुना अधिक था, बिहार सरकार ने एक पाँच सदस्यीय विशेषज्ञ समिति बना कर 1973 में ही सिंचाई योजना के प्राक्कलन तथा उसके रूपांकन पर समिति की राय माँगी जिस ने बागमती के धारा-परिवर्तन, नहरों की बढ़ी हुई लम्बाई, बराज के डिज़ाइन में परिवर्तन तथा मूल्य वृद्धि आदि कारणों का वास्ता देकर बढ़े हुए प्राक्कलन का अनुमोदन कर दिया। इसके बाद सिंचाई योजना को लेकर चार वर्षों तक केन्द्रीय जल आयोग तथा बागमती परियोजना से पत्राचार का एक लम्बा सिलसिला चल निकला और 1977 के अन्त में 45.05 करोड़ रुपयों की एक सिंचाई योजना प्रकाश में आयी। आने वाले दो वर्षों में केन्द्रीय जल आयोग, बागमती परियोजना तथा गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने मिल कर यह 'महत्वपूर्ण' निर्णय लिया कि बागमती परियोजना में बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई को अलग-अलग न रख कर एक साथ एक बहूद्देशीय प्रकल्प के रूप में देखा जाय। फलत: फरवरी 1980 में प्राक्कलन का जो स्वरूप था उसके अनुसार सिंचाई योजना में बराज, नहरों तथा जल निकासी पर 75.21 करोड़ रुपये और बाढ़ नियंत्रण के लिए 51.88 करोड़ रुपये की योजना बनी और इस प्रकार कुल खर्च 127.48 करोड़ रुपये आँका गया। इतना होने के बाद रमनगरा वाले बराज स्थल को लेकर फिर विवाद शुरू हुआ और अन्तत: इसका अनुमोदन अपने पुराने स्थल पर ही ढेंग रेल पुल के तीन कि० मी० नीचे तय हुआ। तब तक प्राक्कलन का एक बार फिर मूल्यांकन हुआ और 1981 में

परियोजना में सिंचाई पर, बराज तथा तत्संबंधी कार्यों और नहरों को लेकर 125.21 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान किया गया। बाढ़ नियंत्रण पर इस योजना में 60.48 करोड़ रुपयों का प्रावधान था अर्थात कुल मिला कर 185.69 करोड़ रुपयों की योजना बनी।[26] केन्द्रीय जल आयोग ने इस तथाकथित अंतिम योजना को योजना आयोग की तकनीकी सलाहकार समिति के पास स्वीकृति के लिए भेजा जिस पर तीन शर्तें लगा कर इस समिति ने मार्च 1982 में अनुमोदन कर दिया। यह शर्तें थीं–

1. बराज स्थल पर निर्भर योग्य नदी में उपलब्ध पानी के तीन चौथाई के 60 प्रतिशत अंश को ही नहर प्रणाली हेतु उपलब्ध मानते हुए सिंचाई योजना संशोधित हो।
2. सिंचन हेतु पानी की आवश्यकता की तुलना में नदी में उपलब्ध पानी की जो कमी है उसे पूरा करने के लिए नलकूपों का जो प्रावधान है उनकी संख्या तथा उनके हेतु भूमिगत जल की उपलब्धि के विषय में केन्द्रीय ग्राउण्ड वाटर कमीशन से विचारोपरान्त निर्णय लिया जाय।
3. भूमिगत जलस्तर अगर अवांछनीय रूप से ऊँचा है तो उक्त समस्या के समाधान हेतु कार्यों की रूपरेखा केन्द्रीय भूमिगत जल परिषद की सहमति से तैयार की जाय।

इस प्रकार बागमती परियोजना में अब सिंचाई, जल-निकासी और बाढ़ नियंत्रण की सभी योजनाएं शामिल हो गयीं। इस योजना का जो नक्शा उपलब्ध करवाया गया था वह चित्र-1.3, अध्याय-1 में दिखाया गया है। इस योजना के अनुसार निम्न काम किये जाने थे–[27]

(क) सिंचाई प्रक्षेत्र–इसमें जल-निकासी योजनाएं भी शामिल हैं।

1. 1960 फीट लम्बाई वाले बराज के निर्माण के साथ एक 2,67,529 क्यूसेक प्रवाह क्षमता वाले, स्पिल-वे का निर्माण।
2. बराज के प्रति प्रवाह में बायीं तरफ 2250 क्यूसेक और दाहिनी तरफ 1450 क्यूसेक क्षमता वाले हेड-वर्क्स का निर्माण,
3. नदी के दोनों तरफ निम्नांकित बांध

बराज के उत्तर तरफ	बायां बांध	24 कि०मी०
	दायाँ बांध	7.2 कि०मी०
बराज के दक्षिण तरफ	बायां बांध	26.4 कि०मी०
	दायाँ बांध	32.0 कि०मी०

4. मुख्य नहर एवं शाखा नहर प्रणाली 162.42 कि०मी०
5. 1.75 क्यूसेक क्षमता वाले 454 नल कूपों का निर्माण
6. 311 कि०मी० लम्बी ट्रंक चैनेल द्वारा क्षेत्र की जल-निकासी की व्यवस्था का निर्माण

(ख) बाढ़ नियंत्रण प्रक्षेत्र

1. बायां तटबन्ध 79.30 कि०मी०
2. दायाँ तटबन्ध 77.60 कि०मी०
3. दोआब तटबन्ध (बैरगनियाँ) 21 कि०मी०
4. मीनापुर से बागमती नदी की पुरानी धार तक लिंक चैनेल की खुदाई का काम 5.50 कि०मी०
5. सुरमार घाट एवं एक्ज़िट के बीच समस्तीपुर-दरभंगा मार्ग से नियंत्रण एवं आवश्यक द्वार का निर्माण
6. दुधवा धार एवं मसौदा नाला को बन्द करने का कार्य
7. सिरसिया रिंग बांध का निर्माण
8. बेलवा के मुहाने पर 50,000 क्यूसेक क्षमता वाले रेगुलेटर का निर्माण
9. मनुवातार नहर पर 1500 क्यूसेक क्षमता वाले एक निरोधक फाटक का निर्माण
10. कनौजर घाट में 9500 क्यूसेक क्षमता वाले बाढ़ निरोधक फाटक का निर्माण
11. बेलवा चैनेल की ओर मार्जिनल तटबन्ध का निर्माण कार्य
12. लखनदेई नदी के दोनों तरफ 24 मील लम्बे मार्जिनल बांध का निर्माण कार्य
13. बेलवा धार की बायीं ओर 36 कि०मी० लंबे तटबन्ध का निर्माण कार्य
14. बेलवा धार की दायीं ओर 52 कि०मी० लंबे तटबन्ध का निर्माण। इन सारे कार्यों का आर्थिक पक्ष नीचे दिया जा रहा है।

इकाई-1 बराज तथा सम्बन्धित काम	49.7608 करोड़ रुपये
इकाई-2 नहर	75.4545 करोड़ रुपये
इकाई-3 बराज एवं बाढ़ सम्बन्धी काम	60.4804 करोड़ रुपये
कुल योग	185.6957 करोड़ रुपये
अथवा	**185.70 करोड़ रुपये**

यदि इस योजना को पूरा कर लिया जाता तो इससे 1,21,000 हेक्टेयर जमीन पर सिंचाई तथा 2,900 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर बाढ़ से सुरक्षा देने का अनुमान किया गया था।

2.7 काम पहले योजना का अनुमोदन बाद में : बागमती नदी से सिंचाई के नाम पर भद्दा मज़ाक

आश्चर्य यह था कि योजना तो स्वीकृत हुई मार्च 1982 में मगर तटबन्ध निर्माण यानी बाढ़ नियंत्रण का काम इससे पूर्व पूरा हो चुका था 1979 में। सिंचाई के क्षेत्र में जरूर कोई काम न तब तक हुआ था और न अब तक हुआ है। केन्द्रीय जल आयोग द्वारा योजना को स्वीकृति मिलते-मिलते मई 1985 बीत गया जिसकी प्रशासनिक स्वीकृति बिहार सरकार के सिंचाई विभाग द्वारा 11 जुलाई 1984 को दी गई थी।

स्वीकृतियाँ अपनी जगह मगर योजना का काम चालू ही नहीं बल्कि, वह खत्म भी हो चुका था। बिहार सरकार द्वारा नियुक्त लोक लेखा समिति (संख्या 366/2002) कहती है, ''...सरकार द्वारा कार्यालय भवन और कर्मचारियों के क्वार्टरों के निर्माण के लिए 37.79 लाख रुपये की प्रशासनिक स्वीकृति सितम्बर 1982 में प्रदान की गयी। कार्यपालक

बागमती परियोजना के गम्हरिया केन्द्र पर मशीनों का कबाड़खाना

अभियंता, बागमती मुख्य कार्य प्रमण्डल-2 (सीतामढ़ी) द्वारा सितम्बर 1982 में 5 ठेकेदारों के बीच यह कार्य अप्रैल 1983 तक पूरा करने के लिए आवंटित कर दिया गया जबकि कार्यालय भवन और क्वार्टरों के निर्माण कार्य प्रगति में ही थे तब समूचा बैराज अंचल और उसके अन्तर्गत कार्यरत दो प्रमण्डलों को कार्यालय और कर्मचारियों सहित स्वर्णरेखा बहूद्देशीय सिंचाई परियोजना, गालूडीह (सिंहभूम) को स्थानान्तरित कर दिया गया। मई 1983 में निर्माण कार्य रोक दिया गया। तब 15 क्वार्टर निर्मित हो चुके थे और निर्माण कार्य पर 20.12 लाख रुपये व्यय हो चुके थे। निर्मित क्वार्टरों के रख-रखाव की कोई व्यवस्था नहीं थी और यह भी पता नहीं था कि वह अधिकृत कब्जे में थे या कब्जे से मुक्त।'' रिपोर्ट आगे कहती है, ''...बागमती बराज निर्माण हेतु निविदा आमंत्रित की गयी परन्तु नेपाल सरकार द्वारा प्रस्तावित बराज स्थल से कुछ किलोमीटर ऊपर में बराज निर्माण के कारण इसकी उपादेयता पर प्रश्न चिह्न लग गया। फलतः वर्ष 1990 में निर्माण बन्द कर देना पड़ा और सृजित कार्यालयों को साज-सज्जा सहित अन्यत्र स्थानान्तरित कर दिया गया।''[28] मगर इस पूरी कहानी का क्लाइमेक्स अभी बाकी था और इसको इस मुकाम तक लाने का काम किया बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री चन्द्रशेखर सिंह ने जब उन्होंने 24 मार्च 1984 को गम्हरिया में प्रस्तावित बागमती बराज का विधिवत शिलान्यास किया। इस अवसर पर बिहार के तत्कालीन सिंचाई मंत्री कृष्णा नन्द झा और रामदुलारी सिन्हा, पूर्व केन्द्रीय मंत्री, मौजूद थीं।[29] इस मौके पर लगाया शिलान्यास पट्ट कुछ वर्षों पहले तक गम्हरिया के पास बागमती के पूर्वी तटबन्ध पर मौजूद था मगर अब वहाँ नहीं है। बराज निर्माण में नियुक्त इंजीनियरों का तबादला पूरी 'साज-सज्जा सहित' मई 1983 में ही कर दिया गया था और बागमती परियोजना के मेले को पीछे छूटे हुए साल भर से ज्यादा का समय बीत चुका था। चन्द्रशेखर सिंह ने इस बराज का शिलान्यास किया था या उसके समाधि स्थल पर स्मरण पट्टिका लगायी थी–यह सवाल उनसे किसी ने पूछा हो यह सुनने में नहीं आया।

यह योजना थी या मखौल यह कह पाना तो मुश्किल है मगर इसे उपहास का पात्र बनाने में बिहार के सिंचाई विभाग, गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग, केन्द्रीय जल आयोग और संभवतः इस योजना के निर्माण के लिए संसाधन की व्यवस्था करने वाले वित्त मंत्रालय ने लापरवाही दिखाने में कभी कोई कमी नहीं की। बागमती घाटी में सिंचाई की व्यवस्था आज वहीं है जहाँ 1953 में थी जब ठाकुर गिरिजा नन्दन सिंह ने बागमती नदी को व्यवस्थित करने की बात कही थी। अगर यहाँ कुछ उपजता है तो वह किसानों के अपने पुरुषार्थ से। फर्क बस इतना ही आया है कि सिंचाई के पारम्परिक स्रोत समाप्त हो गए। अब बीज, पानी, कीट नाशक, खलिहान, दंवरी, ओसौनी सब के लिए पैसा खर्च करना पड़ता है। अतः खेती घाटे का सौदा बन कर रसातल को चली गयी तथा किसान मजदूर बन कर दिल्ली, पंजाब, हरयाणा, महाराष्ट्र, गुजरात और कर्नाटक या तमिलनाडु चला गया।

जहाँ तक अधवारा समूह की नदियों से सिंचाई का प्रश्न है, उसमें सरकार की तरफ से कोई प्रयास नहीं किया गया है। वहाँ जो भी बात चलती है वह बाढ़ नियंत्रण पर होती है और जनता यह मांग करती है कि उन नदियों पर तटबन्ध बना कर उनमें स्लुइस गेट लगा दिया जाए ताकि वहाँ सिंचाई हो सके। यह एक बहुत ही दिलचस्प अध्ययन होगा कि अब तक इन नदियों के किनारे कितने स्लुइस गेट बने हैं और उनमें से कितने काम करते हैं। जहाँ यह बने हैं, वहाँ लोग परेशान हैं और जहाँ नहीं बने हैं, वहाँ लोग मांग करते हैं।

बागमती परियोजना का एक तथ्यपरक मूल्यांकन करते हैं विधायक ललितेश्वर झा जिनका कहना है, ''...हमारा जिला अधवारा रिवर्स और बागमती के प्रकोप से अस्त व्यस्त हो गया है। उस जिले को विपन्न बना

बागमती परियोजना का सुप्पी कार्यालय तथा कॉलोनी

दिया है, इन दोनों बागमती और अधवारा ग्रुप की नदियों ने। हाल ही में हमारे जिला के बीस-सूत्री प्रभारी मंत्री बाबू राजेन्द्र प्रसाद सिंह, जो गए थे दौरा करने उस इलाके का, जहाँ कि बागमती का इलाका है। मैं भी उनके साथ था। त्राहिमाम कहते हुए वहाँ के लोगों ने कहा कि आप इस योजना को वापस ले जाइये। अध्यक्ष जी, कई करोड़ रुपये खर्च हुए उस योजना में और एक व्यक्ति विशेष के कुछ खास लोगों को उपकृत करने के लिये उस योजना की स्वीकृति प्रदान की गयी और उस योजना की कोई उपलब्धि नहीं है। उपलब्धि अगर है तो उस योजना ने कुछ गुंडों को जरूर तैयार किया है। सारे नौजवान लोगों को ये ठीकेदारी दिलवा कर वहाँ गुंडा साम्राज्य स्थापित किया गया और कई लाख का यंत्र वहाँ पर सड़ रहा है उस पर पीपल के पेड़ जम गए हैं।''

जहाँ तक बागमती परियोजना से सिंचाई का संबंध है, इसके बाद कुछ कहने को नहीं बचता क्योंकि पूर्व की स्थिति अभी तक बरकरार है।

सन्दर्भ :

1. राय, राम दरेस से व्यक्तिगत संपर्क
2. साह, राम गुलाम; बेनीपट्टी, जिला मधुबनी–दिनेश कुमार मिश्र द्वारा लिखित पुस्तक 'बग़ावत पर मजबूर मिथिला की कमला नदी', पृष्ठ 25 से उद्धृत। प्रकाशक-बाढ़ मुक्ति अभियान तथा घोघरडीहा प्रखंड स्वराज्य विकास संघ, पो० जगतपुर, जिला मधुबनी (2006)
3. बिहार विधान सभा वादवृत्त, 14 नवम्बर 1957, पृष्ठ 16-17
4. Stevenson Moore, C. J.; Final Report on the Survey and Settlement Operations in the Muzaffarpur District 1892-99, Calcutta, Bengal Secretariat Press, 1901, p. 259.
5. Matharani, M. P.; Report on Flood Problem and Irrigation in North Bihar, Govt. of Bihar, Secretariat Press, Patna 1956, pp. 137-141.
6. Report of the First Irrigation Commission of India (1903) pp. 165-166.
7. Stevension Moore, op. cit., p. 256.
8. ibid, Quotes Nand Kishore Lal, p. 257
9. ibid, Quotes Bhab Taran Chatterji, p. 257
10. ibid, Quotes Babu Makhan Lal Chatterji, p. 257
11. Stevenson Moore, op. cit., p. 258
12. ibid, Quotes Babu Charu Chandra Kunwar, p. 259
13. ibid
14. सिंह, ठाकुर गिरिजा नन्दन; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 28 सितम्बर 1953, पृष्ठ 1-6
15. Matharani, M. P.; op. cit., p. 141
16. सिंह, ठाकुर गिरिजा नन्दन; आर्यावर्त, पटना, 3 मार्च 1961, पृष्ठ 3, 'बागमती योजना की आवश्यकता'
17. The Indian Nation-Patna, 14th November 1963, p. 1 'Include Bagmati Scheme in the 4th Plan-CM'
18. ibid
19. सिंह, महेश प्रसाद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 10 मार्च 1965, पृष्ठ 9, 'बहुधंधी नदी योजना सहित सिंचाई'
20. सिंह, त्रिपुरारी प्रसाद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 7 जून 1968, पृष्ठ 47
21. आर्यावर्त-पटना, 16 मार्च 1970, पृष्ठ 3
22. झा, देवेन्द्र; विधान सभा वादवृत्त, 22 फरवरी 1963, पृष्ठ-2
23. बिहार विधान सभा की प्राक्कलन समिति 1987-88 का 128वाँ प्रतिवेदन, जल-संसाधन विभाग (बागमती परियोजना)-जुलाई 1988 में सदन में प्रस्तुत। बिहार विधान सभा सचिवालय (प्राक्कलन समिति शाखा), पटना, पृष्ठ-4
24. आर्यावर्त-पटना, 4 जुलाई 1970, पृष्ठ 1
25. रघुनाथ झा से व्यक्तिगत संपर्क
26. बिहार सरकार, बागमती परियोजना, प्रतिवेदन, अगस्त 1981
27. बिहार सरकार, बागमती परियोजना, प्रतिवेदन, अगस्त 1981, पृष्ठ 6-9
28. बिहार विधान सभा, लोक लेखा समिति का प्रतिवेदन, सं० 366, लोक लेखा समिति प्रकाशन संख्या 375, उपस्थापन की तिथि 2-4-2002, पृष्ठ 26
29. बागमती परियोजना-24 मार्च 1984 को बागमती परियोजना के शिलान्यास उत्सव पर प्रकाशित स्मारिका।
30. झा, ललितेश्वर; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 19 जुलाई 1988, पृष्ठ 83-84

3

बागमती घाटी की बाढ़ समस्या

3.1 बागमती और बाढ़

बागमती और उसके मैदानी इलाकों का बाढ़ के साथ चोली-दामन का रिश्ता रहा है और यह अभी तक टूटा नहीं है। बिहार की नदियों में बाढ़ की खबरें बागमती से ही शुरू होती हैं और कभी-कभी तो ऐन गरमी के समय मई के महीने में ही नदी में बाढ़ आ जाती है। धारा का बदलना, किनारों का कटाव, कगारों को तोड़ते हुए नदी के पानी का बड़े इलाके पर फैल जाना और इन सारी घटनाओं की एक ही वर्ष में सहज पुनरावृत्ति नदी का स्वाभाविक गुण रहा है जिससे एक ओर तबाहियों की दास्तान लिखी जाती रही तो दूसरी ओर नदी के पानी की उर्वरक क्षमता पर गर्व भी किया जाता रहा। इस खंड में हम नदी की उन बाढ़ों की जानकारी लेंगे जब नदी अपनी मर्जी से बहने के लिए आजाद थी, जब उसके उन्मुक्त स्वरूप से छेड़-छाड़ का दौर चला और जब नदी पूरी तरह शिकारियों के चंगुल में फंस गयी।

उत्तर बिहार की अधिकांश नदियों का जल-ग्रहण क्षेत्र हिमालय में लगभग 250 किलोमीटर उत्तर तक फैला हुआ है। ऐसे में अगर नदी के ऊपरी जलग्रहण क्षेत्र में भारी बारिश हो जाए तो नेपाल के तराई वाले हिस्से और उसके नीचे भारतीय भाग में नदी का पानी किनारे तोड़ कर एक बड़े क्षेत्र पर फैल जाता है। ऐसा होने पर जान-माल, सम्पत्ति और कृषि को स्वाभाविक रूप से नुकसान पहुँचता है। यह पानी जब नीचे की ओर का रुख करता है तो उसमें दूसरे नदी-नाले और वर्षा का पानी मिलने से स्थिति कभी-कभी बेकाबू तक हो जाती है क्योंकि यह सारे नदी-नाले पानी की निकासी की कोशिश में अपने सुविधाजनक रास्ते से प्राय: एक ही दिशा में चल पड़ते हैं। नदियों की पेटी और आस-पास के क्षेत्रों में गाद के जमाव से अगली बारिश में पानी के प्रवाह में रुकावटें आती हैं और तब इन रुकावटों से बचता हुआ या उनको हटाता हुआ पानी अपनी मर्जी की राह चुनता है और नदियों की धारा में परिवर्तन तक हो जाता है। गाँवों, शहरों और व्यापारिक प्रतिष्ठानों की सुरक्षा के लिए बनाये गए रिंग बांध और तटबन्ध न केवल इस पानी को अनचाही दिशा में फैला कर निचले इलाकों में बाढ़ की स्थिति को गंभीर बनाते हैं वरन् वह अक्सर टूट कर अपने द्वारा बाढ़ से सुरक्षित क्षेत्रों की बदहाली का सामान भी बनते हैं। पानी की निकासी की समुचित व्यवस्था किये बगैर बनाई गयी नहरें, सड़कें तथा रेल लाइनें भी बाढ़ की स्थिति को बदतर बनाने में मदद करती हैं। इस तरह की संरचनाएं बाढ़ का पानी उतरने के बाद भी पानी की निकासी में बाधा पहुँचाती हैं और बाढ़ को स्थायित्व प्रदान करती हैं। बागमती घाटी के भारतीय भाग के सीतामढ़ी, शिवहर, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, समस्तीपुर और खगड़िया जिलों में स्थानीय टोपोग्राफी और बाढ़ सुरक्षा तथा परिवहन व्यवस्था को पटरी पर रखने के लिए किये गए प्रयासों ने घाटी में नदी की बाढ़ को दिनों-दिन गंभीर बनाने और उसे स्थायित्व प्रदान करने में ही हमेशा मदद की है।

बाढ़ के पानी से सिर्फ नुकसान ही होता है ऐसा सोचना भी शायद गलत है। बाढ़ के एक बड़े इलाके पर फैलने के कारण ज़मीन पर नई मिट्टी पड़ती है जिससे उसकी उर्वराशक्ति बढ़ती है और भूमिगत जल की सतह अपनी जगह बनी रहती है। ऐसी जमीन पर आने वाले कृषि मौसम में बीज डालने से बिना मेहनत के अच्छी पैदावार हो जाती है। बाढ़ों से परेशानी तो जरूर होती है और वह इसलिए होती है कि मनुष्यों ने नदी के उन हिस्सों पर कब्ज़ा जमाया है जो पारम्परिक रूप से उसका क्रीड़ा क्षेत्र होता है मगर जमीन की उर्वराशक्ति बढ़ना, रबी के मौसम तक मिट्टी में नमी का बने रहना और कुँओं, तालाबों और हैन्ड पम्पों में पानी की सुलभ उपलब्धता बने रहना भी इस जबर-दखल में कम महत्वपूर्ण नहीं होता। सीतामढ़ी-मुजफ्फरपुर जिले के जिस हिस्से से होकर बागमती नदी गुजरती है वह उसकी बाढ़ के पानी में आयी हुई गाद के कारण बहुत ही उपजाऊ जमीन का क्षेत्र है। कहा तो यहाँ तक जाता है कि बागमती के मैदानी क्षेत्र जैसा उर्वर इलाका दुनियाँ में दूसरा कहीं नहीं है। जहाँ भी बाढ़ के मौसम में बागमती नदी का पानी किसी कारणवश जाना बन्द हुआ वहाँ की जमीन की उर्वराशक्ति धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है। यह पूरा इलाका बाढ़ के अभाव में रेगिस्तान की शक्ल अख्तियार कर लेता है।

यहाँ हम बागमती की बाढ़ की कुछ घटनाओं को ऐतिहासिक सन्दर्भ में देखने का प्रयास करेंगे। अंग्रेजों द्वारा इन बाढ़ों के जबसे रिकार्ड रखे जाने लगे तब से उन्हें देखने से पता लगता है कि अट्ठारहवीं शताब्दी में 1785, 1787, 1788, 1793 में बागमती नदी में भीषण बाढ़ें आईं। उन्नीसवीं शताब्दी में 1806, 1867, 1871, 1883, 1893, 1896 तथा 1898 में बाढ़ की स्थिति खराब रही। 1806 और 1867 के बीच के वर्षों के रिकार्ड उपलब्ध नहीं है पर इसका यह मतलब नहीं होता कि इस दौरान घाटी में बाढ़ नहीं रही होगी। बीसवीं शताब्दी में 1902, 1906, 1910, 1916 से लेकर 1919 तक हर साल बाढ़ों का हवाला मिलता है। 1928, 1936, 1944, 1950, 1952, 1953, 1954, 1955 में भी घाटी में अच्छी खासी बाढ़ों के संकेत मिलते हैं।[1] मुजफ्फरपुर डिस्ट्रिक्ट गज़ैटियर (1958) के अनुसार सीतामढ़ी में 31 जुलाई 1905 को एक दिन में 11.65 इंच तथा 30 सितम्बर 1905 को 10.65 इंच बारिश हुई थी। 18 सितम्बर 1924 के दिन शिवहर में 12.50 इंच और बेलसंड में इसी दिन 15.30 इंच बारिश का हवाला मिलता है। इसी तरह 18 सितम्बर 1935 के दिन सीतामढ़ी में 12.63 इंच, 28 जून 1938 के दिन शिवहर में 15.57 इंच तथा बेलसंड में इसी दिन 10.40 इंच बारिश की बात कही जाती है। बैरगनियाँ में भी 16 अगस्त 1950 के दिन 10.50 इंच बारिश रिकार्ड की गयी थी। दुर्भाग्यवश, इन बारिशों के बाद आयी बाढ़ के विवरण उपलब्ध नहीं हैं।[2] 1934 के बिहार भूकम्प के बाद, जिसका सबसे ज्यादा प्रभाव मुजफ्फरपुर जिले में था, बागमती घाटी की टोपोग्राफी पर बहुत बुरा असर पड़ा और यहाँ की जल-निकासी की व्यवस्था पूरी तरह छिन्न-भिन्न हो गयी थी। उस समय नदी से छोटे-बड़े नालों की शक्ल में कितनी ही धाराएं फूट कर निकल पड़ी थीं और न जाने कितने नदी-नालों के मुहाने बन्द हो गए। यहाँ हम बागमती में आयी कुछ बाढ़ों के बारे में जानकारी लेंगे।

3.2.1 बागमती की बाढ़ (1893 और 1898)–इस वर्ष मुजफ्फरपुर जिले में जुलाई, अगस्त और सितम्बर के महीनों में भारी बारिश की वजह से कुल मिला कर तीन बार बाढ़ आयी। पहली बाढ़ से खेती को तो कोई नुकसान नहीं पहुँचा मगर जब अगस्त और सितम्बर महीने में दूसरी और तीसरी बार बाढ़ आयी तब जमीन पहले से ही नम थी और चारों ओर जल-जमाव भी कम नहीं था। इन बाढ़ों से फसल, घरों और सड़कों को बेतरह नुकसान पहुँचा। समस्तीपुर-सीतामढ़ी रेल लाइन को भी भारी क्षति उठानी पड़ी। उफनती हुई बागमती और छोटी (बूढ़ी) गंडक नदियों के किनारे तोड़ कर बहने के कारण तिरहुत स्टेट रेलवे लाइन के उत्तरी भाग में भारी तबाही हुई थी और लगभग 800 से 900 वर्ग मील (2050 से 2300 वर्ग किलोमीटर) क्षेत्र पर पानी की चादर बिछ गयी। हजारों की तादाद में मिट्टी से बने घर धराशायी हो गए और ऐसा अनुमान किया गया कि बाढ़ क्षेत्र में फँसे 1,412 गाँवों में से 1,144 गाँवों की भदई की फसल या तो पूरी तरह धुल गयी या आधे से ज्यादा बरबाद हो गयी और 995 गाँवों में धान की खेती के साथ भी ऐसा ही हुआ। करीब 12,000 घर इस बाढ़ में तबाह हो गए थे।[3]

उधर दरभंगा में 1893 में जुलाई, अगस्त और सितम्बर के महीने में अलग-अलग बाढ़ आयी। एक ओर बागमती और बूढ़ी गण्डक के पानी की मुजफ्फरपुर, बरौनी, कटिहार वाली रेल लाइन से निकासी नहीं हो पा रही थी, ऊपर से कमला का पानी बार-बार दरभंगा शहर पर हमला करता था। इसकी वजह से जिले के उत्तर-पश्चिम भाग से लेकर दक्षिण-पूर्व तक लगभग एक मीटर गहरा पानी गुजरा जिसकी वजह से फसलों, घरों, सड़कों और रेल लाइनों को बहुत नुकसान पहुँचा। जिले का तकरीबन आधा हिस्सा टापू जैसा बन गया और लोगों ने ऊँची सड़कों पर, रेलवे लाइनों पर तथा गाँवों में डीहों पर शरण ली। ''...सौभाग्यवश पानी धीरे-धीरे चढ़ा और जहाँ तक सूचना मिल पायी कोई मरा नहीं और लोगों को अपने अन्न के संचित भण्डार को हटाने का मौका मिल गया तथा उन्होंने अपने जानवरों को भी सुरक्षित बचा लिया। लोग जिस तरह नुकसानों से पस्त होने के बावजूद सम्भल गए वह आश्चर्यजनक रहा।''[4] इसी तरह 1898 की बाढ़ भी कमला, दरभंगा-बागमती, करेह और बूढ़ी गण्डक की वजह से आयी। बेनीपट्टी, दरभंगा, लहेरियासराय, दलसिंहसराय तथा वारिसनगर थानों पर बाढ़ का बुरा असर पड़ा था। बरैला चौर का पानी फैल जाने से दलसिंहसराय में बाढ़ की स्थिति पैदा हुई। इस बाढ़ में जानवर तो नहीं मरे पर 164 लोगों की जल-समाधि हुई और करीब 88,000 घर गिरे। दूसरी तरफ नई मिट्टी पड़ने से उस साल रबी की जबर्दस्त फसल हुई। किसी को अगर काम की जरूरत पड़ी तो वह कटिहार जाने वाली रेल लाइन की मरम्मत में लग गया और सरकारी ऋण के लिये एक भी अर्ज़ी नहीं दी गई। चीज़ों के दाम नहीं बढ़े और कलक्टर का कहना था कि यदि पूरे जिले को देख कर बात की जाए तो बाढ़ से फायदा ही हुआ।''[5]

3.2.2 बागमती की 1902 तथा 1906 की बाढ़–अगस्त 1902 में भी मुजफ्फरपुर के सीतामढ़ी सब-डिवीजन में 1893 की घटना एक बार फिर दुहराई गयी जब बागमती, पुरानीधार-बागमती, लखनदेई और अधवारा में एक साथ भीषण बाढ़ आयी। बाढ़ के पानी की एक बहुत बड़ी मात्रा सीतामढ़ी सब-डिवीजन की रेल लाइन के उत्तर से बहती हुई पुरानी धार के उफनते पानी से जा मिली। इस रेल लाइन में पानी की निकासी का जो भी रास्ता उपलब्ध था वह जरूरत से बहुत कम था। नतीजा यह हुआ कि बाढ़ के पानी ने पहले तो रीगा स्टेशन तक पहुँच कर तबाही मचायी और फिर लखनदेई में घुस कर सीतामढ़ी शहर में फैल गया। जिले के इस हिस्से में रेलवे बांध के उत्तर में तो तबाही हुई ही मगर जब पानी रेल लाइन के ऊपर से बह निकला और उसने बहुत से रेल पुलों को ध्वंस कर दिया तब वही तबाही दक्षिण दिशा में भी फैल गयी। जिस तरह की बाढ़ इस साल देखने में आयी थी उसके हिसाब से मरने वालों की तादाद काफी ज्यादा होनी चाहिये थी मगर यह 60 तक ही सीमित रही। लगभग 800 जानवर इस बाढ़ में बह/मारे गए और कोई 14,000 घर या तो बह गए या पूरी तरह से ध्वस्त हो गए। सीतामढ़ी शहर में तो इस साल सबसे ज्यादा बरबादी हुई।[6]

बागमती, अधवारा समूह तथा बूढ़ी गंडक में 1902 में आयी इस बाढ़ ने काफी तबाही मचायी पर इन नदियों के निचले क्षेत्र में तत्कालीन दरभंगा जिले की 1906 वाली बाढ़ एक इतिहास रच गयी। आम तौर पर मान्यता यह रहती है कि बाढ़ के बाद अकाल नहीं पड़ता पर 1906 की बाढ़ ने बहुत से पुलों, सड़कों और बाँधों के साथ-साथ इस मान्यता को भी ध्वस्त कर दिया। इस साल पहली बार जुलाई में बाढ़ आयी फिर उसके बाद 6 अगस्त से जो पानी बरसना शुरू हुआ वह सिलसिला 24 अगस्त तक चलता रहा। जिले के अधिकांश भाग में पानी फैल गया जिससे यह जगहें कोई 16 दिन तक पानी में डूबी रहीं। लहेरियासराय में कचहरी वाला हिस्सा तथा दरभंगा में बड़ा बाजार वाला हिस्सा छोड़ कर लगभग पूरे इलाके में पानी ही पानी था। शहर में तो पानी एकाएक ऐसी तेजी से घुसा था कि लोगों को संभलने का मौका ही नहीं मिला और हजारों लोग देखते-देखते बेघर हो गए और उन्हें कचहरी के पास शरण लेनी पड़ी थी। एक हफ्ते के बाद शहर से पानी घटना शुरू हुआ पर गाँव के इलाकों से पानी निकलने में तो प्राय: दो महीने का समय लग गया था। फसल की काफी बरबादी हुई और क्योंकि वर्ष 1905-06 में भी फसल ठीक नहीं हुई थी तो इस बाढ़ ने और फिर महँगाई ने लोगों की कमर ही तोड़ दी। रोसड़ा और बेहरा में तो अकाल की घोषणा करनी पड़ गयी थी और अक्टूबर, नवम्बर तथा दिसम्बर महीनों में क्रमश: 45,000, 19,000 और 15,800 लोगों को मुफ्त राशन बांटना पड़ा था। अगर स्थानीय अफसरों और निलहे गोरों ने मुफ्त भोजन न बांटा होता तो इस बार करीब-करीब भुखमरी की स्थिति पैदा हो गयी होती। बाढ़ के बावजूद इस बार टेस्ट रिलीफ का काम खोलना पड़ा जिसमें एक समय तो पूरे जिले में 32,000 से ऊपर लोगों ने काम किया था। अब तक आयी इस सबसे बड़ी बाढ़ में दरभंगा अनुमण्डल में 2,714 वर्ग किलोमीटर, मधुबनी अनुमण्डल में 1,510 वर्ग किलोमीटर और समस्तीपुर में 1,075 वर्ग किलोमीटर (कुल 5,299 वर्ग किलोमीटर) क्षेत्र पर बाढ़ का आतंक अनुभव किया गया।[7]

3.2.3 बागमती की 1953 की बाढ़–देश की आज़ादी के बाद बागमती घाटी में बाढ़ की यह पहली बड़ी घटना थी। बागमती से समय-समय पर फूट कर निकलने वाली बहुत सी धाराएं उसके पानी को विभिन्न क्षेत्रों में फैलाने में बड़ी मददगार होती हैं। 1953 में बागमती का बहुत सा पानी सुगिया-परदेसिया धार से निकला और उसने पूर्वी

चम्पारण के एक बड़े इलाके को तबाह किया। बकुआ नाले से मिल कर इस पानी ने आगे चल कर मीनापुर थाने के क्षेत्र को अपनी चपेट में ले लिया। बागमती और बूढ़ी गंडक के दोआब में लगी खरीफ की खड़ी फसल पूरी तरह बरबाद हो गयी और बड़े पैमाने पर घरों का नुकसान हुआ। धीरे-धीरे यह सारा पानी बूढ़ी गंडक नदी में घुसा जिसकी वजह से इस क्षेत्र में पानी की एक मोटी चादर बिछ गयी। मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी सड़क के दोनों तरफ पानी ही पानी था। मुजफ्फरपुर-जन्दाहा मार्ग के पूरब भरथुआ चौर में अप्रत्याशित रूप से पानी की आमद बढ़ गयी और चौर के इस पानी से कटरा तक का इलाका प्रभावित हुआ था। बागमती की बाढ़ का पानी शिवहर-सिसउला, सिसउला-मेजरगंज, सीतामढ़ी-मधुबनी और शिवहर-बेलसंड सड़कों के ऊपर से बह निकला था।

बागमती के अलावा इस साल लखनदेई में भी जुलाई महीने में काफी पानी आया और उसने अपने बाएं किनारे पर बने जमीन्दारी और प्राइवेट तटबन्धों को कई जगह तोड़ा। सीतामढ़ी से नेपाल सीमा के बीच में भी लखनदेई इस बार कई जगहों पर इन तटबन्धों से ऊपर होकर निकल गयी। इस नदी के पूरब वाली जमीन वैसे भी नीची है जिसकी वजह से लखनदेई के पानी को अधवारा समूह की नदियों तक पहुँचने में देर नहीं लगती। स्वाभाविक तौर पर यह नदी बाढ़ के पानी की निकासी और सिंचाई का बहुत अच्छा माध्यम रही है मगर 1934 के बिहार भूकम्प ने इसकी तलहटी को पूरा ऊबड़-खाबड़ बना दिया जिसकी वजह से न सिर्फ पानी की निकासी बाधित हुई वरन् ठहरे पानी के कारण मलेरिया ने भी सिर उठाना शुरू कर दिया। इस परिस्थिति से निपटने के लिए नदी की तलहटी की सफाई करनी पड़ गयी थी।

उधर अधवारा समूह की अधवारा, जमुरा, शिकाओ और बुढ़नद नदियों में एक साथ बाढ़ आयी क्योंकि उनके जलग्रहण क्षेत्रों में भी अच्छी खासी बारिश हुई थी। जितना पानी इलाके में आया उसे बिना नुकसान पहुँचाये बहा ले जाने की क्षमता इन नदियों में नहीं थी। नतीजा यह हुआ कि सीतामढ़ी-पुपरी, पुपरी-रुन्नीसैदपुर और पुपरी-दरभंगा सड़कों के ऊपर से पानी गुजर गया और सड़कें कई जगहों पर नष्ट हो गयीं। इस साल की बाढ़ ने यह तय कर दिया था कि अगर अधवारा को नदी स्वरूप में बनाये रखना है तो उसकी खुदाई करनी ही पड़ेगी और यह काम बाद में किया भी गया। भूकम्प के कारण अधवारा की धारा में आये परिवर्तन की वजह से बाजपट्टी के पास जमुरा और शिकाओ नदियों में पहले से अधिक बाढ़ आनी शुरू हो गयी जबकि उसकी पुरानी धारा वाले हिस्से में सिंचाई तक के लाले पड़ गए। बाजपट्टी से पुपरी जाने वाली रेल लाइन के बांध ने भी सारा पानी उत्तर में ही रोक लिया और कई जगहों पर बाढ़ का पानी रेल लाइन को छूने लगा तो बहुत सी जगहों पर उसके ऊपर से भी बह निकला। इस बात को इस बार सभी ने बड़ी शिद्दत से महसूस किया कि अगर इस रेल लाइन में कुछ पुल/कलवर्ट अधिक रहे होते तो रेल लाइन के उत्तर में शायद इतनी तबाही न होती।

बिहार सरकार ने इस बाढ़ के बाद उससे निजात पाने के उपाय सुझाने के लिए एक कमेटी का गठन किया। इस कमेटी का कहना था कि नदी के प्रवाह में अत्यधिक गाद आने के कारण इसका स्वभाव चंचल बना हुआ है। अपनी बदलती धारा के कारण जहाँ यह नदी भीषण तबाही का कारण बनती है वहीं घाटी में भूमि का लगातार निर्माण करते रहना इसकी बाढ़ का एक रचनात्मक पक्ष है। समस्या यह नहीं है कि बाढ़ को कैसे समाप्त कर दिया जाए, समस्या यह है कि बाढ़ के फाजिल पानी की निकासी किस तरह से की जाए और सिंचाई की व्यवस्था को कैसे सुनिश्चित किया जाए। इस कमेटी ने यह भी इशारा किया कि बाढ़ समस्या का स्थाई समाधान और बागमती नदी को नियंत्रित करने का एक मात्र उपाय उसकी धारा के सामने नेपाल में नुनथर के पास एक बहूद्देशीय बांध का निर्माण करना है मगर यह अपने आप में एक लम्बे समय में पूरी की जाने वाली योजना ही होगी। तात्कालिक तौर पर कमेटी का सुझाव था कि,

1. उन इलाकों में जहाँ बाढ़ की समस्या बहुत गंभीर होती है वहाँ नदी के दोनों किनारों पर तटबन्ध बनाये जाएं और उनमें स्लुइस गेट की समुचित व्यवस्था की जाए,
2. ढेंग रेल पुल के ऊपर एक वीयर बना कर बागमती की बहुत सी पुरानी छाड़न धाराओं के माध्यम से सिंचाई के लिए उसके पानी का इस्तेमाल किया जाए, तथा
3. समुचित जल-निकासी की व्यवस्था कर के बागमती की बाकी छाड़न धाराओं पर नियंत्रण किया जाये।[8]

बागमती की 1953 वाली बाढ़ एक मानक बाढ़ थी क्योंकि यह भारत की आज़ादी के बाद बाढ़ की पहली बड़ी घटना थी। इसके अलावा यह पहला मौका था जब इस नदी की बाढ़ की समस्या के समाधान के रूप में हिमालय में एक बांध के निर्माण का प्रस्ताव किया गया। इस प्रस्तावित बांध के बारे में हम अगले अध्याय में विस्तार से बात करेंगे पर यहाँ इतना ही बता देना काफी होगा कि पहले प्रस्ताव के 57 साल बाद भी इस बांध के निर्माण की दिशा में अभी तक (जून 2010) कोई सार्थक प्रयास नहीं हुआ है और न ही इस बात के कोई आसार हैं कि निकट भविष्य में इस बांध का निर्माण संभव हो सकेगा। इस बांध के निर्माण के लिए भारत और नेपाल सरकार की पारस्परिक सहमति चाहिये और तमाम कोशिशों के बावजूद यह सहमति अभी तक नहीं बन पायी है। इस बांध के निर्माण के बाद भी इलाके की बाढ़ समस्या का समाधान हो पायेगा, यह विवाद का विषय है।

सीतामढ़ी (मुजफ्फरपुर) की इस बाढ़ से पहले इस समस्या के प्रति सरकार का जो चिन्तन था वह अंग्रेजों की चिन्ताधारा की प्रतिध्वनि भर थी जिसकी एक झलक मुजफ्फरपुर के (1907) वाले गजैटियर में ओ' मैली के बयान में मिलती है। ओ' मैली का मानना था, ''... सिद्धान्तत: इस तरह की विपदाओं से लोगों को काफी परेशानी झेलनी पड़ती है और भारी मात्रा में सम्पत्ति को नुकसान पहुँचता है मगर यह सब दु:ष्प्रभाव स्थाई नहीं होते। किसानों को जो सब से बड़ा नुकसान पहुँचता है वह है उनके जानवरों की क्षति मगर इसकी भरपाई बाढ़ के बाद रबी के मौसम में असाधारण तौर पर बम्पर फसल के रूप में हो जाती है क्योंकि जाते-जाते बाढ़ अपने पीछे उर्वरक मिट्टी की एक पर्त छोड़ती हुई जाती है।''[9] ओ' मैली का मानना था कि बाढ़ कभी स्थानीय बरसात के कारण नहीं बल्कि चम्पारण और नेपाल के जल-ग्रहण क्षेत्र में भारी बारिश के कारण आती है। स्थानीय वर्षा केवल ऊपर से आये पानी के दु:ष्प्रभाव को बढ़ाने में

मदद भर करती है और क्योंकि यह बाढ़ अक्सर अगस्त या सितम्बर के महीने में आती है जबकि धान को पानी की सबसे ज्यादा जरूरत होती है तब निश्चित रूप से नुकसान के बजाय फायदा अधिक होता है।[10]

इतना जरूर था कि 1953 की बाढ़ के बाद आजाद भारत की बिहार सरकार ने इस पूरी समस्या को बागमती घाटी की टोपोग्राफी, उसका भूगोल, नदियों के आपस में उलझने की प्रक्रिया, 1934 वाले बिहार भूकम्प का इन सब पर प्रभाव आदि सन्दर्भों में व्याख्या करना शुरू किया। पूरे जिले में चौरों की उपस्थिति का संज्ञान भी सरकार ने लिया। इन्हीं सब कारकों पर नजर रख कर ही 1953 में सरकार द्वारा गठित कमेटी ने अपनी सिफारिशें की होंगी।

दिसम्बर 1953 में सरकार ने कोसी नदी पर तटबन्धों के निर्माण का अनुमोदन कर दिया था जिसकी वजह से राज्य की दूसरी नदियों को नियंत्रित करने की अपेक्षाएं जगीं। 1954-55 के बिहार के बजट पर चल रही बहस में विधान सभा में दामोदर झा ने सरकार से यह सवाल किया कि सरकार बागमती नदी को नियंत्रित करने के लिए क्या करने जा रही है[11] मगर उनके सवाल के जवाब को सरकार ने यह कह कर टाल दिया था कि सरकार किसी योजना विशेष के बारे में बात न कर के आज रुचि वाली परियोजनाओं के बारे में अपनी नीतियों को स्पष्ट कर रही है, लेकिन विधान सभा के उसी सत्र में जब मौलवी मसूद ने यह कहा, ''...दरिया-ए-बागमती में सैलाब की कसरत इतनी ज्यादा होती है कि पताही और मधुबन के दो तिहाई हिस्से सैलाब से बरबाद हो जाते हैं। मगर बागमती स्कीम हुकूमत अपने सामने रखे और इसके दोनों किनारों पर मजबूती से बांध बांधने की स्कीम निकाले और ऐसे बांध के अन्दर स्लुइस गेट का इंतजाम करे तो बागमती के पानी को जहाँ जरूरत होगी ले लिया जायेगा और उससे बहुत फायदा होगा। बागमती के पानी में बहुत खूबियाँ भी हैं, जहाँ वह बरबाद करती है वहीं आबाद भी करती है। लेकिन बरबादी का हिस्सा आबादी से ज्यादा है। जहाँ से पानी गुजरता हुआ आगे निकल जाता है वहाँ तो बहुत फायदा पहुँचता है लेकिन जहाँ पानी जमा हो जाता है उस जगह को बरबाद कर देता है।''[12] उसके जवाब में राज्य के सिंचाई मंत्री राम चरित्र सिंह ने कहा, ''...मैं अभी यह कह देना चाहता हूँ कि बागमती और कमला, इन दोनों नदियों को ट्रेन करने का इंतजाम कर रहे हैं। (वाह! वाह!)। मैं आपको एक बात बता देना चाहता हूँ कि यह दोनों नदियाँ छोटी कोसी हैं। इन दोनों का सोर्स ग्लेशियर से है। ऐसी हालत में हम काम शुरू करने जा रहे हैं और हिमालय में जाने के लिए अपने आदमियों के बारे में हमने परमीशन भी ले लिया है और हमारे आदमी जाकर जाँच पड़ताल करेंगे।''[13] ऐसा लगता है कि मात्र दो सप्ताह के अन्तराल पर सरकार स्पष्ट रूप से बागमती की बाढ़ समस्या पर कोई बयान देने के लिए दबाव में आ गयी थी।

3.2.4 1954 तथा 1955 की बागमती की बाढ़–1953 के बाद 1954 तथा 1955 के साल में भी बागमती में अच्छी खासी बाढ़ आयी। इनमें से 1954 का वर्ष विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि उस साल पूरे बिहार में लगभग समान रूप से लोग बाढ़ से तबाह हुए थे और आज के बुजुर्ग लोग, जो उस समय बच्चे या जवान रहे होंगे, बड़ी शिद्दत से चौवन की बाढ़ के परिप्रेक्ष्य में ही सारी बाढ़ों का मूल्यांकन करते हैं। इस साल बागमती की बाढ़ का पानी अपने दोनों किनारे तोड़ कर दाहिनी तरफ लाल बकेया और बायीं तरफ पुरानी धार तक जा लगा था। पूरे इलाके पर 60 सेन्टीमीटर (दो फुट) से 1.8 मीटर (छः फुट) तक गहरे पानी की चादर बिछी थी। ढेंग और बैरगनियाँ के बीच बागमती का पानी कई जगह पुल के निचले गर्डर को डुबा रहा था तो कहीं-कहीं लगता था कि बाढ़ का पानी रेल लाइन के ऊपर से बह जायेगा। नदी के बायें किनारे से छलकता हुआ पानी पूरब में लखनदेई में जा मिला। दिक्कत यह थी कि इस साल इन सारी नदियों में एक साथ बाढ़ आ गयी थी और 27 जुलाई के दिन लखनदेई का पानी शहर के रिंग बांध के ऊपर से छलक कर सीतामढ़ी शहर में घुस गया और उसका अधिकांश भाग 90 सेन्टीमीटर (तीन फुट) गहरे पानी की चपेट में आ गया। सीतामढ़ी से बाजपट्टी जाने वाली सड़क के लगभग सभी पुलों से बाढ़ का पानी डरावनी रफ्तार से गुजर रहा था। 28 जुलाई को यह पानी सीतामढ़ी रेलवे स्टेशन के पूरब और पश्चिम दोनों तरफ के हिस्से को अपने साथ बहा ले गया और रेल लाइन हवा में झूल गयी। मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी सड़क कई जगहों पर टूट गयी और रहुआ चौर के पास सड़क में जो दरार पड़ी उससे इस सड़क के पूरब वाले हिस्से में गाँव पानी में तैरते हुए दिखाई पड़ने लगे। सीतामढ़ी-सोनबरसा सड़क को तोड़ता हुआ बागमती का पानी शिकाओ, जमुरा, बुढ़नद, माढ़ा और रातो जैसी अधवारा समूह की नदियों से जा मिला जो कि पहले से ही उफान पर थीं।

बरसात का मौसम छोड़ कर पतली सी दिखायी पड़ने वाली थोमने नदी की चौड़ाई इस बरसात में साढ़े छः किलोमीटर हो गयी। लगभग यही हाल अपनी पूरी लम्बाई में दरभंगा-बागमती का हुआ क्योंकि अधवारा और धौस नदियों में आये पानी से दरभंगा-बागमती की जल-निकासी में बाधा पड़ी। उन दिनों लहेरियासराय की सुरक्षा के लिए दरभंगा-बागमती पर बनाये गए महाराजी तटबन्ध पर खतरा मंडराने लगा। खिरोई नदी के उफनते पानी ने कोढ़ में खाज की स्थिति पैदा कर दी क्योंकि इस नदी में उसकी क्षमता से कहीं ज्यादा पानी आ गया था जो कि उत्तर में ऐग्रोपट्टी से लेकर दक्षिण में एकमीघाट तक तीन से आठ किलोमीटर की चौड़ाई में बही। इन दोनों स्थानों के बीच की दूरी लगभग 40 किलोमीटर है। हायाघाट रेल गुमटी के पास नदी का अनियंत्रित पानी अपने बायें किनारे पर बुरी तरह फैला और हायाघाट-हथौड़ी बांध के बीच में बागमती ने अपनी पुरानी धारा की ओर राह पकड़ी। जैसे इतना ही काफी नहीं था, कमला नदी के उत्तरी जल-ग्रहण क्षेत्र में जोरदार बारिश हुई और कमला का पानी कमला नहरों को ताबड़ तोड़ ध्वस्त करता हुआ धौरी नदी में घुसा। धौरी से यह पानी पहले सोनी नदी में और फिर झंझारपुर बलान में आया। फिर यह पानी लौट कर कमला की पुरानी धारा में नहीं गया और झंझारपुर बलान ही कमला-बलान का खिताब पा गयी। यह सारा पानी अब चला बागमती की ओर और लहेरियासराय और जठमलपुर के नीचे का पूरा इलाका समुद्र की तरह दिखाई पड़ने लगा।[14]

दरभंगा जिले में आयी अब तक की इस सबसे बड़ी और भयंकर बाढ़ में जिले का कुल 65 प्रतिशत क्षेत्र प्रभावित हुआ था। जिले के कुल 3,438 गाँवों में से 2501 गाँवों पर बाढ़ का असर पड़ा और 37,67,798 की कुल आबादी में से 19,76,771 आबादी बाढ़ से प्रभावित हुई। 32,950 घर बाढ़ में बरबाद हुए और 13 लोगों की कुर्बानी हुई। लगभग 500 जानवर भी इस बाढ़ में मारे गए थे।[15]

1954 के साथ एक और खासियत जुड़ी हुई है कि इसी वर्ष देश की पहली बाढ़ नीति की घोषणा की गयी थी। इस नीति में नदियों के किनारे तत्काल लाभ पाने की गरज से तटबन्धों के निर्माण की सिफारिश की गयी थी और लगभग सात वर्षों के अन्दर देश में बाढ़ों पर यथासंभव नियंत्रण कर लेने का संकल्प लिया गया था। यह पूरा विवरण दूसरी जगह उपलब्ध है इसलिए हम यहाँ उसके विस्तार में नही जायेंगे।[16] वैसे भी जहाँ तक बागमती नदी का प्रश्न है, इन दोनों वर्षों में सीतामढ़ी और मुजफ्फरपुर की वह दुर्गति नहीं हुई जो 1902 की बाढ़ में हुई थी। इन बाढ़ों का इतना असर जरूर हुआ था कि बागमती क्षेत्र में बाढ़ से सुरक्षा और सिंचाई की समुचित व्यवस्था करने के लिए बिहार विधान सभा के अन्दर और उसके बाहर भी संगठित रूप से आवाजें उठने लगी थीं।

3.2.5 बागमती योजना के निर्माण की बहस जनता और जन-प्रतिनिधियों के बीच–1953 और 1954 की बाढ़ तथा कोसी नदी पर तटबन्धों की स्वीकृति (दिसम्बर 1953) ने बागमती क्षेत्र की जनता के बीच जहाँ हताशा और उपेक्षा को जन्म दिया वहीं उसने स्थानीय नेताओं पर चुप्पी तोड़ने और क्षेत्र के लिए कुछ करने के लिए दबाव बढ़ाया और यहाँ के नेताओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं को बागमती नदी की बाढ़ पर नियंत्रण की मांग करने के लिए प्रेरित किया। इसी सिलसिले में बागमती अधवारा सम्मेलन के संयोजक और सीतामढ़ी कांग्रेस समिति के मंत्री महन्त रघुनाथ दास ने पटना में बयान दिया ''आश्चर्य की बात है कि अब तक जांच कार्य भी पूरा नहीं किया गया है और अधवारा योजना तैयार होने पर भी पूरी नहीं की जा रही है।''[17] उनका मानना था कि बागमती नदी की बाढ़ किसी भी मायने में कोसी नदी की बाढ़ से कम भयंकर और कम नुकसान पहुँचाने वाली नहीं है मगर उनके क्षेत्र और नदी की उपेक्षा हो रही है। इन्हीं विचारों की अनुगूंज 16 मार्च 1954 को सीतामढ़ी में सम्पन्न बागमती-अधवारा सम्मेलन में भी सुनाई पड़ी जिसमें मांग की गयी कि इस क्षेत्र की बाढ़ प्रभावित जनता की भागीदारी और आम समझ के आधार पर बाढ़ नियंत्रण की योजना बनायी जाए। जय प्रकाश नारायण ने इस सम्मेलन में यहाँ की बाढ़ समस्या के वैज्ञानिक अध्ययन पर बल दिया।[18] बिहार विधान सभा में दामोदर झा और मौलवी मसूद के बयान इसी शृंखला की कड़ी थे। 1954 की बाढ़ से बागमती क्षेत्र बचा नहीं था। बाढ़ के बाद एक बार फिर बागमती को नियंत्रित करने के प्रस्ताव तेजी से उठने लगे। राम दुलारी सिंह का कहना था, ''...मुजफ्फरपुर के सीतामढ़ी सब-डिवीजन में बाढ़ की जो चोट है वह भूकम्प की चोट से कई गुणा अधिक है (15 जनवरी 1934 के बिहार भूकम्प में 10,000 लोग मारे गए थे और मुजफ्फरपुर जिला सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ था। इस भूकम्प में इस जिले के 2,539 लोग मारे गए थे। –लेखक)।[19] उधर जनक सिंह ने 1953 में सरकार द्वारा गठित बाढ़ समिति पर कटाक्ष करते हुए कहा, ''... मैं बिना संकोच के यह कह सकता हूँ कि अंग्रेजों के समय जिस तरह उत्तर बिहार उपेक्षित था ठीक उसी तरह से आज भी उपेक्षित है। बाढ़ आने के बाद बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों का समाधान सोचा जाता है लेकिन इससे क्या समस्या का समाधान हो सकता है? ...अगर सरकार ने यह समझ रखा है कि कोसी योजना को कार्यान्वित कर देने से ही उत्तर बिहार की सारी समस्याएँ हल हो जायेंगी तो मैं समझता हूँ कि यह खयाल गलत है। बागमती, बूढ़ी गंडक, लखनदेई और सिकरहना नदी को पालतू बनाना बहुत जरूरी है ...नदियों की जांच पड़ताल करने के लिए तथा नियंत्रण के लिए केन्द्रीय कमीशन के साथ-साथ एक प्रान्तीय कमीशन की भी नियुक्ति हो।''[20] इन भावनाओं की अनुगूंज 1955-56 के लिए बजट प्रस्ताव पर बहस के समय भी विधान सभा में सुनाई पड़ी जब 1954 की बाढ़ के समय सरकार की निष्क्रियता पर बार-बार उंगली उठाई गयी। विवेकानन्द गिरि का कहना था, ''...बागमती एक ऐसी भयानक नदी है जिससे चम्पारण, मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिलों में काफी नुकसान होता है। यद्यपि कुछ लोगों का कहना है कि यह बहुत छोटी नदी है। छोटी होते हुए भी इसका जो प्रकोप होता है वह अत्यन्त भयंकर है। बागमती में बाढ़ आने से ही बूढ़ी गंडक और लखनदेई नदियों में जल प्राप्त होता है। इस नदी को कन्ट्रोल करने के लिए आज से 100 वर्ष पहले से योजना बनती रही और टूटती रही।''[21] उधर गिरिजा नन्दन सिंह का कहना था, ''...कोसी से नुकसान जो लोगों को होता है उससे कम बागमती से नहीं होता। फिर भी हम देखते हैं कि गवर्नर साहब की स्पीच में बागमती का कोई जिक्र नहीं है। यदि सचमुच में सरकार की ख्वाहिश बाढ़ रोकने की है तो बागमती को सबसे पहले नियंत्रित करना होगा।''[22]

इस साल यूँ तो पूरे बिहार में बाढ़ से भारी तबाही हुई थी मगर बाढ़ नियंत्रण के नाम पर जहाँ कोसी को नियंत्रित करने की बात जोर-शोर से चल रही थी वहीं छोटी नदियों के नियंत्रण के काम की शुरुआत 1954 में हो चुकी थी और बूढ़ी गंडक के दाहिने किनारे पर मुजफ्फरपुर से अखाड़ा घाट और उसके आगे पूसा तक तटबन्ध बनाने का काम शुरू हो गया था। यहाँ हम एक बार फिर याद दिला दें कि ब्रिटिश हुकूमत तटबन्धों के निर्माण के खिलाफ़ थी और इसकी खुमारी 1953 तक कायम रही। उस अमल के इंजीनियरों को तटबन्धों के निर्माण की बारीकियों का अन्दाजा नहीं था और शायद यही वजह थी कि बूढ़ी गंडक के किनारे तटबन्ध के निर्माण का यह कार्य नदी के एक ही तरफ हो रहा था। जब बरसात शुरू हुई तब नदी का पानी चढ़ना शुरू हुआ मगर तटबन्ध नदी के एक ही किनारे पर बना हुआ था। स्वाभाविक तौर पर बाढ़ का पानी दूसरी तरफ फैला। जब बाढ़ पीड़ितों ने शोर मचाना शुरू किया तब सरकार ने आश्वासन दिया कि अगले साल तक बाएं किनारे पर भी तटबन्ध पूरा कर लिया जायेगा। लोगों का कहना था कि अगर वह इस साल नदी की बाढ़ से बरबाद हो ही जाते हैं तो अगले साल तटबन्ध बन जाने से भी क्या फायदा होगा?[23] आर्यावर्त्त, पटना ने अपने संपादकीय (31.10.54) 'बाढ़ नियंत्रण का बेढंगा तरीका' शीर्षक से लिखा, ''...अभिप्राय यह है कि इस सुविचारित योजना के फलस्वरूप सकरा थाने का वह भाग जो गंडक के दक्षिणी किनारे पर पड़ता है बाढ़ से बचा लिया जायेगा, किन्तु बायें किनारे के सकरा थाने का हिस्सा, कटरा थाने का दक्षिणी हिस्सा और सदर थाने का कुछ हिस्सा तभी बच सकेगा जब भगवान ऐसा चाहेंगे।'' समाचार पत्र का मानना था कि लखनदेई नदी के इर्द-गिर्द भी इसी तरह की परिस्थिति का निर्माण हो रहा है। इस समय (30 अक्टूबर 1954) समस्तीपुर में सम्पन्न एक बिहार बाढ़ नियंत्रण सम्मेलन में आचार्य कृपलानी ने कहा, ''...जनता तो नेताओं में विश्वास करती है और उन्हें अपना सहयोग देने के लिए भी तैयार रहती है मगर नेता ही फिसल जाते हैं। ऐसे कामों में जनता को स्वयं पूरी शक्ति से आगे बढ़ना चाहिये... अमीर-गरीब का भेद भाव भुला कर सब एक साथ इस काम में जुट जायें। यदि सरकार आपके सामने कोई योजना लाती है तो

सरकार के हाथों को आप अवश्य मजबूत करें।''[24] इस गोष्ठी में जय प्रकाश नारायण, बी० पी० कोइराला और दादा धर्माधिकारी जैसे दिग्गज नेता और समाजकर्मी मौजूद थे।

उधर 25 नवम्बर 1954 के दिन समस्तीपुर में उत्तर बिहार की बाढ़ समस्या पर तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ० श्रीकृष्ण सिंह की अध्यक्षता में 'उत्तर बिहार की बाढ़ समस्या' पर सरकार की तरफ से एक गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें महेश प्रसाद सिन्हा, हरिनाथ मिश्र, दीप नारायण सिंह (सभी मंत्री), टी० पी० सिंह, एस० बी० सोहनी (दोनों प्रशासक) तथा राज्य के चीफ़ इंजीनियर एम० पी० मथरानी मौजूद थे। इस गोष्ठी में भी बूढ़ी गंडक के एक ही किनारे पर तटबन्ध बना कर दूसरे किनारे पर हुई बरबादी का प्रश्न चर्चा के लिए उठा। चीफ इंजीनियर को यह आश्वासन देना पड़ा कि यथाशीघ्र दूसरे किनारे के तटबन्धों को पूरा कर लिया जायेगा तथा और ज्यादा तबाही नहीं होने दी जायेगी। यह तसल्लियाँ थोथी साबित हुईं जिनकी ओर बिहार विधान सभा में गिरिजा नन्दन सिंह ने इशारा किया था। उन्होंने साफ शब्दों में कहा था, ''... आज आप बूढ़ी गंडक को बांध रहे हैं और वह भी एक किनारे पर बांध रहे हैं। इसका नतीजा यह होगा कि आप एक तरफ के लोगों को फायदा पहुँचावेंगे और दूसरी तरफ के लोगों को बहुत बड़ा नुकसान पहुँचावेंगे। बूढ़ी गंडक वह नदी है जिसमें बागमती आदि नदियों का पानी गिरता है और उसी के जरिये इनके पानी के निकलने का रास्ता है। लेकिन जब आप इसमें बांध, बांध देंगे तो पानी निकलने का रास्ता बन्द हो जायेगा और उससे आप जहाँ 200 वर्ग मील के लोगों को फायदा पहुँचायेंगे वहाँ 600 वर्ग मील के लोगों को नुकसान पहुँचेगा। पता नहीं किस इंजीनियर के दिमाग से यह बात निकली।''[25] यह एक अलग बात है कि नदी के उत्तरी किनारे पर तटबन्ध का निर्माण 1955 की बाढ़ के समय भी नहीं हुआ था जैसा कि सदर थाना किसान सभा के मंत्री डॉ० हरि नन्दन ठाकुर द्वारा सम्पादक आर्यावर्त्त को लिखे एक पत्र से जाहिर होता है। उन्होंने इस पत्र में उत्तरी किनारे की बाढ़ से दु:सह स्थिति और विभाग की अकर्मण्यता पर चिन्ता व्यक्त की थी।[26] इनमें से बहुत सी बातें आज भी कही जाती हैं और यह इशारा करता है कि इन 50-60 वर्षों में हमारे काम करने के तरीके में या सोचने के ढंग में कोई ख़ास फर्क नहीं आया है और हम वहीं के वहीं खड़े हैं जहाँ पहले थे। यहाँ हम एक बार फिर आर्यावर्त्त के सम्पादकीय को उद्धृत कर रहे हैं जिसमें इस गोष्ठी और उस समय के उभरते विचारों पर प्रकाश पड़ सके, ''...दक्षिण भारत के एक विशेषज्ञ इंजीनियर ने यह विचार व्यक्त किया है कि लोगों ने नदी के क्रीड़ा क्षेत्र में अपना क्रीड़ा क्षेत्र मनमाने ढंग से बना लिया है और पर्याप्त पुल नहीं बना कर इस प्रकार रेलवे लाइनें और सड़कें बना दी हैं जिसमें पानी के बहाव की सम्यक व्यवस्था रहने नहीं दी गयी है और यह बाढ़ के प्रकोप के प्रमुख कारकों में है। उक्त इंजीनियर ने नदियों के किनारों पर पुश्ते (तटबंध) बांधने के प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया है। एक दूसरे विशेषज्ञ ने यह विचार रखा है कि चूँकि उत्तर-पूर्व भारत की सभी नदियाँ हिमालय से निकलती हैं और बरसात में इनमें बाढ़ आ जाती है इसलिए इस भाग के हिमालय क्षेत्र में इस बात की जानकारी प्राप्त करने की व्यापक व्यवस्था होनी चाहिये कि कहाँ, कब, कितना पानी हुआ और उससे कहाँ किस रूप में बाढ़ आ सकती है। यह व्यवस्था बाढ़ के प्रकोप को रोक तो नहीं सकती किन्तु इससे लोगों को बाढ़ की भयानकता की पूर्व सूचना मिल जा सकती है। एक संयुक्त राष्ट्र संघीय विशेषज्ञ ने यह परामर्श दिया है कि बाढ़ वाले क्षेत्रों में ऐसे ही अनाज उपजाये जाएं जो पानी में भी हुआ करते हैं। यह उचित प्रतीत होता है और उत्तर बिहार में जहाँ बराबर पानी रहा करता है वहाँ इस प्रकार के धान की खेती होती भी है किन्तु उक्त विशेषज्ञ महोदय को बिहार, आसाम और बंगाल की खेती की स्थिति की पूरी जानकारी नहीं है और वे शायद नहीं जानते कि जहाँ बाढ़ आती है वहाँ पानी बराबर नहीं रहता और यदि पानी में होने वाले अनाज की सर्वत्र खेती की जाए तो वह खेती मारी जायेगी। एक व्यक्ति ने यह विचार प्रकट किया कि नदियों की शाखाएं निकाल कर उनकी बाढ़ की शक्ति नष्ट की जा सकती है और यदि उन्हें सरकार पचास करोड़ दे दे तो वे इस समस्या का समाधान कर दे सकते हैं।''[27]

यह सारे विचार प्राय: बिहार में तटबन्धों के निर्माण के पहले के हैं और यह सारी बातें कमोबेश आज भी कही जाती हैं। बूढ़ी गंडक के निर्माणाधीन तटबन्ध ने अपने उत्तरी किनारे पर परेशानियाँ पैदा कर दी थीं इसलिए उनकी चर्चा जरूरी थी। बागमती पर नुनथर में प्रस्तावित बांध की जानकारी शायद उस समय बहुत लोगों को नहीं थी इसलिए वह चर्चा में नहीं आयी। यही हाल नदियों की उड़ाही, गाँवों को ऊँचा करना और नदी-जोड़ योजना का भी रहा होगा। यह सारी चीजें बिहार और देश में बाढ़ नियंत्रण के इतिहास में बाद में जुड़ी हैं। कुछ विदूषक भी इस गोष्ठी में मौजूद थे जिन्हें यह पता नहीं था कि वे कह क्या रहे हैं। सम्मेलन में एक विशेषज्ञ का कहना था, ''...यदि दक्षिणीय और पश्चिमीय मौसमी हवाओं को रोकने के लिए भारत के मध्य भाग में ऊँची दीवार खड़ी कर दी जाए या इसके लिए कोई दूसरी ही व्यवस्था की जाए तो बरसात के दिनों में इस नदी क्षेत्र में पानी कम बरसेगा, फलत: बाढ़ का प्रकोप भी जाता रहेगा।'' तथाकथित विशेषज्ञ महोदय के इस मूर्खतापूर्ण वक्तव्य पर किसी भी प्रकार की कोई टिप्पणी की गुंजाइश नहीं है मगर दु:ख इस बात का है कि समाचार पत्रों ने इस तरह की फ़जूल की बात को चर्चा का विषय बनाया। गिरिजा नन्दन सिंह बागमती परियोजना के पक्षधर थे। उन्होंने 1970 में बिहार विधान सभा में सरकार को जो उलाहना दिया था वह बड़ा दिलचस्प है। उन्होंने कहा था, ''...मैं एक दु:खद कहानी सुनाना चाहता हूँ। यह है कि 1947 में हम लोगों ने बागमती योजना के लिए एक आन्दोलन शुरू किया और इस ओर बहुत ज्यादा ध्यान सरकार का गया। हमें याद है कि 1951-52 में सरकार का एक ब्लू प्रिंट भी निकला था जिसमें 22 करोड़ रुपये की प्लानिंग थी। लेकिन 1952 में जो सरकार बनी उसमें गण्डक एरिया के मिनिस्टर हो गए और गण्डक का नाम आ गया। पाँच मिनिस्टर में चार मुजफ्फरपुर के थे और एक सारण के थे। इन पाँचों से मिल कर हमने कहा कि हमें तकलीफ है कि आपने बागमती को खटायी में फूलने दिया और उसको वेस्ट पेपर बास्केट में फेंक दिया और गण्डक योजना को ले लिया जिससे एक बूंद भी पानी नहीं मिल रहा है।''[28]

उधर 7 अप्रैल 1955 को शिवहर में बिहार राज्य के तत्कालीन सिंचाई मंत्री राम चरित्र सिंह ने बयान दिया कि बागमती के उद्गम के निकट तथा परदेशिया नाला के समीप ऐसे दो विस्तृत जलाशय बनाये

जायेंगे जिससे भविष्य में नदी का धारा-परिवर्तन न हो। शायद उनका इशारा नुनथर में प्रस्तावित बांध की ओर था और सुगिया-परदेशिया में उन दिनों एक वीयर बनाने की बात चलती थी और मुमकिन है उन्होंने इसी उद्देश्य से परदेशिया का नाम लिया हो। नदी के दोनों किनारों पर तटबन्धों के निर्माण और उनमें जगह-जगह पर स्लुइस गेट बना कर नहरों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था करने की ओर भी उन्होंने इशारा किया था। इतना हो जाने पर सिंचाई मंत्री का अनुमान था कि इलाके की कृषि पैदावार डेढ़ गुनी हो जायेगी। उन्होंने बरैगनियाँ में एक बिजली घर बनाने का भी वायदा उस दिन किया था जिससे वह पहले सीतामढ़ी और बाद में शिवहर को बिजली देना चाहते थे। ठाकुर गिरिजा नन्दन सिंह ने इस योजना के शीघ्र क्रियान्वयन पर बल दिया।[29]

इन सारी कोशिशों के बीच 1955 की बाढ़ का मौसम आ गया और ढेंग पुल पर एक बार फिर उतना ही पानी आया जितना 1954 में आया था। इस साल नदी की बाढ़ से होने वाली तबाही का अलग रंग था। नदी से बहुत सी धाराएं फूटने लगीं जिसमें मरपा, देवापुर, जिहुली, ललुआ और सुगिया-परदेशिया गाँवों के पास फूटती धाराएं मुख्य थीं। इस बार नुकसान 1954 से कम हुआ था। दिसम्बर 1955 में सेन्ट्रल वाटर ऐण्ड पॉवर कमीशन के मुख्य अभियंता डॉ० के० एल० राव बागमती क्षेत्र का दौरा करने के लिए आये। उन्होंने बिहार के चीफ इंजीनियर एच० के० श्रीनिवास के साथ पूरे इलाके को देखा और नाव में बैठ कर 1 दिसम्बर 1955 के दिन नुनथर तक की यात्रा की जहाँ नदी पर एक बहूद्देशीय बांध प्रस्तावित था। यात्रा के अनुभवों को समेटते हुए डॉ० के० एल० राव का मानना था कि नुनथर बांध के निर्माण के साथ-साथ बागमती नदी के पानी को विभिन्न धाराओं की मदद से एक विस्तृत इलाके पर फैलाने की जरूरत है। उनके बयान से ऐसा लगता है कि वे नदी पर तटबन्धों के निर्माण के पक्ष में नहीं थे।[30]

3.2.6 बागमती की 1956 की बाढ़–1956 में एक बार फिर राज्य में दक्षिण में सूखा और उत्तर में बाढ़ की परिस्थिति बनी और बागमती तथा बूढ़ी गंडक फिर अपने पुराने तेवर पर लौटीं। इस बार विधान सभा में जब राज्य में बाढ़ और सूखे पर बहस शुरू हुई।

गिरिजा नन्दन सिंह ने सदन को बताया, ''...इस बार दुर्भाग्य से हमारे जिले में मई महीने में ही बाढ़ का प्रकोप हुआ और यहाँ के जितने कार्यकर्ता थे सभी ने, जिसमें एक मैं भी था, राजस्व मंत्री से आग्रह किया कि वहाँ की दर्दनाक हालत को जाकर देखें। मंत्री महोदय वहाँ गए भी, वहाँ बाढ़ सम्मेलन भी किया गया जिसमें वहाँ के जितने लोग थे सब इकट्ठा हुए थे। जो-जो कठिनाई उस इलाके की थी उन सारी बातों को उनके सामने पेश किया। उन्होंने बहुत संतोषपूर्वक सुना और उसके निराकरण के लिए आश्वासन भी देकर आये। हम लोगों ने समझा कि तकलीफ की जानकारी करा देने पर इस बार कोई अच्छी व्यवस्था हो सकेगी लेकिन देखने में आता है कि गत साल जो व्यवस्था थी, उससे भी गई गुजरी हालत इस साल की है। ...अगर स्थानीय पदाधिकारी से कुछ कहा जाए तो वे मुकदमा चलाने की धमकी देते हैं।''[31]

इस समय तक सरकारी हलकों में बागमती को नियंत्रित करने का कोई स्वरूप नहीं उभरा था और वह खामोश थी जिसके फलस्वरूप गिरिजा नन्दन सिंह जैसे निर्विवाद व्यक्तित्व वाले प्रभावशाली नेताओं की जब यह हालत थी कि उनको सरकारी अफसर गिरफ्तार कर लेने की धमकी दे सकते थे तब आम आदमी की क्या बिसात रही होगी, यह बड़ी आसानी से समझा जा सकता है। अब तक बागमती नदी दाहिने किनारे पर बेलवा के पास नई धारा में बहने की कोशिश करने लगी थी जबकि सुगिया-परदेशिया गाँव के पास उसकी धारा बदलने का प्रयास जारी था।

उधर विधायक बृजबिहारी शर्मा का मानना था, ''...बागमती नदी जिस क्षेत्र में जाकर भीषण विभीषिका उत्पन्न करती है वह है मधुबन का क्षेत्र, वहाँ से बागमती मुजफ्फरपुर की तरफ मीनापुर थाने में प्रवेश करती है। हर साल वहाँ पर हजारों रुपया खर्च करके सुगिया और परदेशिया नालों को बांध कर रोकने की कोशिश की जाती है, लेकिन सिंचाई मंत्री का यह रुपया बिल्कुल बेकार खर्च होता है क्योंकि जेठ में बांध बनाया जाता है और आषाढ़ में वह टूट जाता है। हमको यही मालूम होता है कि अकाल के जमाने में निलही कोठी के मालिकों ने सरकार से मदद लेकर इस बांध को बंधवाया था और इस बांध के टूट जाने से बड़का गाँव, पताही, मधुबन और मीनापुर थाने का इलाका प्रत्येक साल बह जाया करता है... इस बांध की मरम्मत हो जाने से चार थानों के इलाके की रक्षा हो सकती है यानी ढाका, पताही, मधुबन और शिवहर का कुछ इलाका। हम चार वर्ष से इसके बारे में सरकार से कह रहे हैं लेकिन फिर भी अभी तक इसकी मरम्मत नहीं हो सकी है।''[32] रुन्नी सैदपुर और आस पास के इलाकों की बागमती नदी की बाढ़ से होने वाली दुर्दशा और खड़ी फसलों के नुकसान का जिक्र करते हुए विवेकानन्द गिरि की अपेक्षा थी, ''यदि बागमती का नियंत्रण किया जाए तो लोगों की बहुत भलाई होगी तथा जमीन भी उपजाऊ होगी।''[33]

कपिल देव नारायण सिंह ने विधान सभा में अपनी मांग रखी। उन का विचार कुछ इसी तरह का था, ''हमारे यहाँ बहुत सी नदियाँ हैं। खास कर के मुजफ्फरपुर जिले में बागमती और बूढ़ी गंडक है पर विभिन्न दृष्टिकोणों को रखते हुए इन पर नियंत्रण की आवश्यकता है। बागमती के पानी में एक तरह की कदई रहती है जिसको कदली कहते हैं। उस कदली के जमीन में जाने से जमीन उपजाऊ हो जाती है। जहाँ-जहाँ यह कदली पड़ती है वहाँ की जमीन स्वत: उर्वरा हो जाती है। जिस खेत में कदली चली जाती है उसमें अगर ज्यादा पानी आ जाता है तो पौधे तक डूब जाते हैं तब भी फसल का नुकसान नहीं होता है। बूढ़ी गंडक कदली की जगह बालू भर देती है। इस पर नियंत्रण करने की आवश्यकता है ताकि खेतों में बालू न जा सके। नियंत्रण करने के वक्त इन दोनों का ध्यान रखना चाहिये, बाढ़ का पानी नुकसान भी न पहुँचाये और सूखा के समय उस पानी का उपयोग भी सिंचाई के लिए हो सके।''[34]

यह सभी नेता नदी को नियंत्रित करने की बात तो जरूर करते थे मगर बागमती नदी में आने वाली गाद और उससे खेती को होने वाले फायदे को इन सभी सदस्यों ने कभी नजरअंदाज नहीं किया। अपेक्षाएं लगभग सभी सदस्यों की एक जैसी थीं कि उन्हें बागमती की गाद अपने खेतों में चाहिये और यह गाद खेतों तक तब तक नहीं पहुँचेगी जब तक नदी की बाढ़ का पानी वहाँ तक न पहुँचे।

बाढ़ नियंत्रण की जो भी तकनीक उस समय प्रचलन में थी उसके अनुसार नदी पर तटबन्ध बना कर ही बाढ़ का नियंत्रण किया जा सकता था और जगह-जगह पर स्लुइस गेट बना कर नदी के पानी को यथा

संभव खेतों तक पहुँचाया जा सकता था। स्लुइस गेटों की गैर-मौजूदगी या उनके संचालन में किसी तरह की कोताही से तटबन्धों पर खतरा बढ़ता है और एक बार नदी पर बने तटबन्ध टूटने की स्थिति में आ जाएं तो अधिकांश खेतों पर मोटा बालू ही फैलता है। नदी के पानी को विस्तृत इलाके पर फैलाने के लिए जो तकनीक, तैयारी और जिस संचालन तंत्र की जरूरत पड़ती है वह हमारे पास तब भी नहीं था और आज भी नहीं है। हमें यह भी नही भूलना चाहिये कि तटबन्धों के निर्माण के बाद नदी में आने वाली गाद के कारण नदी की पेटी धीरे-धीरे ऊपर उठती है और यह उठान तटबन्ध के रिवर साइड में स्लुइस गेट को जाम कर देता है। इसलिए स्लुइस गेट के सामने से जमा हुई मिट्टी का नियमित तौर पर हटाया जाना बहुत ही जरूरी है ताकि बाहर के पानी की नदी में निकासी होती रहे। दुर्भाग्यवश ऐसा होता नहीं है।

नेताओं की मांग में स्पष्टता नहीं थी लेकिन बिहार का सिंचाई विभाग इस समय तक नदी पर तटबन्ध और नहर निर्माण की योजना को करीब-करीब अंतिम रूप दे चुका था। बिहार के तत्कालीन चीफ़ इंजीनियर एम० पी० मथरानी द्वारा 1956 में प्रस्तावित योजना के बारे में हम पहले यहाँ चर्चा करेंगे और उसके बाद बाढ़ की परिस्थिति पर फिर चर्चा शुरू करेंगे।

3.2.7 बागमती बाढ़ नियंत्रण का पहला प्रस्ताव (1956)–पिछले अध्याय में हम एम०पी० मथरानी के प्रस्ताव के बारे में कुछ चर्चा कर चुके हैं। उनके प्रतिवेदन में बागमती की बाढ़ को नियंत्रित करने पर भी टिप्पणी थी। बागमती नदी नेपाल के तराई वाले हिस्से से लेकर भारत के मैदानी भाग में काफी छिछली है और उसमें बरसात का पूरा प्रवाह समा नहीं पाता जिसकी वजह से नदी बुरी तरह किनारे तोड़ कर बहती है। ढेंग रेल पुल के ऊपर भी नदी की यही हालत है और उसका उपट कर बहता हुआ बहुत सा पानी नरकटियागंज से दरभंगा जाने वाली रेल लाइन के कई पुलों से होकर बहा करता है। 1956 में इस योजना में नदी पर भारत-नेपाल सीमा से लेकर नदी की कुल 315 मील (504 किलोमीटर) लम्बाई में, जहाँ यह नदी कमला नदी से संगम करती थी, तटबन्धों के निर्माण का प्रस्ताव किया गया। इस योजना में नदी पर सिंचाई के लिए प्रस्तावित दोनों वीयरों के माध्यम से, जिनके बारे में हमने अध्याय-2 में चर्चा की है, नदी के कुछ पानी को आगे चल कर तबाही का कारण बनने के पहले ही फैला कर बहा देने का प्रयास किये जाने की व्यवस्था थी। एक लाख रुपया प्रति किलोमीटर की दर से यह खर्च 5.04 करोड़ रुपये बैठता था। उसमें दोनों वीयरों की आंशिक लागत (1.52 करोड़ रुपये) जोड़ देने पर कुल अनुमानित राशि 6.56 करोड़ रुपये बैठती थी। वीयरों के निर्माण की लागत का आधा हिस्सा सिंचाई व्यवस्था वाले मद में डाले जाने का प्रस्ताव था। क्योंकि नदी का पानी नेपाल वाले हिस्से में भी छलकता है इसलिए यह जरूरी था कि बागमती के तटबन्धों को नेपाल में भी बढ़ाया जाता। इन तटबन्धों की लम्बाई 128 किलोमीटर आंकी गई थी। अगर नेपाल में तटबन्धों के निर्माण की लागत वही रहती जो कि भारतीय भाग में प्रस्तावित थी तो उन पर 1.28 करोड़ रुपये खर्च होने चाहिये थे। संभवत: नेपाल के साथ किसी समझौते के अभाव में उस समय इस राशि को एस्टीमेट में शामिल नहीं किया गया था।[35] एक समझौते के तहत बागमती के तटबन्धों का विस्तार नेपाल में 2000 के दशक में पूरा किया गया और अब यह तटबन्ध नेपाल में प्राय: करमहिया बराज तक बन कर पूरे हो गए हैं।

इस परियोजना की रूप रेखा 1956 में तय की जा चुकी थी और नदी के निचले हिस्से में दायें किनारे पर सोरमार हाट से लेकर बदलाघाट तक तटबन्धों पर काम शुरू कर दिया गया था। आधी-अधूरी योजना में हाथ लगाने का कारण यह बताया गया कि बागमती की धारा केवल उसी लम्बाई में स्थिर है अत: वहाँ तटबन्ध बनाये जा सकते हैं। नदी की बाकी ऊपरी लम्बाई में नदी की धारा अस्थिर है अत: वहाँ तटबन्ध बनाना अभी अनुकूल नहीं होगा। सरकार की तरफ से सोरमार हाट से बदलाघाट तटबन्धों के बारे में जो सूचना दी गई उसके अनुसार नदी के दाहिने किनारे पर बाकी योजना में समय-समय पर सुधार किया जाता रहा और इन सुधारों पर 1965 में जाकर रोक लगी।

एम० पी० मथरानी के योजना-प्रस्ताव ने बागमती परियोजना को बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई की दिशा में एक ठोस स्वरूप प्रदान किया। कोई भी तकनीकी प्रकल्प हाथ में लेने से पहले उसकी विस्तृत योजना रिपोर्ट तैयार करनी पड़ती है और यह काम शुद्ध रूप से इंजीनियरों का होता है। जन-प्रतिनिधियों, राजनीतिज्ञों तथा समाजकर्मियों को टीका-टिप्पणी, योजना में सुधार और क्रियान्वयन आदि के लिए दबाव बनाने हेतु योजना की रूप-रेखा पर्याप्त होती है। मथरानी के बागमती नदी सम्बन्धी योजना प्रस्ताव ने इस कमी को पूरा कर दिया था और अब बहस और मांग करने के लिए बुनियादी सामग्री मुहय्या कर दी गयी थी।

3.2.8 डॉ० के० एल० राव की दूसरी बागमती यात्रा–डॉ० के० एल० राव की नवम्बर 1963 की सीतामढ़ी यात्रा के अगले वर्ष 1964 में अधवारा समूह की नदियों में भीषण बाढ़ आई और उसके निदान के लिए अधवारा (खिरोई) नदी पर तटबन्धों का निर्माण किया गया लेकिन यह तटबन्ध कभी सफलतापूर्वक अपना काम नहीं कर पाये और कहीं न कहीं हर साल टूटते रहे। स्थानीय लोगों की अपेक्षा थी कि समूह की सारी नदियों पर तटबन्धों का निर्माण कर के उनमें जगह-जगह पर स्लुइस गेट की व्यवस्था कर दी जाए ताकि अधवारा समूह की नदियों की बाढ़ पर नियंत्रण और सिंचाई की भी व्यवस्था हो। इस तरह की बातें इसी भरोसे पर की जाती हैं कि तटबन्ध हमेशा सलामत रहेंगे और कैसी भी बाढ़ आये, उनका कुछ नहीं बिगड़ेगा। दुर्भाग्यवश यह मान्यता ही गलत है और यह बात प्राय: हर साल सच साबित होती है।

3.2.9 बागमती की 1966 की बाढ़–इन्हीं सब क्रिया-कलापों के बीच 1966 में बागमती नदी एक बार फिर जोर से उफान में आयी जिसमें बूढ़ी गंडक ने भी अपनी सामर्थ्य भर उसका सहयोग किया जिससे सीतामढ़ी तथा मुजफ्फरपुर में भीषण बाढ़ का कहर बरपा। प्रसंगवश उस बाढ़ के बारे में कुछ जानकारी हम यहाँ दे रहे हैं। 12 सितम्बर 1966 के दिन बिहार सरकार की तरफ से विधान सभा में इस बाढ़ का जो ब्यौरा दिया गया था वह कुछ इस तरह का था–

''... 3 तथा 5 जुलाई को सीतामढ़ी में बाढ़ आयी। 173 वर्ग मील भूमि और 544 घर आक्रान्त हुए। भदई की फसल 770 एकड़ पूरी और 473 एकड़ आंशिक रूप से, अगहनी की फसल पूरी 3,424 एकड़ तथा आंशिक रूप से 1,600 एकड़ तथा 300 एकड़ ईख नष्ट हुई। इसके

अलावा 192 घर नष्ट हुए थे।'' पूरा नुकसान करीब साढ़े छः लाख रुपये से ऊपर हुआ था।

किन्तु 23-24 अगस्त को जो बाढ़ आई उसमें जिले के 20 अंचलों के 1,163 वर्ग मील भूमि, 1,275 गाँव तथा लगभग 15 लाख लोग आक्रान्त हुए हैं। 4 आदमी तथा 6 मवेशियों के भी डूब मरने की खबर है। 7,000 घर नष्ट-भ्रष्ट हुए हैं तथा 19,84,762 एकड़ में लगने वाली फसलों में से 59,569 एकड़ की फसलें जिनका अनुमानित मूल्य साढ़े नौ करोड़ के लगभग है, नष्ट हुई हैं। लोगों को राहत पहुँचाने के लिए 119 साहाय्य केन्द्र तथा 880 सस्ते गल्ले की दुकानें चल रही हैं। ... 816 नावें चल रही हैं। 9 सुरक्षा दल कार्य कर रहे हैं जिन्होंने 1508 व्यक्तियों को सुरक्षित जगहों में पहुँचाये हैं। ... 87 चिकित्सा केन्द्र, 3 भ्रमणशील चिकित्सालय चालू हैं... 19 कठिन श्रम योजना द्वारा लोगों को काम दिया जा रहा है। सम्पूर्ण सीतामढ़ी अनुमंडल जलमग्न है तथा बाढ़ का पानी कहीं से हट नहीं रहा है कि लोग खेती-बाड़ी प्रारंभ करें।[36]

1966 की इस बाढ़ पर विधान सभा में बहुत रोषपूर्ण बहस हुई और उस का विश्लेषण बहुत से विधायकों ने अपने-अपने तरीके से किया। उनमें से दो सदस्यों के वक्तव्य को हम यहाँ दे रहे हैं। बहस में भाग लेते हुए बूढ़ी गंडक नदी की बाढ़ का हवाला देते हुए पीताम्बर सिंह ने कहा, ''... इसी तरह से मुजफ्फरपुर में जब 26 तारीख को बाढ़ का खतरा आया तो डॉ० लोक नाथ शर्मा के लड़के डॉ० अनिल कुमार शर्मा ने इसकी खबर अधिकारियों को दी। इसके बाद बाबा हरिदास ने भी डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को खबर दी, फिर सिंचाई विभाग को भी खबर दी गयी, लेकिन 26 तारीख की रात में बाढ़ के खतरे को टालने के लिए कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। 27 तारीख को डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट गए और इनके पहुँचने पर एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर वहाँ पहुँचे और 27 की रात की खबर है कि पेट्रोमैक्स जला कर इंजीनियर लोग ताश खेलते रहे और नदी अपना काम करती रही, बांध के किनारे को काटती रही। यह आपके सिंचाई विभाग का काम है। इससे बढ़कर अक्षमता-अकर्मण्यता और अपराध की कहानी सिंचाई विभाग की और क्या हो सकती है? जिसकी जिम्मेवारी थी कि बांध को बचाये, मुहल्ले को बचाये, शहर को बचाये लेकिन ऐसा न कर के सरकारी कर्मचारी रात भर ताश खेलते रहे और अपनी गैर-जिम्मेवारी का सबूत देते रहे जिसके चलते इतनी बड़ी क्षति हुई।''[37]

उधर रामानन्द सिंह का कहना था, '...मैं निवेदन करूँगा कि इस संबन्ध में जाँच करायी जाय। आप जाँच करेंगे तो पता लगेगा कि एक्जीक्यूटिव इंजीनियर, सुपरवाइजर, एस०डी०ओ०, ठेकेदार आदि जितने हैं, कौन-कौन उन लोगों के सगे सम्बन्धी हैं या नहीं हैं। उन लोगों ने मिल कर बांध कटवा दिया। इस साल जब यहाँ कहा गया तो मुख्यमंत्री वहाँ गए लेकिन इरिगेशन डिपार्टमेन्ट के जो चीफ इंजीनियर हैं वे शीर्षासन करते हैं या क्या करते हैं, उनको अकल से भी सम्पर्क है या नहीं कि बाढ़ आने के पहले काम नहीं करके बाढ़ के समय 70 हजार रुपये का काम शुरू करवा दिया 350 मील में। यह बांध पहले बंधता तो यह दुर्दशा नहीं होती। मैं तो कहूँगा कि उन्हें पेड़ों में लटका कर हैंग कर देना चाहिये।'[38] इस साल फिर 27 अगस्त को आई बाढ़ में खिरोई और दरभंगा-बागमती नदी में आई बाढ़ की वजह से बिसफी, केवटी, सिंघवारा तथा बेनीपट्टी के सैकड़ों गाँव जलमग्न हो गए तथा हजारों

विपत्तियों के उज्ज्वल पृष्ठ-शांतिमय सह-अस्तित्व

मकान धराशायी हुए। इन चारों प्रखण्डों के लिए सरकार की तरफ से मात्र 10 नावों की व्यवस्था हुई जिससे बाढ़ पीड़ितों के अनाज उनके घर में ही पड़े रह गए। खाद्यान्न का अभाव हो गया और लोग सुरक्षित स्थानों पर नहीं जा सके। सरकारी राहत को इन क्षेत्रों में पहुँचने के लिए एक सप्ताह से ज़्यादा का समय लग गया था।[39]

1966 तो जैसे तैसे बीता मगर बाढ़ों ने सीतामढ़ी का पीछा नहीं छोड़ा। 1968 में देश के प्रायः समूचे उत्तरी भाग में जबर्दस्त बाढ़ आयी। यह वही साल था जिसमें कोसी नदी में अब तक का 9,13,000 क्यूसेक का सर्वाधिक प्रवाह देखा गया था। बागमती की पैदा की गई तबाहियाँ बदस्तूर जारी थीं मगर उसने इतिहास रचा 1969 में, जब उसकी धारा में एक बार फिर परिवर्तन हुआ। 1971 में बागमती पर ऊपरी हिस्से में ढेंग से लेकर रुन्नी सैदपुर तक तटबन्धों के निर्माण कार्य में हाथ लगा। 1971 और 1974 भी बाढ़ की दृष्टि से घाटी में बुरे वर्ष थे मगर तब तक बागमती नदी के तटबन्धों का काम आधा-अधूरा ही था और उनके होने या न होने से स्थानीय जनता को कोई खास फर्क नहीं पड़ता था क्योंकि उनमें बहुत से गैप खुले हुए थे।

1974 में इतना फर्क जरूर पड़ा था कि अपने किनारे पर नारायणपुर गाँव के पास बागमती नदी की धारा से पानी ने छलक कर मधकौल होते हुए कन्सार गाँव के पास अपनी पुरानी धार में जाना शुरू दिया। 1976 आते-आते यह परिवर्तन पूरा हो गया। इस धारा परिवर्तन को अगर न रोका जाता तो बागमती पर तटबन्ध बनाने की वर्तमान योजना भी बेकार हो जाती क्योंकि 1969 में हुए परिवर्तन की वजह से नदी को बांधने का कार्यक्रम एक बार पहले ही बदला जा चुका था। नारायणपुर में नदी को अपनी जगह पर बनाये रखने के लिए सरकार को काफी मशक्कत उठानी पड़ गयी थी। इस विषय पर रघुनाथ झा के एक सवाल के जवाब में राज्य के सिंचाई मंत्री ने विधान सभा को बताया (1977), ''...नारायणपुर नाला को बांधने के सम्बन्ध में 4-2-1976 को अभियंता प्रमुख सह विशेष सचिव तथा श्री गर्ग, सदस्य, गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने स्थल का निरीक्षण किया और उन्होंने सुझाव दिया कि नारायणपुर धार में परमीयेबल डाइक, स्क्रीन, बांस के स्पर आदि बांध में बनाये जाएं जिससे धार में सिल्ट जमा होने की संभावना होगी और धार स्वाभाविक रूप से धीरे-धीरे बन्द हो जाएगी। इसी प्रयोजन के साथ कार्य कराये गए। जिसमें काफी सफलता मिली और सिल्ट डिपाजिट भी हुआ। 1976 में 12-5-76 को नदी में अचानक पानी आ जाने के कारण इन कार्यों का आउट फ्लैंकिग हो गया और इन कार्यों की क्षति हुई। लेकिन फिर भी स्क्रीन तथा बांस के स्पर आदि लगाने की कार्रवाई की जाती रही। इस पर गत वर्ष 5.34 लाख रुपया का व्यय किया गया था। बागमती की छिछली नदी होने के कारण नये नये चैनेल के बनने तथा अन्य चैनेलों में सिल्टेशन होने की समस्या बराबर बनी रहती है। अतः इस सुझाव देने के लिये श्री ए० एन० हरकौली, केन्द्रीय जल आयोग, नई दिल्ली को अनुरोध किया गया। उन्होंने स्थल का निरीक्षण 17.2.77 से 19.2.77 के बीच किया। उन्होंने सुझाव दिया कि इस नारायणपुर चैनेल को बन्द कर दिया जा सकता है। लेकिन, कई अन्य बिन्दुओं पर विचार करते हुए विभाग ने श्री हरकौली, सदस्य, केन्द्रीय जल आयोग को पुनः विचार करने तथा सुझाव देने का अनुरोध किया है। इस वर्ष दो क्रियाशील बागमती की धारा-बेलवा धार तथा नारायणपुर धार में परमिएबल स्क्रीन देने का निर्देश क्षेत्रीय पदाधिकारियों को दिया गया है ताकि इस धाराओं में सिल्ट जमा हो जाए और इन धारों की स्वाभाविक मृत्यु हो जाय।''[40]

मगर इसके पहले कि नारायणपुर धार पर काबू पाया जाता 1975 में बिहार में एक भयंकर बाढ़ आयी। इस साल अगस्त के अंत में पटना शहर में सोन और गंगा नदियों का पानी घुस गया था जिसे निकलने में हफ्तों का समय लग गया था। इस वर्ष बागमती घाटी में जो कुछ भी घटित हुआ, उस पर एक नज़र डालने की कोशिश करते हैं।

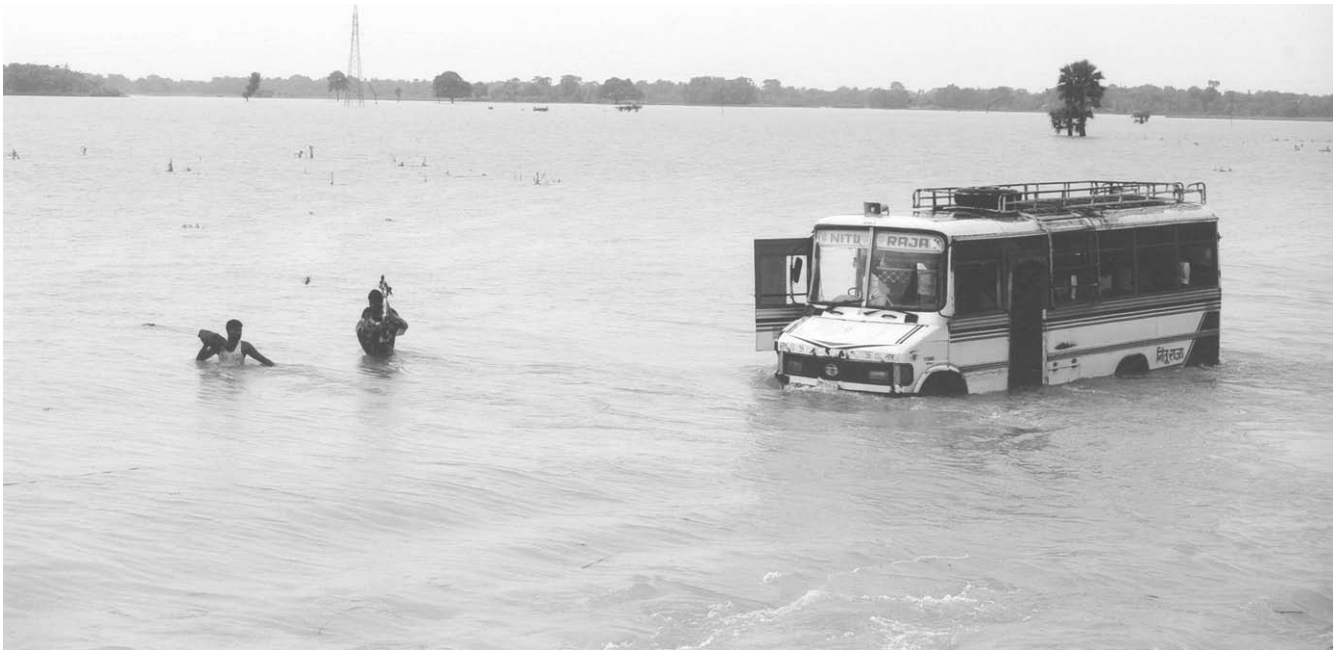

मुसाफिर! जायेगा कहाँ?

3.2.10 1975 की बागमती की बाढ़–वर्ष 1975 में बागमती नदी के ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक के अधिकांश तटबन्ध का निर्माण कार्य पूरा हो चुका था मगर उसमें जगह-जगह पर स्लुइस गेट के निर्माण के लिए गैप छोड़ा हुआ था। इस बार नदी ने ढेंग पुल पर अपने लेवेल के पिछले सभी रिकार्डों को तोड़ दिया और यह पानी इन्हीं छोड़े गए गैप से तीर की तरह बाढ़ के रूप में तथाकथित रूप से सुरक्षित क्षेत्रों की ओर निकला और उसके सामने जो कुछ भी पड़ा उसे बरबाद कर दिया।

इस बार बागमती ढेंग और हायाघाट में खतरे के निशान से क्रमशः 1.90 मीटर (सवा छः फुट) और 2.34 (साढ़े सात फुट) ऊपर बही। ढेंग पुल के पास नदी का अब तक का जो सबसे ऊँचा लेवेल था, इस बार नदी उसे पार कर के 72.00 मीटर के लेवेल तक बही। छः बार नदी ने ढेंग में खतरे के निशान को पार किया और 14 दिनों तक उसी स्तर पर बहती रही जबकि हायाघाट में नदी खतरे के निशान के ऊपर तो सिर्फ दो बार बही पर 34 दिनों तक वहाँ बनी रही।[41] इस साल की बाढ़ में बागमती घाटी के भारतीय भाग में सीतामढ़ी जिले के डुमरा, रीगा, मेजरगंज, बैरगनियाँ, शिवहर, पिपराही, बेलसंड तथा मुजफ्फरपुर के कटरा, औराई, गायघाट; पूर्वी चम्पारण के ढाका, पताही, पकड़ी दयाल, मधुबन और दरभंगा जिले के सिंघवारा, हायाघाट और बहादुरपुर प्रखंडों में भारी तबाही मची। बाढ़ का पानी 1890 वर्ग किलोमीटर पर फैला, 1.58 लाख हेक्टेयर पर लगी खड़ी फ़सल मारी गई, 74,939 घर घिरे, आठ लोगों की जान गई और जान-माल के कुल नुकसान की कीमत सात करोड़ सतहत्तर लाख रुपये आंकी गई।[42]

बाढ़ की एक बानगी यह भी

पीताम्बर सिंह का बिहार विधान सभा में कहना था, ''...पिछले 60 साल के बाद, खास कर 1914 के बाद ऐसी बाढ़ आयी है। इससे पता यह चलता है कि निश्चित है कि इसमें परिवर्तन हो रहा है। इस ओर एक्सपर्ट को ध्यान देना चाहिये कि इसका इलाज करने की कोशिश करनी चाहिये। इस साल 24 घण्टा पहले में 26 इंच पानी हुआ था और 7 फीट पानी की दीवार वहाँ से आ रही थी। 24 घण्टा पहले इस बात की सूचना देने के बाद भी सरकार की ओर से कोई व्यवस्था नहीं की गयी। नतीजा यह हुआ कि इतना पानी आ गया कि लोग रेलवे लाइन पर, जिस पर 1-2 फीट पानी बह रहा था, 40-50 दिनों तक खड़े रहे, कहीं बैठने की जगह नहीं थी। रेलवे लाइन पर जब यह नजारा था, तो आप समझ सकते हैं कि बाकी गाँव के लोगों की क्या हालत होगी। ...दूसरी बात इस सिलसिले में चर्चा आयी है कि 8 स्थानों में बांध टूटा है।... इस पर सरकार को देखना चाहिए कि बांध टूटने का कारण क्या है, और बांध को गत साल ही मजबूत क्यों नहीं किया गया? सिंचाई विभाग का जब कार्मचारी भी वहाँ पर नहीं था तो यह कहना कि चूहा के मान के कारण बांध टूट गया, कहाँ तक सही है जबकि बांध 9 बजे रात में टूटा है? ...बांध टूटने के बाद यहाँ के पक्के मकान तथा अन्य सभी घर उजड़ गए और आज वहाँ पूरा गाँव नहीं है। आज वहाँ की यह स्थिति है। लोग दूसरे-दूसरे के गौशाला में रह रहे हैं। चूहे की बात जो कही जा रही है वह मात्र बहाना बनाने की कोशिश की जा रही है। अतः इसकी जांच करने की जरूरत है। ...साथ ही इसके लिए जो जिम्मेवार हों, उसको सजा देने की भी जरूरत है।''[43]

जिस परिस्थिति में इस बार सीतामढ़ी के लोग फंस गए थे उसमें बिना बाहरी मदद के जिन्दगी बसर कर पाना नामुमकिन था मगर सरकार रिलीफ पहुँचाने में कारगर नहीं हो पा रही थी। त्रिवेणी प्रसाद सिंह ने सदन को बताया, ''सीतामढ़ी की हालत यह है कि वहाँ पर जितनी नदियां हैं, बागमती, लखनदेई, अधवारा, मालूम होता था कि सभी ने एक साजिश बना कर, कॉन्सपिरेसी करके चढ़ाई कर दिया है वहाँ की पोपुलेशन पर। वहाँ की हालत यह है कि मिट्टी का एक भी घर बाकी नहीं है, जो न गिरा हो। आज खर के दो चार परसेन्ट घर बाकी हैं, वह भी ज्यों-ज्यों बाढ़ घटती है, गिरते जा रहे हैं। लोगों को खाने के लिए नहीं है। हमारे क्षेत्र में बाजपट्टी, रुन्नी सैदपुर और पुपरी यह 3 प्रखंड पड़ते हैं, इसके अलावा 12 प्रखंड सीतामढ़ी में हैं। इन प्रखंडों में करीब 5 तारीख तक रोटी बांटी गयी और हालत यह थी कि आज रोटी बनी, कल पहुँची और परसों बांटी गयी। यह रोटी मनुष्य के खाने के लायक नहीं थी। इसलिए लोग उसे जानवरों को खिला देते थे। अब कुछ खैरात का काम हुआ। हमारे रुन्नी सैदपुर प्रखंड में 200 क्विंटल चौथे रोज एलौटमेंट हुआ, परसों उसको उठाकर ले गए, कल से वितरण शुरू हुआ है 9 दिनों के बाद। और, वह भी कितना परसेन्ट वहाँ मिलता है? किसी पंचायत में एक प्रतिशत, किसी में डेढ़ प्रतिशत, ज्यादा से ज्यादा 2 प्रतिशत, 80-90 परसेन्ट को खाने के लिए नहीं है।''[44] वे चाहते थे कि ऐसी व्यवस्था की जाए कि कम से कम 70-75 प्रतिशत प्रभावित लोगों तक राहत पहुँचाई जाए।

सदन में सिंचाई विभाग के अधिकारियों के प्रति गुस्सा उफान पर था और अब तक इमरजेन्सी भी लग चुकी थी। गुस्से की यह अभिव्यक्ति इन अधिकारियों को गिरफ्तार करने की मांग तक जा पहुँची। **रमई राम का कहना था, ''सिंचाई विभाग के पदाधिकारीगण सालों भर मोटरकार में पेट्रोल लेकर अपने परिवार के साथ घूमते हैं और नाजायज टी० ए० लेते हैं। जब बाढ़ आती है, तो मरम्मती और देख-रेख का काम शुरू करते हैं और झूठा बिल बनाते हैं। इसलिए मैं सरकार से अनुरोध करता हूँ कि जो बांध टूट गया है, उसकी जांच की जाए और चीफ इन्जीनियर से लेकर ओवरसियर तक, मैं कहता हूँ कि, जिसकी जवाबदेही के कारण बांध टूटा है, उनको जेल में डाल दिया जाय। बाढ़ के कारण आदमी और जानवर बह गए हैं, मैं खुद नाव में चढ़ कर 7 दिनों तक हर गाँव में गया हूँ, जानवर बह गए हैं, चारा तक नहीं मिल रहा है, चारों तरफ पानी बह रहा है।''**[45] विधायक भोला प्रसाद ने उन धाराओं का भी ज़िक्र किया जिनके तहत इंजीनियरों के खिलाफ कार्यवाही की जा सकती थी। **''तो, जो अभियंता बांध के मेन्टीनेन्स के चार्ज में हैं उनको आप ससपेन्ड कीजिए। उन्हें मीसा के अन्दर, डी० आई० आर० के अन्दर बंद कीजिए। नहीं तो, इमर्जेन्सी का कोई माने नहीं है; क्योंकि कोई वजह नहीं है कि लोग मेन्टीनेन्स के चार्ज में रहें और बांध टूट जाय। ऐसा नहीं करेंगे, तो बाढ़ का दौर चलता रहेगा। आप दस-पाँच अभियंताओं को पकड़ कर बन्द नहीं करते हैं, जिनकी गलती से बांध टूटा है तो यह बाढ़ आती ही रहेगी। ...बाढ़ प्राकृतिक प्रकोप नहीं है, लोगों का बनाया हुआ प्रकोप है। लूट चल रही है और जनता पर जुल्म ढाया जा रहा है।''**[46]

हालात बागमती के निचले इलाके में भी अच्छे नहीं थे और अब कोसी, कमला तथा सोरमार हाट से बदलाघाट तक 1950 के दशक में बने बागमती के निचले इलाकों में बने तटबन्धों का दुष्प्रभाव सामने आने लगा था। रामाश्रय राय का मानना था, ''इस बार की बाढ़ के कारण समस्तीपुर जिले के हसनपुर, सिंघिया, वारिसनगर, कुशेश्वर स्थान और रोसड़ा पूर्ण रूप से प्रभावित हुए हैं। मेरे ख्याल में इसके दो कारण हैं। एक तो बिहार के इंजीनियरों ने स्थायी रूप से सिंघिया, कुशेश्वर स्थान, हसनपुर आदि जगहों को बाढ़ग्रस्त क्षेत्र घोषित कर दिया है। बिहार की

बहुत कठिन है डगर...

जितनी भी नदियां–कमला नदी, करेह नदी, बागमती नदी, कोसी नदी हैं सभी के मुंह को लाकर इस इलाके में छोड़ दिया गया है। इसके लिए सरकार के पास कोई योजना नहीं है। मैं मुख्यमंत्री से आग्रह करूंगा कि जब इसके लिए कोई योजना नहीं है, तो वहाँ के लोगों को वहाँ से हटा कर दूसरी जगह रख दें।''[47] लगभग 35 वर्षों के बाद भी उस इलाके की स्थिति में अभी तक कोई परिवर्तन नहीं आया है।

बागमती के ऊपरी हिस्से में अब तटबन्ध बन चुके थे और यह भी अनुभव किया गया कि इन तटबन्धों की मदद से बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में कुछ होने जाने वाला नहीं था तब नुनथर बांध की बात शुरू हुई। राम स्वरूप सिंह का कहना था, ''इस बार जो भयंकर बाढ़ आयी है, खासकर सीतामढ़ी में, उसके लिये सरकार की गलत नीति ही जिम्मेवार है, क्योंकि बागमती के किनारे जो बांध बांधने का फैसला था और जिसे फेजवाइज करना था उसे नहीं करके रामनगर से लेकर सैदपुर के सारे इलाके में तटबंध के बांधने का काम शुरू किया गया। वह भी ऐसा हुआ कि कहीं पर एक मील तक काम छोड़ दिया गया, कहीं आध मील तक छोड़ दिया गया, कहीं एक सौ चैन तक छोड़ दिया गया। निश्चित दायरे में काम नहीं किया गया, इसलिये बाढ़ का यह रूप आया। पिछले सौ वर्षों में सीतामढ़ी में इस तरह की बाढ़ नहीं आयी थी। 1954 में सीतामढ़ी में बाढ़ आयी थी, लेकिन वह भी इस रूप में नहीं आयी थी। अभी सीतामढ़ी की सभी सढ़कें बर्बाद हो चुकी हैं, अभी भी मुजफ्फरपुर से संबंध बिलकुल टूटा हुआ है, न बस से इसका संबंध है न रेल से, इसलिये इसकी गम्भीरता को आप समझ सकते हैं... पिछली बार हमलोगों ने कहा था कि बसबिट्टा के नजदीक बांध टूटता है, इस बार भी इस निकट का बांध टूटा है जिसके चलते हमलोगों के इलाके में बाढ़ आयी है। हमलोग बराबर कहते आये हैं कि बागमती के इस स्थान पर बांध देना जरूरी है। नेपाल से मिल कर एक जलाशय बनाना जरूरी है। इस साल जो बाढ़ आयी है उससे नेपाल को भी काफी नुकसान हुआ है, और मैं समझता हूँ कि अगर सरकार की ओर से प्रयास किया जाए, तो हमलोग इसको करा सकेंगे। इसलिये सरकार को इस पर विचार करना चाहिए।''[48] कहना न होगा कि तटबन्धों के निर्माण के साथ ही बागमती ने तटबंधों में अपनी गिरफ्तारी के खिलाफ बग़ावत शुरू कर दी थी और पिपराही प्रखंड के नारायणपुर गाँव के पास यह बन्धन तोड़ कर बाहर निकल आने की फिराक में थी। इस बाढ़ और विधान सभा में हुई बहस की यह एक और ख़ासियत थी कि इसमें भविष्य में होने वाली सारी घटनाओं और वाद-विवाद की बुनियाद रखी गयी थी। इस समय देश में इमरजेन्सी लग चुकी थी और उसके साथ ही इंजीनियरों के लिए मीसा और डी०आइ०आर० के प्रावधानों को लागू करने का भी प्रस्ताव आया। तटबन्धों का निर्माण कार्य पूरा होने के पहले ही उनकी उपयोगिता पर प्रश्नचिह्न लग चुका था और मोह भंग होने की स्थिति में 1953 में प्रस्तावित नुनथर बांध पर विधान सभा में टिप्पणी सुनाई पड़ी। रिलीफ में मिलने वाली सामग्री का परिमाण अब तक बहस का मुद्दा हुआ करता था पर अब उसकी गुणवत्ता पर भी टिप्पणी शुरू हो गयी थी।

3.2.11 1978 की बागमती की बाढ़–1978 आते-आते तक बागमती नदी का ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक का तटबन्ध प्राय: पूरा हो चुका था। तटबन्धों में बीच-बीच में जो गैप छूटे हुए थे उन्हें भी या तो पाट दिया गया था या वहाँ डिज़ाइन के अनुसार स्लुइस गेट बनाये जा चुके थे। तटबन्ध निर्माण के बाद यह पहला मौका था जब तटबन्धों को अपनी उपयोगिता सिद्ध करनी थी। 1978 का वर्ष बिहार में बाढ़ की दृष्टि से एक बुरा साल था। इस साल बाढ़ की पहली दस्तक जुलाई महीने में पड़ी और इसी दौर में बागमती नदी ने अपने खतरे के निशान को न केवल पार किया बल्कि 16 जुलाई को नदी में अब तक का सर्वाधिक प्रवाह 6370 क्यूसेक (2,25,000 क्यूसेक) भी देखा गया। इस दिन ढेंग का जलस्तर 72.18 मीटर था जो कि अब तक के सर्वाधिक जलस्तर 72.01 मीटर से अधिक था। बेनीबाद में बाढ़ का पानी पिछले सभी रिकार्डों के ऊपर 49.514 मीटर तक गया। अगस्त महीने में भी नदी का पानी तटबन्धों के निर्माण के कारण अटके पानी की निकासी के लिए ढेंग, बेनीबाद और हायाघाट में खतरे के निशान के ऊपर बहा। इस बार स्थानीय लोगों ने बागमती के बायें एफ्लक्स बांध को ढेंग पुल के ऊपर कई जगह काटा और ढेंग के नीचे भी इस बांध को लोगों ने तीन जगह काटा। लालबकेया के तटबन्ध की भी वही गत बनी जिसकी वजह से पूर्वी चम्पारण में तबाही हुई और अधवारा समूह की नदियों के कारण सीतामढ़ी, मधुबनी, दरभंगा और मुजफ्फरपुर जिले तबाह हुए।[49]

बाढ़ इस बार राज्य में जुलाई, अगस्त और सितम्बर तीनों महीनें बनी रही। बाढ़ 1971, 1974, 1975 और 1976 में भी अच्छी खासी थी और इसके पहले कि पिछली बाढ़ से हुई तबाही को समेटा जाता, अगली बाढ़ हाजिर थी। रुन्नी सैदपुर के उत्तर में कहीं-कहीं इन तटबन्धों का काम बाकी था और इन निर्माणाधीन बागमती तटबन्धों की तो हालत खस्ता थी ही, सीतामढ़ी-मुजफ्फरपुर मार्ग, रीगा-मेजरगंज मार्ग और सीतामढ़ी-सुरसंड मार्ग भी जर्जर अवस्था में पहुँच गया।[50] राष्ट्रीय स्तर पर इस साल पश्चिम बंगाल में अक्टूबर के पहले हफ्ते में दुर्गापूजा के समय अभूतपूर्व बाढ़ आई थी और सबका ध्यान वहीं केन्द्रित था।

3.2.12 1993 की बागमती की बाढ़–1993 में बागमती नदी में बाढ़ दो किस्तों में आयी थी। पहली बार बाढ़ का ताण्डव 21 जुलाई से देखा गया जबकि दूसरा दौर अगस्त के दूसरे सप्ताह में देखने में आया जिससे जुलाई में हुई तबाही दोगुनी हो गयी। बारिश के मौसम की शुरुआत में इस साल बाढ़ आने के कोई आसार नहीं थे और 15 जुलाई तक स्थिति प्राय: सामान्य बनी हुई थी। अगर कहीं कोई चर्चा थी तो वह सूखे की होती थी। उसके बाद अचानक, नेपाल में जोर से बारिश शुरू हुई जिससे बागमती, अधवारा, कमला-बलान और गंडक नदियों के बहाव क्षेत्र में स्थिति काफी गंभीर हो गयी। वर्षापात इतना तेज और एकाएक हो गया कि बागमती के तराई वाले भाग में एक दिन के अन्दर जलस्तर में 10 मीटर की वृद्धि हुई। नेपाल में भारतीय दूतावास के प्रथम सचिव ए० आर० घनश्याम द्वारा निदेशक-विदेश मंत्रालय, नई दिल्ली, कमिश्नर (बी०/एन०) जल संसाधन मंत्रालय, नई दिल्ली और सचिव, जल-संसाधन विभाग (बिहार सरकार) को भेजे गए एक फैक्स संवाद (दिनांक 21.7.1993) के अनुसार ''पिछले तीन दिनों में नेपाल के पूर्वी प्रक्षेत्र में कई नदियों के जलग्रहण क्षेत्र में भारी बारिश हुई जिसकी वजह से बाढ़ और भू-स्खलन की घटनाओं में त्रिभुवन राजपथ पर भारत द्वारा बनाये गए मैंसे पुल और पृथिवी राजपथ पर मा एखू पुल समेत 8 पुल बह गए। इन दोनों पुलों के ध्वस्त हो जाने की वजह से काठमाण्डू का तराई के साथ सम्पर्क समाप्त हो गया है। आधिकारिक सूचना के अनुसार 50 लोग मारे गए हैं और जान-माल के

नुकसान की खबरें अभी भी आ रही हैं।'' संवाद में आगे कहा गया, ''...जल विज्ञान विभाग की सूचना के अनुसार त्रिशूली और बागमती नदियां अपने सामान्य स्तर से 8 से 10 मीटर की ऊँचाई पर बह रही हैं और त्रिशूली तथा बागमती के पूर्वी किनारे के बीच में भारी नुकसान उठाना पड़ा है। पूरब-पश्चिम राज पथ के दक्षिण में गौर बाजार जैसे कुछ कस्बे आज सुबह 5 से 6 फीट पानी में डूबे हुए हैं। पंदारे में भारत की सहायता से निर्मित एक रज्जु मार्ग और वर्षा नापने का एक केन्द्र बह गया है। कुलेखानी जल विद्युत गृह का पेनस्टॉक पाइप बह जाने के कारण बिजली की आपूर्ति में अतिरिक्त कटौती हुई है... मौसम विभाग के विशेषज्ञों का कहना है कि आने वाले 48 घन्टों में बारिश और भी ज्यादा होगी जिससे नुकसान बढ़ सकता है।''

यह सारा का सारा पानी नेपाल में तबाही मचाता हुआ भारत की ओर बढ़ा जहाँ उसे बागमती नदी के बाईं ओर मेजरगंज से रुन्नी सैदपुर तक 73 कि०मी० लम्बा तथा दाहिने किनारे पर 56 कि० मी० लम्बा तटबन्ध मिलता है। बैरगनियाँ का रिंग बांध उस समय मात्र 6.7 किलोमीटर लम्बा था। बागमती परियोजना का काम बन्द कर दिये जाने के कारण यह तटबन्ध अधूरे थे इसलिए बिहार का जल-संसाधन विभाग भी यह मानता था कि इन तटबन्धों से मिलने वाली सुरक्षा भी अधूरी थी। बागमती के बहते पानी ने पहले तो 21 जुलाई की सुबह सीतामढ़ी जिले के मेजरगंज प्रखंड में सात स्थानों पर इन तटबन्धों को तोड़ा फिर उसी दिन मूसाचक और नन्दवारा समेत तीन स्थानों पर बैरगनियां रिंग बांध को तोड़ा। इन दरारों की लम्बाई क्रमशः 765 मीटर और 366 मीटर थी। नतीजा यह हुआ कि लगभग पूरा मेजरगंज और बैरगनियाँ प्रखंड अभूतपूर्व बाढ़ की चपेट में आ गए। बेलवा में तटबन्ध पहले से ही खुला हुआ था जो कि पहले से भी ज्यादा फैल गया और अब बेलसंड, परिहार, तरियानी, पिपराही और शिवहर प्रखंड बागमती के निशाने पर थे। तटबन्ध क्षतिग्रस्त होने के कारण कुल 1.25 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर पानी फैला जबकि इन तटबन्धों के निर्माण के फलस्वरुप 2.90 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा मिलने वाली थी।[51]

बिहार राज्य के दूसरे सिंचाई आयोग (1994) की रिपोर्ट के अनुसार बाढ़ के पानी की तीव्रता इतनी ज़्यादा थी कि 24 जुलाई के दिन ढेंग के पास नदी के पानी का स्तर क्रमशः 73.00 मीटर और डुब्बाघाट में पानी का लेवेल 61.86 मीटर देखा गया। यानी इस साल ढेंग पुल पर पानी का लेवेल अब तक के सर्वाधिक लेवेल 71.80 मीटर (1987) से लगभग 4 फुट अधिक था जबकि डुब्बाघाट पर इसने 1978 में देखे गए अपने सर्वाधिक लेवेल की बराबरी कर ली थी। नतीजा हुआ कि जब बैरगनियाँ रिंग बांध में दरार पड़ी तो उसके 24 गाँव बाढ़ के पानी में डूब गए। बसबिट्टा के आस-पास बागमती का तटबन्ध जो ढेंग पुल के उत्तर में टूटा वह सारा पानी मेजरगंज और रीगा होते हुए सीतामढ़ी पहुँच गया और फिर लखनदेई और मनुस्मारा में भी घुस गया तथा उन इलाकों को डुबाया जहाँ से होकर यह नदियाँ बहती हैं। 20 जुलाई की दोपहर से अधवारा समूह की नदियों में भी बाढ़ आ गई और शाम होते-होते परिहार, सुरसंड और सोनबरसा प्रखंड पूरी तरह से बाढ़ की चपेट में आ गए और सड़कों तथा रेल लाइन पर बने पुलों को भारी नुकसान पहुँचा। बैरगनियाँ को ढेंग से जोड़ने वाली रेल लाइन हवा में झूल गयी।[52] 22 जुलाई को राहत और बचाव कार्यों के लिए सीतामढ़ी में सेना को उतारना पड़ गया था।

इस पूरे मसले को लेकर बिहार विधान मंडल में अच्छी-ख़ासी बहस हुई। जल-संसाधन विभाग को 18 से 20 जुलाई के बीच नेपाल में हुई भारी वर्षा का समाचार मिल चुका था और राज्य के जल-संसाधन मंत्री ने बिहार विधान सभा को भविष्य में आने वाले ख़तरे के प्रति आगाह कर दिया था। यह एक अलग बात है कि उनके बिहार विधान सभा को सूचना देने के पहले जो नुकसान होना था वह हो चुका था। विधान परिषद् में डॉ० पद्माशा झा ने बागमती घाटी में बाढ़ से हुए नुकसान पर भारी टोका-टाकी के बीच अपना मंतव्य रखा और सरकार से मांग की कि व्यापक पैमाने पर राहत कार्य चलाया जाए। उन्हें एक बार बीच में टोकने वालों को धमकाना भी पड़ा ''...यदि इस तरह से बोलियेगा तो सीतामढ़ी में घुसने नहीं दूँगी।''[53] तटबन्धों के चिथड़े उड़ जाने पर डॉ० महाचन्द्र प्रसाद सिंह का प्रश्न था, ''...हम ताल नहीं ठोंकते थे, लेकिन लालू प्रसाद जी और माननीय जगदानन्द सिंह जी ताल ठोंकते थे कि हर तटबन्ध को मजबूत करेंगे। टूटेगा तो इंजीनियर के विरुद्ध कार्यवाही करेंगे... इसलिए हम पूछना चाहते हैं कि तटबन्ध को आप मजबूत करने की स्थिति में थे या नहीं? ...किसको जवाबदेही आपने दी थी कि तटबन्ध को कौन नहीं टूटने देगा? कौन-सा इंजीनियर था?''[54] उस समय लालू प्रसाद यादव राज्य के मुख्यमंत्री और जगदानन्द जल-संसाधन मंत्री थे।

इस बहस में केन्द्र सरकार को नेपाल सरकार से बातचीत और समझौता न करने के लिए उलाहना भी दिया गया। रघुवंश प्रसाद सिंह का कहना था, ''...ये जो भारत-नेपाल का समझौता (है) वह जब तक होगा नहीं, बाढ़ से बरबादी नहीं रुक सकती और कहते हैं कि भारत सरकार से लोग मांग करते हैं तो बिहार की जो सम्पदा है खान-खनिज की, उसकी मालिक है भारत सरकार लेकिन बिहार (की) जो प्राकृतिक आपदा है, अब बाढ़ का समय आता है, सुखाड़ का समय आता है, उसका मालिक है बिहार, जहाँ वित्तीय संकट है ...इसलिए मैं भारत सरकार से मांग करता हूँ कि अंतर्राष्ट्रीय नदियों पर नियंत्रण के लिए भारत-नेपाल के बीच में समझौता होना चाहिये।''[55] उधर अब्दुल बारी सिद्दीकी बाढ़ नियंत्रण क्षेत्र में पैसों की बरबादी और व्यवस्था में व्याप्त व्यापक भ्रष्टाचार पर चिन्तित थे। **उनका कहना था, ''...सरकार अरबों रुपये फ्लड कन्ट्रोल के नाम पर, बांध बनाने के नाम पर, कोसी सुरक्षा के नाम पर खर्च कर चुकी है। इसकी भी समीक्षा होनी चाहिये कि अरबों रुपये खर्च होने के बावजूद ये आम समस्या, हर वर्ष की समस्या प्राकृतिक विपदा के रूप में हमारे देश में क्यों बनी है? ...अरबों रुपये, करोड़ों रुपये जो बाढ़ सुरक्षा के लिए खर्च हुए वह किनके पॉकेट में करोड़ों-लाखों रुपया गया?''**[56]

इस पूरी बहस का जवाब देते हुए राज्य के जल-संसाधन मंत्री का कहना था, ''...लेकिन हमारी समझ है, नेपाल में समस्या है और हल कर रहे हैं बिहार के भीतर। रोग कुछ है, हम क्यूरेटिव मेडिसिन कर ही नहीं रहे हैं, हम तो सिम्पटॉमिक मेडिसिन का उपाय कर रहे हैं। मतलब कि बाढ़ आ जाए तो (पानी) थोड़ा बांध के भीतर से बहते हुए समुद्र में चला जाए, पानी बरस रहा है नेपाल में, पानी जा रहा है समुद्र में और बीच में पड़ता है बिहार। महोदय, मैं जानता हूँ कि जब आप कहते हैं कि बाढ़ से बचाने के लिए आप ने क्या किया, तो बाढ़ से बचाने के लिए जो 40 साल में हमारे एम्बैन्कमेन्ट बने हैं, हम उसी को ठीक करते हैं।'' 1993 में ही झंझारपुर के पास कमला नदी का दायाँ

तटबन्ध सोहराय गाँव के पास टूट गया था। उस घटना का हवाला देते हुए जल-संसाधन मंत्री का कहना था, ''...पहले सरपंच ने खबर दी थी कि रिसाव हो रहा है। (उस) दिन सब हमारे एक्ज़िक्यूटिव इंजीनियर को, हमारे असिस्टेन्ट इंजीनियर को, हमारे जूनियर इंजीनियर को उन्होंने कहा कि टूट जायेगा तटबंध, हम को बोरा दें, हम लोग अपने से काम कर लेंगे। आश्चर्य है महोदय! इतने हरामखोर हमारे पदाधिकारी थे कि तटबन्ध को टूट जाने दिया इसलिए, लेकिन लोगों को बोरा तक मुहय्या नहीं किया पैसे से, साधन से और वह तटबंध मानवीय भूल के कारण ही टूट गया और नतीजा था, आपने कहा था कि मुख्यमंत्री और जल-संसाधन मंत्री ने कहा था कि यदि तटबन्ध टूटेगा तो हम सबको तोड़ डालेंगे और मैं आपको सूचना देना चाहता हूँ कि आपके सदन में आने के पहले मैं सभी अफ़सरों को सस्पेंड कर के आया हूँ।''[57]

उधर जगन्नाथ मिश्र ने विधान सभा में सरकार की खिंचाई करते हुए कहा, ''...सिंचाई मंत्री ने पहले कहा था कि कोई तटबन्ध नहीं टूटेगा, इस साल भी ऐलान किया था कि कोई तटबन्ध नहीं टूटेगा लेकिन अनेक स्थानों पर टूट गया है बागमती का, गंडक का, फिर हमारा कमला बलान का टूट गया है और आगे भी इन पर दबाव जारी है। जितने तटबन्ध हैं सब पर दबाव जारी है। किसी क्षण टूट सकता है। इसलिए ऐलान मत कीजिये, घोषणा मत कीजिये और काम करिये तथा तटबन्धों की हिफाजत करिये...।''[58]

यह एक अलग बात है कि अफ़सरों को सस्पेंड कर देने से और नेपाल में समस्या का समाधान खोजने से उन 15.10 लाख लोगों का कोई भला नहीं होने वाला था जो सीतामढ़ी जिले में इस बाढ़ की चपेट में आये थे जिनकी 8 लाख हेक्टेयर पर लगी खड़ी फ़सल को इस बाढ़ ने धो दिया था। इस बाढ़ ने 1,35,600 परिवारों को बेघर किया और 38 मनुष्यों और 34 जानवरों को अपने साथ ले गयी।[59]

बागमती नदी घाटी में आने वाली प्रायः हर बड़ी बाढ़ अब पिछले सारे रिकार्डों को तोड़ने का ही काम करती है। यह तो स्वाभाविक ही है कि तटबन्धों के बीच कैद हो जाने के बाद नदी की पेंदी में गाद बैठेगी और उसका जल स्तर ऊपर उठेगा। ऐसी परिस्थिति में अलग-अलग वर्षों में अगर नदी में एक ही प्रवाह आये तो भी नदी का उच्चतम बाढ़ लेवेल ऊपर की ओर उठता ही जायेगा और नदी पहले से ज़्यादा खतरनाक होती जायेगी। बागमती में बाढ़ 1995, 1996, 1998, 2001 तथा 2002 में भी काफी परेशानी पैदा करने वाली थी। 1998 तथा 2001 में क्रमशः राहत की मांग करने और राहत लेने के लिए आये हुए लोगों पर सीतामढ़ी समाहरणालय और मुजफ्फरपुर के औराई प्रखंड के मुख्यालय पर पुलिस ने गोलियाँ भी बरसाईं। इस प्रसंग पर भी हम आगे चर्चा करेंगे।

3.2.13 बागमती की बाढ़ 2004–2004 में बागमती घाटी में बाढ़ की शुरुआत कुछ जल्दी हो गयी और एक दिल दहला देने वाली दुर्घटना में 7 जून को भनसपट्टी के पास बारातियों से भरी एक बस उफनती बागमती की चपेट में आ गयी। इस बस में 32 बाराती सवार थे जिनमें से सरकारी सूत्रों के अनुसार 6 लोगों को बचाया जा सका। बाकी सब असमय में आयी इस बाढ़ की भेंट चढ़ गए।

उसी दिन शिवहर को सीतामढ़ी से जोड़ने वाले राष्ट्रीय उच्च पथ 104 पर डुब्बा पुल के समीप एक नाव दुर्घटना में 24 लोगों के मारे जाने की खबर है। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार इस नाव पर सवारियों की 5 मोटर साइकिलें और 10 साइकिलों के साथ लगभग 60 लोग सवार थे। जिला प्रशासन ने केवल 10 व्यक्तियों के मारे जाने की पुष्टि की। आंकड़ों की बात न भी करें तो भी इस वर्ष बाढ़ की शुरुआत बहुत ही भयानक तरीके से हुई।

इन दोनों घटनाओं के संदर्भ में राज्य की तत्कालीन मुख्यमंत्री राबड़ी देवी का एक बयान ''नेपाल से पानी छोड़े जाने से बाढ़ आई।'' शीर्षक से दैनिक हिन्दुस्तान-पटना संस्करण, 9 जून 2004 में छपा। अखबार ने लिखा, ''यहाँ जारी सरकारी प्रेस विज्ञप्ति के मुताबिक मुख्यमंत्री ने कहा है कि नेपाल से बिना सूचना दिये अधिक पानी छोड़ दिये जाने के कारण असामयिक बाढ़ आ गयी है। सीमातढ़ी के जिलाधिकारी ने मुख्यमंत्री को सूचित किया है कि असामयिक बाढ़ के कारण यह दुर्घटना हुई है।'' मुख्यमंत्री के इस बयान को लेकर बिहार विधान सभा और विधान परिषद् में तीखी बयानबाजी हुई। उस समय इन दोनों संस्थाओं का वर्षा कालीन सत्र चल रहा था।[60]

जल-संसाधन विभाग के 2004-05 के बजट पर चल रही बहस के दौरान विधायक राम प्रवेश राय ने कहा, ''...कांग्रेसी राज्यों में नहरों से सिंचाई की सुविधा प्रदान करने की योजना बनी थी, लेकिन आज भी पूरे बिहार में माननीय मंत्री जी के इलाके को छोड़ कर कहीं कोई सुविधा नहीं है। ...महोदय, यह जल प्रबन्धन की बात कहते हैं। यह कल परसों ही कहा जा रहा था कि नेपाल पानी छोड़ देता है। महोदय, मैं भी कभी कभी इनके पास बैठता हूँ, ये यह भी कहते हैं कि नेपाल पानी नहीं छोड़ता है, हम लोग नेपाल पर झूठ मूठ इल्जाम लगाते हैं। जब पानी क्षमता से अधिक हो जाता है तो वह पानी बाढ़ के रूप में आता है और उससे बिहार का नुकसान होता है। महोदय, अभी अभी बाढ़ का पानी आने से अनेकों लोग लापता हैं। नेपाल से पानी आने के कारण आज सीतामढ़ी, शिवहर और मुजफ्फरपुर का राज मार्ग बन्द है और हम आरोप लगाते हैं कि नेपाल पानी छोड़ देता है, इस कारण से यह हो रहा है।''[61]

अनेक राजनेताओं की गलत जानकारी या फिर उनके द्वारा जानबूझ कर गलतबयानी करने और नेपाल द्वारा पानी छोड़ने के झूठ को बार बार दुहराने से बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के जन-मानस में यह बात पूरी तरह बैठ गयी है कि इस क्षेत्र में बाढ़ से तबाही के पीछे नेपाल का हाथ है। जानकारी के अभाव की वजह से इस दुष्प्रचार में मीडिया भी जोर-शोर से भाग लेता है। यह बात जहाँ राजनीतिज्ञों, प्रशासकों और इंजीनियरों के अनुकूल पड़ती है वहीं दोनों देशों के पारस्परिक संबंधों में खराश पैदा करती है। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं है अगर नेपाल में आम लोग इस मानसिकता से ग्रस्त हों कि जल-संसाधन के विकास की साझा योजनाओं का सारा लाभ केवल भारत को मिलता है और उनके हिस्से केवल तबाही आती है।

नेपाल के ख्यातिलब्ध इंजीनियर और समाजकर्मी अजय दीक्षित कहते हैं, ''...नेपाल में कोई संचयन जलाशय है ही नहीं जिससे पानी छोड़ा जा सके; अतः जो कुछ भी बाढ़ आती है, उसके पीछे क्षेत्र की जलीय-परिस्थिति का एक दूसरे से जुड़ा होना है। नेपाल में कुछ वीयर और बराज बने हुए हैं जिनमें कोई खास पानी जमा रखने की क्षमता नहीं

है। केवल एक बांध कुलेखानी नदी पर बना हुआ है जिसमें मामूली मात्रा में बरसात का पानी इकट्ठा होता है। मगर जो आम समझदारी है उसमें पारम्परिक प्रतिक्रिया झलकती है जिसमें समस्या और उसका समाधान, दोनों ही स्थान और समय को देखते हुए बाहरी स्रोतों पर केन्द्रित है और उन्हें बाढ़ समस्या का समाधान पारम्परिक लकीर पीटने में ही दिखायी पड़ता है। हिमालयी पानी के विकास और प्रबंधन की दिशा में इन बातों से गंभीर सच्चाई का सामना होता है और इसके साथ ही इस दिशा में जो फायदे या खतरे है उनका भी अन्दाजा लगता है।''[62]

इन घटनाओं के बारे में बिहार सरकार की तरफ से विधान सभा में एक बयान 24 जून 2004 को दिया गया था जिसे हम यहाँ उद्धृत कर रहे हैं ''लगभग सौ वर्षों के इतिहास में सर्वप्रथम इस वर्ष दिनांक 7.6.2004 को ही बागमती नदी के जलस्तर में आयी अचानक वृद्धि शिवहर एवं सीतामढ़ी जिले में कुल तीन घटनाओं का कारण बनी। जिला पदाधिकारी, शिवहर के प्रतिवेदन के अनुसार बागमती नदी में उक्त तिथि को आयी अचानक बाढ़ के कारण कुल 8 व्यक्तियों के डुब्बाघाट पर नाव पलट जाने से डूब कर लापता होने की सूचना दी गयी है। जिलाधिकारी, शिवहर को मृतकों की पहचान हो जाने पर तत्काल मृतकों के आश्रितों को 50 हजार रुपये प्रति मृतक की दर से अनुग्रह अनुदान भुगतान हेतु 4 लाख रुपये का आवंटन उपलब्ध करा दिया गया है। दिनांक 7.6.2004 को ही बागमती नदी के जलस्तर में हुई अचानक वृद्धि के कारण सीतामढ़ी के रुन्नी सैदपुर प्रखण्ड के भनसपट्टी के नजदीक राष्ट्रीय उच्च पथ संख्या-77 पर बने कॉज-वे के ऊपर करीब 2.5 फीट पानी बह रहा था जो कुल दो घटनाओं का कारण बना। दिनांक 7.6.2004 को ही संध्या 7 बजे के आसपास मुजफ्फरपुर की ओर से एक जीप पर सवार 11 व्यक्ति नदी की धारा में गिर गए जिसमें से 9 व्यक्तियों को बचा लिया गया परन्तु 2 व्यक्ति अभी तक लापता बताये गए हैं। उसी दिन रात्रि लगभग 9 बजे अमर ज्योति नामक बस जो मुजफ्फरपुर से बारात लेकर सीतामढ़ी जा रही थी, पानी की तेज धार में बहकर नदी में गिर गयी। उस बस में सवार कुल 26 व्यक्तियों में से 7 व्यक्ति सुरक्षित निकल आये। परन्तु शेष 19 व्यक्ति के डूबने या लापता होने की सूचना प्राप्त हुई है। जिला प्रशासन के अथक प्रयास से क्रेन एवं गोताखोरों की मदद से कुल 11 शव बरामद किये गए। जिलाधिकारी, सीतामढ़ी को तत्काल 11 लाख रुपये अनुग्रह अनुदान के मद में आवंटन उपलब्ध करा दिया गया है ताकि मृतकों की पहचान होते ही उनके परिजनों को अनुग्रह अनुदान की राशि का भुगतान कर दें।''[63]

बाढ़ के समय भारत सरकार की जो केन्द्रीय टीम बिहार के बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों का दौरा करने और बाढ़ से हुए नुकसान का जायज़ा लेने आयी थी उसको बिहार सरकार के आपदा प्रबन्धन विभाग ने सहायतार्थ एक मेमोरण्डम दिया था। इस मेमोरण्डम के अनुसार बागमती, कमला-बलान, बूढ़ी गंडक, अधवारा समूह की नदियों, कोसी तथा महानन्दा के जलग्रहण क्षेत्रों में जुलाई के प्रथम सप्ताह में हुई भीषण वर्षा के कारण उत्तर बिहार के 20 जिलों में अभूतपूर्व बाढ़ आ गयी थी। बहुत सी नदियों ने अपने पहले के सर्वाधिक बाढ़ लेवेल का अतिक्रमण किया जिससे 54 स्थानों पर तटबन्धों में दरार पड़ी। इन दरारों की वजह से घनी आबादी वाले बहुत से इलाकों में बाढ़ का पानी भर गया यहाँ तक कि 1987 वाली भयंकर बाढ़ से भी ज्यादा असर इस वर्ष महसूस किया गया। सीतामढ़ी, शिवहर, दरभंगा, मधुबनी, सुपौल, खगड़िया, पूर्वी चम्पारण, किशनगंज, समस्तीपुर, मधेपुरा, अररिया तथा सहरसा जिले इस बाढ़ से पूरी तरह प्रभावित हुए। इस रिपोर्ट के अनुसार इस वर्ष बाढ़ में कुल मिला कर (तब तक) 7036 करोड़ रुपयों का नुकसान हुआ जिसके लिए केन्द्र से सहायता की मांग की गयी थी।[64] अंतिम रिपोर्ट मिलने तक इस वर्ष की बाढ़ में राज्य के 20 जिलों के 211 प्रखंडों के 9344 गाँवों में बाढ़ का असर देखा गया जिससे 212.99 लाख लोग प्रभावित हुए। बाढ़ का पानी 27 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर फैला जिसमें 13.99 लाख हेक्टेयर पर फसल लगी हुई थी। इस बाढ़ में 885 आदमियों और 3272 जानवरों की बाढ़ से मौत हुई।[65] इस बाढ़ में अंतिम रिपोर्ट के अनुसार कुल मिला कर 59 जगहों पर तटबन्धों में दरार पड़ी जिसमें से 17 जगह दरारें अकेले बागमती/करेह के तटबन्धों में पड़ी थीं।[66]

पूर्वोत्तर भारत में 2004 की बाढ़ की समीक्षा करने और हालात को बेहतर बनाने के लिए जल-संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार ने प्रधानमंत्री के निर्देश पर एक टास्कफोर्स का गठन किया। केन्द्रीय जल आयोग के अध्यक्ष इस टास्क फोर्स के भी अध्यक्ष थे। जैसा कि सभी समितियों और टास्क फोर्स के गठन से आशा की जाती है, इस टास्क फोर्स से भी आशा की गयी थी कि वह असम, पश्चिम बंगाल, बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में हमेशा से आने वाली बाढ़ों के कारणों का पता लगायेगा, बाढ़ नियंत्रण के लिए अब तक के किये गए कार्यों की समीक्षा करेगा, बाढ़ और कटाव से बचने के लिए अल्पावधि और दीर्घावधि उपायों को सुझायेगा, संबंधित अंतर्राष्ट्रीय आयामों का अध्ययन करेगा और भविष्य में इस संदर्भ में क्या करना है उसके उपाय सुझायेगा, इन सब सुझावों को अमली जामा पहनाने के लिए किस तरह की संस्थागत व्यवस्था तैयार करनी होगी, उस पर अपने सुझाव देगा और इसके लिए संसाधन जुटाने के लिए क्या व्यवस्था करनी होगी, उस पर भी अपनी राय देगा। इन बिन्दुओं पर किसी समिति या टास्क फोर्स की क्या राय हो सकती है वह उनकी रिपोर्टों को पढ़े बिना ही बताया जा सकता है। फिर भी, टास्क फोर्स इस बात से आश्वस्त है कि नेपाल में बागमती के तटबन्धों के विस्तार से उसके पानी के मनुस्मारा में जाने के सारे खतरे टल गए हैं। नेपाल में इस तटबन्ध के बन जाने से बेलवा-मीनापुर लिंक की डिज़ाइन में परिवर्तन करना होगा और करेह नदी के तटबन्धों पर भी ऊपरी इलाकों में बागमती के तटबन्धों के विस्तार का असर पड़ेगा। इसका असर हायाघाट में पुल नं० 17 पर भी पड़ेगा जो कि काफी पुरानी समस्या है जिसके कारण बागमती के तटबन्ध अक्सर टूटा करते हैं। इसके समाधान के रूप में करेह के तटबन्धों को हायाघाट से करांची, बदलाघाट होते हुए नगरपाड़ा तक ऊँचा और मजबूत करने का सुझाव टास्क फोर्स ने दिया है। यहाँ तक नया कुछ भी नहीं है और इसके बाद टास्क फोर्स की रिपोर्ट अधवारा समूह की नदियों पर तीन फ़ेज की उसी योजना की चर्चा करता है जिसका वर्णन हम अध्याय-2 में कर चुके हैं।

इतना कह लेने के बाद यह रिपोर्ट तटबन्धों से जुड़ी उन सभी समस्याओं का ज़िक्र करती है जिन्हें हमने अध्याय-1 के खण्ड 1.6 से 1.8 के बीच में बताया है। रिपोर्ट जब बाढ़ नियंत्रण संबंधी नीतियों की चर्चा करती है तब बात कुछ खुलती है। रिपोर्ट में एक जगह लिखा है, ''आइ०आइ०टी०

दिल्ली ने कोसी का जो अध्ययन किया है उसके अनुसार नदी की कुछ लम्बाई में तो उसका तल ऊपर उठा है मगर कुछ लम्बाई में यह नीचे भी गया है। इसलिए निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि समग्रता में नदी की तलहटी का लेवेल ऊपर उठ रहा है।''[67] **आइ०आइ०टी० दिल्ली की जिस रिपोर्ट के हवाले से यह बात कही गयी है उसमें चतरा से लेकर कोपड़िया तक की नदी की 167 किलोमीटर लम्बाई में अलग-अलग स्थानों पर नदी का क्रॉस सेक्शन (अनुप्रस्थ काट) की नाप 1962 और 1974 में ली गई थी जिसका विवरण नीचे तालिका 3.1 में दिया जा रहा है। इस तालिका पर एक नज़र डालने पर यह साफ हो जाता है कि 167 किलोमीटर की लम्बाई में मात्र भीमनगर से डगमारा के बीच की 26 किलोमीटर की दूरी में 8.3 मिलीमीटर का वार्षिक कटाव है जब कि नदी की बाकी पूरी लम्बाई में 141 किलोमीटर में नदी का तल ऊपर उठ रहा है और कई स्थानों पर यह भीमनगर से डगमारा के बीच के कटाव से 12 से 15 गुना ज्यादा है।**[68] **यह कटाव इसलिए है कि बराज भीमनगर में अवस्थित है और उसके फाटकों के संचालन की वजह से भीमनगर और डगमारा के बीच नदी की तलहटी में कटाव होता है। इतनी सी बात समझने के लिए इंजीनियरिंग की डिग्री की जरूरत नहीं होती। फिर भी टास्क फोर्स को यह लगता है कि समग्रता में नदी की पेंदी का लेवल ऊपर नहीं उठ रहा है तो यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि टास्क फोर्स के किसी भी सम्मानित सदस्य ने न तो यह रिपोर्ट देखी है और न ही कोसी के तटबन्धों को देखा है। उस स्थिति में रिपोर्ट की विश्वसनीयता पर ही संदेह होता है। इतना कह लेने के बाद इस रिपोर्ट और उसके अध्ययन या अनुशंसा के बारे में कहने को कुछ भी नहीं बचता।**

2007 की बाढ़–इस वर्ष बिहार की बाढ़ ने फिर एक बार पिछले बहुत से रिकार्ड्स को तोड़ा। पहली जुलाई से लेकर 2 अगस्त तक रुक-रुक कर लगातार होने वाली बारिश की वजह से जीवन धारा यहाँ पूरी तरह से ठहर सी गयी। पश्चिमी चम्पारण, सीतामढ़ी, शिवहर, मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर और खगड़िया जिलों के बुजुर्गों के मुताबिक इतनी ज्यादा बारिश और इतने दिनों तक टिके रहने वाली बाढ़ उन लोगों ने कभी नही देखी थी।

आश्चर्य की बात यह थी कि इतनी ज्यादा बारिश और बाढ़ के बावजूद उत्तर बिहार की किसी भी नदी का उच्चतम बाढ़ लेवेल कहीं भी नहीं दर्ज़ किया गया। बिहार सरकार के आपदा प्रबन्धन विभाग द्वारा राहत कार्यों के लिए केन्द्र सरकार को दिये गए प्रतिवेदन में इस बात की पुष्टि करते हुए कहा गया कि सोनाखान में बागमती का अब तक का उच्चतम लेवेल 70.77 मीटर देखा गया है मगर इस साल वह 69.75 मीटर तक ही पहुँच पाया। बूढ़ी गंडक, यद्यपि यह नदी रोसेड़ा में हफ्तों खतरे के निशान के ऊपर बहती रही मगर अपने रिकार्ड लेवेल 46.35 मीटर को नहीं छू पायी। कमला-बलान का झंझारपुर में उच्चत्तम बाढ़ लेवेल 54.34 मीटर रिकार्ड किया गया है मगर यह 53.60 मीटर पर जाकर स्थिर हो गया। भुतही बलान ने मधुबनी जिले के फुलपरास में इस साल कई बार तबाही मचायी मगर उसका एकम्मा के पास बाढ़ का लेवेल अपने अब तक के उच्चत्तम लेवेल 72.10 मीटर से 1.80 मीटर नीचे ही रह गया। गुआबाड़ी में लालबकेया का सर्वाधिक बाढ़ लेवेल 72.84 मीटर देखा गया मगर वहाँ इस साल उसका लेवेल 72.42 मीटर तक गया। गांधी घाट पर गंगा का बाढ़ लेवेल 50.27 मीटर के मुकाबले 48.15 मीटर पर अटका रहा। इसी तरह पुनपुन अपने 53.91 मीटर के स्तर से श्रीपालपुर में 80 सेन्टीमीटर नीचे बही तो बसुआ में कोसी नदी का स्तर अब तक के देखे गए सर्वाधिक लेवेल 48.76 मीटर से 75 सेन्टीमीटर नीचे रह गया। गंडक नदी खड्डा में 96.85 मीटर के उच्चतम लेवेल के मुकाबले 95.80 मीटर तक बही।[69]

जब उच्चतम बाढ़ लेवेल का यह हाल था तो उम्मीद की जानी चाहिये थी कि बाढ़ से नुकसान अपेक्षाकृत कम हुआ होगा मगर ऐसा नहीं हुआ। इस बाढ़ में इस समय 22 जिलों के 264 प्रखंडों के 12,610 गाँव बाढ़ की चपेट में आये और 2.48 करोड़ जनता बाढ़ में घिरी। इस बाढ़ ने 16.63 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर लगी खड़ी फसल को बरबाद किया और 7.37 लाख घरों को धराशायी किया। बाढ़ में मारे गए मनुष्यों की संख्या इस साल 960 थी जबकि 1006 पशु इस बाढ़ में काम आये।[70]

तालिका-3.1

	1962 में कोसी के तटबन्ध निर्माण के बाद तथा 1974 में कोसी नदी के तल की स्थिति					
			बराज/तटबन्ध पूर्व की स्थिति		बराज/तटबन्ध निर्माण के बाद की स्थिति	
क्रम सं.	नदी क्षेत्र	दूरी कि.मी.	तल कटाव मि.मी. प्रतिवर्ष	बालू जमाव मि.मी. प्रतिवर्ष	तल कटाव मि.मी प्रतिवर्ष	बालू जमाव मि.मी. प्रतिवर्ष
1.	चतरा से जलपापुर	27	17.6	–	–	12.4
2.	जलपापुर से भीमनगर बराज	15	165.6	–	–	107.0
3.	भीमनगर से डगमारा	26	35.6	–	8.3	–
4.	डगमारा से सुपौल	34	3.8	–	–	18.6
5.	सुपौल से महिषी	40	–	95.6	–	63.5
6.	महिषी से कोपड़िया	25	अप्राप्य	–	–	120.3

स्रोत : Sanyal, Nilendu; Chairman-Ganga Flood Control Commission, Semenar on Embankment And Flood Control, Bihar College of Engineering, Patna-1983.

इस साल बिहार के 3430 किलोमीटर लम्बे तटबन्धों में 32 जगह दरारें पड़ी। इनमें से 7 दरारें बागमती/करेह तटबन्धों में, 14 कमला-बलान पर बने तटबन्धों में, बूढ़ी गंडक में 5, मसान तटबन्ध में तीन स्थानों पर तथा भुतही बलान, खिरोई और कोसी के बदला नगरपाड़ा तटबन्ध में एक-एक स्थान पर दरार पड़ी। राज्य पथों तथा राष्ट्रीय मार्गों में दरारों की संख्या 54 थी तथा ग्रामीण सड़कों में 829 जगहों पर दरारें पड़ी और इन सड़कों में बने 1353 पुल और कलवर्ट ध्वस्त हो गए।[71]

इतनी ज्यादा बारिश, फिर बाढ़ का लम्बे समय तक टिका रहना तथा पानी के रास्ते में पड़ने वाली रुकावटों में इतनी ज्यादा दरारें पड़ने की एक व्याख्या यह हो सकती है कि तटबन्धों, राजमार्गों और ग्रामीण सड़कों में पड़ी दरारों के कारण बाढ़ का पानी एक बड़े इलाके पर फैला और बाढ़ के लेवेल में कमी आयी मगर उसके पानी की निकासी में अवरोध इतना अधिक था कि वह पानी निकल नहीं पाया और अपनी जगह पर काफी दिनों तक बना रहा। तब यह जरूरी था कि सरकार बाढ़ के पानी की निकासी की समुचित व्यवस्था करती, टूटे हुए पुलों/कलवर्टों की न सिर्फ मरम्मत करती वरन् उनकी संख्या भी बढ़ाती। बिहार में बाढ़ वाले इलाके में रहने वाला कोई भी व्यक्ति यह बात बड़ी आसानी और विश्वास के साथ कह सकता है कि नदी पर बना हुआ तटबन्ध अगर किसी जगह टूट जाता है तो उस स्थान के नीचे उसका कोई मतलब ही नहीं बचता और उससे मिलने वाली सुरक्षा वहीं ढेर हो जाती है।

3.3 बाढ़ के पानी को रास्ता देने की जगह तटबन्ध का मजबूतीकरण

जहाँ नदी और बाढ़ का पानी यह इशारा कर रहा था कि उसे रास्ता दिया जाए, सरकार ने बागमती के तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत करने की मुहिम छेड़ी और रुन्नी सैदपुर से लेकर हायाघाट तक उसके विस्तार का 792 करोड़ रुपयों का एक कार्यक्रम हाथ में लिया। इसी तरह का प्रयोग महानन्दा घाटी में उसकी प्रायः सभी सहायक धाराओं पर तटबन्ध बनाने की 850 करोड़ रुपयों की एक महत्वाकांक्षी योजना पर हाथ लगा। तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत करने तथा उनमें से बहुत से तटबन्धों को पक्की सड़कों में परिवर्तित करने का कार्यक्रम हाथ में लिया गया। **लेकिन तटबन्ध को ऊँचा और मजबूत कर देने मात्र से बाढ़ की समस्या का हल हो जायेगा क्या? क्या तटबन्ध को ऊँचा या मजबूत कर देने से उनके बीच आने वाले पानी या बालू में कोई कमी आयेगी? क्या तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत किये जाने के बाद नदी की पेटी का ऊपर उठना रुक जायेगा? क्या तटबन्धों से होकर होने वाले सीपेज या तटबन्धों के बाहर होने वाले जल-जमाव में कोई कमी आयेगी? जिसे आज हम ऊँचा और मजबूत तटबन्ध कह कर खुश हो रहे हैं, कल यह नहीं टूटेगा क्या इसकी गारन्टी कोई इंजीनियर दे सकता है? इन सारे सवालों का एक ही जवाब है–नहीं। तटबन्ध जितना ऊँचा और जितना मजबूत होगा, सुरक्षित क्षेत्रों में रहने वालों पर उनके टूटने पर खतरा उतना ही ज्यादा बड़ा होगा। यह बात हाकिमों की समझ में क्यों नहीं आती?** तो फिर इस काम से फायदा? इसका फायदा है कि लोगों को आने-जाने में सहूलियत होंगी। इसके साथ सरकारी जीपों और मशीनों को भी आने जाने में मदद मिलेगी। इसके लिये लोगों को तटबन्धों पर से हटाया जायेगा और कहा यह जायगा कि यह सब बाढ़ की रोक-थाम के लिये किया जा रहा है। वह इसलिये कि बाढ़ नियंत्रण बिकने वाली चीज़ है और इसी में नेताओं, प्रशासकों, इंजीनियरों और ठेकेदारों सब के स्वार्थ निहित हैं। पहले के दिनों में इनकी जूठन के तौर पर मजदूरों को कुछ रोजगार मिट्टी के कामों में मिल जाया करता था लेकिन आजकल वह भी बन्द है क्योंकि अब यह काम दूसरे प्रान्तों से मँगाये गए ट्रैक्टरों और मशीनों के माध्यम से होता है। तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत बनाने का नकरात्मक असर उन लोगों पर पड़ता है जो अपने गाँव-घर के कट जाने या उन पर बालू पड़ जाने के कारण किसी सुरक्षित स्थान की तलाश में तटबन्धों पर आ बसे हैं।

तटबन्धों पर रहने वाले वहाँ तो कहीं न कहीं से उजड़ कर ही आये होंगे। अगर वे तटबन्धों के अन्दर के रहने वाले हों तो बहुत मुमकिन है उनके गाँव कट गए हों, घर बचे रहने का ऐसी हालत में सवाल ही नहीं उठता, इसलिये चले आये हों तटबन्ध पर रहने के लिये। दूसरा यह कि सरकार और बागमती प्रोजेक्ट की कृपा से उनके गाँव-घर, खेत-पथार पर पानी लग गया हो और वह हटने पर मजबूर हुए हों। यह भी मुमकिन है कि उनका गाँव-घर किसी टूटते तटबन्ध के मुहाने पर पड़ गया हो, इसलिये वहाँ तटबन्ध पर आ गए हैं। तटबन्ध पर जो भी लोग पहले से रह रहे थे या आज भी हैं उनमें से एक भी परिवार वहाँ अपने शौक से या पिकनिक मनाने के लिये नहीं है। उनमें शायद ही कोई शख्स ऐसा होगा जिसका उसके चारों तरफ पानी से घिरा होने पर दिल बहलता हो। वहाँ जो भी है वे अपने घर-द्वार से बेदखल होने के दर्द और दुख के साथ रह रहा है। तटबन्धों के बीच रहने वालों पर तो यह बात खास तौर पर लागू होती है। इन सारे कारणों को बला-ए-ताक पर रख कर सत्ता के दम्भ पर सरकार अगर उन्हें उजाड़ देती है और दबे हुए को और ज्यादा दबाने का काम करती है तो यह उसके लिए जरूरी हो सकता है मगर न्याय संगत नहीं है।

यह सच है कि तटबन्धों की मरम्मत और रख-रखाव के लिए जरूरी है कि वहाँ किसी तरह की रुकावट या अड़चन न पड़े मगर यह भी उतना ही जरूरी है कि सरकार उन लोगों को यह बताये कि उन्हें कहाँ रहना चाहिये। इनमें से अधिकांश लोगों के तटबन्धों पर रहने की जिम्मेवार सरकार खुद है और वह अपनी इस जिम्मेवारी से आँखें नहीं मूँद सकती।

इस साल की बाढ़ विधान सभा में जबर्दस्त चर्चा का विषय रही मगर यह बहस सिर्फ रिलीफ और उसके बटवारे तक सीमित रही। लम्बी अवधि में बाढ़ के समाधान में पक्ष और विपक्ष में असाधारण एकता के दर्शन होते हैं जब दोनों नेपाल में बांधों के निर्माण को ही एक मात्र रास्ता मानते हैं। रिलीफ और नेपाल में बांधों के निर्माण पर हम आगे विस्तार से चर्चा करेंगे।

सन्दर्भ :

1. Roy Chaudhury, P. C.; Bihar District Gazetteers, Muzaffarpur, The Superintendent, Secretariat Press; Bihar, Patna, 1958, p. 166-167.
2. उपर्युक्त, पृष्ठ 27
3. O' Malley, L. S. S.; Bengal District Gazetteers, The Bengal Secretariat Book Depot, 1907, p. 65.

4. Roy Chandhury, P. C.; Bihar District Gazetteers, Darbhanga 1964, pp. 176-177. Quote from Darbhanga Gazetteer of 1907
5. उपर्युक्त, पृष्ठ 178
6. O'Malley, L. S. S., Bengal District Gazetteers, Muzaffarpur, पूर्व कथित, पृष्ठ 66-67
7. Roy Chaudhury, P. C., Bihar District Gazetteers, Darbhanga, पूर्व कथित, पृष्ठ 179-180, Quote from Darbhanga Gazetteers of 1907
8. Roy Chaudhury, P. C.; Bihar District Gazetteers, Muzaffarpur, 1958, पूर्व कथित, पृष्ठ 168-169.
9. उपर्युक्त, पृष्ठ 172
10. O' Malley, L. S. S.; Bengal District Gazetteers, 1907, Muzaffarpur, p. 63
11. झा, दामोदर; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 4 मार्च 1954, पृष्ठ 40
12. मसूद, मौलवी; उपर्युक्त-16 मार्च 1954, पृष्ठ 29
13. सिंह, रामचरित्र; उपर्युक्त-16 मार्च 1954, पृष्ठ 51
14. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission (1994), Appendix 4/95-96, p. 457-58.
15. Roy Chaudhury; Bihar District Gazetteers, Darbhanga, op. cit., pp. 202-204
16. मिश्र, दिनेश कुमार; दुइ पाटन के बीच में-कोसी नदी की कहानी, 2006, लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून-248006, उत्तराखंड, पृष्ठ 11-40
17. दास, रघुनाथ महंत; आर्यावर्त-पटना, 'अधवारा-बागमती से उतनी ही क्षति होती है जितनी कोसी से', 8 जनवरी 1955, पृष्ठ 6
18. आर्यावर्त-पटना, 19 मार्च 1955
19. सिंह, रामदुलारी; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 3 सितंबर 1954, पृष्ठ 49
20. सिंह, जनक; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 3 सितम्बर 1954, पृष्ठ 47-48
21. गिरि, विवेकानन्द, उपर्युक्त, 15 फरवरी 1955, पृष्ठ 55-56
22. सिंह, गिरिजा नन्दन; उपर्युक्त, 17 फरवरी 1955, पृष्ठ 74-55
23. आर्यावर्त-पटना, सम्पादकीय, 'बाढ़ नियंत्रण का बेढंगा तरीका', 31 अक्टूबर 1954
24. अर्यावर्त-पटना, 1 नवम्बर 1954, पृष्ठ 1
25. सिंह, गिरिजा नन्दन; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त 17 फरवरी 1955, पृष्ठ 74-75
26. ठाकुर, डॉ० हरिनन्दन; 'बूढ़ी गंडक के उत्तरी किनारे को बांधा जाए'-संपादक के नाम पत्र, 16 दिसम्बर 1955
27. आर्यावर्त-पटना, सम्पादकीय, 29 नवम्बर 1954
28. सिंह, गिरिजा नन्दन; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 28 मई 1970, पृष्ठ 42
29. आर्यावर्त-पटना, 'बागमती योजना शीघ्र कार्यान्वित होगी', 10 अप्रैल 1955, पृष्ठ2
30. आर्यावर्त-पटना, 6 दिसम्बर 1955, पृष्ठ 1
31. सिंह, गिरिजा नन्दन; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 11 सितम्बर 1956, पृष्ठ 45
32. शर्मा, बृजबिहारी; उपर्युक्त, 13 सितम्बर 1956, पृष्ठ 50
33. गिरि विवेकानन्द; उपर्युक्त, 13 सितम्बर 1956, पृष्ठ 56
34. सिंह, कपिलदेव नारायण; उपर्युक्त, 11 सितम्बर 1956, पृष्ठ 44
35. Matharani, M.P.; North Bihar Flood Report, 1956, Government of Bihar, p. 137-141.
36. सिन्हा, महेश प्रसाद; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त-बाढ़ और सुखाड़ पर वाद विवाद, 12 सितम्बर 1966, पृष्ठ 99-100
37. सिंह, पीताम्बर; उपर्युक्त, 'राज्य में बाढ़, सुखाड़ तथा सिंचाई पर वाद-विवाद, 9 सितम्बर 1966, पृष्ठ 20
38. सिंह, रामानन्द; उपर्युक्त, 8 सितम्बर 1966, पृष्ठ 40
39. चौधरी, एक नारायण; बिहार विधान सभा में ध्यानाकर्षण प्रस्ताव, 8 सितम्बर 1966, पृष्ठ 1
40. सिंह, सच्चिदानन्द; बिहार विधान सभा, वाद-वृत्त, 11 जुलाई 1977, पृष्ठ 36
41. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission. Appendix 4/48, p. 460, 1994. Water Resource Dept., Government of Bihar, 1994.
42. बिहार सरकार, बागमती प्रोजेक्ट रिपोर्ट-1981, पृष्ठ 55
43. सिंह, पीताम्बर; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 9 अगस्त 1975, पृष्ठ
44. सिंह, त्रिवेणी प्रसाद, उपर्युक्त, 9 अगस्त 1975, पृष्ठ 64
45. राम, रमई; उपर्युक्त, पृष्ठ 43
46. सिंह, भोला प्रसाद; उपर्युक्त, पृष्ठ 55
47. राय, रामाश्रय; उपर्युक्त, पृष्ठ 75
48. सिंह, राम स्वरूप; उपर्युक्त, पृष्ठ 23
49. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission; Apendix 4/98, page 460, 1994
50. Report on Flood Situation in Bihar 1978, Revenue and Land Reforms Department, 28th Sept. 1978.
51. जल संसाधन विभाग, बिहार सरकार, 1993, अप्रकाशित रिपोर्ट (हिन्दी)
52. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission (1994), Appendix 4/34, p. 396
53. झा, पद्माशा; बिहार विधान परिषद् वाद-वृत्त, 23 जुलाई 1993, पृष्ठ 107
54. सिंह, डॉ० महाचन्द्र; बिहार विधान परिषद्, वाद-वृत्त, 23 जुलाई 1993, पृष्ठ 110
55. सिंह रघुवंश प्रसाद; बिहार विधान परिषद्, वाद-वृत्त, 23 जुलाई 1993, पृष्ठ 113
56. सिद्दीकी, अब्दुल बारी; बिहार विधान परिषद्, वाद-वृत्त, 23 जुलाई 1993, पृष्ठ 120
57. सिंह जगदानन्द; बिहार विधान परिषद्, वाद-वृत्त, 23 जुलाई 1993, पृष्ठ 127
58. मिश्र, डॉ० जगन्नाथ; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 27 जुलाई 1993, पृष्ठ 8
59. राहत और पुनर्वास विभाग, बिहार सरकार, 1993 में बाढ़ में हुई क्षति की रिपोर्ट
60. दैनिक हिन्दुस्तान, पटना संस्करण, 9 जून 2004, 'नेपाल से पानी छोड़े जाने से बाढ़ आयी'।
61. राय, राम प्रवेश; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 11 जून 2004, पृष्ठ 28, असंशोधित।
62. दीक्षित, अजय; गंगा नदी पर विवाद पुस्तक में उनका लेख-नेपाल : हिमालय के पानी का प्रबंधन और जमीनी हकीकत, पानोस इन्स्टीच्यूट दक्षिण एशिया, काठमांडू, नेपाल, 2004, पृष्ठ 291
63. बाढ़ से संबंधित विशेष वाद-विवाद पर सरकार का वक्तव्य, बिहार विधान सभा, दिनांक 24 जून 2004, पृष्ठ 99, असंशोधित।
64. A Brief Report on Bihar Flood & Drought -2004 Memorandom For Central Assistance From National Fund For Calamity Relief Submitted to Central Team, Government of India By Government of Bihar, Department of Disaster Management.
65. Annual Report of Disaster Management Department, Govt. of Bihar, Reganding Losses Due to Floods-2004.
66. बिहार सरकार जल-संसाधन विभाग, प्रतिवेदन 2009-2010, कार्यक्रम, 2010-2011, पृष्ठ 43
67. Government of India, Ministry of Water Resources, Task Force For Flood Management Erosion Control, Report, New Delhi, December-2004, page-121.
68. Sanyal, Nilendu; Chairman-Ganga Flood Control Commission, Semenar on Embankment And Flood Control, Bihar College of Engineering, Patna-1983.
69. Report of the Disaster Management Department Govt. of Bihar, Submitted to Central Team for Assistance-2007.
70. Flood Loss Data for 2007, Disaster Management Department, Govt. of Bihar 2007

4

बागमती नदी पर प्रस्तावित नुनथर बांध

4.1 पृष्ठभूमि

बागमती नदी की बाढ़ की समस्या के समाधान के रूप में नुनथर बांध परियोजना का सुझाव सबसे पहले 1953 में किया गया था। यह वही समय था जब कोसी नदी पर पिछले सौ वर्षों से चल रही बाढ़ की बहस की दिशा मुड़ने लगी थी और तटबन्धों के निर्माण का विरोध दरकने लगा था। सरकार तब भी कोसी समस्या का अंतिम समाधान नेपाल में बराहक्षेत्र में प्रस्तावित 280 मीटर ऊँचे बांध को ही मानती थी मगर अर्थाभाव तथा भूकम्प से बांध को किसी क्षति होने और उसके फलस्वरूप निचले इलाकों में होने वाली तबाही के प्रति उसकी चिन्ता जरूर बनी हुई थी। नेपाल में कोसी नदी पर बराहक्षेत्र बांध के प्रस्ताव को खारिज करने और कोसी नदी पर तटबन्धों की योजना को स्वीकार करने के पीछे दूसरे कारण भी हो सकते हैं मगर जनता को यही दो कारण बताये गए थे। बिहार के आम लोगों को वे दलीलें याद नहीं है जो कि कोसी पर तटबन्ध निर्माण के समर्थन में सरकार ने दी थीं, इसलिए वह बड़े सहज भाव से सरकार के मिथ्या प्रचार को स्वीकार कर लेते हैं कि बराहक्षेत्र बांध ही कोसी समस्या का अंतिम समाधान है। यह पूरी बहस अन्यत्र उपलब्ध है।[1] यही बात कमोबेश बागमती नदी पर नेपाल में प्रस्तावित नुनथर बांध पर भी लागू होती है।

बागमती नदी पर तटबन्धों के निर्माण की सिफारिश और कालान्तर में उनके निर्माण के ठीक बाद नुनथर बांध के निर्माण का सवाल उठाना और उस में आने वाली रुकावटों का बखान, व्यवस्था के छल प्रपंच की छाया बन कर घाटी में बसे लोगों का पीछा करती है जिसमें समाधान के नाम पर बनाये तो तटबन्ध जाते हैं मगर कहा यह जाता है कि बागमती नदी की बाढ़ समस्या का असली समाधान तो नुनथर में बांध का निर्माण ही है। ऐसा कह कर सरकार सफलतापूर्वक यह इशारा करती है कि बागमती नदी घाटी में बाढ़ के लिए वह जिम्मेवार नहीं है। इसके पीछे नुनथर बांध का निर्माण न हो पाना है और नुनथर बांध का निर्माण न होने के पीछे नेपाल की हमारी समस्या के प्रति संवेदनहीनता है। यह प्रचार इतना प्रखर और इतना टिकाऊ है कि बिहार की बागमती घाटी के लोग इसे सचमुच का समाधान मान बैठे हैं जब कि यह भ्रम की टाटी के अलावा कुछ भी नहीं है। यह झूठा प्रचार इतना व्यापक और सम्मोहक है कि बड़े-बड़े नेता भी, जिनकी पहुँच सारी सूचनाओं तक है (या अगर नहीं है तो होनी चाहिये) इस भ्रम-जाल का शिकार होते हैं और इस प्रस्तावित बांध के समर्थन में अपना पूरा जत्था लेकर सड़कों पर उतर आते हैं। फिलहाल नुनथर बांध योजना के बारे में हम यहाँ थोड़ी सी जानकारी ले लेते हैं।

4.2 नुनथर बांध का संक्षिप्त प्रस्तावित स्वरूप

बिहार राज्य के दूसरे सिंचाई आयोग की रिपोर्ट (1994) के अनुसार नेपाल में जिस स्थान पर इस बांध के निर्माण का प्रस्ताव किया गया है वहाँ नदी का कुल जल-ग्रहण क्षेत्र 2706 वर्ग किलोमीटर है। इस प्रस्तावित बांध के जल-ग्रहण क्षेत्र में सर्वाधिक बारिश 3,580 मि०मी० और सर्वनिम्न बारिश 1524 मि०मी० आंकी गयी है जबकि औसत वर्षा का निर्धारण 1880 मि०मी० पर किया गया है। इस बांध से होकर सर्वाधिक 7533 क्यूमेक (लगभग 2,65,160 क्यूसेक) पानी बहाया जा सकेगा। 115.824 मीटर ऊँचे इस बांध की कुल जल-संग्रह क्षमता 26,531 हेक्टेयर मीटर (2,15,000 एकड़ फुट) तथा कार्यकारी जल-संग्रह क्षमता 23,360 हेक्टेयर मीटर (1,89,300 एकड़ फुट) होगी तथा इससे 24 मेगावाट बिजली पैदा की जा सकेगी। इस बांध से सिंचाई के लिए 3,500 क्यूसेक पानी उपलब्ध होगा और इसका लागत खर्च 97.85 करोड़ रुपये (1988 की कीमतों की दर पर) आयेगा। इस बांध में वर्षा के समय बाढ़ के पानी का संचय करने के लिए कोई प्रावधान नहीं है और इसलिए अभी तक योजना का जो भी प्रारूप बना है उसमें इस बांध से किसी भी प्रकार के बाढ़ नियंत्रण की कोई गुंजाइश नहीं है और अगर थोड़ा बहुत बाढ़ के पानी का प्रबन्धन किया जा सकेगा तो वह स्पिल-वे के फाटकों को नियंत्रित करके ही किया जा सकेगा।[2]

बागमती नदी पर तटबन्धों के दूसरे फ़ेज़ के निर्माण के बाद 27 फरवरी 1984 को भोगेन्द्र झा ने लोकसभा में नुनथर बांध के बारे में अद्यतन स्थिति जानने के लिए एक प्रश्न किया था जिसके जवाब में सरकार की तरफ से रामनिवास मिर्धा ने कहा, ''...यद्यपि समय-समय पर भारत सरकार नेपाल की शाही सरकार के साथ बागमती घाटी और अन्य दूसरी छोटी नदियों के जल-संसाधनों के विकास पर विभिन्न स्तरों पर वार्ता करती है मगर अभी तक बागमती नदी पर नुनथर में बांध बनाये जाने के प्रस्ताव पर कोई समझौता नहीं हुआ है।''[3] यह समझौता 26 साल बाद आजतक (2010) भी नहीं हुआ है।

20 अगस्त 1987 के दिन लोकसभा में गौरी शंकर राजहंस के एक प्रश्न के उत्तर में सरकार की तरफ से जवाब देते हुए बी० शंकरानन्द ने सदन को बताया, ''...बाढ़ नियंत्रण के बारे में अक्सर यह कहा जाता है कि इस समस्या का एक मात्र समाधान है कि (नदियों पर) नेपाल में जलाशयों का निर्माण किया जाए। लगभग सारी नदियाँ नेपाल से आती हैं और भले ही हम इन सारी नदियों पर नेपाल में जलाशय बना डालें तब भी केवल कोसी नदी के बांध को छोड़ कर किसी दूसरी नदी पर बना जलाशय बाढ़ के प्रभाव को कम करने में सक्षम नहीं हो पायेगा। जहाँ तक सदस्यों द्वारा दूसरी नदियों पर प्रस्तावित बांधों के बारे में प्रश्न किये जाते हैं तो उन जलाशयों के माध्यम से कोई खास बाढ़ सुरक्षा नहीं मिलने वाली है।''[4]

जाहिर है कि इन तीन वर्षों में समझौते की दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई मगर भारत सरकार को इतना विश्वास जरूर हो गया था कि इस बांध से बाढ़ नियंत्रण की दिशा में कोई खास फायदा नहीं होने वाला है।

जहाँ इस तरह के सवाल-जवाब चल ही रहे थे वहीं सीतामढ़ी के भूतपूर्व विधायक रामस्वरूप सिंह ने बिहार विधान परिषद् की याचिका

समिति को पैंतीस अन्य लोगों के साथ 9 दिसम्बर 1983 के दिन एक आवेदन किया जिसकी अपेक्षाएं कुछ इस प्रकार थीं–

4.3 याचिका समिति को किया गया आवेदन

''हम सीतामढ़ी जिले के बागमती क्षेत्र की जनता की ओर से निम्नांकित निवेदन करते हैं–

(1) सरकार ने बागमती बाढ़ नियंत्रण सह-सिंचाई योजना 1967-68 में बनायी। इस योजना के तहत रमनगरा (बागमती नगर) में बराज बनाना तथा नहरों का निर्माण करना था।

(2) उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत बागमती नदी के दोनों किनारे बांध बनाये गए। देवापुर से बागमती नदी की एक उप-धारा पिपराही होती हुई बहती थी। सिंचाई विभाग ने मुख्य धारा को छोड़ कर उक्त उप-धारा के किनारे बांध का निर्माण कराया। इस निर्माण के कार्यान्वयन के फलस्वरूप 92 से अधिक गांवों को पुनर्वास के लिये मजबूर किया गया। इस क्षेत्र की जनता ने समाचार पत्रों, आम-सभाओं के माध्यम से इस जन-विरोधी योजना का जोरदार विरोध किया परन्तु सरकार ने जनता की मांगों की पूरी उपेक्षा की।

(3) 15 जुलाई, 1983 को पुनः बागमती नदी देवापुर के निकट बांध को तोड़ कर मुख्य पुरानी धारा में चली गयी। मुख्य पुरानी धारा में नदी के जाने की वजह से देवापुर से रुन्नी सैदपुर तक करीब 50 किलो मीटर की लंबाई में बना हुआ तटबन्ध बेकार हो गया।

(4) इस पूरी योजना पर अभी तक लगभग 25 करोड़ रुपये खर्च हो चुके हैं जिसमें अधिक धन का दुरुपयोग हुआ है।

(5) बागमती नदी की बाढ़ के पानी से किसान बहुत लाभान्वित होते थे और यह इलाका इस कारण अधिक उपजाऊ गिना जाता था। बांध बंधने के कारण बाढ़ के पानी से किसानों के खेत वंचित हो गए। इसका परिणाम हुआ कि खेतों की उपज बहुत घट गयी। उपजाऊ खेत दिन प्रतिदिन बंजर होते जा रहे हैं। जो इलाका उत्तर बिहार का अन्न भंडार था आज वह कंगाल बन गया। लोग दाने-दाने को मोहताज बन गए हैं।

(6) बागमती नदी एक अन्तर्राष्ट्रीय नदी है जो नेपाल से होकर भारत में बहती है। बिहार के सिंचाई विभाग ने रमनगरा में बराज बनाने का निर्णय किया लेकिन इसका कार्यान्वयन अभी तक प्रारम्भ भी नहीं हुआ। इसी बीच नेपाल की सरकार ने नेपाल के अन्तर्गत करमहिया में बराज निर्माण का कार्य करीब-करीब पूरा कर लिया है। इसके अलावा, जैसा पता चला है कि वे नुनथर के निकट 96 कि०मी० ऊपर डैम का भी निर्माण करने जा रहे हैं। यहाँ यदि डैम बन जाता है तो स्थायी तौर पर भारत का इलाका बागमती नदी के जल से वंचित हो जायेगा।

(7) इस सम्बन्ध में विधान सभा तथा अन्य माध्यमों से सीतामढ़ी जिले की जनता आवाज उठाती रही है कि भारत सरकार नेपाल सरकार से मिल कर नुनथर में डैम बनाये, जिससे दोनों देश की जनता को सिंचाई और बिजली का लाभ मिल सके। ऐसी स्थिति में हम मांग करते हैं कि–

i. बागमती पर सिंचाई-सह-बाढ़ नियंत्रण-सह-विद्युत के हेतु नुनथर में डैम का निर्माण भारत-नेपाल सरकार के समझौते के अन्तर्गत किया जाय।

ii. बागमती पर बनायी गयी त्रुटिपूर्ण योजना से जो अपूरणीय क्षति जनता को हुई–उसकी उच्चस्तरीय जांच की जाए और किसानों को क्षतिपूर्ति दी जाए एवं जन-विरोधी योजना के लिये जिम्मेवार व्यक्तियों के खिलाफ उचित कार्रवाई की जाय।

iii. कनुआनी धार (बागमती की पुरानी धारा) की उड़ाही शीघ्र की जाय।

iv. बने हुए तटबन्धों में पर्याप्त मात्रा में स्लुइस गेटों का निर्माण शीघ्र किया जाय।[5]

इस याचिका समिति की 6 मई 1988 की एक मीटिंग में राज्य के जल-संसाधन विभाग के अभियंता प्रमुख जी० पी० तिवारी ने समिति को बताया कि नुनथर डैम के लिए बहुत पहले सर्वेक्षण करवाया गया था मगर इस प्रस्तावित बांध की पहली रिपोर्ट और नक्शा बिना सर्वे किये हुए बना था। सर्वे बाद में हुई और फिर एक रिपोर्ट तैयार हुई और जो नक्शा बना उसे 1983 में भारत सरकार को भेजा गया। आगे की कार्यवाही के लिए नेपाल सरकार की अनुमति चाहिये थी जिसके लिए कठमाण्डू में दिसम्बर 1987 में सचिव स्तर की बैठक हुई। इस बैठक की अध्यक्षता वहाँ के जल-संसाधन मंत्री ने की और उसमें दोनों देशों के सचिव स्तर के पदाधिकारी और बिहार सरकार के इंजीनियर भी शामिल थे। इसी तरह की एक बैठक फिर काठमाण्डू में 1988 के प्रारम्भ में हुई जिसमें बहुत सी दूसरी योजनाओं और प्रस्तावों के अलावा नुनथर का मसला भी शामिल था। नेपाल सरकार के प्रतिनिधियों ने अपना मन्तव्य देने के लिए समय मांगा और कहा, ''...सिर्फ डैम बनाने से ही समस्या का समाधान नहीं होगा, उसके लिए सॉयल कन्ज़रवेशन की बात भी होगी और कुछ करना पड़ेगा और अभी यह मामला भारत सरकार, नेपाल सरकार तथा हम लोगों के बीच विचाराधीन है।''[6]

दोनों देशों के बीच इस तरह की मीटिंग एक लम्बे समय से चल रही है और किसी भी नतीजे पर पहुँचने में बहुत देर लगती है। ऐसा जरूर लगता है कि नेपाल किसी जल्दी में नहीं है। कमला, बागमती, कन्कई जैसी छोटी नदियों के बारे में नेपाल का यह हमेशा से रुख रहा है कि भारत सरकार अपनी अपेक्षाओं से नेपाल को अवगत करवा दे और वह जब कभी इन योजनाओं को हाथ में लेने की सोचेंगे तो योजना बनाते समय वह भारत की जरूरतों को ध्यान में रखेंगे।

भारत-नेपाल की साझा छोटी नदियों पर दिल्ली में सितम्बर 1984 में हुई सचिव स्तर की वार्ता में भी यह बात उठी थी जब भारत के सचिव ने बागमती, कमला, बबाई और कन्कई जैसी छोटी नदियों पर बांधों का सवाल उठाया और कहा कि इन बांधों के निर्माण से दोनों देशों के हितों का साधन होगा। नेपाल के सचिव का तब भी यही उत्तर था कि अगर भारत का इन नदियों से संबन्धित कोई विशेष प्रस्ताव हो और भारत द्वारा उन्हें इसकी सूचना दी जाती है तब इन जलाशयों के निर्माण की योजना बनाते समय वे इन सुझावों की जांच करेंगे और यथासंभव भारत के हितों को ध्यान में रखने का प्रयास करेंगे।[7] इस तरह की बातें प्रायः हर वार्ता में उठती हैं और इसी सम्पुट से समाप्त हो जाती हैं।

दरअसल नेपाल की इस बेरुखी के बहुत से कारण हैं। भारत-नेपाल के सीमावर्त्ती क्षेत्र में भारत की बहुत सी योजनाओं के कारण वहाँ की जमीन कटी या डूबी है जिनके उदाहरण लक्ष्मणपुर बराज, डाण्डा बराज, गौर बाजार में बागमती तटबन्धों के कारण हुई बदहाली आदि हैं। सरलाही, सुनसरी तथा सप्तरी जिलों में भारत द्वारा निर्मित योजनाओं से कटाव, जल-जमाव और बाढ़ आदि के दु:ष्प्रभाव आदि कितनी ही ऐसी समस्याएं हैं जिनसे नेपाली जन-मानस में कहीं न कहीं यह बात गहरे बैठी हुई है कि इन योजनाओं का सारा लाभ भारत उठाता है जबकि केवल नुकसान ही नेपाल के हिस्से में आता है। कोसी और गंडक परियोजना के साथ भी वही स्थिति है जहाँ उन्हें लगता है कि इन योजनाओं का सारा लाभ भारत को मिला है जबकि उनके यहाँ जीवन पर इन योजनाओं का बुरा असर पड़ा है। इसलिए कम से कम अब से नेपाल ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहेगा जहाँ उसे किसी भी प्रकार की क्षति की आशंका होगी।[8]

दोनों देशों के सचिव स्तर की जो मीटिंग सितम्बर 1984 में नई दिल्ली में हुई थी उसमें नेपाल ने अपने क्षेत्र में भारतीय भाग की योजनाओं से होने वाले नुकसान का सवाल उठाया और आशा की कि आने वाले एक-दो महीने के अन्दर भारत और नेपाल के विशेषज्ञों की एक टीम इन कथित क्षेत्रों का दौरा करके अपनी रिपोर्ट दे और समस्या के निदान का उपाय सुझाये। भारत की तरफ से यह सुझाव दिया गया कि नेपाल ऐसे सभी स्थानों की एक सूची भारत को दे जहाँ उन्हें इस तरह की समस्याएं देखने में आ रही हैं तो उसके दो महीने के अन्दर भारत और नेपाल का एक संयुक्त दल इन क्षेत्रों में जाकर समस्या का अध्ययन करके एक रिपोर्ट तैयार करे और उनके समाधान का रास्ता सुझाये। इस पर दोनों देशों ने सहमति जतायी।[9]

20 से 22 दिसम्बर 1987 में जब इसी तरह की मीटिंग काठमाण्डू में आयोजित की गयी तब भारत की तरफ से कहा गया कि नेपाल से उतर कर उत्तर प्रदेश या बिहार में आने वाली नदियों के पानी का इस्तेमाल भारत के किसान सदियों से करते आये हैं और अगर इन नदियों पर नेपाल कोई योजना बनाता है तो उसे भारत में किसानों द्वारा पानी के चालू उपयोग को ध्यान में रख कर ही कोई योजना बनानी चाहिये। इसके जवाब में नेपाली शिष्ट मंडल का कहना था कि पानी का वैसा ही उपयोग नेपाल के किसान भी एक लम्बे समय से करते आये हैं। भारतीय पक्ष का कहना था कि पानी के वर्तमान और प्रस्तावित उपयोग के आंकड़ों का अगर दोनों देशों के बीच आदान-प्रदान हो सके तो विकास योजनाओं का प्रारूप तैयार करने में सहूलियत होगी और दोनों पक्षों में से किसी को भी नुकसान होने से बचाया जा सकेगा। इतना कहने के बाद भारत ने एक बार फिर राप्ती, बबाई, कमला, बागमती जैसी नदियों पर दोनों देशों के सामूहिक हित का हवाला देते हुए इन नदियों पर बांधों के निर्माण की सम्भावना तलाशने की बात उठायी और नेपाल की तरफ से फिर यही कहा गया कि अगर भारत की तरफ से कोई विशेष अनुरोध प्राप्त होगा तो उस पर विचार किया जायेगा और यथा सम्भव उसके सुझावों पर अमल किया जायेगा।[10]

लगभग यही बातें संयुक्त समिति की 30 मई से 2 जून 1988 की मीटिंग में भी दुहरायी गईं। इस बीच बिहार के जल-संसाधन मंत्री लहटन चौधरी ने केन्द्रीय जल-संसाधन मंत्री को एक पत्र (6 अगस्त 1988) लिख कर कहा, ''...बागमती नदी में नुनथर तथा कमला नदी में शीसापानी के निकट तेतरिया में जलाशय निर्माण हेतु योजना प्रतिवेदन भी तैयार कर भारत सरकार को 1983 में ही प्रस्तुत किया गया है। परन्तु हमें यह ज्ञात नहीं है कि प्रतिवेदन अथवा इन क्षेत्रों में सुसंगत उद्धरण नेपाल सरकार को भेजे गए या नहीं और यदि भेजे गए तो उनकी गतिविधि क्या है? इसके अतिरिक्त सन् 1981 में दोनों सरकारों के बांध स्वीकृति प्रपत्र में सभी नदियों से जल की आवश्यकता भारत सरकार को सूचित भी की गयी है और नेपाल सरकार से उनके क्षेत्र के आंकड़ों एवं योजनाओं की सूचना उपलब्ध कराने हेतु अनुरोध किया गया है परन्तु इन योजनाओं के कार्यान्वयन की बात तो दूर रही इसके निर्माण से पूर्व विस्तृत सर्वेक्षण एवं अन्वेक्षण हेतु भी नेपाल सरकार की अनुमति प्राप्त नहीं हो सकी है। फलस्वरूप एक ओर जहाँ बाढ़ के मौसम में अनियंत्रित जलस्राव के कारण उत्तर बिहार में लगभग प्रतिवर्ष बाढ़ की विभीषिका का सामना करना पड़ता है वहीं दूसरी ओर सूखे के मौसम में नदियों के जलस्राव में कमी के कारण सिंचाई एवं अन्य उपयोगों हेतु कठिनाई भी अनुभव हो रही है। इधर नेपाल द्वारा एकतरफा फैसले के आधार पर कमला, बागमती एवं कन्कई नदियों पर बराज का निर्माण किया गया है जिससे राज्य में उपलब्ध जल में कमी होती जा रही है। नेपाल द्वारा अपने क्षेत्र के आंकड़े उपलब्ध कराने तथा योजनाओं के विवरण उपलब्ध कराने में भी आनाकानी की जा रही है।''[11]

इस पत्र के जवाब में केन्द्रीय मंत्री शंकरानन्द का कहना था कि नेपाल ने बाढ़ के पूर्वानुमान तथा जल विभाजक प्रबन्ध योजनाओं में तो रुचि दिखायी है, लेकिन अन्य प्रस्तावों में उनके उत्तर बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं हैं। यह मामला भारत और नेपाल के बीच सरकारी स्तर की बैठकों में आगे बढ़ाया जायेगा, ऐसी उनकी आशा थी।[12]

लगभग इसी समय बिहार के जल-संसाधन विभाग के सचिव सी० के० बसु ने केन्द्रीय जल-संसाधन सचिव को लिखे पत्र (संख्या 24/N.C.-6-6-4/87-458 दिनांक 23 फरवरी 1988) के माध्यम से कहा, ''...(iv) छोटी नदियाँ–कमला और बागमती जैसी छोटी नदियों के सन्दर्भ में बिहार सरकार का मानना है कि नेपाल इस विषय को टालना चाहता है और शायद उनकी यह कोशिश है कि (इन) नदियों के पानी पर पहले अपना हक जताया जाए जबकि वर्तमान में ऐसा कुछ भी नहीं है। इसके साथ ही, जैसा कि हमारी कमला नदी के साथ हुआ है, पानी के हमारे वर्तमान उपयोग पर दबाव पड़ा है क्योंकि उस नदी के ऊपरी भाग में पानी बचा ही नहीं है। ...यह ध्यान देने की बात है कि हमने कमला के सम्बन्ध में अपनी विस्तृत आवश्यकताएं और तेतरिया में प्रस्तावित बहूद्देशीय योजना का सारा विवरण नेपाल की शाही सरकार को भेज दिया है। लेकिन न तो उन्होंने अपनी तरफ से कोई सूचना ही दी है और न ही अब तक कोई प्रतिक्रिया व्यक्त की है। एजेन्डा नोट्स में बागमती के साथ भी ऐसा ही हुआ है।''

इसी क्रम में भोगेन्द्र झा ने लोकसभा में सिंचाई मंत्री से जानना चाहा कि कोसी पर बराहक्षेत्र, नुनथर में बागमती तथा कमला नदी पर शीसापानी बांध की अनुमानित लागत क्या है और उनसे कितनी सिंचाई, कितना बाढ़ नियंत्रण हो पायेगा और कितनी बिजली का उत्पादन होगा? इस पर सिंचाई मंत्री विद्याचरण शुक्ल का संक्षिप्त सा जवाब था कि इस

तरह का कोई विवरण अभी उपलब्ध ही नहीं है। भोगेन्द्र झा को मंत्री से इस तरह के उत्तर की उम्मीद नहीं थी और वे जानना चाहते थे कि क्या ऐसा कोई प्रस्ताव 1981 में नेपाल सरकार के पास भेजा गया था जिस पर 1988 तक सचिव स्तर की वार्ताएं चलती रहीं? उनका कहना था कि भारत सरकार ने रमनगरा में बागमती पर एक बराज बनाने का प्रस्ताव किया था पर इसके ठीक ऊपर के इलाके को नेपाल ने अपने राष्ट्रीय राजमार्ग का क्षेत्र घोषित कर दिया और बराज का निर्माण खटाई में पड़ गया। उससे बिहार का नुकसान तो हुआ ही, नेपाल भी योजना के लाभ से वंचित हुआ। फिर भी भोगेन्द्र झा का मानना था कि इस तरह के उत्तर से दोनों देशों के बीच कटुता बढ़ सकती है।[13]

4.4 नेपाल में प्रस्तावित बांधों का नया दौर

विद्याचरण शुक्ल का कहना था कि भारत लम्बे समय से नेपाल से बिहार आने वाली नदियों पर योजनाओं के लिए वार्ता कर रहा है और इस दिशा में 1962 के पहले के समझौते अभी तक कार्यकारी हैं। इसके बाद समस्याएं पैदा होने लगीं। कभी यह समस्याएं राजनैतिक थीं तो कभी तकनीकी। नेताओं और शिष्ट मंडलों की आवा-जाही के बावजूद कहीं न कहीं जाकर बात अटक जाती है और उन्हें लगता था कि ऐसा जानबूझ कर किया जाता था ताकि नेपाल और भारत दोनों ही असुविधा भोग करें। 1980 से 1988 के बीच कितने ही आयोग और उप-आयोग बने जो किसी नतीजे पर नहीं पहुँचे। उन्होंने भोगेन्द्र झा को याद दिलाया कि यह सारे बांध नेपाल में प्रस्तावित हैं जहाँ हम अपनी मर्जी से कुछ नहीं कर सकते।[14]

यह वह समय था जब बिहार में लालू प्रसाद यादव की सरकार को बने हुए एक साल का समय बीत चुका था और बिहार सरकार में जल-संसाधन मंत्री ने तटबन्धों के समुचित रख-रखाव करने और उन्हें कभी टूटने न देने की प्रतिज्ञा करते हुए विधान सभा में एक असंभव सा दावा कर दिया था। उन्होंने 5 जुलाई 1991 को बिहार विधान सभा में बयान दिया, ''...नहरों की सफाई हम करेंगे, हर खेत को पानी देने का इन्तजाम करेंगे। किसी को परेशान होने की जरूरत नहीं है। टाइम फैक्टर एक चीज़ होती है। चूहा बांध को काट जाता था उसको हमने खतम कर दिया है। अब बांध टूटने वाला नहीं है। अगर बिहार का बांध टूटेगा तो हमसे इस्तीफा ले लीजिये ।''[15] मंत्री जी द्वारा विधान सभा में दिये गए इस बयान को एक पखवाड़ा भी नहीं बीता था कि 17 जुलाई 1991 के दिन कोसी का पश्चिमी तटबन्ध नेपाल में जोगिनियाँ के पास कट गया जिसे लेकर विधान सभा में अच्छी खासी बहस हो गयी और मंत्री जी को उनके कथन और बिहार विधान सभा की मर्यादा का ध्यान रखते हुए इस्तीफा देना पड़ गया। यह बात अलग है कि उनका यह इस्तीफा स्वीकार नहीं हुआ।

इस तरह का बयान देकर मंत्री जी अव्यावहारिकता की सीमा में काफ़ी अन्दर तक घुस चुके थे। निश्चित रूप से उनके मन में यह बात रही होगी कि अपने प्रयासों से वे प्रान्त के सारे तटबन्धों की सुरक्षा सुनिश्चित कर लेंगे और उन्हें किसी ने विश्वासपूर्वक यह समझा दिया था कि तटबन्ध केवल भ्रष्टाचार के कारण ही टूटते हैं जबकि सच यह है कि तटबन्ध तकनीकी कारणों से भी टूटते हैं और ऐसे हालात बन

नुनथर-जहाँ बागमती नदी पर बांध प्रस्तावित है।

जाते हैं जब पूरी निष्ठा, मेहनत और ईमानदारी से बनाये गए तटबन्ध को भी ध्वस्त होते देर नहीं लगती। भ्रष्टाचार तटबन्ध टूटने की घटनाओं को बढ़ाता जरूर है और उनकी बारम्बारता सुनिश्चित करता है मगर वह तटबन्ध टूटने का अकेला कारण नहीं हो सकता है। यही वज़ह है कि इंजीनियरों का एक अच्छा ख़ासा तबका सैद्धान्तिक रूप से तटबन्धों के माध्यम से बाढ़ नियंत्रण किये जाने का विरोध करता है। यह बात उनको शायद किसी ने समझायी नहीं और न ही एक अतिवादी बयान देने से उन्हें रोका। **तटबन्ध का टूटना मृत्यु की ही तरह एक शाश्वत सत्य है जिसे औषधि-उपचार कर के टाला तो जा सकता है मगर रोका नहीं जा सकता। किसी की मृत्यु कब और कहाँ होगी यह कोई नहीं जानता और ठीक उसी तरह कोई तटबन्ध कब और कहाँ टूटेगा, यह भी निश्चित नहीं है। तटबन्ध मिट्टी की जगह अगर लोहे का भी बना दिया जाए तो भी 1954, 1955, 1968, 1971, 1984, 1987, 1998, 2000, 2004 या 2007 जैसा प्रवाह नदी में आने पर पानी तटबन्ध के ऊपर से बह निकलेगा और उतना ही नुकसान पहुँचायेगा जितना कि मिट्टी का तटबन्ध टूटने से पहुँचाता है। हाँ, लोहे का तटबन्ध जरूर अपनी जगह पर खड़ा रहेगा।** तटबन्ध टूटने की यह अनिश्चितता तब और ज्यादा बढ़ जाती है जब मुकाबले में कोसी जैसी उच्छृंखल स्वभाव वाली नदी हो। खुद बिहार में जून से लेकर नवम्बर तक और घाघरा से लेकर महानन्दा तक तटबन्ध टूटने का एक लम्बा इतिहास उपलब्ध है और यह सारी दरारें केवल भ्रष्टाचार या लापरवाही के कारण नहीं पड़ी होंगी।

यहां बिहार में जल-संसाधन मंत्री को जो त्यागपत्र देना पड़ गया वह भी अपने आप में अभूतपूर्व था। यह एक अलग बात है कि दो साल के अनुभव ने 1993 में तटबंधों के प्रति उनकी मान्यता बदल दी। एक समाचार पत्र को दिये गए साक्षात्कार में उनका कहना था, ''...अगर 3,700 किलोमीटर लम्बे तटबंधों में दो एक जगह दरार पड़ जाती है तो आप इसे यह तो नहीं कह सकते कि हम तटबंधों की रक्षा नहीं कर पा रहे हैं। आख़िरकार, हम हर ख़तरे से निपट लेने की व्यवस्था तो नहीं बना पाये हैं। अगर ऐसा करना है तो जो ख़र्च आयेगा उसे संभालना मुश्किल होगा।''[16] सच यह है कि यह दरारें कभी भी इक्का-दुक्का न पड़ कर थोक में पड़ती हैं और यह भी गलत नहीं है कि इनमें से अधिकांश घटनाएं विभागीय लापरवाही और अकर्मण्यता के कारण पड़ती हैं।

यहाँ पर यह याद दिलाना सामयिक होगा कि जब मंत्री जी ने समाचार पत्र को यह साक्षात्कार दिया तब बागमती क्षेत्र के लोग 1993 वाली बाढ़ झेल चुके थे और वह अब इस बात को स्वीकार करने लगे थे कि तटबन्ध टूट भी सकते हैं। यह बात अलग है कि बांधों में पड़ी दरार की जिम्मेवारी अपने ऊपर लेने में वह और उनका विभाग बहुत देर करता था। कमला नदी के दायें किनारे पर झंझारपुर रेल-सह-सड़क पुल के नीचे 1993 में सोहराय गाँव के पास जो दरार पड़ी थी वहाँ ग्रामीणों को सरकार से थोड़ी बहुत राहत सामग्री पाने के लिए यह सिद्ध करना पड़ गया था कि नदी का तटबन्ध सचमुच वहाँ टूटा था।

1995 आते-आते मंत्री जी इस नतीजे पर पहुँच चुके थे कि, ''...पहले बार-बार बाढ़ आती थी और स्वत: निकल जाती थी। अब बाढ़ एक बार आती है, तटबन्धों के बीच नदी है–एक बार वेग से पानी आता है, तटबन्ध टूटते हैं। पहले ऐसा नहीं होता था। बाढ़ आती थी और पानी कम समय के लिए ठहरता था और पानी निकल जाता था। अब तटबन्ध फेल होता है तो पानी की मात्रा भी बढ़ती है और उसकी अवधि भी बढ़ जाती है। ...राज्य में जितने भी तटबन्ध बने हैं वे इस मायने में असुरक्षित हैं कि नदी के पानी के फैलाव को रोक सकते हैं कटाव को नहीं।''[17] इस समस्या के समाधान के बारे में उनका सुझाव था कि, ''...बाढ़ की समस्या का समाधान है जलाशय। तटबन्धों के साथ जलाशय की व्यवस्था नहीं की गयी। राज्य के दूसरे हिस्से में जहाँ जलाशयों का निर्माण हुआ है वहाँ इस तरह की बाढ़ से हानि नहीं होती है। मध्य बिहार के बडुआ, चानन में जलाशय बने हैं। बिना जलाशय तटबन्ध खतरे की घंटी हैं।''[18] इस तरह से अब ध्यान जलाशयों की ओर मोड़ा जाने लगा कि उनके निर्माण के बिना बाढ़ की समस्या का समाधान नहीं हो सकता। उन्होंने आगे यह भी कहा, ''... (उत्तर बिहार की) ...नदियाँ अब हमारी नहीं हैं। नेपाल की हैं। केवल उसका पानी ही तटबन्धों के भीतर स्थित नदियों से समुद्र में जा रहा है। लेकिन हमारे क्षेत्र में जो जल-निकासी का साधन था वह खत्म हो रहा है। गाँव से पानी निकलता नहीं। पर्वत से महासागर तक पानी निकल जाता है और बिहार के जिम्में सिर्फ विभीषिका।''[19] इस तरह से बिहार के सत्ताधारियों सहित अन्य राजनीतिक समूह को यहाँ की बाढ़ समस्या का समाधान नेपाल में दिखायी पड़ने लगा। यहाँ यह बता देना जरूरी है कि मंत्री जी के इस साक्षात्कार दिये जाने के कुछ दिनों बाद चान्दन और बडुआ जलाशयों में दरार पड़ गयी जिससे बांका जिले में बाढ़ से भीषण तबाही हुई थी।

इसके साथ एक दूसरा इशारा यह भी था कि बाढ़ नियंत्रण के मोर्चे पर राज्य सरकार निर्दोष है और वह केन्द्र सरकार से कह भर सकती है कि वह नेपाल से बात-चीत कर के मामले को सुलझाये क्योंकि नेपाल की रज़ामन्दी के बिना इन बांधों का निर्माण संभव नहीं है। वहीं 1997 में दैनिक हिन्दुस्तान-पटना को दिये गए एक साक्षात्कार में मंत्री महोदय ने फिर दुहराया, ''...अधिकांश नदियों का उद्गम क्षेत्र बिहार में नहीं है, उनका प्रसार क्षेत्र है यहाँ। इसलिए हम उन्हें चाहें तो भी बांध नहीं सकते, उनके विस्तार को सीमित कर सकते हैं। बांधने का काम उद्गम के पास हो सकता है। लेकिन यहाँ मामला अंतर्राष्ट्रीय हो जाता है। नेपाल के साथ भारत सरकार बात कर सकती है, बिहार सरकार नहीं।''[20] रिवाज़ यह है कि बिहार सरकार आमतौर पर केन्द्र सरकार पर यह आरोप लगाती है कि मामला अंतर्राष्ट्रीय है जिस पर केन्द्र सरकार ही पहल कर सकती है। **1995 वाले अपने साक्षात्कार में जब मंत्री जी ने नेपाल का नाम लिया था तब केन्द्र में नरसिम्हा राव की सरकार थी जिससे बिहार सरकार का उन दिनों छत्तीस का रिश्ता था। इसलिए एक बार के लिए माना जा सकता है कि केन्द्र सरकार से राज्य सरकार की नाराज़गी जायज़ थी मगर जब मंत्री महोदय 1997 में भी यही बात कह रहे थे तो बात ज़रा आसानी से गले नहीं उतरती। उस समय केन्द्र में इन्द्र कुमार गुजराल की सरकार थी और उसके पहले देश के प्रधानमंत्री पद पर एच० डी० देवेगौड़ा आसीन थे और यह दोनों सरकारें अपना वजूद बनाये रखने के लिए बिहार की शासक पार्टी पर आश्रित थीं। उस समय राज्य सरकार को किस बात का इन्तज़ार था कि वह केन्द्र सरकार पर नेपाल से बात-चीत के लिए दबाव नहीं डाल पायी और राज्य के हित का अवसर आसानी से गँवा दिया?** मंत्री जी आगे कहते हैं, ''...दरअसल

सिंचाई विभाग खाने-कमाने वालों के लिए सर्वोत्तम रहा है। कुछ नेताओं, ठेकेदारों और अफ़सरों का कॉकस था जो मिल कर राज्य को लूट रहा था। हर वर्ष बाढ़ रोकने के नाम पर लाखों रुपये खर्च होते रहे और काम कुछ नहीं होता रहा। मैंने इस पर रोक लगायी। बांधों, तटबन्धों का परीक्षण करा कर उनकी मरम्मत करायी तो कॉकस को नागवार गुज़रा। फिर उन्होंने हल्ला मचाना शुरू किया कि फलां तटबन्ध टूट रहा है, फलां बांध टूट रहा है और सरकार उसकी मरम्मत के लिए पैसा नहीं दे रही है। ...सच्चाई यह है कि कोई बांध नहीं टूटा है। कोई हमें किसी एक बांध का नाम बता दे जो टूटा हो सिवाय अधवारा के जिसमें दरार पड़ी है और वह भी इसलिए कि उस पर बिना सोचे समझे वृक्षारोपण किया गया। बड़े पेड़ों की जड़ें बहुत गहराई में उतरती गयीं। बांध कम ऊँचा था, फलतः दरार पड़नी ही थी।''[21]

अब सवाल उठता है कि किसी मंत्रालय का मुखिया जो 1991 में इस बात का दावा करे कि उसने सारे चूहों को खतम कर दिया है वह 1997 में भी यही शिकायत करता है कि उसका विभाग 'खाने-पकाने वालों के लिए सर्वोत्तम रहा है' और लोगों में बांध टूटने की शिकायत नाजायज है। नागेन्द्र प्रसाद सिंह को सूचना के अधिकार के अधीन जल-संसाधन विभाग, बिहार ने एक सूचना उपलब्ध करवायी है जिसके अनुसार बिहार में 1997 में गंडक नदी का तटबन्ध एक स्थान पर, बूढ़ी गंडक का तटबन्ध तीन स्थानों पर, कमला बलान एक स्थान पर, बागमती/करेह का तटबन्ध दो स्थानों पर तथा अन्य तटबन्ध एक स्थान पर, कुल मिला कर आठ स्थानों पर तटबन्ध टूटे थे (नागेन्द्र प्रसाद सिंह को सूचना के अधिकार के तहत याचिका पर जल-संसाधन विभाग का पत्रांक-बाढ़ (मो०) सि०वि० 14/2007/2255 बिहार सरकार जल संसाधन विभाग दिनांक 3.10.2007)। तब यह कह पाना मुश्किल है कि सच कौन नहीं बोल रहा है, जल-संसाधन विभाग या उसके मंत्री? 15 अगस्त 2002 को एक बार फिर पटना से प्रकाशित दैनिक हिन्दुस्तान को दिये गए साक्षात्कार में मंत्री महोदय ने कहा, ''...हम यह नहीं कहते कि केन्द्र दोषी है। बिहार की बाढ़ समस्या दो देशों के बीच का मामला है। हाँ! यह जरूर है कि बिहार में बाढ़ की जितनी बड़ी समस्या है उस स्तर तक दिल्ली के लोग नहीं मानते।'' मंत्री महोदय का इसी आशय का साक्षात्कार एक बार फिर 17 जून 2004 के दैनिक हिन्दुस्तान के पटना संस्करण में छपा था।

4.5 बिहार की बाढ़-नेपाल में प्रस्तावित बांधों के साथ चोली-दामन का रिश्ता?

बिहार की बाढ़ समस्या का समाधान नेपाल में है और इसके लिए कुछ भी कर सकने में बिहार सरकार असमर्थ है और इस मसले की सारी जिम्मेवारी केन्द्र सरकार की है यह बात बिहारी लोक मानस में गहरे बैठा दी गयी है। कुछ लोग यह बात निश्चयपूर्वक कहते हैं कि बिहार के जो सांसद लोकसभा या राज्यसभा में बैठते हैं वह दृढ़तापूर्वक नेपाल में प्रस्तावित बांधों के बारे में बात नहीं करते। ऐसे लोग इसका एक कारण बताते हैं कि वहाँ सारा माहौल ही सूखे के इर्द-गिर्द घूमता है। ऐसे में बाढ़ की आवाज़ नक्कारखाने में तूती बन कर रह जाती है। बिहार से कई बार सांसद रहे डॉ० गौरी शंकर राजहंस का मानना है, ''...दिल्ली में बैठे लोग उस नारकीय जीवन की कल्पना नहीं कर सकते हैं। प्रश्न यह है कि उत्तर बिहार के लोग आखिर इस नरक को क्यों भोगें? आज यदि ऐसी घटना यूरोप में होती और किसी पड़ोसी देश की गलती से किसी देश में बाढ़ आती तो प्रभावित देश भरपूर मुआवज़ा वसूलता। परन्तु नेपाल हमारा पड़ोसी ही नहीं, निकटतम मित्र और भाई है। उससे भला क्या मुआवजा वसूला जा सकता है? नेपाल के लोगों का कहना है कि वे इस बात को अच्छी तरह महसूस करते हैं कि उनकी नदियों के कारण उत्तरी बिहार के लोग हर साल तबाह हो जाते हैं... पर उत्तरी बिहार के लोगों को यह महसूस करना चाहिये कि इसी तरह की त्रासदी से नेपाल की तराई के लोग भी गुजरते हैं। यह तर्क शत-प्रतिशत सही है। अतः क्यों नहीं नेपाल और भारत सरकार मिल कर इस समस्या का कोई स्थाई समाधान खोजें?''[22] उनका आगे कहना था कि भारत सरकार नेपाल के महाराज ज्ञानेन्द्र और वहाँ की सरकार को यह समझाने में सफल हो जाए कि इस तरह के बड़े डैम बनाने से नेपाल और उत्तरी बिहार दोनों का कायाकल्प हो जायेगा तो कोई कारण नहीं है कि नेपाल के महाराज और वहाँ की सरकार भारत के अनुरोध को टालें।

दरअसल, इस तरह के बयान कहीं न कहीं यह संकेत देते हैं कि इस पूरे मसले पर भारत सरकार की तरफ से ठीक तरह से कोई कोशिश नहीं हुई है जबकि भारत और नेपाल के बीच बात-चीत का सिलसिला 1940 के दशक से जारी है। 1937 में अंग्रेजों के समय पटना में जो बाढ़ सम्मेलन हुआ था उसमें बिहार के तत्कालीन चीफ इंजीनियर कैप्टेन जी० एफ० हॉल ने जरूर यह कहा था, ''...कोसी के ऊपरी क्षेत्र पर नेपाल का नियंत्रण है और बिहार सरकार के पास नदी को नियंत्रित करने के लिए असीमित साधन नहीं हैं। यह भी प्रस्ताव किया गया है कि हमें नेपाल का सहयोग प्राप्त करना चाहिये। यह बहुत जरूरी भी है लेकिन मुझे ऐसे किसी सहयोग की उम्मीद नहीं है। उन्हें (नेपाल को) इस सम्मेलन में आमंत्रित किया गया था पर उन्होंने कोई भी प्रतिनिधि भेजने से इन्कार कर दिया। मेरा नेपाल सरकार के साथ नदी नियंत्रण और सीमा विवाद के मुद्दों पर कुछ वास्ता पड़ा है और मैं इसके अलावा कोई राय कायम नहीं कर सकता कि वह बिहार के फ़ायदे के लिए अपने आपको कोई तकलीफ़ देंगे।''[23]

यह भी सच है कि आज़ाद भारत में नेपाल के साथ कोसी परियोजना, गंडक परियोजना, पश्चिमी कोसी नहर तथा पंचेश्वर बांध और बराहक्षेत्र बांध की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट जैसी योजनाओं को लेकर कई समझौते हुए मगर कहीं न कहीं कोई कमी जरूर है जिसकी वजह से कोई न कोई व्यवधान पड़ता है और रिश्तों में कोई गर्मजोशी नहीं दिखायी पड़ती। 1996 में हुई पंचेश्वर बांध-संधि के अनुसार इस समय तक उस योजना का निर्माण कार्य पूरा हो जाना चाहिये था जो अब तक शुरू भी नहीं हुआ और न निकट भविष्य में इसके शुरू होने के कोई आसार ही नज़र आते हैं। भारत और नेपाल सरकार के बीच बराहक्षेत्र परियोजना के डी०पी०आर० बनाने का पहला समझौता 1997 में हुआ था और यह रिपोर्ट बनाने का काम अभी तक (जून 2010) पूरा नहीं हुआ है।

4.6 बातें बांधों की और निर्माण तटबन्धों का

इस समझौते के बहुत पहले 1991 में ही भारत और नेपाल के तकनीकी विशेषज्ञों की एक संयुक्त समिति (Joint Committee of Experts) का

गठन हुआ था जिससे आशा की गयी थी कि वह बराहक्षेत्र में सप्तकोसी बांध और सुन-कोसी डाइवर्शन की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट बनाये जाने के विचार बिन्दुओं को स्थिर करेगी। इसी के आधार पर भविष्य में विस्तृत परियोजना रिपोर्ट बनाये जाने का कार्यक्रम था। समिति की पहली मीटिंग फरवरी 1992 में हुई थी और सरसरी तौर पर यह अनुमान किया गया था कि यह अध्ययन जल-विद्युत उत्पादन, सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण तथा प्रबन्धन और नौ-परिवहन जैसे विषयों पर केन्द्रित होगा।

मोटे तौर पर प्रस्तावित सप्तकोसी बांध 269 मीटर ऊँचा होगा और इससे 3000 मेगावाट तक का विद्युत उत्पादन संभव हो सकेगा। इस बांध के आठ किलोमीटर नीचे चतरा में बांध से छोड़े गए पानी के पुनर्नियत्रंण के लिए एक बराज के निर्माण का प्रस्ताव है। इस बराज के दोनों किनारों पर से नहरें निकाल कर भारत और नेपाल में सिंचाई की जा सकेगी तथा बराज स्थल से कोसी के गंगा से संगम तक नौ-परिवहन की व्यवस्था करना भी इस योजना का उद्देश्य होगा। चतरा बराज के पूरब से एक पॉवर कैनाल निकाल कर कुछ पानी भीमनगर-हनुमान नगर बराज में लाया जायेगा जिससे निचले क्षेत्रों की सिंचाई और कुरसेला तक की नौ-परिवहन की जरूरतें पूरी होंगी। इस बांध में बाढ़ नियंत्रण के लिए समुचित क्षमता रखे जाने का भी प्रावधान किया जायेगा, ऐसा प्रस्ताव किया गया है। उस समय (1991-92) बागमती नदी पर नुनथर बांध और कमला नदी पर शीसापानी बांध के निर्माण या उसकी परियोजना रिपोर्ट तैयार किये जाने के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया था।

1991 में ही भारत और नेपाल ने आपस में मिल कर ज्वाइन्ट कमेटी फॉर एम्बैन्कमेन्ट कन्सट्रक्शन गठित की जिसका काम बागमती, कमला, लालबकेया और खांड़ो नदियों पर प्रस्तावित तटबन्धों के निर्माण और विस्तार की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट बनाना था। गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने इस प्रस्ताव का अध्ययन किया और नेपाल द्वारा इनके निर्माण के ठेके दिये जाने की प्रक्रिया तक अपनी राय दी। इन परियोजनाओं के अध्ययन, सर्वेक्षण, डिज़ाइन, परियोजना रिपोर्ट के काम से लेकर इनका टेण्डर निकालने तक में लगभग आठ वर्ष का समय बीत गया जबकि यह काम केवल तटबन्धों से संबंधित था। ज्वाइन्ट कमेटी फॉर एबैन्कमेन्ट कन्सट्रक्शन ने 8 से 10 फरवरी 1999 के बीच काठमाण्डू में संपन्न हुई चौथी मीटिंग में इन ठेकों पर अपनी सहमति की मुहर लगायी और उसके बाद नेपाल में इन तटबन्धों के निर्माण कार्य में हाथ लगा।

नेपाल में इन नदियों पर तटबन्धों के विस्तार और निर्माण के बाद यह जरूरी हो गया कि इन नदियों के भारतीय भाग में वर्तमान तटबन्धों को उसी अनुपात में ऊँचा और मजबूत किया जाय। इसलिए लगभग इसी समय लालबकेया और बागमती नदियों के भारतीय भाग में भी तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत करने के कुछ कामों पर भारत सरकार ने अपनी स्वीकृति दी थी और तब यह उम्मीद की गयी थी कि लालबकेया तटबन्धों के उच्चीकरण और मजबूतीकरण का काम सन् 2000 तक पूरा कर लिया जायेगा। नेपाल में इन तटबन्धों के निर्माण के लिए वित्तीय साधन भारत के विदेश मंत्रालय से उपलब्ध करवाया गया था जबकि भारतीय भाग के तटबन्धों के निर्माण/उच्चीकरण और मजबूतीकरण के लिए केन्द्रीय सहायता उपलब्ध थी।

भारत सरकार नेपाल को बागमती, कमला और लालबकेया तटबन्धों के मजबूतीकरण और विस्तार के लिए आर्थिक मदद करती रही है और अब तक (जून 2010) इस मद में उसने नेपाल को 147.799 करोड़ रुपयों (नेपाली) की सहायता की है। इसमें से 53.15 करोड़ रुपये (नेपाली) 2009 में तथा 59.978 करोड़ रुपये (नेपाली) अभी तक (जून 2010) दिये गए हैं। इसके अलावा भारत ने गगन, तिलयुगा, लखनदेई, सुनसरी और कन्काई नदियों की ट्रेनिंग वर्क्स के लिए भी 19.521 करोड़ रुपयों (नेपाली) की सहायता की है।

वर्ष 2000 में जुलाई 31 से 6 अगस्त तक नेपाल के तत्कालीन प्रधानमंत्री का भारत का दौरा हुआ था। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों की सहमति से जल-संसाधन विषयक भारत-नेपाल संयुक्त समिति का गठन हुआ जिसकी पहली मीटिंग 1-3 अक्टूबर 2000 के बीच काठमाण्डू में हुई थी। इस संयुक्त समिति से अपेक्षा की गयी थी कि,

(1) यह समिति दोनों देशों के बीच जल-संसाधन से संबंधित सभी सहयोग के आयामों पर वार्ता करेगी और निर्णय लेगी तथा उसके कार्य क्षेत्र में सभी वर्तमान समझौते और रज़ामन्दियाँ आयेंगी,
(2) यह समिति अपनी-अपनी सरकारों को रिपोर्ट करेगी तथा जहाँ भी वांछित हो, अपनी सरकारों से लिये गए निर्णयों का अनुमोदन करवायेगी,
(3) यह समिति जल-संसाधन संबंधी सभी तकनीकी और विशेषज्ञ समितियों और समूहों के क्रिया कलाप का अनुश्रवण करेगी,
(4) यह समिति, जहाँ भी आवश्यक होगा, तकनीकी विशेषज्ञों या उनके ग्रुपों की नियुक्ति करेगी जिनकी जल-संसाधन के विकास में आवश्यकता होगी,
(5) यह समिति उन सभी निर्णयों, रज़ामन्दियों और कामों को आगे बढ़ायेगी जिनके बारे में दोनों देशों के जल-संसाधन सचिवों या जल-संसाधन के उप-आयोगों में सहमति बनी हो।[24]

अप्रैल 2004 में भारत तथा नेपाल सरकार के बीच बराहक्षेत्र बांध तथा सुन-कोसी डाइवर्शन की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार करने के लिए एक समझौता हुआ जिसके लिए दोनों देशों की एक साझा टीम काम करने वाली थी। इस काम के लिए भारत सरकार ने 29.34 करोड़ रुपये की स्वीकृति प्रदान की और बिराटनगर (नेपाल) में 17 अगस्त 2004 में एक संयुक्त दफ्तर खोला गया। इसके दो डिवीज़न क्रमशः धरान और जनकपुर में भी खोले गए। धरान के अंतर्गत दो सब-डिवीज़न चतरा में और जनकपुर के अंतर्गत दो सब-डिवीजन लहान और कटारी में खोले गए। उस समय यह अनुमान किया गया था कि आने वाले 30 महीनों के अन्दर, यानी दिसम्बर 2006 तक, इस काम को पूरा कर लिया जायेगा। यह रिपोर्ट ही भविष्य में कोसी नदी पर किसी भी संरचनात्मक योजना का आधार बनने वाली थी और इसके तैयार हो जाने के बाद भारत और नेपाल के बीच में निर्माण कार्यों तथा अन्य किसी पुख्ता समझौते के लिए रास्ता खुलता। अगर इन परियोजनाओं का क्रियान्वयन होगा तो दोनों सरकारों द्वारा यह आशा की गयी है कि लगभग 3300 मेगावाट बिजली पैदा होने के साथ-साथ उत्तर बिहार की बाढ़ की विभीषिका में काफी कमी आयेगी। नेपाल को कोसी-गंगा के संगम कुरसेला से लेकर चतरा तक नौ-परिवहन का लाभ भी इस योजना से मिलेगा।

7-8 अक्टूबर 2004 को भारत-नेपाल की जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति की दूसरी बैठक हुई और उसमें इस बात की सिफ़ारिश की गयी कि बिराटनगर में बराहक्षेत्र बांध और सुन-कोसी डाइवर्शन के अध्ययन के लिए जो संयुक्त परियोजना कार्यालय खोला गया है वह बागमती तथा कमला बहूद्देशीय परियोजनाओं के निर्माण में आने वाली संभावित बाधाओं का भी अध्ययन करे और कमला बहूद्देशीय परियोजना की भी संभावना रिपोर्ट तैयार करे।[25] इस कार्यालय से यह भी अपेक्षा की गयी थी कि वह बागमती बहूद्देशीय परियोजना की संभावना-पूर्व रिपोर्ट तैयार करेगा। मार्च 2006 में दोनों देशों के विशेषज्ञों की एक संयुक्त समिति ने इस पूरे प्रयास की समीक्षा की और काम में तेजी लाने पर बल दिया। दुर्भाग्यवश, नेपाल में इस समय राजनैतिक अस्थिरता का दौर चल रहा था और शायद यह एक वज़ह रही होगी कि 2004 के बाद जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति की बैठकें होना बन्द हो गयीं और वार्ताएं औपचारिकता बन कर रह गयीं।

4.7 कोसी एफ्लक्स बांध की कुसहा दरार और बात-चीत के दौर की वापसी

चार साल के अन्तराल के बाद 29 सितम्बर से 1 अक्टूबर 2008 के बीच जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति की तीसरी बैठक काठमाण्डू में आयोजित की गयी। लगभग चार साल के इतने लम्बे समय तक यह मीटिंग नहीं हुई मगर 18 अगस्त 2008 के दिन कुसहा में कोसी के पूर्वी एफ्लक्स बांध में पड़ी दरार ने ऐसी असाधारण परिस्थितियाँ पैदा कर दी थीं जिनकी वजह से वार्ता का दौर फिर से चलाना जरूरी हो गया।

इस मीटिंग में दोनों देशों के बीच गठित विभिन्न संयुक्त समितियों के कामों की समीक्षा और कुसहा दरार पाटने की अद्यतन रिपोर्ट पर विचार विमर्श के साथ-साथ यह भी तय हुआ कि सप्त-कोसी बांध और सुन-कोसी डाइवर्शन की परियोजना पर काम कर रहे बिराटनगर के संयुक्त परियोजना कार्यालय का कार्यकाल दिसम्बर 2009 तक बढ़ाया जाय। इस बात की जरूरत इसलिए पड़ी क्योंकि स्थानीय जन-विक्षोभ के कारण इन कार्यालयों को काम में बाधा पड़ रही थी। भारतीय पक्ष की यह मांग थी कि इन कार्यालयों में काम कर रहे अधिकारियों तथा कर्मियों की सुरक्षा बढ़ायी जाए जिसका आश्वासन नेपाल के अधिकारियों ने दिया। इस समिति के सदस्य 30 सितम्बर 2008 के दिन कुसहा में दरार की मरम्मत का काम देखने के लिए भी गए थे। ऐसा लगता है कि इन तीन दिनों में बागमती और कमला परियोजनाओं पर कोई चर्चा नहीं हुई क्योंकि इस मीटिंग की कार्यवाही रपट में कहीं इनका जिक्र नहीं है।[26]

मार्च 12-13, 2009 को जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति की चौथी बैठक नई दिल्ली में हुई। इस बार समिति ने कुसहा में पिछले वर्ष पड़ी कोसी पूर्व एफ्लक्स बांध मरम्मत के कार्य की प्रगति पर संतोष तो जरूर व्यक्त किया मगर भारतीय पक्ष द्वारा उनके नेपाली सहयोगियों को यह इशारा किया गया कि इस तटबन्ध का उच्चीकरण, मजबूतीकरण तथा उसके सारे स्परों का निर्माण आदि काम जून 2009 के मध्य तक पूरा कर लिया जाना है बशर्ते स्थानीय लोग इस काम में व्यवधान न पैदा करें जिस पर नेपाली पक्ष ने अपनी तरफ से पूर्ण सहयोग की पेशकश की। सप्त-कोसी बांध की परियोजना रिपोर्ट की प्रगति के बारे में भारत की तरफ से कहा गया कि इन कार्यालयों में काम मई 2007 से बन्द है। जनवरी 2009 में चतरा और बराहक्षेत्र के पास काम को फिर शुरू करने का प्रयास किया गया मगर वहाँ स्थानीय जन-विक्षोभ के कारण फिर गड़बड़ी पैदा हुई और काम बन्द कर देना पड़ा। भारतीय पक्ष ने अपने नेपाली सहयोगियों से निवेदन किया कि वे अधिकारियों/कर्मचारियों को तुरन्त पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने का प्रबन्ध करें ताकि इस काम को जून 2010 तक पूरा किया जा सके। नेपाली पक्ष का कहना था कि नेपाल सरकार ने मंत्री तथा जिला स्तर पर सुरक्षा समितियाँ बना रखी हैं और सुरक्षित वातावरण तैयार करने के लिए राजनैतिक प्रयास जारी हैं ताकि सर्वेक्षण के काम को फिर से गति दी जा सके। इस पर भारतीय पक्ष का निवेदन था कि वह काम समयबद्ध कार्यक्रम के अधीन होना चाहिये। उनका यह भी कहना था कि अगर तीन महीने के अन्दर स्थिति सामान्य नहीं होती है तो खर्च और अकार्यरत कर्मचारियों का ध्यान रखते हुए संयुक्त परियोजना कार्यालय के आकार को घटाना पड़ जायेगा।[27]

22 अगस्त 2009 को नेपाली प्रधानमंत्री माधव कुमार नेपाल की भारत यात्रा के बाद दोनों सरकारों का जो संयुक्त वक्तव्य आया उसमें सप्त-कोसी बांध तथा सुन-कोसी डाइवर्शन की चर्चा तो जरूर थी मगर बागमती और कमला बहूद्देशीय परियोजनाओं का कोई ज़िक्र नहीं था। बागमती नदी के प्रवाह को स्वच्छ और सुरक्षित बनाये रखने के लिए इस संयुक्त वक्तव्य में एक बागमती सिविलाइज़ेशन प्रोजेक्ट चलाने की बात जरूर कही गयी थी जिसका नुनथर बांध से कोई लेना देना नहीं है।[28]

जल-संसाधन विषयक भारत-नेपाल की संयुक्त समिति की पाँचवीं बैठक पोखरा (नेपाल) में 20-22 नवम्बर 2009 को सम्पन्न हुई और उसमें बहुत से अन्य मुद्दों के साथ इस बात पर सन्तोष व्यक्त किया गया कि कुसहा के ब्रीच क्लोज़र का काम सफलतापूर्वक पूरा कर लिया गया तथा 2009 के बरसात के मौसम में दोनों तटबन्धों के बीच तीन लाख क्यूसेक से अधिक प्रवाह बिना किसी नुकसान के बहाया जा सका। भारतीय पक्ष ने नेपाली सहयोगियों को आश्वस्त किया कि इस से संबंधित जो कुछ भी बचा-खुचा काम है वह जून 2010 के पहले पूरा कर लिया जायेगा। मगर नेपाली पक्ष ने समिति को सूचित किया कि सप्त-कोसी बांध और सुन-कोसी डाइवर्शन की परियोजना रिपोर्ट तैयार करने वाले संयुक्त परियोजना कार्यालय का काम जो मई 2007 में जन-विक्षोभ के कारण बन्द हो गया था उसे तमाम कोशिशों के बावजूद दुबारा शुरू नहीं किया जा सका और सप्त-कोसी बांध की साइट पर काम करने का माहौल ऐसा नहीं है कि वहाँ ज़मीन के नीचे ड्रिलिंग आदि जैसे काम सुचारु रूप से किये जा सकें। चतरा और बराहक्षेत्र की साइटों पर दो सशस्त्र पुलिस बल की चौकियाँ स्थापित करने के प्रयास किये जा रहे हैं ताकि परियोजना कर्मियों को आवश्यक सुरक्षा प्रदान की जा सके। भारतीय पक्ष का कहना था कि मात्र दो चौकियों से काम नहीं चलेगा और इसके लिए चलन्त सुरक्षा दलों की व्यवस्था करनी पड़ेगी ताकि कार्य क्षेत्रों में सुरक्षा व्यवस्था मजबूत रहे। उन्होंने याद दिलाया कि पिछली मीटिंग में यह प्रस्ताव किया गया था कि अगर तीन महीनें के अन्दर भूगर्भीय सर्वेक्षण का काम शुरू नहीं हो पाता है तो संयुक्त परियोजना कार्यालय के कर्मियों की संख्या घटा देनी पड़ेगी और उन्हें

दूसरे-दूसरे स्थानों पर काम में लगा दिया जायेगा। उन्होंने दुःख व्यक्त किया कि छः महीनें बीत जाने पर भी परिस्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। समिति ने तब तय किया कि मार्च 2010 तक अगर हालात नहीं सुधरते हैं तो परियोजना कार्यालय के आकार को छोटा करने के इस प्रस्ताव पर अमल किया जायेगा।[29]

इसके बाद मार्च 30-31, 2010 को काठमाण्डू में भारत-नेपाल संयुक्त स्थाई टेकनिकल समिति की मीटिंग हुई जिसमें नवम्बर 2009 में जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति के हवाले से सवाल उठा कि अगर मार्च 2010 के पहले सप्त-कोसी बांध और सुन-कोसी डाइवर्शन के तकनीकी कर्मियों की सुरक्षा व्यवस्था दुरुस्त नहीं की जाती है तो इस कार्यालय में कर्मियों की संख्या घटायी जायेगी और इन लोगों को दूसरे कामों में लगाया जायेगा। नेपाली पक्ष का अभी भी कहना था कि प्रस्तावित कोसी बांध की साइट पर अब तक काम शुरू नहीं हो पाया है। उन्होंने कहा कि बराहक्षेत्र और चतरा में पुलिस चौकी स्थापित करने की प्रक्रिया काफी आगे बढ़ चुकी है और नेपाल सरकार ने चलन्त पुलिस व्यवस्था के लिए भी आवश्यक निर्देश दे दिये हैं और आशा व्यक्त की कि सुरक्षा के इस माहौल में इन स्थानों पर शीघ्र ही काम शुरू हो जायेगा।[30]

4.8 बातों की बादशाहत–कमेटी दर कमेटी

वास्तव में भारत और नेपाल के बीच जल-संसाधनों के उपयोग, विचार-विमर्श, अनुश्रवण, सहयोग और भविष्य के लिए योजनाएं बनाने हेतु तीन स्तरों पर बहुत सी संयुक्त समितियाँ काम करती हैं। इन समितियों का विवरण नीचे दिया जा रहा है–

(1) जल-संसाधन के लिए मंत्री स्तरीय संयुक्त आयोग (Joint Ministerial Commission on Water Resources)—इस आयोग की अध्यक्षता भारत और नेपाल सरकार के जल-संसाधन मंत्री करते हैं और इस समिति का काम जल-संसाधन पर पारस्परिक सहयोग का ध्यान रखना होता है। इस आयोग में दोनों देशों का समुचित प्रतिनिधित्व होता है और इसकी मीटिंग वर्ष में एक बार होती है।

(2) जल-संसाधन पर संयुक्त समिति (Joint Committee on Water Resources)—इस समिति की अध्यक्षता दोनों देशों के जल-संसाधन विभाग के सचिव करते हैं। इस समिति का काम जल-संसाधन संबन्धी परियोजनाओं की योजना बनाने तथा उनके क्रियान्वयन के साथ-साथ संयुक्त स्थायी तकनीकी समिति (Joint Standing Technical Committee) के कामों की भी समीक्षा करना है। यह समिति यह भी सुनिश्चित करती है कि मंत्री स्तर पर साझा कार्यक्रमों के लिए जो निर्णय लिए जाते हैं उनका त्वरित क्रियान्वयन हो। यह समिति अपनी-अपनी सरकारों को काम की प्रगति के प्रति रिपोर्ट करती रहती है। इस समिति की मीटिंग वर्ष में दो बार किये जाने का प्रावधान है जिसमें साधारणतः एक मीटिंग मंत्री स्तर वाली मीटिंग के पहले और दूसरी उसके छः महीनें के बाद होती है।

(3) संयुक्त स्थायी तकनीकी समिति (Joint Standing Technical Committee)—इस समिति का काम जल-संसाधन पर संयुक्त समिति के अधीन आने वाली सभी समितियों, उप-समितियों, कार्यकारी बलों आदि के काम का अनुश्रवण करना है। यह समिति वर्ष में प्रति तीन महीने में एक बार बैठ कर विचार विमर्श करती है।

बाकी संयुक्त समितियों में से कुछ के नाम नीचे दिये गए हैं–

(i) Standing Committee on Inundation Problem (SCIP),
(ii) Standing Committee on Flood Forecasting (SCFF),
(iii) Joint Committee on Flood Management (JCFM),
(iv) Sub-Committee on Embankment Construction (SCEC),
(v) Joint Project Office-Sapta Kosi and Sun Kosi Diversion Investigation (JPO-SKSKI),
(vi) Joint Committee on Kosi and Gandak Projects (JCKGP).

इन समितियों की मदद के लिए भारत की कई अन्य समितियाँ भी काम कर सकती हैं जिनमें से कुछ के नाम नीचे दिये गए हैं–

(i) Kosi High Level Committee (KHLC),
(ii) High Level Experts Team (HLET),
(iii) Gandak High Level Committee (GHLC).

कुछ सरकारी संयुक्त समितियों के कार्य-कलाप की एक हलकी सी झलक हमने अभी देखी है और अब नेपाल का प्रबुद्ध वर्ग इस पूरी समस्या को किस तरह से देखता है उस पर एक नज़र डालने की कोशिश करते हैं।

4.9 ख़राश की अभिव्यक्ति

वर्ष 1991 में जहाँ दोनों देशों के बीच एक ओर ज्वाइन्ट कमेटी ऑफ एक्सपर्ट्स और ज्वाइन्ट कमेटी फॉर एम्बैन्कमेन्ट कन्सट्रक्शन का गठन हुआ वहीं नेपाल के प्रबुद्ध वर्ग में भारत-नेपाल की साझा जल-संसाधन की योजनाओं में ख़राश पैदा होना शुरू हुई। दीपक ज्ञेवाली लिखते हैं, ''...1990 के पहले जल-संसाधन विकास की परियोजनाएं वही हुआ करती थीं जिनके बारे में जल-संसाधन और विद्युत विभाग के विशेषज्ञ तय कर दिया करते थे और जिनके लिए नेपाल के दो विराट पड़ोसियों भारत और चीन की सरकारों समेत किसी दाता संस्था का समर्थन मिल जाय। इस पर पहला राजनैतिक विरोध 1991 में शुरू हुआ जबकि पश्चिम में भारत ने एकतरफा तरीके से भारत-नेपाल सीमा पर महाकाली नदी पर टनकपुर जल-विद्युत प्रकल्प हाथ में लिया। नेपाल के प्रधानमंत्री गिरिजा प्रसाद कोइराला जब भारत की राजकीय यात्रा पर गए थे तब उन्होंने इस परियोजना में बायें तटबन्ध को नेपाल की सीमा में बनाये जाने पर 'सहमति' प्रदान कर दी थी और उस समय भारत ने इस मुद्दे पर नेपाल की संवेदनशीलता का संज्ञान नहीं लिया। बाद में यह विषय 1996 में हुई महाकाली संधि की भेंट चढ़ गया जो कि उसी समय से इससे भी ज्यादा विवादास्पद विषय बन गयी है। इस संधि पर बहस जल-संसाधन संबंधी सभी विषयों, जैसे पानी पर किसका अधिकार हो, परियोजना से होने वाले लाभ का बटवारा किस तरह से हो और पानी को समग्रता में किस तरह से देखा जाए, आदि को आम जनता के बीच ले आयी।''[31]

टनकपुर में हुआ यह था कि भारत सरकार ने 1980 में महाकाली नदी पर 1928 में बनी पुरानी पड़ रही शारदा बराज के विकल्प में पूरे-पूरे भारतीय क्षेत्र में टनकपुर बराज का निर्माण किया था जिससे

16.10 लाख हेक्टेयर कृषि भूमि पर सिंचाई की व्यवस्था की जा सके। यहाँ पर भारत ने अपने क्षेत्र की सिंचाई के लिए तथा नेपाल को पानी देने के लिए दो अलग-अलग नहरों का निर्माण किया लेकिन भारतीय नहर का बेड लेवेल नेपाल वाली नहर के बेड लेवेल से 3.5 मीटर (लगभग 11.5 फीट) नीचे रखा। इसका मतलब यह होता है कि पानी पहले भारत वाली नहर में जायेगा और वह नेपाल वाली नहर में तभी जायेगा जब भारत वाली नहर में उसकी गहराई 3.5 मीटर (11.5 फीट) से ज़्यादा हो। भारत का कहना है कि बराज के पीछे जो जलाशय बनेगा उसका लेवेल इस तरह से सुनिश्चित होगा कि नेपाल वाली नहर में कम से कम 1.7 मीटर गहराई का पानी हर समय जा सके। नेपाल एलेक्ट्रिसिटी अथॉरिटी के भूतपूर्व प्रबन्ध निदेशक शान्ता बहादुर पुन का मानना है, ''...भारत ने इसी तरह का वायदा गंडक बराज के साथ भी किया था, जिसकी पश्चिमी नहर में एक जल-विद्युत प्लांट भी स्थापित है मगर वहाँ जलाशय में पानी का लेवेल स्थिर नहीं रखा गया जिसके फलस्वरूप नेपाल को कभी भी पानी की निर्धारित मात्रा नहीं मिली। पिछले 13 वर्षों से भारत को कहा जा रहा है कि वह नेपाल वाली नहर का बेड लेवेल नीचे कर दे मगर उसके कान पर जूं नहीं रेंगती। इसके बावजूद भारत यह तर्क देता है कि टनकपुर में नेपाल के लिए बनाया गया रेगुलेटर संधि पर हस्ताक्षर करने के पहले 1992 में ही बन चुका था... भारत का हमेशा से काम करने का तरीका ही यही है कि पहले निर्माण कर लो और बाद में कुछ वर्षों में इसे नियमित कर लो।''[32] यह पूरा मसला जल-संसाधन विषयक संयुक्त समिति की अब तक की हर मीटिंग में उठाया जाता है, विकल्प भी सुझाये जाते हैं, काम भी होता है मगर औपचारिक संयुक्त समितियों के बाहर नेपाल के प्रबुद्ध वर्ग को यह विश्वास हो गया है कि 'भारत ने न सिर्फ एकतरफ़ा तौर पर टनकपुर बराज का निर्माण किया वरन् उसके पास वह ''दूरदृष्टि और विनम्रता'' भी थी कि उसने नेपाल के लिए 1992 में ही 28 घनमेक क्षमता वाली नहर के इनलेट का निर्माण कर दिया था।'[33]

4.10 तबाहियाँ दोनों तरफ

सच यह भी है कि एकतरफा कार्यवाही में नेपाल भी पीछे नहीं है। बागमती नदी पर करमहिया बराज और कमला नदी पर बंदीग्राम के पास गोडार बराज का निर्माण इसका उदाहरण है। करमहिया बराज के कारण भारत की बागमती से सिंचाई वाला सपना टूट गया। कमला बराज के कारण जयनगर के निचले हिस्सों में सूखे के समय पानी की कमी देखी गयी है। अंग्रेजों के शासनकाल में जब भी बागमती या कमला नदी से सिंचाई प्रकल्पों की बात उठती थी तो वह हमेशा नेपाली क्षेत्रों में आवश्यकता के समय पानी रोक लिए जाने के प्रति आशंकित रहते थे और शायद इसीलिए उन्होंने कभी इन योजनाओं को गंभीरता से नहीं लिया। बागमती परियोजना में रमनगरा-गम्हरिया के पास बराज के निर्माण न होने के पीछे बिहार के लोग केन्द्र या राज्य सरकार की चाहे जितनी भर्त्सना कर लें, यह गलत नहीं है कि नेपाल में करमहिया बराज के निर्माण की वजह से गम्हरिया बराज का निर्माण न कर पाना एक महत्वपूर्ण कारण है। कई बार सांसद रहे भोगेन्द्र झा यह जरूर मानते थे कि नेपाल द्वारा इन बराजों के निर्माण के पीछे भारत सरकार की अकर्मण्यता थी जो उसने नेपाल सरकार के साथ बात-चीत करके नुनथर और शीसापानी बांधों की उपयोगिता को ठीक से नहीं समझाया और नेपाल ने इस बराजों का निर्माण दूसरे स्रोतों की मदद से पूरा कर लिया।[34]

1996 वाली भारत-नेपाल महाकाली संधि भी इसी तरह के अविश्वास का शिकार हुई। इस संधि के छः महीने के अन्दर विस्तृत परियोजना रिपोर्ट बना लेने का प्रस्ताव था, दो वर्षों के अन्दर निर्माण के लिए आवश्यक आर्थिक संसाधन जुटा लेने की बात थी और आठ

करमहिया बराज का अपस्ट्रीम छोर से लिया गया चित्र

वर्ष के अन्दर इसे पूरा कर लिया जाना था। इन सारे प्रस्तावों का नेपाली संसद ने दो-तिहाई बहुमत से अनुमोदन भी कर दिया था मगर इनमें से कोई भी काम आज तक (जून 2010) नहीं हुआ। इस मसले को लेकर नेपाल की मुख्य विपक्षी पार्टी नेपाल की कम्यूनिस्ट पार्टी का विभाजन जरूर हो गया। नेपाली जन-मानस में यह बात बैठी हुई है कि यह संधि उनके हक में नहीं है और इसका अधिकांश फायदा भारत को मिलने वाला है। कुछ इसी तरह की बातें कोसी और गंडक परियोजनाओं के बारे में भी प्रचलन में हैं जिनके बारे में नेपाली प्रबुद्ध वर्ग और क्रियाशील समूहों को यह लगता है कि इन दोनों योजनाओं का लाभ मुख्यत: भारत को हुआ है और नेपाल के हिस्से केवल बरबादी आयी है। यहाँ हम जरूर कहना चाहेंगे कि कोसी परियोजना में भारतीय भाग में 7.12 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर सिंचाई होनी थी जिसके बदले में 2005, 2006 और 2007 के सिंचाई वर्ष में क्रमश: 1.4917 लाख हेक्टेयर 1.2413 लाख हेक्टेयर और 1.3618 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर ही सिंचाई हुई। इस नहर से अधिकतम सिंचाई 2.13 लाख हेक्टेयर 1983-84 में हुई थी। 2008 में कुसहा में तटबन्ध टूटने के बाद पूर्वी कोसी मुख्य नहर से सिंचाई प्राय: बन्द है। इस योजना से 2.14 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा मिलने वाली थी लेकिन 3.68 लाख हेक्टेयर क्षेत्र कुसहा वाली दरार की चपेट में अकेले भारत में आ गया। लगभग 1.20 हेक्टेयर ज़मीन तटबन्धों के बीच हमेशा के लिए बरबाद हो गयी। पूर्वी तटबन्ध के पूर्व के भारतीय भाग में 1.82 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर तथा पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में 1.24 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर जल-जमाव है। यानी 2.14 हेक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा देने के नाम पर कोसी क्षेत्र में 4.28 लाख हेक्टेयर ज़मीन को हमेशा के लिए तबाही के कगार पर ला खड़ा किया गया। इसी तरह से गंडक परियोजना क्षेत्र में सिंचाई के 11.53 लाख हेक्टेयर के लक्ष्य के विरुद्ध 2003-04, 2004-05, 2005-06 के सिंचाई वर्ष में मात्र 3.95 लाख हेक्टेयर, 3.88 लाख हेक्टेयर और 3.88 लाख हेक्टेयर कृषि क्षेत्र पर सिंचाई हुई।[35]

जल-संसाधन विभाग की इन उपलब्धियों को बिहार के लोग भी कभी खुशगवार नहीं कहेंगे। नेपाल का आम आदमी अगर यह समझता है कि इन योजनाओं का सारा लाभ भारत को मिला है तो कहीं न कहीं कुछ गलतफ़हमी जरूर है। इस तरह अगर इन योजनाओं से भारत और नेपाल दोनों देशों के ही लोग नाखुश रहते हैं और एक दूसरे पर सन्देह करते हैं तो उनकी समस्या की कोई तीसरी और साझा वजह हो सकती है जिसकी तलाश और निराकरण का प्रयास दोनों देशों के प्रबुद्ध लोगों को मिल कर करना चाहिये। इसमें आवश्यकताओं का सही मूल्यांकन, उपलब्ध सारे विकल्पों का तुलनात्मक अध्ययन, योजना का सभी स्तर पर होने वाले लाभ का न्याय संगत वितरण, निर्णय प्रक्रिया में सभी संबद्ध पक्षों की भागीदारी तथा जिम्मेदार व्यक्तियों या संस्थाओं का कर्तव्य निर्धारण आदि बहुत सी चीज़ों का विश्लेषण कर के ही योजना का सही, सर्वमान्य और तर्कसंगत मूल्यांकन संभव है।

नेपाल में विश्व बैंक की सहायता से 1990 के पूर्वार्द्ध में अरुण-3 नाम के 201 मेगावाट क्षमता वाले एक जल-विद्युत प्रकल्प पर काम शुरू हुआ जिसके प्रति किलोवाट उत्पादित बिजली की लागत 5400 अमरीकी डॉलर आती थी और यह लागत निजी क्षेत्र के छोटे विद्युत केन्द्रों के मुकाबले चौगुना बैठती थी। नेपाल के क्रियाशील समूहों ने इसका विश्लेषण किया और उस आधार पर योजना का विरोध शुरू हुआ। प्रबुद्ध वर्ग के इस तथ्यात्मक विरोध ने स्थानीय स्तर पर चल रहे पुनर्वास और पर्यावरण की लड़ाई लड़ रहे समूहों के तर्क को मजबूत किया और अन्तत: विश्व बैंक को परियोजना से हट जाना पड़ा।

4.11 बड़े बांधों की बहस-विश्ववार्ता की शुरुआत

लगभग इसी समय भारतवर्ष में भी नर्मदा परियोजना के विभिन्न बांधों सहित टिहरी बांध और सुवर्णरेखा परियोजनाओं के विरोध में जन आन्दोलन पुनर्वास से हट कर तकनीक के औचित्य, लाभ-लागत और बांध के पर्यावरणीय प्रभाव के अध्ययन तक पहुँच चुका था। बांधों के समर्थक और सरकार जिस आन्दोलन को केवल बेहतर पुनर्वास के लिए किया गया आन्दोलन मानते थे, उसका आधार दरकने लगा क्योंकि तब बहुत से पर्यावरणविद्, इंजीनियर, वकील और सामाजिक सरोकार रखने वाले विद्वान बांधों के विरोध में आ खड़े हुए। भारत में भी सरदार सरोवर परियोजना का विरोध इतना प्रखर और व्यापक हो गया कि विश्व बैंक को वहाँ से हाथ खींचना पड़ गया। यह 1993 की बात है।

यह महज इत्तिफ़ाक नहीं था कि इस तरह के आन्दोलन किसी न किसी रूप में सारी दुनियाँ में चल रहे थे। परिणामस्वरूप बांध के समर्थकों, निर्माणकर्ताओं और इस तरह के कामों के लिए आवश्यक आर्थिक संसाधन मुहय्या करने वाली वित्तीय संस्थाओं पर दबाव बढ़ रहा था कि वह बांधों का विरोध कर रहे निरीह लोगों और उनके समर्थन में आये पर्यावरणविदों, इंजीनियरों, न्यायविदों और समाजकर्मियों द्वारा उठाये गए प्रश्नों का न सिर्फ जवाब दें बल्कि उनका समाधान भी करें। यहीं से 1997 में विश्व बांध आयोग की स्थापना हुई जिसमें बड़े बांधों के पक्ष और विपक्ष के सभी लोगों तथा वित्तीय संस्थाओं तक ने एक साथ बैठ कर सारी समस्याओं का सम्यक अध्ययन किया। इस आयोग की रिपोर्ट 1999 में आयी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस आयोग की एक टीम सरदार सरोवर बांध की अध्ययन यात्रा पर जाने वाली थी लेकिन भारत सरकार ने उसकी अनुमति नहीं दी। आयोग नेपाल में भी एक मीटिंग करना चाहता था मगर उसे वहाँ भी इसकी इज़ाज़त नहीं मिली।

बहरहाल, इस आयोग की रिपोर्ट में बड़े बांधों की उपयोगिता स्वीकार करते हुए उपर्युक्त बहुत से सवालों का जवाब खोजने की कोशिश की गयी जिसके बारे में हम नीचे थोड़ी चर्चा करते हैं।

4.12 विश्व बांध आयोग की रिपोर्ट

विश्व बैंक समेत बहुत सी वित्तीय और दाता संस्थाओं तथा दुनियाँ भर में फैले पानी/बिजली पर काम कर रहे क्रियाशील समूहों के साझा प्रयास से बड़े बांधों की उपादेयता पर विश्व बांध आयोग (वि॰बा॰आ॰) की रिपोर्ट सन् 2000 में जारी की गयी थी। वि॰बा॰आ॰ की रिपोर्ट के आरम्भ में ही यह लिख कर स्पष्ट कर दिया गया है कि यह रिपोर्ट किसी भी मायने में बड़े बांधों के खिलाफ़ नुस्ख़ा नहीं है लेकिन इस रिपोर्ट के कारण भारत के सरकारी अमला तंत्र में एक तरह से भूचाल सा आ गया। भारत सरकार के जल-संसाधन विभाग और केन्द्रीय जल आयोग ने इस रिपोर्ट को सिरे से ही ख़ारिज़ कर दिया।

बांध या इस तरह की किसी भी संरचना के निर्माण सम्बन्धी दो आयाम होते हैं। पहला, बांध से समाज या देश को होने वाले समस्त लाभ और लागत का विश्लेषण करना होता है जिससे कि भौतिक लाभ का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए। इसके लिए यह जरूरी है कि सम्बद्ध विभाग और इंजीनियर अपनी राय मुक्त रूप से और बेबाकी से रख सकें ताकि पूरे तथ्य और आंकड़ों के साथ तकनीकी और ग़ैर-तकनीकी मुद्दों पर पड़ी धुंद को छांटा जा सके और तब सारे सम्बद्ध पक्ष बांध की लागत और लाभ पर बहस और विश्लेषण कर सकें। सभी सम्बद्ध पक्ष सारी सूचनाओं और ज्ञान के आधार पर ही बांध के निर्माण या उसे ख़ारिज़ करने का सर्वसम्मत निर्णय लें। भूतकाल में निर्मित संरचनाओं का ज्ञान और अनुभव इस कोशिश में उनके लिए आधार का काम करेगा, ऐसी आशा रिपोर्ट में व्यक्त की गई है। वि॰बा॰आ॰ की रिपोर्ट ने विकास कार्यक्रमों में बड़े बांधों की उपयोगिता स्वीकार करते हुए इतना जरूर ज़ोर देकर कहा है कि विकास के इन लाभों को हासिल करने के लिए समाज का एक हिस्सा जो कीमत अदा करता है वह यक़ीनन अनुपात से ज़्यादा है और भविष्य में बनने वाले बांधों के बारे में वि॰बा॰आ॰ की सिफ़ारिश है कि बांधों के निर्माण में बांध से होने वाले लाभों का सभी संबद्ध पक्षों के बीच समान बटवारा, दक्षता, सहभागी निर्णय प्रक्रिया, टिकाऊपन और जवाबदारी जैसे पाँच बुनियादी सिद्धान्तों का क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए तथा बांध के सारे दूसरे विकल्पों की भली-भाँति जाँच-परख कर लेनी चाहिये।

दूसरा, बांधों की डिज़ाइन, निर्माण, संचालन और उसका रख-रखाव जैसी सारी चीज़ें तकनीकी महत्व की हैं। उसमें गैर-तकनीकी लोगों के हस्तक्षेप की गुंजाइश नहीं है। निर्माण कार्य का यह अंश तकनीकी विशेषज्ञों पर छोड़ देना चाहिये क्योंकि वह इस तरह के कामों के लिए सक्षम हैं।

वि॰बा॰आ॰ की रिपोर्ट ठीक ही दूसरे पहलू पर ख़ामोश है और यह ज़्यादातर बांधों के निर्माण सम्बन्धी निर्णय प्रक्रिया पर ही मुखर है जहाँ उसे लगता है कि सारे सम्बद्ध पक्षों की भागीदारी की गुंजाइश और जरूरत दोनों ही है। इसी सन्दर्भ में रिपोर्ट बराबरी, दक्षता, सहभागी निर्णय प्रक्रिया, टिकाऊपन और जवाबदारी की बात करती है। दुर्भाग्यवश इंजीनियरों और प्रशासन को पानी और बिजली परियोजनाओं में बराबरी तथा सहभागी निर्णय प्रक्रिया जैसी बातें कतई नहीं सुहातीं। अपने सीमित दायरे में वह दक्षता और टिकाऊपन जैसे शब्दों की व्याख्या जरूर कर सकते होंगे। वह दिन-प्रतिदिन के स्तर पर शायद जवाबदारी का मतलब भी समझते हों मगर लम्बी अवधि में जवाबदारी का मतलब शायद ही उन्हें तर्कसंगत लगता होगा। लंबी अवधि की जवाबदारी उनके लिए तकनीकी मामला न होकर नीतिगत फैसले से जुड़ा हुआ पहलू है। जवाबदारी एक ऐसा मसला है जिसे बड़ी आसानी से दूसरों पर ठेला जा सकता है। कभी-कभी तो यह जवाबदारी पिछली पीढ़ी के राजनीतिज्ञों और इंजीनियरों पर भी डाली जा सकती है कि उनके निर्णय सही नहीं थे। इसकी सफ़ाई में ऐसे कामों की एक लम्बी सूची जोड़ी जा सकती है जिन्हें परियोजना में शामिल किया जाना चाहिये था मगर विभिन्न कारणों से ऐसा नहीं किया जा सका। मगर वह काम जिनके बारे में योजना बनाते समय इंजीनियरों को जानकारी ही नहीं थी या फिर उन्होंने लाभ-लागत गुणक की चमक कायम रखने के लिए जान-बूझ कर जिन्हें छोड़ दिया था या तोड़-मरोड़ कर पेश किया था, वह इस सूची से बाहर रहेंगे। दुर्भाग्यवश, इंजीनियर पुनर्वास या क्षतिपूर्ति जैसे बहुत से कामों की जिम्मेवारी भी अपने सिर पर ले लेते हैं जिसका न तो उन्हें समुचित ज्ञान होता है और न ही उन्हें इस तरह के कामों का कोई प्रशिक्षण मिला होता है। बागमती परियोजना इसका बहुत अच्छा उदाहरण है।

आम आदमी को आंकड़ों के विश्लेषण या उनकी व्याख्या में कोई दिलचस्पी नहीं होती। यह काम इंजीनियरों का है मगर कभी-कभी उनके दावों पर समाज के प्रबुद्ध लोग प्रश्न खड़े करते हैं। बड़े बांधों के सन्दर्भ में एक आम आदमी की जो जरूरत या समझ है वह इसी बात तक सीमित रहती है कि जब कोई परियोजना हाथ में ली जाती है तो इससे उसकी सिंचाई की जरूरतें पूरी होंगी, जरूरत भर बिजली उसे उपलब्ध होगी तथा परियोजना का उसकी जीविका या रहन-सहन पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा। अगर परियोजना में बाढ़ नियंत्रण का भी लाभ जोड़ा गया है तो वह निश्चय ही यह उम्मीद करेगा कि उसकी ज़मीन बाढ़ से मुक्त रहेगी। इसके आगे न तो उसे नदी के हाइड्रोग्राफ से कोई मतलब है, न नहरों के संचालन की प्रक्रिया से और न ही उसे इस बात में कोई रुचि है कि स्पिल-वे के ऊपर से कब और कितना पानी जायेगा। उसकी समझ में अगर बिजली-पानी मिलता रहे तो फिर वह यह भी जानना नहीं चाहेगा कि उससे किये गए वायदों के न पूरे होने का तकनीकी औचित्य क्या है? राष्ट्रीय और विश्व स्तर पर कहाँ क्या हो रहा है, यह हमेशा उसे अपने खेत पर मिलने वाले पानी से कम महत्वपूर्ण है। दुनियाँ भर की चिन्ता योजना बनाने वाले करें। इतना सब होने के बावजूद अगर उसकी आकांक्षाएँ पूरी नहीं होती हैं तो फिर वह कहाँ जाकर फ़रियाद करेगा यह उसे नहीं मालुम। यही वह मुकाम है जहाँ तकनीकी विशेषज्ञों और एक आम आदमी के बीच तथ्यात्मक सूचनाओं के आधार पर बहस और जानकारी के आदान-प्रदान की जरूरत है।

इंजीनियरों को चाहिए कि वह आम आदमी को स्पष्ट रूप से यह बतायें कि किसी भी परियोजना विशेष से किसानों की रबी की सिंचाई की सारी जरूरतें किस हद तक पूरी हो सकती हैं। अमुक योजना ख़रीफ़ के मौसम में केवल सुरक्षात्मक सिंचाई देने के लिए बन रही है, अमुक योजना से बाढ़ के समय सर्वोच्च प्रवाह को केवल एक स्तर तक कम किया जा सकेगा मगर बाढ़ फिर भी एक हद तक अपनी जगह हमेशा बनी रहेगी और यह कि बाढ़ से पूरी तरह मुक्ति पाना संभव नहीं है, आदि आदि। किसानों को यह भी पता होना चाहिये कि बांध से पैदा होने वाली बिजली के पहले हक़दार कौन लोग होंगे, और उनके हिस्से अगर कुछ आया तो वह कब आयेगा। आम तौर पर प्राथमिकता के अन्तिम छोर पर वही लोग होते हैं जिनकी ज़मीन और रोज़ी-रोटी की क़ीमत पर परियोजना की बुनियाद रखी जाती है, यह उन्हें मालुम होना चाहिये। उन्हें तथा समाज को यह पता होना चाहिये कि देश और समाज के व्यापक हित में वह क्या-क्या कुर्बानियाँ दे रहे हैं। इतनी सारी जानकारी के साथ अगर समाज और ख़ास कर वे लोग जो कि परियोजना से नकारात्मक रूप से प्रभावित होंगे, देश-हित या समाज के हित में यह फैसला करते हैं कि अमुक योजना से स्थानीय समाज और देश को होने वाला लाभ उसके लिए चुकायी गयी हर तरह की कीमतों के मुकाबले ज़्यादा है तो योजना आम सहमति के आधार पर निश्चित रूप से बननी चाहिये। और एक दफ़ा यह फ़ैसला हो जाता है तब यह काम पूरे विश्वास और निष्ठा के साथ सरकार और इंजीनियरों के हाथ में सौंप देना चाहिये।

कड़वी सच्चाई मगर यह है कि सरकार और सम्बद्ध विभाग, निर्माणकर्ता ठेकेदार और वित्तीय संस्थाएँ यह कभी नहीं चाहतीं कि बांध या इस तरह के किसी भी सार्वजनिक हित के निर्माण कार्य पर कोई बहस हो क्योंकि इस तरह के कामों को हाथ में लेने के पीछे बहुत से ग़ैर-तकनीकी और राजनैतिक कारण होते हैं और तथ्याधारित बहस में इन सारी बातों का भांडा फूटने का अंदेशा रहता है। इन योजनाओं के निर्माण में जिन लोगों को आर्थिक या राजनैतिक लाभ मिलने वाला होता है उनमें इतना सब्र भी नहीं होता कि वह बहस में शामिल होकर अपना समय बरबाद करें।

वि०बां०आ० की रिपोर्ट सुझाती है, ''...ऐसा होने पर यह प्रभावकारी तरीके से तय हो जायेगा कि किसी भी वार्तालाप में किसकी जगह वाजिब है और किन विषयों को अजेण्डा में शामिल किया जायेगा।''[36] यही वह मुद्दा है जिस पर सम्बद्ध विभागों और राजनीतिज्ञों को ऐतराज़ है और यही वज़ह है कि केन्द्रीय जल-संसाधन विभाग (ज०सं०वि०) ने इस रिपोर्ट को ख़ारिज किया हुआ है। ज०सं०वि० को इस बात का अंदेशा है कि अगर सभी सम्बद्ध पक्षों की इस तरह से भागीदारी होने लगी तब तो जनतांत्रिक संस्थाएँ निरर्थक हो जायेंगी और लोगों द्वारा चुने गए जन-प्रतिनिधियों द्वारा निर्मित प्रशासनिक ढांचा ही ढह जायेगा। वि०बां०आ० की रिपोर्ट ''परियोजनाओं के महत्वपूर्ण स्तरों पर निर्णय की उस प्रक्रिया पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है जो कि अंतिम निष्कर्षों को प्रभावित करती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि नियंत्रक प्रावधानों का पालन हुआ है नहीं?" यह बात भी योजना बनाने वालों के अनुकूल नहीं है। ज०सं०वि० का मानना है, ''...स्वतंत्र चिन्तन, स्वतंत्र अभिव्यक्ति और स्वतंत्र विकल्प का चुनाव, यह सब अपनी जगह धरा रह जायेगा अगर स्वप्रेरित समूहों को बाहर नहीं रखा जायेगा और वास्तविक स्थानीय नेतृत्व को आगे नहीं किया जायेगा ताकि वास्तविक स्थानीय लोगों की आशंकाएँ और भावनाओं को अभिव्यक्ति मिल सके।" सच यह है कि स्वतंत्र चिन्तन, स्वतंत्र अभिव्यक्ति और स्वतंत्र विकल्प का चुनाव बिना किसी तथ्याधारित बहस के संभव ही नहीं है और इसी बहस से ज०सं०वि० बचना चाहता है। ज० सं० वि० स्थानीय नेतृत्व की बात तो करता है पर कभी भूल कर भी स्थानीय स्तर पर योजना बनाने की बात नहीं करता। ज०सं०वि०, ऐसा लगता है, यह नहीं चाहता है कि स्थानीय रूप से प्रभावित होने वाले लोगों की मदद में कोई बाहरी संस्था, व्यक्ति या प्रबुद्ध लोगों का समूह आये। वह एक ऐसी अदालत की कल्पना करता है जिसमें अभियोजन पक्ष में तो एक से एक सूरमां हों मगर पीड़ित व्यक्ति को वकील रखने की इजाजत न हो। ज०सं०वि० की स्वीकारोक्ति है, ''...एक ज़्यादा तर्क संगत तरीका यह हो सकता है कि विस्थापन और पुनर्वास के मसले पर उन लोगों से विचार विमर्श किया जाए जो कि विस्थापित होने वाले हैं जिससे पुनर्वसन के लिए उनकी सामाजिक और आर्थिक आकांक्षाओं का ध्यान रखा जा सके।"[37] यहाँ ज०सं०वि० यह मान कर चलता है कि पुनर्वास के अलावा इन संरचनाओं के निर्माण में दूसरा कोई ऐसा मुद्दा ही नहीं है जिस पर लोगों से बात करने की जरूरत है। वह यह बड़ी आसानी से भूल जाता है कि सरकार से केवल पुनर्वास जैसी वाजिब और इतनी ज़रा सी सुविधा पाने के लिए जनता को वर्षों संघर्ष करना पड़ा है। बागमती परियोजना में पुनर्वास के नाम पर क्या-क्या नाटक हुए, यह किसी से छिपा नहीं है। फिर यह बहस केवल विस्थापन और पुनर्वास पर ही क्यों होगी, योजना के विकल्पों पर क्यों नहीं होगी? अगर कोई परियोजना अपने उद्देश्यों से भटक जाए तो क्या उस पर बहस नहीं होगी? लोग क्यों इस बात पर चुप्पी साधेंगे कि गंडक या कोसी के कमान क्षेत्र में जल-जमाव का क्षेत्र परियोजना द्वारा सिंचित क्षेत्र से ज़्यादा है? क्यों बाढ़ सुरक्षा के लिए उत्तर प्रदेश से लेकर असम तक नदियों पर बनाये गए तटबन्धों की हर बरसात में धज्जियाँ उड़ जाती हैं और इस दुर्घटना की जिम्मेवारी लेने के लिए कोई भी तैयार नहीं होता? 2004 की बाढ़ में असम की नदियों के किनारे बने तटबन्ध 336 जगह और बिहार में 56 जगह टूटे। 2007 की बाढ़ में बिहार में नदियों पर बने तटबन्ध 32 जगह, स्टेट और नेशनल हाइवे 54 जगह और ग्रामीण सड़कें 829 स्थान पर टूटीं। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि इन संरचनाओं के किसी जगह टूटने के बाद उसके नीचे इस संरचना का कोई मतलब नहीं बचता। 2008 में कुसहा में कोसी का जो पूर्वी एफ्लक्स बांध टूटा वह तो अपने आप में एक नजीर है। इस असफलता पर जल संसाधन विभाग, गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग, केन्द्रीय जल आयोग या सरकार की कौन जय-जयकार करेगा या उनकी आरती उतारेगा? राहत मांगने वालों पर बन्दूक दागने की कैफ़ियत जनता क्यों तलब नहीं करेगी? किसी भी बातचीत का आधार इस तरह के उदाहरण क्यों नहीं होंगे?

नेपाल ने, जहाँ कि बिहार की नदियों सम्बन्धी बांध बनने की सारी साइट्स हैं, विश्व बांध आयोग की रिपोर्ट को स्वीकार किया हुआ है। जब भी भारत और नेपाल के बीच बांधों सम्बन्धी कोई भी बात-चीत गंभीर और निर्णायक दौर में पहुँचेगी, वि०बां०आ० की रिपोर्ट की सिफ़ारिशें आड़े आयेंगी और कुल मिला कर इस सारी बहस से उठे सवालों की कीमत भारत को ही चुकानी पड़ेगी। बेहतर हो कि यह तैयारी पहले से की जाए।

4.13 वे भी अपना हक मांगते हैं

बात नेपाल द्वारा केवल विश्व बांध आयोग की सिफारिशें स्वीकार कर लेने की ही नहीं है। नेपाल की जनता और आदिम जाति समूहों ने विदेशी कम्पनियों द्वारा शुरू किये गए इन बांधों के सर्वेक्षणों को रोकने का काम सफलतापूर्वक किया है। भारत और नेपाल के संयुक्त दल के दफ्तरों पर काम 2007 से इसी विरोध के कारण बन्द कर देना पड़ा और अभी भी हालात वहाँ सामान्य नहीं हैं। स्थानीय मुखर विरोध के बीच केन्द्रीय नेतृत्व को जल-विद्युत के विकास संबन्धी योजनाओं पर काम कर रहे दलों या प्राइवेट कम्पनियों को उनकी सुरक्षा की गारन्टी देने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इसी बीच अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) का कन्वेन्शवन आई०एल०ओ० 169 प्रस्ताव आया जिसमें इस तरह की विकास मूलक परियोजनाओं में आदिवासियों और आदिम जन-जातियों के अधिकारों की रक्षा की बात कही गयी है। नेपाल में फिलहाल प्रशासन के पुनर्गठन का जो प्रयास चल रहा है उसमें इन अधिकारों के समावेश को भी सुनिश्चित किया जाना है क्योंकि नेपाल इस कन्वेन्शन की सिफारिशों पर हस्ताक्षर कर चुका है। अब नेपाल के स्थानीय राजनैतिक कार्यकर्ता तथा आदिवासियों और आदिम जन-जातियों के समूह अपने तरीके से ILO-169 के प्रस्ताव की व्याख्या कर रहे हैं और चाहते हैं कि जल-विद्युत का उत्पादन करने वाले प्रकल्पों में उनके हितों की अनदेखी न हो। उनका तर्क है कि अपने क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों को नियंत्रित करने का अधिकार इस तरह के स्थानीय समूहों का ही है जिसका सीधा-सीधा

मतलब यह होता है कि कोई भी केन्द्र सरकार पूरी जानकारी दिये जाने के साथ-साथ उनकी सहमति के बिना कोई निर्णय नहीं ले सकती। इस तरह से जल-संसाधनों को नियंत्रित करने वाली केन्द्रीय व्यवस्था को अब न केवल विश्व बांध आयोग की सिफारिशों का ध्यान रखना पड़ेगा वरन् उनको स्थानीय आदिवासियों और आदिम जाति और जन-जाति समूहों के विरोध का सामना भी करना पड़ेगा।[38]

19 जून 2010 को पूर्वी नेपाल में माओवादियों द्वारा समर्थित पन्द्रह समूहों ने 3300 मेगावाट क्षमता वाले प्रस्तावित 269 मीटर ऊँचे सप्तकोसी बांध के विरोध में जबर्दस्त प्रदर्शन किया। नेपाल के विदेश मंत्रालय को दिये गए एक स्मार पत्र में उनका कहना था कि अगर इस बांध का निर्माण होता है तो उसके डूब क्षेत्र में नेपाल के 83 गाँव आयेंगे जिनमें न केवल उनकी कृषि भूमि डूबेगी वरन् उनके धार्मिक और पारम्परिक आस्था के केन्द्र भी डूबेंगे। उनका यह भी कहना था कि इस बांध के निर्माण का लाभ मुख्यत: भारतवर्ष को मिलेगा। सूत्रों के अनुसार इस प्रतिरोध के बावजूद सर्वेक्षण का काम रुका नहीं है। भारी सुरक्षा के बीच नेपाल के सर्वे विभाग ने इलाके का एक नक्शा तैयार कर लिया है और जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया के तीन भूगर्भशास्त्रियों की मदद से ज़मीन के अन्दर की शिलाओं का अध्ययन जारी है।

नदी के जल संसाधन का समुचित उपयोग करने के लिए यह जरूरी है कि सम्पूर्ण घाटी को ध्यान में रख कर ही योजना बनायी जाए। इसके लिए प्रभावित होने वालों सभी संबद्ध पक्षों की सहमति बननी चाहिये। अगर कोई बांध प्रस्तावित है तो उसके ऊपरी और निचले क्षेत्र में रहने वाले लोगों (नेपाल तथा भारत-दोनों देशों के लाभार्थी और प्रभावित जनता) के बीच सारी सूचनाओं के साथ एक तथ्य आधारित बहस चला कर ही कोई निर्णय लिया जाए क्योंकि बांध से होने वाले लाभ का प्रचार तो बहुत बढ़-चढ़ कर किया जाता है पर उससे होने वाले नुकसान और दुष्प्रभावित होने वाले लोगों के हितों की उपेक्षा होती है। नदी के नियंत्रित प्रवाह का निचले क्षेत्रों की जीवन पद्धति विशेषकर कृषि, मत्स्य पालन और पशु संवर्धन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसलिए अगर कभी बराहक्षेत्र, नुनथर या शीसापानी बांध पर गंभीरता से चर्चा होती है तो इन दुष्प्रभावों की उतनी ही गंभीरता से समीक्षा भी होनी चाहिये। नेपाल के तराई वाले हिस्से और बिहार के कोसी, बागमती और कमला क्षेत्र के लिए यह समस्या बहुत ही महत्वपूर्ण है। यहाँ की मौजूदा और भविष्य में होने वाली समस्याओं के यथोचित और समुचित निराकरण के बाद ही बांध निर्माण की दिशा में कोई कदम उठाया जाना चाहिये। इसके साथ ही हम बांध के ऊपरी क्षेत्रों में होने वाले पर्यावरण और विस्थापन/पुनर्वास के मसले को कतई हल्का करके नहीं देखना चाहते क्योंकि वहाँ होने वाली किसी भी गड़बड़ी से निचले क्षेत्र अछूते नहीं रहेंगे और इसीलिए एक तथ्य आधारित आम सहमति की अपेक्षा रखते हैं।

बिहार के दूसरे सिंचाई आयोग की रिपोर्ट (1994) में इस बांध के बारे में कुछ जानकारी दी हुई है जिसे हम इस अध्याय के अंत मे परिशिष्ट-1 में उद्धृत कर रहे हैं।

4.14 ताकि हौसला बना रहे

अब लौट कर चलते हैं वापस अपने नेताओं के पास उनके विचार जानने के लिए। बिहार के भूतपूर्व जल-संसाधन मंत्री के विचार हमने समय-समय पर सुने हैं और उनके अनुसार नेपाल में बांध बनाये बिना बिहार की बाढ़ समस्या का समाधान हो ही नहीं सकता, यह बात बार-बार उन्होंने ज़ोर देकर कही है। नेपाल में बांध निर्माण के दूसरे बड़े समर्थक पं० भोगेन्द्र झा ने अपना सारा जीवन इन बांधों की वकालत में गुज़ार दिया। उनकी इस मुहिम से मतभेद हो सकता है मगर लोगों की पीड़ा की उनकी व्याख्या और उनकी निष्ठा पर कभी सन्देह नहीं किया जा सकता। नुनथर बांध के मुद्दे पर इस पृष्ठभूमि में लेखक ने कई स्वनामधन्य नेताओं से बात की। एक लम्बी संसदीय पारी खेलने वाले वरिष्ठ नेता रघुनाथ झा का कहना है, ''...नुनथर में बांध के निर्माण के लिए नेपाल का राजी होना जरूरी है। जब वे राजी होंगे तभी यह बांध बनेगा और इस समय तो उनके राजी होने का सवाल ही नहीं उठता। एक समय था जब वहाँ श्री 5 की सरकार थी और परिस्थितियाँ हमारे अनुकूल थीं। उसी समय अगर कोई समझौता हो गया होता तो सम्भव है बांध बन जाता पर उस समय प्राथमिकता में कोसी पर बराहक्षेत्र का बांध आता था। बागमती की तो कोई बात ही नहीं थी। कोसी पर जब तटबन्ध बन गया तो प्राथमिकता बदल कर गंडक की ओर चली गयी। बीच वाला हिस्सा तो काफी समय तक छूटा पड़ा रहा। ठाकुर गिरिजा नन्दन सिंह, युगल किशोर सिंह, जानकी मठ के महन्त रघुनाथ दास आदि के प्रयासों से कुछ न कुछ होता रहा मगर जो होना चाहिये था वह तो नहीं हो पाया।''[39]

उनके अनुसार जो होना चाहिये था और नहीं हो पाया वह शायद नुनथर में बागमती नदी पर प्रस्तावित बांध था। परिशिष्ट-1 में दिये गए विवरण के अनसार इस बांध द्वारा 99 क्यूमेक (3,500 क्यूसेक) पानी नहरों में भारतीय भाग में दिया जाना है जबकि नेपाल करमहिया बराज से कुल मिला कर 112.6 क्यूमेक क्षमता वाली नहरों को निर्माण कर चुका है। अपस्ट्रीम में स्थित होने के कारण वह इस पानी का इस्तेमाल कर भी लेगा और करता भी है। उस हालत में भारत में सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध भी होगा या नहीं, कह पाना मुश्किल है। शायद इसीलिए रमनगरा (गम्हरिया) में जो बराज बनना था उसका निर्माण शिलान्यास के आगे नहीं बढ़ पाया।

बांध के प्रस्तावित निर्माण स्थल नुनथर में नदी का जल-ग्रहण क्षेत्र मात्र 2706 वर्ग किलोमीटर है जबकि इस का कुल जल-ग्रहण क्षेत्र 14,384 वर्ग किलोमीटर है। इस तरह से नदी का बांध के नीचे का जल-ग्रहण क्षेत्र 11,678 वर्ग किलोमीटर बैठता है जो कि नुनथर पर नदी के जल-ग्रहण क्षेत्र का लगभग साढ़े चार गुना (4.32 गुना) है। इसके अलावा इस बात को इंजीनियरिंग तबका भी स्वीकार करता है कि जलाशय वाले बांधों से बाढ़ सुरक्षा निचले इलाकों में बहुत दूर तक नहीं दी जा सकती। बिहार सरकार द्वारा 2007 में नियुक्त बिहार की बाढ़ समस्या का अध्ययन करने वाली तकनीकी समिति यह स्पष्ट तौर पर कहती है कि ''(बड़े बांधों से) बाढ़ की सुरक्षा प्राप्त करने के लिए जलाशय और बाढ़ से तबाह होने वाला क्षेत्र आस-पास में होना चाहिये।''[40] बागमती के मसले पर नुनथर में प्रस्तावित बांध से भारतीय सीमा (ढेंग) की दूरी लगभग 70 किलोमीटर और ढेंग से बदलाघाट की दूरी प्राय: 400 किलोमीटर है। तब इस बांध से किस इलाके की सुरक्षा की बात कही जाती है? ऐसी हालत में यह बांध बाढ़ नियंत्रण के लिए कितना असरदार होगा यह तो पहले से ही मालुम है। शायद इसीलिए

इसमें बाढ़ नियंत्रण के लिए कोई स्थान भी निर्धारित नहीं है मगर यह बात जाने बिना राजनीतिज्ञों द्वारा इस बांध से बाढ़ नियंत्रण की अपेक्षा जरूर की जाती है। पूर्व केन्द्रीय मंत्री हरि किशोर सिंह का कहना है, ''... नुनथर बांध के निर्माण के लिए तो सरकार के पास पैसा ही नहीं है। न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी। यह संसाधन अगर जुटा भी लिया जाए तो नेपाल की आज की जो अन्दरूनी परिस्थितियाँ हैं उन्हें देखते हुए बांध का निर्माण या उसके लिए समझौता हो पाना थोड़ा कठिन लगता है। वहाँ का माहौल भारत के अनुकूल नहीं है। उसमें बाढ़ नियंत्रण के लिए फ्लड कुशन दिया गया है या नहीं यह तो किसी को भी पता नहीं होगा। शायद मंत्री लोग जानते हों। राजनीतिज्ञ तो इस बात को मान कर चलता है कि अगर किसी बांध का प्रस्ताव किया जा रहा है तो उसमें सिंचाई, बिजली का उत्पादन और बाढ़ नियंत्रण का प्रावधान होगा ही। अगर ऐसी व्यवस्था नहीं है तो यह बात तो टेकनिकल लोगों द्वारा उन्हें बताई जानी चाहिये थी।''[41]

अब टेकनिकल लोगों को यानी इंजीनियरों को क्या जरूरत है कि वह नेताओं के बयानों पर टीका-टिप्पणी करके या उसमें सुधार की सलाह देकर खुद के लिए परेशानी मोल लें। वह यह भी कह सकते हैं कि हमने अगर कोई बात आप को नहीं बतायी तो आप ने भी तो नहीं पूछा। आम धारणा यह है कि इंजीनियरों का जनता के साथ कोई वार्तालाप नहीं होता मगर उनका राजनैतिक नेतृत्व से भी वार्तालाप नहीं होता है और योजनाएं बस बनती चली जाती हैं, यह बहुत ही चिन्ताजनक स्थिति की ओर इशारा करता है। अब आम जनता के सामने उसके भले की बात न तो कोई कह करके पछतायेगा और न ही कोई चुप रह कर पछतायेगा। व्यवस्था इसी तरह चलती है। अपने पक्ष को बड़ी साफगोई से रखते हैं डॉ० जगन्नाथ मिश्र जो तीन बार बिहार के मुख्यमंत्री रहने के साथ-साथ केन्द्र में भी मंत्री रह चुके हैं। उनका कहना है, ''...नुनथर, शीसापानी, या बराहक्षेत्र बांधों का निर्माण कर पाना और उन से बाढ़ का कोई स्थाई समाधान कर पाना सन्देहास्पद लगता है। वैसे भी इन बांधों का बन पाना कोई आसान काम नहीं है। पॉलिटिकली हम लोग बोलते रहें, भाषण करते रहें, भारत सरकार को दोष देते रहें मगर इसकी संभावना आर्थिक रूप से, रचना की दृष्टि से और सामरिक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए है नहीं। नेपाल से इसकी सहमति लेना भी कोई आसान काम है क्या? हम लोग बोलते रहते हैं? वोट लेना है तो भाषण भी चलता रहता है लेकिन यह सब संभव नहीं दिखता। यह स्थिति बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण है। जब हम सत्ता में होते हैं तब विपक्ष हमें दोष देता है, जब हम विपक्ष में होते हैं तो वही काम हम करते हैं। यह सारी बातें जनता के हितों के विरुद्ध जाती हैं। जनता जब किसी या सारी पार्टियों पर कुछ भी न करने का आरोप लगाती है तब वह एकदम सही होती है। इस पर राजनीति होनी नहीं चाहिये। पाँच साल लालू प्रसाद जी केन्द्र में मंत्री थे, 6-6 साल रामबिलास पासवान और नीतीश कुमार जी भी केन्द्र में मंत्री थे। क्यों नहीं तब कुछ हुआ? जनता खंडित है, उसका कोई संगठन नहीं है और इसलिए इन समस्याओं के प्रति कोई पार्टी भी गंभीर नहीं हैं क्योंकि उसे उनके वोट के अलावा और किसी चीज़ से मतलब नहीं है। यह ठीक है कि सरकार को इस दिशा में प्रयास करते रहना चहिये मगर इसमें जनता और उसके हितों को घसीटना ठीक नहीं है।''[42]

यह सच है कि किसी भी शासन व्यवस्था में जनता और उसके हितों को घसीटना ठीक नहीं है मगर यह भी गलत नहीं है कि जानकारी के अभाव में घिसटना उसकी मजबूरी बन जाती है, कभी तटबन्धों के नाम पर तो कभी नेपाल मे प्रस्तावित बांध के नाम पर। यह दुष्चक्र जिस दिन टूटेगा उसी दिन से इस पूरे विषय पर कोई सार्थक चर्चा की शुरुआत होगी।

संदर्भ :

1. मिश्र, दिनेश कुमार; दुइ पाटन के बीच में-कोसी नदी की कहानी, लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून, (2006) पृष्ठ 11-40
2. Report of the Second Bihar State Irrigation Commission. Appendix 4/65-66, p. 427-428, Government of Bihar, Water Resources Department, 1994.
3. मिर्धा, रामनिवास; लोकसभा की कार्यवाही रिपोर्ट, 27 फरवरी 1984, पृष्ठ 97
4. शंकरानन्द, बी०; लोकसभा की कार्यवाही रिपोर्ट, 1987, पृष्ठ 24
5. बिहार विधान परिषद, याचिका समिति का प्रतिवेदन, याचिका संख्या 45/83 का प्रतिवेदन, अधीक्षक, सचिवालय मुद्रणालय, बिहार, पटना, 1993, परिशिष्ट-1, पृष्ठ 6-7
6. तिवारी, जी० पी०; उपर्युक्त परिशिष्ट-14, पृष्ठ 29
7. Ibid; Extracts taken from the records of discussion between India-Nepal at Secretary level held from 11th to 12th February 1982 at New Delhi, p. 55
8. दीक्षित, अजय तथा अन्य, गंगा नदी पर विवाद, नेपाल : हिमालय के पानी का प्रबन्धन और जमीनी हकीकत, 2004, पानोस इन्स्टीच्यूट दक्षिण एशिया, काठमाण्डू, नेपाल, पृष्ठ 190-221
9. बिहार विधान परिषद्, याचिका समिति 45/83 का प्रतिवेदन, उपर्युक्त, पृष्ठ 56
10. उपर्युक्त, पृष्ठ 57
11. चौधरी, लहटन; अर्ध-सरकारी पत्र संख्या 24/नं०को०6-604/84 भाग 11-2103 दिनांक 6 अगस्त 1988, उपर्युक्त, पृष्ठ 60-61
12. शंकरानन्द, बी०; याचिका समिति 45/83 का प्रतिवेदन, पृष्ठ 62
13. झा, भोगेन्द्र; लोकसभा की कार्यवाही की रिपोर्ट, अगस्त-1, 1991, पृष्ठ 25
14. शुक्ल, विद्याचरण; लोकसभा की कार्यवाही की रिपोर्ट, 1 अगस्त 1991, पृष्ठ 25
15. सिंह, जगदानन्द; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 5 जुलाई 1991, पृष्ठ 89-90
16. Mohanty, N. R.; Shenanigans of Flood Control, The Times of India, Patna, 12th September, 1993, Interview with W.R. Minister, Jagadanand Singh.
17. सिंह, जगदानन्द; जलाशयों के बिना तटबन्ध खतरे की घंटी, दैनिक हिन्दुस्तान, पटना, 20 अगस्त 1995
18. उपर्युक्त
19. उपर्युक्त
20. सिंह, जगदानन्द; 'केन्द्र कहता है कि बाढ़ के साथ जीना सीखो', दैनिक हिन्दुस्तान-पटना, 31 अगस्त 1997

21. उपर्युक्त
22. राजहंस, डॉ० गौरीशंकर; 'क्या बिहार बाढ़ की विभीषिका झेलने के लिए अभिशप्त है?' दैनिक हिन्दुस्तान-पटना, 6 अगस्त 2002
23. Hall, Capt. G.F.; Proceedings of the Patna Flood Conference, 1938, Superintendent, Government Printing, Bihar, Patna, p. 36
24. Minutes of the First Meeting of India-Nepal Joint Committee on Water Resources, held at Kathmandu on 1st-3rd October 2000.
25. Minutes of the Second Meeting of India-Nepal Joint Committee on Water Resources held at Delhi on 7th and 8th October 2004.
26. Minutes of the Third Meeting of India-Nepal Joint Committee on Water Resources held at Kathmandu from 29th September to 1st October 2008.
27. Minutes of the Fourth India-Nepal Joint Committee on Water Resources held at New Delhi in 12th & 13th March 2009.
28. Joint Statement of the Government of India and Nepal on the occasion of the visit of H. E. Madhav Kumar Nepal, Prime Minister of Nepal, Press Information Bureau-Press Release, 22nd August 2009.
29. Minutes of the Fifth Meeting of India-Nepal Joint Committee on Water Resources held at Pokhra in Nepal on the 20th-22nd November 2009.
30. Minutes of the Second Meeting of Nepal-India Joint Standing Technical Committee (JSTC) held on 30-31st March 2010 at Kathmandu.
31. Dixit, Ajaya and Gyawali, Dipak; Nepal's Constructive Dialogue on Dams and Development Water Alternatives 3(2); Vol. 3, Issue-2, p. 108
32. Pun, Shanta Bahadur; Tanakpur Barage Thirteen years Saga of the Nepal Canal Sill Level, Hydro Nepal, isue No. : 5, July 2009.
33. उपर्युक्त
34. Jha, Bhogendra; River Management of Flood, Drought and Power Shortage in Bihar, December 1985.
35. जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार की विभिन्न रिपोर्टें-व्यक्तिगत संपर्क
36. Dams And Development, A New Frame work for Decision Making, The Report of the World Commission on Dams, p. XXXIV.
37. उपर्युक्त,
38. Dixit, Ajaya and Gyawali, Dipak; op. cit. p.
39. झा, रघुनाथ; पूर्व मंत्री, बिहार सरकार, व्यक्तिगत संपर्क
40. Report of the Technical Committee on the Flood Problems of Bihar, Water Resource Department, Government of Bihar, February 2008.
41. सिंह, हरिकिशोर; पूर्व केन्द्रीय मंत्री, व्यक्तिगत संपर्क
42. मिश्र, डॉ० जगन्नाथ; पूर्व मुख्यमंत्री, बिहार सरकार तथा पूर्व केन्द्रीय मंत्री, व्यक्तिगत संपर्क

परिशिष्ट-1

बागमती नदी पर प्रस्तावित नुनथर बांध के विषय में कुछ विशेष विवरण (स्रोत : बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग, 1994 की रिपोर्ट) । अपेन्डिक्स 4/65-66, पृष्ठ 427-428

1.	जल-ग्रहण क्षेत्र	2706 वर्ग कि०मी०
2.	सर्वाधिक वर्षा	3580 मि०मी०
3.	न्यूनतम वर्षा	1524 मि०मी०
4.	औसत सालाना वर्षा	1880 मि०मी०
5.	सर्वोच्च डिज़ाइन प्रवाह	7533 क्यूमेक
6.	कुल संचय क्षमता	26531 हेक्टेयर मीटर
7.	बांध की सर्वाधिक ऊँचाई	115.824 मीटर
8.	फ्री बोर्ड	9.144 मीटर
9.	शीर्ष पर बांध की चौड़ाई	12.2 मीटर
10.	जल विद्युत उत्पादन क्षमता	24 मेगावाट
11.	बांध की कुल लागत (1998)	9784.78 लाख रुपये
12.	नहर में प्रवाह के लिए पानी	99 क्यूमेक

नेपाल द्वारा निर्मित बागमती नदी पर करमहिया बराज के बारे में कुछ जानकारी

(क) बराज

1.	स्थिति	नेपाल में महेन्द्र राज मार्ग से 3 किलामीटर उत्तर में उत्तरी करमहिया गाँव के पास
2.	बराज की लम्बाई	400 मीटर
3.	डिजाइन प्रवाह	7600 क्यूमेक
4.	स्लुइस फाटक	(9 मी० x 6 मी०) के 6 फाटक
5.	बराज फाटक	(9 मी० x 3 मी०) के 30 फाटक
6.	जल-ग्रहण क्षेत्र	2706 वर्ग कि०मी०

(ख) शीर्ष नियामक	**पूर्वी**	**पश्चिमी**
1. प्रवाह क्षमता	64.4 क्यूमेक	48.2 क्यूमेक
2. चौड़ाई	37 मीटर	26.0 मीटर
3. फाटक	7 (4 मी० x 2 मी०)	5 (4 मी० x 2 मी०)

(ग) नहरों का विवरण

1. कुल सिंचित क्षेत्र 6800 हेक्टेयर

2.	पूर्वी मुख्य नहर	पश्चिमी मुख्य नहर
लम्बाई (किलोमीटर)	21	54
प्रवाह क्षमता (क्यूमेक)	15*	48.2
शाखाएं (किलोमीटर)	53	120
वितरणियाँ (किलोमीटर)	53	68

* यह आंकड़ा भ्रामक है क्योंकि पूर्वी शीर्ष नियामक (हेडवर्क्स) की क्षमता 64.4 क्यूमेक बतायी गयी है। नहर में पानी के प्रवाह की क्षमता भी इतनी ही होनी चाहिये।

5

रिलीफ़-नकारने से लेकर गोली खाने तक की यात्रा

5.1 पृष्ठभूमि

पारम्परिक तौर पर राहत और बाढ़ समस्या का कोई खास तालमेल नहीं था क्योंकि अमूमन एक बड़ी बाढ़ के बाद रबी की एक बहुत अच्छी फसल की उम्मीदें बढ़ी रहती थीं। अंग्रेजों के शासन काल में जरूरत पड़ने पर थोड़ी-बहुत राहत सामग्री की व्यवस्था प्रशासन या निलहे गोरों की तरफ से होती थी। बाढ़ के समाप्त होते ही गृह निर्माण में मजदूरों को कुछ न कुछ काम मिल जाया करता था। रेल लाइनों तथा सड़कों का निर्माण/रख-रखाव भी रोज़गार का काम चलाऊ साधन होता था। सरकार की तरफ से कभी-कभी डिप्टी कलक्टर स्तर का कोई अधिकारी 2-4 हजार रुपये लेकर बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में जाया करता था और कुछ प्रभावित परिवारों के बीच बांट कर चला आता था। 1937 में पटना में एक बाढ़ सम्मेलन हुआ था जिसमें सारी बहस तटबन्धों के समर्थन या विरोध पर केन्द्रित थी। यह एक बेनतीजा बहस थी मगर उसके बाद राहत की मद में कुछ अधिक धन का प्रावधान होने लगा था।

देश आज़ाद होने के बाद 1947 में सहरसा, दरभंगा और मुंगेर (उस समय खगड़िया और बेगूसराय, मुंगेर का हिस्सा हुआ करता था) में राहत कार्यों के लिए परामर्शी समितियों का गठन हुआ। इन समितियों ने सरकार के राहत कार्यों को सुचारु रूप से चलाने की सिफ़ारिश की और जल्दी ही नावों की उपलब्धता, चरखा केन्द्रों के संचालन, कर्ज़ की अदायगी में सहूलियतों या माफ़ी के प्रावधान आदि की अनुसूची तैयार की गयी। अब सरकार का राहत बजट बढ़ कर पाँच लाख रुपयों के करीब तक जा पहुँचा था। ललितेश्वर मल्लिक लिखते हैं, ''...मुफ़्त की रिलीफ़ के सम्बन्ध में पूर्व परामर्श-दातृ कमिटी, सहरसा का अनुभव कुछ कटु सा रहा। एक तो रुपये कम होने के कारण जिन लोगों को रिलीफ़ मिलनी चाहिये उन सभी लोगों को रिलीफ़ दी नहीं जा सकती थी जिससे असंतोष फैलता था। और दूसरा, जिन लोगों को रिलीफ़ मिलती थी वह उसे अपना कानूनी हक़ समझ कुछ करने को तैयार नहीं होते थे - इससे नैतिक स्तर कुछ गिरता सा जाता था, लोगों में भीख मांगने के भाव जागृत होते थे। इसके अतिरिक्त मध्यम श्रेणी के बहुत से लोग, विशेषत: विधवायें मुफ़्त की रिलीफ़ लेना नहीं चाहती थीं परन्तु किसी तरह के सहाय्य के बिना उनकी दशा समाज के निम्न श्रेणी के लोगों से अच्छी नहीं थी।''[1] अंग्रेज़ों के शासन के समय मध्यवर्गीय परिवारों की महिलाओं के लिए राहत सामग्री का विशेष प्रावधान रहता था क्योंकि वह सामाजिक कारणों से राहत सामग्री लेने आ नहीं सकती थीं। अधिकारी उनके पास खुद राहत सामग्री लेकर जाते थे।

5.2 राहत कार्य

राहत कार्यों की पूरी प्रक्रिया समझने के लिए थोड़ा पीछे की ओर चलते हैं। ब्रिटिश सरकार अपने अमल में कोई भी राहत कार्य चलाने से पहले एक टेस्ट रिलीफ का कार्यक्रम चलाती थी। इसमें बाजार में मजदूरी की दर से आधी दर पर अमूमन मिट्टी काटने का काम खोला जाता था। इन कामों में अगर आधी दर पर काफी संख्या में मजदूर काम पर आते थे तो 3 या 7 दिन बाद राहत कार्य की मजदूरी बाजार की पूरी दर पर नियमित कर दी जाती थी और काम आवश्यक या निर्धारित समय तक चलता रहता था। मजदूरों के टेस्ट के समय काम पर न आने पर या बहुत कम संख्या में आने पर राहत कार्य बन्द कर दिये जाते थे। यह राहत कार्य किस गंभीरता से चलते थे उसके बारे में एक बड़ी ही दिलचस्प टिप्पणी एक अंग्रेज इंजीनियर, एम० आर० बैगली ने अपने संस्मरण में 1924 में लिखा था। पचास साल पहले के राहत कार्य के अपने अनुभव के बारे में लिखते हुए उसने कहा था कि बिहार में 1876 में बहुत जबर्दस्त सूखा पड़ा था और उस समय वह सीतामढ़ी में सूखा राहत कार्यों की देख-रेख के लिए एक इंजीनियर की हैसियत से आया था। उसके संस्मरण के कुछ अंश हम प्रसंगवश यहाँ उद्धृत करने जा रहे हैं। देखें बॉक्स-उनकी पाँचों उंगलियाँ घी में थीं।

इस संस्मरण से सत्ता और उसके लिए काम करने वाले लोगों का चरित्र उजागर होता है खासकर तब जब लोग मुसीबत में रहते हैं। इससे यह भी पता लगता है कि निष्ठा पूर्वक पूरी संवेदना के साथ राहत कार्यों में लगे किसी व्यक्ति का उस लूट-पाट, झूठी रिपोर्टिंग और भ्रष्टाचार के माहौल में किस तरह दम घुटता होगा। जनता की परेशानी का स्तर कैसा है और समस्या का आकार कितना बड़ा है इसकी अनदेखी कर के महज खानापूरी करके वाह वाही लूटना और उस क्रम में कुछ सक्षम अधिकारियों और कार्यकर्ताओं को फायदा पहुँचाने के लिए राहत कार्य चलाने का इतिहास कम पुराना नहीं है। इतना कह कर वापस 1947 में लौट चलते हैं।

तब से अब तक बहुत कुछ बदल चुका है। अब कोई यह कहता हुआ सुनाई नहीं पड़ता कि उसे राहत सामग्री की जरूरत नहीं है। बढ़ती आबादी, बाढ़ नियंत्रण की ग़लत नीतियों पर अमल, राहत बजट का आवश्यकता के अनुरूप न होने और वितरण में भ्रष्टाचार आदि कुछ ऐसे कारण हैं जिनकी वज़ह से राहत सामग्री के लिए चारों ओर मारा-मारी लगी रहती है। असली जरूरतमन्द लोगों तक राहत सामग्री पहुँच ही नहीं पाती है।

5.3 भारत की आजादी के बाद राहत कार्यों का परिदृश्य

देश की आज़ादी के पहले बाढ़ के बाद के समय में राहत कार्य चलाये जाने के उदाहरण बहुत कम मिलते थे। राहत संबन्धी अधिकांश कार्यक्रम सूखे के समय में ही सुनने में आते थे। आज़ादी के बाद बाढ़ राहत कार्यों में भी तेज़ी आयी जिसका एक कारण तो सरकार का अपना दायित्व बोध था क्योंकि उसे यह सिद्ध करना था कि उसके काम करने के तरीके ब्रिटिश हुकूमत से भिन्न हैं और वह प्रजा की चिन्ता करती है। इसके पलट जनता की अपेक्षाएं भी अपनी सरकार से बढ़ गयी थीं। रिलीफ इन दोनों के बीच की कड़ी बन कर आगे आयी। **सच यह है कि रिलीफ की मांग सुरसा की तरह है। इसकी जितनी भरपायी की जायेगी, वह उतनी ही बढ़ती जायेगी। रिलीफ पहली बार मांगने या पाने वाला व्यक्ति उसे कृतज्ञता-भाव से स्वीकार करता है मगर धीरे-धीरे यह उसकी आदत बनती है और अन्त में वह इसे अपना अधिकार मान कर मांग करता है।** समय के साथ सरकार रिलीफ

उनकी पाँचों उंगलियाँ घी में थीं।

एम. आर. बैगली

''...मैं उस समय मध्य भारत में काम करता था... इसी बीच मुझे बिहार में एक भीषण अकाल की खबर मिली। व्यक्तिगत तौर पर यह मेरे लिए एक बहुत ही रोमांचकारी और आकर्षक घटना थी। इस समय मुझे मध्य भारत में पी.आर.डी. में एक युवा सहायक इंजीनियर की हैसियत से काम करते हुए तीन साल बीत चुके थे और मैं हमेशा नये-नये और दिलचस्प अनुभवों की तलाश में रहा करता था। मुझे जैसे ही पता लगा कि प्रशासन अकाल राहत में काम करने के लिए वॉलन्टियर तलाश कर रहा है जिन्हें 'घोड़ों और शिविर की सभी सुविधाएँ' दी जायेगीं तो मैं तुरन्त जबलपुर से बांकीपुर की ओर चल पड़ा जहाँ मैंने वहाँ के कमिश्नर को (वह पुराने ख्यालों वाले एक बहुत ही अच्छे बुजुर्ग इन्सान थे और शायद उनका नाम बेली था) रिपोर्ट किया। मेरी नियुक्ति मुजफ्फरपुर डिवीज़न में कर दी गयी। बांकीपुर डाक बंगले में हर तरह और हर रंग के ''अकाल राहत अधिकारी'' इकट्ठा रहते थे और वहाँ मेरी मुलाकात बड़े मस्त लोगों से हुई जिन्होंने पूरे माहौल को जश्न में बदल दिया हुआ था। अकाल राहत पर इन लोगों के विचार सुन कर मुझे बड़ा सदमा लगा क्योंकि मेरे जैसा उत्साही युवक यहाँ इसलिए आया था कि वह अपनी पूरी क्षमता और काबिलियत के साथ लोगों की जीवन रक्षा कर सके। इस बेलगाम भीड़ को जिस बात की चर्चा करना सबसे अच्छा लगता था वे थी घोड़ों, 'शराब और शबाब' की। इनमें से एक ने तो अपनी नियुक्ति की पहली रात डाक बंगले में शराब के नशे में धुत्त होकर फ़र्श पर लोट-पोट कर मनायी। खैर, मैं अगले दिन जलपान कर के मुजफ्फरपुर के लिए चल पड़ा और करीबन आधे रास्ते में एक विशाल मगर मेहमानों की खातिरदारी से छलकती हुई नील कोठी में रुका। यहाँ के प्लान्टर्स क्लब में तो मुझे पहले से भी ज्यादा मौज-मस्ती का माहौल नजर आया जो कि शायद रोज़मर्रा की बात रही होगी। मेरे एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर एक बहुत ही आकर्षक व्यक्तित्व वाले आदमी थे जो कभी खुद नील की खेती करते थे। उन्होंने गर्म-जोशी से मेरा स्वागत किया और कहा कि मुझे पूरे अधिकारों के साथ सीतामढ़ी सब-डिवीजन का इन्चार्ज बनाया गया है जहाँ 60,000 कुली रोज़ काम करते हैं जिन्हें रोज़ उनकी मजदूरी देनी होगी। उन्होंने यह भी बताया कि अगर काम पर आने वाले मजदूरों की संख्या बढ़ायी जा सके तो सत्ता में बैठे लोगों को अच्छा लगेगा। अपने सबसे नज़दीकी बॉस से मुझे इतनी ही हिदायतें मिलीं और इसमें कोई शक नहीं था कि उनकी पाँचों उंगलियाँ घी में थीं। सुपरिन्टेन्डिंग इंजीनियर मिस्टर पी. बहुत ही संयत और व्यावहारिक अधिकारी थे। उनसे हुई लम्बी बात-चीत ने वास्तविकता के प्रति मेरी आँखें खोल दी थीं। उन्होंने बताया कि मजदूरों को रोज़ाना दी जाने वाली मजदूरी में पैसे की बेतरह बरबादी होती है और उसमें बड़े पैमाने पर हेरा-फेरी होती है यहाँ तक कि किये गए काम और पैसों के भुगतान में कोई वास्ता ही नहीं होता। वे चाहते थे कि इस बदइंतजामी को खत्म कर दिया जाए यद्यपि यह तय था कि ऐसा करने से ऊपर के अधिकारी उनसे नाराज़ ही होंगे। उन्होंने मुझ से कहा कि मुझे दिन के हिसाब से दिये जाने वाली मजदूरी को बन्द करके काटी गयी मिट्टी के नाप के आधार पर मजदूरी के भुगतान की व्यवस्था यथाशीघ्र लागू करनी होगी और यह सुनिश्चित करना पड़ेगा कि अच्छी तरह ठोंक बजा कर केवल लाभकारी काम ही हाथ में लिये जायें। यह काम निश्चित रूप से करना पड़ेगा, भले ही इसके लिए अकाल राहत अधिकारियों के विरोध का भी सामना क्यों न करना पड़े क्योंकि वे कभी नहीं चाहेंगे कि मजदूरों की संख्या में किसी भी प्रकार की कटौती हो। उनका यह दृढ़ मत था कि अच्छी ट्रेनिंग पाये हुए पी.डब्लू.डी. के अफसरों को किसी भी कीमत पर एक दिखावटी अकाल में अनाप-शनाप खर्च का जरिया नहीं बनना चाहिये। यह सारी बातें सुन कर मुझे अपनी जीवन रक्षक बनने की मुहिम को जरूर धक्का लगा लेकिन अब मुझे नकली अकाल में संभावित घोटाले के खिलाफ लड़ने की हिदायतें थीं और इन्हीं हिदायतों के साथ मैं सीतामढ़ी की ओर चल पड़ा जहाँ मैंने शहर से कोई आधा मील दूर एक आम के बगीचे में अपना कैम्प स्थापित कर दिया। मैं एक निहायत घटिया काम में फँस गया था और अब परिस्थिति का मुकाबला करने के आलावा मेरे पास दूसरा कोई रास्ता न था। काम पर लगाये गए 60,000 लोग करीब 400 वर्गमील क्षेत्र पर फैले हुए थे। यह लोग 30.40 तालाबों और सड़कों के निर्माण में लगे थे। इतने लोगों पर सिर्फ एक घुड़सवार सार्जेन्ट सुपरवाइज़र था जिसके पास न तो कोई योजना बनाने का समय था और न ही उसके पास किसी काम को चेक करने की फुर्सत थी। उसके पास मुंशियों द्वारा बनाये गए मस्टर रोल को भी चेक करने का वक्त नहीं था जबकि वह अच्छी तरह जानता था कि यह मस्टर रोल पूरा-पूरा धोखाधड़ी का पुलिन्दा था। इन मुंशियों को दस रुपये महीनें की तनख्वाह मिलती थी। उसका (सुपरवाइज़र का) पूरा समय मुंशियों द्वारा हर सुबह भेजे गए मस्टर रोल के हिसाब से मजदूरी के भुगतान करने में ही बीत जाता था। मैं जो कुछ आज कर रहा हूँ तो सोचता हूँ कि मैंने उस काम को नासमझी से कितना हलके-फुलके तरीके से लिया था और कैसे रात-दिन मेहनत करके उसे पूरा कर पाया था। मिस्टर पी. ने मेरी बहुत मदद की और उन्होंने मेरे लिए रुड़की से ट्रेनिंग पाये हुए दो युवा इंजीनियर (इनसे मेरी मित्रता जीवन पर्यन्त बनी रही), दो अस्थायी इंजीनियर, बहुत से ओवरसियर और सहायक ओवरसियर भेजे। इन सारे लोगों की सहायता और प्रतिदिन प्राय: 50 से 60 मील की यात्रा (घोड़ों पर) तय करके हफ्ते-दस दिन के अन्दर मैं नाप के आधार पर भुगतान की व्यवस्था लागू कर सका। कोई भी काम हाथ में लिए जाने के पहले उसका सही निर्धारण और सुपरविज़न की जिम्मेवारी भी तय की जा सकी और तब यह संभव हो सका कि केवल उपयोगी काम हाथ में लिये जाएं और उन्हें ठीक-ठाक तरीके से पूरा किया जा सके। इन सब परिवर्तनों को लेकर खूब बवाल हुआ और मजदूरों के हड़ताल पर चले जाने तक की नौबत आ गयी मगर मजदूरी की दर इतनी आकर्षक थी कि लगभग 30,000 लोग काम पर वापस आये और उसे पूरा किया। मजदूरों की संख्या में कमी की वजह से ''अकाल अधिकारियों'' की तरफ से भी बेतरह प्रतिवाद हुआ यहाँ तक कि उन लोगों ने मुझे हटा देने की माँग भी कर डाली लेकिन मेरे ऊपर सुपरिन्टेन्डिंग इंजीनियर का वरदहस्त था और मैं कार्य की समाप्ति तक वहाँ बना रहा।''[2]

Indian Engineering, Calcutta, July 12, 1924, Vol. LXXVI, p-25, January-June 1924 से साभार

बांट कर धीरे-धीरे अपने ही जाल में फंसने लगी। राम विनोद सिंह ने जब बिहार विधान सभा में इस सवाल को उठाया था (1956) तब देश को आज़ाद हुए बहुत दिन नहीं बीते थे। उनका कहना था, ''...ऐसे तो रिलीफ बांटने का सिद्धान्त ही गलत है क्योंकि इसके चलते सारी जमात भिखमंगों की जमात बन जाती है। जो लोग अपने पैरों पर खड़ा हो सकते थे वे लोग भी ऐसा नहीं करते हैं और उन लोगों की आदत ऐसी हो जाती है कि अगर रिलीफ आने में जरा भी देरी हुई तो बहुत ही चिल्ल-पों करने लगते हैं। सरकार खुश होती है तो कुछ रिलीफ बंटवा देती है। कोई देखने वाला नहीं है और दिनों दिन लोगों में असंतोष बढ़ता जा रहा है। रिलीफ का रुपया कुछ कर्मचारी की जेब में, कुछ पेशकार की जेब में, कुछ अफसर की पॉकिट में और रहा सहा गाँव के दलाल के पेट में चला जाता है। नाम मात्र को ही असली आदमी को रिलीफ का रुपया मिलता है।''[3]

उस समय नेतागण शायद इस बात को समझते थे कि राहत कार्य जरूरी और महत्वपूर्ण होते हुए भी किसी समस्या का समाधान नहीं होता। किसी भी असमर्थ को मदद पहुँचाने के दो तरीके हो सकते हैं। पहला, उसे मदद इस तरह से दी जाए कि वह समय के साथ खुद सक्षम हो जाए और उसे किसी दूसरे की मेहरबानी पर आश्रित न रहना पड़े। मदद का यह एक सम्मानजनक उपाय है। दूसरा, वह आदमी जब-जब मुसीबत में फँसे, उसे आवश्यक मदद देकर विदा किया जाय। बाद वाला तरीका मदद मांगने वाले को दाता का आश्रित बनाता है। लगातार बंटने वाली रिलीफ इसी पर-निर्भरता के भाव को जन्म देती है। उसके अपने पैरों पर खुद खड़ा होने की क्षमता दिनों दिन क्षीण होती जाती है। दाता पर निर्भर व्यक्ति अपना आत्म-सम्मान खो देता है और फिर दाता उसका अपने फायदे के लिए शोषण करना शुरू कर देता है। यह जरूरी नहीं है कि रिलीफ मांगने या लेने वाला व्यक्ति गरीब और मजबूर ही हो। मुफ्त में मिलने वाली चीज पर हाथ साफ करने का मौका सामाजिक और आर्थिक रूप से संपन्न लोग भी नहीं छोड़ते। यह बात 1955 में ही विधायक गदाधर सिंह ने कही थी, ''...सरकार रिलीफ बांट कर वाह-वाही लेना चाहती है। लेकिन मैं कहूँगा कि सरकार को इसको बन्द करके परमानेन्ट रिलीफ का इंतजाम करे ताकि आगे भुखमरी नहीं हो सके। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि हमारे समाज में (लोग) बिना कमाये पैसा लेना पाप समझते हैं लेकिन आज बड़े आदमी जो 20, 25 बीघा जमीन रखने वाले हैं वे सरकार से पैसा लेने में खुशी जाहिर करते हैं और पैसा लेने के लिए पैरवी करते हैं। ऐसा मालुम होता है कि इस रिलीफ के जरिये लोगों का नैतिक पतन हो रहा है और आने वाली संतति के लिए (यह) एक बहुत खतरनाक चीज है।''[4]

मानसिक पतन केवल रिलीफ लेने वाले का ही नहीं होता, रिलीफ देने वाला भी उसी मानसिकता का शिकार होता है। समय के साथ उसके अन्दर भी निहित स्वार्थ हिलोरें मारता है। रिलीफ अगर उसके दरवाजे से बंटे तो क्या कहने, वरना रिलीफ बांटने वाले के साथ उसका हर समय दिखायी पड़ना भी उसके लिए कम गौरव की बात नहीं होती। रिलीफ एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें पूंजी की खास जरूरत नहीं पड़ती। सारा काम रसूख से ही चल जाता है। इसमें खर्चा-पानी तो निकलता ही है, सुबह-शाम सलाम दागने वालों की भीड़ भी दरवाज़े पर जुटती है। राजनैतिक महत्वाकांक्षा पालने वाले व्यक्ति के लिए इतना निवेश बहुत होता है। **राम बृक्ष बेनीपुरी कहते हैं, ''...कुछ लोग हमारे देश में ऐसे हैं जो बराबर संकटकाल की खोज में रहते हैं और उससे फायदा उठाते हैं। वह जानते हैं कि हथिया में पानी नहीं बरसा तो रिलीफ बांटने की व्यवस्था होगी और इसीलिए वह कलक्टर, एस०डी०ओ० और मंत्रियों के यहाँ दरबार करने लगे हैं। यह नरभक्षी मानव इस ताक में लगे हुए हैं कि कब रिलीफ बंटे कि हम इससे मौज उड़ावें। इसलिए मैं यह कहना चाहता हूँ कि ऐसे समय में सरकार को चाहिये कि एक सर्वदलीय रिलीफ कमिटी बनायी जाए और वे इन सारी चीजों को देखें और अभी से होशियारी बरती जाए ताकि जो लोग जनता की मुसीबत से फायदा उठाना चाहते हैं वह न उठाने पावें। आपको मालूम है कि कुछ समय पहले जब बाढ़ के समय**

आ गयी रिलीफ फोटो-नागेन्द्र सिंह

रिलीफ का काम हुआ था तो 150 आदमियों पर मुकदमा चलाया गया था। इसलिए मैं कहना चाहता हूँ कि जो रिलीफ का काम हो वह अच्छी प्रकार हो ताकि पुराना इतिहास दुहराने का अवसर नहीं मिले।''[5]

बेनीपुरी को शायद यह उम्मीद रही हो कि सरकार आने वाले दिनों में रिलीफ पर नकेल कसेगी मगर वैसा कुछ भी नहीं हुआ। वृन्दा प्रसाद राय 'वीरेन्द्र' ने रिलीफ बांटने और जनता की समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य में न देखने और उसका समाधान न करने पर सरकार की खिंचाई की। 1966 में करेह नदी का तटबन्ध कई जगह टूटा था। तटबन्ध तोड़ कर बाहर आयी नदी के पानी को रास्ता देने की व्यवस्था न करने और विकल्प के तौर पर रिलीफ बांटने की उन्होंने भर्त्सना करते हुए उन्होंने बिहार विधान परिषद् में कहा, **''आपने कोसी और करेह नदी में तो तटबन्ध बना दिया लेकिन उनसे अधिक पानी निकलने का रास्ता नहीं है और आप को लोगों की तबाही का तमाशा देखने में मज़ा मिलता है और आप को उन लोगों के बीच रिलीफ बांटने में भी मज़ा मिलता है। आज 19 वर्षों से आपका यही तमाशा जारी रहा है।''**[6]

1966 आते-आते इतना तो स्पष्ट होने लगा था कि रिलीफ बंटना बन्द नहीं होगा क्योंकि रिलीफ लेने और देने वालों दोनों की जड़ें जम चुकी थीं। इस बात का संज्ञान लेते हुए कि तटबन्धों के बीच फंसी नदियों के बहते पानी को निकास का रास्ता देना चाहिये, रिलीफ को नियमित करने, सही समय पर उपलब्ध कराने और सही लोगों तक पहुँचाने के लिए एक संस्था की मांग की जाने लगी। पार्षद राधा कृष्ण प्रसाद सिंह ने बिहार विधान परिषद से आग्रह किया, ''...मैं समझता हूँ कि हमलोगों ने जो अध्ययन किया है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि इन नदियों को आउटलेट देने की जरूरत है। आउटलेट के नहीं रहने से ही बाढ़ का प्रकोप हो जाता है। अब ऐसा होता है कि हर साल कुछ-न-कुछ बाढ़ आती ही रहेगी। इसलिये फ्लड प्रोटेक्शन और सुखाड़ की रिलीफ के लिये एक नॉन-आफिशियल और आफिशियल लोगों का बोर्ड बनाया जाय। केवल मिनिस्टरों और कर्मचारियों से काम नहीं चलेगा। इस ढंग का काम रहेगा कि वह देखें कि कितनी नावों, कितनी रसद और कितनी दवा आदि की जरूरत होगी। नेचुरल कैलमिटी आती ही रहेगी इसलिये बोर्ड को प्रिवेन्टिव मेज़र पहले से ही लेकर रखना चाहिये ताकि रिलीफ देने के समय देर न हो। एक माननीय सदस्य ने कहा है कि एक अरब का नुकसान हुआ है। प्रिवेन्टिव मेज़र नहीं लिया गया तो नुकसान होता ही रहेगा। बोर्ड में नॉन-आफिशियल लोग रहेंगे तो मिनिस्टरों के साथ बैठने में अपमान नहीं होगा। वक्त का तकाजा है कि बोर्ड बनाया जाय।''[7]

5.4 भविष्यवाणी सच हुई-राहत हक बनी

राज्य में 1968, 1971, 1974, 1975, 1978, 1984, 1987, 1991, 1993, 1995, 1996, 1998, 2000, 2002, 2004, 2007 और 2008 में भीषण बाढ़ें आयीं। 2008 की बाढ़ यद्यपि कोसी घाटी तक सीमित रही मगर कोसी तटबन्ध में कुसहा में पड़ी दरार ने इतिहास रचा। लगातार आने वाली बाढ़ों तथा उनसे बचाव के लिए बनायी गयी संरचनाओं के निरंतर ह्रास ने बाढ़ का सामना करने वाले दूसरे सबसे अच्छे समाधान 'रिलीफ' को भी महत्वपूर्ण बनाया। 2005 तक केन्द्र सरकार राज्यों को मुश्किल से बाढ़/सूखा/चक्रवात आदि जैसी घटनाओं का सामना करने के लिए 100-150 करोड़ रुपये वार्षिक अनुदान दे दिया करती थी। इसके साथ एक शर्त होती थी कि जितना पैसा केन्द्र अनुदान के रूप में देगा उसका एक चौथाई राज्य को अपने स्त्रोतों से निवेश करना पड़ेगा। बाढ़ में हुए नुकसान को देखते हुए यह रकम बहुत ही कम हुआ करती थी।

5.4.1 अपर्याप्त राहत और वायदा खिलाफी–राज्य में आबादी के विस्तार के साथ-साथ बाढ़ से प्रभावित होने वाले लोगों की तादाद भी बढ़ी है यद्यपि यह आनुपातिक नहीं है। दो-चार हजार रुपयों से बढ़ कर रिलीफ़ बजट भी अब अरबों रुपये से ऊपर चला गया है। बाढ़ से होने वाला नुकसान उपलब्ध रिलीफ़ के दस गुने की मियाद पार कर चुका है। इस तरह से रिलीफ़ बजट अरबों में होने के बावजूद सागर में बूँद के बराबर की ही औकात रखता है। राज्य सरकार के पास राहत कार्य चलाने के लिए उपलब्ध पैसा, आपदा राहत कोष, आपदा राहत के लिए राष्ट्रीय राहत कोष, राज्य सरकार का अपना हिस्सा तथा दूसरे तरीकों से जुटायी गयी राहत राशि आदि सब मिला कर भी बाढ़ प्रभावित लोगों की जरूरतों को देखते हुए किसी ओर की नहीं होती। दुनु रॉय कहते हैं, "... इससे यह प्रतीत होता है कि भले ही केन्द्र ने 75 प्रतिशत राशि अपने स्तर से निर्गत कर दी हो मगर यह राशि राज्य सरकार द्वारा निर्धारित वास्तविक जरूरतों के दस प्रतिशत से अधिक नहीं होती। इसमें अगर राज्य सरकार का 25 प्रतिशत का अंश भी जोड़ दिया जाए तो भी इससे कुल नुकसान के 14 प्रतिशत से ज़्यादा की भरपाई नहीं हो सकती। इसका यह मतलब निकलता है कि या तो राज्य सरकारें बाढ़ से हुए नुकसानों को इतना ज्यादा बढ़ा-चढ़ा कर पेश कर रही हैं (10 गुने से भी ज़्यादा) या फिर जो प्रावधान किया जाता है वह बुरी तरह से नाकाफ़ी है ... इसका यह भी मतलब होता है कि अगर बाढ़ से प्रभावित लोग बाढ़ का पानी निकल जाने के बाद अपनी जीविका के उपार्जन के लिए अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करें तो यह कोशिश उन्हें अपने संसाधनों के ही दम पर और बड़े पैमाने पर करनी पड़ेगी।''[8]

राज्य सरकारों द्वारा बाढ़ से हुए नुकसान को बढ़ा कर बदस्तूर जारी रहने और आपदा पीड़ितों की जरूरतों का संज्ञान लेकर बारहवें वित्त आयोग ने केन्द्र सरकार को 2005-2010 के समय के लिए राहत कार्यों के लिए अपनी सिफारशें दीं जिसे भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। अब राहत कार्यों की जद में बाढ़, सूखा, तूफान, चट्टान खिसकना, बादल फटना, कीड़ों का हमला तथा हिम-स्खलन आदि सभी कुछ आते हैं। इन सिफारिशों की सूची इन्टरनेट पर उपलब्ध हैं जिसके विस्तार में हम नहीं जायेंगे।[9] अब यह सुविधायें अधिकार के दायरे में आ गयी हैं।

इस तरह 2005 से राहत कार्यों के लिए उपलब्ध संसाधन में बेतहाशा वृद्धि हुई है। बिहार में 2007 और 2008 में हुए राहत कार्यों में आशातीत सुधार बारहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के कारण हुआ था न कि किसी राजनीतिक नेता की सदाशयता और खुद की ताकत से। पीड़ितों को जरूरत के समय मदद मिले इसका कोई भी विवेकशील व्यक्ति विरोध नहीं करेगा मगर यदि कोई दुर्घटना एक निश्चित समय किसी निर्दिष्ट स्थान पर हर साल बिना नागा घटती हो तो उसका निदान एक ऐसी स्थायी व्यवस्था होती है जिसमें कोई भी परिवार बिना किसी बाहरी मदद के सम्मानपूर्वक जीवन यापन कर सके। यह पीड़ित परिवार के साथ जिम्मेवारी पूर्ण और बराबरी के रिश्ते का समाधान है और यह काम वही व्यक्ति या संस्था कर सकती है जो लोगों में आत्म विश्वास और आत्म सम्मान जगा सके।

5.5 स्वयं सेवी संस्थाओं की भूमिका

यह वह मुकाम है जहाँ स्वयं सेवी संस्थाएं बहुत कुछ कर सकती थीं। दुर्भाग्यवश अब अधिकांश स्वयंसेवी संस्थाओं का जो स्वरूप उभर कर सामने आ रहा है वह आर्थिक विकास और सेवा क्षेत्र की दिशा में काम कर रहा है। संघर्ष उनके लिए धीरे-धीरे गौण होता जा रहा है। ऐसी स्वयं-सेवी संस्थाएँ देश के अन्दर से या विदेशों से भी संसाधनों की व्यवस्था करके विकास कार्यक्रम चलाती हैं और अब इनके लिए विचारधारा के बदले कार्यक्रम ज़्यादा महत्वपूर्ण हो गए हैं। संस्थाओं की कार्य प्रणाली में यह परिवर्तन निश्चित रूप से उनकी दाता संस्थाओं की पहल पर हुआ है क्योंकि वैचारिक परिपक्वता, चेतना स्तर में वृद्धि और लगातार चलते रहने वाले संघर्ष एक तो बहुत लम्बे खिंचते हैं और दूसरे उनके फलाफल को नापना बहुत मुश्किल होता है। बाज़ार व्यवस्था, प्रबन्धन तथा संस्थाओं पर हर तरह के आर्थिक नियंत्रण के इस दौर में देशी और विदेशी दाता संस्थाओं को अब सीमित समय में दिखायी पड़ने वाले परिणाम चाहिये। संघर्ष से सीमित समय में परिणाम प्रायः नहीं के बराबर मिलता है मगर आर्थिक कार्यक्रमों में यह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। आख़िर खोमचे लगाने वाला आदमी भी रात में परिवार के लिए चार पैसा कमा कर ही घर लौटता है। वह अगर वैचारिकता में फंसेगा तो उसके परिवार का क्या होगा? वैसे भी विदेशी सहायता से चलने वाला वैचारिक संघर्ष टिकाऊ नहीं हो सकता। उधर सरकार कभी भी इस तरह की संस्थाओं को अपनी माया समेट लेने के लिए कह सकती है। इन सारे आयामों का ही परिणाम था कि आपातकाल के बाद अस्तित्व में आये सोशल ऐक्शन ग्रुप के आर्थिक स्रोत सूखते गए और इन्हें मजबूर होकर निश्चित और समयबद्ध आर्थिक कार्यक्रमों को हाथ में लेना पड़ा। इस परिवर्तन में 10-12 वर्ष का समय लगा। अब विचारधारा और संघर्ष पीछे छूट गया और आर्थिक कार्यक्रम ही महत्वपूर्ण हो गया। जिन संस्थाओं को अपने कार्यक्रम चलाने के लिए सरकार से पैसा मिलता था वह भी इसी गिरफ़्त में आ गईं क्योंकि सरकार नहीं चाहती है कि उसी से संसाधन लेकर कुछ लोग हक़ की लड़ाई लड़ें और सरकार को परेशान करें। इस तरह से वह 'दीवाने लोग' जो कभी 'दुनियाँ को बदलने के लिए' 'सिर में कफ़न बांध कर' निकले थे, उनमें से अधिकांश संस्था को जिन्दा रखने के लिए मार्केट सर्वे में लग गए।

अब जब संघर्ष मुद्दा ही नहीं रहा तो आज से 25-30 वर्ष पहले अपने आप को स्वयंसेवी संस्था कहने वाले लोगों ने अपने नये नामकरण 'ग़ैर सरकारी संस्था' (एन॰जी॰ओ॰) को बिना किसी ना-नुकुर के स्वीकार कर लिया। अब संस्थाएं अपने दाता संस्थाओं के कार्यक्रमों को चलाती हैं और इनकी सारी चिन्तन प्रक्रिया इन्हीं दाता संस्थाओं के पास गिरवी रखी हुई है। चिन्तन अब इनका काम नहीं रहा, यह काम अब दाता संस्थाएं करती हैं और अधिकांश ग़ैर-सरकारी संस्थाएं अब अपने दाता संस्थाओं की फरमाबरदारी भर करती हैं। बहुत सी दाता संस्थाएँ और विभाग अब अपने विकास कार्यक्रमों का बाक़ायदा टेण्डर निकालते हैं और यह संस्थाएं अब टेण्डर भर कर और बैंक गारण्टी दे कर विकासमूलक कामों की ठेकेदारी करने लगी हैं। अगर यही क्रम चालू रहा तो वह दिन दूर नहीं जब समाज सेवा के लिए टेण्डर भरते समय सिक्यूरिटी डिपॉज़िट की मांग की जायेगी और वे जमा भी की जायेगी। अब संस्था को संसाधन चाहिये तो 'तख़्त के सामने अदब से' जाना ही पड़ेगा। आज बहुत ही कम स्वयंसेवी संस्थाओं में यह दम बचा है कि वह अपनी दाता संस्थाओं को रौब के साथ कहे कि उन्हें अमुक काम के लिए अपने तरीके से काम करने के लिए अनुदान चाहिये और अगर ऐसा नहीं होता है तो वह "यह लै अपनी लकुटि कमरिया" कह कर वह शान से बाहर आ जायें।

यही वज़ह है कि बाढ़ के प्रश्न पर अक्सर बहुत सी ग़ैर-सरकारी संस्थाएँ साल-दर-साल राहत कार्यों में लगी रहती हैं और वह कभी अपने आप से यह सवाल नहीं पूछतीं कि आख़िर इस तरह के कार्यक्रम का अन्त क्या है और इस तरह का काम करके क्या कभी भी समस्या का समाधान किया जा सकेगा? यह भी सच है कि कोई भी पीड़ित परिवार किसी सरकार या किसी एन॰जी॰ओ॰ के भरोसे विपत्ति का सामना नहीं करता है।

राहत कार्यों में एन॰जी॰ओ॰ की संलिप्तता और आग्रह का एक उदाहरण बिहार में 2009 में देखने में आया। इस साल बिहार में बाढ़ नहीं आयी और राज्य में आमतौर पर सूखे की स्थिति बनी हुई थी। उत्तर बिहार के राहत का बाजार बाढ़ वाला है उसमें सूखे की रसाई मुश्किल से होती है। राज्य में बाढ़ नहीं आने के कारण यह संस्थाएं अकुलाहट भरी कसमसाहट के दौर से गुज़र रही थीं और तभी बिल्ली के भाग से छींका टूटा और 1 अगस्त 2009 को बागमती का दायां तटबन्ध तिलक ताजपुर गांव के पास रुन्नी सैदपुर प्रखंड (सीतामढ़ी) में टूट गया। साधारण वर्षा और साधारण बाढ़ वाले वर्ष में इस घटना पर किसी का ध्यान भी नहीं जाता मगर वर्ष की इकलौती घटना होने की वजह से तिलक ताजपुर रातों-रात इन्टरनेट के जरिये सारी दुनियाँ के रिलीफ मैप पर आ गया। खूब वीडियो रिकॉर्डिंग हुई, फोटोग्राफी हुई, सहायतार्थ प्रस्ताव तैयार हुए और पूरे प्रान्त तथा बाहर और दाता समूहों की करीब 25 संस्थाओं की मीटिंग पास की एक संस्था में हुई और वहाँ संसाधन जुटाने और राहत कार्य चलाने की रणनीति तैयार हुई। इनमें से अधिकांश संस्थाएं वे थीं जिन्होंने 2008 में कोसी तटबन्ध में कुसहा में पड़ी दरार के बाद राहत कार्य चलाने का 'अम्बुज रस' चखा हुआ था। देश-विदेश के स्तर पर तिलक ताजपुर त्रासदी का काफी प्रचार-प्रसार हुआ। इसके पहले कि बाहरी मदद वहाँ पहुँच पाती, सरकार ने प्रयास कर के दरार को पाट दिया और खुद राहत कार्यों की जिम्मेवारी संभाल ली। तब इन सारे एन॰जी॰ओ॰ का पूंजी निवेश व्यर्थ चला गया और वह मन मसोस कर रह गयीं कि उन्हें न तो पीड़ित मानवता की सेवा करने का अवसर मिला और न ही इस आपदा में उन्हें 'विकास के अवसर' के दर्शन हुए। इसका यह मतलब कतई नहीं होता कि जल-संसाधन विभाग पाक-साफ है। स्थानीय लोग बताते हैं कि जिस जगह तटबन्ध टूटा वहाँ उसके टूटने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी और यह दरार प्रायोजित थी जिसके बारे में हम अलग से अध्याय-11 में चर्चा करेंगे।

5.6 हमारी बाढ़ आपदा प्रबन्धन के दायरे में आती है क्या?

विपत्ति की अगर बात करें तो बाढ़ों को आपदा के तौर पर प्रस्तुत करना और आपदा प्रबन्धन के अजेण्डा को आगे बढ़ाने की आज एक तरह से होड़ सी लगी हुई है। यह बात अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए कि उत्तर बिहार में बाढ़ कभी आपदा नहीं थी, यह एक जीवन शैली है। यहाँ के इंजीनियरों और राजनीतिज्ञों ने बाढ़ को आपदा का स्वरूप दिया है जिसका यहाँ की अधिकांश ग़ैर-सरकारी संस्थाएँ और सरकार प्रबन्धन करना चाहती

हैं। उन्होंने बड़ी चालाकी से बाढ़ की बहस को आपदा प्रबंधन की ओर मोड़ दिया है। यह ठीक उसी तरह है कि आपके पास न्यूमोनियाँ की दवा है और आपके पास ज़ुकाम के इलाज के लिए कोई आये तो उसे दवा तो तभी दी जा सकती है जब उसे न्यूमोनियाँ हो जाए। इसलिए सारी कोशिशें ज़ुकाम को न्यूमोनियाँ में बदल देने के लिए की गयी हैं और बिहार में तो कम से कम यही हुआ है। जब तक हम उन कारणों पर चोट नहीं करेंगे जिन्होंने बाढ़ को प्रलय में बदल दिया तब तक समाधान की दिशा में एक कदम भी नहीं बढ़ाया जा सकता। इसका सीधा मतलब है कि नदियों के किनारे तटबन्ध या उस तरह की कोई संरचना, जो कि पानी के प्रवाह के रास्ते की रुकावट बनती है, अव्वल तो बननी ही नहीं चाहिये और अगर यह बन गयी है तो इसे अचानक टूटने से बचाया जाना चाहिये। अगर यह संरचना टूट जाती है तब इसे पुर्नस्थापित करने या खुला छोड़ देने का निर्णय स्थानीय जनता पर छोड़ देना चाहिये। जल-निकासी की एक कारगर व्यवस्था का निर्माण किया जाना चाहिये ताकि पानी ज़्यादा समय तक टिक कर न रहे। हमें यह बात भली भाँति समझ लेनी चाहिये कि तटबन्धों, नहरों, सड़कों और रेल-लाइनों के अवैज्ञानिक और अंधाधुंद निर्माण ने पानी के रास्ते में रुकावटें पैदा की हैं। इन सारी संरचनाओं से अधिकाधिक जल-निकासी की व्यवस्था करने पर बाढ़ की समस्या का एक हद तक निवारण होगा।

बाढ़ के पानी में बड़ी मात्रा में गाद मौजूद रहती है। पानी के प्रबन्धन से कहीं ज़्यादा जरूरी इस गाद का प्रबन्धन है। परम्परागत रूप में बाढ़ के पानी को पूरे इलाके पर फैलने दिया जाता था जिससे बाढ़ का लेवेल घटता था, मिट्टी पूरे इलाके पर फैलती थी, ज़मीन की नमी और उर्वराशक्ति बरकरार रहती थी और नदी निर्बाध गति से भूमि का निर्माण करती थी। जल-संसाधन विभाग नदी को अपना स्वाभाविक काम करने से रोकता है। आपदा प्रबंधन विभाग, देशी-विदेशी दाता संस्थाएँ और उनके द्वारा पोषित अधिकांश स्वयं सेवी संस्थाएँ इस पूरी घटना का संज्ञान ही नहीं लेतीं। समस्या यह नहीं है कि पानी का क्या किया जाए, समस्या यह है कि गाद का क्या किया जाए?

हमने पूर्ववर्ती अध्यायों में देखा है कि किस तरह से बाढ़ की समस्या दुरूह हुई है और किस तरह स्थानीय लोगों ने इस समस्या से निपटने की कोशिशें की हैं। अधिकांश लोगों के लिए, बाढ़ के समय कोई बाहरी मदद नहीं पहुँच पाती है जबकि उन्हें इसकी सर्वाधिक जरूरत होती है। कभी किसी ने यह जानने की कोशिश नहीं की कि लोग इतनी गंभीर परिस्थितियों में किस तरह जीते हैं। यह समझ से परे है कि यह विधा जाने और सीखे बिना कुछ लोग आपदा प्रबन्धन पर भाषण और ट्रेनिंग देने के लिए अपने आप को उपयुक्त पाते हैं। सदियों से बाढ़ की कठिन परिस्थितियों में रह कर जीने वालों के कौशल और उनके पारम्परिक ज्ञान का यह सीधा-सीधा अपमान है। यह आश्चर्यजनक ही है कि आज तक सरकार ने या किसी दाता संस्था ने विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध पारम्परिक ज्ञान को एकत्रित करके उसे लिपिबद्ध करने और उसके प्रचार-प्रसार की गंभीर कोशिश नहीं की है। राहत कार्यों और आपदा प्रबन्धन में आकण्ठ डूबी किसी गैर-सरकारी संस्था से तो अब यह उम्मीद करना ही व्यर्थ है कि वह अपनी दाता संस्थाओं को ऐसा करने के लिए कहेगी क्योंकि दाता संस्थाओं ने तो पहले से ही अपने आप को हर विषय का सर्वज्ञ घोषित कर रखा है।

रघुपति

5.7 राजनैतिक पार्टियाँ भी पीछे नहीं हैं : बकरा कसाई से राज़ी

यही हाल राजनैतिक पार्टियों का भी है। वे भी राहत कार्यों में अपने भविष्य की तलाश करती हैं। सीतामढ़ी के समाजकर्मी रघुपति कहते हैं, ''...1967 के चुनाव में मैं एक पार्टी का छात्र कार्यकर्ता हुआ करता था। घर से पोटली में खाना बांध कर मंगनी की साइकिल से गाँवों में प्रचार करने के लिये जाया करता था। वहाँ लोगों से बात चीत शुरू ही होती थी कि गाँव का कोई न कोई आदमी निकल कर आता था कि रिलीफ तो बांटी थी फलां फलां पार्टी ने और वोट चाहिये तुमको? यह आदमी जवाब सुनने के लिए रुकता भी नहीं था और हम लोगों को चले जाने के लिए कहता था। उस समय हम लोग किशोर थे और लोगों के इस व्यवहार से मन आहत हो जाता था कि गरीबों के हक की बात करने वाले और उसके लिए संघर्ष करने वाले लोग रिलीफ के आगे क्यों नतमस्तक हो जायेंगे? उसके करीब 40 साल बाद कोसी क्षेत्र में कुसहा में एफ्लक्स बांध टूटने के एक साल बाद वहाँ लोकसभा चुनाव हुआ। हम लोग इसमें भी शामिल थे। कोसी क्षेत्र का बाढ़ पीड़ित इस बात से संतुष्ट था कि उसे रिलीफ में एक या दो क्विंटल अनाज और 2250 रुपया मिल गया था और वह व्यवस्था के इस एहसान का बदला जरूर चुकायेगा। वह भूल चुका था कि उसकी तबाही का सबब वही व्यवस्था थी जिसने रिलीफ बंटवायी। इसलिए रिलीफ तो बंटेगी। वह 1967 में बंटती थी और 2010 में भी बंटेगी। लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने की इसमें जबर्दस्त ताकत है। यह सच है कि अगर किसी आदमी की जान या सम्पत्ति पर खतरा आयेगा तो उसकी रक्षा में कोई भी संवेदनशील व्यक्ति अपने आपको मदद देने से नहीं रोक सकता। वह वक्त बहस करने का नहीं होता। मगर इस घटना के ठीक बाद राजनीति शुरू होती है और उसमें हर कोई अपना अपना हिस्सा खोजता है। यह गलत है, लोग

हाथ फैलाते रहेंगे तो दाता लोग देते रहेंगे। गरीब आदमी मजबूर होता है मगर एहसान फरामोश नहीं होता। वह अगर मजबूर नहीं होता तो इतनी तकलीफ बर्दाश्त करके परदेश नहीं जाता। इतने ज्यादा लोग, इतने ज्यादा समय के लिए कहीं बाहर जाते हैं क्या? एक समय था जब खाते-पीते परिवार के लोग रिलीफ लेना अपना अपमान समझते थे। अब बिरले ही कोई रिलीफ़ लेने से मना करता है।''[10]

इधर बिहार सरकार के भूतपूर्व मंत्री गणेश प्रसाद यादव का कहना है, ''...बागमती का तटबन्ध अब रुन्नी सैदपुर से बढ़ता हुआ बगल में मानपुर तक आ गया है। उनके बीच भी बहुत से गाँव फंसे हैं। अब गाँव का घर और जमीन पिता जी के नाम है। वह अब नहीं रहे। दफ्तर में जाइये तो लड़कों को जवाब मिलता है कि तुम्हारा तो नाम ही नहीं है। अरे, सरकार के पास सब रिकार्ड है, खतियान में नाम दर्ज है जमाबन्दी तुम्हारे पास है ही, तो कहाँ परेशानी है? अब यह गाड़ी मेरे नाम से नहीं है, पिता जी के नाम से है तो इसे मेरे नाम करने में क्या आधे घन्टे से ज्यादा समय लगना चाहिये? यहाँ तो रिवाज़ है दूसरे को मुसीबत में डाल कर खुश होना और उससे कुछ न कुछ ऐंठ लेना।

अब आप लड़िये तो आपकी हालत परमेश्वर कुँअर की हो जायेगी, देशद्रोह का मुकद्दमा चलेगा आप पर। निर्माण कार्यों में किसी गड़बड़ी की सूचना किसी अधिकारी को देने जाइयेगा तो आप पर रंगदारी का मुकद्दमा दायर हो जायेगा। इधर शिवहर के एक एम०पी० की 100-200 एकड़ जमीन बचाने के लिए तटबन्ध का अलाइनमेन्ट बदला गया। सुनते हैं कि चन्दौली में भी तटबन्ध की लाइन देने के बाद भू-स्वामियों की जमीन बचाने के लिए उसका अलाइनमेन्ट बदल दिया गया। खैरा पहाड़ी और सौली में तो सबको मालुम है कि यही हुआ।

इंजीनियरों से बात कीजिये तो वे उल्टा हम से पूछते हैं कि हमको कॉमन सेन्स आप से सीखना पड़ेगा? आखिर इसी नदी, इसी खेत, इसी परिवेश से हमारा सारा काम चलता था। पढ़ाई-लिखाई, शादी-ब्याह, खाना-पीना और सामाजिक प्रतिष्ठा आदि सब कुछ इस जमीन से मिलती थी। एक ही खेत में हम लोगों को दाल-भात दोनों हो जाता था? मेंड़ पर अरहर और खेत में धान। सुगन्ध आती थी फसलों से। हमारे पुरखों की भी तो कोई व्यवस्था रही होगी? उससे किसी ने कुछ क्यों नहीं सीखा? **बागमती का जब तटबन्ध बना तब पहली बार हमारे घर की खिड़की से होकर पानी बहा। कोई भी देश जाना जाता है उसकी नदी घाटी से और कोई भी समाज बसा है तो उसने नदी का किनारा देख कर ही अपना डेरा-डंडा डाला होगा। यहाँ तो हालत यह है कि किसी का सब कुछ बरबाद कर दीजिये और बरबाद कर देने के बाद उसे एक क्विंटल अनाज और 2250 रुपया दे दीजिये तो वह सारी तकलीफ भूल जाता है। जब बकरा ही कसाई से राजी है तो हमारी आपकी क्या भूमिका क्या बचती है।**''[11]

गणेश प्रसाद यादव

5.8 रिलीफ़ तो चाहिये मगर किस कीमत पर

हालात इतने बुरे हो गए हैं कि पिछले कुछ वर्षों में राहत मांगने वालों को ख़ैरात के बदले गोलियों की सौगात मिलने लगी है। इधर हाल के वर्षों में इस तरह की एक घटना 18 सितम्बर 1991 को किशनगंज जिले के पोठिया प्रखण्ड में हुई जहाँ तीन आदमी मारे गए। इसी तरह की घटना की पुनरावृत्ति कटिहार जिले के बलरामपुर प्रखण्ड में किरोरा गाँव में 4 अक्टूबर 2002 को हुई जिसमें दो ग्रामीण मारे गए। 2004 में दो किस्तों में हुई गोली चालन की घटनाओं में पातेपुर प्रखण्ड कार्यालय, जिला वैशाली में 4 अगस्त के दिन रिलीफ़ मांगने वाले लोगों की भीड़ पर गोली चलायी गयी जिसमें मन्टुन पासवान नाम का 14 वर्षीय किशोर मारा गया। पातेपुर में लोग राहत सामग्री के वितरण के लिए अंचल अधिकारी को खोजने के क्रम में उग्र हो गए और पुलिस को अपने 'बचाव' में गोली चलानी पड़ी। ऐसा ही कुछ दरभंगा जिले के मनीगाछी प्रखण्ड में 16 अगस्त को हुआ जब रेलवे लाइन पर धरने पर बैठे रिलीफ़ मांगने वालों पर पुलिस ने गोली चलायी जिसकी वज़ह से 3 आदमी मारे गए। अनौपचारिक स्रोतों के अनुसार मरने वालों की संख्या 5 थी।

2007 में मधुबनी में राहत मांगने वालों की भीड़ पर 3 अगस्त के दिन पुलिस को 'आत्म रक्षा' में गोली चलानी पड़ी जिसमें दर्शनानन्द नाम का एक व्यक्ति मारा गया। मधुबनी जिले में ही इस साल 23 अगस्त के दिन एक बाढ़ पीड़ित व्यक्ति की आंख में तमोरिया गाँव में मुखिया के पति और उसके गुर्गो पर तेजाब डालने का आरोप लगा। इस घटना के पीछे व्यक्तिगत दुश्मनी की बात कही जाती है। इस साल दक्षिण बिहार में संभवत: पहली बार राहत मांग रही भीड़ पर नालन्दा जिले के थरथरी प्रखंड में पुलिस ने 7 अगस्त को गोली चलायी। गोली चालन के साथ-साथ हुए लाठी चार्ज में इस घटना में बहुत से लोग घायल हुए थे। इसी तरह की घटना की पुनरावृत्ति 17 अगस्त को सोनबरसा (सीतामढ़ी) में हुई। सहरसा के सिमरी बख्तियारपुर प्रखंड में बाढ़ पीड़ितों द्वारा किये गए पथराव के जवाब में पुलिस ने 28 अगस्त को 'आत्म रक्षा' में गोली चलायी।

2008 में 18 अगस्त को कोसी का पूर्वी एफ्लक्स बांध टूटने के बाद भारी संख्या में बाढ़ पीड़ितों को सुरक्षित स्थानों पर शरण लेनी पड़ी थी जिनमें से बहुत लोगों को लम्बे समय के लिए राहत केन्द्रों में रहना पड़ गया। रिलीफ के बटवारे को लेकर इस बार इन केन्द्रों

पर काफी तनाव रहता था। इस साल बाढ़ पीड़ितों पर पुलिस फायरिंग की शुरुआत 22 अगस्त को अररिया जिले के रानीगंज प्रखंड से हुई। 28 सितंबर के दिन सहरसा के सोनबरसा प्रखंड में सेना के जवानों और बाढ़ पीड़ितों के बीच हुई नोंक झोंक में बाढ़-पीड़ितों की ओर से पथराव हुआ जिसके जवाब में सेना के जवानों की ओर से गोलियाँ चलायी गईं। पूर्णियाँ के बरहरा कोठी प्रखंड में बाढ़ पीड़ितों ने राहत के सवाल पर प्रखंड विकास पदाधिकारी का घेराव करके उसे बंधक बना लिया। इसके जवाब में भीड़ को तितर-बितर करने के उद्देश्य से पुलिस को गोली चलानी पड़ी।

2009 का साल शान्तिपूर्वक बीत गया क्योंकि इस साल बिहार में बाढ़ नहीं आयी थी मगर 2008 में कुसहा की घटना के बाद पुनर्वास को लेकर पूरे कोसी क्षेत्र में तनाव अभी तक बना हुआ है। कोसी एफ्लक्स बांध टूटने के बाद राज्य सरकार ने हर पीड़ित परिवार को 1500 रुपये से लेकर 10,000 रुपयों तक की अनुग्रह राशि अस्थाई घरों के निर्माण के लिए दी थी। इन लोगों को दिलासा दी गयी थी कि स्थाई गृह निर्माण के लिए इन्हें बाद में 55,000 रुपयों का अतिरिक्त अनुदान दिया जायेगा। बाढ़ पीड़ित इस अनुदान की प्रतीक्षा कर ही रहे थे कि खबर आयी कि 55,000 रुपयों का अनुदान केवल उन्हीं लोगों को दिया जायेगा जिन्हें पहली किस्त में 10,000 रुपये दिये गए थे। इससे लोगों में असंतोष फैला और बात-चीत का कोई नतीजा न निकलते देख कर 18 फरवरी 2010 को लोगों ने सुपौल जिले के बसन्तपुर प्रखंड कार्यालय का घेराव किया। प्रदर्शनकारियों की उग्र भीड़ को शान्त और तितर-बितर करने के लिए पुलिस को 'आत्म रक्षा' में फायरिंग करनी पड़ी। बाद में 49 नामज़द और 3000 की अनाम भीड़ के खिलाफ अशान्ति फैलाने के लिए प्रशासन/पुलिस ने मुकद्दमा (केस संख्या 20/10) दायर किया। इनमें से अंतिम सूचना मिलने तक तीन लोगों की गिरफ्तारी हुई है और बाकी लोग फ़रार हैं।

5.9 बागमती घाटी में राहत के सवाल पर गोली

बागमती घाटी में पिछले वर्षों में इस तरह की दो बड़ी घटनाएं हुई हैं। पहली घटना में 11 अगस्त 1998 को सीतामढ़ी जिला मुख्यालय पर राहत नियमित करने के लिए मांग करने वालों पर पुलिस को 'अपनी सुरक्षा' के लिए गोली चलानी पड़ी। जनता की ग़लती सिर्फ़ इतनी थी कि वह समुचित मात्रा में राहत सामग्री की मांग कर रही थी और राहत कार्यों में कुव्यवस्था और भ्रष्टाचार रोकने के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द कर रही थी। मारे गए लोगों में से दो व्यक्ति जनता दल के सदस्य थे जिसकी वज़ह से इस पूरी घटना को राजनैतिक रंग मिल गया। विपक्ष ने सरकार पर लोगों की कठिनाइयों के प्रति संवेदनहीन होने का आरोप लगाया तो राज्य सरकार का विपक्ष पर आरोप था कि वे इस दुर्घटना से राजनैतिक लाभ उठाना चाहता है। यह घटना सीतामढ़ी कलेक्टरेट के सामने एक प्रदर्शन के समय घटी जिसका नेतृत्व स्थानीय सांसद नवल किशोर राय कर रहे थे। वह पूरी घटना को कुछ इस तरह बयान करते हैं, ''...पानी को रोक पाना तो संभव नहीं है, यह अप्राकृतिक काम है। रोक देंगे तो वह कहीं न कहीं से रास्ता खोजेगा और बांध तोड़ कर निकल जायेगा। बुजुर्ग बताते हैं कि बाढ़ पहले भी आती थी और इससे भी भयंकर आती थी पर उसके निकलने का रास्ता पूरा खुला हुआ था। पानी बस आया और गया। पानी के साथ जो गाद आती थी वह खेतों पर फैल जाती थी जिससे अच्छी खासी फसल होती थी लेकिन अब नदी को बांध दिया गया है तो ताड़ के पेड़ जितना ऊँचा पानी आता है। इतना परिवर्तन हम सबने देखा भी है। फिर सिंचाई और बिजली का प्रश्न है। इन सारे मुद्दों को उठाते हुए हम लोग हर साल कोई न कोई कार्यक्रम करते ही रहते हैं।

11 अगस्त 1998 के दिन हमने सीतामढ़ी में एक कार्यक्रम का आह्वान किया था। लगभग 50,000 लोग इकट्ठा हो गए। सीतामढ़ी गाँधी मैदान से कलेक्टरेट की दूरी 6 किलोमीटर के आस-पास है। इस रास्ते पर इतने सारे लोग भर गए कि जलूस अंतहीन दिखायी देता था। बी०बी०सी० ने भी इतनी ही संख्या बतायी थी। हम लोग चले अपनी मांगों का ज्ञापन देने कलक्टर के यहाँ। उस जगह पहले से ही सी०पी०एम० का कोई धरना चल रहा था। वह लोग भी हमारी भीड़ को देख कर अचम्भित थे। कलक्टरेट का फाटक खोल दिया गया। कुछ तनाव सा पैदा हो गया। हम बाढ़ की बात कर रहे थे। बाढ़ पीड़ितों के लिए नाव नहीं थी, राहत नहीं थी, बचाव कार्य बिल्कुल नगण्य था, उठने-बैठने की जगह नहीं बची थी, कितने ही लोग बह गए थे या मारे गए थे। उनकी कोई सुनने वाला नहीं था। उस पीड़ा के कारण लोग आक्रोशित थे। कुछ पथराव हो गया। मैं चारदीवारी पर लाठी लेकर चढ़ गया कि अपने आक्रोशित लोगों को बाहर ले आऊँ क्योंकि कुछ लोग कलेक्टरेट के अन्दर घुस गए थे। फिर फाटक बन्द कर के मीटिंग शुरू हुई। शान्तिपूर्वक सभा चल रही थी। तभी एस० पी० पहुँचे, डी०एम० भी थे। शायद उन्होंने एस०पी० से कहा कि उन्हें पत्थर लगा है। मैंने तो यह देखा भी नहीं था। फिर उन लोगों ने फोन पर कुछ बातें की और बिना कारण बताये गोली चलानी शुरू कर दी। आन्दोलन को शान्त करने के लिए जो मान्य परम्परा है उसमें पहले हवा में लाठी भांजी जाती है, फिर लाठी चार्ज किया जाता है, पानी की धार मारी जाती है, रबर की गोली चलायी जाती हैं, हवाई फायर किया जाता है, आंसू गैस छोड़ी जाती है। इससे भी अगर भीड़ शान्त नहीं होती है तो कमर के नीचे गोली मारी जाती है। इस प्रक्रिया का यहाँ एकदम पालन नहीं किया गया। हम शान्तिपूर्वक सभा कर रहे थे मगर बिना चेतावनी दिये प्रदर्शनकारियों के सीने पर सीधे गोली मारी गयी जिसमें रिवाल्वर और राइफल का खुलेआम इस्तेमाल हुआ।

नवल किशोर राय

बिहार सरकार के वर्तमान विधि मंत्री उस सभा में मौजूद थे। मुझे और उनको लक्ष्य करके गोली चलायी गयी। हम लोगों ने थाने में घुस कर टेबुल के नीचे छिप कर जैसे-तैसे अपनी जान बचायी। रामनाथ ठाकुर ने पहचान छिपाने के लिए अपनी धोती खोल कर कन्धे पर रख ली थी और मैं किसी तरह छिप कर एक चाय की दुकान में जा बैठा।

इसके बाद तो चारो तरफ हल्ला हो गया। मीडिया के लोग आ गए, हमारे राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव आये और अनिश्चितकालीन धरना शुरू हुआ। अकारण लोगों को पकड़-पकड़ कर जेल में डाला गया। धारा 111 और 98 लगायी गयी जिसका मैं अभी भी अभियुक्त हूँ। बाद में वहाँ राम बिलास पासवान आये, बिहार के वर्तमान मुख्यमंत्री नीतीश कुमार भी आये। उस समय उन्होंने शरद यादव से धरना तोड़ने का आग्रह किया और यह भी कहा कि भविष्य में जब हमारी सरकार बनेगी तब इन सारे झूठे मुकद्दमों को वापस ले लिया जायेगा।

जनहित से जुड़े इन सब सवालों को लेकर हर साल हम कोई न कोई कार्यक्रम करते जरूर हैं भले ही देखने वालों को वह एक रस्म-अदायगी ही क्यों न लगे। उस समय हमारी 16 सूत्री मांगें थी और जहाँ तक बाढ़ नियंत्रण का प्रश्न है, हमने सघन वनीकरण की भी एक मांग रखी थी। वन क्षेत्र 33 प्रतिशत होना चाहिये जो कि यहाँ 14.15 प्रतिशत पर आ टिका है। हमारे सामने मोहन धारिया कमीशन की सिफारिशें थी जिसमें कहा गया था कि बीस वर्षों तक सरकारी और गैर-सरकारी स्तर पर लगातार लगभग 20,000 करोड़ रुपये अगर वनीकरण पर खर्च किये जाएं तो स्थिति सामान्य बन पायेगी। वह तो खैर नहीं ही हुआ। बाढ़ के पानी का गाद के साथ अटूट संबंध है। हमारी सरकारें, चाहे वह केन्द्र की हों या राज्य की, पानी की बात तो करती हैं पर गाद की अनदेखी करती हैं। हम कभी भी अपनी नदियों, तालाबों, पुलों आदि में इकट्ठा होने वाली गाद की सफाई की बात नहीं करते। बागमती की अगर बात करें तो बागमती, अधवारा, जमुने, शिकाओ, हरदी, धौंस आदि सभी नदियाँ पिछले सौ वर्षों के मुकाबले बहुत छिछली हो चुकी हैं, उनकी गहराई कायम रखी जाए और उन पर बने तटबन्धों को तोड़ दिया जाय। ऐसा अगर किया जा सके तो बाढ़ से होने वाला नुकसान वर्तमान नुकसान का मात्र 10 प्रतिशत रह जायेगा।

वह मुकद्दमा अभी भी चल रहा है और नीतीश कुमार के आश्वासन के बावजूद चल रहा है। उस घटना में 5 लोग मारे गए और 12 घायल हुए थे। उनमें से 4 बार विधायक रहे रामचरित्र यादव थे जिन्हें नजदीक से रिवाल्वर से गोली मारी गयी थी। जिला पंचायत परिषद के अध्यक्ष, ब्लाक प्रमुख और मुखिया रह चुके डॉ० अयूब को पीछा करके दौड़ा कर गोली मारी गयी थी। महन्त मण्डल एक गरीब आदमी था वह भी मारा गया। रामपरी देवी मुसम्मात को मार दिया गया और एक मुनीफ नदाफ नाम का मुसलमान था जिसे मार दिया गया। मुनीफ को कब्र तक नसीब नहीं हुई, उसे जला दिया गया था। हमारी लड़ाई का प्रतिफल इतना जरूर हुआ कि इन मारे गए लोगों के परिवारों को एक-एक लाख रुपया मुआवजे के तौर पर मिला। तीन लोगों के आश्रितों को नौकरी भी मिली पर यह दे कर वापस ले ली गयी क्योंकि कलक्टर और एस०पी० के माध्यम से जो मुकद्दमा दायर किया गया था उसमें इन तीन मृतकों को भी अपराधी का दरजा दिया गया था। कानून की शायद यही मान्यता है। हमें उनके आश्रितों की वैकल्पिक व्यवस्था करनी पड़ी। घायलों में मंजू देवी का पैर काटना पड़ गया था। वह रुन्नी सैदपुर में रहती हैं और उनके रोजगार की कुछ व्यवस्था की गयी है। मंजू की शादी हम लोगों ने एक संघर्षशील युवक अशोक से करवा दी थी पर अब उसकी मृत्यु हो गयी है। बाकी घायलों की भी हमने यथासंभव मदद की।

मैं जनता दल (यू०) में हूँ और जब यह घटना हुई तब भी जनता दल (यू०) में था। उन दिनों जनता दल (यू०) ने 9 अगस्त से 14 अगस्त के बीच में एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन चलाया था और उसी बीच में संयोग से यहाँ बाढ़ आ गयी। वह भयानक बाढ़ थी और इस आन्दोलन को किसी तरह से रिलीफ के आन्दोलन का नाम मिल गया। वह बाढ़ के खिलाफ आन्दोलन था और बाढ़, सिंचाई, बिजली तथा पानी समेत 16 सूत्री मांगें उसमें शामिल थीं। हम लोगों ने 11 अगस्त 1998 की तारीख धरना, जलूस और प्रदर्शन के लिए तय की थी और उसके एक महीना पहले से लोगों के साथ सभी स्तरों पर हम कार्यक्रम चला रहे थे। इसके पहले भी मैं इस प्रश्न को संसद में उठा चुका था। मैं बाढ़, पानी और बांध के प्रश्न पर हमेशा से अपनी बात रखता रहा हूँ। बाद में शरद यादव ने राष्ट्रपति के० आर० नारायणन को 19 अगस्त 1998 को जनता दल (यू) की तरफ से ज्ञापन देकर यह मांग की कि इस गोली काण्ड की न्यायिक जांच करवायी जाए और मृतकों के आश्रितों को पांच-पांच लाख रुपये का मुआवजा दिया जाए।''[12]

पुलिस की गोलियों के धमाके सीतामढ़ी में ही शान्त नहीं हुए। इनकी गूंज 6 अगस्त 2001 को मुजफ्फरपुर जिले के औराई प्रखण्ड में फिर सुनायी पड़ी जब 4 निर्दोष लोग मारे गए। यहाँ झंझट तब शुरू हुआ जब रिलीफ़ बांटने वाले मुंशी ने सरकार द्वारा निर्धारित राहत सामग्री से कम वजन की सामग्री का वितरण शुरू किया। जब राहत मांगने वालों ने, जिनमें से अधिकांश लाल कार्डधारी थे, इस मनमानी का विरोध किया तो उपद्रव शुरू हो गया और पुलिस को अपने 'बचाव' में गोली चलानी पड़ गयी। इस घटना का विवरण नीचे दे रहे हैं।

5.10 औराई गोली काण्ड (2001)

औराई मुजफ्फरपुर जिले के उत्तर पश्चिमी हिस्से पर स्थित एक प्रखंड है जिसमें सीतामढ़ी जिले से निकल कर बागमती और लखनदेई नदियाँ प्रवेश करती हैं। अज से तीन साल पहले तक बागमती का पानी रुन्नी सैदपुर तक तो तटबन्धों के बीच बहता था मगर उसके नीचे नदी पर तटबन्ध नहीं थे। रुन्नी सैदपुर से आगे तटबन्धों से निकला हुआ बागमती का पानी एक अनियंत्रित तीर की तरह सबसे पहले औराई प्रखंड में घुसता था और उसके बाद निचले इलाके को तबाह करता था। बाढ़ से तबाही इस इलाके के लोगों की नियति थी। बरसात के मौसम में राहत सामग्री के बिना बहुत से परिवारों के लिए जीवन यापन यहाँ मुश्किल हो जाता है मगर उसे पाने के लिए अधिकारियों का भ्रष्टाचार और नकली बाढ़ पीड़ितों की प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। इसी प्रयास में कभी-कभी प्रशासन और बाढ़ पीड़ित जनता का ऐसा मुकाबला हो जाता है जिस में राहत सामग्री पाने की कीमत जान देकर ही अदा होती है। ऐसी ही एक घटना 6 अगस्त 2001 के दिन औराई के प्रखंड मुख्यालय में घटी।

इस गोली काण्ड (2001) की शुरुआत कुछ इस तरह से हुई। 5 अगस्त 2001 के दिन औराई प्रखंड द्वारा स्थानीय हिन्दी मिडिल स्कूल में राहत सामग्री का वितरण किया जाना था जिसकी सूचना लाभार्थी गाँवों को दे दी गयी थी। उस दिन सुबह धीरे-धीरे स्कूल परिसर में ग्रामीण इकट्ठा होना शुरू हो गए। पहला नम्बर नयागाँव का था और प्रत्येक लाभार्थी परिवार को उस दिन दस किलोग्राम गेहूँ मिलना था। जब बटवारा शुरू हुआ तो गेहूँ बाल्टी से नाप कर दिया जा रहा था। गाँव वालों को लगा कि इस तरह से मिलने वाला गेहूँ 5 से 7 किलोग्राम से ज्यादा नहीं था तो उन्होंने ऐतराज किया। उसी समय वहाँ पास के बिशनपुर गाँव के अमिन्दर साह पहुँचे जिनके गाँव का नम्बर राहत पाने वालों की सूची में उस दिन बाद में आने वाला था। नयागाँव के एक ग्रामीण ने उन्हें गेहूँ नापने वाली बाल्टी पकड़ा कर कहा कि देखो यही इतना मिल रहा है। अमिन्दर साह का कहना है, ''...मुझे लगा कि गेहूँ की मात्रा सचमुच कम है और मैं वह बाल्टी लेकर दिखाने के लिए सामने थाने की ओर चल पड़ा। थाना पहुँचते ही थाने के मुंशी ने मुझे वहीं से पीटना शुरू किया और घसीटते हुए स्कूल में ले गया। वहाँ चबूतरे पर बिठा कर मुझे फिर पीटा। बाद में वह मुझे फिर थाना लाया। फिर जब इस बेवजह पिटाई की खबर फैली तो यहीं रामपुर के एक सज्जन पप्पू बाबू मुझे थाने से छुड़ा कर घर लाये। घर आकर मैं बेहोश हो गया और तब गाँव-घर के लोग लाद कर मुझे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, औराई ले गए। तीसरे दिन सुबह यानी 7 अगस्त को मुझे कुछ होश आया और इस बीच क्या हुआ मुझे कुछ नहीं मालुम। बाद में सरकारी आदेश के तहत मुझे मुजफ्फरपुर के मेडिकल कॉलेज वाले अस्पताल में भेजा गया जहाँ मैं 15-16 दिन रहा होऊँगा।''[13]

अमिन्दर साह के साथ जो कुछ होना था वह तो 5 अगस्त को पूरा हो गया पर पुलिस द्वारा असली दंभ और शौर्य का प्रदर्शन 6 अगस्त के लिए बाकी रखा गया था। उस घटना का विवरण देते हैं औराई के पास के गाँव राजखंड के 45 वर्षीय बेचन महतो जो उस दिन अपने घरेलू हैंड पम्प की मरम्मत के लिए कुछ जरूरी साज-सामान खरीदने के लिए औराई आये हुए थे। बेचन महतो पंचायत समिति के सदस्य हैं और दुर्भाग्यवश जब वे मात्र डेढ़ वर्ष के थे तभी जाड़े के समय आग तापने वाली अंगीठी से उनके शरीर का काफी हिस्सा जल गया था। इस दुर्घटना में उनका एक हाथ लगभग बेकार हो गया और उनकी दिनचर्या असामान्य हो गयी। अपने जीवट की इच्छाशक्ति की बदौलत बेचन महतो एक अच्छे सामाजिक कार्यकर्ता और स्थानीय पंचायत समिति के सदस्य बने। वे बताते हैं, ''...यह घटना 6 अगस्त 2001 की है। औराई प्रखंड बाढ़ के पानी में पूरा डूबा हुआ था। औराई में थाने के सामने मध्य विद्यालय है। बाढ़ राहत वितरण के लिए आस-पास के गाँवों के बाढ़ पीड़ितों को वहाँ बुलाया गया था। 4 अगस्त की शाम को ही थाने के पदाधिकारी और प्रखंड शिक्षा पदाधिकारी आदि ने मिल कर गेहूँ में घपले बाजी कर दी थी। बहुत सा गेहूँ वहाँ से हटा दिया गया था। दूसरे दिन 5 तारीख को जब वितरण शुरू हुआ तब गेहूँ तौल कर नहीं बल्कि बाल्टी से नाप कर दिया जा रहा था। बाल्टी से गेहूँ नापे जाने का स्थानीय लोगों ने विरोध किया। उनका कहना था कि जो घोषित सामग्री है सबको उतनी मिलनी चाहिये। बाल्टी का माप ठीक नहीं होता। इन लोगों ने थाने के मुंशी को इस अनियमितता के बारे में खबर की तो वह कुछ होमगार्ड के जवानों को लेकर वहाँ आया और थोड़ी बातचीत के बाद बिशुनपुर के अमिन्दर साह नाम के व्यक्ति को अंधाधुंद तरीके से पीटने लगा और उसे अधमरा कर दिया फिर उसे गायब कर दिया। शायद उसे औराई में ही छिपा कर कहीं रखा हुआ था। दूसरे दिन 6 तारीख को लोगों में आक्रोश था कि एक तो बाढ़ के चलते लोग भूख से मर रहे हैं, उन्हें खाने को कुछ नहीं मिल रहा है और ऊपर से पुलिस की यह ज्यादती। यह लोग धीरे-धीरे थाने के आस-पास एकत्र होना शुरू हुए। खबर मिली कि अमिन्दर साह औराई अस्पताल में भरती हैं, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में। उनकी हालत बहुत ही नाजुक थी। लोगों का कहना था कि बाढ़ राहत का वितरण तो अंचल कार्यालय का काम है, इसमें पुलिस की कहाँ से जरूरत पड़ गयी? कोई बाढ़ सामग्री लूट तो नहीं रहा था, लोग तो बस अपना वाजिब हक मांग रहे थे। धीरे-धीरे लोगों की संख्या 4-5 हजार हो गयी और यह सब के सब लोग बाढ़ पीड़ित ही थे। इन लोगों की अब एक ही मांग थी कि थाने के मुंशी को निलंबित किया जाए और उन पर अमिन्दर साह को बुरी तरह पीटने का मुकद्दमा चलाया जाए। पुलिस निरंकुश थी। यहाँ थाने के एक नायब दरोगा थे जो अमिन्दर साह का फर्द बयान लेने के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र गए और इधर मुंशी को लगा कि यह बयान उसके खिलाफ जायेगा। वह खिड़की के अन्दर से एक होमगार्ड की राइफल लेकर अंधाधुंद फायरिंग करने लगा। उस समय सुबह का 9-10 बजा होगा। उसके बाद पांच बजे तक न तो कोई एस०पी० और न ही कोई डी०एस०पी० यहाँ आया। शाम को जब यह लोग आये तो यहाँ मरघट जैसा सन्नाटा था। चार लोग फायरिंग में मारे गए थे। मारे जाने वालों में मुहम्मद नदीम नाम का एक किशोर था जो स्कूल से पढ़ कर अपने गाँव सोसौला लौट रहा था। रामनगरा के जिस हरिकिशोर सिंह को सीने पर गोली लगी थी वह भी किशोर ही था। पुलिस का आरोप था कि वह सिपाही की रायफल लेकर भाग रहा था। तीसरे आदमी औराई के ही रफीक मियाँ थे और सत्तन साहनी की मौत इलाज के दौरान अस्पताल में हुई।

अमिन्दर साह

करीब 5 बजे हमारे तत्कालीन विधायक गणेश प्रसाद यादव पटना से यहाँ पहुँच गए। उनके आने की खबर जैसे-जैसे लोगों को लगी तो उनका हौसला बढ़ा और वे घरों से बाहर निकलने लगे। उसके बाद नीतीश कुमार, शरद यादव और सुशील कुमार मोदी आये। इन लोगों के आने के बाद जहाँ एक ओर राहत कार्यों में तेजी आयी वहीं दूसरी तरफ प्रशासन की तरफ से बाढ़ पीड़ितों पर मुकद्दमा चलाने की प्रक्रिया भी तेज हुई। 23 लोग उस समय नामजद अभियुक्त बनाये गए पर गिरफ्तारी किसी की नहीं हुई थी। राज्य स्तर पर इस घटना के विरोध में आन्दोलन

हुए और उसमें शरद यादव और सुशील मोदी ने पटना में डाक बंगला चौराहे पर गिरफ्तारी दी थी। सरकार ने डी० पी० माहेश्वरी की निगरानी में एक जांच समिति का गठन किया और आश्वासन दिया कि जब तक यह रिपोर्ट नहीं आ जायेगी तब तक किसी की गिरफ्तारी नहीं होगी। इस समिति के लोग जब यहाँ आये तब उन्होंने न तो किसी घायल से बात की और न ही बाढ़ पीड़ितों से मिलने आये। अपनी मर्जी से उन्होंने अपनी रिपोर्ट में जो कुछ भी लिखा हो उसके बारे में हम लोगों को कुछ मालुम नहीं है। इस रिपोर्ट को अभी तक सरकार ने सार्वजनिक नहीं किया है। नीतीश कुमार भी इस आन्दोलन में शामिल हुए थे मगर अब उनकी सरकार है और अभी भी मुकद्दमा वापस लेने की बात कौन कहे, उलटे अभियुक्तों की सूची बड़ी करने का काम जारी है। गणेश प्रसाद यादव ने इस अनियमितता के विरुद्ध कलक्टर और एस०पी० का घेराव किया और तब इन लोगों ने आश्वासन दिया कि जब तक सरकार का आदेश नहीं होगा किसी की गिरफ्तारी नहीं होगी। नामजद अभियुक्तों के अलावा 4-5 हजार की भीड़ के अनाम व्यक्तियों पर भी मुकद्दमा दायर किया गया है। इधर हाल में मार्च 2010 में अभियुक्तों की सूची में 56 लोगों के नाम और भी जोड़े गए हैं। इनमें से अधिकांश लोग सामाजिक सरोकार रखने वाले या राजनैतिक कार्यकर्ता हैं। इससे सरकार को यह फायदा होगा कि वह कह सकती है कि यह प्रतिरोध गरीबों का प्रतिरोध न होकर राजनीति से प्रेरित है और अपनी जरूरत पर इन लोगों को परेशान कर सकती है। जो लोग मारे गए उनके परिवार वालों को एक-एक लाख रुपया नकद अनुदान मिला, इन्दिरा आवास तथा एक-एक हैण्डपम्प भी सरकार की तरफ से दिया गया। घायलों को दस-दस हजार रुपये की अनुग्रह राशि दी गयी थी। मृतकों के परिवारों में एक व्यक्ति को सरकारी नौकरी देने की भी बात थी मगर अब इधर अनुदान की रकम वापस करने के लिए रिकवरी नोटिस लोगों के पास आ रहा है तो नौकरी का सवाल कौन उठायेगा? यह अनुदान तो एफ०आइ०आर० के बाद लोगों को दिया गया था। सरकार अगर समझती है कि अभियुक्तों को अनुदान नहीं दिया जाना चाहिये तो उसे उसी समय अनुदान नहीं देना चाहिये था। अनुदान देकर वापस लेना कहाँ की अकलमन्दी है? गणेश प्रसाद यादव के नेतृत्व में इसके खिलाफ भी आन्दोलन हुआ तो मामला अभी दब गया है मगर खत्म नहीं हुआ है। अभियुक्तों पर जितनी भी कड़ी से कड़ी दफाएं लगाई जा सकती हैं, सब लगी हैं जिनमें दफा 307 (जान से मारने की कोशिश) भी शामिल है। इसके अलावा जो धाराएं लगाई गईं वह 447/448/331/332/427/436/364 हैं और आर्म्स ऐक्ट 27 के तहत भी धाराएं लगाई गयी हैं। हम लोगों पर थाने में आग लगाने का भी अभियोग लगा था।

मैं उस दिन अपने हैण्डपम्प के लिए कुछ सामान लेने औराई गया हुआ था। वहाँ जो भीड़-भाड़ देखी तो पता लगाना चाहा कि हुआ क्या है? जब तक कुछ पता लगे तब तक तो पुलिस का यह काण्ड ही हो गया। भगदड़ मच गयी, जो जहाँ था वहीं चिड़िया की तरह दुबक कर छिप गया। मैं नहीं जानता कि पुलिस ने मुझे औराई में उस दिन देखा था या नहीं पर क्योंकि हम लोग गणेश प्रसाद यादव का साथ देते हैं, इसलिए हमारा नाम इसमें डाला गया। जब शरद यादव, नीतीश कुमार और सुशील कुमार मोदी यहाँ आये थे तब यहाँ के एस०पी० और डी०एस०पी० ने हम लोगों का नाम डलवाया क्योंकि पुलिस की ज्यादती के बारे में हम लोगों ने इन नेताओं को बताया था। हम लोगों का नाम अभियुक्तों की सूची में डालने का एक कारण और भी था। कुछ दिन पहले यहाँ पूरब के एक गाँव साही मीनापुर में एक अपराधी मारा गया था जिसको लेकर इन्हीं पुलिस अधिकारियों ने गाँव वालों को बहुत परेशान किया हुआ था जिसका हम लोगों ने मुखर विरोध किया था। तभी से हम लोग पुलिस की नजरों में चढ़े हुए थे। औराई की इस घटना ने पुलिस को हमसे हिसाब-किताब बराबर करने का एक मौका दे दिया। थाने के मुंशी को उस समय जरूर बर्खास्त कर दिया गया था मगर सुनते हैं कि बाद में वह कोर्ट चला गया और उसकी बर्खास्तगी वापस ले ली गयी। यहाँ के थाने के पूरे स्टाफ का रातों रात तबादला कर दिया गया था। बाद में अभियुक्तों की सूची में 56 लोगों का नाम और जोड़ा गया जिसमें गणेश बाबू के भाई और भतीजे का भी नाम शामिल है।''[14]

पुलिस ने थाने में अपनी जो प्राथमिक सूचना रिपोर्ट (संख्या 60/2001) लिखायी उसमें कहा गया कि गेहूँ वितरण शान्तिपूर्ण ढंग से हो रहा था कि करीब 10 बजे उक्त विद्यालय में शोर गुल होने लगा। पता चला कि एक व्यक्ति, जो राहत का गेहूँ लेने वालों में से ही था, गेहूँ वितरण में प्रयुक्त बाल्टी को छीन कर भागने लगा जिस कारण अन्य लोगों ने उस व्यक्ति को पकड़ लिया। आरक्षी दीनानाथ सिंह शोर-गुल सुन कर स्कूल में गए और लोगों द्वारा मार-पीट होने से उस व्यक्ति को बचाव हेतु थाने पर लेते आये, इसके बाद विधि व्यवस्था संचालन हेतु पुलिस सशस्त्र बल के साथ हिन्दी स्कूल गयी। थाना वापस आकर इन्सपेक्टर ने पकड़ कर लाये गए व्यक्ति का नाम-पता पूछा जिसने अपना नाम अमिन्दर साह पेसर स्वर्गीय फकीरा साह साकिन बिशुनपुर थाना औराई बताया। 6 अगस्त की सुबह गुप्त सूचना मिली कि मुंशी के विरुद्ध ग्रामीण लोग गोलबन्द हो रहे हैं तथा अमिन्दर साह और अन्य ग्रामीण थाने का घेराव करने वाले हैं। इसकी सूचना स्थानीय पुलिस ने तत्काल वरीय पदाधिकारियों को दे दी। इस बीच करीब 11 बजे भीड़ की संख्या 3-4 हजार हो गयी। पुलिस के अनुसार भीड़ में बहुत से लोग अस्त्र रखे हुए थे तथा हथियार हवा में लहरा रहे थे। भीड़ पुलिस के विरुद्ध नारा लगाते हुए यह कहने लगी कि मुंशी को हमारे हवाले करो, जान मार कर बदला लेंगे। 9 बजे दिन के आस-पास एकत्रित भीड़ उग्र हो गयी और थाने पर ईंट-पत्थर से पथराव करने लगी। इन्सपेक्टर ने एकत्रित भीड़ को नाजायज़ मजमा घोषित करते हुए एकत्रित भीड़ को चेतावनी दी कि यह मजमा नाजायज है और सभी अपने-अपने घर वापस जायें। नाजायज मजमें में शामिल लोग थाना परिसर में घुस गए और ईंट-पत्थर चलाने लगे। पुलिस बल द्वारा भीड़ को थाने के बाहर करने के बावजूद वे लोग परिसर के अन्दर चले आये। लोग टूट पड़े और ईंट-पत्थर चलाते हुए एवं हाथ में लुआठी लिये हुए घुसते चले आये। इस पर पुलिस ने अपने जवानों को लाठी चार्ज करने का आदेश दिया। आदेश पा कर जवानों ने हलका लाठी चार्ज कर के नाजायज मजमें को थाना परिसर के गेट से बाहर कर दिया जिस पर लोगों ने भीड़ को ललकार कर पुलिस पर हमला बोला। इसी बीच नाजायज मजमें से उपस्थित एक जत्था थाने के पश्चिम तरफ से बांस के बैरियर को तोड़ते हुए थाना परिसर में प्रवेश कर गया। उसमें कुछ लोग आग्नेयास्त्र लिये हुए थे जिससे उन्होंने तीन राउण्ड फायर किया और थाने में घुस कर तोड़ फोड़ करने लगे। उपद्रवियों का दूसरा जत्था पूरब पश्चिम का बैरियर तोड़ते हुए थाना परिसर में घुसा तथा कुछ लोगों ने मुख्य गेट से घुसते हुए पुलिस पर हमला कर दिया। इन्सपेक्टर ने पहले किसी

तरह जान बचाते हुए अपने जवानों को सुरक्षित स्थान पर पोज़ीशन लेने का आदेश दिया। आरक्षियों को अपनी सरकारी राइफल से 5-5 राउण्ड आसमानी फायर करने का आदेश दिया। इसी बीच उपद्रवियों ने थाने के बरामदे के पश्चिम तरफ छप्पर में लुआठी से आग लगा दी। वितन्तु कक्ष और आरक्षी के कार्यालय में घुस कर तोड़-फोड़ की एवं आग लगाना शुरू कर दिया। कुछ उपद्रवियों ने इन्सपेक्टर के चैम्बर में घुस कर कुर्सी में आग लगा दी तथा वहाँ थाने के मुंशी दीना नाथ सिंह, जो छुपा हुआ था, के साथ मार-पीट करने लगे तथा उसे घसीटते हुए कक्ष से बाहरी परिसर में जाने लगे। वे कह रहे थे कि साले पर पेट्रोल छिड़क कर जिन्दा जला दो। उपद्रवियों ने एक आरक्षी को पीछे से पकड़ लिया तथा दूसरा उपद्रवी उसकी रायफल छीन कर भागने लगा। इस पर इस बार तीन पुलिस वालों को 5-5 राउण्ड गोली चलाने का आदेश दिया गया। फायरिंग में एक व्यक्ति, जो रायफल छीन कर भाग रहा था, को गोली लगी और उसे थाना गेट के पास गिरते देखा गया लेकिन उपद्रवी थाने के मुंशी को घसीटते हुए थाना परिसर के बाहर ले गए। इस बार फिर पुलिस ने अपने साथी और थाने की सम्पत्ति की रक्षा के लिए गोली चलायी और उपद्रवी एक-एक कर गिरते चले गए। कुछ पश्चिम की ओर भागने लगे।[15]

इस तरह से आम जनता और पुलिस द्वारा घटना की जानकारी का पक्ष पूरा होता है। इसके बाद तो भगदड़ मच गयी और चारों तरफ सन्नाटा छा गया। तब पुलिस मारे गए लोगों की तलाश में थाने से बाहर निकली और घायलों को अस्पताल भिजवाया। उसने बेचन महतो समेत 23 नामजद लोगों के खिलाफ तथा 3 से 4 हजार अनजान लोगों के खिलाफ पुलिस की रायफल छीनने, उस पर जानलेवा हमला करने, थाने में आग लगाने, सरकारी सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाने, थाना मुंशी को घसीट कर जान से मारने के लिए ले जाने तथा आर्म्स ऐक्ट की धारा 27 के अन्तर्गत मुकद्दमें दायर किये।

5.11 औराई आन्दोलन के राजनैतिक पैंतरे

बेचन महतो आगे कहते हैं, ''...नीतीश कुमार, शरद यादव, सुशील कुमार मोदी ने पूरे बिहार में औराई गोली काण्ड के खिलाफ आन्दोलन किया। बिहार बन्द हुआ, जेल भरो अभियान चला और जब उनकी सरकार बनी तब उनकी ही सरकार में औराई गोली काण्ड के अभियुक्तों पर वारन्ट भी जारी हुआ। कई लोगों का नाम जुड़ा। राबड़ी देवी सरकार ने जो राहत बांटी थी उसको वापस लेने का जो नोटिस दिया गया था उसको भी नीतीश कुमार की सरकार ने खतम नहीं किया और नीतीश जी की सरकार में किसी भी बाढ़ पीड़ित को कोई न्याय नहीं मिला। हम उनके दल के लोग हैं। मुझे कोई विधायक या सांसद थोड़े ही बनना है जो मैं सच न बोलूं।'' बेचन महतो ने नामजद अभियुक्त बनाये जाने के बाद अपनी गिरफ्तारी के खिलाफ अग्रिम जमानत की अर्जी दी (1 सितम्बर 2001) जो मंजूर कर ली गयी। फैसला लिखते हुए विद्वान न्यायाधीश ने जो कुछ लिखा उसका कुछ अंश इस तरह है, ''...प्राथमिकी में थाना प्रभारी औराई जो इस काण्ड के सूचक हैं, ने 23 उपद्रवियों का नाम मजमा के पहचाने गए सदस्य के रूप में अंकित किया है। इसमें आवेदक भी सन्निहित था। इस प्रकार आवेदक एवं भीड़ के अन्य लोगों के विरुद्ध अन्य आरोपों में मौलिक आरोप है कि इन सभी लोगों ने उग्र रूप धारण करते हुए थाना भवन में आग लगा दी थी तथा थाना के मुंशी को हत्या के उद्देश्य से घसीटते हुए ले जाने लगे और सरकारी सामानों को तितर-बितर कर दिया। इस प्रकार कानून को अपने हाथ में लेते हुए प्राथमिकी में अंकित घटनाओं के अपराध को किया। प्राथमिकी के अवलोकन से मात्र यही स्पष्ट होगा कि अभियुक्त को इतनी बड़ी भीड़ के सदस्य के रूप में पहचाना है। ऐसी स्थिति में जब भीड़ में चार से पांच हजार व्यक्ति उपस्थित थे तब यह कहना मुश्किल होगा कि किसने कौन सा अपराध किया। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने बहस की कि दण्ड विधान संहिता की धारा 199 की मदद से सबों के विरुद्ध जरूरी कार्यवाही की गयी है परन्तु इसमें आवेदक को झूठे फंसाया गया है। आगे सूचक इतने सारे व्यक्तियों को घटना स्थल पर पहचान नहीं सकता। आवेदक के अधिवक्ता के मुताबिक वस्तुतः पुलिस ने ही निर्दोष, गरीब पीड़ित जनता के विरुद्ध आक्रामक रुख अख्तियार किया। जो लोग बाढ़ पीड़ित होते हुए राहत हेतु राशन की मांग करने पहुँचे उनके ऊपर उन लोगों ने गोलियाँ चलाईं। उन्होंने गोलियों से भीड़ के सदस्यों को भूंज दिया जिसमें चार व्यक्तियों की जानें गईं और 40 से अधिक व्यक्ति घायल हुए हैं। अधिवक्ता ने बहस की कि यह मामला पुलिस बर्बरता का नमूना है। पुलिस ज्यादती का यह नमूना जो निर्दोष बाढ़ पीड़ितों के प्रति की गयी है, बेमिसाल है। पुलिस यद्यपि इस कार्य में इस कदर लिप्त हुई है कि सरकार भी चिन्तित हो गयी है एवं यही कारण है कि पुलिस ज्यादती के विरुद्ध सरकार ने उच्चस्तरीय जांच बैठा दिया है। ऐसी स्थिति में अभी इस स्तर पर यह कहा जाना कि आवेदक या अन्य अभियुक्त इस काण्ड में दोषी हैं एवं इस प्रकार दोषी हैं कि पुलिस उन्हें पुनः गिरफ्तार करे न्याय के बिलकुल विपरीत होगा। आवेदक के अधिवक्ता ने कहा है कि इसमें किसी भी पुलिस अधिकारी को कोई जख्म नहीं पहुँचा। अगर आम जनता के सदस्य जो भीड़ के सदस्य भी कहे जाते हैं उन्हें पुलिस द्वारा गिरफ्तार करने को विवश किया जाए तो यह न्याय से परे होगा। आवेदक जो मात्र एक हाथ का व्यक्ति है एवं दूसरे हाथ कटे हुए हैं जमानत का अधिकारी है। मैं आदेश देता हूँ कि अगर इनकी गिरफ्तारी की जाती हो या यह स्वयं आत्म समर्पण करते हों तो इनके द्वारा नौ हजार रुपये तथा इतनी ही राशि के दो जमानतदारों द्वारा बन्ध पत्र निस्तारित करने पर इन्हें छोड़ दिया जाए।''

बेचन महतो

बेचन महतो की अग्रिम जमानत की अर्जी तो मंजूर हो गयी पर मामले में एक नया मोड़ आया जब घटना के दस साल बाद 8 फरवरी 2010 को उन्हें इस सारी घटना का मुख्य अभियुक्त बनाया गया। यह खबर स्थानीय समाचार पत्रों में छपी। दैनिक जागरण के मुजफ्फरपुर संस्करण में 9 फरवरी 2010 को यह समाचार ''अपाहिज व्यक्ति के खिलाफ आरोप सत्य'' के शीर्षक से छपी थी। पटना की एक समाजकर्मी प्रो० तारिणी राय इस मामले को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग में ले गई हैं और उस पर कार्यवाही चल रही है।

उधर थाने में और हिन्दी स्कूल में हुई पिटाई के कारण अमिन्दर साह के जोड़ों में रह-रह कर दर्द उठता है। वे कहते हैं, ''...हड्डी तो नहीं टूटी थी मगर अभी भी जब पुरवइया बहती है तो सारा बदन दर्द करता है। हम लोगों ने थाने के मुंशी पर नाजायज तरीके से पकड़ने और शारीरिक यातना देने के लिए मुकद्दमा दायर किया जिसकी संख्या 61/2001 है। इस केस पर अभी तक कोई सुनवाई नहीं हुई। सरकार ने दस हजार रुपया इलाज करने/मुआवजे के तौर पर मुझे दिया था। यह पैसा घटना के कोई पन्द्रह दिन बाद मिला होगा। फिर दो साल बाद इसी पैसे की रिकवरी का नोटिस सरकार की तरफ से आया कि पैसा वापस कर दो मगर उसका कोई कारण नहीं बताया गया था। हम लोगों ने इसका न तो कोई जवाब दिया न पैसा लौटाया। पिछली साल अगस्त (2009) में फिर वही नोटिस हमको मिला। इस तरह के मिले नोटिसों के खिलाफ गणेश प्रसाद यादव कलक्टर के ऑफिस पर धरने पर बैठे तब जाकर मामला कहीं टल गया। गणेश बाबू नहीं रहते तो हमलोग बरबाद हो गए होते। नवल किशोर राय एम०पी० भी हम लोगों के पक्ष में खड़े थे।''

6 अगस्त की गोली चालन की घटना के विरोध में विधायक गणेश प्रसाद यादव थाना परिसर में ही धरने पर बैठ गए थे। उन्होंने इस पूरी घटना की तुलना जलियाँवाला बाग हत्या काण्ड से की और पुलिस कर्मियों को जनरल ओ' डायर की संज्ञा दी जिन्होंने निहत्थे और निरीह लोगों पर गोली चलायी थी। उन्होंने सीतामढ़ी के आरक्षी अधीक्षक के निलम्बन की मांग की और जिन पुलिस वालों ने राहत मांगने वालों पर गोली चलायी उनके विरुद्ध हत्या का मुकद्दमा चलाने की बात कही। सारे मृतकों के आश्रितों को सरकारी नौकरी और 10-10 लाख रुपये का मुआवजा देने की भी उन्होंने मांग रखी। 8 अगस्त 2001 को भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी (माले) ने मुजफ्फरपुर बन्द का आह्वान किया जिसका व्यापक असर देखा गया। लगभग सभी राजनैतिक पार्टियों ने अपने स्तर से घटना की जांच करवायी और कमोबेश वही माँगें रखी जिनके लिए गणेश प्रसाद यादव धरने पर बैठे थे। जिन 23 नामजद लोगों पर पुलिस ने मुकद्दमें दायर किये थे उन्हें भी उठा लेने की मांग की गयी। 21 अगस्त 2001 को राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन (राजग) ने प्रान्त में बन्द का आयोजन किया।

फिलहाल औराई में इस घटना को लोग इतिहास के तौर पर ही याद करते हैं। यह सब चीजें इस तरह की किसी भी घटना के विरोध में अवश्य ही एक कर्मकाण्ड का स्वरूप ले चुकी हैं। सरकार की तरफ से भी पीड़ित व्यक्तियों और उनके आश्रितों को मुआवजे की घोषणा, नौकरी देने का वायदा, दोषी व्यक्तियों को न बख्शे जाने की घोषणाएं, जांच आयोग बैठाना आदि का काम किफायत के साथ होता है और इन सब के बाद सारी बातें कुछ समय के बाद भुला दी जाती हैं जब तक ऐसा ही कोई कांड दुबारा कहीं और न घटित हो जाए।

इस पूरी घटना को समेटते हुए गणेश प्रसाद यादव कहते हैं, ''...औराई तो बाजार है यहाँ हर तरफ से लोग सौदा-सुल्फ लेने आते हैं। भीड़ पर गोली चली तो बहुत से लोग घायल हो गए। भगदड़ मच गयी और एक तरह का अघोषित कर्फ्यू यहाँ लग गया। मुझे खबर मिली तो मैं पटना से यहाँ आया। स्थानीय स्तर पर किसी पर कोई कार्यवाही तब तक नहीं हुई जब तक हमने इसे राजनैतिक स्वरूप नहीं दे दिया। बाद में सरकार ने इसकी जांच बैठायी और एक ऐसे अधिकारी को जांच के लिए भेजा जिससे सरकार जो चाहती लिखवा लेती। इस बीच कुछ घायलों और मृतकों को थोड़ा-बहुत मुआवजा मिल चुका था। मैंने यह रिपोर्ट देखी नहीं है मगर यह तय है कि इस रिपोर्ट के आने के बाद ही मुआवजे की रिकवरी की बात उठी होगी। अब मुआवजा कौन लौटा पायेगा? सरकार ने कुछ लोगों पर मुकद्दमा किया हुआ है जिसका मुख्य अभियुक्त बेचन महतो नाम के एक विकलांग को बनाया हुआ है। यह मुकद्दमें वापस हो जाने चाहिये थे। ओइना, खोंपा आदि गाँवों में 1970 में जो गोली काण्ड हुआ था उसके अभियुक्तों पर दायर किये गए मुकद्दमें कर्पूरी ठाकुर सरकार ने 1977 में उठा लिये थे। मगर सरकार चाहे किसी की भी क्यों न हो, उसकी भाषा एक ही होती है और वह है लाठी, गोली तथा जेल की भाषा। चौथा विकल्प तो किसी भी सरकार के पास नहीं होता। हमारे यहाँ का रिवाज है कि बाजार लगने के पहले वहाँ जेबकतरे पहुँच जाते हैं। समाज और व्यवस्था अगर इन जेबकतरों की मदद नहीं करती है तो अनदेखी जरूर करती है। जब तक इन घेंटकट्टों पर नियंत्रण नहीं होगा, इस तरह की घटनाएं होती रहेंगी।''[16]

संदर्भ :

1. मल्लिक, ललितेश्वर; कोसी-भारत सेवक समाज 1953, पृष्ठ-208
2. Bagley, M. R.; Indian Engineering, Calcutta, July 12, 1924, Vol. LXXVI, p-25, January-June 1924
3. सिंह, राम विनोद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 11 सितम्बर 1956, पृष्ठ-23
4. सिंह, गदाधर; उपर्युक्त, 16 फरवरी 1955, पृष्ठ-41
5. बेनीपुरी, रामबृक्ष; उपर्युक्त, 18 नवम्बर 1957, पृष्ठ-10
6. 'वीरेन्द्र', राय वृन्दा प्रसाद, बिहार विधान परिषद् वादवृत्त, 15 सितम्बर 1966, पृष्ठ-12
7. सिंह, राधाकृष्ण प्रसाद; उपर्युक्त, 14 सितम्बर 1966, पृष्ठ-48
8. Roy, Dunu; India Disaster Report, 2000 Floods : A Small Matter of History, p-150
9. आपदा राहत निधि (सी०आर०एफ०) तथा राष्ट्रीय आपदा आकस्मिक निधि (एन०सी०सी०एफ०) से दी जाने वाली सहायता की मदों और मानदण्डों की सूची, वर्ष 2005 से वर्ष 2010 तक की अवधि के लिए। राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार
10. रघुपति से व्यक्तिगत संपर्क
11. गणेश प्रसाद यादव से व्यक्तिगत संपर्क
12. नवल किशोर राय से व्यक्तिगत संपर्क
13. अमिन्दर साह से व्यक्तिगत संपर्क
14. बेचन महतो से व्यक्तिगत संपर्क
15. पुलिस द्वारा औराई कांड सम्बन्धी प्राथमिक सूचना रिपोर्ट
16. गणेश प्रसाद यादव, पूर्व मंत्री, बिहार सरकार से व्यक्तिगत संपर्क

6

बागमती नदी और काले पानी की कथा

6.1 पृष्ठभूमि

काला पानी का नाम सुनते ही ज़ेहन में आज़ादी की लड़ाई के बांकुरों की याद आना स्वाभाविक होता है। अंडमान और नीकोबार द्वीप समूह में बनी काल कोठरियों की तस्वीरें आंख के सामने उभरने लगती हैं जहाँ देश की आज़ादी के लिए लड़ने वाले उन दीवानों को अंग्रेजों ने न जाने कितनी यातनाएं दी होंगी। काला पानी की जिन्हें सजा हुई उनमें से लौटने की कल्पना शायद ही किसी ने की हो। कुछ खुशनसीब वहाँ से लौटे जरूर पर उनके दिलों में यह हसरत दबी रह गयी कि देश के लिए जान कुर्बान कर देने का उनका सपना अधूरा रह गया। सुदूर द्वीपों में बनी उन काल-कोठरियों और उससे जुड़ी त्रासदी को जिस किसी ने भी पहली बार काला पानी कहा होगा वह निश्चित ही भविष्य द्रष्टा रहा होगा।

मगर बागमती नदी के किनारे बसे या उजड़े उस जगह की बात हम यहाँ करने जा रहे हैं जहाँ रहने वाले आजाद रहते हुए और खुली हवा में सांस लेते हुए भी काला पानी जैसी त्रासदी झेलने को अभिशप्त हैं भले ही वह उन्हें किसी विदेशी शासक के सामने सीधा खड़ा रहने की सज़ा के तौर पर न मिली हो। यह वह जगह है जहाँ सीतामढ़ी जिले के बेलसंड और रुन्नी सैदपुर प्रखंडों की एक अच्छी खासी आबादी को काला पानी नहीं भेजा गया बल्कि काला पानी को ही उनके पास भेज दिया गया। फर्क सिर्फ इतना ही है कि इस सज़ा के भुगतने वालों का हुकूमत की नजरों में भी कोई कसूर नहीं था।

बागमती की पवित्रता का जो बखान हम अध्याय-1 में देख आये हैं, उस पर एक बड़ी ही कड़वी टिप्पणी नेपाल के एक इंजीनियर और पानी की समस्या से सरोकार रखने वाले समाजकर्मी अजय दीक्षित ने की। दीक्षित नदी संकट पर आयोजित एक गोष्ठी (1988) में भाग ले रहे थे। वे कहते हैं, ''... यहाँ जो अर्थ के साथ एक श्लोक लिखा हुआ है कि हिमालय के उत्तुङ्ग शिखर से बागमती प्रवाहित होती है, इसका जल भागीरथी से सौ गुना अधिक पवित्र है और इसमें स्नान करने वाला व्यक्ति सीधे सूर्य लोक को प्राप्त होता है, यह बागमती हमारे यहाँ काठमाण्डू से होकर प्रवाहित होती है और आज उसकी बदहाली की हालत यह है कि उसमें स्नान करने वाला व्यक्ति सचमुच तुरन्त और सीधे सूर्य लोक को चला जायेगा। बागमती का पानी आज इतना गन्दा है कि वह पूरा-पूरा नाबदान बन गया है। जैसे-जैसे समाज आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है वैसे-वैसे नदियों पर संकट बढ़ता जा रहा है और नदियों पर आये इस संकट को समझने के लिए हमें डेढ़-दो सौ साल पीछे जाना होगा। अंग्रेजों ने जब भारत पर कब्जा जमाया तब उनकी नजर यहाँ के जल स्रोतों पर पड़ी और उन्होंने इससे रेवेन्यू इकट्ठा करने की सोची। तब उन्होंने यहाँ सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण पर काम करना शुरू किया। बाढ़ नियंत्रण के मामले में तो वे पूरी तरह असफल रहे पर सिंचाई के स्रोतों से उन्होंने जरूर अपनी आमदनी बढ़ायी। पारम्परिक तरीकों की जगह उन्होंने अपने तरीके से विज्ञान को विकसित किया। सिंचाई से उन्होंने लाभ उठाया और जल-जमाव पर केवल बातें कीं। इस तरह से फायदा केवल सरकार का और नुकसान केवल जनता का–इस सिद्धान्त की नींव पड़ी।''[1]

6.1.1 तटबन्धों में कैद बागमती और मनुस्मारा का अनियंत्रित होना–बागमती नदी पर जब तटबन्ध बन गया तो उसके बायें किनारे में आकर मिलने वाली उसकी दो सहायक धाराओं में से एक पुरानी धार या मनुस्मारा के मुहाने के बन्द होने की नौबत आ गयी। मनुस्मारा बागमती की पुरानी धार का दूसरा नाम है। कहते हैं कि 1934 के बिहार के भूकम्प के समय पुरानी धार के पानी में कुछ गुणात्मक परिवर्तन हुए और उसका पानी जहरीला हो गया। उसके पानी में नहाने वाला या उसके पानी का किसी भी रूप में उपयोग करने वाला व्यक्ति काल-ग्रस्त हो जाता था। इस वजह से पुरानी धार को नया नाम 'मानुष मारा' दिया गया। यही नाम अब अपभ्रंश होकर मनुस्मारा हो गया है। बागमती की ही तरह मनुस्मारा नदी का उद्गम भी नेपाल में ही है और वहाँ इस नदी पर मिट्टी का एक बांध बना कर उसके प्रवाह को दो भागों में बांट दिया गया है। भारत में उसके प्रवाह का केवल एक ही हिस्सा आता है। नेपाल में जिस स्थान पर यह बांध बना हुआ है उसके नीचे इस नदी का केवल 205 वर्ग किलोमीटर जल-ग्रहण क्षेत्र का पानी ही बागमती-मनुस्मारा संगम तक पहुँच सकता है। बागमती-मनुस्मारा का यह संगम आजकल सीतामढ़ी जिले के बेलसंड प्रखंड में चन्दौली गाँव के पास पड़ता है। बागमती नदी पर तटबन्ध बन जाने के कारण मनुस्मारा का मुहाना बन्द हो जाने वाला था और दोनों नदियों का यह संगम बाधित हो जाने वाला था। जाहिर है, सरकार ऐसा होने नहीं देती क्योंकि बागमती के बायें तटबन्ध द्वारा मनुस्मारा के पानी को बागमती में जाने से रोक देने पर उसका पानी या तो बड़े इलाके में पीछे की ओर फैलता और वहाँ बाढ़ और जल-जमाव की स्थिति पैदा करता या फिर मनुस्मारा बागमती के बायें तटबन्ध के बाहर उसके समान्तर बहने पर मजबूर होती। इंजीनियरों के अनुसार इस परिस्थिति से बचने के दो ही उपाय थे–

1. बागमती और मनुस्मारा के संगम को यथावत रखते हुए मनुस्मारा नदी के भी दोनों किनारों पर तटबन्ध बना दिया जाए ताकि बरसात के मौसम में अगर बागमती के पानी का लेवेल मनुस्मारा से ज्यादा हो जाए तो इस अधिक पानी को मनुस्मारा नदी के तटबन्धों के बीच इस तरह समेटा जा सके कि मनुस्मारा में घुसने के बावजूद बागमती का पानी सुरक्षित इलाके में फैलने न पाये। सरकार के पास जो आंकड़े उपलब्ध थे उनके अनुसार मनुस्मारा नदी के दोनों किनारों पर चन्दौली के उत्तर लगभग 20 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध बनाने पड़ते तब कहीं जाकर बागमती का पानी मनुस्मारा में घुसने के बावजूद आस-पास के इलाके पर नहीं फैलता। सरकार के अनुसार यह एक महँगा सौदा था क्योंकि इसके लिए उसे स्थायी तौर पर 80-100 हेक्टेयर जमीन का अधिग्रहण करना पड़ता और उसके बाद भी बागमती के बायें और मनुस्मारा के दाहिने तटबन्ध के बीच के पानी की निकासी के रास्ते बन्द हो जाते। (चित्र-6.1)। इन दोनों तटबन्धों में से अगर कोई तटबन्ध कभी टूट जाता तो उनके बीच बसे लोगों की जल-समाधि तय थी। इन कारणों से मनुस्मारा पर तटबन्ध बनाये जाने का प्रस्ताव छोड़ देना पड़ा।

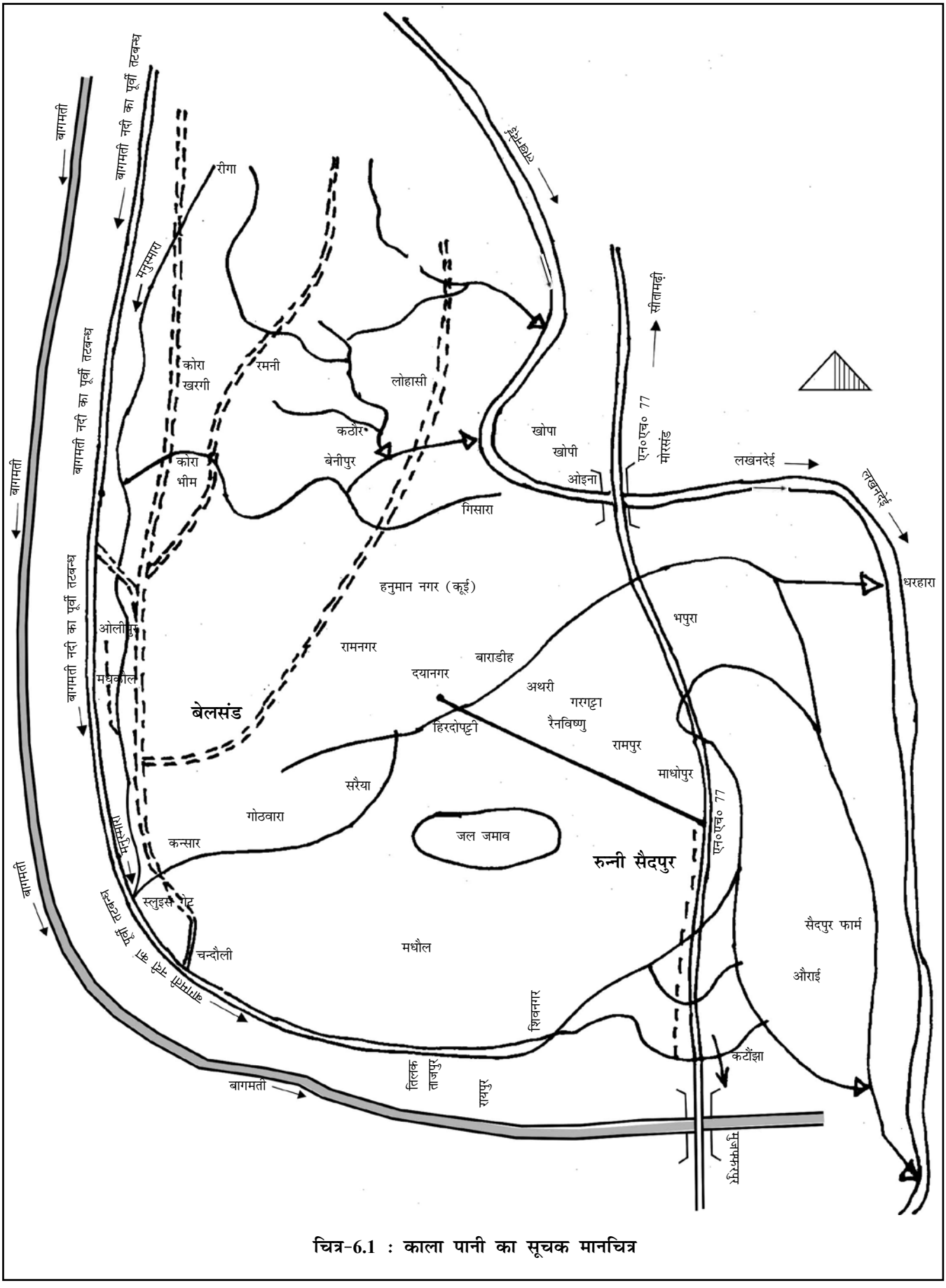

चित्र-6.1 : काला पानी का सूचक मानचित्र

2. बागमती-मनुस्मारा संगम पर बाढ़ और जल-जमाव से निपटने का जो दूसरा उपाय बचता था वह यह था कि यहाँ एक बाढ़ निरोधक स्लुइस का निर्माण कर दिया जाए जिससे मनुस्मारा के पानी को बागमती में तभी निस्सरित किया जाए जब उसमें बाढ़ के पानी का लेवेल मनुस्मारा से कम हो और जब भी बागमती का लेवेल बढ़ जाए तो फाटक बन्द कर दिया जाए ताकि नदी का पानी सुरक्षित क्षेत्रों में न जा सके।

इन दोनों प्रस्तावों में से किसी एक का भी क्रियान्वयन कर लिये जाने के बाद मनुस्मारा के भारतीय क्षेत्र में कोई समस्या तभी आ सकती थी जब नेपाल में नदी पर बना बांध किसी दुर्योग से टूट जाए। सरकार के अनुसार ऐसी दुर्घटना की संभावना बहुत ही कम है।[2]

अब क्योंकि मनुस्मारा नदी पर तटबन्ध नहीं बनाने का प्रस्ताव मंजूर कर लिया गया और संगम पर स्लुइस गेट बनाने का कार्यक्रम बन गया तब ऐसी स्थिति में बागमती में बाढ़ की वजह से अगर स्लुइस गेट बन्द करना पड़ा तो मनुस्मारा का पानी उतने समय के लिए बागमती में नहीं जा सकेगा और तब वह पानी लखनदेई के दाहिने तटबन्ध और बागमती के बायें तटबन्ध के बीच में अटकेगा। **इंजीनियरों का यह मानना था कि पानी के अटकने का यह समय 70 घन्टे से ज्यादा का नहीं होगा और अगर ऐसा होता भी है तो मनुस्मारा का पानी केवल 1600 हेक्टेयर क्षेत्र पर सवा मीटर की गहराई तक फैल सकता है। जैसे ही बागमती या लखनदेई में किसी भी नदी का पानी उतरेगा तो मनुस्मारा के पानी की निकासी शुरू हो जायेगी और इस पानी की निकासी में तीन दिन से ज़्यादा का समय नहीं लगेगा। इन सारे आश्वासनों के बावजूद सरकार का यह भी कहना था कि लगभग 480 हेक्टेयर कृषि भूमि पर पानी के अटक जाने और स्थाई रूप से जल-जमाव ग्रस्त हो जाने की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।** परियोजना सूत्रों के अनुसार इतने इलाके को सिंचित क्षेत्र से निकाल देना पड़ेगा मगर असिंचित खेती के लिए यह जमीन फिर भी उपलब्ध रहेगी।[3] कड़वी सच्चाई यह है कि इस तरह की बातें सूखे वाले इलाकों के लिए तो ठीक हैं मगर बाढ़ वाले क्षेत्र में इस तरह के असिंचित क्षेत्रों में जल-जमाव हो जाता है और जमीन पानी में डूबी रहती है। डूबी हुई ज़मीन पर न तो सिंचाई की जरूरत पड़ती है और न ही उस पर खेती मुमकिन हो पाती है। डूबी हुई ज़मीन पर हल नहीं चलता है और बिना हल चलाये खेती नहीं होती। आज यह सारा इलाका डूबा हुआ है।

यहाँ तक तो हुई तकनीकी बात। फिलहाल चन्दौली गाँव के पास बागमती और मनुस्मारा के संगम स्थल पर इस स्लुइस का निर्माण पिछले 9-10 वर्षों से चालू था। वहाँ निर्माणकर्ता ठेकेदार आते-जाते रहते थे और इतने ही समय से मनुस्मारा का पानी सुरक्षित क्षेत्र में फैलता रहता है जिसके बारे में कभी कहा जाता था कि वह 70 घन्टे से ज्यादा देर तक नहीं टिकेगा और सवा मीटर से ज्यादा गहरा नहीं होगा। यह पानी अब बारहों महीनें रहता है और बरसात के मौसम में तो पूरे इलाके में लम्बे समय के लिए अटके हुए पानी की एक मोटी चादर बिछी रहती है। बरसात के बाद भी यह पूरा इलाका हरा-भरा ही दिखायी पड़ता है मगर उसमें कोई फसल नहीं होती और यह सारी हरियाली जलकुंभी के कारण होती है जिसको थोड़ा सा हटाने पर नीचे पानी ही पानी दिखायी पड़ता है जो निकलने का नाम ही नहीं लेता। हवाई जहाज़ से बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों का दौरा करने वाले नेताओं को यह पूरा इलाका हरा-भरा ही दिखायी देता होगा। बरसात के बाद जलकुंभी के सूखने और सड़ने की वजह से यह इलाका दुर्गंधयुक्त भी हो जाता है। यह पानी लगभग 10 साल पहले तक सिर्फ पानी था और अब यहाँ से इसके काला पानी बनने की दास्तान शुरू होती है।

6.1.2 दरवाजों पर काले पानी की दस्तक—सीतामढ़ी से ढेंग जाने के रास्ते में सीतामढ़ी से कोई 10 किलोमीटर उत्तर में रीगा नामक स्थान पर कलकत्ता के किसी व्यवसायी द्वारा स्थापित रीगा शुगर कम्पनी लिमिटेड नाम की एक चीनी मिल पड़ती है। इस चीनी कारखाने का निर्माण 1933 में हुआ था। इस कारखाने से निकला हुआ गंदा पानी मनुस्मारा नदी में तभी से वैसे ही छोड़ दिया जाया करता था जैसा कि आजकल भी होता है। फर्क सिर्फ इतना है कि पहले यह काम साल में 4-5 बार होता था, अब इस पर कोई नियंत्रण ही नहीं है। उन दिनों जब साल में पहली बार पानी छोड़ा जाता था तो एक ही झटके में नदी की सारी मछलियाँ मर जाती थीं जिन्हें किनारे के लोग छान लिया करते थे। इस तरह जब बागमती नदी पर तटबन्ध नहीं बने थे तब भी कारखाने के इस अपशिष्ट से काफी नुकसान पहुँचता था। चीनी मिल के प्रति स्थानीय जनता का आक्रोश अपने चरम पर जिस तरह आज है उसी तरह आज से पचपन साल पहले भी था। तब स्थानीय विधायक दामोदर झा ने बिहार विधान सभा में इस विषय पर अपनी बात रखते हुए कहा था, ''...रीगा चीनी मिल का गन्दा पानी बागमती में जाने दिया जाता है जिसका नतीजा यह है कि 5 मील तक चारों ओर का पानी इतना खराब हो गया है कि आदमी को कौन कहे मवेशी भी वहाँ के पानी को नहीं पी सकते हैं और वहाँ मच्छर का इतना प्रकोप है कि सैकड़ों आदमियों को हर साल मलेरिया पकड़ लेता है और वे बीमार पड़ जाते हैं। यदि सरकार इस गंदे पानी को बागमती में न गिरने दे तो लोग इन चीजों से छुटकारा पा सकते हैं।''[4] 1955-56 के बजट प्रस्ताव पर चल रही बहस में उन्होंने एक बार फिर दुहराया, ''...पर साल इसी के चलते 1,000 मन मछली एक दिन में मर गई। इस नदी के किनारे पर के जो गांव हैं उनमें बीमारी फैलती है। एक इंच मोटी गंदगी इस नदी के पानी पर जम जाती है और इसके चलते इस नदी के पानी में कीड़े पड़ जाते हैं... पिछले साल 15 गांवों के लोगों ने एस०डी०ओ० के यहाँ दरख्वास्त दी थी कि रीगा चीनी मिल के गंदे पानी छोड़े जोने के कारण नदी के पानी में कीड़े पड़ जाते हैं। इस वजह से ही इस मिल को हुक्म दिया जाए कि वह गंदे पानी को नदी में नहीं छोड़े। एस०डी०ओ० ने जांच कर के हुक्म दिया कि इस साल तो नहीं लेकिन अगले साल गंदा पानी नहीं छोड़े। लेकिन एस०डी०ओ० के हुक्म के बावजूद इस मिल ने इस साल भी नदी में गंदे पानी को छोड़ दिया है और उसको कोई देखने वाला नहीं है। ...सरकार चुप्पी साधे बैठी हुई है।''[75]

बागमती पर तटबन्ध बन जाने के बाद मनुस्मारा ने अपना रंग दिखाना शुरू किया और उसका पानी नीचे बेलसंड और रुन्नी सैदपुर के इलाकों में फैलना शुरू हुआ। चीनी कारखाने के अपशिष्ट का मनुस्मारा में मिल जाने के कारण इस पानी का रंग पहले काला हुआ और फिर उसमें धीरे-धीरे दुर्गन्ध भी समाने लगी। जहाँ-जहाँ यह पानी फैला वह जगह स्थानीय लोगों के बीच काला पानी नाम से प्रसिद्ध हुई। कारखाने के अपशिष्ट की पहली चोट पीने के पानी के स्रोतों पर पड़ी। फिर खेती रसातल को गयी, लोगों के स्वास्थ्य पर इस गन्दे पानी का बुरा असर पड़ा, पानी का स्तर बढ़ने और उसकी निकासी न होने से यातायात बाधित हुआ

रीगा चीनी मिल के अपस्ट्रीम में मनुस्मारा नदी का चित्र

और फिर स्थानीय रोजगार समाप्त हो गया। इतना सब हो जाने के बाद मज़ाक में कहे जाने वाले काले पानी पर व्यावहारिक रूप से काला पानी होने की मुहर लग गयी। इस बीच न जाने कितनी सरकारें आईं और गईं जिनमें किसी न किसी समय वाम पंथियों से लेकर दक्षिण पंथियों तक की सभी रंगों की पार्टियाँ शामिल हैं मगर इस मसले पर उनकी चुप्पी नहीं टूटी।

चीनी मिल के इस अनाचार पर सरकार का ध्यान खींचने के लिए सीतामढ़ी के एक सामाजिक कार्यकर्ता और अध्यापक डॉ० आनन्द किशोर ने 2000 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (रा०मा०आ०) के पास समस्या के निदान के लिए गुहार लगायी। रा०मा०आ० ने वस्तुस्थिति जानने के लिए सीतामढ़ी के जिला पदाधिकारी को सम्पर्क किया। जिला पदाधिकारी ने अपने पत्र सं० 3468 सी/दिनांक 31 अक्टूबर 2002 के माध्यम से रा०मा०आ० को जिन तथ्यों से अवगत करवाया वह चौंकाने वाले थे। इस पत्र का कुछ अंश हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं–

''(1) ...रीगा डिस्टीलियरी, रीगा (सीतामढ़ी) के द्वारा अल्कोहल (स्प्रीट) का निर्माण किया जाता है। इसे बनाने के लिए रीगा चीनी मिल से उत्सर्जित अपशिष्ट मोलासेज (छोआ) तथा पानी का उपयोग होता है। डिस्टीलियरी में अल्कोहल (स्प्रीट) बनाने की प्रक्रिया पूरी होने के बाद अवशिष्ट के रूप से अत्यधिक बचा हुआ रासायनिक पानी उत्सर्जित होता है, जिसमें विभिन्न प्रकार के उपयोगी एवं घातक रासायनिक तत्व घुले रहते हैं, जिसकी अल्प मात्रा पौधों के लिए उपयोगी भी है, परन्तु जीवों के लिए घातक है।

(2) इस तरह के प्रदूषित एवं जीवों के लिए घातक जल को कारखाने के बगल में अवस्थित बागमती नदी की पुरानी धार में डाला जाता है, जिसके कारण नदी का जल प्रदूषित हो गया है। पानी का रंग काला हो गया है एवं मनुष्य तथा पशु दोनों के लिए नदी का जल उपयोग करने के लायक नहीं है। ग्रामीणों ने बताया कि प्रत्येक सप्ताह प्रदूषित जल नदी में छोड़े जाने से अगल-बगल के गाँवों का वातावरण दुर्गन्धमय बन रहा है। भूलवश भी यदि मानव या पशु के द्वारा नदी का पानी उपयोग में लाया जाता है तो विभिन्न प्रकार के चर्मरोग एवं पेट की बीमारी हो जाती है। नदी की मछली को खाने से डायरिया हो जाता है। डिस्टीलियरी से जब पानी छोड़ा जाता है तब नदी में काफी मछलियाँ मरी हुई मिलती हैं। पूरे इलाके में मच्छर एवं मक्खियों का प्रकोप काफी बढ़ गया है। अगल-बगल के वातावरण से ऐसा लगता है कि कभी भी किसी भयंकर बीमारी/महामारी का प्रकोप हो सकता है। विभिन्न ग्रामों के कृषकों ने बताया कि उत्सर्जित बहाव से युक्त जल का जमाव खेतों में होने से पौधा गलने लगता है एवं कुछ दिनों तक जल-जमाव रह जाने पर फसल (धान की फसल भी) बर्बाद हो जाती है। लोगों ने यह भी बताया कि मिल में जो वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट है वह पर्याप्त क्षमता का नहीं है और जो है, उसे भी चलाया नहीं जाता है।

(3) प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी, रीगा द्वारा बताया गया कि इस पानी के प्रभाव से खेतों में मिट्टी की प्राकृतिक संरचना का लगातार ह्रास हो रहा है। मिट्टी की संरचना, मिट्टी की जलधारण क्षमता एवं मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में सहायक जीवियों की संख्या भी प्रभावित हो रही है।

(4) इस संबंध में रीगा मिल के श्री ओ० पी० सिंह, वाइस प्रेसीडेन्ट, केमिकल से पूछताछ करने पर उन्होंने तो इस बात से ही इंकार किया कि रीगा डिस्टीलियरी द्वारा नदी में कोई वहिश्राव छोड़ा जाता है। साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि उनके यहाँ दो वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट लगे हुए हैं, जिसमें उत्सर्जित वहिश्राव का परिशोधन कर मिल परिसर में बनाये गए तालाब (लेक) में गिराया जाता है। किन्तु इस क्षेत्र के आम नागरिकों द्वारा जो बताया गया एवं पाया गया, उससे मिल प्रबन्धन का कथन सत्य प्रतीत नहीं होता है।

(5) रुन्नी सैदपुर प्रखण्ड क्षेत्र के भ्रमण के दौरान भी कई ग्रामों में ग्रामीणों द्वारा रीगा डिस्टीलियरी द्वारा प्रदूषित जल नदी में छोड़े जाने से नदी का पानी काला होने, इसके पीने से मनुष्य एवं पशुओं में बीमारी होने, खेतों में जल-जमाव होने से फसल (धान की फसल भी) गल कर बर्बाद होने, मछलियों के मरने की शिकायत की गई।

(6) वर्ष 1999 में जब मैं अनुमण्डल पदाधिकारी, बेलसण्ड के रूप में पदस्थापित था, तब बेलसण्ड एवं परसौनी प्रखण्ड के लोगों से भी इस तरह की शिकायत लगातार मिलती रहती थी एवं चूंकि वहाँ बरसात में जल-जमाव हो जाता है, इसलिए यहाँ के लोगों को इसकी पीड़ा अधिक झेलनी पड़ती है। मैंने भी पाया कि नदी का पानी काला हो गया है।''

कलक्टर ने रा०मा०आ० को यह भी बताया कि उसने अपने कार्यालय के पत्र संख्या 2933/सी० दिनांक 17/9/2002 द्वारा सदस्य सचिव, बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद, पटना को इस समस्या के निदान हेतु निम्नांकित निदेश रीगा मिल प्रबंधन को देने हेतु सुझाव सहित आग्रह किया है–

(1) ''वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट को आवश्यकता के अनुसार चलायें एवं यदि वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट पर्याप्त क्षमता का नहीं हो तो उचित क्षमता का प्लान्ट लगावें।

(2) रीगा डिस्टीलियरी से निकलने वाले रसायनयुक्त पानी से होने वाले प्रभाव की जांच तकनीकी पदाधिकारियों का दल गठित कर कराई जाए और तद्नुसार प्रदूषण बोर्ड द्वारा निर्गत अनुज्ञप्ति की पुनः समीक्षा कर रीगा मिल में लगे वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट की क्षमता बढ़ाने का निदेश दिया जाए।''

कलक्टर ने इस समस्या के निदान के लिए महाप्रबंधक, रीगा शुगर कम्पनी लि०, रीगा को पत्र संख्या 2932/सी० दिनांक 17/9/2002 द्वारा निम्नांकित निदेश भी दिया–

(1) ''वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट को आवश्यकतानुसार चलायें एवं यदि वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट पर्याप्त क्षमता का नहीं हो तो उचित क्षमता का प्लान्ट सुनिश्चित करें।

(2) रीगा डिस्टीलियरी द्वारा अल्कोहल (स्प्रीट) के निर्माण के पश्चात् निकलने वाले रसायनयुक्त पानी की सफाई हेतु वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट की अधिक से अधिक क्षमता बढ़ाई जाए तथा इस प्रकार की व्यवस्था की जाए कि इस पानी से मिट्टी की उर्वरा शक्ति कायम रहने के साथ ही साथ किसी प्रकार के जान-माल का नुकसान न होने पाये।''

जिला पदाधिकारी ने रा०मा०आ० को यह आश्वासन भी दिया कि उपर्युक्त सभी बिन्दुओं पर बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद, पटना से आवश्यक निदेश प्राप्त होने पर वह फिर की गयी कार्यवाही के बारे में रा०मा०आ० को अवगत करवायेंगे।

जिलाधिकारी ने इस पत्र की प्रतिलिपि बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद के पास उचित कार्यवाही तथा अपेक्षित सुधारों के लिए महाप्रबन्धक, रीगा शुगर कम्पनी लिमिटेड, रीगा को भी भेजी। रा०मा०आ० ने इस पूरे मसले पर 27 अक्टूबर 2003 का दिन सुनवाई के लिए तय किया मगर तब बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद को जिलाधिकारी या चीनी मिल के अधिकारियों से न तो कोई संदेश मिला और न ही चीनी मिल ने इस दिशा में कोई सार्थक कदम उठाये। 25 फरवरी 2004 को सीतामढ़ी के

चीनी मिल के नीचे बेल्सण्ड और रुन्नी सैदपुर प्रखण्ड में मनुस्मारा का परिदृश्य

जिलाधिकारी ने एक बार फिर बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद को इसी आशय का पत्र लिखा। इस बार भी कोई कार्यवाही नहीं हुई।

रीगा शुगर मिल लिमिटेड द्वारा फैलाये गए प्रदूषण से स्थानीय जनता पहले से ही परेशान थी मगर इस परेशानी को पहले से भी ज्यादा गंभीर बना दिया 2000 में मधकौल के पास बागमती के बायें तटबन्ध में पड़ी एक दरार ने। इस गैप से निकले पानी और उसके साथ आयी गाद ने मनुस्मारा के मुहाने को चन्दौली, कन्सार और बेलसंड के बीच पूरी तरह बन्द कर दिया जिसकी वजह से नदी की धारा मुड़ गयी और मनुस्मारा बेलसंड के आस-पास के आवासीय और कृषि क्षेत्रों से होते हुए पूरब की ओर राष्ट्रीय उच्च पथ सं० 77 की ओर चली गयी। अब मनुस्मारा नदी का पानी डुमरिया घाट, हनुमान नगर, चन्दौली, सरैया, गोठवारा, दयानगर, हिरदोपट्टी, बाराडीह, रामनगर, धापर, गणेशपुर, भादा, कुईं, अथरी, रैन विष्णु, गरगट्टा, रामपुर, माधोपुर और रुन्नीसैदपुर होते हुए राष्ट्रीय उच्च पथ 77 को बसतपुर पुल से होते हुए सैदपुर फार्म के पास धरहरवा-पर्री मार्ग के पुल को पार करता हुआ लखनदेई में जा मिला मगर इस रास्ते से उसके पानी की निकासी जैसे-तैसे ही हो पाती थी। 2003 तक मनुस्मारा के प्रवाह के काफी हिस्से को लखनदेई तक पहुँचाने में क्रमशः मरने धार और सोनपुरवा नाला अहम भूमिका निभाते थे। 2004 में चन्दौली के पास बागमती का बायां तटबन्ध टूटा तो बाढ़ के पानी और गाद ने मरने धार को भी पाट दिया। इस तरह से मरने धार और सोनपुरवा नाले का भी संबंध समाप्त हो गया। चन्दौली में बागमती का टूटा तटबन्ध बांध दिये जाने के बाद अब मनुस्मारा का पानी चन्दौली, रामनगर, पचनौर, अथरी, रैन विष्णु, रुन्नीसैदपुर उत्तरी तथा मध्य और बेलसंड प्रखंड के अधिसूचित क्षेत्र के बड़े भाग पर फैला हुआ है जहाँ खेती पूरी तरह चौपट है और अधिकांश रिहाइशी इलाका चारों ओर से काले रंग के प्रदूषित पानी से घिरा हुआ है जहाँ निकासी का रास्ता बहुत संकरा और छिछला है। 2004 की बाढ़ में यह पानी धरहरवा के पास के सड़क पुल को बहा ले गया और सरकार ने इस पुल को दुबारा बनवाने की जगह इस गैप को ही भर दिया। अब मनुस्मारा का आगे बढ़ने का रहा-सहा रास्ता भी बन्द हो गया मगर नदी है तो वह कहीं न कहीं तो जायेगी। अब उसने दक्षिण की ओर मुड़ कर पर्री, गंगुली, घघरी, घनश्यामपुर, कल्याणपुर, मधुबन बेसी, हरपुर बेसी, रमनगरा, बिशुनपुर, राजखंड, माधोपुर, खेतलपुर आदि गाँवों की ओर रुख किया और इन गाँवों को तबाह करते हुए औराई प्रखंड में फिर लखनदेई में जा मिली।

जल-जमाव अब पहले से भी ज्यादा गंभीर स्थिति में पहुँच गया। प्रदूषण तो अपनी जगह बना ही हुआ था। समस्या का कोई निदान न होते देख बाढ़ पीड़ितों के एक संगठन बागमती बाढ़ पीड़ित संघर्ष समिति (रुन्नीसैदपुर-सीतामढ़ी) ने प्रशासनिक आयुक्त को ग्यारह सूत्री एक मांग पत्र दिया जिसमें अन्य बहुत सी मांगों के साथ यह भी कहा गया, ''...रीगा शराब फैक्ट्री (डिस्टिलियरी) से प्रदूषित जल के मनुस्मारा नदी में प्रवाह को अविलम्ब रोका जाए और शुद्धिकरण संयत्र से प्रदूषित जल को साफ कराने के बाद ही उसे मनुस्मारा नदी में प्रवाहित करने की इजाजत दी जाए अन्यथा बागमती नदी के अधूरे तटबन्धों को ही ध्वस्त करा दिया जाय।''[6]

इसके बाद का घटनाक्रम बताते हैं बाराडीह गाँव, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जि० सीतामढ़ी के अध्यापक राम तपन सिंह (देखें बॉक्स-रीगा की चीनी मिल बड़ी है या आपकी सरकार बड़ी है?)।

रीगा की चीनी मिल बड़ी है या आपकी सरकार बड़ी है?

राम तपन सिंह

मनुस्मारा हमारे बगल के चन्दौली गाँव के पास बागमती की मुख्य धारा से मिल जाती थी। लेकिन 2004 की बाढ़ के बाद वह धारा भर गयी और उसका पानी नदी में जाने के बजाय तटबन्ध के बाहर फैलने लगा और जो रही सही कमी थी वह सरकार ने पूरी कर दी कि उसे छरकी (तटबन्ध) से बांध दिया। अब नदी तो नदी है, वह भर जाए या बंध जाए, उसका पानी तो कहीं न कहीं जायेगा। नदी ने छरकी को तोड़ कर बेलसंड के पास खुद को पूरब की तरफ मोड़ दिया। पूरब की ओर बहती-बहती 2004 में यह नदी छप्पन बीघा, हनुमान नगर, रामनगर, कोड़ियाही, धापर, बाराडीह, अथरी, रैन, भादा चौर और रुन्नी होकर एन०एच० 77 को पार कर के बसतपुर से नीचे होकर पूरब की ओर बहने लगी। इन गाँवों से बहुत ही धीमी गति से निकलता हुआ यह पानी कहीं चार किलोमीटर, कहीं तीन किलोमीटर, कहीं दो किलोमीटर चौड़ी धारा बना कर निकल रहा है।

पहले शुरू में 1976-77 तक रीगा चीनी मिल अपना अपशिष्ट पुरानी धार में छोड़ती थी। यह काम साल में सिर्फ चार से छः बार होता था। हम लोग देखते थे कि जब भी मिल से गन्दा पानी छोड़ा जाता था तो नदी की मछलियाँ मर जाया करती थीं। तब नदी के दोनों तरफ के गाँवों के लोग एक साथ मछली छानने के लिए निकल पड़ते थे। बाद में चीनी मिल में शराब बनाने और खाद बनाने का कारखाना भी जोड़ दिया गया। तब मिल से निकलने वाले पानी में गन्दगी की मात्रा बढ़ गयी और पानी का काला रूप-रंग और उसकी दुर्गन्ध स्थाई तौर पर पूरे इलाके में समा गयी। हम सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने रीगा मिल पर दबाव बनाना शुरू किया मगर उनकी बेरुखी से हमने मजबूर हो कर सरकार के दरवाजे खटखटाये।

अभी इधर 2007 की घटना है। बिहार सरकार के विज्ञान और टेकनोलॉजी मंत्री हमारे स्थानीय विधायक हैं। विधान सभा

के चुनाव के समय हमने अपनी दुर्दशा उन्हें दिखायी और इससे निजात दिलवाने की कोशिश करने के लिए कहा। विधान सभा की कोई पर्यावरण समिति होती है जिसके सदस्यों को लेकर वह एक बार यहाँ रीगा मिल में आये। संयोग से उसी दिन जिला अधिवक्ता संघ के अध्यक्ष प्रो० अरुण कुमार सिंह की अध्यक्षता में रीगा चीनी मिल के परिसर में जनता दल (यू) की एक मीटिंग चल रही थी। मैं भी उसमें मौजूद था। मंत्री जी भी उस मीटिंग में आ गए। उनसे हम लोगों ने एक बार फिर इस काला पानी से रिहाई दिलाने की दरख्वास्त की। उन्होंने बताया कि हम तो पर्यावरण समिति के सदस्यों को साथ लेकर आये हैं। प्रदूषण नियंत्रण के लिए अब जरूर कुछ न कुछ किया जायेगा और समिति के सदस्य इस गन्दे पानी के नमूने की जांच करवायेंगे। वे लोग यहाँ से कई जगहों से पानी का नमूना अपने साथ ले गए। बाद में मंत्री जी से जब हमारी मुलाकात हुई तब उनसे पूछा कि आप जो पानी का नमूना यहाँ से ले गए थे उसका क्या हुआ? मंत्री जी ने बताया कि वे नमूना हैदराबाद की पानी जांच करने वाली एक प्रयोगशाला में भेजा गया था मगर वहाँ से जो रिपोर्ट आयी उसमें कहा गया था कि पानी प्रदूषित नहीं है। हमारा प्रश्न था कि अब क्या उपाय होगा तो उन्होंने कहा कि कुछ न कुछ करेंगे। इधर 2009 वाले लोकसभा चुनाव के पहले मुख्यमंत्री नीतीश कुमार जी यहाँ भ्रमण में अथरी आये थे और उनके साथ हमारे विज्ञान और टेकनोलॉजी मंत्री भी थे। हमने उनसे एक बार फिर पूछा कि काला पानी का क्या हुआ? उन्होंने हैदराबाद की उसी रिपोर्ट का वास्ता देते हुए कहा कि रिपोर्ट कहती है कि पानी प्रदूषित नहीं है। हमारा प्रतिप्रश्न था कि फिर आपने क्या किया? उनका कहना था कि उन्होंने इस काले पानी में एक बार अपनी उंगली डुबायी थी जो काली हो गयी थी। यह काला दाग पानी से नहीं छूटा और उसे साबुन लगा कर साफ करना पड़ा था। हमने फिर उनसे पूछा कि इस पूरे मसले पर रीगा की चीनी मिल बड़ी है या आपकी सरकार बड़ी है? इस पर वे झेंप गए। इस बात को शासक दल के प्रवक्ता शिवानन्द तिवारी ने भी सुना और मुख्यमंत्री को हमने इन सब बातों का एक ब्योरेवार स्मार पत्र भी दिया था।

यहाँ के एक दूसरे मंत्री बैद्यनाथ प्रसाद थे। हमने उनसे बात की तो उन्होंने हमें बताया कि अब मिल में अपशिष्ट को शुद्ध करने का संयत्र बैठा दिया गया है और अब कोई समस्या नहीं है। यह सच है कि मिल में संयत्र बैठाया गया है मगर वह बिरले ही कभी साफ पानी छोड़ता है। महीने में 29 दिन तो गन्दा पानी ही आता है। कुछ दिन पहले हमारे बीस सूत्री कार्यक्रम के मंत्री यहाँ अथरी आये थे। हम लोगों ने उनके सामने भी अपनी समस्या रखी थी। मौजूदा कलक्टर ने समस्या को समझने के लिहाज से हम लोगों को सीतामढ़ी बुलाया। हमने एक बार फिर अपनी समस्या बतायी तो पहले तो उनका कहना था कि नदी में गन्दा पानी मिल के ऊपर नेपाल से आता होगा मगर उन्होंने बाद में स्वीकार किया कि समस्या मिल से निकले गन्दे पानी की वजह से ही है। इन सब के बावजूद चलती मिल मालिकों की ही है। पता नहीं कैसे वे सबको अपने वश में कर लेते हैं?

कुछ दिन पहले हमारा एक आदमी रीगा गया हुआ था जिसने बताया कि अब मिल का अपशिष्ट जल रात 11 बजे से सुबह 4 बजे के बीच में छोड़ा जाता है ताकि आम आदमी की नजरें उस पर न पड़ें। सरकार का आंकड़ा है कि लगभग 22,000 एकड़ का फसल क्षेत्र काले पानी की चादर के नीचे दबा पड़ा है।

अभी कुछ दिन पहले बागमती परियोजना के सुपरिन्टेंडिंग इंजीनियर से बात हो रही थी। उनका कहना था कि इस पूरे काले पानी को गिसारा होकर लखनदेई नदी में बहाने की योजना प्रस्तावित है और इस पर जल्दी ही काम शुरू होगा मगर कुछ स्थानीय प्रतिरोध के कारण योजना रुकी पड़ी है। वैकल्पिक योजना है कि डुमरिया घाट, बेलसंड से नाला चीर कर के दयानगर, रामनगर, रैन होते हुए बसतपुर में एन० एच० 77 को पार कर के पानी को धरहरवा में मिला दिया जाए। इसकी प्रशासनिक स्वीकृति नहीं आयी है क्योंकि प्रशासन चाहता है कि जिन किसानों की जमीन से होकर यह नाला गुजरेगा वे अगर अपनी सहमति दें तो यह काम हो सकेगा। हमने सभी सम्बद्ध गाँवों के मुखिया से सहमति पत्र लेकर बागमती परियोजना को दे दिया हुआ है, देखें क्या होता है।

यह सब प्रयास भी मूल समस्या पर सीधे चोट नहीं करता। मनुस्मारा का टूटा हुआ पूर्वी तटबन्ध अगर बांध दिया जाए और चन्दौली के पास वाले स्लुइस को पूरा करके चालू कर दिया जाए तो नदी का पानी सीधे बागमती में चला जायेगा। स्लुइस गेट के निर्माण की यह योजना 14 करोड़ रुपये की है और इस पर कई वर्षों से काम चल रहा है। ठेकेदारी का कुछ चक्कर है जिससे योजना अभी तक अधूरी पड़ी हुई है। सरकार भी तो लूट-खसोट की ही योजनाओं में रुचि लेती है। हम लोग इससे पहले जल-संसाधन विभाग के तत्कालीन सचिव वी० जयशंकर से मिले थे। उन्होंने एक महीने के अन्दर विस्तृत परियोजना रिपोर्ट बनवा दी थी और हम लोगों का विश्वास था कि अब यह काम जरूर हो जायेगा, पर नहीं हुआ। उसके बाद 29 नवम्बर 2007 को उनके उत्तराधिकारी सचिव अशोक कुमार से भी हम लोग मिले, फिर उम्मीदें बढ़ीं और फिर वही ढाक के तीन पात। अभी जो लोग बागमती परियोजना में हैं उनसे भी बड़ी आशाएं हैं। हमारी जो हालत है वे आप देख रहे हैं, पानी अभी तक बरसा नहीं है मगर हम पानी से घिरे हैं और वह भी काला और दुर्गन्धयुक्त। गरीब परिवार की औरतें जानवरों की तरह बच्चों को खूंटे से बांध कर बाजार करने जाती हैं। 2004 की बाढ़ में बच्चे पेड़ पर बांध कर रखे गए थे। हमारी बेबसी को कौन समझता है? राजनीतिज्ञों का काम इसी से चल जाता है कि लोग समझें कि वह उनके लिए कुछ प्रयास कर रहे हैं।''

कृषि के अलावा जीविका का कोई स्थानीय साधन नहीं है लेकिन खेती की जमीन गन्दे बदबूदार पानी में फंसी है। जाहिर है यहाँ के छोटे और सीमान्त किसान तथा मजदूर रोजी रोटी की तलाश में बाहर का रुख करते हैं। इतने लोगों के हाथ से निवाला छीनने का काम जल-संसाधन विभाग और रीगा शुगर कम्पनी लिमिटेड ने मिल कर किया है। जैसे-जैसे पानी की निकासी का रास्ता बन्द होता गया वैसे-वैसे पलायन का रास्ता खुलता गया क्योंकि अब वही जिस्म और जान को एक साथ बनाये रखने का तरीका बचा है।

इतना सब हो जाने के बाद 2000 में सरकार की समझ में आया कि मनुस्मारा के पानी को कहीं भी चले जाने के लिए रास्ता चाहिये वरना उससे होने वाली तबाही बदस्तूर जारी रहेगी। वर्ष 2000 में राज्य के जल-संसाधन विभाग ने जल-जमाव हटाने के लिए एक विस्तृत योजना बनानी शुरू की जिसके बारे में हम आगे बात करेंगे। यह योजना अभी तक क्रियान्वित नहीं हो पायी है (जून 2010)। यही वजह है कि सरकार ने मनुस्मारा की जल-निकासी योजना का प्रारूप तय करने का निश्चय किया मगर रीगा की चीनी मिल को फिर भी हाथ नहीं लगाया। सरकार की समझ में यह बात अभी तक नहीं आयी है कि यह पानी सिर्फ पानी नहीं है, यह जहरीला पानी है और इसे जहरीला बनाने में केवल रीगा शुगर कम्पनी लिमिटेड का हाथ है। अब योजना अगर पूरी हो गयी तो पानी तो शायद निकल जायेगा मगर उसके साथ-साथ रीगा शुगर कम्पनी द्वारा छोड़ा गया मीठा जहर भी उसके पीछे-पीछे जायेगा।

बहरहाल, काले पानी से जल-निकासी की जो योजना बनी है (2006) उसमें कई जल-निकासी नालों की मदद से इलाके में जमा पानी को लखनदेई में गिराने का प्रस्ताव है। इस योजना को बनाने के क्रम में जल-संसाधन विभाग को पता लगा कि जिस 470 हेक्टेयर कृषि भूमि के स्थाई रूप से जल-जमाव से ग्रस्त हो जाने की उसे आशंका थी वह ज़मीन उससे कहीं ज्यादा थी और अब अनुमान किया गया कि खरीफ के मौसम में 6840 हेक्टेयर, रबी के मौसम में 1500 हेक्टेयर और गरमा के मौसम में 570 हेक्टेयर कृषि भूमि (कुल 8910 हेक्टेयर) गन्दे पानी में फंस गयी है। इस जमीन पर उगने वाली फसल की 2001 में कीमत 12.17 करोड़ रुपये आंकी गयी थी।[7] अब अगर फसल के इतने नुकसान को ही मानक और स्थिर मान लिया जाए तो भी पिछले दस वर्षों में बागमती परियोजना और रीगा शुगर कम्पनी की कृपा से केवल खेती को 122 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। एक छोटे से इलाके से इतनी सम्पत्ति का नुकसान अगर हो जाए तो वहाँ की अर्थ व्यवस्था को तहस-नहस होने में कितना समय लगेगा? इसके अलावा घरों और सम्पर्क मार्गों की क्षति, मनुष्यों और जानवरों की क्षति, पीने के पानी की दिक्कत, स्वास्थ्य पर कुप्रभाव, शिक्षा का अभाव, बेरोजगारी, महाजनों के कर्ज के अन्दर आकंठ डूबे रहना इस काले पानी वाले इलाके के लोगों की नियति है। इनमें से कुछ चीजों की पैसे में कीमत लगायी जा सकती है, कुछ चीजों को सिर्फ महसूस किया जा सकता है और कुछ चीजें सीधे-सीधे शब्दों में अनमोल हैं, उनका मूल्य लगाने की कोशिश ही मानव जाति का अपमान होगा। इस सारी परिस्थिति को स्वयं देखे बिना समझ पाना बड़ा मुश्किल है।

2006 की जल-निकासी योजना के चार मुख्य अंग हैं–

1. मनुस्मारा-डुमरियाघाट-रामनगर-भादा-रुन्नीसैदपुर-धरहरवा-लखनदेई लिंक
2. धरहरवा-हनुमान नगर-मधुबन बेसी लिंक
3. मधौल-भनसपट्टी-हनुमान नगर लिंक
4. मधौल-कटौंझा-मधुबन बेसी लिंक

इन लिंक नालों की मदद से क्षेत्र के जल-जमाव ग्रस्त क्षेत्र के पानी की निकासी लखनदेई में दो स्थानों पर करने की योजना है। दो करोड़ तेईस लाख रुपये की अनुमानित राशि वाली इस योजना का टेण्डर नवम्बर 2008 में किया गया। यह पूरा काम नालों के निर्माण का है जिन्हें खोदने के लिए सरकार को रैयत की जमीन चाहिये और उसके लिए सरकार को जमीन का मुआवजा देना पड़ेगा। इस तरह के कामों में जमीन के अधिग्रहण की प्रक्रिया बहुत उबाऊ और कदम-कदम पर भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने वाली होती है। काम को आगे बढ़ाने के लिए परियोजना के कार्यपालक अभियंता-जल निस्सरण डिवीजन-बागमती परियोजना ने सभी सम्बद्ध पंचायतों के मुखिया को एक अपील जारी करके अनुरोध किया (पत्रांक 463, दिनांक 30 जुलाई 2009) कि वह अपनी-अपनी पंचायतों से अनापत्ति पत्र सरकार को भेज दें ताकि काम तेजी से किया जा सके। जमीन के मुआवजे का भुगतान भी सरकार साथ-साथ करती रहेगी। इस काम में तो सरकार को अपेक्षित सफलता नहीं ही मिली मगर जिन-जिन स्थानों से यह नाले निकाले जाने वाले थे वहाँ के किसानों द्वारा योजना का विरोध शुरू हो गया। इन ग्रामीणों का कहना है, ''...रीगा चीनी मिल का प्रदूषित जल मनुस्मारा नदी में गिराया जाता है जिससे पानी प्रदूषित हो जाता है जिसके कारण आबादी प्रभावित होती है। ग्रामीणों की मांग है कि पहले रीगा मिल द्वारा प्रदूषित पानी को मिल में लगाये गए ट्रीटमेन्ट प्लांट से साफ करने के बाद ही मनुस्मारा नदी में गिराया जाए उसके बाद ही खुदाई कार्य करने दिया जायेगा।'' कार्यपालक अभियंता आगे लिखते हैं, ''...रीगा चीनी मिल के प्रदूषित पानी को रोकना इस प्रमण्डल के कार्यक्षेत्र से बाहर होने के कारण सम्भव नहीं है, इसके लिए प्रशासनिक सहयोग आवश्यक है। इस सम्बन्ध में अधोहस्ताक्षरी द्वारा कई बार मौखिक और लिखित रूप से तत्कालीन जिला पदाधिकारी से अनुरोध किया गया था लेकिन आज तक कोई प्रशासनिक सहयोग नहीं मिल पाया है जिसके कारण खुदाई का काम रुका हुआ है।''

मज़े की बात है कि बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण पर्षद के सदस्य सचिव ने अध्यक्ष, रीगा शुगर कम्पनी लिमिटेड को एक कारण बताओ नोटिस दिनांक 15 सितम्बर 2009 को लिख कर पूछा, ''...आपकी इकाई से प्रदूषित बहिश्राव को बिना उपचार के सीधे मनुस्मारा नदी में गिराया जाता है जिसका कुप्रभाव बगल के गाँवों पर पड़ रहा है जिसके कारण धनकौल, गिसारा (के) बीच पड़ने वाले ग्रामीणों द्वारा अवरोध किया गया तथा कार्य बाधित है।... अतः कृपया स्पष्ट करें कि क्यों नहीं आपकी इकाई के विरुद्ध जल-अधिनियम 1974 के अन्तर्गत उचित कार्यवाही की जाए? 15 दिनों के अन्दर पर्षद मुख्यालय को उपलब्ध करावें अन्यथा इकाई के विरुद्ध आवश्यक कार्यवाही की जायेगी।''[8] बागमती बाढ़ पीड़ित संघर्ष समिति के संयोजक, अथरी गाँव के रामसेवक सिंह के अनुसार चीनी मिल की तरफ से यह स्पष्टीकरण आज तक (जून 2010) नहीं मिला मगर इस पत्र के लिखे जाने के तीन सप्ताह बाद 8 अक्टूबर 2009 को बागमती परियोजना के अधीक्षण अभियंता को सीतामढ़ी के जिलाधिकारी को पत्र लिख कर कहना पड़ा था कि वे चीनी मिल के खिलाफ कार्यवाही करें।[9]

इतना कहने के बाद हम फिर राम तपन सिंह के उस प्रश्न पर लौट चलते हैं जिसमें उन्होंने राज्य के मंत्री महोदय से पूछा था कि रीगा की चीनी मिल बड़ी है या आपकी सरकार बड़ी है। इस सवाल को इसी रूप में लेखक ने सीतामढ़ी से कई बार विधायक, सांसद और मंत्री रहे नेता रघुनाथ झा से पूछा। उन्होंने लेखक को जो बताया वह यहाँ उद्धृत है। देखें बॉक्स-मिल मालिक सारी चीज़ें मैनेज कर लेता है तो वही बड़ा है न सरकार से।

मिल मालिक सारी चीज़ें मैनेज कर लेता है तो वही बड़ा है न सरकार से।

रघुनाथ झा

''रीगा चीनी मिल की समस्या पहले से ही थी मगर इसमें वृद्धि तब हुई जब वहाँ डिस्टिलियरी खुल गयी। इसके चलते वहाँ पानी और भी ज्यादा प्रदूषित हो गया। वहाँ उस पानी से जानवर मरने लगे हैं और आदमी भी बहुत तरह की बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। उस पानी की कई बार जांच हुई। एक बार तो मेरे प्रश्न उठाने पर भी जांच हुई थी। लेकिन जांच करने वाला अगर सिर्फ उस इलाके के गाँव में घूमे और फिर रीगा मिल में जाकर खा-पी कर चला आये तो वह क्या जांच करेगा? वहाँ के लोग तो बरबाद हो गए। रात में ठीक से सो तक नहीं पाते हैं वहाँ लोग। खेती-बारी सब बरबाद हो गई उनकी। मैं जहाँ से चुनाव लड़ा करता था उस विधान सभा क्षेत्र के आधे दर्जन के करीब गाँव उसी काले पानी में फंसे हैं। स्टेट पॉवर से ज्यादा कोई बड़ी ताकत नहीं होती है मगर मुख्यमंत्री खुद तो नहीं जायेगा वहाँ जांच करने। अब स्टेट को मिली इस क्षमता का किस तरह से उपयोग होता है वह एक अलग प्रश्न है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में जांच के अपने तरीके होते हैं, सचिवालय स्तर पर जांच होगी, कलक्टर जांच करवायेगा आदि। मगर मिल मालिक सारी चीज़ें मैनेज कर लेता है तो वही बड़ा है न सरकार से?''[10]

काला पानी की जल-निकासी के वर्षों से अनवरत प्रयास करने वाले अथरी गाँव के राम सेवक सिंह इस पूरी योजना की अद्यतन स्थिति बताते हुए कहते हैं, ''...काला पानी की जल-निकासी का प्रस्ताव बिहार सरकार ने केन्द्र के पास भेजा था जिसे उसने यह कह कर लौटा दिया कि इस योजना की लागत दस करोड़ रुपये से कम है इसलिए केन्द्र इसके लिए पैसा नहीं देगा। तब बिहार सरकार का कहना है कि हम इसे नरेगा के तहत पूरा करवा लेंगे। राज्य सरकार ने जल संसाधन विभाग को यह प्रस्ताव भेजा और मुझे एक पत्र दिया कि मैं जाकर सीतामढ़ी के कलक्टर से मिल लूँ और यह काम हो जायेगा। मैंने पूछा कि इस योजना में तो कच्चा और पक्का दोनों तरह का काम है और प्रखंड का बजट सीमित होगा। तब यह काम कैसे हो पायेगा? तब मुझे बताया गया कि यह कलक्टर की क्षमता में है कि वह जिला स्तर पर इस काम को करवा सकेगा। इस योजना को लेकर मैं बागमती परियोजना के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर से मिला। उनका कहना था कि नरेगा के अन्तर्गत पक्के और कच्चे कामों का अनुपात 40:60 का होता है लेकिन इस काम में 30 और 70 का अनुपात

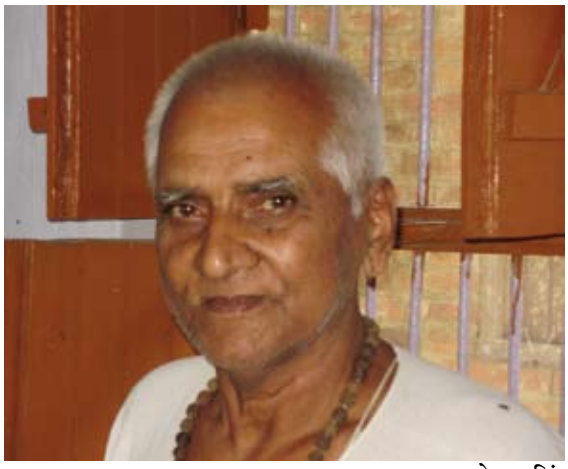

राम सेवक सिंह

होगा क्योंकि ज्यादा काम मिट्टी का है। दूसरी बात यह है कि हमारा मिट्टी का काम मानव श्रम से नहीं बल्कि मशीन से होगा क्योंकि यहाँ मिट्टी खोदने पर तुरन्त पानी निकल आयेगा। मैं जब उनसे फिर मिला तब उन्होंने बताया कि इस विषय पर पटना में एक मीटिंग हुई थी और कलक्टर को इस आशय का एक पत्र निर्गत हुआ है। यदि कोई और बाधा नहीं पड़ती है और लोग आपत्ति नहीं करते हैं तो अब यह काम हो जाना चाहिये पर अब तो जो कुछ भी होगा बरसात (2010 की बरसात) के मौसम के बाद ही होगा।''[11]

काला पानी क्षेत्र के किसानों की वर्षों से जो दुर्गति हो रही है उसके लिए यह जरूरी है उनके उद्धार के लिए इस योजना का जल्द से जल्द क्रियान्वयन हो जाए। लेकिन इसका एक दूसरा पक्ष भी है जिसे नज़रअंदाज नहीं किया जाना चाहिये। बिहार सरकार के भूतपूर्व मंत्री गणेश प्रसाद यादव वह दूसरा पक्ष बताते हैं, ''...काला पानी के ड्रेनेज के बारे में इधर नीचे के लोगों को पता नहीं है कि अगर उसकी निकासी कर दी जाती है तो वह सारा का सारा जहरीला पानी इधर से ही होकर गुज़रेगा और यहाँ के पर्यावरण को उतना ही नुकसान पहुँचायेगा जितना वहाँ पहुँचा रहा है। अगर यह बात यहाँ के लोगों को पता लग भी जाए तो वे क्या कर लेंगे? मुर्दों की बस्ती में आप किस-किस को आवाज़ दीजियेगा? इनका सब कुछ लूट लीजिये, बस एक क्विन्टल अनाज दे दीजिये तब यह लोग सारे कष्ट भूल जायेंगे। अब न तो कोई सामाजिक संरचना बाकी बची है और न कोई राजनैतिक संगठन ही मौजूद है जो इन सब बातों के खिलाफ आवाज उठा सके। दलालों को छोड़ कर अब ब्लॉक में कोई जाता ही नहीं है। अफसर वहाँ रहता नहीं है, जब अफसर नहीं रहेगा तो कर्मचारी कहाँ से रहेगा?''[12]

काला पानी के राम नगरा गाँव के समाजकर्मी प्रेम शंकर सिंह का कहना है, ''...नदी की सारी सिल्ट इन दो तटबन्धों के बीच फंस गयी है और नदी का तल ऊपर उठता जा रहा है। तल ऊपर उठने से नदी की प्रवाह क्षमता घटती है जिसके फलस्वरूप यह संरचना कभी टिकाऊ नहीं रह सकती। नदी कभी दायें तटबन्ध को, कभी बायें तटबन्ध को और किसी-किसी साल दोनों तटबन्धों को एक साथ तोड़ती है। तटबन्धों के अन्दर की तीन किलोमीटर चौड़ी पट्टी बालू बुर्ज हो गयी और जब-जब तथा जहाँ-जहाँ तटबन्ध टूट कर नदी का पानी पहुँचा वहाँ जल-जमाव भी बढ़ा और काफी जमीन बालू में भी फंस गयी है। किसी जमाने में बागमती का यह क्षेत्र अन्न-धन से परिपूर्ण था लेकिन आज यहाँ के किसान दाने-दाने को मुहताज हो गए हैं। हम लोग तो जाति, धर्म और क्षेत्र

प्रेम शंकर सिंह

के आधार पर वोट देते हैं। हमारा धर्म, हमारी जाति और हमारा क्षेत्र अगर चुनाव में विजयी हो जाता है तो फिर हमें और क्या चाहिये? यह योजना तो लूट-खसोट की योजना है जिसमें हमारे इंजीनियर, ठेकेदार और नेता बहती गंगा में हाथ धो रहे हैं और हम खड़े तमाशा देख रहे हैं। दु:ख वहाँ होता है कि जिन योजनाओं पर बिहार सरकार और केन्द्र सरकार दोनों की सहमति है उन्हें भी पूरा करवाने में दसों साल लग जाते हैं। सरकार योजना स्वीकार करती है मगर उसकी छान-बीन की प्रक्रिया इतनी जटिल है कि सारी योजना उसी में उलझ जाती है। मगर यह सरकार व्यापारियों की सरकार है हम लोगों का केवल शोषण हो रहा है और हम लोग व्यापार के मोहरे बने हुए हैं। इस तटबन्ध को हटा दीजिये, हमारी खुशहाली वापस लौट आयेगी।''[13]

हमारी पूरी व्यवस्था, हमारे विधायक, हमारे मंत्री, हमारी प्रयोग-शालाएं, हमारा जल-संसाधन विभाग, हमारा जिला अधिकारी, हमारा राज्य प्रदूषण नियंत्रण पर्षद या राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कितना मजबूर है एक व्यावसायिक प्रतिष्ठान के सामने? राज्य का जल-संसाधन विभाग चौदह करोड़ रुपयों की लागत से चन्दौली में बागमती के बायें तटबन्ध में एक स्लुइस गेट का निर्माण लगभग पूरा कर चुका है। अगर उसे इस स्लुइस गेट की कार्य क्षमता पर भरोसा होता तो वह जल-निकासी की वैकल्पिक योजना नहीं बनाता। इंजीनियरिंग पहेलियाँ बुझाने का पेशा नहीं है, उसके आदर्श अलग हैं। जल-निकासी वाली योजना की अपनी समस्याएं हैं, उस रास्ते से जाने वाला पानी प्रदूषित ही होगा और वह इस पूरे रास्ते के भूमिगत पानी को प्रदूषित करता हुआ ही आगे बढ़ेगा। इस जहरीले पानी से जमीन भी अछूती नहीं रहेगी। इन सारी परेशानियों से बचने का एक ही रास्ता है कि रीगा की शुगर मिल पर शिकंजा कसा जाए लेकिन क्योंकि वह सरकार समेत सभी संस्थाओं से बड़ी है इसलिए उसके गले में घंटी बांधना मुश्किल है।

रीगा शुगर मिल की हिमायत करने वाले लोगों की भी कमी नहीं है। उनमें से बहुत से लोगों का यह मानना है कि बिहार में वैसे भी उद्योगों का अकाल है और जो भी उद्योग यहाँ कार्यरत हैं उनको अगर किसी किस्म की परेशानी होती है तो यह राज्य और यहाँ की जनता के हित में नहीं होगा। इस शुगर मिल के साथ उन किसानों के भी हित जुड़े हुए हैं जिनके खेत का गन्ना इस मिल में पेराई के लिए आता है। यह दोनों ही कारक सरकार के लिए चिन्ता का विषय होने चाहिये और बहुत मुमकिन है कि मिल के प्रति नर्म रुख रखने का यह कारण भी हो। यदि इसमें थोड़ी सी भी सच्चाई हो और सरकार सचमुच इतनी मजबूर है तो क्यों नहीं वह अपना एक समुचित क्षमता का शोधक यंत्र चीनी कारखाने में बैठा देती है जिसका संचालन उसकी अपनी देख-रेख में हो। उस हालत में चीनी मिल के जिस कचरे से लाखों लोगों का अहित हो रहा है या जिसके गन्दे पानी की निकासी से नये-नये क्षेत्रों में भविष्य में नुकसान होगा उससे लोगों का कम से कम बचाव तो होगा और पारस्परिक संघर्ष भी रुकेंगे। सरकार इस काम का पूरा खर्च अपनी निर्धारित शर्तों पर चीनी मिल से वसूल सकती है।

अन्यथा ऐसी हालत में हम सबको मिल कर यही दुआ करनी चाहिये कि चन्दौली वाला स्लुइस कुछ हद तक काम करे और कुछ हद तक जल-निकासी की बाकी योजना भी कामयाब हो जाए ताकि उस इलाके के किसानों की जीवन धारा फिर उनके ढर्रे पर लौट आये। चीनी मिल अपनी हरकतों से बाज आये उसके लिए जो राजनैतिक इच्छा शक्ति चाहिये वह 1955 से अब तक की सरकारों में देखने में नहीं आयी है। दूसरा तरीका जन-संगठन का है। हमारे दिनों दिन बिखरते समाज में जन-आकांक्षाएं इन शोषक शक्तियों को कब उनकी औकात बता पायेंगी, यह भविष्य ही बता पायेगा।

संदर्भ :

1. दीक्षित, अजय; बाढ़ मुक्ति अभयान, पटना-बिहार दक्षिण एशिया में नदी संकट संगोष्ठी, कार्यवाही रपट, 21-22 जून 1998, पृष्ठ 61-63
2. केसकर, जी० आर०; निदेशक-गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग द्वारा मुख्य अभियंता, केन्द्रीय जल आयोग को लिखा गया पत्र (संख्या GFCC/Tech/27/81/4778-83 दिनांक 1 अगस्त 1981), बिहार सरकार, सिंचाई विभाग-बागमती योजना प्रतिवेदन 1981, के पृष्ठ संख्या 92 से साभार उद्धृत।
3. उपर्युक्त, पृष्ठ 93
4. झा, दामोदर; बिहार विधान सभा-वादवृत्त, 1 मार्च 1995, पृष्ठ 29
5. उपर्युक्त, 29 मार्च 1955, पृष्ठ 25
6. सिंह, राम सेवक, बागमती बाढ़ पीड़ित संघर्ष समिति, रुन्नी सैदपुर (सीतामढ़ी) द्वारा आयुक्त, प्रतिनियुक्त, सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली को दिनांक 13/12/04 का लिखा गया पत्र।
7. जल निस्सरण प्रमण्डल, सीतामढ़ी, कार्यपालक अभियंता का अधीक्षण अभियंता-बागमती शीर्ष कार्य अंचल, सीतामढ़ी को लिखा गया पत्र (संख्या 429/सीतामढ़ी, दिनांक 11 मई 2001)
8. बिहार राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद्, पटना के सदस्य सचिव द्वारा अध्यक्ष, रीगा शुगर कं० लि०, रीगा, सीतामढ़ी को लिखा गया पत्र-दिनांक 15 सितम्बर 2009
9. अधीक्षण अभियंता, शीर्षकार्य अंचल, बागमती नगर, सीतामढ़ी द्वारा रीगा शुगर कं० लि०, रीगा के अध्यक्ष का पत्र संख्या 1731, दिनांक 8 अक्टूबर 2009, प्रतिलिपि जिलाधिकारी-सीतामढ़ी।
10. रघुनाथ झा से व्यक्तिगत संपर्क
11. सिंह, राम सेवक; ग्राम अथरी, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जिला सीतामढ़ी से व्यक्तिगत संपर्क
12. गणेश प्रसाद यादव से व्यक्तिगत संपर्क
13. प्रेम शंकर सिंह से व्यक्तिगत संपर्क

7

लखनदेई तटबन्ध के कारण हुआ नरसंहार

7.1 पृष्ठभूमि

पानी की कमी के कारण संघर्षों की कहानियों की तलाश में बहुत सी संस्थाएँ और लोग आजकल बड़े मनोयोग से लगे हुए हैं। 'जल ही जीवन है' का संदेश सारी दुनियाँ में प्रमुखता पा रहा है और यह सच भी है कि जल के बिना सृष्टि की कल्पना नहीं की जा सकती। यहाँ से बात जब आगे बढ़ती है तब यह वनों के विनाश, प्रदूषण, ओज़ोन परत का क्षरण, ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन, वैश्विक तापक्रम में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन, ग्लेशियर का पिघलना तथा पानी को लेकर होने वाले अगले विश्वयुद्ध की भविष्यवाणी तक पहुँचती है। इन सभी शीर्षकों की तह में पानी की कमी की एक अन्तर्धारा बहती रहती है। बाढ़ या पानी की अधिकता, भले ही वह थोड़े समय के लिए ही क्यों न हो, की अगर कोई चर्चा करता भी है तो सिर्फ इतनी कि जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़ के परिमाण और तीव्रता में वृद्धि होगी और ग्लेशियरों के पिघलने के कारण बरसात के बाद नदियों में पानी कम हो जायेगा और वे सूख जायेंगी और फिर सूखा या दुर्भिक्ष पड़ेगा। कुल मिला कर बात फिर पानी की कमी और सूखे पर लौट आती है। आम धारणा यही है कि पानी के लिए द्वन्द्व या युद्ध क्षेत्र तक पहुँचने वाला रास्ता पानी की कमी वाली गली और सूखे वाले रास्ते से हो कर गुजरता है।

यह मान्यता आंशिक रूप से ही सच है। पानी से संबन्धित बहुत सी समस्याओं को एक ही लाठी से हाँकने वाले विशेषज्ञों तक को यह समझा पाना बड़ा मुश्किल होता है कि बाढ़ क्षेत्रों की समस्या सूखे वाले क्षेत्रों से ठीक उलटी होती हैं–वैसी ही जैसी आइने में हम अपनी शक्ल देखते हैं। आइने में जो कुछ भी दिखता है वे हमारी ही छवि होने के बावजूद हमारे अक्स का ठीक उल्टा होता है।

पानी की थोड़ी बहुत कमी से लोग बड़ी आसानी से निबट लेते हैं मगर परेशानी तब होती है जब कमी 'किल्लत' बन जाती है। उसी तरह कम गहराई की विस्तृत इलाके पर आई बाढ़ का जहाँ स्वागत होता है वहीं बड़ी बाढ़ की चपेट में कोई भी पड़ना नहीं चाहता। यही वजह है कि बाढ़ क्षेत्र के हर व्यक्ति की यह चाहत होती है कि उसका अतिरिक्त पानी दूसरे लोगों के पास चला जाए या दूसरे क्षेत्र से ही हो कर बहे तो अच्छा है। यही कारण है कि नदी के इस पार या उस पार तथा नदियों पर बने तटबन्धों के अन्दर और बाहर रहने वाले लोगों के बीच पूरे बरसात के मौसम में अपना पानी दूसरे के इलाके में बहा देने की एक होड़ सी लगी रहती है। यह होड़ ऐसे लोगों के बीच होती है जिनकी आपस में मित्रता और रिश्तेदारियाँ होती हैं और बाढ़ के मौसम को छोड़ कर उनका आपस में रोज़ का उठना-बैठना और भोजन-भात चलता रहता है। बाढ़ के समय तटबन्ध उन्हें दो पालों में बाँट देता है और उनकी तात्कालिक सुरक्षा की जरूरतें कभी-कभी संघर्ष का रूप ले लेती हैं जिससे आपसी हमले में पहले जहाँ लाठी, गँड़ासों और भालों का उपयोग होता था, आजकल बदलते समय के साथ बन्दूकों और बमों का भी प्रयोग होने लगा है।

अगस्त 1970 में बिहार की बागमती और लखनदेई के दोआब में इसी तरह से दो विपरीत हितों वाले समूह अपनी बाढ़ का पानी एक दूसरे को देने के उद्देश्य से अस्त्र-शस्त्र के साथ आमने-सामने आ गए थे जिसमें कई लोगों को अपनी जान गवांनीं पड़ गयी थी। यह महज़ इतिफाक है कि यह सभी गाँव उसी काले पानी वाले इलाके में अवस्थित हैं जिनके बारे में हमने पिछले अध्याय में चर्चा की थी। आज से चालीस साल पहले हुई यह दुर्घटना जब घटित हुई थी तब ऊपर दी हुई शब्दावली विनाश, प्रदूषण आदि में से वनों के विनाश को छोड़ कर शायद दूसरे शब्द-समूह प्रचलन में भी नहीं आये थे। इतना कह कर हम उस संघर्ष के बारे में बात करते हैं।

7.2 लोहासी (सीतामढ़ी) कांड

18 अगस्त 1970 के दिन पटना से प्रकाशित समाचार पत्रों–दि इण्डियन नेशन, दि सर्चलाइट और आर्यावर्त्त में इस घटना की खबर छपी थी। आर्यावर्त का कहना था, ''...16 अगस्त की शाम को सीतामढ़ी से 16 मील (27 किलोमीटर) दूर रुन्नी-सैदपुर के लोहासी गाँव में बांध काटने के प्रश्न पर हथियारों से लैस संघर्षरत ग्रामीणों के दो दलों को तितर बितर करने के लिए पुलिस को 11 राउण्ड गोलियाँ चलानी पड़ीं जिससे तीन व्यक्ति घटना स्थल पर ही मारे गए तथा 15 घायल हुए। घायलों में से 7 को सीतामढ़ी अस्पताल पहुँचाया गया जहाँ एक की मृत्यु हो गयी। शेष 6 की हालत चिन्ताजनक बतायी जाती है। कहा जाता है कि बाढ़ से डूब रहे एक गाँव को बचाने के लिए खोपा-ओइना रिंग बांध को उस गांव के लोग काटना चाहते थे तथा दूसरे गांव के लोग आपत्ति कर रहे थे। इसी बात को लेकर पिछले कुछ दिनों से तनाव चल रहा था और एक मजिस्ट्रेट की देख रेख में वहाँ पुलिस भी तैनात कर दी गयी थी। लेकिन कल तनाव ने संघर्ष का रूप ले लिया और पुलिस को गोली चलानी पड़ी। ...सूचना मिलते ही घटनास्थल पर सीतामढ़ी के अनुमण्डल अधिकारी श्री एस० के० मुखर्जी और उप-आरक्षी अधीक्षक श्री बालस्वरूप शर्मा के साथ मुजफ्फरपुर के जिलाधिकारी श्री श्रीकृष्ण पाटणकर पहुँचे। स्थिति नियंत्रण में है।''

7.3 धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्रे...

बागमती और लखनदेई के दोआब में लोहासी, गिसारा, कठौर, धुरबार, बेनीपुर, खोंपा, खोंपी, ओइना और मोरसंड आदि गाँव हैं जो सीतामढ़ी जिले के बेलसंड और रुन्नी सैदपुर प्रखण्ड में पड़ते हैं (चित्र-6.1, अध्याय-6)। उन दिनों बागमती के बायें किनारे पर धनकौल के पास नारायणपुर (यह दोनों गाँव आजकल शिवहर जिले के पिपराही प्रखंड में पड़ते हैं। शिवहर सीतामढ़ी से टूट कर 1994 में नया जिला बना था) में नदी की एक धारा फूटती थी जो इन गाँवों से होते हुए लखनदेई तक चली जाती थी। बरसात के मौसम में बागमती का कुछ पानी इस रास्ते से लखनदेई में जाता था। यह बात बागमती पर तटबन्धों के निर्माण

के पहले की है। लखनदेई के पूर्वी (बायें) किनारे पर एक छोटा सा महाराजी तटबन्ध हुआ करता था। पानी कम होने पर नदी के सुरक्षित प्रवाह के लिए धनकौल/नारायणपुर मार्ग से लखनदेई आने वाला पानी इस नदी में खप जाता था मगर ज्यादा पानी होने पर लखनदेई या तो अपने पश्चिमी किनारे से बह निकलती थी या कभी-कभी अपने तटबन्ध को तोड़ कर पूरब की ओर निकल जाती थी। आम तौर पर लखनदेई के पूर्वी किनारे पर बसा मोरसंड गाँव इस पानी के दंश को सबसे पहले और सबसे ज्यादा समय तक झेलता था। उन दिनों मोरसंड के मुखिया थे जगन्नाथ सिंह जो काफी प्रभावशाली व्यक्तित्व के स्वामी थे। उनके प्रयास से लखनदेई के पूर्वी तटबन्ध को सरकार द्वारा 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध में मजबूती से बंधवा दिया गया। अब बागमती से छलकता पानी अगर लखनदेई तक पहुँच जाए तो उसे पश्चिम में छलक कर फैलने का रास्ता तो खुला हुआ था मगर पूरब में तटबन्ध के ऊपर से छलक कर आगे जाने का रास्ता बन्द हो गया। 1970 में बागमती में एक बड़ी बाढ़ आयी तब बागमती से जो पानी छलका वह लखनदेई की ओर बढ़ा और उसे लखनदेई के पूर्वी किनारे पर बने इस तटबन्ध ने रोक दिया फिर तो दोनों नदियों के बीच बसे गिसारा, लोहासी, कठौर, बेनीपुर तथा धुरबार आदि गाँव बाढ़ के पानी में डूबने लगे। इन गांवों के लोगों को लगा कि लखनदेई का नवनिर्मित तटबन्ध ही उनकी समस्या का मूल कारण है और इस तटबन्ध को अगर काट दिया जाए तो उनकी बाढ़ की समस्या का समाधान हो जायेगा। उनके इस समाधान में लखनदेई के तटबन्ध के उस पार पूरब के गांवों की तबाही छिपी हुई थी क्योंकि तटबन्ध काट दिये जाने की स्थिति में भीमपुर, बेलाही नीलकंठ, मोरसंड, गयघट, ओइना और खोंपा आदि गांवों में इस पानी की चोट पड़ती। ऐसी परिस्थिति में इन गांवों के बाशिन्दों ने किसी भी अवांछित घटना के अंदेशे के विरुद्ध मोर्चा संभाल लिया। अपनी मदद के लिए उन्होंने पुलिस बल की भी व्यवस्था कर ली थी। सरकार ने वहाँ एक हॉर्टिकल्चर इन्स्पेक्टर सीता राम सिंह को मजिस्ट्रेट की पॉवर देकर स्थिति पर नियंत्रण रखने के लिए नियुक्त कर दिया था।

जब कठौर, गिसारा, लोहासी, बेनीपुर और धुरबार गाँव के लोग बांध काटने के लिए आगे बढ़े तब लखनदेई के पूर्वी किनारे पर दूसरे पक्ष के लोग अस्त्र-शस्त्र के साथ मौजूद थे। पश्चिम वालों की समस्या यह थी कि वह पानी के रास्ते गए थे इसलिए इन गाँवों के लोग नीचे पड़ते थे। इन लोगों को तटबन्ध भी काटना था और अपनी जान भी बचानी थी। परिस्थितियाँ उनके अनुकूल नहीं थीं। दूसरे पक्ष के लोगों ने लखनदेई के पूर्वी तटबन्ध पर मोर्चा संभाल रखा था और ऊँचाई पर होने तथा पानी के सीधे संपर्क में न होने के कारण वे बेहतर स्थिति में थे। फिर भी पश्चिम के गाँवों के यह लोग लखनदेई को पार कर के तटबन्ध तक पहुँच गए। इस पूरे संघर्ष का विवरण दोनों पक्षों के गाँव वालों ने लेखक को जो बताया वह यहाँ दिया जा रहा है।

लोहासी के ग्रामीण बताते हैं, ''...बुजुर्ग लोग बताते थे कि लखनदेई नदी के पूर्वी किनारे वाला यह बांध कब बना वह तो पता नहीं पर इसके कभी-कभी छलकने या टूट जाने पर पानी तीर की तरह निकलता था और दरभंगा महाराज के महल तक चोट करता था। लखनदेई तटबन्ध अगर सुरक्षित रह जाए तो पानी हमारी तरफ पश्चिम में शिवहर तक खड़ा हो जाता था। गाँव में कमर भर पानी होना आम बात थी। इस पानी

देव चन्द्र राय (लोहासी)

से ड्योढ़ी के बचाव के लिए ही शायद दरभंगा महाराजा ने लखनदेई के पूर्वी किनारे पर तटबन्ध बनवाया होगा। 1966-67 के आस-पास इस बांध की मरम्मत सरकार ने करवा दी। बांध की मरम्मत होना हमारे लिए काल बन गया। पहले थोड़ा-बहुत पानी पुराने तटबन्ध के ऊपर या उसमें पड़ी दरारों से निकल जाया करता था, वह अब बन्द हो गया और तटबन्ध से रुका हुआ पानी पश्चिम में फैल कर इधर के बहुत से गाँवों को तबाह करने लगा।

...1970 में बागमती नदी में बहुत बड़ी बाढ़ आयी। उस समय तक बागमती नदी का तटबन्ध बना नहीं था। बागमती का पानी छलक कर हमारे तथा आस-पास के गाँवों में भर गया और उसने इसी लखनदेई वाली धार का रास्ता पकड़ लिया। लखनदेई पर अगर तटबन्ध नहीं रहता तो यह पानी उधर से निकल जाता मगर अब यह पानी अपनी जगह पर खड़ा हो गया। नतीजा हुआ कि हमारी तरफ के बहुत से गाँव पानी में डूबने लगे। यह सब हम लोगों के लिए कोई नई बात नहीं थी मगर पानी का इतने लम्बे समय तक टिके रहना जरूर नई बात थी। चूल्हे तक में पानी घुस गया और सबका खाना-पीना बन्द। चार-चार शाम उपवास कर के रह गए लोग, बच्चे भूख से बिलबिलायें सो अलग। कहाँ तक बर्दाश्त करते? तब सारे गाँवों के लोगों ने मिल कर

राजधारी राय (लोहासी)

मंत्रणा की कि लखनदेई के तटबन्ध को काट दिया जाए तभी यह पानी निकल पायेगा क्योंकि फसल तो डूब ही गयी थी और अब जान पर भी आफत थी। हमारी इस कोशिश का विरोध उस पार वाले करेंगे यह सभी को मालुम था।

पूरे दो दिन-दो रात यहाँ गाँव में भाले-गंड़ासे बनाने का काम चलता रहा और तीसरे दिन सब तैयार थे बांध काटने को निकलने के लिए। सुबह 10 बजे का समय रहा होगा और बांध तक पहुँचते-पहुँचते लगभग 12 बज गया था। बांध पर सामने बन्दूकधारी पुलिस खड़ी थी जिसने उन लोगों को रोका। चार-पांच सौ आदमी रहे होंगे, उस भीड़ में कौन किसकी सुनता है। कुछ लोग आगे बढ़े तो पुलिस वालों ने कहा कि उनकी सिर्फ उसी दिन तक के लिए ड्यूटी लगी है। अगले दिन वे लोग चले जायेंगे तब आप लोग बांध काट दीजिये या जो मन में आये कीजिये। इसी बीच कुछ लोगों ने पुलिस की बन्दूक छीनने की कोशिश की तो पुलिस पीछे हट गयी और इन लोगों से कहा कि आगे बढ़िये और बांध काट ही दीजिये। जैसे ही लोग आगे बढ़े पीछे से पुलिस ने फायरिंग शुरू कर दी। बस! न जाने कितने लोग मारे गए, भगदड़ मच गयी और मार-पीट शुरू हो गयी। कुछ लोग तो जान बचाने के ख्याल से नदी में ही कूद पड़े जो उफान पर थी। धारा बहुत तेज़ थी। गोली-छर्रा तो न जाने कितने लोगों को लगा होगा। इस आपा-धापी में बांध का कुछ हिस्सा कट जरूर गया था पर यह हम लोगों की वजह से हुआ होगा यह तय नहीं है। न जाने कितने लोग बह गए होंगे। कहते हैं कि लोहासी गाँव के 4 लोग लखनदेई बांध के पूरब एक झोपड़ी में जाकर छिप गए थे। इन लोगों के हाथ और पैरों में गोली लगी थी। भगदड़ मचने पर वहीं उनको ठिकाना मिला। उधर झंझट थोड़ा शान्त होने पर गाँव वाले लाशों की तलाश में निकले तो यह चारों लोग झोपड़ी में मिल गए। इन लोगों के हाथ पैर में छर्रे लगे थे, भागने में असमर्थ थे। उनमें से दो की लाशें मिलीं पर दो अभी तक लापता हैं।

पश्चिम वाले लोग मारे भी गए और उन्हीं पर पुलिस ने मामला भी दायर किया। गिसारा के मुखिया राम लखन साह पर नामजद मामला हुआ तो पुलिस पश्चिम के गाँवों में लोगों को पकड़ने के लिए और जब्ती-कुर्की के लिए दबिश देने लगी। बाढ़ का पानी गाँव में बदस्तूर कायम था क्योंकि उधर का बांध तो अपनी जगह बना हुआ था। अब गाँव के सारे जवाँ मर्द पुलिस के डर से गाँव छोड़ कर भाग गए। गिसारा के ही जय मंगल पांडे, जुल्फी साहनी जैसे लोग जेल में थे। खूब धर-पकड़ होती थी और दिन-रात छापा पड़ता था। बाद में हम लोगों ने पुलिस में गुहार लगायी। तब मुजफ्फरपुर से वायरलेस आया कि लोग बाढ़ से पहले से ही तबाह हैं, मारे भी गए हैं, उन्हें और तंग न किया जाय। ऐसा नहीं हुआ होता तो जितने लोग पुलिस फायरिंग में नहीं मरे उससे ज्यादा भागने-छिपने की भगदड़ में डूब कर मरते। इस घटना के कोई पन्द्रह दिन बाद हालात थोड़ा सुधरे मगर बाढ़ का पानी अपनी जगह बना ही हुआ था तब गुलेरिया के दो मल्लाहों ने चौड़े मुंह वाली हंड़िया में छेद कर के उसे सिर में पहन लिया ताकि वे बाहर देख सकें मगर पानी में तैरते या डुबकी लगाते समय उन्हें पहचाना न जा सके, कुदाल और भाला लेकर उस पार जा पहुँचे। वहाँ इक्का-दुक्का पुलिस का पहरा जरूर था मगर जैसे ही पुलिस गाफिल पड़ी इन दोनों ने खोंपा के दक्षिण में बांध को काट दिया। बरसात के मौसम में बांध काटने के लिए औजार का बस एक हलका सा इशारा ही काफी होता है। नदी के पानी को रास्ता मिला और वह उसी रास्ते बह निकला। जहाँ बांध काटा गया वहाँ 10-15 कट्ठा जमीन पर खाई बन गयी। उस दिन जो बांध कटा तो वह आज तक कटा ही पड़ा है।

लोहासी गाँव के चार लोग इस पूरी घटना में मारे गए। इनके नाम बलदेव राय, सोंफी राय, राम आसरे कोइरी और सोमन कोइरी थे। इस घटना में एक आदमी दमामी और दो आदमी कठौर के भी मारे गए थे। मारे जाने वालों में गिसारा के अवध बिहारी साह और कुलदीप भी थे।

गिसारा के मुखिया राम लखन साह थोड़ा ताकतवर आदमी थे। उन्होंने खुद को भी बचा लिया और बाकी लोगों को भी पुलिस/कचहरी से बचाया। उनके यहाँ पुलिस ने जब्ती कुर्की की थी और बहुत सामान ले गयी। तीन कनस्तर मक्खन और घी था उनके यहाँ, उसे भी पुलिस उठा ले गयी। बाद में बाकी सामान तो पुलिस ने लौटा दिया लेकिन मक्खन/घी पुलिस ने खूब खाया। हम लोग तब बच्चे थे और यह सब होते हुए हमने बड़े नजदीक से देखा था। पुलिस से बच्चे नहीं डरते हैं, बड़े लोग डरते हैं। कोई सोहनी साहब जाँच में आये थे। सजा किसी को हुई नहीं और इमरजेन्सी के बाद (1977) जब कर्पूरी ठाकुर की सरकार बनी तब सारे मुकद्दमें उठा लिये गए। तरयानी के रामानन्द सिंह हमारे विधायक थे और राज्य में मंत्री भी थे। उन्हीं की कोशिशों से मामला रफा-दफा हुआ।

बाद में बागमती नदी पर तटबन्ध बन गया और उस तरफ से बाढ़ का पानी आम तौर पर आना बन्द हो गया। हमारे गाँव के सामने बागमती के तटबन्ध के इस तरफ धनकौल, रमनी, जाफरपुर और ओलीपुर आदि गाँव पड़ते हैं। अब बागमती का पानी यहाँ तभी आता है जब हमारे गाँव के उत्तर या पश्चिम में उसका तटबन्ध टूट जाए। अगर बागमती का तटबन्ध यहाँ से दक्षिण में टूटता है तो पानी यहाँ नहीं आता है।

...बागमती का पूर्वी तटबन्ध एक बार सीतामढ़ी-नरकटियागंज रेल लाइन के उत्तर में बसबिट्टा में 1993 में टूटा था तब पानी यहाँ आया था, बलथरवा में टूटने पर भी पानी यहाँ से गुजरा था। ओलीपुर में अगर बांध टूटता है तो हमारे यहाँ पानी घूम कर आता है और इसलिए कम तबाह करता है। रमनी में टूटने पर पानी यहाँ सीधे चोट करता है और

राम स्वारथ साह (गिसारा)

सौली, सिरसिया में बांध में दरार पड़ने पर भी हमीं लोग मरते हैं। जब बागमती का तटबन्ध नया-नया बना था तब कुअमा-बसतपुर के पास टूटा था और उस समय बागमती नारायणपुर धार से होकर बहने लगी थी, उसका पानी भी यहाँ आया था। उस बार तो बागमती की धारा इधर होकर खुल गयी थी और हम लोग जेठ के महीनें में ही पानी में फंस गए थे। बागमती का बांध जब टूटता है तो हमारे यहाँ छप्पर के ऊपर तक से पानी बह जाया करता है और हालत करीब-करीब वही हो जाती है जो 1970 में हो गयी थी।''

कठौर के अवध किशोर चौधरी बताते हैं कि उनके भाई शशि किशोर चौधरी ने उसी साल मैट्रिक पास किया था और अध्यापक की ट्रेनिंग में उनका चयन भी हो गया था। पिता जी उनकी नौकरी के सिलसिले में बाहर गए हुए थे और घर में नहीं थे, माता जी थीं। पानी चारों ओर था, हल्ला हुआ बांध काटने चलऽ हो, चलऽ हो। हुजूम था, जोश था, भाई भी सब

अवध किशोर चौधरी (कठौर)

के साथ चले गए। बांध काट दिया गया। जिस दिशा में भागना था, उलटी दिशा में भागे और पानी में फंस गए। बांध कट गया और उससे निकलते पानी ने इनको खींच लिया। पानी में ही मारे गए या किसी ने मार दिया पता नहीं। हम लोग मारे भी गए और हमीं लोगों पर मुकद्दमा भी किया गया। इस घटना में कई लोग जेल गए थे।*

अब चलते हैं लखनदेई के पूर्वी तटबन्ध पर बसे उन गाँवों की ओर जहाँ इस संघर्ष का घटनास्थल है।

''हम लोग लखनदेई के पूर्वी किनारे पर हैं। बरसात के मौसम में नदी का पानी किनारे तोड़ कर इस तरफ के गाँवों को डुबाता था। मोरसण्ड, गयघट आदि तक डूबता था और बाढ़ का पानी औराई होते हुए दरभंगा तक जाता था। मोरसंड, जो लखनदेई के पूर्वी किनारे पर है, नदी की बाढ़ से हर साल परेशान होता था। मोरसंड वालों ने 1960 के आस-पास से नदी के अपने किनारे पर तटबन्ध बनाना शुरू किया। शुरू-शुरू में यह बहुत छोटा बांध था, बाद में उसकी देख-रेख शुरू हुई और उस पर मिट्टी पड़ना शुरू हुआ। यह तटबन्ध उन लोगों का खुद का बनाया हुआ था और उसका दरभंगा राज आदि से कोई लेना-देना नहीं था। अगर दरभंगा राज ने इसे कभी बनवाया भी होगा तो भी वह आड़ा-तिरछा और लगभग ध्वस्त था। 1967 में सरकार की तरफ से इस तरह की संरचनाओं की मरम्मत और रख-रखाव की एक मुहिम चली। मोरसंड के मुखिया जगन्नाथ सिंह के प्रयास से स्थानीय तौर पर लखनदेई के तटबन्ध को ऊँचा और मजबूत करने का रास्ता खुला। पास में भेलाही-भपुरा के मुखिया थे जामुन सिंह। उन्होंने इसकी मरम्मत का काम अपने जिम्मे लिया। तब यह बांध नदी के पूर्वी किनारे पर लगभग 10-11 हाथ खड़ा और ठीक-ठाक चौड़ाई वाला बन कर तैयार हो गया। यह बांध सरकारी है और इसके बन जाने के बाद पानी पूरब की ओर तो नहीं आया मगर पश्चिम के गाँवों को पहले से भी ज्यादा परेशान करने लगा। लोहासी, दिलावरपुर, कठौर, गिसारा, दमामी आदि परसौनी और बेलसंड प्रखण्डों के बहुत से गाँव बाढ़ की चपेट में आने लगे थे। इसी बीच 1970 में भयंकर बाढ़ आ गयी। तब उन गाँवों के लोगों ने बांध को काट देने की योजना बनायी। राम लखन साह गिसारा के मुखिया थे, उनके यहाँ 5-7 मन चावल इकट्ठा हुआ। उस पार के बहुत लोगों ने उनके यहाँ भोजन किया और बांध काट देने की तैयारी पूरी कर ली। लखनदेई का तटबन्ध आज कटेगा, कल कटेगा जैसी खबरें इधर आने लगीं। इसकी भनक हम लोगों को लग गयी और हमने पुलिस को किसी भी अप्रत्याशित और अप्रिय घटना होने की संभावना की सूचना दी। यह रिपोर्ट थाने में लिखवाई गयी जिस पर कार्यवाही यह हुई कि एक हॉर्टिकल्चर सुपरवाइज़र को मजिस्ट्रेट की क्षमता देकर एक दर्जन सशस्त्र पुलिस के साथ यहाँ खोंपा में बैठा दिया गया। ओइना के बिन्देश्वरी बाबू के यहाँ मजिस्ट्रेट के रहने का इन्तजाम कर दिया गया। बताते हैं कि कोई 5,000 लोगों ने उस पार एक साथ भोजन किया। सभी नाव पर लाल एकरंगा झंडा लगा कर बांध काटने के लिए इस तरफ आने के लिए बढ़े। यह खबर जब इस पार के लोगों को मिली तब मोरसंड, गयघट, खोंपा, ओइना और खोंपी आदि गाँवों से भी जवान निकल पड़े। मोरसंड के मुखिया जगन्नाथ सिंह स्थानीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष भी

फुद्दन शाही (खोंपी)

* आलेख का यह भाग लोहासी के चन्दर राय, देव चन्द्र राय, राजधारी राय; गिसारा के सत्य नारायण शरण और कठौर के अवध किशोर चौधरी तथा बहुत से ग्रामीणों से बात-चीत के आधार पर तैयार किया गया।

थे, वे भी आ गए। सारे लोग तटबन्ध पर आ गए पर आम धारणा यह थी कि पश्चिमी किनारे वाले लोग डर से इधर आने की हिम्मत नहीं करेंगे। एक दिन शाम को इस तरफ के लोग प्रतीक्षा कर के लौट गए थे लेकिन दूसरे दिन सुबह वे सब सचमुच नदी पार कर के इस तरफ चले आये और हनुमान नगर में, जो कि ओइना गाँव का एक टोला है, उतरे। भालों, गंड़ासों से लैस होकर उन गाँवों के बहुत से लोग तो नावों से आये। काफी तादाद में लोग तैर कर भी आये थे। बांध काटने आने वालों में परसौनी तक के लोग थे। तैर कर आने वालों में बहुत से लोगों ने सिर पर मिट्टी वाली मटकी पहन रखी थी जिनमें छेद किया हुआ था ताकि वे बाहर देख सकें पर उनकी शिनाख्त मुश्किल हो। उन्हें करना सिर्फ इतना ही था कि किसी तरह पानी में गोता लगा कर बांध तक पहुँच जाएं और भाले की मदद से बांध में छेद कर दें। बाकी काम तो पानी के दबाव से खुद-ब-खुद हो जाता। उन लोगों की तरफ से लोहासी

गणेश साह (खोंपा)

के मुखिया, दमामी के मुखिया और गिसारा के लोग अगुआई कर रहे थे। इधर थाने का जमादार मौजूद था और उसे लगा कि फोर्स तो बहुत कम है और मुकाबला कर नहीं पायेगी और अब जान भी नहीं बच पायेगी। उसने फायरिंग का ऑर्डर दे दिया। अब उस पार वाले जान बचाने के लिए नदी में कूद गए। सब के पास कोई न कोई हथियार था। आपस में ही किसी का भाला किसी को लगा और किसी का फरसा किसी दूसरे को लगा। उस भगदड़ में आपस में ही कितने लोग कट-मर कर नदी में समा गए होंगे। बहुत लोग मारे गए थे। कुछ लोग बांध काटने में जरूर कामयाब हो गए। इस तरफ से तो पुलिस का बन्दोबस्त था मगर शोर-शराबा और अफरा-तफरी सुन कर गाँव वाले भी इकट्ठे हो गए। मार-पीट भी हुई। हमारे गाँव के अशर्फी साह का हाथ कट गया था, कुछ साल पहले उनकी मृत्यु हुई। गणेश साह के सिर में और हाथ में चोट आयी और वे अभी जिन्दा हैं और उनकी उम्र लगभग 90 साल की होगी। राम चन्द्र साह के सिर में गंड़ासे से चोट लगी थी और वे भी अभी जिन्दा हैं। नदी की ओर से और तटबन्ध की दरार के दोनों ओर से पानी बहने लगा। लाशें भी उसी गति से बह रही थीं। उन दिनों हमारा जिला मुख्यालय मुजफ्फरपुर में था। एस० पी० को खबर हुई तो वे भी

राम चन्द्र साह (खोंपा)

यहाँ आये। जमादार को सबके सामने बहुत खरी-खोटी सुनायी और कहा कि भीड़ में ग्यारह राउण्ड गोली चली है, तुम कम से कम ग्यारह लाश हमारे हवाले करो। इसके बाद खेत में, नदी में, अरहर में, बांस के झुरमुट में सब जगह लाशें खोजी जाने लगीं। बाद में एस० पी० ने कहा कि दस रुपया प्रति लाश का इनाम देंगे, लाशें खोजो। जितना मुमकिन हो सका लाशें खोजी गईं। फिर पूरे इलाके को सील कर दिया गया। जितनी भी लाशें मिलीं उसे नाव पर लादा गया, बाढ़ का पानी तो सब जगह था ही। नाव अभी के एन० एच० 77 के 23 माइल पर जाकर लगी। वहाँ पुलिस की गाड़ी पहले से खड़ी थी उसमें लाशें लादी गईं। फिर उसके बाद उनका क्या हुआ किसी को नहीं मालुम।

उन लोगों ने योजना बनायी थी कि बांध काट दिया जाए तो पानी निकल जायेगा और वे बच जायेंगे। इस तरह से बांध काट दिया गया जिसकी फिर मरम्मत नहीं हुई। यह बांध अभी भी बहुत जगह कटा हुआ है। इधर के कुछ वर्षों में कहीं-कहीं मिट्टी डाली गयी है रोजगार गारन्टी स्कीम में। झगड़ा-झंझट हुआ मगर जगन्नाथ बाबू के प्रयास से हम लोग मामला-मुकद्दमा से बच गए। उन लोगों पर जरूर मुकद्दमा हुआ था और कुछ लोगों को सज़ा भी हुई ही होगी। तब से तटबन्ध कटा हुआ है। बाढ़ की जो भी स्थिति बनती है उसे सब स्वीकार करते हैं। यहाँ तो 11-12 हाथ ऊँचा बांध खड़ा था। पानी पश्चिम में 10 कोस (लगभग 30 किलो मीटर) तक तबाह करता था। उधर के लोग भी क्या करते? जाने वाले तो चले गए अब सभी लोग आपस में कब तक और कितनी दूर तक नफरत ढोते? ब्लॉक ऑफिस दोनों तरफ के लोगों को जाना ही है। हाट-बाज़ार में एक दूसरे से सामना होना ही है। सीतामढ़ी सभी जायेंगे ही। कुछ दिन तनाव चला पर धीरे-धीरे सब सामान्य हो गया।''*

उपसंहार—नदियों के सिर्फ एक ही तरफ बने तटबन्धों ने इस तरह की बहुत सी अप्रिय घटनाओं को जन्म दिया है। जैसी परिस्थितियाँ बन जाती हैं उनमें दोनों पक्षों को अपने विवाद स्थानीय स्तर पर ही सुलझाने पड़ते हैं जिसमें प्रशासन अक्सर मूक भूमिका में रहता है। इंजीनियरों को तो शायद यह सब किस्सा-कहानी ही लगता होगा। परिणाम की चिन्ता किये बगैर कर्म किये जाना कभी-कभी कितना मंहगा पड़ता है, लोहासी-ओइना की घटना उसका एक उदाहरण मात्र है।

* आलेख का यह भाग ग्राम खोंपा के राम बृक्ष प्रसाद तथा खोंपी के फुद्दन शाही और बहुत से ग्रामीणों की मदद से तैयार किया गया।

8

चानपुरा रिंग बांध

8.1 चानपुरा-परिचय

मधुबनी जिला मुख्यालय से बेनीपट्टी होते हुए पुपरी जाने वाले रास्ते पर सोइली और खिरोई नदी के दोआब में बसैठ नाम का एक गाँव पड़ता है। बसैठ में दक्षिण से उत्तर की दिशा में मब्बी (दरभंगा) को मधवापुर से जोड़ने वाली सड़क पार करती है। बसैठ से मधुबनी 36 किलोमीटर तथा बेनीपट्टी 11 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है। बसैठ से मधवापुर जाने वाली सड़क पर लगभग 3 किलोमीटर उत्तर दिशा में जाने पर बायीं तरफ पहला गाँव चानपुरा पड़ता है। चानपुरा एक संपन्न गाँव है। शिक्षित गाँव होने के कारण ऊँचे ओहदे वाले सरकारी अधिकारियों, शिक्षाविदों, इंजीनियरों और डॉक्टरों की एक अच्छी खासी तादाद इस गाँव में है जिस पर किसी भी गाँव वाले को गर्व हो सकता है। यह गाँव मुख्यत: दो भागों में बंटा हुआ है–पूवारी टोल और पछुआरी टोल। इस गाँव के उत्तर और उत्तर-पूर्व में एक बड़ा सा तालाब है जिसे अंगरेजवा पोखर कहते हैं। यह पोखर बहुत पुराना है जिसका निर्माण संभवत: 1896 के दुर्भिक्ष के समय अंग्रेजों ने राहत कार्यों के अधीन करवाया था और इसीलिए इसका नाम अंगरेजवा पोखर पड़ा होगा। इस पोखर के चारों ओर एक ऊँचा बांध या भिण्डा है। यह तालाब भी चानपुरा की ही तरह बसैठ-मधवापुर मार्ग के पश्चिम में पड़ता है।

चानपुरा के पूरब में सोइली धार, पश्चिम में खिरोई नदी, उत्तर में कोकराहा धार तथा दक्षिण में भुड़का नाला बहता है। इस तरह से यह गाँव हर तरफ से किसी न किसी नदी-नाले से घिरा हुआ है। भुड़का नाले के दक्षिण में मकिया और पाली के बीच एक जमींदारी बांध बना हुआ है जिसे कभी दरभंगा महाराजा ने बाढ़ से अपने क्षेत्र की रक्षा के लिए बनवाया होगा। पूरब-पश्चिम दिशा में निर्मित यह बांध आजकल राज्य के जल-संसाधन विभाग के अधीन है। बरसात के मौसम में जब सारी नदियाँ अपने शबाब पर होती हैं तब यही पाली-मकिया वाला बांध उत्तर दिशा से आने वाले पानी की निकासी को छेंक (रोक) दिया करता है और पूरा इलाका लंबे समय तक पानी में डूबा रहता है।

यह क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है। कहते हैं कि आज का बसैठ कभी वसिष्ठ ऋषि का वास स्थल हुआ करता था। पास में शिवनगर के गांडवेश्वर महादेव के मन्दिर के पास महाभारत से पहले अज्ञातवास के समय अर्जुन ने अपना गांडीव छिपा कर रखा था। कहा तो यह भी जाता है कि चानपुरा के पूर्वोत्तर में बसे उचैठ गाँव का संबंध महाकवि कालिदास से रहा है।

8.2 इन्दिरा गांधी के योग गुरु-स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी

ऐसी पृष्ठभूमि के गाँव चानपुरा में भारत की पूर्व प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी के योगगुरु स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का जन्म हुआ था। उनका असली नाम धीरचन्द्र चौधरी था और वे स्वर्गीय बमभोल चौधरी के बेटे थे। 14-15 साल की उम्र में वे गाँव छोड़ कर चले गए थे और लम्बे समय तक उनका कोई अता-पता नहीं लगा था। गाँव और परिवार वालों को यह विश्वास हो चला था कि वे मर गए होंगे। मगर एक बार इसी गाँव के परमाकान्त चौधरी ने, जो पटना के दानापुर कॉलेज के प्रधानाध्यापक थे, नई दिल्ली स्टेशन पर उन्हें देखा और पहचान लिया। गाँव के कुछ लोगों का मानना है कि ब्रह्मचारी जी की पहचान चानपुरा के ही उनके एक बालसखा सदाशिव चौधरी ने की थी। यह 1960 के दशक के अन्त या 1970 के दशक के आरम्भ की घटना रही होगी। जो भी हुआ हो तब तक धीरचन्द्र चौधरी स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी बन चुके थे और उनके शिष्यों में प्रधानमंत्री से लेकर छोटे बड़े बहुत से सामर्थ्यवान लोग और नेता शामिल थे। वे एक स्थापित व्यक्तित्व के स्वामी बन गए थे। धीरे-धीरे ब्रह्मचारी जी का गाँव से

स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी

फिर संपर्क स्थापित हुआ। उस समय उनकी माता जी जीवित थीं और उनके दो भाई भी चानपुरा में रहते थे। संपर्क पुनर्जीवित होने और अपनी मातृभूमि के लिए कुछ कर देने की बलवती इच्छा ने ब्रह्मचारी जी को प्रेरित किया कि वे चानपुरा के दोनों टोलों को घेरते हुए एक रिंग बांध बनवा दें तो चारों ओर नदी-नालों से घिरा उनका यह गाँव हर साल आने वाली बाढ़ के थपेड़ों से बच जायेगा। अपने गाँव में जब उनकी रुचि बढ़ी तो सुनने में आया कि उन्होंने दिल्ली के गोल मार्केट जैसा एक बाजार, सौ शैय्या वाला अस्पताल, एक हेलीपैड और हवाई जहाजों में इस्तेमाल होने वाले पेट्रोल का एक पेट्रोल टैंक भी गाँव में

बनाना चाहा। पेट्रोल टैंक के लिए तो जरूरी साज-सामान गाँव में आ भी गया था जिसके अवशेष अभी भी दिखाई पड़ते हैं। अपने गाँव को उन्नत करने का उनका एक दीर्घकालीन सपना था जिसे पूरा करने की सामर्थ्य भी उनमें थी।

8.3 चानपुरा रिंग बांध की शुरुआत

गाँव के दोनों टोलों को बाढ़ से हमेशा के लिए मुक्ति दिलवाने के लिए ब्रह्मचारी जी ने एक योजना बनवाई जिसमें 8.5 किलोमीटर लम्बा रिंग बांध बनाने का प्रस्ताव किया गया। बिहार के कैबिनेट में 1980 में चानपुरा रिंग बांध की योजना पास हुई। 1981 में सिंचाई विभाग के झंझारपुर डिवीजन को इसके निर्माण कार्य को चालू करने के लिए सूचित किया गया था मगर झंझारपुर डिवीजन ने इस योजना को हाथ में लेने से इसलिए इनकार कर दिया कि उसे अपने यहाँ से चानपुरा की दूरी बहुत ज्यादा लगती थी। तब यह काम दरभंगा डिवीजन के जिम्में सुपुर्द कर दिया गया। यह काम शुरू होते न होते 1982 आ गया जब रिंग बांध के निर्माण के लिए अलाइनमेन्ट तय हुआ और उसी के हिसाब से निर्माण के लिए झंडे गाड़ना शुरू किया गया जिसके अन्दर पूवारी और पछुआरी टोला दोनों ही आते थे।

पछुआरी टोले के एक परिवार की डॉ० जगन्नाथ मिश्र, तत्कालीन मुख्यमंत्री, से नजदीकी रिश्तेदारी थी और अगर ब्रह्मचारी जी द्वारा प्रस्तावित रिंग बांध से गाँव को घेर लिया जाता तो न सिर्फ उनकी जमीन का एक बड़ा हिस्सा बांध में चला जाता वरन यह बांध उनकी जमीन के दो टुकड़े भी कर देता। इसलिए इस परिवार का इस बांध के निर्माण से स्वाभाविक विरोध था। यह बांध बहुत से दूसरे ऐसे लोगों की जमीन से भी गुजरता था जो अपनी जमीन छोड़ना नहीं चाहते थे। उन्होंने पटना और दिल्ली में कोशिश-पैरवी कर के रिंग बांध का अलाइनमेन्ट बदलवा दिया। उन्होंने सुझाव दिया कि अगर रिंग बांध बनना ही है तो वह पूवारी टोल को ही घेरता हुआ बने। पछुवारी टोल को घेरने की जरूरत नहीं है। इस तरह से ब्रह्मचारी जी द्वारा प्रस्तावित पहला बांध मात्र प्रस्ताव ही बन कर रह गया। उस पर कोई काम नहीं हुआ।

8.4 बांध पर काम शुरू हुआ-पारस्परिक मतभेद भी सामने आया

इस गाँव में पहले से ही एक जमींदारी बांध हुआ करता था जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। जमींदारी टूटने के बाद यह बांध बिहार सरकार के रेवेन्यू विभाग के हाथ में चला गया। यह खस्ता हालत में था। तय हुआ कि इस जमींदारी बांध को (जो कि चित्र में BA और H होता हुआ MN तक जाता था उसे) बढ़ा कर DCG होते हुए B में वापस मिला दिया जाय। इस रिंग बांध के निर्माण से चानपुरा के पूवारी टोल का अधिकांश भाग बाढ़ से सुरक्षित हो जाता था। यह एक अलग बात है भविष्य में सुरक्षा मिलने के बावजूद जिन लोगों की जमीन से यह बांध गुजरना था वे खुश नहीं रहते हुए भी खामोश थे क्योंकि ब्रह्मचारी जी की सामर्थ्य और इच्छा के सामने उनकी इच्छाएं बौनी पड़ती थीं। इस रिंग बांध का निर्माण इस खुशी और कशमकश के बीच लगभग पूरा हो चला था कि गाँव के कुछ लोगों ने ब्रह्मचारी जी के यहाँ गुहार लगायी कि अगर बांध का काम यथावत् पूरा कर लिया गया तो पूवारी टोल के दक्षिण में न सिर्फ भुड़का नाले के किनारे बन रहा संस्कृत कॉलेज रिंग बांध के बाहर पड़ जाने के कारण असुरक्षित हो जायेगा वरन पूवारी टोल के पश्चिम और उत्तर में स्थित जमीन भी असुरक्षित रह जायेगी। अत: रिंग बांध का निर्माण इस तरह से किया जाए कि संस्कृत कॉलेज भी रिंग के अन्दर हो जाए और बकिया जमीन की भी रक्षा हो जाए। ब्रह्मचारी जी इस बात को मान गए और तब रिंग बांध की तीसरी डिजाइन बनी जिसे चित्र में AHMNDFEA से

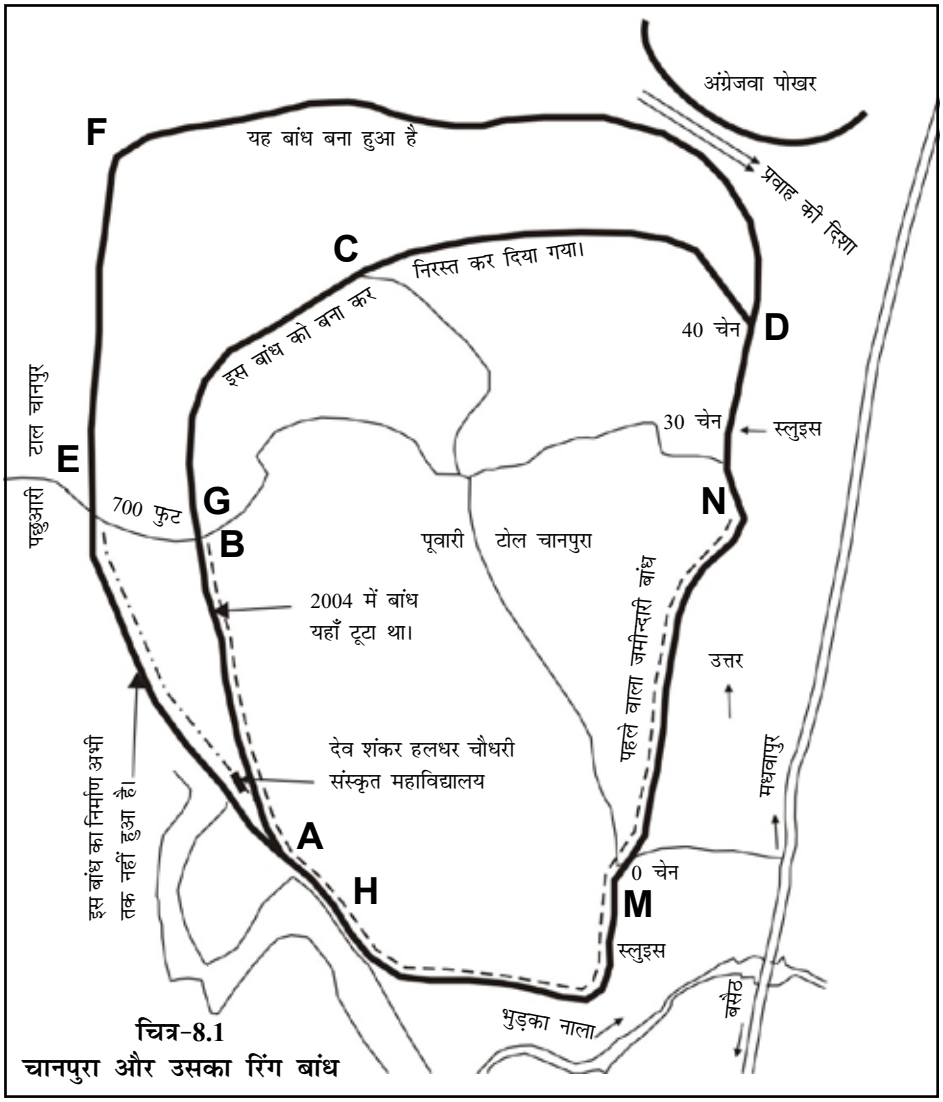

चित्र-8.1
चानपुरा और उसका रिंग बांध

दिखाया गया है। इस बांध की लम्बाई प्राय: 7 किलोमीटर थी। यह बांध पहले वाले बांध से काफी हट कर बनाया जाने वाला था। इसकी वजह से नये रिंग बांध और अंगरेजवा पोखर के बीच का फासला कम हो रहा था और उस गैप से होकर पानी की निकासी में बाधा पड़ने वाली थी तथा पश्चिम में रजवा नाला और नये बांध के बीच की दूरी कम पड़ने के कारण पछुआरी टोल की दुर्गति का अंदेशा वहाँ के बाशिन्दों को होने लगा था। अब जो नया और तीसरा अलाइनमेन्ट बना उससे भी लोग खुश नहीं थे। बांध बनना तो जमीन पर ही था और जिसकी जमीन बांध में जाने वाली थी उसके कान खड़े हुए। जो लोग बांध के बाहर पड़ने वाले थे उनके ऊपर से होकर धौस नदी का सारा पानी गुजरने वाला था। इन लोगों को लगा कि वे तो बाल-बच्चों समेत सीधे समुद्र में चले जायेंगे। इन लोगों ने इस नये अलाइनमेन्ट का विरोध करना शुरू किया और धीरे-धीरे यह विरोध उग्र होना शुरू हुआ। हालत यह थी कि एक ओर से रिंग बांध के निर्माण के लिए डिवीज़न के इंजीनियरों की तरफ से बाँस और झंडा गाड़ा जाता था तो दूसरी ओर गांव वाले उसे पीछे से उखाड़ते चलते थे। जिस जगह से बांध गांव को छूने लगता है वहाँ से अगर पूरब और पश्चिम के दोनों टोलों को घेर दिया जाता तो झगड़ा ही खत्म था। मगर इस बांध को लेकर रिंग बांध के अन्दर और उसके बाहर पड़ने वालों के खेमें अलग हो गए और दोनों पक्ष कई बार शक्ति प्रदर्शन के लिए आमने-सामने आये मगर कभी आपस में कोई अप्रिय घटना नहीं हुई यद्यपि किसी भी परिस्थिति से निबटने की तैयारी दोनों तरफ से थी।

8.5 इंजीनियरों का किसी की इच्छा-अनिच्छा से वास्ता नहीं होता

चानपुरा रिंग बांध का निर्माण बिहार के सिंचाई विभाग के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर कामेश्वर झा के अधीन हुआ था। वे बाद में बिहार के जल संसाधन विभाग के मुख्य अभियंता होकर रिटायर हुए। उनका कहना है, ''...ब्रह्मचारी जी चौधरी टोला के रहने वाले थे और काफी ताकतवर आदमी थे। उनकी इच्छा हुई कि गाँव को सुरक्षित किया जाए तो वह तो होना ही था। यह इलाका उस समय हमारे कार्य क्षेत्र में नहीं आता था। हम लोग इंजीनियरिंग डिपार्टमेन्ट में काम करते हैं और हमारा राजनीति या किसी की इच्छा-अनिच्छा से वास्ता नहीं होता। अप्रूवल दे दीजिये, बजट दे दीजिये, हम काम करवा देंगे। हम से यही अपेक्षा है। उस समय टी० पी० पाण्डेय सुपरिन्टेडिंग इंजीनियर थे। मैं चाहता था कि यह काम जयनगर डिवीजन ही करे क्योंकि चानपुरा के कई घरों में मेरी रिश्तेदारियाँ थीं और

कामेश्वर झा

मैं खुद रिंग बांध के अन्दर-बाहर के इस झमेले में नहीं पड़ना चाहता था। लेकिन पाण्डेय जी का मुझ पर दबाव था कि मेरा डिवीज़न ही वह काम करे। पहले एक एम्बैकमेन्ट कुछ दूर तक बना तो गाँव वालों ने ऐतराज किया कि उनका कुछ हिस्सा छूट गया है। अब एम्बैन्कमेन्ट का अलाइनमेन्ट बदलेगा तो जो काम हो चुका है उसका खर्च किस खाते में जायेगा? हमने कहा कि नये अलाइनमेन्ट का अप्रूवल और बजट हम को दे दीजिये, हम नया बना देंगे। ब्रह्मचारी जी के प्रभाव से अलाइनमेन्ट भी बदल गया और अप्रूवल भी मिल गया। गाँव में कुछ विरोध हुआ। जगन्नाथ मिश्र मुख्यमंत्री थे। सचिवालय में बैठक हुई जिसमें अभियंता प्रमुख नीलेन्दु सान्याल और दानापुर कॉलेज के तत्कालीन प्रिंसिपल परमाकान्त चौधरी भी मौजूद थे। पश्चिम वाले टोले की तो कोई सुनता ही नहीं था। हमको हिदायत हुई कि ब्रह्मचारी जी जो कहलवाते हैं वह करते जाइये। विवाद बढ़ता गया। विरोध इतना बढ़ा कि बात राजीव गांधी तक पहुँची और उन्होंने तारिक अनवर और दो अन्य लोगों को जाँच के लिए भेजा। इसी बीच सकरी में विभाग की एक मीटिंग हुई। उस समय उमेश्वर प्रसाद वर्मा सिंचाई मंत्री थे। इस बांध को लेकर विवाद इतना बढ़ गया था कि उन्होंने उस मीटिंग में मेरी तरफ इशारा कर के कहा कि आप ने ऐसा झंझट पैदा कर दिया है कि हम लोगों की कुर्सी छिन जायेगी। इस पर हमारे चीफ इंजीनियर एच० पी० सिन्हा का कहना था कि अगर मंत्री जी उनके एक्जीक्यूटिव इंजीनियर के बारे में यही राय रखते हैं तो इस काम को किसी दूसरे चीफ इंजीनियर के अधीन करवा दिया जाय। उन्होंने पश्चिमी कोसी नहर के मुख्य अभियंता अब्दुस समद साहब का नाम भी सुझाया था। मैंने भी मंत्री जी को कहा कि मेरी इस काम में कोई दिलचस्पी नहीं है और यह काम मैं निर्विकार भाव से कर रहा हूँ। मैं व्यक्तिगत तौर पर दरभंगा रहना पसन्द करूंगा। तब उन्होंने रुख बदला और कहा कि काम तो आप ही को करना पड़ेगा पर आप मुझे सीधे रिपोर्ट कीजिये। हो सकता है मुख्यमंत्री ने उन्हें यही हिदायत दी हो। हम लोगों ने जहाँ छोड़ दिया उसका काम वहीं पड़ा हुआ है। जो भी हो पूरे काम में किसी भी पक्ष का इंजीनियरों से कोई उलझाव नहीं हुआ था, हम लोग भी अपने काम से ही मतलब रखते थे।''[1]

किसी भी निर्माण कार्य के सामाजिक सरोकार से अपनी पेशेगत प्रतिबद्धताओं के कारण इंजीनियर उसी तरह निर्विकार रह सकते हैं जैसे डॉक्टर अपने मरीजों के साथ और वकील अपने मुवक्किलों के साथ किसी भावनात्मक लगाव में नहीं पड़ते। समाजकर्मियों या राजनीतिज्ञों से समाज इस तरह की अपेक्षाएं नहीं रखता और ऐसी विवादास्पद परिस्थितियों में या तो नेतृत्व का जन्म होता है या नेतृत्व के शून्य को भरने के लिए किसी व्यक्ति का उदय होता है। चानपुरा में इस शून्य को भरने के लिए स्थानीय विधायक युगेश्वर झा आगे आये।

8.6 नेतृत्व मिला मगर टिकने नहीं दिया गया

मधवापुर प्रखंड के बासुकी बिहारी गाँव के युगेश्वर झा यहाँ के विधायक थे और कांग्रेस पार्टी के कार्यकर्ता होने के साथ-साथ मुजफ्फरपुर के लंगट सिंह कॉलेज में भौतिक विज्ञान के प्राध्यापक भी थे। वे परिस्थितियों से कभी भी समझौता न करने वाले कर्मठ समाजकर्मी थे और उनके प्रखर विरोधी भी उनकी लगन, मेहनत और ईमानदारी की दाद देते थे। युगेश्वर झा ने पछुआरी टोले वालों की तरफ से रिंग बांध के विरोध

देवचन्द्र चौधरी

का नेतृत्व संभाला और एक आन्दोलन खड़ा कर दिया। पछुआरी टोल के देवचन्द्र चौधरी बताते हैं, ''...ब्रह्मचारी जी को इस बात की खबर लगी कि युगेश्वर झा बांध के निर्माण में टांग अड़ा रहे हैं और उनके ऊपर डॉ० जगन्नाथ मिश्र का हाथ है। उनका इन्दिरा गाँधी को सुझाव था कि सारी समस्या की जड़ युगेश्वर झा हैं और उन को यहाँ से हटा दिया जाए तो समस्या का समाधान हो जायेगा और रिंग बांध का निर्माण निर्विघ्न रूप से पूरा हो जायेगा। तब युगेश्वर झा को जिला बदर कर दिया गया और आन्दोलन नेतृत्व विहीन हो गया। जब चानपुरा का रिंग बांध बनने लगा तो हम लोगों ने उसका विरोध किया। मेरी उम्र उस समय सिर्फ 15-16 साल रही होगी। ठेकेदार के आदमियों से मेरा झगड़ा हो गया और मैंने उनका फीता काट दिया। नौबत पहले झगड़ा-झंझट और बाद में मार-पीट तक पहुँची। उसने रिपोर्ट लिखायी और पुलिस मुझे पकड़ कर ले गयी और जेल में बन्द कर दिया। मुझे जेल से छुड़ाने के क्रम में गाँव के लोग गोलबन्द हो गए और वहीं से रिंग बांध का सामूहिक विरोध शुरू हुआ।''[2]

8.7 मुकाबला शुरू

इसके बाद का घटनाक्रम बताते हैं पछुआरी टोल निवासी (अब मुजफ्फरपुर) प्रो० सतीश चन्द्र झा जो युगेश्वर झा के बचपन के सहपाठी और अभिन्न मित्र हैं। वे कहते हैं, ''...जब यह निश्चित हो गया कि युगेश्वर झा को वहाँ से हटना ही पड़ेगा तब उन्होंने डॉ० जगन्नाथ मिश्र से मंत्रणा की और तब यह तय हुआ कि आन्दोलन का नेतृत्व सतीश चन्द्र झा संभालेंगे। उन दिनों यहाँ शिक्षकों का भी एक आन्दोलन चल रहा था और मैं उसी सिलसिले में मुजफ्फरपुर जेल में बन्द था। युगेश्वर झा मुझसे मिलने जेल आये और कहा कि अगर आप आन्दोलन की कमान नहीं संभालेंगे तो यह रिंग बांध बन जायेगा। बहुत से लोग तबाह-बरबाद हो जायेंगे और धीरेन्द्र ब्रह्मचारी की जीत होगी। मैं बड़े लोगों की राजनीति में फंसा। आठ रुपया चालीस पैसा जमा करवा कर रात में मेरा डाक्टरी परीक्षण करवाया गया और मैं पैरोल पर जेल से रिहा होकर बाहर निकल आया और गाँव पहुँच गया।

यहाँ से युगेश्वर झा की गैर-मौजूदगी में जन-आन्दोलन की शुरुआत हुई क्योंकि रिंग बांध बन जाने से पहले से ही बदहाल जल-निकासी और भी बुरी हालत में पहुँचने वाली थी। इस रिंग बांध का असर नेपाल सीमा पर रातो नदी तक पड़ने वाला था। पचासों गाँव पर बाढ़ का खतरा मंडराने लगा था। हुआ यह कि अंगरेजवा पोखर के जमीन्दारी बांध के पास जब चानपुरा रिंग बांध का अलाइनमेन्ट दिया जाने लगा तभी यह समझ में आने लगा कि कोकराहा धार के पानी को इस सँकरे गैप से निकलने में मुश्किल होगी और यह पानी वापस खिरोई की ओर मुड़ेगा और पछुआरी टोल समेत बहुत से गाँवों को तबाह करेगा। यह आशंका बाद में सच निकली क्योंकि पानी की आमद बढ़ने से खिरोई नदी का तटबन्ध टूटने लगा और बर्री, पिलोखर, चौगामा, शुजातपुर और अवारी आदि गाँव तबाह होने लगे। हम लोगों ने एक ग्राम सुरक्षा संघर्ष समिति बनायी। पछुआरी टोल के दु:ख हरण चौधरी इसके महामंत्री थे और मुझे अध्यक्ष बनाया गया। हम लोगों ने इन सभी गाँवों में सघन सम्पर्क कर बताया कि अगर चानपुरा रिंग बांध बन गया तो पश्चिम के गाँव तबाही के कगार पर पहुँच जायेंगे। मामला रंग लाया और मीडिया की रुचि इस पूरी वारदात में जगी। ब्लिट्ज़ के बी० के० करंजिया तीन दिन हमारे गाँव में आकर रुके थे। विकास कुमार झा ने भी काफी कुछ लिखा। भोगेन्द्र झा, एम०पी० लगभग एक सप्ताह मेरे घर में रहे। हमारा मुकाबला धीरेन्द्र

प्रो० सतीश चन्द्र झा अपनी पत्नी श्रीमती मोहनी झा के साथ

ब्रह्मचारी जैसे समर्थ व्यक्ति से था। इसलिए मामले की पब्लिसिटी भी खूब हुई। सारा जमावड़ा मेरे घर पर और मैं खर्चे से तबाह था। मेरी पत्नी का सारा समय रसोई में और मेहमानों की देख-भाल में गुज़रता था। लगभग उसी समय बिहार के पूर्व एडवोकेट जनरल और वर्तमान सभापति-बिहार विधान परिषद, ताराकान्त झा के बेटे के यज्ञोपवीत संस्कार में अटल बिहारी वाजपेयी पड़ोस के उनके गाँव शिवनगर आये हुए थे। हमारे गाँव के एक बुजुर्ग रघुवंश झा वाजपेयी जी से मिलने गए और उन्हें सारी व्यथा-कथा सुनायी। वाजपेयी जी ने ताराकान्त जी से कहा कि पचास गाँवों का मामला है, आप इनकी तरफ से हाइकोर्ट में पैरवी कर दीजिये। यह लोग कहाँ से पैसा लायेंगे? तारा बाबू राजी हो गए। उधर मुकद्दमा चलता था और इधर आन्दोलन। महिलाएं तक जेल गईं। सरकार ने विरोध को दबाने के लिए केन्द्रीय रिजर्व पुलिस उतार

रखी थी। मुख्यमंत्री डॉ० मिश्र पर बहुत दबाव था। उन्हें मजबूरन धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का पक्ष लेना पड़ा क्योंकि इसके अलावा उनके पास कोई चारा ही नहीं था।''[13]

यह सुनने में बड़ा ही विचित्र लगता है कि 30 लाख रुपये मात्र के किसी काम के पीछे राज्य का मुख्यमंत्री किसी दबाव में आ जाए पर चानपुरा रिंग बांध ने कुछ इसी तरह की परिस्थितियाँ निर्मित कर दी थीं। लेखक ने डॉ० मिश्र से बात करके उनका मंतव्य जानना चाहा। उन्होंने जो कुछ बताया वे शब्दशः यहाँ उद्धृत किया जाता है–

''यह सच है कि युगेश्वर झा मेरे बहुत नजदीक थे और चानपुरा संबंधी पूरे मसले पर मैं उनसे सलाह लेता था। यह पूरी घटना व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए बहुत ही उलझन और किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति पैदा करने वाली थी। ब्रह्मचारी जी का जर्बदस्त दबदबा था और अब अन्दरूनी बात क्या थी वह तो मेरे लिए कह पाना मुश्किल है मगर इन्दिरा जी के यहाँ उनका आना-जाना और उठना-बैठना तो निश्चित रूप से था। इसका एक मनोवैज्ञानिक दबाव मेरे ऊपर था। लेकिन मेरी प्रतिबद्धताएं जन-हित के साथ थीं और उसका प्रतिनिधित्व युगेश्वर झा कर रहे थे और मानसिक रूप से राज्य सरकार उनका समर्थन कर रही

डॉ० जगन्नाथ मिश्र

थी। इस वजह से ब्रह्मचारी जी को हो सकता है मुझसे नाराजगी रही हो और इस घटना के विरोध को मेरे खिलाफ इस्तेमाल किया गया हो। पर इसमें कोई दो राय नहीं है कि मैं युगेश्वर झा का समर्थन कर रहा था और यही समग्रता में जन-हित में था। यह लगभग तीस साल पुरानी घटना है और बहुत कुछ घटनाएं मुझे अब याद नहीं है और अब वहाँ क्या स्थिति है यह भी मुझे नहीं मालूम। एक बात और कि दिल्ली से लेकर पटना तक आई०ए०एस० अधिकारियों की एक बहुत ही मजबूत लॉबी है और यह लोग इंजीनियरिंग मामलों समेत लगभग सारे मसलों में बहुत हस्तक्षेप करते हैं जो कि नहीं होना चाहिये, मगर होता है। जिनके पास पॉवर होती है उसे सब चीजों की जानकारी हो, यह तो जरूरी नहीं है। जानकारी के लिए पॉवर का इस्तेमाल हो सकता है मगर पॉवर जानकारी नहीं हो सकती। ज्ञान का उपयोग होना चाहिये और यह ज्ञान उसी के पास से आना चाहिये जो ज्ञानी हो।''[14]

8.8 आन्दोलन और कानूनी लड़ाई साथ-साथ

जब इस नये रिंग बांध का काम लगभग 12 आना पूरा हो गया तब उसका विरोध शुरू हुआ। इस बीच रिंग बांध के समर्थक और विरोधी दोनों ही ब्रह्मचारी जी से अपनी-अपनी तकलीफें बताने के लिए संपर्क करते रहे और ब्रह्मचारी जी सभी को तसल्ली देते रहे कि वह किसी का अहित नहीं होने देंगे। पछुआरी टोल से 76 वर्षीय द्वारका नाथ चौधरी बताते हैं, ''...हमारे गाँव के एक बुजुर्ग चले गए ब्रह्मचारी जी के पास दिल्ली यह कहने के लिए अगर यह बांध पूरा हो गया तो उनकी जगह-जमीन पूरी तरह बरबाद हो जायेगी। ब्रह्मचारी जी ने उन्हें आश्वासन दिया कि जब आप आ गए हैं तो आपका काम हो जायेगा। फिर ब्रह्मचारी जी ने बांध का तीसरा हवाई सर्वेक्षण किया। तब फिर तीसरी योजना बनी। इसमें भी हम लोगों की जमीन जाती थी और हमें कोई फायदा नहीं होना था। तब हमने और दुःखहरण चौधरी ने बांध के खिलाफ मुकद्दमा दायर किया और हमारी तरफ से ताराकान्त झा ने वकालत की। जब यह मामला दायर हुआ तो दिल्ली से ब्रह्मचारी जी का फोन आया कि किसी तरह की चिन्ता मत कीजिये और जैसा आप चाहते हैं वैसा ही होगा। आप लोग दिल्ली आइये। हमने भी सोचा कि जहाँ नाखून से काम चलता हो वहाँ तलवार क्यों चलायें। मैंने दुःखहरण बाबू से कहा कि चलिये, दिल्ली चलते हैं। इस बीच ब्रह्मचारी जी ने हम दोनों के लिए हवाई जहाज का टिकट भिजवा दिया। हमें वहाँ ब्रह्मचारी जी के आश्रम विश्वायतन में बहुत अच्छे कमरे में रखा गया था मगर न तो वहाँ हम लोगों ने कभी भर पेट खाना खाया, न पूरी नींद सोये और न ही कमरे में रहते हुए आपस में कोई बात-चीत की। दुःखहरण बाबू कुछ बोलने को होते थे तो मैं रोक देता था कि पता नहीं कमरे में हमारी बातें रिकार्ड करने की व्यवस्था कर दी गयी होगी तो हम लोग मुसीबत में पड़ जायेंगे। मैं भी बोलने को होता था तो दुःखहरण बाबू रोक देते थे। हम लोगों को बात करनी होती थी तो कमरे से बाहर चले जाते थे। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद जब हम लोगों ने जाने की बात कही तब ब्रह्मचारी जी का बुलावा आया बात-चीत के लिए। दुःखहरण बाबू जाने के लिए तैयार थे मगर मुझे डर लगता था। फिर भी जाना तो था ही। गए, मगर जहाँ प्रतीक्षा करनी थी वहाँ हमसे भी डेढ़ हाथ ऊँचे जवान 5 मिनट बाद आकर हमारे अगल-बगल में खड़े हो गए। हमको मृत्यु का स्मरण हो गया। दुःखहरण बाबू कुछ ऊँचा सुनते थे। वे शायद इस स्थिति से खुश नहीं थे और कुछ कहना चाहते थे मगर मैंने उनका हाथ दबा दिया। फिर हिम्मत जुटा कर मैंने ब्रह्मचारी जी से कहा कि आप ने तो गांव का हवाई सर्वेक्षण किया, जमीन पर तो उतरे नहीं कि हम लोग सारी परिस्थिति आप को समझा पाते। यह सच है कि अगर यह बांध जैसा बन रहा है वैसा ही बन गया तो पछुआरी टोल बरबाद हो जायेगा। हम ने उनको याद दिलाया कि उन्हीं के परिवार के सौजन्य से हम लोग चानपुरा बसने के लिए आये थे और अगर उसी परिवार के कारण हम लोग उजड़ जायेंगे तो यह अच्छा तो नहीं ही होगा। वैसे आप जो चाहेंगे वही होगा। अगर आप की कृपा होगी तो हमारा पुनर्वास हो जायेगा और आप रूठ जायेंगे तो हम तो आप को गांव भी नहीं ले जा सकेंगे। उन्होंने आश्वासन दिया कि सब कुछ ठीक हो जायेगा। हम लोग लौट कर आये तो यहाँ काम चालू था। कोई 2000 लोग विरोध में खड़े थे। हम लोग ब्रह्मचारी जी का रुतबा देख कर आये थे। इसलिए हमने सबको समझाने की कोशिश की कि ब्रह्मचारी जी से झंझट कर के पार नहीं पाइयेगा। दरभंगा जिले का पूरा प्रशासन एक तरफ और अकेले ब्रह्मचारी जी दूसरी तरफ–फिर भी उनका पलड़ा भारी रहेगा। अब जो हो रहा है, होने दीजिये। फिर भी लोग माने नहीं। पछुआरी टोल और आस-पास के प्रभावित होने वाले गाँवों की लगभग 5,000 महिलाओं को आगे कर के प्रदर्शन जारी रहा तो पता नहीं कहाँ

द्वारका नाथ चौधरी

से महिला पुलिस भारी तादाद में उतार दी गयी। पुलिस के जवान भी जो लगाये गए वे किसी भी मायने में बिहार पुलिस के नहीं लगते थे। अब औरतों को बाल पकड़ कर खींचा जाने लगा और आदमियों के सीने पर संगीनें तनी तो पूरा विरोध बिखर गया। बहुत से लोगों को पकड़ कर मधुबनी की सब-डिवीजन जेल में बन्द कर दिया गया। कुछ लोगों को यहाँ से उठा कर दूर-दराज इलाकों में रास्ते में कहीं-कहीं छोड़ दिया। यह लोग बाद में किसी तरह तीन-चार दिन में अपने गाँव लौटे। आस-पास के गांव जैसे धनुखी, फुलबरिया, बर्री, माधोपुर आदि 15-20 गांवों के लोग हम लोगों के साथ शामिल थे। जेल भरने का सिलसिला कई दिन चला मगर हमारा विरोध बहुत बड़ी ताकत से था।

हम लोगों की अपेक्षा बस इतनी ही थी कि बांध अगर बनता तो इसमें पछुआरी टोल को भी शामिल कर लिया जाए, इससे सबकी सुरक्षा हो जायेगी। बांध का विरोध नहीं था।''[5]

ब्रह्मचारी जी ने जिस किसी को जो भी आश्वासन दिया हो पर चानपुरा में रिंग बांध के निर्माण की खबरें और उसको लेकर उभरा विरोध भी चर्चा में कम नहीं था। बिहार से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र इस मसले को समय-समय पर उठाते रहे। ''भारतीय जनता पार्टी के बिहार प्रशाखा के उपाध्यक्ष पं० ताराकान्त झा, ऐडवोकेट ने श्री धीरेन्द्र ब्रह्मचारी के जन्मस्थान चानपुरा गाँव में बनने वाले रिंग बांध से उत्पन्न होने वाली गंभीर समस्याओं के प्रति राज्य सरकार को आगाह किया। उन्होंने कहा कि चानपुरा पूरबी टोल को छोड़ कर पश्चिम टोला, धनुखी, माधोपुर, बिशनपुर, तरैया, शुजातपुर आदि गाँवों के लोग इस बांध से आतंकित थे। पंडित झा ने आरोप लगाया कि 22 लाख रुपये के खर्च से एक गाँव को बाढ़ से बचाने की योजना बनाते समय राज्य सरकार द्वारा अन्य गाँवों की सुरक्षा पर जरा भी ध्यान नहीं दिया गया है।''[6]

8.9 विधान सभा और विधान परिषद् में गर्मा-गर्म बहस

यह सवाल बिहार विधान परिषद में भी उठा। 7 जुलाई 1982 को विधान परिषद में लाये गए एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव में कृपानाथ पाठक ने कहा, ''...बेनीपट्टी अनुमंडल के बसैठ-चानपुरा के पूर्वी टोला की बाढ़ सुरक्षा के लिए सिंचाई विभाग द्वारा 32 लाख रुपये की लागत से विशालकाय तटबन्ध के कार्य प्रारम्भ करने से हजारों-हजार परिवारों के समाने जान-माल का खतरा उत्पन्न हो गया है क्योंकि अधवारा ग्रुप की अनेक नदियों का बहाव इस बांध के द्वारा बिलकुल ही रोक दिया गया है। सुरसरिया और मुकरा के बेड को बिलकुल बांधकर इसके बहाव को अवरुद्ध किया जा रहा है। बिना पानी के निकास की योजना बनाये मात्र एक छोटा गांव बचाने के लिए सरकार ने अन्य इलाकों के सैकड़ों गांवों में बसने वाले आम नागरिकों के सामने जिन्दगी के अस्तित्व पर भयंकर खतरा उत्पन्न कर दिया है। ...उक्त बांध से दरभंगा-बसैठ-मधवापुर तथा मधुबनी-बसैठ-पुपरी-सीतामढ़ी लोकनिर्माण पथ जो वहाँ के नागरिकों का एक मात्र पथ है, जलमग्न होकर नष्ट हो जायेगा। खिरोई तटबन्ध जो एग्रोपट्टी से दरभंगा तक बाढ़ सुरक्षा का तटबन्ध है जो उक्त तटबन्ध बनने से पूर्णतया टूट जायेगा। फलस्वरूप सैकड़ों गांवों के लोग पानी में बहकर दुनियां से चले जायेंगे और बेघरबार हो जायेंगे। ...सबसे आश्चर्य की बात है कि तटबन्ध निर्माण के लिए सरकार जबरन, बिना मुआवजा दिये हुए असंवैधानिक तरीके से सशस्त्र पुलिस तैनात कर किसानों की हजारों एकड़ जमीन पर तटबन्ध का निर्माण कर रही है। ...उक्त तटबन्ध योजना की तकनीकी स्वीकृति भी प्राप्त नहीं है और न उक्त योजना को गजट में ही प्रकाशित किया गया है। ...उक्त अलोक-कल्याणकारी हजारों-हजार घर-बार को बेघर कर बीच मंझधार में डुबा देने वाली योजना के विरुद्ध वहाँ के हजारों-हजार नर-नारियों (बच्चे, बूढ़े, मर्द, औरत) ने 25 मई 1982 से ही अपने जीवन मरण की लड़ाई छेड़ दी है। भयावह जन-आक्रोश के फलस्वरूप उत्पन्न परिस्थिति को देखते हुए कुछ समय के लिए काम रोक दिया गया था। लेकिन पुनः उक्त कार्य को सशस्त्र पुलिस के द्वारा बन्दूक की नोक पर करवाया जा रहा है। प्रदर्शन, धरना, सत्याग्रह, घेराव, सर्वदलीय विरोध उसके विरुद्ध जारी है। लेकिन सरकार बच्चे, बूढ़े, बूढ़ी औरतों पर लाठी चार्ज, अश्रु गैस का प्रयोग कर उक्त विनाश लीला के उक्त कार्य को करते रहने में गर्व का अनुभव करती है। ...इस तरह के अलोकतांत्रिक, अलोक-कल्याणकारी, जन-विरोधी और अमानवीय कार्य करवाने के लिए प्रशासन के निर्णय और कठोर व्यवहार से लोगों के जन-जीवन में आक्रोश, क्षोम, भय एवं असंतोष व्याप्त हो गया है। किसी भी क्षण विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। यदि उक्त कार्य को तत्काल बन्द नहीं किया गया तो जन-जीवन अस्त-व्यस्त होने के साथ-साथ कानून-व्यवस्था की स्थिति बिगड़ने की संभावना है।''[7]

इस ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर सरकार को 20 जुलाई 1982 के दिन जवाब देना था मगर लगता है कि ब्रह्मचारी जी के प्रभाव के कारण सरकार परिषद् में किसी भी बहस से बचना चाहती थी। इस बीच दुःखहरण चौधरी ने बांध के निर्माण के विरुद्ध पटना हाईकोर्ट में सरकार पर मुकद्दमा दायर कर दिया हुआ था। इस मुकद्दमे की अपील का वास्ता देकर कि अब मामला न्यायालय के विचाराधीन है अतः इस पर विधान परिषद में बहस नहीं होनी चाहिये, सरकार बहस से बच निकलना चाहती थी। सदन में त्रिपुरारी प्रसाद सिंह का मानना था, ''...जितने भी कॉल अटेन्शन आते हैं वे चोरी, डकैती, हत्या, रपट आदि किसी न किसी मामलों से सम्बन्धित रहते हैं। हाइकोर्ट में केस किया गया है लेकिन हाइकोर्ट ने अभी तो सुना ही नहीं है, न उस केस का

अभी ऐडमिशन ही हुआ है। हाइकोर्ट ने कोई निषेधाज्ञा नहीं जारी की है। यह अब तो सदन की प्रापर्टी है। ये ब्रह्मचारी जी के डर से भाग रहे हैं। मुख्यमंत्री के रिश्तेदार तो जेल में चले गए हैं, फिर भी ब्रह्मचारी जी की बात मानते चले जाइये।''[8]

सदस्यों की मांग थी कि सरकार बांध निर्माण बन्द करने के लिए निषेधाज्ञा लगाये। पद्मदेव नारायण शर्मा ने स्पष्ट शब्दों में कहा, ''...मैं आप से निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि आप इसे स्थगित करना चाहते हैं तो आप आज ही निषेधाज्ञा जारी कीजिये कि सिंचाई विभाग द्वारा बसैठ चानपुरा गांव के पूर्वी टोला में बाढ़ सुरक्षा के नाम पर बनाये जा रहे तटबन्ध पर कोई काम नहीं होगा। यदि आप ऐसा नहीं कीजियेगा तो वहाँ के किसानों की सैकड़ों एकड़ जमीन बांध में चली जायेगी और बाढ़ से जान-माल का खतरा उत्पन्न हो जायेगा।''[9] जबकि सभापति का मानना था कि ''पहले जांच लूंगा इसके बाद ही निषेधाज्ञा जारी की जा सकती है।''[10]

उधर बिहार विधान सभा में भी इन्दर सिंह नामधारी ने चानपुरा में बनने वाले रिंग बांध के विरोध में एक कार्य स्थगन प्रस्ताव रखा और कहा, ''...धर्मेन्द्र (धीरेन्द्र)-ले. ब्रह्मचारी जो दिल्ली में षड्यंत्र कर रहा था वह धीरेन्द्र ब्रह्मचारी अब बिहार में षड्यंत्र कर रहा है। ...मैं डॉ० जगन्नाथ मिश्रा से कहता हूँ कि इस धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी को तुरंत बिहार से दिल्ली षड्यंत्र करने के लिए भेज दीजिये। मधुबनी जिले के चानपुरा में रिंग बांध पर 45 लाख रुपये खर्च किये जा रहे हैं। इस रिंग बांध की वहाँ क्या जरूरत थी, क्या वह पैसा श्रीमती इन्दिरा गांधी के कोष का है या बिहार की जनता का है? इस तरह बिहार में पैसे पानी की तरह बहाये जा रहे हैं।''[11]

इस स्थगन प्रस्ताव पर अध्यक्ष राधानन्दन झा की टिप्पणी थी कि चानपुरा में रिंग बांध का काम पिछले तीन महीनों से चल रहा है और यह कोई आपात स्थिति नहीं है कि उस पर विचार हो। अध्यक्ष की इस व्यवस्था पर भारतीय जनता पार्टी के सदस्य सदन छोड़ कर बाहर चले गए। सरकार ने जरूर यह आश्वासन दिया कि वह 30 जुलाई 1982 को इस विषय पर वक्तव्य देगी। दुर्भाग्यवश सरकार का यह बयान बिहार विधान सभा पुस्तकालय के संग्रह में या दूसरी जगह उपलब्ध नहीं है।

8.10 बात राजीव गांधी तक पहुँची

जहाँ इन वैधानिक संस्थाओं में इस मुद्दे पर बहस तेज़ थी वहीं चानपुरा पुलिस छावनी में तबदील हो गया था। रोज़ धर पकड़ और स्थानीय लोगों का जेल आना-जाना लगा रहा। 23 जुलाई 1982 को सतीश चन्द्र झा ने प्रेस विज्ञाप्ति जारी कर के करीब सौ लोगों की गिरफ्तारी की सूचना दी।[12] इस बीच घटनाक्रम तेजी से बदला जिसके बारे में फिर बताते हैं सतीश चन्द्र झा। उनका कहना है, ''...एक दिन मुझे युगेश्वर झा का फोन आया कि राजीव गांधी गुवाहाटी जाते समय कुछ समय के लिए पटना हवाई अड्डे पर रुकेंगे क्योंकि वहाँ उनके जहाज में ईंधन भरा जायेगा। उन्होंने मुझे कुछ लोगों के साथ हवाई अड्डे पर मौजूद रहने की ताकीद की। मैं करीब पन्द्रह लोगों के साथ हवाई अड्डे पर आ गया। जैसे ही राजीव गांधी लाउन्ज में आकर लोगों से मिलने लगे वैसे ही युगेश्वर झा जोर-जोर से रोने लगे। हम लोगों ने भी वही काम दुहराया। राजीव गांधी ने हम लोगों से इस तरह के विचित्र व्यवहार का कारण पूछा तो युगेश्वर झा ने उन्हें सारी बात बतायी। राजीव गांधी ने तुरन्त तारिक अनवर, श्याम सुन्दर धीरज और रणजीत सिन्हा को लेकर एक कमेटी बनायी और उनसे कहा कि कल वह इसी समय गुवाहाटी से लौटते समय कुछ देर के लिए पटना रुकेंगे। इस बीच में यह तीनों लोग चानपुरा जाकर वहाँ की स्थिति पर उनको रिपोर्ट दें। इन लोगों को चानपुरा लाने ले जाने का यह सारा काम मेरे जिम्मे पड़ा क्योंकि युगेश्वर झा वहाँ जा नहीं सकते थे, उन पर रोक लगी हुई थी। मैंने रातों-रात सब जगह खबर भिजवायी। सुबह काफी संख्या में लोग चानपुरा में इकट्ठा थे। यह तीनों लोग भी वहाँ पहुँचे। हमने पूरा बांध इन लोगों का दिखाया। संस्कृत कॉलेज में सबकी मीटिंग हुई। गाँव के लोगों ने सारी बातें उन्हें समझायीं और तब यह लोग समय रहते पटना चले गए और हवाई अड्डे पर राजीव गांधी को सारी बातें बताईं। राजीव गांधी जब दिल्ली घर पहुँचे तो वहाँ धीरेन्द्र ब्रह्मचारी मौजूद थे जिनको देखकर उनका गुस्सा फूट पड़ा। उन्होंने इन्दिरा जी को बताया कि ब्रह्मचारी जी की वजह से पचास गाँव बरबाद हो जायेंगे और कांग्रेस का गढ़ वहाँ छिन्न-भिन्न हो जायेगा। उन्होंने ब्रह्मचारी जी को चले जाने को कहा। प्रधानमंत्री कार्यालय से दूसरे दिन रिंग बांध का काम बन्द करने का आदेश आ गया। इस तरह जब तक राजीव गांधी का प्रभाव रहा यह काम बन्द रहा। हाइकोर्ट में जो मामला चल रहा था वह भी खारिज हो गया क्योंकि न्यायालय ने इंजीनयरों की एक कमेटी बना कर उनसे तकनीकी राय मांगी और उसी के अनुसार काम करने या न करने का आदेश दिया। इस तरह विरोध क्षीण हो गया। उस समय जो काम बन्द हुआ उसके इतने दिनों बाद बांध पर इस साल (2010) मिट्टी पड़ी है। एक करोड़ तीस लाख रुपये से मिट्टी का काम वहाँ हुआ है। इस पूरे निर्माण कार्य का न तो कोई विरोध होता और न पूवारी या पछुआरी टोल का कोई विवाद उठता अगर ब्रह्मचारी जी का पूरे गाँव को घेर लेने का पहला प्रस्ताव कारगर हो गया होता। उस समय टोले-मुहल्ले समेत पूरा गाँव रिंग बांध के भीतर होता। यह विवाद पछुआरी टोल के ही विरोध के कारण हुआ मगर ब्रह्मचारी जी अपने संपर्कों के कारण बहुत ज्यादा ताकतवर थे, उन्होंने जो चाहा करवा लिया। यह सच है कि स्वामी जी उत्कृष्टतम योगियों में थे। आयुर्वेद के महान ज्ञाता थे। उन्होंने राजेन्द्र प्रसाद का दमा का इलाज किया था। इन्दिरा गांधी और जय प्रकाश नारायण का उन्होंने इलाज किया था। उनके ज्ञान और साधना में कहीं कोई कमी नहीं थी। इन सब कारणों से उनके संसाधनों की भी कोई कमी नहीं थी। हमारे तमाम विरोध के बावजूद उनका व्यक्तित्व हम लोगों के लिए बड़ा उदार था भले ही उनके बारे में बाहर के लोगों द्वारा जो कुछ भी विवादास्पद बातें कही जाती रही हों। यह भी गलत नहीं है कि राजीव गांधी अगर नहीं रहते तो हम लोग बरबाद हो गए होते।''

जहाँ तक न्यायिक प्रक्रिया का प्रश्न है लेखक ने पछुआरी टोल की तरफ से उच्च न्यायालय में पैरवी कर रहे तत्कालीन ऐडवोकेट (बाद में बिहार के ऐडवोकेट जनरल और बिहार विधान परिषद् के वर्तमान सभापति) ताराकान्त झा से इस मामले की जानकारी लेनी चाही। उनका कहना है, ''...चानपुरा गाँव बेनीपट्टी प्रखंड, मधुबनी में पड़ता है। उसके दो टोले हैं-एक पूवारी, दूसरा पछुआरी। मेरा गाँव है शिवनगर और हमारे गाँवों के बीच में बुढ़नद नदी बहती है जो एक बरसाती नदी है। बाढ़ जब आती है तो जोरों की आती है और तब चानपुरा के अन्दर भी पानी घुस जाता था। धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का घर पूवारी टोले में था। इस टोले में सरकारी पदाधिकारी अधिक हैं। कुछ पुराने ज़मींदार

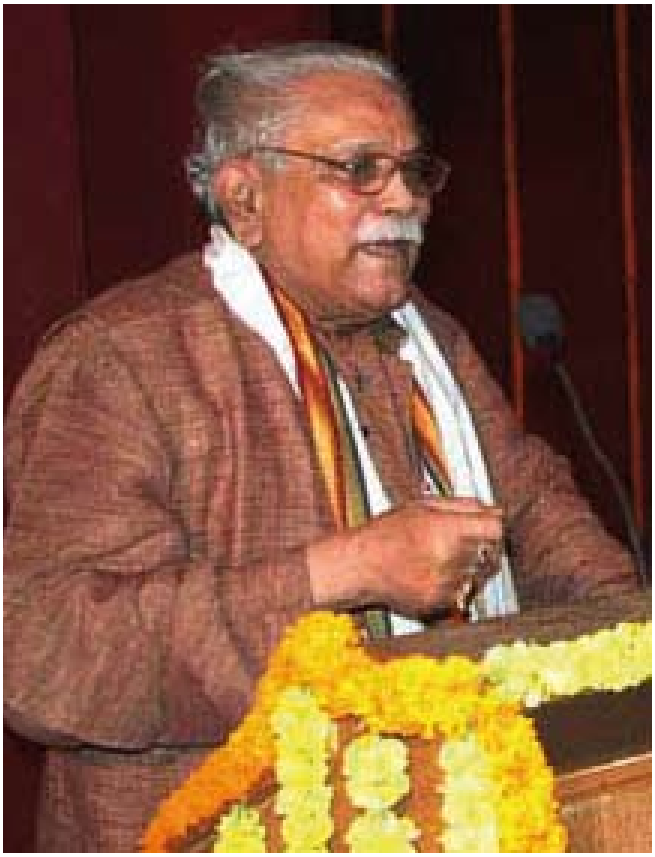

एडवोकेट ताराकांत झा

भी उस टोले में थे। धीरेन्द्र जी ने अपने गाँव को बचाने के लिए हवाई जहाज से (उनका अपना छोटा जहाज था) गाँव की परिक्रमा की। मन में तय किया कि गाँव को रिंग बांध से घेर दिया जाए। गाँव वालों को धीरे-धीरे पता लगा। इससे चानपुरा का पछुआरी टोला प्रभावित होने वाला था, उनकी योजना अपना टोला बचाने की थी। रिंग बांध बनने से उत्तर वाले गाँवों पर भी असर पड़ता। एक बार मेरे गाँव में अटल जी आये थे किसी आयोजन में मेरे घर। चानपुरा रिंग बांध से प्रभावित होने वाले गाँवों के लोग अटल जी से मिलने आ गए। दरख्वास्त भी दी। उन्होंने ध्यान से सुना। अटल जी ने मेरी ओर इशारा कर के उन लोगों से कहा कि वकील साहब आप लोगों की मदद करेंगे। पछुआरी टोले वाले आगे बढ़े। पटना उच्च न्यायालय में मामला दर्ज हुआ, बिहार सरकार पार्टी थी। केन्द्र को पार्टी नहीं बनाया क्योंकि धीरेन्द्र जी का वहाँ प्रभाव था। योजना का खर्चा बिहार सरकार का था। धीरेन्द्र जी मुझसे मिलना चाहते थे कि मामला रफा-दफा हो जाए। बिहार सरकार अदालत में पेश हुई और स्टैण्ड लिया कि इस निर्माण का प्रभाव दूसरे गाँवों पर भी होगा। जांच हुई, रिपोर्ट बनी, उच्च न्यायालय में दाखिल हुई। इधर मुकद्दमा चलता रहा मगर तब तक बांध का बनना रुका नहीं। मा० हरिलाल अग्रवाल प्रेसिडेन्सी जज थे। उन्होंने कहा कि बिहार और भारत सरकार दोनों मिल कर लोगों की सुरक्षा का प्रबन्ध करें। यह फैसला आने तक बांध बन चुका था। पछुआरी टोले वालों को धीरेन्द्र जी ने बुलाया और समझा लिया और कहा कि बांध में ही पानी की निकासी का रास्ता बनवा देंगे। मामला खतम हो गया। उच्च न्यायालय का कोई निर्णय नहीं हो पाया।''[13]

8.11 चानपुरा रिंग बांध का उत्तर कांड

यहाँ से चानपुरा रिंग बांध का उत्तर काण्ड शुरू होता है। पटना हाई कोर्ट में दु:खहरण चौधरी ने इस नये रिंग बांध के निर्माण के खिलाफ जो मामला दायर किया था उसमें उच्च न्यायालय में वादियों की तरफ से बिहार के भूतपूर्व चीफ़ इंजीनियर भवानन्द झा ने आपत्ति की थी कि (क) रिंग बांध को उत्तर की तरफ बढ़ाया जाता है तो इस रिंग बांध और अंगरेजवा पोखर के बीच का फासला घट जायेगा और पोखर के बांध और रिंग बांध के बीच से पानी की निकासी में बाधा पड़ेगी जिसके फलस्वरूप उत्तर और पश्चिम के इलाके ज्यादा समय तक बाढ़ में डूबे रहेंगे और उन पर बाढ़ का खतरा बढ़ेगा, (ख) रिंग बांध के पश्चिम की ओर होने वाले विस्तार के कारण रजवा नाले और रिंग बांध के बीच का भी फासला कम होगा और वहाँ भी बाढ़ का खतरा बढ़ेगा। उनका सुझाव था कि रिंग बांध को थोड़ा और पश्चिम की तरफ खींच कर पछुआरी टोल को भी रिंग बांध के अन्दर ही ले लिया जाए तथा (ग) भुड़का नाला दो स्थानों पर प्रस्तावित रिंग बांध से टकराता है जिससे रिंग बांध पर खतरा बढ़ेगा। अत: इसके अलाइनमेन्ट को दुरुस्त किया जाए।

यह सारे मसले टेकनिकल थे जिन पर राय जानने के लिए उच्च न्यायालय ने वरिष्ठ इंजीनियरों की एक समिति का गठन करके उससे भावी कार्यक्रम के लिए राय मांगी और तय किया कि यह समिति 15 जनवरी 1983 तक अपनी रिपोर्ट दे देगी। इस समिति के तीन सदस्य थे जिसमें गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष नीलेन्दु सान्याल, बिहार सिंचाई विभाग के अभियंता प्रमुख ए० के० बसु और बिहार सरकार में समस्तीपुर क्षेत्र के मुख्य अभियंता एच० पी० सिंह शामिल थे। इस समिति ने अपनी अंतिम रिपोर्ट पहली फरवरी 1983 को उच्च न्यायालय को दे दी। समिति ने अपनी राय देते हुए कहा कि (क) अंगरेजवा पोखर और प्रस्तावित रिंग बांध के बीच का फासला 100 फुट न होकर 200 फुट है तथा बसैठ-मधवापुर सड़क का लेवेल भी उच्चतम बाढ़ लेवेल से कोई 2 फुट नीचे है तथा इस सड़क में स्थित 3 पुल हैं जिनसे होकर बरसात/बाढ़ के पानी की निकासी सुचारु रूप से हो जायेगी और अगर इसके बाद भी पानी की निकासी में बाधा पड़ती है तो अंगरेजवा पोखर के दक्षिणी भाग का सरकार अधिग्रहण कर के उसके बांध के कुछ हिस्से को काट कर अतिरिक्त रास्ता बना ले। इस तरह जल-निकासी दुरुस्त हो जायेगी और रिंग बांध के अलाइनमेन्ट को बदलने की कोई जरूरत नहीं पड़ेगी। कुछ गाँव वालों के सुझाव पर समिति का यह भी कहना था कि गाँव में उत्तर-दक्षिण दिशा में एक जमींदारी बांध पहले से ही था और वह वहाँ तक था जहाँ तक यह रिंग बांध उत्तर दिशा में जाता है। (ख) रिंग बांध को पश्चिम की ओर बढ़ा कर पछुआरी टोल को भी रिंग बांध के अन्दर ले लिए जाने के प्रस्ताव पर समिति का कहना था कि पछुआरी टोल का उच्चतम बाढ़ का लेवेल इतना ही होता है कि वहाँ केवल एक घर (बैद्यनाथ चौधरी का घर) ही बाढ़ में डूबेगा और यह रिंग बांध बनने के पहले भी डूबता था। अत: रिंग बांध बन जाने से बाढ़ की स्थिति में कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इ० भवानन्द झा के इस प्रस्ताव को उन्हीं के तर्क से काटते हुए समिति का कहना था कि रिंग बांध को और अधिक पश्चिम हटाने का मतलब होगा कि उस तरफ धार और पश्चिमी बांध के बीच पानी की निकासी में बाधा पड़ेगी तथा (ग) भुड़का नाले को प्रस्तावित बांध द्वारा

दो जगह काटने की बात पर समिति ने इन स्थानों पर सुरक्षात्मक उपाय सुझाये। संस्कृत कॉलेज को रिंग बांध के अन्दर लेने के लिए थोड़े बहुत परिवर्तन सुझाये और कुछ जगहों पर स्लुइस गेट लगाने की व्यवस्था देते हुए इस रिंग बांध की डिजाइन को ठीक-ठाक बताते हुए अलाइनमेन्ट को दुरुस्त करार दिया। समिति का कहना था ''...अगर बांध के अलाइनमेन्ट में वह परिवर्तन जिनकी सिफारिश की गयी है, कर दिये जाएं और पोखर के बांधों को थोड़ा तराश दिया जाए तो पछुआरी टोले पर बाढ़ का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा।''[14]

समिति की इस रिपोर्ट के आने के पहले ही रिंग बांध पर काम बन्द हो चुका था जो संभवत: राजीव गांधी की इस पूरे मामले में रुचि लेने के कारण हुआ हो। राजीव गांधी के उदय के साथ-साथ ब्रह्मचारी जी का भी सत्ता के गलियारों में पहले जैसा प्रभाव नहीं रहा। अक्टूबर 1984 में इन्दिरा गाँधी की हत्या के बाद उनकी पूछ एकाएक घट गयी और कुछ समय बाद ब्रह्मचारी जी स्वयं एक विमान दुर्घटना में मारे गए। उनके न रहने का सबसे ज्यादा नुकसान चानपुरा को हुआ और 1982 में जो रिंग बांध पर काम बन्द हुआ तो वर्षों उसी स्थिति में पड़ा रहा। अब स्थिति यह थी कि बिन्दु E पर जहाँ एक खंड़जा बिछाया हुआ रास्ता पश्चिम से रिंग बांध के अन्दर जाकर जीरो चेन पर बाहर निकलता हुआ बसैठ-मधवापुर सड़क को जोड़ता था वहाँ आकर रिंग बांध का निर्माण रुक गया।

कुल मिला कर बांध की जो स्थिति बनती वह चित्र-8.2 में दिखायी हुई है। विशेषज्ञ समिति की सलाह के अनुसार नक्शे में बिन्दु H को E से बांध द्वारा जोड़ना था जिस पर पछुआरी टोल के ग्रामीणों का ऐतराज था। उनको लगता था कि बांध का यह प्रस्तावित अलाइनमेन्ट दो जगहों पर भुड़का नाले से टकरायेगा और उनके लिए परेशानी पैदा करेगा। समाधान के तौर पर समझौता हुआ कि A बिन्दु पर स्लुइस के पास से यह बांध संस्कृत कॉलेज के पश्चिम से जमींदारी बांध के रास्ते से E से जुड़ जायेगा जैसा कि चित्र HAE में दिखाया गया है और पुराना A से B, G तक का बांध एक अतिरिक्त सुरक्षा बांध के तौर पर काम करेगा।[15] जब इस तकनीकी समिति की रिपोर्ट उच्च न्यायालय के पास विचार के लिए आयी तब 7 जनवरी 1983 को माननीय उच्च न्यायालय ने उसके समक्ष प्रस्तुत याचिका का निष्पादन कर दिया और बिहार सरकार को यह हिदायत दी की वह समिति की सिफारिशों के अनुसार काम को पूरा करवा दे। AE वाले बांध का निर्माण अभी तक नहीं हुआ है (जून 2010)।

8.12 बाइस वर्षों की खुमारी के बाद नई सुन-गुन

सन् 2005 में बेनीपट्टी के बी.डी.ओ. ने ग्रामीण रोज़गार गारन्टी स्कीम के अन्तर्गत इस जमींदारी बांध BA की मरम्मत करनी चाही और उसमें 2004 में पड़ी एक दरार को भी पाट देने का उपक्रम किया। कुछ गाँव वालों को लगा कि सरकार 1983 वाली तकनीकी समिति की HAE वाले मार्ग से बांध बनाने वाली सिफारिश का उल्लंघन कर रही है और वह इस काम को रुकवाने के उद्देश्य से उच्च न्यायालय की शरण में चले गए। उस समय 130 चेन से लेकर 165 चेन तक का काम अधूरा छूट गया था और अस्थाई तौर पर AB वाला जमींदारी बांध ही रिंग का हिस्सा बना हुआ था और चानपुरा को सुरक्षा प्रदान करता था। वादियों का मानना था कि अगर AB वाला जमींदारी बांध बन कर तैयार हो गया तो फिर EAH वाले रास्ते का बांध कभी बनेगा ही नहीं और सरकार इस AB वाले रेखांकन को ही अंतिम रूप दे देगी और संस्कृत कॉलेज भी रिंग बांध के बाहर ही छूट जायेगा। उनकी यह भी मांग थी कि इस जमींदारी बांध (AB) की मरम्मत के लिए उनकी जमीन से मिट्टी न ली जाए।

चानपुरा रिंग बांध के इस AB हिस्से की मरम्मत काम के बदले अनाज स्कीम के तहत बेनीपट्टी प्रखंड कार्यालय द्वारा 6 लाख रुपये की लागत पर चलायी जाने वाली थी। इस काम का, जो कि 1983 की तकनीकी समिति की सिफारिशों के विपरीत था, कम से कम दो परिवारों पर बुरा असर पड़ने वाला था। कई लोगों की उपजाऊ भूमि नष्ट होने वाली थी और किसी को कोई फायदा नहीं होने वाला था। वादियों का यह भी कहना था कि अगर रिंग बांध की AE वाली दूरी पर काम लग जाता है, जिसकी निकट भविष्य में आशा थी, तो प्रखंड कार्यालय द्वारा शुरू किये गए इस काम का कोई औचित्य ही नहीं बचता है।

यह मामला अभी भी तकनीकी ही था और उच्च न्यायालय ने इसकी तहकीकात करके अपनी सिफारशें देने के लिए एक विशेष वर्किंग ग्रुप का गठन करवाया (जल संसाधन विभाग-बिहार, प्रस्ताव संख्या 1383 दिनांक 12.5.05, उच्च न्यायालय केस संख्या 5427/2005)। इस समिति के भी तीन सदस्य थे-श्री बृज नन्दन प्रसाद, भूतपूर्व अभियंता प्रमुख (अध्यक्ष), जल संसाधन विभाग, बिहार सरकार, समस्तीपुर के मुख्य अभियंता-श्री गौरांग लाल बसाक और बाढ़ नियंत्रण अंचल दरभंगा के अधीक्षण अभियंता श्री एच० एन० झा।[16]

इस समिति की रिपोर्ट (दिनांक 25.6.2006) में कहा गया है कि (क) जमींदारी बांध जिला प्रशासन के अधीन आता है और यह

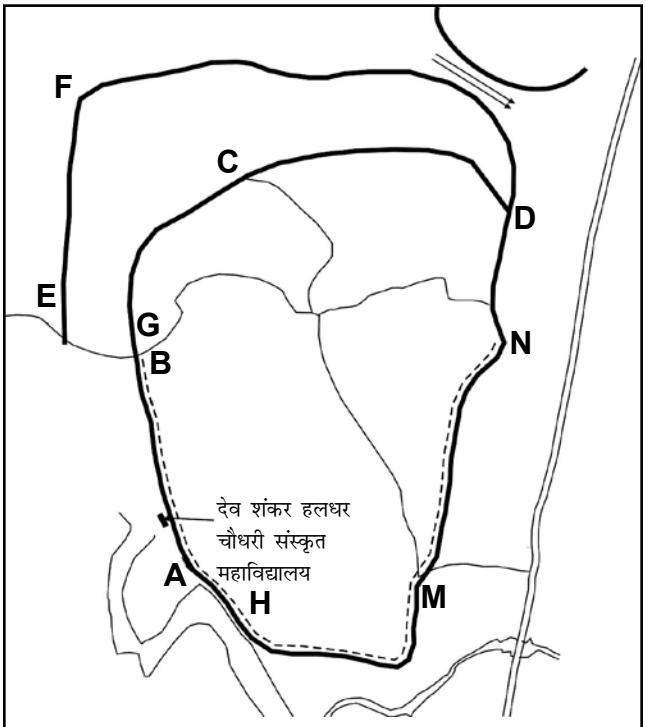

चित्र-8.2
चानपुरा में निर्मित बांध की वर्तमान स्थिति (जून 2010)

उसका अधिकार बनता है कि वह लोकहित को ध्यान में रखते हुए इस पर कोई भी काम कर सकता है। निरीक्षण के समय समिति ने पाया कि इस बांध पर मिट्टी डाली गयी है लेकिन इसमें पड़ी दरार को अभी तक पाटा नहीं गया है। इस काम को आने वाली अगली बाढ़ के पहले पूरा कर लेना चाहिये वरना सुरक्षित किये गए क्षेत्र में पानी भर जायेगा। (ख) दरार को तुरन्त पाट देना चाहिये और इस पूरे जमींदारी बांध की मरम्मत बाकी के बाढ़ सुरक्षा बांध के समकक्ष कर देनी चाहिये। यह जमींदारी बांध दूसरी रक्षा पंक्ति के तौर पर काम करेगा। (ग) 130 चेन से 165 चेन के बीच के काम को छोड़ कर चानपुरा रिंग बांध का काम पूरा हो गया है। इस दूरी में बांध का काम पूरा न होने के कारण यह जमींदारी बांध ही सुरक्षा कवच का काम करता है। बांध के इस हिस्से की लम्बाई प्राय: 700 फीट है और यह गाँव की सड़क से जुड़ा हुआ है लेकिन गाँव की सड़क इस बांध के लेवेल से काफी नीची है। समिति ने भविष्य के लिए निम्न काम सुझाये–

(i) A से E को जोड़ते हुए जब यह बांध संस्कृत कॉलेज के पास पहुँचता है तो उसे पश्चिम की ओर इस तरह से घुमाया जाए कि संस्कृत कॉलेज रिंग बांध के अन्दर सुरक्षित क्षेत्र में आ जाए।

(ii) इस नये बांध को अब जमींदारी बांध से स्लुइस गेट के पहले जोड़ दिया जाय। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो एक नया स्लुइस गेट बनाना पड़ जायेगा।

(iii) संस्कृत कॉलेज के पास में भुड़का नाले के बायें किनारे पर कुछ अतिक्रमण होगा। यहाँ नाले का विस्तार अपने प्रति प्रवाह और अनुप्रवाह दोनों से ज्यादा है अत: इस अतिक्रमण का नाले के प्रवाह पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(iv) संस्कृत कॉलेज से लेकर जमींदारी बांध को जोड़ने वाली दूरी में बांध की सुरक्षा के लिए समुचित व्यवस्था की जाए।

(v) जमींदारी बांध में पड़ी मौजूदा दरार को पाट दिया जाए और पूरे जमींदारी बांध के सेक्शन को इस तरह सुधारा जाए कि वह द्वितीय रक्षा पंक्ति का काम कर सके।

(vi) बांध के भुड़का नाले की तरफ पड़ने वाले ढलान की सुरक्षा के लिए समुचित व्यवस्था की जाए।

यह रिपोर्ट 2006 में आयी। निषेधाज्ञा लग जाने से 2009 तक जमींदारी तटबन्ध पर कोई काम नहीं हुआ। इस बीच 2006 में ही बिहार सरकार ने सारे जमींदारी/महाराजी तटबन्धों को कानून बनाकर जल-संसाधन विभाग के हवाले कर दिया। जल-संसाधन विभाग ने टेण्डर निकाल कर 2010 के पूर्वार्द्ध में AB के बीच जमींदारी बांध की मरम्मत करवा दी और 2004 में पड़ी दरार को भी पाट दिया। पूरे रिंग बांध का उच्चीकरण तथा सुदृढ़ीकरण भी कर दिया गया है। गाँव की सड़क BE पर भी मिट्टी डाली जा रही थी (जून 2010) मगर AEH के जिस बांध के निर्माण की सिफारिश दोनों विशेषज्ञ समितियों (1983 तथा 2006) ने की थी उस पर अभी तक हाथ नहीं लगा है। ABE वाला जमींदारी बांध/सड़क के निर्माण हो जाने की वजह से यह आशंका जरूर होती है कि अब सरकार शायद EAH वाले रूपांकित बांध का निर्माण ही न करवाये। उधर BE वाली जो सड़क है वह, बताते हैं कि, ग्रामीण अभियंत्रण विभाग की है जिस पर जल-संसाधन विभाग मिट्टी डाल कर उसे बाकी बांध की ऊँचाई के बराबर ले आना चाहता था। इसके लिए ग्रामीण अभियंत्रण विभाग की अनुमति नहीं मिली मगर मिट्टी फिर भी डाली गयी जिसके लिए गतिरोध बना हुआ है। A-B वाला बांध भी जमीन्दारी बांध था जो कि कम ऊँचा और कम चौड़ा था मगर जब इसकी मरम्मत हुई तो वह ऊँचा और आधार पर चौड़ा हो गया जिसमें रैयत की कुछ जमीन भी चली गयी जिसका विक्षोभ उन लोगों में है। अब अगर EAH वाला बांध बनता भी है तो EBA वाली जमीन हर तरफ से बांध से घिर जायेगी। इसके पानी की निकासी का क्या होगा, इस पर अभी तक कोई दृष्टि नहीं बन पायी है। इन सारी समस्याओं का हल अभी खोजा जाना बाकी है। फिलहाल जो निर्मित बांध की रूप रेखा है उसे चित्र में दिखाया गया है। यह पूरा मसला अभी उच्च न्यायालय के विचाराधीन है और जो भी निर्णय होगा वह अब न्यायालय ही करेगा।

पूरे मसले को लेकर गाँव में विचारधाराएं आज भी बंटी हैं। जहाँ एक ओर पूवारी टोल के नरेन्द्र चौधरी का कहना है, ''...स्वामी जी जैसा महान् आदमी इस चानपुरा में न तो हुआ और न होगा। उनका कार्यक्रम था गाँव को चारों तरफ से घेरने का, चारों तरफ सड़क बनाने का और हेलिपैड बनवाने का। 100 बेड का अस्पताल बनवाना चाहते

नरेन्द्र चौधरी

थे। यह सब यहाँ के लोगों ने होने ही नहीं दिया कि यह मेरी जमीन है, यह उनकी ज़मीन है। अब सड़क अगर बन रही है तो सबका दरवाजा खोद कर ही सरकार बना रही है न? उतने महान आदमी को प्रपंच में घसीटा गया, उनकी बात किसी ने सुनी ही नहीं। स्वामी जी ने अपना आदमी भेजा था दिल्ली से कि वह यहाँ 100 बेड का अस्पताल बनाना चाहते हैं यह बात गाँव वालों को समझायें। यहाँ के कुछ लोगों ने उनकी जमीन पर कब्जा करवा दिया। स्वामी जी के अपर्णा आश्रम की जमीन पर लोगों की नजरें गड़ी हैं। उनकी जमीन के परचे कटवा कर बटवा दिये गए। स्वामी जी क्या सोचते थे और यहाँ के लोग क्या सोचते हैं? पछुआरी टोल के कुछ लोगों ने मिल कर टंटा खड़ा किया एक आदमी के कहने पर। स्वामी जी को पाली से मकिया वाले महाराजी तटबन्ध के

बारे में किसी ने बताया ही नहीं कि सारी परेशानी उस बांध की वजह से है। यह बांध पाली से लेकर मकिया तक बना है, थोड़ा उसके आगे भी गया है। यह बांध खिरोई और सोइली के पानी को सीधा रोक रहा है। यही अगर स्वामी जी को कहा गया होता कि इस महाराजी बांध को हटा दीजिये तो सारी समस्या का समाधान हो जाता। यह बांध अगर टूटता है तो दरभंगा में एक मंजिल के मकान 24 घन्टे में पानी में चले जाते हैं। हमारे पूर्वज बताते हैं कि पहले इतना पानी नहीं आता था। यह बांध हट गया होता तो चानपुरा रिंग बांध की जरूरत ही नहीं पड़ती। अगर पछुआरी टोल को विरोध करना ही था तो इस बांध का विरोध करते। स्वामी जी तो पूरा क्षेत्र घेरना चाहते थे। विरोध हुआ तो कहा कि चलो पूवारी टोल को घिरवा देते हैं। 7 किलोमीटर घेरे के अन्दर कुछ तो उपजता है, कुछ तो समृद्धि है। विरोध करना है तो पाली-मकिया वाले बांध को तुड़वा दीजिये। अब सोइली वाला पुल 50 फुट का है और इतना ही ऐग्रोपट्टी में खिरोई का पुल है–इससे क्या पाली-मकिया वाला पानी निकल पायेगा? यह सब ब्रह्मचारी जी को बदनाम करने के लिए किया गया।''[17]

उधर पछुआरी टोल के बृजेश चौधरी की व्यथा दूसरे किस्म की है। वह कहते हैं, ''...अभी बाढ़ का जो पानी आता है वह अगर थोड़ी मात्रा में आता है तो धीरे-धीरे बह कर निकल जाता है मगर हर दूसरे तीसरे साल बड़ी भयंकर और विनाशकारी बाढ़ आती है। यह पानी ऊपर उठता है और जब उठते-उठते हम लोगों के घर में घुसने लगता है तब सारे लोग किसी ऊँचे स्थान की तलाश कर के वहाँ चले जाते हैं। उस समय हमारी एक ही प्रार्थना ईश्वर से होती है कि पाली-मकिया वाला महाराजी बांध टूट जाए। ईश्वर अगर सुन लेता है तो यह बांध टूट जाता है और हम लोगों को राहत हो जाती है। वैसे भी अगर बड़ी बाढ़ आ गई तो यह महाराजी बांध एक नहीं कई जगह टूटता है और जहाँ टूटता है वहाँ पानी बड़े-बड़े गड्ढे बना कर आगे बढ़ता है। बाढ़ के समय माल-जाल का नुकसान तो होता ही है, हर साल सर्पदंश से दो-चार आदमी मर ही जाते हैं। डॉक्टरी सहायता 20 किलोमीटर दूर बेनीपट्टी से पहले मिलती नहीं है। खाने-पीने का सामान भी बह जाता है। इस गाँव में एक भी सरकारी नाव नहीं है। जो भी बसैठ जायेगा वह जान जोखिम में डाल कर ही जायेगा। हमारे गाँव में दो पंचायतें हैं–करहारा और शाहपुर। दोनों के मुखिया दस किलोमीटर से ज्यादा दूर रहते हैं। न वो लोग कभी यहाँ आते हैं और न हम उनके यहाँ, कम से कम बरसात के मौसम में, जा पाते हैं। विधायक भी केवल वोट मांगने आते हैं। पछुआरी टोल की 5000 आबादी होगी। आस-पास के धनुखी, नवगाछी, रजवाटोल, हथियरवा, त्रिमुहान, करहारा, सिमरटोल, रानीपुर, विमोचनपुर आदि सभी गाँवों की यही हालत रहती है। यहाँ गेहूँ के अलावा कुछ पैदा नहीं होता। महाराजी बांध न रहे तो रिंग बांध बन जाने और बरसात के मौसम की सारी दिक्कतें उठा लेने के बावजूद तीन फसल हम लोग भी उगा लेंगे।''[18]

उपसंहार–चानपुरा रिंग बांध के निर्माण को लेकर अनेक विवाद हुए और अभी भी उच्च न्यायालय में पूरा मामला लम्बित है। संस्कृत कॉलेज आज भी असुरक्षित है और वही हाल पछुआरी टोल का भी है। रिंग बांध दो बार टूट कर अन्दर के टोले को डुबा चुका है और अब बांध ऊँचा और तथाकथित रूप से मजबूत कर दिये जाने के बाद इस तरह की घटनाओं की तीव्रता और बारम्बारता बढ़ेगी। बसैठ-मधवापुर सड़क, जिसके बारे में कहा गया था कि यह बाढ़ के लेवेल से 2 फुट नीचे है और उसमें बने हुए पुल पूरे प्रवाह को ठीक से बहाने में सक्षम है, उसका पुनर्निमाण हो रहा है और अब वह अपने पुराने लेवेल से 3 से 4 फुट ऊपर बन रही है। इलाके के सारे बांधों को ऊँचा और मजबूत किया जा रहा है और अब इस क्षेत्र की जल-निकासी का क्या होगा यह तो भविष्य ही बतायेगा। इतना जरूर लगता है कि राज्य के जल-संसाधन विभाग की बाढ़ के पानी की शीघ्र निकासी में कोई दिलचस्पी नहीं है। वह पानी के प्रवाह को यथा-संभव रोक देने में ही रुचि रखता है। उसे सारी संरचनाएं ऊँची और मजबूत चाहिये। वह यह भूल जाता है कि ऐसी संरचनाओं की मजबूती से डटे रहने पर एक तरफ के लोगों को निश्चित रूप से नुकसान पहुँचता है तो उनके टूट जाने पर दूसरी तरफ के लोग दु:ख भोगते हैं। इन संरचनाओं की न तो तीसरी कोई गति है और न ही बाढ़ पीड़ित जनता के पास कोई तीसरा विकल्प है।

इतना सब होने के बावजूद रिंग बांध के अन्दर और बाहर वालों के बीच वैसा कोई मनमुटाव नहीं है। भोज-भात, काज-करोज में एक दूसरे के यहाँ आना जाना सब चलता है। जो कुछ मतभेद है वह वर्षा के चार महीनें रहता है और अक्टूबर के अंत तक सब सामान्य हो जाता है।

संदर्भ :

1. झा, कामेश्वर; व्यक्तिगत संपर्क
2. चौधरी, देवचन्द्र; व्यक्तिगत संपर्क
3. झा, प्रो० सतीश चन्द्र; व्यक्तिगत संपर्क
4. मिश्र, डॉ० जगन्नाथ; व्यक्तिगत संपर्क
5. चौधरी, द्वारका नाथ; व्यक्तिगत संपर्क
6. आर्यावर्त्त-पटना; 3 जून 1982, पृष्ठ-5; चानपुरा रिंग बांध पर प्रतिदिन सैकड़ों लोगों द्वारा धरना।
7. पाठक, कृपानाथ; बिहार विधान परिषद, वादवृत्त, 7 जुलाई 1982, ध्यानाकर्षण, प्रस्ताव, पृ० 34
8. सिंह, त्रिपुरारी प्रसाद; बिहार विधान परिषद वादवृत्त, 26 जुलाई 1982, पृ० 93
9. शर्मा, पद्मदेव नारायण; बिहार विधान परिषद, वादवृत्त, 26 जुलाई 1982, पृ० 98
10. सभापति, बिहार विधान परिषद वादवृत्त, 26 जुलाई 1982, पृ० 98
11. नामधारी, इन्दर सिंह; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 26 जुलाई 1982, पृ० 32
12. आर्यावर्त्त-पटना; 30 जुलाई 1982, पृ० 5
13. झा, ताराकांत; व्यक्तिगत संपर्क
14. Report of the Expert Committee Constituted by the Honorable High Court wide order No. 10 dated 27.7.1982 in CWJC 1941/82, p. 5
15. चानपुरा रिंग बांध का नक्शा-सौजन्य नरेन्द्र चौधरी जिसे उन्हीं ने लेखक को समझाया।
16. Report of the Special Working Group, Water Resources Department, Bihar, Resolution No. 1383 dated 12.5.2005 High Court Case No. 5427/2005
17. चौधरी, नरेन्द्र; व्यक्तिगत संपर्क
18. चौधरी, बृजेश; व्यक्तिगत संपर्क

9

अधवारा समूह की नदियों के नियंत्रण और सिंचाई व्यवस्था की स्थिति

9.1 अधवारा समूह योजना की पृष्ठभूमि

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अधवारा क्षेत्र को बाढ़ मुक्त रखने के लिए आवाज़ें उठना शुरू हुईं क्योंकि यहाँ की समस्याएँ भी उत्तर बिहार के अन्य क्षेत्रों से भिन्न नहीं थीं। नेपाल से हो कर भारत में प्रवेश करने वाली अधवारा समूह की नदियों के तल का ढाल नेपाल में अधिक है जिससे वहाँ बाढ़ की समस्या इतनी ज्यादा नहीं होती परन्तु भारतीय क्षेत्र में तल का ढाल तथा नदियों की प्रवाह क्षमता कम होने के कारण इस घाटी में भी अक्सर बाढ़ें आती हैं। इस नदी समूह की कुछ धाराएँ तो केवल बरसात में ही सक्रिय होती हैं और अन्य मौसम में इनको खोज पाना अनजान आदमी के लिए सम्भव नहीं होता।

वर्षा में विलम्ब या अनावृष्टि के समय ऊपरी क्षेत्रों के लोग इन नदियों पर कच्चे बाँध बना कर पानी का सिंचाई के लिए उपयोग कर लेते हैं और निचले क्षेत्रों को पानी नहीं मिलता। अत: जहाँ थोड़ी सी वर्षा में बाढ़ आने की संभावना रहती है वहीं वर्षा में हल्का सा विलम्ब सूखे की स्थिति पैदा कर देता है और यह अतीव उर्वर क्षेत्र बाढ़ और सूखे की मार साथ-साथ झेलता है। हथिया नक्षत्र में वर्षा तो हमेशा ही संदेहप्रद रही है। उत्तरी क्षेत्रों व नेपाल के इलाके में जमीन का ढलान अपेक्षाकृत अधिक होने के कारण बाढ़ का पानी अधिक समय नहीं टिकता और आसानी से निकल जाया करता है वहीं निचले क्षेत्रों में पानी लम्बे समय तक टिका रहता है। इस अतिरिक्त पानी के त्वरित निकास की माँग 1950 के दशक में उठनी शुरू हो गयी थी।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में निलहे गोरों ने इस इलाके की बाढ़ों से अपने खेतों को बचाने का प्रयास किया था। तब बहुत सी धाराओं पर तटबन्ध बने थे। 1838 की बाढ़ के बाद लगभग 50 मील लम्बे तटबन्ध इस क्षेत्र में बनाये गए थे। दरभंगा राज और नानपुर के चौधरियों ने भी इस काम में काफी मदद की थी। बाद में इस इलाके की नील की खेती भी दरभंगा राज ने खरीद ली। 1875 की भयंकर बाढ़ में पानी दरभंगा के रामबाग महल तक बढ़ आया था। फलत: काफी दिनों तक इन तटबन्धों की मरम्मत दरभंगा राज की तरफ से होती रही। दरभंगा राज के प्रबन्धकों और निलहे गोरों के नाम पर बहुत से तटबन्ध और सिंचाई की नहरें इस इलाके में बनीं जिसमें परिहार और बाजपट्टी (सीतामढ़ी) के बीच में मेयर तटबन्ध तथा बेनीपट्टी (मधुबनी) स्थित किंग्स बाँध और किंग्स नहरें मुख्य हैं। आर० एस० किंग दरभंगा राज में मैनेजर थे और लोग इन्हें 'इन्द्र साहब' कह कर पुकारा करते थे। शिवनगर के निलहे गोरों, एन्डरसन के नाम पर एन्डरसन बांध और क्रॉफ्ट के नाम पर केरापट्टी बांध भी इस इलाके में बने। 1925 तक काफी कुछ ठीक ठाक चला परन्तु 1925 की बाढ़ में बहुत जगहों पर तटबन्ध टूटे और उसके बाद तटबन्धों के अन्दर और बाहर बसे लोगों में बलवा होना शुरू हुआ। अन्दर बसे लोग जहाँ तटबन्ध काट देना चाहते थे वहीं बाहर वाले इस हरकत को रोकने के लिए ताकत का इस्तेमाल करते थे। कहा जाता है कि बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बहुत से फौजदारी मामले तटबन्धों के कारण दर्ज किये गए। 1915 में सीतामढ़ी के पुपरी थाने के फुलवरिया गाँव में हुए एक फसाद में एक आदमी की नाक काट ली गयी थी। यह झगड़ा तटबन्धों के कारण हुआ था। 1937 में बिहार के तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ० श्रीकृष्ण सिंह ने यहाँ की बाढ़ समस्या का अध्ययन करने के लिए इस क्षेत्र का स्वयं दौरा किया था।

9.2 भारत की आज़ादी और नदी नियंत्रण की मांग

इसके बाद योजना या सार्वजनिक पहल के स्तर पर स्वतंत्रता प्राप्ति तक खामोशी थी पर 1948 की बाढ़ के बाद पुन: बाढ़ से त्राण दिलाने के लिए आवाजें उठने लगीं। इतना अवश्य कहा जाता रहा है कि समस्या बाढ़ के लम्बे समय तक बने रहने की है, बाढ़ स्वयं में कोई समस्या नहीं है। 8 जनवरी 1954 को महन्त श्री श्याम नारायण दास, श्री मुनीश्वर सिन्हा तथा श्री श्रीकुमार चौधरी ने अधवारा पीड़ित समिति की ओर से एक ज्ञापन मुख्य मंत्री को देना चाहा था जो कि उनकी अनुपस्थिति में सिंचाई विभाग के तत्कालीन मुख्य अभियंता श्री एच० के० श्रीनिवास को दिया गया। इस ज्ञापन में कहा गया था कि अधवारा समूह की छोटी बड़ी 23 नदियों के प्रवाह के कारण 1,200 वर्ग मील का क्षेत्र, जिसके लगभग 5 लाख एकड़ क्षेत्र पर खेती होती है और जिसमें लगभग 9 लाख (1951 की जनसंख्या) लोग बसते हैं, तबाह रहता है। इसमें सोनबरसा, बेला, सुरसण्ड, पुपरी, बेनीपट्टी, मधवापुर, हरलाखी, जाले और दरभंगा सदर के थाने आते हैं। नदियों की यह धाराएं कोसी की तरह उद्दण्ड नहीं हैं और वास्तव में क्षेत्र की समृद्धि का कारण है। स्मार पत्र में यह कहा गया कि अंग्रेजों ने इस क्षेत्र की उपेक्षा की और 1833 तथा 1934 के भूकम्पों से यहाँ की स्थलाकृति में परिवर्तन होने के कारण यह नदियाँ वरदान की जगह अभिशाप बन रही हैं। यदि यह क्षेत्र बाढ़ मुक्त हो जाता है तथा यदि सिंचाई के साधन उपलब्ध हो सकें तो पचास लाख मन का अतिरिक्त अन्न का उत्पादन इस क्षेत्र में हो सकेगा जिसकी कीमत (तत्कालीन मूल्यों पर) पाँच करोड़ रुपये होगी। ऐसा भी इस ज्ञापन में कहा गया था कि अपने पिछले बिहार प्रवास में प० जवाहर लाल नेहरू ने साढ़े तीन करोड़ रुपये की एक केन्द्रीय सहायता राशि मंजूर की थी जिसमें से चालीस लाख रुपये अधवारा योजना के लिए भी स्वीकृत हुए थे। परन्तु विशेषज्ञों की राय में अधवारा समूह को नियंत्रित करने से बाढ़ की समस्या का और भी उग्र रूप धारण कर लेने की आशंका थी और उन्होंने इस बात की सिफारिश की थी कि इसके लिए आवंटित राशि को दूसरी योजना में लगा दिया जाय।[1]

9.3 योजना बनी तबाही बढ़ी

1954 की बाढ़ के बाद विशेषज्ञों ने उत्तर बिहार की अन्य नदियों के साथ-साथ एक बार फिर अधवारा समूह की नदियों की समस्या का अध्ययन किया और तब यह विचार प्रस्तुत किया गया कि दरभंगा-बागमती की धारा विस्तृत और गहरी है जब कि खिरोई की धारा छिछली तथा

पतली है जिसके कारण इसमें बाढ़ बाती है। अत: मार्च 1955 में यह प्रस्ताव किया गया कि खिरोई की धारा को खोद कर उस पर सोनबरसा के नीचे की 56 किलोमीटर की लम्बाई में दोनों किनारों पर तटबन्ध बना दिए जाएँ। लगभग पैंसठ लाख रुपये की अनुमानित लागत राशि पर सोनबरसा से ऐग्रोपट्टी तक 1963-64 में तटबन्ध पूरे कर लिये गए थे और इनसे 68,500 एकड़ भूमि को बाढ़ से सुरक्षा मिल जाने का अनुमान किया गया था।

जब इस परियोजना के काम में हाथ लगा तो स्थानीय लोगों की सरकार से अपेक्षाएं भी बढ़ीं। इसकी अभिव्यक्ति बिहार विधान सभा में छोटे प्रसाद सिंह के बयान से हुई–

'खिरोई और अधवारा सिस्टम आरंभ हुआ है। लेकिन इसकी प्रगति इतनी धीमी है कि जब तक यह काम पूरा होगा तब तक सारा का सारा किसान अपनी जमीन बेच लिये रहेगा। मैं चाहता हूँ कि इस काम को यथाशीघ्र पूरा किया जाय। अभी-अभी किसी काम के लिये वहाँ सम्मेलन हुआ था और उसमें भूतपूर्व माननीय सिंचाई मंत्री श्री राम चरित्र सिंह भी गए थे। उन्हें भी उस क्षेत्र को देखने का मौका मिला है। वे श्रीमती जनककिशोरी देवी, भूतपूर्व सदस्या के आग्रह पर गए थे। उन्होंने भी कहा था कि अधवारा सिस्टम में जमुने और धौंस को भी स्थान दिया गया है। वे जहाँ-जहाँ गए वहाँ के किसानों ने यही पूछा कि अधवारा सिस्टम में जमुने और धौंस को स्थान दिया गया है या नहीं। इस पर वे झुंझलाकर कहे थे कि हाँ, स्थान दिया गया है। लेकिन फिर भी कुछ काम होते नहीं देखता हूँ। इतना देखा है कि कुछ लोग गए और नाप जोख करके चले आये। नापजोख करने के सिलसिले में किसी से मिले भी नहीं और न किसी से कुछ सलाह ही ली।'[2]

अधवारा और खिरोई नदियों के तटबन्धों के निर्माण में भी किसानों की कुछ न कुछ जमीन का अधिग्रहण करना पड़ा था यद्यपि इन नदियों के तटबन्धों के बीच घरों के होने की कोई सूचना नहीं है। यह नदियाँ काफी छोटी-छोटी है। अत: मुमकिन है कि घरों को तटबन्धों के बीच फंसने से बचा लिया गया हो। छोटे प्रसाद सिंह के एक सवाल के जवाब में राज्य के सिंचाई मंत्री ने विधान सभा को बताया (1958), ''...सिर्फ बेनीपट्टी थाने में खिरोई योजना के निर्माण के लिये 49.44 एकड़ जमीन ली गयी है जिसकी कीमत 74,160 रुपया होती है और उक्त थानान्तर्गत अधवारा योजना के लिये 14.39 एकड़ जमीन ली गई है जिसकी कीमत 21,585 रुपया होती है। जिन किसानों की जमीन ली गयी है उनका नाम तथा पते की लिस्ट तैयार की जा रही है। तैयार हो जाने पर उनका नाम तथा पता बताया जा सकता है।''[3]

योजना के अब जो भी रिकार्ड उपलब्ध हैं उसके अनुसार यह काम 1963-64 में पूरा हो गया था मगर जब बाढ़ आती थी तो यह तटबन्ध किसी काम नहीं आते थे। निर्माण के साथ उनका टूटना शुरू हुआ मगर अपेक्षाएं कम नहीं हुई थीं। किसानों को आशा थी कि तटबन्धों में जो गैप हैं उनमें स्लुइस गेट लगा दिये जायेंगे और उनकी मदद से खेती के लिए सिंचाई भी मिलने लगेगी। राज कुमार पूर्वे की शिकायत थी, ''...यह दुख की बात है कि जब 1964 में भयानक बाढ़ आई थी तो केन्द्रीय सरकार ने और बिहार सरकार ने फ्लड कंट्रोल बोर्ड का निर्माण किया था लेकिन अभी तक बाढ़ का नियंत्रण नहीं हो सका है। प्रतिवर्ष बाढ़ वहाँ आती है और लोगों को कठिनाई होती है, उनके मवेशी दह (बह) जाते हैं, जमीन कट जाती है, घर दह जाते हैं, आदमी दह जाते हैं और उसके बीच का जो अधवारा क्षेत्र है, उसकी भी यही हालत है। मैं बड़े अदब के साथ कहना चाहता हूँ कि बिहार सरकार की तरफ से और केन्द्रीय सरकार की तरफ से जो बाढ़ नियंत्रण का संगठन है, उससे उस इलाके का कंट्रोल नहीं हो पाया है। प्रतिवर्ष सरकार की तरफ से रिलीफ अनुदान दिया जाता है, लेकिन जो मुख्य समस्या है और भारत सरकार के जो ऑफिसर आये और उनका जो सुझाव हुआ, अधवारा क्षेत्र के लिये, उसे आज तक कानून में परिणत नहीं किया गया। इन इलाकों की जितनी नदियाँ हैं, उनके बारे में रिपोर्ट में कहा गया है कि उन्हें बांध दिया जाए और स्लुइस गेट लगा दिया जाए, तो बाढ़ का नियंत्रण भी हो सकेगा और उस क्षेत्र में सिंचाई का काम भी हो सकेगा। आज इस योजना के अभाव में सारी फसल पानी में बर्बाद हो जाती है। बाढ़ नियंत्रण के लिये बिहार सरकार के जो अधिकारी हैं, उन्हें इस योजना पर खर्च करने के लिये हर साल करोड़ों रुपया दिया जाता है, लेकिन वे सफल नहीं हो पाते हैं।''[4] बाद के वर्षों में ऐग्रोपट्टी से लेकर दरभंगा में एकमीघाट तक खिरोई की इस धारा को पुन: गहरा करके इसके दोनों तटबन्धों को पूरा करके इसे दरभंगा बागमती मे मिला दिया गया। सोनबरसा से लेकर एकमी घाट तक तटबन्धों के बीच बहने वाली इस नदी का एक छोटा सा हिस्सा, बायें तट पर, ऐग्रोपट्टी में मुक्त है जिससे इसका कुछ प्रवाह बुढ़नद धार से होकर वहीं से दरभंगा-बागमती में चला जाया करता है। तटबन्धों की उपयोगिता आधिकारिक तौर पर अच्छी मानी जाती है फिर भी बाद के वर्षों की कई बाढ़ों के स्तर को देखते हुए इन तटबन्धों को ऊँचा करने की बात चल रही है।

खिरोई तटबन्धों के अतिरिक्त दरभंगा-बागमती के बाँये किनारे पर, मब्बी से लेकर सिरनियाँ तक, लहेरियासराय तथा दरभंगा शहरों की सुरक्षा के लिए 1976 में तटबन्ध बनाये गए थे। अपने निर्माण के पहले ही साल में यह तटबन्ध टूट गया था जिसकी वजह से बाढ़ का पानी शहर में घुस गया था। इस घटना को लेकर तकनीकी हलकों में काफी बवाल खड़ा हो गया था। यह तटबन्ध करेह के बाएँ तटबन्ध से जोड़ दिया गया है।

1964 के बाद अधवारा और खिरोई नदी पर बने तटबन्धों का एक तरह मूल्यांकन होना शुरू ही हुआ था कि इसी बीच 1966 वाली बाढ़ आ गयी। उस वर्ष बागमती घाटी में क्या-क्या हुआ उसके बारे में हम पहले चर्चा कर आये हैं। अधवारा घाटी में भी तटबन्धों के निर्माण के बाद तबाही बदस्तूर जारी रही। घाटी में बाढ़ से हुई तबाही का ज़िक्र करते हुए तेज नारायण झा ने बिहार विधान सभा को बताया, ''...हमारे क्षेत्र बेनीपट्टी, मधवापुर, बिसफी और हरलाखी में दर्जनों बाँध टूट गया, पाली, करहरा का बाँध टूट गया, उरेन का बाँध टूट गया। तीन-तीन चार-चार दिन तक भर-भर रात जग कर सैकड़ों ग्रामीण बाँध की हिफाजत में लगे रहे, लेकिन सरकार का कोई मुलाजिम वहाँ पर उपस्थित नहीं हुआ। बी०डी०ओ०, सुपरवाइजर, वी०एल०डब्लू०, ग्राम सेवक या सरकार का कोई भी कर्मचारी वहाँ उपस्थित नहीं था और न किसी तरह की मदद ही दी गयी। यहीं पर सौली घाट के पूरब जो कॉज-वे बना है उसका स्तर इतना नीचा है कि पानी खुलने के बाद उड़ेन का बाँध टूट गया। पी०डब्लू०डी० इस बात की तहकीकात करे कि योजना में क्या खामी थी। बेनीपट्टी से हरलाखी, बेनीपट्टी से

मधवापुर, बेनीपट्टी से कमतौल और जोगियारा जाने की सभी सड़कों पर पानी आ गया और कई जगह ये सड़कें टूट गयी हैं। बेनीपट्टी-पुपरी पी०डब्लू०डी० सड़क सात जगहों में टूट चुकी है। बेनीपट्टी से दक्खिन जाने का कच्चा रास्ता बिल्कुल बंद है, इसलिए कि चारों तरफ समुद्र के जैसा दृश्य है। यह वह इलाका है जहाँ न कोई मंत्री जाते हैं और न सरकार के कोई बड़े अधिकारी, यहाँ तक कि न डी०एम० या एस०डी०ओ० ही जा सके। इसलिए दरभंगा से पक्की सड़क होकर जयनगर और बेनीपट्टी तक आ सकते हैं। लेकिन उसके बाद बिना नाव पर गए कोई उस इलाके में नहीं जा सकता है।''[5]

1968 की बाढ़ के बाद अधवारा घाटी में बाढ़ की तबाही हर साल का किस्सा बन गयी और यह रवायत आज भी कायम है। उत्तर में भारत-नेपाल सीमा से लेकर दक्षिण पूरब में हायाघाट तक का पूरा इलाका बरसात के मौसम में खबरों में बना रहता है। सड़कों का टूटना, तटबन्धों का टूटना, जल-जमाव, राहत सामग्री का न पहुँच पाना आदि खबरों से समाचार पत्र आज भी भरे रहते हैं। जिन तटबन्धों के निर्माण से पूरे इलाके में पानी का रास्ता रोक देने से इतनी तबाही होती है, प्रभावित लोगों की तरफ से उन्हीं के विस्तार, ऊँचा करने और मजबूत बनाने की मांग उठती है। यही वजह थी कि 1966 के बाद राज्य सरकार को इस दिशा में सोचना पड़ गया। प्रतिभा देवी ने 1967 में विधान सभा में फिर एक बार उत्तरी सीतामढ़ी की बरबादी का किस्सा कुछ इस तरह बयान किया–''फिर भी स्थायी समाधान नहीं निकलता है, जैसा कि हर बरसात में सीतामढ़ी से भीठाचक की सड़क दो जगह टूट गयी है, और इसके बारे में सरकार का ध्यान खींचा जाता है कि पुल वहाँ न बना कर यदि इरिश कॉजवे बना दें, तो बहुत फायदा होगा, लेकिन इस पर ध्यान नहीं दिया जाता है। वहाँ जो पुल बनाया जाता है, वह हर साल दो-तीन महीनें के अन्दर टूट जाता है। इसलिये इरिश कॉजवे बना दें, तो उससे लोगों को बहुत लाभ होगा। दूसरी बात यह है कि बेला-परिहार सड़क, पुपरी से चोरौत, पिरोखर पुल तथा नाढीघाट (भिठा) नदी की धारा वगैरह समस्याओं की तरफ भी मैं सरकार का ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूँ। वहाँ प्रतिवर्ष बाढ़ से क्षति होती है और उसके बारे में कहा जाता है, लेकिन सरकार ध्यान नहीं देती है। पुपरी प्रखंड में अमनपुर में छरकी के टूट जाने से इस ग्राम पर खतरा है। बेला-परिहार सड़क, जो कई जगह बरसात में टूट जाया करती है, उस पर जगह-जगह स्लूइस गेट लगाने के बारे में सुझाव दिया गया, लेकिन उसके सुझाव का कार्यान्वयन नहीं हो सका।''[6]

9.4 ऐसे हुआ योजना का विस्तार

सरकार इस क्षेत्र की समस्या के प्रति कैसे चेती उसके बारे में लेखक को डॉ० जगन्नाथ मिश्र, भूतपूर्व मुख्यमंत्री ने बताया। उन्होंने कहा, ''...उस समय मैं सिंचाई मंत्री था। मैं मुख्यमंत्री बना अब्दुल गफ्फूर साहब के बाद। जिस क्षेत्र में मेरा कार्य क्षेत्र है–सहरसा, सुपौल, मधुबनी, दरभंगा, सीतामढ़ी, अररिया आदि की मुख्य समस्या बाढ़ ही है। बागमती, कोसी और महानन्दा उस इलाके में प्रलयंकारी बाढ़ लाती हैं। मेरी कोशिश थी अगर हम लोग सरकार की तरफ से कुछ कर सकें तो करना चाहिये। यह एक ईमानदार पहल थी पर असल में यह काम तो इंजीनियरों को करना था। हमारा बस सुझाव भर था कि तटबन्ध बना कर बागमती की बाढ़ की विभीषिका को रोका जाए। इससे हमारे दरभंगा और मधुबनी के क्षेत्रों को भी लाभ पहुँचने वाला था। अधवारा समूह की नदियाँ मधुबनी और दरभंगा होकर बहती हैं। अधवारा समूह के लिए हमारी तीन फ़ेज़ की योजना थी जो कि बन नहीं पायी। बागमती परियोजना इंजीनियरों को बनानी थी, गंगा फ्लड कन्ट्रोल कमीशन आदि का यह काम था। हमारी इच्छा केवल बाढ़ से उस क्षेत्र को निजात देने की थी। मैं सिंचाई मंत्री रह चुका था और वहाँ की आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को समझता था और मेरे मुख्यमंत्री बनने के बाद भी मेरी नज़र उन प्राथमिकताओं पर थी। सीतामढ़ी, मधुबनी और दरभंगा बाढ़ से तबाह होता था हर साल इसलिए उनकी चिन्ता स्वाभाविक थी।''[7]

अधवारा समूह की बाढ़-कुछ भी नहीं बदला है। रंजीत

इस तरह से 1975 में तीन विभिन्न स्तरों पर पूरी की जाने वाली अधवारा बाढ़ नियंत्रण परियोजना की नींव पड़ी (चित्र-1.8, अध्याय-1)।

फ़ेज-1 : इस फ़ेज में शिकाओ स्लुइस के नज़दीक पुपरी प्रखंड के हिरौली गाँव में दरभंगा-बागमती नदी के दाहिने किनारे से लेकर और सौली घाट से नीचे बायें किनारे पर हायाघाट तक तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव है। त्रिमुहान घाट के नीचे दरभंगा-बागमती और रातो के किनारे तोड़ कर बहने के कारण बाढ़ समस्या काफी गंभीर हो जाया करती है। पानी के इस फैलाव को रोकने के लिए दरभंगा-बागमती के दाहिने किनारे पर एकमीघाट से शुरू करके त्रिमुहान घाट, निहसा होते हुए शिकाओ स्लुइस के पास पुपरी प्रखंड के हिरौली गाँव तक 66 किलामीटर लम्बे तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव है। इसके साथ ही इस नदी के बायें किनारे पर मब्बी से सौलीघाट तक 32 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव है। पुपरी में खिरोई तटबन्ध की 7 किलोमीटर लम्बाई को ऊँचा करना तथा ऐग्रोपट्टी के नज़दीक इस तटबन्ध में 360 मीटर गैप को भी भरना इस योजना का हिस्सा है। इतना कर लेने पर 871 वर्ग किलोमीटर भूमि को बाढ़ से सुरक्षा दी जा सकेगी।

फ़ेज-2 : इस फ़ेज में रातो और धौस नदियों के दोनों किनारों पर कुल मिला कर 88 किलो मीटर लम्बे तटबन्ध बनाने की योजना है जिससे 230 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा मिलेगी।

फ़ेज-3 : अंतिम फ़ेज में सोनबरसा और सोनबरसा बाजार के बीच जमुरा, अधवारा और झीम नदियों पर लगभग 54 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध बना कर 218 वर्ग किलोमीटर भूमि को बाढ़ से सुरक्षा दिये जाने की बात कही जाती है।[8]

अधवारा समूह की नदियों पर तटबन्धों के बन जाने के कारण हायाघाट के नीचे वाले करेह तटबन्धों पर पानी का दबाव बढ़ेगा। एक अनुमान के अनुसार लगभग 40,000 घनसेक का अतिरिक्त प्रवाह दरभंगा-बागमती तटबन्धों के कारण हायाघाट पर प्रवाहित होगा। अध्ययन से यह भी पता लगा है कि बागमती तथा अधवारा समूह की नदियों की बाढ़ अक्सर एक साथ भी आया करती है। इस अतिरिक्त प्रवाह के कारण उच्चतम बाढ़ स्तर और बढ़ेगा और यह वृद्धि लगभग 2 फुट (60 सेन्टी मीटर) होगी और इस कारण करेह के तटबन्धों को इसी अनुपात में और ऊँचा करना पड़ेगा। बागमती परियोजना के प्राक्कलन में इस काम का प्रावधान कर लिया गया है।

दरभंगा-बागमती से कमला नदी की दो पुरानी छाड़न धारायें बायें तट पर संगम करती हैं जिनके नाम क्रमशः छाजरी और बछराजा हैं। छाजरी का पानी किनारे तोड़ कर नहीं बहता है जब कि बछराजा छिछली है। इस नदी के बाएँ तट पर 13 कि०मी० लम्बे तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव है।

नई अधवारा परियोजना जो 1975 में प्रकाश में आयी है और जिस का क्रियान्वयन होना है वह 1954 में विशेषज्ञों द्वारा यह कह कर खारिज की गयी थी कि इससे क्षेत्र की बाढ़ समस्याएँ और दुरूह होंगी। खिरोई तटबन्ध की योजना 1955 में स्वीकृत हो गयी थी और उस पर काम भी तभी शुरू हो गया था। वास्तव में यह समय कोसी परियोजना के तटबन्धों की स्वीकृति के बाद का है। कोसी पर तटबन्ध बन जाने पर विशेषज्ञों की राय केवल हाँ में हाँ मिलाने तक सीमित रह गयी। तटबन्धों से बाढ़ सुरक्षा की बहस केवल कोसी के लिए हुई थी उसके बाद तो तटबन्धों की ही बाढ़ आ गयी। दरभंगा में लहेरियासराय से जठमलपुर के बीच का क्षेत्र जिसने देखा है वह यह बात आसानी से समझ सकता है कि खिरोई तथा दरभंगा-बागमती के बीच के दोआब में बसने वाले गाँवों की स्थिति भविष्य में क्या होने वाली है यद्यपि आधिकारिक रूप से मात्र 3,600 एकड़ भूमि की भविष्य में तबाही होना कबूल किया जाता है। इस तबाही में मुजफ्फरपुर-दरभंगा तथा सीतामढ़ी-दरभंगा मार्गों का अपना विशिष्ट योगदान होगा। योजना के दूसरे खण्ड में रातो और धौंस पर तटबन्ध बनेंगे। इस दोनों नदियों के बीच बसे क्षेत्र की परेशानियाँ इन तटबन्धों के साथ साथ बढ़ेंगी। कुछ ऐसा ही तीसरे खण्ड में अधवारा के दाहिने तटबन्ध और सीतामढ़ी-सोनबरसा मार्ग से सीमाबद्ध क्षेत्र में भी होगा। इन सभी इलाकों में यह मान भी लिया जाए कि बाहर से आया सारा पानी रूपांकित क्षमता के अनुसार तटबन्धों के बीच नदियों से होकर बह जायगा तथा तटबन्धों के बीच में सिल्ट का भी कोई जमाव नहीं होगा और यह तटबन्ध कभी नहीं टूटेंगे तो भी वर्षा के पानी की निकासी की गंभीर समस्याएँ देखने में आयेंगी। साथ ही बहुत सा पानी इन नदियों में तटबन्धों के कारण बाहर रुक जायगा जिससे तटबन्धों के बाहर भी जल जमाव होगा। रातो और धौंस नदियाँ प्रायः उत्तर से दक्षिण दिशा में बहती हैं जिसके दोआब का पानी दक्षिण में सुरसरी से निस्सरित होता है। सुरसरी पर तटबन्ध बनने से दोनों नदियों के बीच के क्षेत्र में यह प्रवाह बाधित होगा और पानी अधिक दिन बना रहेगा जिसको कम करने के लिए यह योजना बनायी गयी है। खिरोई के बायें तटबन्ध तथा रातो के दाहिने तटबन्ध के बीच के दोआब के प्रवाह को भीठा के पास सुरसरी में डालने के लिए प्रयास किया जा रहा है। इस क्षेत्र में हरदी, कण्टावा, बरवे, माढ़ा, हरसिंघी आदि धाराओं का पानी प्रवाहित होगा और निश्चित रूप से जल संकुलन का कारण बनेगा।

बाढ़ सुरक्षा की यह सारी योजना तत्काल सहायता की योजना है जिसके दूरगामी परिणाम अभी से ही भयावह लगते हैं।[9]

9.5 स्थानीय जनता का समस्या विश्लेषण और योजना का मूल्यांकन एवं विरोध

पुपरी बाजार के पुराने समाजवादी नेता है रघुनाथ जिनके साथ लेखक को अधवारा समूह की घाटी के बहुत से स्थानों पर घूमने का मौका मिला।

रघुनाथ

वे बताते हैं, ''...1954-55 में समाजवादी पार्टी ने लोगों से देश के लिए दिन में 'एक घन्टा दो' के नारे के साथ मुहम्मदपुर (बाजपट्टी प्रखंड) से मुहम्मदिया नदी, जो अधवारा ग्रुप की एक मृत धारा है, बर्री-बेहटा तक 13 मील लम्बाई में उड़ाही कर दी थी और उससे सिंचाई की व्यवस्था हुई थी। मगर ''...अधवारा पर जब से बांध बना तब से यहाँ का किसान दरिद्र हो गया। बांध जब नहीं था तब बहुत फसल होती थी। यूं समझिये कि प्राय: हर किसान के यहाँ पूरे साल कोई न कोई सामाजिक आयोजन चलता ही रहता था मगर अनाज की कमी नहीं होती थी। आज स्थिति यह है कि किसानों को अपने उपयोग के लिए अनाज खरीदना पड़ता है। पाँच-पाँच चावल मिलें थीं पुपरी में और यह सब अब बंद हो गयी हैं। धान का कटोरा था हमारा इलाका। नदी पर तटबन्ध बनने के बाद खेतों को ताज़ा मिट्टी मिलनी बंद हो गयी। जरूरत के समय पानी मिलना बंद हो गया तब धान या कोई फसल कहाँ से बचेगी? बाढ़ के मौसम में बाजपट्टी से इधर का इलाका अक्सर कमर भर पानी में डूबा रहता है। सारे रास्ते बंद और दुनियाँ ठहर जाती है हमारे लिए। एक ओर नदी में बाढ़ तो दूसरी ओर ऊपर से बारिश। बाजपट्टी के पास एक नहरनुमा नाला देखा होगा आपने। उसमें लखनदेई का पानी आता है और वह नाला नदी बन जाता है। पुपरी में उसमें बुढ़नद नदी का पानी मिल कर और भी ज्यादा तबाही पैदा करता है। बुढ़नद के बायें किनारे पर कभी निलहे गोरों की कोठी हुआ करती थी जिनकी जमीन नदी के दोनों ओर थी। उनकी खेती को बुढ़नद से पानी मिलता था।

यहाँ चौधन्ना धान की दो फसलें होती थीं। इसमें तुलसी फूल, बासमती, परवापंख शामिल था। भदई फसल अप्रैल में बोई जाती थी और जुलाई में काट ली जाती थी। जुलाई में फिर अगहनी धान लगाया जाता था और यह फसल दिसम्बर में काटी जाती थी। एक कट्ठे में 2 मन से ढाई मन धान हो जाता था और कभी खाद नहीं देनी पड़ती थी। तब न सिंचाई की चिन्ता थी और न ही कोई दवा देनी पड़ती थी। अगहनी धान के साथ-साथ मसूर और खेसारी भी बो दी जाती थी। एक-एक मर्द जितना ऊँचा उनका लत्तर फैलता था कि उसमें अगर जानवर चला जाए तो उसमें से उसका निकलना और उसे खोज पाना दोनों ही मुश्किल होता था। अरहर, मटर और चना भी खूब होता था। गन्ना भी होता था और यह गन्ना रैयाम और रीगा चीनी मिल में जाता था। रैयाम की चीनी मिल तो बन्द हो गयी मगर रीगा चीनी मिल का अभी भी पुपरी में कांटा लगता है और गन्ना वहाँ जाता है। मगर गन्ना उगाना यहाँ लोगों ने अब बहुत कम कर दिया है क्योंकि एक तो रीगा मिल वालों को गन्ने की जरूरतें उनके आस-पास के इलाकों से पूरी हो जाती हैं और दूसरे वे भुगतान के नाम पर पुर्जी काट देते थे उससे पैसा मिलने में अनावश्यक विलम्ब होता था। सरसों, तोरी, राई और तीसी की भी यहाँ अच्छी खासी फसल हो जाती थी।

नदी के किनारे तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव सरकार का था, यह कभी जनता की मांग नहीं थी। बर्री-बेहटा में अधवारा नदी पर तटबन्ध बनाये जाने के खिलाफ एक सम्मेलन हुआ था जिसमें तत्कालीन सिंचाई मंत्री राम चरित्र सिंह भी आये थे और सम्मेलन में उनसे तटबन्ध योजना वापस लेने की अपील की गयी थी। सरकार लेकिन अपने फैसले पर डटी रही। यह 1954 के पहले या उसके आस-पास की बात है। सम्मेलन का आयोजन मुहम्मदपुर के राम चरित्र मंडल ने किया था जिन्होंने 'एक घन्टा देश को देने' का कार्यक्रम चलाया था।

अधवारा योजना पर जब काम शुरू हुआ तब गंगटी तथा बर्री-बेहटा गाँव के पास योजना के विरोध में कुछ दिनों तक काम रोका भी गया था। हरिहरपुर के किसानों ने भी इसका विरोध किया था मगर सरकार इसे किसानों के हित की योजना मानती थी और अपना निर्णय बदलने या उसका पुनरीक्षण करने के लिए तैयार नहीं थी। 1960 से 1962 तक यह काम पूरा कर लिया गया। यह काम केवल अधवारा नदी पर ही किया गया, उसकी सहायक धाराओं पर नहीं।''[10]

अधवारा की पुरानी धार और रातो तथा माढ़ा के बीच की दूरी बहुत कम है और यहाँ के किसान बताते हैं कि इनके बीच अगर एक सम्पर्क नहर बना दी जाए तो इससे बहुत ज्यादा क्षेत्र पर सिंचाई हो सकती है। यह पहले नाला था मगर अब पट गया है। आज से कोई पचास साल पहले इस (अधवारा की पुरानी धार) की उड़ाही की गयी थी। इसको अगर गंगटी से जोड़ दिया जाए तो यह पुरानी धार जिन्दा हो जायेगी। ऐसा कर देने पर नारायणपुर पंचायत, राजनगर पंचायत, पुपरी पंचायत, हरिहरपुर पंचायत और बर्री-बेहटा समेत कोई सात पंचायतों में सिंचाई की व्यवस्था हो जाती। इस प्रस्ताव को स्थानीय लोगों ने सरकार के सामने कई बार रखा, आन्दोलन भी किया मगर सरकार है कि सुनती ही नहीं है। गंगटी में जो स्लुइस बना है वह जाम है और काम नहीं करता। जब स्लुइस काम नहीं करता तो लोगों ने नहरें तक जोत लीं। जब तक इसे सुधारा नहीं जायेगा तब तक हमारी हालत यही रहेगी।

हरिहरपुर के किसान राम चन्द्र सिंह कहते हैं, ''...यह बांध तो हमारे लिए अभिशाप बन गया है। तटबन्ध तो बना है केवल भारतीय भाग में। नेपाल में तो सब खुला हुआ है। नेपाल वाला पानी तो अनियंत्रित भाव से यहाँ आता है और जहाँ अभी हम खड़े हैं वहाँ महीने भर से ज्यादा डेढ़ मर्द पानी रहता है। धारा में तेजी इतनी होती है कि आप उससे नजर नहीं मिला सकते। यह सारा पानी पुपरी की तरफ जाता है। अगर कोई बीमार पड़ गया तो उसे इसी तेज धारा में पुपरी या उससे आगे ले जाना पड़ेगा। पुपरी से आगे मरीज नहीं जाता, उसकी लाश ही जाती है बरसात में। हम लोगों की मांग है कि जो कुछ भी पानी का नियंत्रण या वितरण करना है वह यथा संभव ऊपर की ओर कीजिये जिससे उसका वितरण आसान हो सके। सरकार कहती है कि हम नियंत्रण नीचे करेंगे और पानी को ऊपर भेजने का प्रयास करेंगे।

राम चन्द्र सिंह

उस हालत में जब नीचे एक मर्द पानी खड़ा होगा तब तो हमारे यहाँ टखने भर पानी पहुँचेगा। यह छोटी सी बात हम उन्हें कैसे समझायेंगे? नीचे अगर इतना पानी खड़ा होगा तो क्या उधर के गाँव वाले बांध को रहने देंगे? वह उसे काट देंगे। यह सारी योजना बनायी गयी नेताओं और अफसरों की जेब भरने के लिए। आम लोगों पर इसका कितना बुरा असर पड़ेगा, यह किसी ने नहीं सोचा? नदी को छेड़ना नहीं चाहिये और अगर छेड़ते हैं तो फिर उसे छोड़ना नहीं चाहिये। आधी-अधूरी योजनाओं का परिणाम बहुत बुरा होता है। हमने अपने बचपन में जितना धान, दलहन और तेलहन अपने घर में देखा है वह अब देखने को नसीब नहीं होता। सरकार ने गेहूँ का मूल्य 1085 रुपये प्रति क्विंटल रखा है और खरीद करने की कोई व्यवस्था ही नहीं है। तब हमें 850 रुपये पर भी खरीदार नहीं मिलता। अरहर अब हमारी पहुँच से बाहर है। एक बार जरूरत पड़ी तो बाजार में पता लगाया था तब 5700 रुपये क्विंटल अरहर और 3400 रुपये क्विंटल चने की दाल की कीमत थी। अब यह दालें केवल विवाह-शादी की शोभा हैं। एक बार हम लोगों ने सीतामढ़ी में बैठ कर प्रस्ताव किया था कि एक युवक सेना बने जो इन सारे बांधों को ढाह दे या जगह-जगह काट दे। बाढ़ तो अभी भी आती ही है मगर उसकी मिट्टी हमें नहीं मिलती है। पुपरी में मिलने वाला रोजगार खतम हो गया है—चमक दमक जरूर बढ़ी है।''[11]

फुलवरिया (हरिहरपुर) के किसान दिलीप कुमार सिंह का कहना है, ''शिवहर चलिये मेरे साथ, मैं आप को एक-एक हाथ की मकई की बाल दिखाऊँगा जो कि बिना खाद या दवाई की होती है।... यहाँ हमारी कोशिश अब यह है कि खेती करना छोड़ दें। बहुत से लोगों ने आपस में मिल कर जमीन में पोखरी खुदवा भी दी है। मछली पालने में खेती से कहीं ज्यादा फ़ायदा मिलता है उन लोगों को। मछली पालने के साथ बस एक ही परेशानी है कि उसके लिए कहीं से ऋण नहीं मिलता है क्योंकि उसका बीमा नहीं होता। अगर आप के पास अपनी पूंजी नहीं है तो फिर कर्ज के भरोसे यह काम नहीं हो सकता। खेती को अगर उद्योग घोषित नहीं करेंगे तो किसान बच नहीं पायेगा। मजदूर मांगता है सौ रुपये रोज और अनाज हमारा बिकता ही नहीं है, तब उतनी मजदूरी कहाँ से देंगे? इस बार सरकार ने बाढ़ राहत के नाम पर फसल के नुकसान का कुछ लोगों को मुआवजा दिया। किसान तो यहाँ सारे हैं, उसमें छोटे-बड़े का क्या मतलब होता है? सौ लोगों को नुकसान पहुँचा और पंचायत में खबर आती है कि बीस लोगों के लिए मुआवजे की रकम आयी है। अब किसे मिलेगी और किसे नहीं? जाहिर है जो नेता का करीबी है उसे मिलेगी और जो पिछलग्गू नहीं है वही छूटेगा। आप पुराने नक्शे देखेंगे तो पता लगेगा कि बागमती पहले इधर होकर ही बहती थी। 1934 के भूकम्प के बाद उसकी धारा सूख गयी और शिवहर की तरफ चली गयी। जब तक बागमती यहाँ थी तब तक यह इलाका खुशहाल था। वह गयी तो खुशहाली गयी। सिंचाई की तो यहाँ जरूरत ही नहीं पड़ती थी। धान, जौ, भदइ का मक्का, चना, खेसारी, मसूर आदि सभी कुछ हो जाता था। रबी की फसलों के लिए पानी बहुत कम लगता था। अब तो पानी भी चाहिये। 10 किलो प्रति कट्ठा डी०ए०पी० दे रहे हैं। 6 किलो प्रति कट्ठा यूरिया देते हैं, तब जाकर 9 से 10 पसेरी (सवा मन से डेढ़ मन) अनाज पैदा होता है। डी०ए०पी० का दाम 12 से 14 रुपये प्रति किलो बैठता है और यूरिया 6 से 6.5 रुपये प्रति किलो मिलता है। 1.5 से 2 किलो पोटाश लग जाता है। यह 9 रुपया किलो मिलता है। इस तरह से एक कट्ठे में 165-170 रुपया केवल खाद पर खर्च होता है। यह खर्च पहले तो नहीं था। गेहूँ में दवा तभी देनी पड़ती है जब पत्ते पीले पड़ने लगते हैं। उस समय जिंक की फुहार देनी पड़ती है। सिंचाई बोरिंग से होती है, यह एक से दो बार करनी पड़ती है। 70 रुपया प्रति घंटे के हिसाब से सिंचाई का खर्च आता है। मिट्टी की गुणवत्ता के आधार पर 3 से 5 कट्ठा जमीन एक घन्टे में सींची जा सकती है। थ्रेशर वाले को देना पड़ता है। इसके बाद मजदूरी है। यह सब जोड़ कर देख लीजिये, कितना पड़ता है। इसमें किसान के समय और श्रम की कीमत शामिल नहीं है। किसानों के हित में किसी राजनैतिक पार्टी का संगठन नहीं है। पार्टियों में किसानों के मोर्चे हैं, सब वोट ठगने का जरिया है। यह मोर्चे वाले लोग एक दिन खेत में कुदाल चला कर दिखायें न?''[12]

होना चाहिये यह कि नदी में पानी की सतह उठायी जाए, चाहे वह संचय कर के हो या फिर जगह जगह पर छोटे चेक बांध बना कर। यह कर लेने के बाद नहरें चाहिये। अगर जरूरत पड़े तो पानी का बटवारा या राशनिंग की जाए, बहुत से प्रान्तों में ऐसा हो भी रहा है। यह सब समाज पहले अपने दम पर कर लेता था और अब यह काम तब होगा जब व्यवस्था को कुछ करने की नीयत होगी।

बंध जाने के बाद नदी की गाद खेतों पर नहीं आ पाती है। जो कुछ भी खेतों में पहुँचता है वह छना हुआ पानी पहुँचता है जो नमी की जरूरत तो पूरा करता है मगर जमीन की उर्वरता पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अधवारा समूह की नदियाँ छोटी-छोटी हैं और पहले किसान इन नदियों पर बांध, बांध कर पानी इधर से उधर करके सिंचाई कर लेता था और एक नदी के पानी को दूसरी बगल की नदी में भेज देने की क्षमता रखता था। अब यह सारी व्यवस्था सरकार के पास चली गयी है। नदियों पर तटबन्ध बना कर पारम्परिक व्यवस्था को अगर भंग नहीं किया गया तो कम से कम विकृत जरूर किया गया है। सरकारी सिंचाई तो मिली नहीं, जो सामाजिक व्यवस्था थी वह भी कुर्बान हो गयी। अब सहारा लेना पड़ता है बोरिंग से सिंचाई का और रासायनिक खादों का। दोनों के लिए पैसा चाहिये जबकि यह सुविधायें पहले मुफ्त में मिला करती थीं। इस तरह से खेती घाटे का सौदा हो गयी।

भिट्ठा मौजा के जलालपुर गाँव के पास से पिलोखर, रातो और अधवारा नदियाँ थोड़े-थोड़े फासले पर बहती थीं। उस नदी की सिंचाई की जरूरत पूरी कर लेने के बाद पिलोखर को मिट्टी के बांध से बांध कर पानी रातो में लाया जाता था। रातो के इलाके की सिंचाई कर लेने के बाद पानी को अधवारा में भेज दिया जाता था। इस तरह जहाँ-जहाँ छोटी नदियाँ थीं वहाँ सिंचाई की व्यवस्था किसानों द्वारा स्थानीय रूप से कर ली जाती थी। समय के साथ वह सारी व्यवस्था ध्वस्त हो गयी क्योंकि आज़ादी के बाद किसानों के योगक्षेम का जिम्मा सरकार ने अपने ऊपर ले लिया। जिम्मेवारी लेना और उसे निभाना अलग-अलग चीजें हैं हैं और उसमें किसान धोखा खा गया।''

पुपरी के किसान और उद्योगपति धर्मनाथ प्रसाद का कहना है, ''...1960 के दशक के पहले श्रीकृष्ण सिन्हा के मुख्यमंत्रित्व काल तक यहाँ नदियों पर कोई तटबन्ध नहीं था उस समय खरीफ में धान, मक्का आदि और रबी में जौ, दलहन और तेलहन की जबर्दस्त फसल हुआ करती थी। तटबन्ध बना तो उसका टूटना भी शुरू हुआ। खेतों पर गाद की जगह बालू पड़ने लगा। इस परिस्थिति से निपटने के लिए

धर्मनाथ प्रसाद

किसानों की तैयारी नहीं थी जिससे किसानों को नुकसान पहुँचने लगा और उनकी हालत खराब होने लगी। स्थानीय रोजगार खतम हो गया और पहले मजदूर और बाद में किसान भी पलायन के लिए मजबूर हुए। उद्योग पर उसका बुरा असर पड़ा। पुपरी में चावल बनाने की पाँच मिलें थीं। हमारी जानकी राइस ऐण्ड ऑयल मिल सबसे पुरानी थी। यहाँ से लेकर नरकटियागंज तक प्रायः सभी रेलवे स्टेशनों के पास एक न एक मिल जरूर थी। घोड़ासाहन, छौड़ादानों, अदापुर, नरकटियागंज और भैरोगंज आदि सभी जगहों पर राइस मिलें थीं। सीतामढ़ी में 7-8 मिलें थीं। अब सब की सब बन्द हो चुकी हैं। अब धान आता ही नहीं है कि हम चावल बनायें। कच्चा माल ही खत्म हो गया तो कारखाना कहाँ से चलेगा? बनने के बाद तटबन्ध अगर टूटता है तो एक तरह की परेशानी होती है और अगर बचा रह जाता है तो पानी निकल नहीं पाता और जल-जमाव बढ़ता है। इन दोनों में से ही कुछ हर जगह होना है। नदियाँ छिछली हो गईं और उनकी तलहटी ऊपर उठने लगी। पहले बाढ़ के पानी का तीन-चार दिन से ज्यादा ठहरना नहीं होता था। फसल पूरी होती थी। रबी में मसूर और तीसी जबर्दस्त होती थी। कलकत्ता की अनाज मंडी तक यहाँ की मसूर की दाल भरी रहती थी। यह माल ट्रेन से जाया करता था। उस वक्त चीनी मिलें भी बहुत थीं और वह सब की सब चालू हालत में थीं। 1947-1960 का समय बिहार में कृषि का स्वर्णिम काल था। नेपाल तक से चावल बनाने के लिए यहाँ धान आया करता था। अब मसला ठीक उलट गया है। अब यहाँ का धान नेपाल जाता है। राइस मिल बन्द होने के पीछे कई कारण थे। एक तो सरकार ने लेवी वसूल करना शुरू कर दिया जो मिलों के काम में बेवजह दखलअंदाजी थी। इसके अलावा नेपाल में सड़कें पहले बहुत कम थीं जिसकी वजह से उन्हें आसान पड़ता था कि अपना माल इधर लायें। अब वहाँ रास्ते सुधर गए हैं और उनकी मिलें भी चालू हालत में हैं। इसके अलावा यहाँ तो धान का उत्पादन घटा ही है। अब बिहार में मुख्यतः बक्सर, सासाराम और भभुआ आदि में राइस मिलें बाकी बची हैं। शायद यह सोन नहर की कृपा से होता हो। अब वहीं से चावल इधर और नेपाल में आता हैं और यही बिहार की त्रासदी है। यहाँ का मजदूर पंजाब, हरयाणा जा रहा है। अगर वह वहाँ न काम करे तो पंजाब, हरयाणा की खेती का भट्ठा बैठ जाए। मजदूर महाराष्ट्र और असम में भी जाता है यानी अब हमलोग अनाज निर्यात करने की जगह लेबर सप्लायर हो गए। वर्तमान सरकार कहती जरूर है कि बिहार में ही रोजगार उपलब्ध करवायेंगे। ऐसा हो तो कितना अच्छा हो। अभी तो सरकार का किया हुआ दिखायी पड़ने लगा है, वर्षों से यह सब बंद था।''[13]

सरकार का किया दिखायी तो जरूर पड़ रहा है मगर 2007 के बाद जिस तरह से सड़कों और तटबन्धों के निर्माण में तेजी आयी है उसका परिणाम दिखायी पड़ने में अभी थोड़ा समय लगेगा। यह सभी काम अपरिहार्य है और इन्हें रोका नहीं जा सकता और रोकना भी नहीं चाहिये मगर उनमें जल-निकासी की कितनी व्यवस्था की गयी है, और इसका क्या असर पड़ने वाला है यह अभी भविष्य के गर्भ में है।

2008 मार्च में रामचन्द्र पूर्वे ने बिहार विधान सभा में एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव रखते हुए कहा, ''...सीतामढ़ी, दरभंगा, मुजफ्फरपुर जिला के 11 प्रखंडों की 70 लाख आबादी प्रतिवर्ष अधवारा समूह की नदियों की बाढ़ की विभीषिका से तबाह होती रहती है। बड़े पैमाने पर इन प्रखंडों में फसलों की क्षति होती है। ग्रामीण सड़कें तहस नहस हो जाती हैं। झोंपड़ीनुमा घर की जल-समाधि होने के कारण विस्थापित लोगों को बांधों तथा सड़कों के किनारे खुले आकाश में अपना जीवन बिताना पड़ता है।''

वे चाहते थे कि बाढ़ की इस त्रासदी से इस क्षेत्र को बचाने तथा बाढ़ के पानी का सही प्रबन्धन कर सिंचाई की समुचित व्यवस्था हेतु अधवारा नदी समूह की एक समेकित योजना बने। इसके उत्तर में रामाश्रय प्रसाद सिंह, मंत्री ने कहा, ''...यह समस्या तो है और सच्चाई है इसको इनकार नहीं किया जा सकता। सिंचाई सुविधा प्रदान करने के पूर्व अधवारा बेसिन को बाढ़ मुक्त किया जाना आवश्यक है। अतः अधवारा समूह बाढ़ प्रबन्धन की विस्तृत योजना प्रतिवेदन तैयार कर गंगा बाढ़-नियंत्रण आयोग, भारत सरकार को समर्पित है। आयोग से योजना की स्वीकृति प्राप्त करने की कार्यवाही की जा रही है। योजना के कार्यान्वयन हेतु वित्तीय वर्ष 2008-09 में आवश्यक बजट प्रावधान भी किये गए हैं। जहाँ तक सिंचाई सुविधा प्रदान करने का प्रश्न है उसके लिए भी डी०पी०आर० तैयार करने की कार्यवाही की जा रही है।''[14] ऐसी बातें 1950 के दशक में भी सिंचाई विभाग के मंत्री कहा करते थे। इसी से यहाँ के बाढ़ नियंत्रण और सिंचाई की प्रगति का अंदाजा भी लग जाता है।

संदर्भ :

1. सिन्हा, सुआ लाल; The Adhwara Basin Problems, The Searchlight, पटना, जनवरी 12-1954, पृष्ठ 4-5
2. सिंह, छोटे प्रसाद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 21 जून 1957, पृष्ठ 22
3. सिंह, दीप नारायण; उपर्युक्त, 7 अप्रैल 1958, पृष्ठ 96
4. पूर्वे, राज कुमार; उपर्युक्त, 31 जुलाई 1965, पृष्ठ 54
5. झा, तेज नारायण; उपर्युक्त, 8 सितंबर 1966, राज्य में बाढ़, अनावृष्टि और सिंचाई पर विचार विमर्श, पृष्ठ 39
6. देवी, श्रीमती प्रतिभा; उपर्युक्त, 31 जुलाई 1967, पृष्ठ 57
7. मिश्र, डॉ० जगन्नाथ, भूतपूर्व मुख्यमंत्री, बिहार, व्यक्तिगत संपर्क
8. Report of the Second Bihar Irrigation Commission, Water Resources Department, Government of Bihar, Appendix 4/53-55.
9. मिश्र, दिनेश कुमार; बाढ़ से त्रस्त-सिंचाई से पस्त—उत्तर बिहार की व्यथा-कथा (1990), समता प्रकाशन, पटना, पृष्ठ 87
10. रघुनाथ, ग्रा०/पो० पुपरी, जिला सीतामढ़ी से व्यक्तिगत संपर्क
11. सिंह, रामचन्द्र; ग्राम हरिहरपुर, प्रखंड पुपरी, जिला सीतामढ़ी से व्यक्तिगत संपर्क
12. सिंह, दिलीप कुमार; ग्राम फुलवरिया, प्रखंड पुपरी, जिला सीतामढ़ी से व्यक्तिगत संपर्क
13. प्रसाद, धर्मनाथ, पो० पुपरी, जिला सीतामढ़ी से व्यक्तिगत संपर्क
14. अधवारा समूह की नदियों पर ध्यानाकर्षण प्रस्ताव और सरकार का उत्तर, बिहार विधान सभा, 12 मार्च 2008, पृष्ठ 32-33

10

करेह कथा

10.1 पृष्ठभूमि

अभी तक हमने बागमती-अधवारा घाटी में बाढ़ और सिंचाई के विभिन्न आयामों पर चर्चा की है और उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर एक नज़र डाली है। बाढ़ नियंत्रण की योजनाएं किस तरह और किन परिस्थितियों में शुरू हुईं और उनका क्या अंजाम हुआ, इसका भी एक अध्ययन हम कर आये हैं। बागमती नदी के ऊपरी हिस्से में रहने वाले लोग आज भी किस तरह बाढ़ समस्या से जूझ रहे हैं, उसे हमने जानने की कोशिश की है। बागमती के निचले हिस्से की स्थिति, जिसे करेह कहा जाता है, इतनी चिन्तनीय है कि देखे बिना विश्वास नहीं किया जा सकता। दरभंगा जिले में हनुमान नगर, केवटी, जाले और बहादुरपुर प्रखंड से शुरू होने वाली तबाही की यह कहानी करेह के माध्यम से बदला घाट में कोसी के हवाले कर दी जाती है। इस रास्ते में समस्तीपुर जिले के वारिस नगर, शिवाजी नगर, सिंघिया, रोसड़ा, हसनपुर तथा बिथान और खगड़िया जिले के अलौली, खगड़िया सदर तथा मानसी प्रखंड पड़ते हैं। बरसात के मौसम में समुद्र सा दिखाई पड़ने वाला यह इलाका इंजीनियरिंग की गैर-जिम्मेवाराना हेकड़ी या मूर्खता का नायाब नमूना है जिसकी जिम्मेवारी लेने का हौसला किसी इंजीनियर को नहीं है और न अपनी गलती के लिए कोई पाश्चाताप करने की मर्यादा ही है। हम इस क्षेत्र के बारे में थोड़ी चर्चा कर लेते हैं।

10.2 पानी का घर

कोसी, कमला और बागमती नदियों के पानी से घिरे हुए इस क्षेत्र में पानी की निकासी बाधित होने की थोड़ी-बहुत शिकायतें पहले भी थीं मगर यह जमाव दो-तीन दिन से ज्यादा नहीं हुआ करता था। चित्र-10.1 में इस इलाके की नदियों और तटबन्धों की स्थिति को दिखाया गया है। यहाँ कोसी नदी पर सबसे पहले तटबन्ध बने जिसके पश्चिमी तटबन्ध

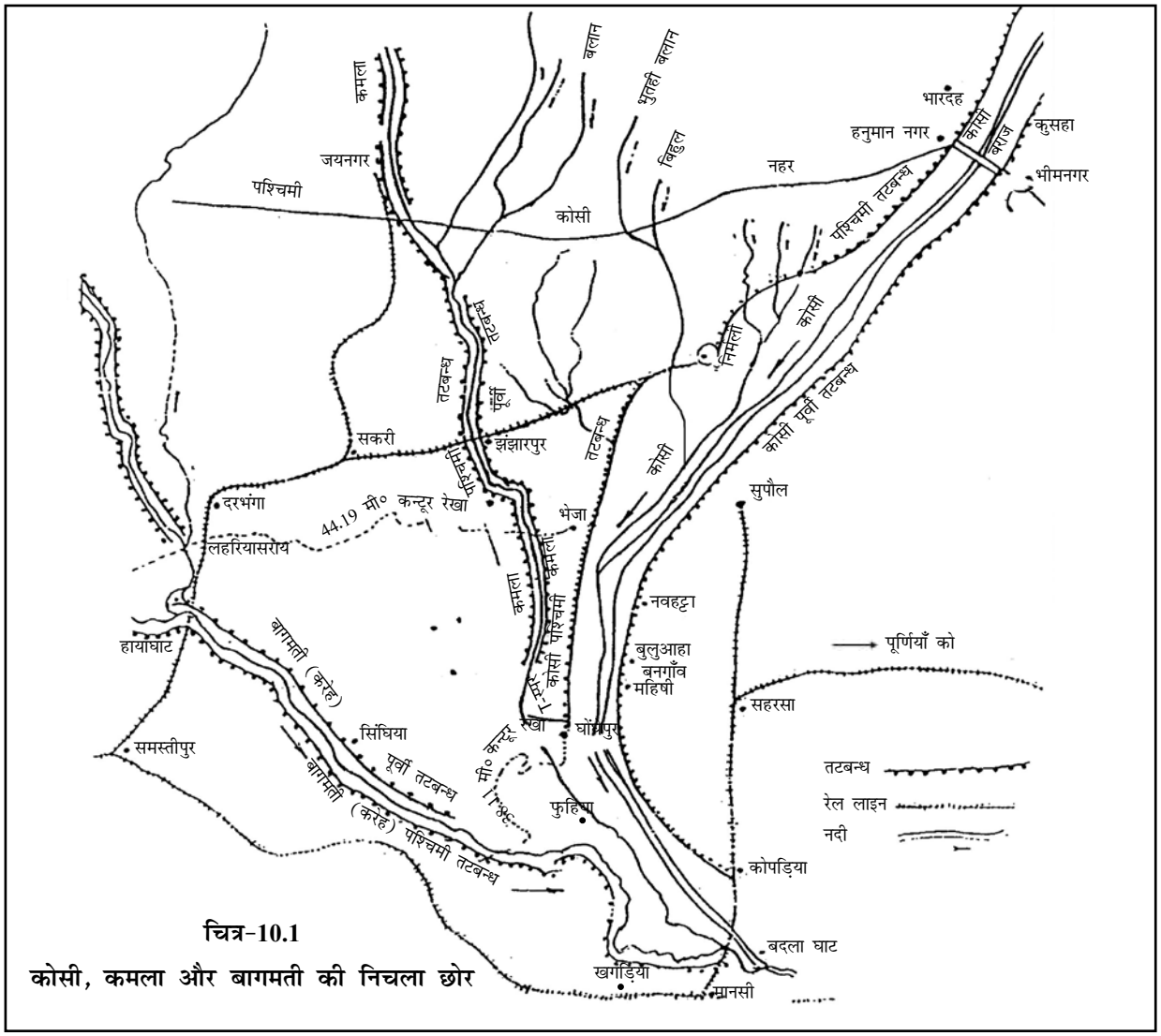

चित्र-10.1

कोसी, कमला और बागमती की निचला छोर

को घोंघेपुर में लाकर छोड़ दिया गया जबकि पूर्वी तटबन्ध को कोपड़िया रेलवे स्टेशन के पास रेल लाइन से जोड़ दिया गया। परिणामत: रेल लाइन पर बने पुल की वजह से नदी के पानी की निकासी में और इस तटबन्ध की वजह से कोसी के पूर्वी तटबन्ध के पूरब में जल-निकासी में बाधा पड़ी। जैसे-जैसे बीरपुर बराज से नीचे जाते हैं वैसे-वैसे इस क्षेत्र की जल-जमाव की समस्या और भी ज्यादा कष्टप्रद हो गयी। घोंघेपुर के नीचे कोसी का पश्चिमी किनारा खुला रहने के कारण कोसी के पानी को उधर फैलने का मौका मिल गया। इतना ही नहीं पश्चिमी तटबन्ध पर घोंघेपुर के पास से बरसात के मौसम में नदी का पानी मुड़ कर पश्चिमी तटबन्ध से उलटी दिशा में उत्तर की ओर बहने लगा। ऐसा कोसी पर तटबन्धों के निर्माण के बाद 1963-64 के आस-पास शुरू हो गया था। इससे कोसी की बाढ़ से तथाकथित रूप से बाढ़ से सुरक्षित हुए मधुबनी जिले के मधेपुर प्रखंड, दरभंगा के कुशेश्वर स्थान प्रखंड, समस्तीपुर के सिंघिया प्रखंड और सहरसा के महिषी प्रखंड के पश्चिमी हिस्से के गाँवों में पानी घुसने लगा। समय के साथ नदी की तलहटी का लेवेल ऊपर उठा और उसी अनुपात में कोसी नदी का पानी उत्तर की तरफ नये नये गाँवों में आना शुरू हुआ। कमला नदी कभी भेजा के नीचे बकुनियाँ गाँव में कोसी से संगम करती थी। कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के निर्माण के कारण उसका मुहाना बंद हो गया और नदी दक्षिण की ओर कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के साथ-साथ बहने पर मजबूर हुई। 1968 में कोसी नदी में एक बहुत बड़ी बाढ़ आयी जिसमें अभी तक का सर्वाधिक प्रवाह नौ लाख तेरह हजार क्यूसेक रिकार्ड किया गया था। कोसी में इतने ज्यादा परिमाण में पानी आने और उसके मुड़ कर पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में बसे गाँवों में घुसने और उन्हें बरबाद करने की वजह से इन गाँवों के परेशानहाल लोगों ने शोर मचाना शुरू किया और मांग की कि कोसी के पानी से बचाव के लिए घोंघेपुर गाँव के नीचे कोसी के पश्चिमी तटबन्ध से लगा हुआ पश्चिम दिशा की ओर एक 'T' आकार का स्पर बना दिया जाए जिससे कोसी का पानी पीछे की ओर घूम कर उन गाँवों को बरबाद न करे। उनकी मान्यता थी कि इतना काम कर देने के बाद उन्हें कोसी के लौटते पानी से निजात मिल जायेगी। दुर्भाग्यवश, इंजीनियरों को भी ऐसा ही लगा और 1969 में इस 'T' स्पर का निर्माण कर दिया गया। इस बात की दोनों पक्षों ने ही अनदेखी की कि इस 'T' स्पर के निर्माण के बाद बरसात के समय कमला के उफनते पानी का क्या होगा? बरसात के समय अब कोसी का पानी इन गाँवों में तो नहीं आने वाला था मगर कमला का पानी अब जाने वाला भी नहीं था। यह लोग कोसी की बाढ़ से तो शायद बच गए मगर कमला के पानी में फंस गए।

कमला नदी पर भी तटबन्ध जयनगर से लेकर झंझारपुर के रेल पुल तक 1950 के दशक में ही बना दिये गए थे। उसके नीचे कमला नदी मुक्त थी। तब झंझारपुर के इस रेल पुल के नीचे कमला नदी का पानी बुलेट की रफ्तार से निकलने लगा और भेजा के नीचे उन सारे गाँवों को डुबाने लगा जो कोसी की बाढ़ से सुरक्षित कर दिये गए थे। बात यहीं खतम नहीं हुई। 1956-1958 के बीच बागमती की निचली लम्बाई (करेह) पर भी तटबन्ध बनाये जा चुके थे जो कि दाहिने भाग में हायाघाट से बदलाघाट और बायें भाग में हायाघाट से सिरसिया तक बने थे। बीच का सिरसिया से बदलाघाट तक का उसका बायाँ किनारा खुला हुआ था।

बरसात के मौसम में बागमती (करेह) के बायें किनारे से छलकता हुआ पानी भी वहीं घुसता था जहाँ कोसी और कमला का पानी पहले से ही अड्डा जमाये हुए बैठा था। अब इन गाँवों को डूबने से बचाने वाला कोई नहीं था। सरकारी रिकार्डों के अनुसार लहेरियासराय को भेजा से जोड़ती हुई 145 फुट (44.19 मीटर) की कन्टूर लाइन गुजरती है (चित्र-10.1)। इसके नीचे का बदलाघाट तक का पूरा का पूरा इलाका बरसात में समन्दर का एहसास करवाता है। बिहार का जल-संसाधन विभाग भी कहता है कि इस 145 फुट कन्टूर लाइन के नीचे की 90,450 हेक्टेयर ज़मीन स्थायी तौर पर जल-जमाव से ग्रस्त है जिस पर कुछ भी नहीं उपजता और 140 फुट (38.11 मीटर) की कन्टूर लाइन के नीचे की ज़मीन का जल-जमाव का मर्ज़ लाइलाज है।

ग्राम ठेंगहा, प्रखंड तारडीह, जिला दरभंगा के इन्द्र कान्त झा का कहना है, ''...हम लोग इंजीनियर तो नहीं हैं मगर सामान्य बुद्धि जरूर रखते हैं। कोसी का पश्चिमी तटबन्ध और कमला के दोनों तटबन्ध, यानी तीन तटबन्ध अकेले रसियारी मौजे से गुजरते हैं जिस में 100 किलोमीटर से ज्यादा चौड़े इलाके का पानी आता है। कोसी और कमला तटबन्ध के बीच में 1.5 किलो मीटर से ज्यादा फासला नहीं होगा। सौ किलोमीटर चौड़े क्षेत्र से आने वाले पानी की निकासी को इतना कम रास्ता देने को अगर बेवकूफी कहा जाए तो आप लोग इसे हमारी विनम्रता कहेंगे। इन तटबन्धों को बनाने वालों के तो आधे मुंह में चूना और आधे मुंह में कालिख पोत कर दिल्ली के कनाट प्लेस में उनके गले में उनकी करतूतों की पट्टी टांग कर जलूस निकालना चाहिये। यह सब उम्र कैद के हकदार हैं।''[1]

भविष्य में होने वाली इस पूरी त्रासदी की चेतावनी जियालाल मंडल ने बिहार विधान सभा को उसी समय दे दी थी जब कोसी परियोजना पर काम शुरू हुए मात्र दो महीने का समय ही बीता था। उन्होंने कहा था, ''...(कोसी का) पूर्वी बांध 71 मील की लम्बाई का है जो बनगांव के नजदीक समाप्त होता है और पश्चिमी बांध 77 मील पर जाकर समाप्त होता है जहां मुंगेर जिले का बख्तियारपुर और खगड़िया, चौथम तथा गोगरी थाना है और सहरसा का आलमनगर थाना तथा उत्तरी भागलपुर का बीहपुर तथा गोपालपुर थाना है। कोई नदी जब इतनी चौड़ी और लम्बी है कि उसकी चौड़ाई दरभंगा से सुपौल तक करीब-करीब 50 मील तक चौड़ी हो जाती है तो उसको 3 मील से 10 मील की चौड़ाई में बांध कर सिवाय इसके कि बनगांव के दक्षिण की ओर उत्तरी मुंगेर और भागलपुर को तबाह करने के और क्या हो सकता है (जब कोसी योजना पर 1955 में काम शुरू हुआ था तब कोसी के पूर्वी तटबन्ध को बनगाँव तक ही बनाने का प्रस्ताव किया गया था-लेखक)? इसलिए वहां की जनता बड़ी भयभीत है कि जहां पहले कभी बाढ़ नहीं आती थी वहां भी खगड़िया सबडिवीजन और उत्तरी भागलपुर का समूचा इलाका समुद्र बन जायेगा। श्री गुलजारी लाल नन्दा जी जब यहां आये थे और सेक्रेटेरियेट में जो कान्फ्रेन्स हुई तो उसमें भी इस बात को मैंने उठाया था लेकिन इस पर कुछ ध्यान अब तक नहीं दिया गया है। मुझको मालूम है कि कोसी के इंजीनियरों ने यह राय जाहिर की है कि बांध बनाने से सिर्फ चार ही इंच की मोटाई का पानी का प्रवेश उसके अन्दर हो सकेगा। मेरा विशेषज्ञ की राय में विश्वास नहीं है। जो मेरा अनुभव कोसी क्षेत्र का है वह यही है कि

35 हजार वर्ग मील में जो पानी बहता था उसको 7 मील के अन्दर लाकर छोड़ देने से पानी का वेग और वॉल्यूम (घन फल) कहीं ज्यादा बढ़ जायेगा... इस प्रोजेक्ट से बाढ़ नियंत्रण तथा सिंचाई के प्रबन्ध की उम्मीद है। अगर बाढ़ नियंत्रण की बात मान भी ली जाए तो सिंचाई तो हमारे यहाँ नहीं ही हो सकती है।''[2] उस समय जियालाल मंडल को यह नहीं पता था कि केवल कोसी ही नहीं, कमला और बागमती (करेह) पर प्रस्तावित तटबन्ध कोढ़ में खाज वाली स्थिति पैदा करने वाले हैं। उनका कहा हुआ एक-एक शब्द सच निकलना था सो हुआ।

11 अप्रैल 1958 को बिहार विधान सभा में बृज मोहन प्रसाद सिंह ने सरकार से सवाल किया था कि बागमती (करेह) का बायां तटबन्ध उसके दाहिने तटबन्ध से 8 मील छोटा है और इस गैप की वजह से बागमती नदी का पानी अपने किनारों को तोड़ता हुआ उत्तरी क्षेत्र को डुबा कर बरबाद कर देगा। सरकार की तरफ से जवाब देते हुए तत्कालीन सिंचाई मंत्री दीप नारायण सिंह ने कहा था, ''...करेह का बायां तटबन्ध जो 48 मील लम्बा है उसे सिरसिया में ही खत्म कर देने का उद्देश्य यह है कि क्षेत्र को कोसी और करेह द्वारा पोषित किया जा सके। साथ ही सिरसिया और फुहिया के बीच का जो रिक्त स्थान है उस से होकर कोसी के दायें तटबन्ध और करेह के बायें तटबन्ध द्वारा सुरक्षित क्षेत्र के जल का क्रॉस ड्रेनेज (निष्कासन) संभव हो सके। बायें तटबन्ध के कम लम्बा होने के कारण कोई विशेष क्षति की संभावना नहीं है। इस क्षेत्र में बाढ़ की स्थिति को कुछ काल देखने के बाद और यदि आवश्यक समझा गया तो तटबन्ध को बढ़ाने का विचार किया जायेगा।''[3] मंत्री जी क्या कहना चाहते थे यह तो वह खुद ही समझे होंगे पर तटबन्ध आगे बढ़ाने की आवश्यकता आज तक महसूस नहीं की गयी।

10.3 लोग क्या कहते हैं?

यहाँ तक तो हुई इंजीनियरिंग और राजनीति की बात और अब चलते हैं उन लोगों के पास जो जल-संसाधन विभाग की इस कीर्ति का फल भोग रहे हैं। जिस ज़मीन पर लाइलाज तरीके से पानी फैलेगा वहाँ खेती पर जिन्दगी बसर करने वालों का क्या होगा इसका आसानी से अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। बेरोजगारी की मार मालिक और मजदूर दोनों पर पड़ती है। मालिक शायद यह सदमा बर्दाश्त कर ले क्योंकि उसकी जीविका के अन्य वैकल्पिक स्रोत भी हो सकते हैं। मुमकिन है कि घर में कोई नौकरी करने वाला हो मगर ग़रीब परिवारों के लोग तो हर तरह से मजबूर हैं।

ग्राम पैकड़ा, पंचायत सिंधिया-3, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर के मन्टुन सादा बताते हैं, ''...बाढ़ यहाँ हर साल आती है। पहले बागमती का पानी आता है फिर कमला और कोसी का पानी आता है। हम लोग घर-द्वार छोड़ कर दुर्गा स्थान की ओर भाग जाते हैं। 1987 जैसी बाढ़ आ जाए तो जानवरों को खूंटे से खोल कर छोड़ देना पड़ता है। कोई भी पहले अपनी जान बचायेगा फिर जानवरों के बारे में सोचेगा। हमारा गाँव बागमती के बायें किनारे पर पड़ता है और हमारे लिए अच्छा यही होता है कि नदी का तटबन्ध दाहिने किनारे पर टूट जाए तो सारा पानी उस तरफ से निकल जायेगा और हमारी परेशानियाँ खतम तो नहीं होंगी क्योंकि कमला और कोसी का पानी तो रहता ही है मगर थोड़ी राहत जरूर हो जायेगी। 1987 में तो यह तटबन्ध दोनों तरफ टूटा था। उसके पहले तक ठीक ही चलता था, एक बार 1974 में जरूर बहुत पानी आया था। समाधान हम क्या सोचेंगे? कोई सुनता है क्या? एम०एल०ए० और एम०पी० पाँच साल में सिर्फ चार दिन दिखाई पड़ते हैं, पाँचवें दिन नहीं। यहाँ से दिल्ली तक एक ही हालत है।

हम लोग तीन महीनें तो निश्चित रूप से पानी में डूबे रहते हैं। 2004 और 2007 में यह मियाद 6 महीनें तक पहुँच गयी थी। यह पानी ज्यादातर कोसी-कमला का था। खेती बटाई पर भी करते हैं और ठेके पर भी लेते हैं। ठेके पर 20 किलो अनाज प्रति कट्ठा देना पड़ता है (एक एकड़ = 22 कट्ठा)। जब तक हम 40 किलो नहीं उपजायेंगे तब तक मालिक को 20 किलो कैसे देंगे? खर्चा भी तो सारा का सारा हमें ही देना पड़ता है—पानी, बीज, खाद, दवाई सब का खर्च। जितना उगाते हैं उससे साल भर का खर्च भी नहीं चल पाता है, बाकी समय या तो महाजन का भरोसा होता है या फिर दिल्ली, पंजाब में मजदूरी काम आती है। कभी-कभी गाय-भैंस लेते हैं मालिक की तो उससे गाड़ी खिंचती है। दो से तीन महीना घोंघे से भोजन चल जाता है। नरेगा में काम अब तक तो नहीं मिला है। जॉब कार्ड बना हुआ है पर काम नहीं मिलता। एक बार पोखर में काम लगा था, उसके बाद से बन्द।

स्थानीय मजदूरी की दर तीस रुपया रोज है, इतने कम पैसे पर कौन काम करेगा? जहाँ भी ज्यादा मिलता है, चले जाते हैं। पचास रुपये तक भी मिल जाता है तो काम कर लेते हैं। इसमें खाना शामिल नहीं होता। सरकार का तो कोई काम यहाँ चलता ही नहीं है। दिल्ली-पंजाब में खेतों में काम मिल जाता है—वहाँ 150-200 रुपये रोज का काम मिल जाता है। दिल्ली में रिक्शा या ठेला चलाते हैं। पहले झुग्गी-झोपड़ी बना कर रह लेते थे, अब वह भी मुमकिन नहीं है। किराये पर खोली लेनी पड़ती है। तीन आदमी मिल कर 1000 से लेकर 2000 रुपये तक की खोली ले लेते हैं। पानी बिजली का खर्च ऊपर से है। रात में मालिक आकर चप्पलें गिनता है कि कोई बाहरी आदमी तो नहीं रह रहा है। इन किराये के मकानों में एक दिन से ज्यादा अपने यहाँ हम किसी मेहमान को नहीं टिका सकते। परिवार वाले को 2500 रुपया मासिक से कम में खोली नहीं मिलती। शौचालय सार्वजनिक है। पंजाब में भी खेतिहर मजदूरों को मालिक परिवार नहीं रखने देते। वहाँ आम तौर पर मजदूर ट्यूब वेल के पास बनी झोपड़ियों में रहते हैं। खाना-पीना वहीं बनता है, पंजाबी मालिक बड़े प्यार से रखता है—लस्सी भी पिलाता है। चाय-पानी मालिक के जिम्मे। आमतौर पर ठेकाबन्दी पर काम होता है—रोपनी से लेकर कटाई तक। पैसा मिलने में कोई समस्या नहीं है। दिल्ली में 24 घन्टे के लिए रिक्शा 30 रुपये के किराये में मिल जाता है। 50-60 रुपया अपने ऊपर भी खर्च हो जाता है, समझिये 100 रुपये रोज का खर्च है। कुछ लोगों ने अपने रिक्शे भी खरीद लिये हैं। पार्क में या फुटपाथ पर खड़ा कर देते हैं। रिक्शा चोरी होने की घटनाएं होती रहती हैं। नशाखोर लड़के अक्सर यह काम करते हैं। कबाड़ी के यहाँ बेच देने पर भी उन्हें हजार-दो हजार की आमदनी हो जाती है और उनके कुछ दिन के लिए खाने-पीने का इन्तजाम हो जाता होगा।

यहाँ से दिल्ली या पंजाब जाने में एक हजार रुपये तक खर्च होता है। छः महीने से पहले वापस चले आने में फायदा नहीं है। जाने के लिए महाजन से पैसा ले लेते हैं। ब्याज की दर हमारे यहाँ तय नहीं है। 3 से 10 रुपया सैकड़ा प्रति माह की सीमा है। मालिक कितना ब्याज

लेगा वही तय करता है। दिल्ली में अगर अच्छा काम मिल जाए तो पैसा जल्दी लौटाया जा सकता है। इस तरह के लेन-देन में लिखा-पढ़ी नहीं होती। सब विश्वास पर चलता है। अभी मोबाइल से भी हिसाब किताब हो जाता है। आम तौर पर तीन रुपया सैकड़ा के हिसाब से दिल्ली का दलाल यहाँ घर पर पैसे का भुगतान कर देता है। यानी वहाँ 1000 रुपया उसको दिया तो उसका आदमी यहाँ परिवार वालों को 970 रुपया भुगतान कर देगा।

अभी हमारे गाँव का एक लड़का था हरे राम। रिक्शा चलाता था, उसको फ्रिज ले जाने के लिए एक आदमी ने तय किया। नशा खिला कर उसका पैसा, मोबाइल और रिक्शा सब छीन लिया और सड़क पर छोड़ दिया। पुलिस उसे अस्पताल ले गयी। दो दिन बाद जब उसे होश आया तब उसे पता लगा कि वह लुट चुका था।

मैं मियाँ-बीवी हूँ यहाँ। एक लड़का है। उसके 5 बच्चे हैं। वह अपना संभालेगा या हमें देखेगा? हमको तो काम करना ही पड़ता है। कभी मालिक की गाय-भैस पालेंगे तो कभी ठेके पर खेती करेंगे। यहाँ जो कुछ भी दिखायी पड़ता है, सब मालिक का है, हमारा कुछ भी नहीं। सिर्फ चापाकल (हैण्ड पम्प) सरकारी है।''[4]

मन्टुन सादा के कथन से इस इलाके की जीवन विधा का थोड़ा अंदाजा लगता है। बिना परदेश गए परिवार को चलाये रखने की सुविधा और हुनर जिसमें नहीं है वह तो इस तरह के विकास का शिकार हो ही गया। शिकार इसलिए कि इस इलाके की स्थिति पहले ऐसी नहीं थी।

गाँव माहें खैरा, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर, करेह के बायें किनारे पर पड़ता है। इस गाँव के विमल कुमार सिंह बताते हैं, ''...2000 आबादी वाले इस गाँव में सही ढंग से पानी बरसा तब तो धान हो जाता है मगर बाढ़ आ जाए तो धान गया। बाढ़ लेकिन अक्सर आती है। बाढ़ हो या न भी हो, हथिया का पानी चाहिये वरना सिंचाई करनी पड़ेगी और वह बोरिंग से होती है। सरकार की यहाँ कोई व्यवस्था नहीं है। 80 से 90 रुपये प्रति घन्टा बोरिंग से खेत सींचने में लगता है। एक बार एक एकड़ धान सींचने में कम से कम सात घंटा लगता है यानी 560 रुपये एक बार की सिंचाई में गए। अगर पानी ठीक से बरसता गया तो सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती मगर ऐसा बहुत कम होता है। अगर सब कुछ ठीक चले और पूसा के धान का बीज समय से मिल जाए तो तीन मन का कट्ठा धान होता है यानी लगभग 65-70 मन धान एक एकड़ में हो जायेगा। यह तब अगर सारी परिस्थितियाँ आपके अनुकूल हों, मगर ऐसा कभी-कभी ही होता है। रब्बी में दलहन-जैसे मसूर होती है, मटर होती है। चना और अरहर पहले होती थी अब नहीं होती। अपनी जरूरत भर सब्जी बहुत से लोग उगा लेते हैं। कुछ लोग बेच भी लेते हैं। गरमा फसल नहीं होती। गन्ना हमारे यहाँ पहले भी नहीं होता था, अब भी नहीं होता। मोटा अनाज कोदो, सावाँ, मडुआ पहले खूब होता था पर अब लोग नहीं करते। मजदूर नहीं मिलते अब। सब दिल्ली, गुवाहाटी चले गए। बागमती नदी का तटबन्ध टूटने पर उसका पानी यहाँ आता है। यह तटबन्ध बीच-बीच में टूटता रहता है। 2004 में थलवारा में टूट गया था। 2007 में कोसी का पानी आ गया था। वैसे भी कोसी का पानी हर साल यहाँ आ ही जाता है। यह पानी गाँव में भी घुसता है। तब हम सारी दुनियाँ से कट जाते हैं। पूरे गाँव का बरसात का 3 महीना करेह के पूर्वी तटबन्ध पर ही कटता है। जिन्दगी पहले चलती थी अब घिसटती है।[5]

कोल्हुआ पुल के नीचे करेह तटबन्ध के दाहिने किनारे पर समस्तीपुर जिले के सिंघिया प्रखंड का कुण्डल गाँव पड़ता है। इस गाँव के अधिवक्ता गंगेश प्रसाद सिंह का अनुभव और आक्रोश थोड़ा अलग किस्म का है। वे कहते हैं, ''...2007 में हमारे यहाँ पानी लगभग तीन महीनों तक टिका रहा । आम के सारे पेड़ सूख गए। शीशम और महुआ भी चला गया। पहले धान और मकई की मिश्रित खेती करने का रिवाज था और यह दोनों फसलें खूब होती थीं। महुआ और खेसारी प्रचुर मात्रा में पैदा होती थी। अरहर, उड़द और मसूर होती थी। गन्ने की जबर्दस्त फसल होती थी और बांस जितना मोटा गन्ना होता था यहां। पास में हसनपुर में चीनी मिल थी, वहीं बैलगाड़ी से ढो-ढो कर पहुँचाने जाया करता था। तटबन्ध बनने से सबसे बुरी मार गन्ने पर पड़ी है। यह चीनी मिल भी पिछले तीन-चार साल से बन्द थी और मिल मालिक इसे उठा कर कहीं और ले जाना चाहते थे। स्थानीय प्रतिरोध के कारण चीनी मिल तो बच गयी मगर अब मिल चलाने भर गन्ना हो तब तो? यहां के किसान कभी गन्ना बेच कर लखपति हो जाते थे, वे सब के सब अब दरिद्र हो गए हैं। यहां तटबन्ध पश्चिम से पूरब की तरफ जाता है और राजघाट से हसनपुर को जोड़ने वाली सड़क उत्तर-दक्षिण दिशा में जाती है। बीच में फंसे हैं हमारे जैसे गांव जिनके पानी की निकासी का कोई रास्ता ही नहीं बचता। यह अटका हुआ पानी कभी-कभी राजघाट-हसनपुर सड़क को पार करने की कोशिश करता है और उसे अक्सर तोड़ देता है। अभी लरजाघाट के पास बागमती (करेह) पर एक पुल बना है जिसके चालू हो जाने के बाद हमारा संपर्क तो बेहतर होगा पर इस इलाके से पानी की निकासी पर कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। तटबन्ध में जगह-जगह स्लुइस गेट लगे हुए हैं पर उनमें से एक भी काम नहीं करता। विभाग तक दौड़ते-दौड़ते हम लोग थक जाते हैं, कुछ नहीं होता। तटबन्ध के अन्दर थोड़ी बहुत सिंचाई पम्प के माध्यम से हो जाती है। बाहर बोरिंग का सहारा है और वह कितनी मंहगी है सभी जानते हैं। मैं कुछ वर्षों तक असम में रहा था और एक ठेकेदार के लड़के को ट्यूशन पढ़ाता था। वहां भी नदियों

एडवोकेट गंगेश प्रसाद सिंह

पर तटबन्ध बने हुए हैं और वह अक्सर टूटते रहते हैं। मैंने एक बार ठेकेदार से पूछा कि आप लोग तटबन्ध को मजबूती से एक बार बांध क्यों नहीं देते कि कुछ दिन तक चले। उसका कहना था ''...एक बार ठीक से बांध देने पर कुछ साल चलेगा तो जरूर, पर इस बीच क्या हम लोग सारंगी बजायेंगे? हमको भी तो काम और पैसा चाहिये।'' ऐसे व्यवसायी का अगर राजनैतिक पार्टी से सम्बन्ध हो जाए, और यह होता भी है, तो उस पर किस का नियंत्रण हो पायेगा? अब इलाके के सारे रंगदार ठेकेदार हो गए हैं। कौन जायेगा उनसे उलझने?''[6]

तटबन्धों के टूटते रहने का इस इलाके में एक अलग और लम्बा सिलसिला है और शायद ही कोई ऐसा साल गुज़रता हो जिसमें इस तरह की घटना न होती हो। 1987 के बाद से इस तरह के हादिसों में एकाएक वृद्धि हुई है जिसकी शुरुआत उस साल महेशवारा में तटबन्ध के टूटने से हुई थी। फिर तो यह तटबन्ध न जाने कितनी जगह टूटा। 1998 में कोलहट्टा गाँव के पास तटबन्ध टूटा था जिसके बारे में कहा जाता है कि मछली का व्यवसाय करने वाले दो गुटों के आपसी संघर्ष में इसे काट दिया गया। 2002 में कुण्डल और महेशवारा, 2004 में महदेवा, परसा और भटवन, 2006 में काले ढाला और बसही, 2007 में एक बार फिर काले ढाला और बसही में तटबन्ध टूटा। तटबन्ध टूटने पर क्या होता है उसके बारे में बताते हैं ग्राम कुण्डल, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर के ही बबलू सिंह, ''...1987 में नवीं कक्षा में पढ़ता था। गाँव के ज्यादातर घर मिट्टी के थे जो कि बैठ गए। हमारा मकान पक्का था सो बच गया मगर धान सुखाया जा रहा था, वह सब का सब बह गया। पानी बढ़ा तो हम लोग भाग कर तटबन्ध पर गए और वहाँ पॉलीथीन से झोपड़ी बना कर रहने लगे। आंधी आयी तो पॉलीथीन भी उड़ गया। अब सारे लोग खुले आसमान के नीचे आंधी-पानी के बीच। वहीं रहना, वहीं खाना-पीना और वहीं टट्टी-पेशाब। औरतों की क्या हालत हुई होगी उसकी कल्पना ही कारुणिक है। सभी बेपर्दा और सारे बच्चे नंग-धड़ंग। ज़रा सी चूक हो तो सीधे पानी में। उस बार 11 अगस्त से लेकर 19 अगस्त तक लगातार पानी बरसता रह गया था। हेलीकॉप्टर से खाने का सामान गिराया जाता था। उसमें से आधा तो पानी में ही गिरता था। एक दिन मेरे भी हाथ पांच पैकेट आये जिनमें तीन पैकेट में हरेक में 3 किलो चूड़ा, 2 किलो चना, 250 ग्राम चीनी, 250 ग्राम नमक, आधा किलो गुड़ और कुछ मिर्च रखी हुई थी। बाकी के दो पैकेटों में पूड़ी-सब्जी थी। दूसरों को भोजन देने वाले परिवार के लिए खुद भोजन की थैली लपकना हमारे लिए विचित्र अनुभव था। परिवार के बड़े लोग उस समय बहुत तनाव में रहते थे।''[7]

बबलू सिंह

बाढ़ की मार और मिट्टी का घर–इन दोनों के संयोग से किसी की मानसिक स्थिति क्या हो जाती होगी उसके बारे में ग्राम करांची, प्रखंड बिथान, जिला समस्तीपुर के राम सुधारी यादव कहते हैं, ''...1987 में मेरा घर यहाँ मिट्टी का था, नये घर के लिए नींव दे रखी थी। पुराने घर में 100 मन के आस-पास अनाज था। एकाएक पानी आ गया, बारिश खूब हो रही थी और ऊपर भी बांध टूटा था उसका भी जोर था। बाढ़ की वजह से मेरी बेटियाँ भी अपने-अपने ससुराल से चली आईं। अब एक तरफ तो अनाज को बचा कर रखने की फिक्र और फिर इन सबको रखेंगे कहाँ उसकी चिन्ता। मिट्टी का घर था उसको गिरते देर नहीं लगती–एक ही झटके में सब दब कर मर जायेंगे। गनीमत थी

राम सुधारी यादव

कि नये घर की नींव पड़ चुकी थी। वहीं पॉलीथीन की झोपड़ी बनी। एक हैण्डपम्प था, उसका ऊपरी हिस्सा अभी भी पानी के ऊपर था। जलावन हमारा बांध पर था और सुरक्षित था। शुरू-शुरू में दो-तीन दिन तो हम लोग भी बांध पर ही जाकर रहे पर जब पानी का बढ़ना बन्द हो गया तब इधर गांव में आ गए। अफरा-तफरी मची हुई थी। अच्छे-अच्छे घरों के औरत-मर्द बदहवास इधर से उधर भागते थे। खाना नहीं था। भाग्यवश हमारा अनाज और जलावन दोनों बचा हुआ था। पत्नी से हमने कहा कि रोज कुछ ज्यादा रोटियाँ बना कर रखो, न जाने कब कौन जरूरतमन्द आ जाए। वैसे भी जो बेसहारा नजर आता था उसे हम लोग अपने घर बुला कर कुछ खाना खिला देते थे। 6 इन्च पानी और बढ़ गया होता तो हमारे घर में भी घुस गया होता और अनाज सड़ जाता। तब तो हम लोग भी बेसहारा ही हो गए होते। बांध टूटने का भी अजीब किस्सा है। हमारे गांव में 10 फीट पानी जमा रहता है, फिर भी बांध नहीं टूटता है। मगर आस-पास की सूनी जगह पर कम पानी होने पर भी टूट जाता है। दरअसल यह काम नेताओं और ठेकेदारों का है। रिलीफ से लेकर बांध की मरम्मत तक कमाई ही कमाई है। यहाँ गांव में हर घर में दो चार बांस रहता ही है। खाद-बीज

के बोरे होते ही हैं। इन सब की मदद से हम लोग मिल कर गांव में बांध को टूटने से बचा लेते हैं। हो सकता है इन सबका भी बिल बना कर विभाग वाले पैसा बना लेते हों। जितनी हमारी मेहनत उनको उतना ही फायदा हो जाता है। खेती के अलावा मवेशी पालना यहाँ का एक मुख्य व्यवसाय है। मवेशी पालने के लिए घास और हरा चारा चाहिये जो कि तटबन्ध के अन्दर के खेतों और जमीन से मिल जाता है। चारे के लिए तो लोग फसल की चोरी तक कर लेते हैं। इधर खूब प्रचार है कि क्रिमिनल इस इलाके में भर गए हैं। यह आंशिक रूप से ही सच है। मकई के खेत के आस-पास देशी शराब के कुछ पाउच फिंकवा दीजिये, खेत वाला समझेगा कि वहाँ क्रिमिनल आकर रहते हैं। वह मारे डर के उधर जायेगा ही नहीं। उसकी मकई काट कर लोग जानवरों को खिला देंगे, नाम क्रिमिनल का लग जायेगा। पुलिस तमाशा देखती है। प्रशासन खामोश रहता है। जनता भी यह सब चुपचाप बर्दाशत करती है। यातायात शून्य है। हमारे यहाँ एक नेता जी आये थे वोट मांगने, हमने उनसे कहा कि आप यहाँ से जीप से प्रखंड कार्यालय तक जाकर दिखा दीजिये, हम आपको पूरे गाँव का वोट दिलवा देंगे। वह बुरा मान गए पर किया कुछ नहीं। अपनी तकलीफ आप को कहाँ तक बतायें?[8]

ग्राम फुहिया (पंचायत सलहा चन्दन) प्रखंड बिथान, जिला समस्तीपुर के किसान सुशील ठाकुर बताते हैं, ''...अपने बचपन में मैंने अपने खेतों में धान उगते देखा था मगर जब गाँव पानी से घिरना शुरू हुआ तब धान खतम हो गया। बाढ़ पूरी तरह उतर जाने पर जो ज़मीन सूखी निकल आयी, अब उस पर मक्का उगाना शुरू कर दिया है। यह सुविधा उन्हीं को उपलब्ध है जिनकी ज़मीन से पानी हट जाता है। जहाँ पानी नहीं हटता उनका तो भगवान ही मालिक है। जितना मक्का मेरे खेत में होता है उससे छः महीने तक का भोजन चल जाता है। बाकी समय के लिए बाहर पर निर्भर रहना पड़ता है। मैं खुद पंजाब में अनाज मंडी में मुंशी का काम करता था, किसानों से अनाज लेकर सरकार के खरीद केन्द्रों तक पहुँचाना मेरा काम था। बाद में कुछ दिन डाबर के साथ काम किया। डिस्ट्रीब्यूटर से माल ले कर दुकान वालों को सप्लाई किया। कुछ समय रोटोमैक में इसी तरह का काम किया मगर जब बाबा बीमार पड़ गए तो वापस आना पड़ गया। 2004 से 2006 के बीच बिहार सरकार की लोक शिक्षक योजना में काम किया। चार साल से घर बैठे हैं क्योंकि वह काम भी खतम हो गया। अब जीविका के लिए मक्का उगाने के अलावा कुछ और करना पड़ेगा।'' भूगोल में स्नातक सुशील ठाकुर को यह पता नहीं है कि सरकार का कार्यक्रम कमला और बागमती के तटबन्ध को बढ़ा कर उनके गाँव फुहिया में मिलाने का है। वे कहते हैं कि अगर ऐसा हो गया तो पानी जो छः महीनें में निकल जाता है वह यहीं रह जायेगा।[9]

10.4 रास्ते कहाँ हैं?

समस्तीपुर के हसनपुर से खगड़िया जिले के अलौली तक की यात्रा बहुत ही दिलचस्प है। तमाम दावों के बावजूद आज भी सड़क यहाँ प्रायः नहीं है और वह इसलिए कि करेह का दायाँ तटबन्ध हायाघाट और करांची या भटबन तक कहीं भी टूटेगा तो वह सारा का सारा पानी इसी इलाके से गुजरेगा। बिथान से सोरहा चौक के बीच न तो कोई रास्ता है जिसे सड़क कहा जा सके और न ही कोई पुल या कलवर्ट सही सलामत है। कटौसी गाँव के पास सरकार के पराक्रम की पराकाष्ठा देखी जा सकती है जहाँ लगता है कि यहाँ की सारी बरबादी पिछली बरसात में हुई होगी। मगर गाँव वालों के अनुसार यह सब 1987 की बाढ़ में हुआ था और तब से गरीबों की मसीहाई करने वाली न जाने कितनी सरकारें

अलौली और हसनपुर के बीच का रास्ता-इस तरह के दृश्य आम हैं।

आईं और गईं मगर इस इलाके की तकदीर नहीं बदली। बरसात के मौसम में अगर किसी के साथ कोई चिकित्सा सम्बन्धी आकस्मिकता आ जाए तो उसे ईश्वर के अलावा कोई नहीं बचा सकता।

आज से कोई 20 साल पहले तक खगड़िया और सहरसा के बीच में रेल मार्ग के अलावा कोई दूसरा संपर्क मार्ग नहीं था। खगड़िया से सहरसा जाने के लिए या तो पूर्णियाँ होकर जाना पड़ता था अन्यथा कुरसेला के पास से देवीपुर-परसी मार्ग से नाव पर टीकापट्टी में कोसी को पार कर के जाना पड़ता था। 1991 में खगड़िया जिले में सोनबरसा घाट के पास कोसी-बागमती, दोनों नदियों को एक साथ समेटते हुए एक सड़क पुल का निर्माण पूरा किया गया जिससे सहरसा का कोसी-बागमती के दाहिने किनारे की जगहों से संपर्क में अप्रत्याशित और स्वागत योग्य सुधार हुआ। परिवहन व्यवस्था में इस सुधार की लेकिन एक बहुत बड़ी कीमत थी जिसकी अदायगी विशेष रूप से बागमती के इर्द-गिर्द बसे लोगों को करनी पड़ी और भविष्य में भी करनी पड़ेगी।

इस पुल के निर्माण के पहले सोनबरसा में बागमती पर एक बहुत बड़ा घाट हुआ करता था। कोसी थोड़ा दूर उत्तर, लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर बहा करती थी। बागमती का लेवेल कोसी से नीचे है और इस जगह पर यह नदी कोसी से कोई 10 फुट नीचे बहती रही होगी। जब यह पुल बना तब बागमती और कोसी पर अलग-अलग पुल न बना कर एक ही पुल बनाया गया। ऐसा करने से सरकार को कुछ बचत जरूर हुई होगी। लेकिन इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि अब तो प्रभावी तौर पर यह पुल कोसी पर बना क्योंकि बागमती का मुहाना तो अप्रोच रोड ने बन्द कर दिया। जाहिर है कि जब तक बागमती के पानी का लेवेल इतना ऊपर नहीं उठेगा कि वह कोसी वाले पुल से होकर बह सके तब तक तो उसके पानी की निकासी नहीं होगी। बागमती के पानी को अगर इस पुल से निकलने के लिए पन्द्रह फुट ऊपर उठना पड़े तो यह पानी नदी में पीछे की ओर अपने तटबन्धों के बीच भी लंबी दूरी तक फैलेगा। बागमती के पानी के इस ठहराव की वजह से एक तो नदी के करांची-बदलाघाट तटबन्ध पर दबाव बढ़ा है और उसके टूटने की घटनाओं में वृद्धि हुई है और दूसरी ओर तटबन्धों के बीच बागमती के पानी को देर तक खड़ा रहने की वजह से नदी की तलहटी में बालू के जमाव में भी वृद्धि हुई। बागमती तटबन्धों के बीच यहाँ बस्तियाँ आबाद हैं और बालू जमाव में बढ़ोतरी के कारण घर पानी में तो डूबते ही हैं, बरसात के बाद वह बस्तियाँ और उनके खेत-पथार नदी की उठती पेटी के बालू की चपेट में आते हैं। यहां से पश्चिम में खगड़िया सदर के सोनमनखी घाट तथा उसके और भी पश्चिम बागमती तटबन्धों के बीच ऐसे-ऐसे घर देखने को मिल जायेंगे जिनकी पहली मंजिल अब बालू में दफन हो गयी है। ऐसी स्थिति में तटबन्धों के बीच खेतों पर जब इतना बालू पड़ जायेगा तो खेती की क्या हालत होती होगी इसका अन्दाजा आप आसानी से लगा सकते हैं।

10.5 पुल तो है लेकिन समस्या वही है

बनमा प्राइमरी स्कूल, सहरसा के पूर्व अध्यापक और बेलहा पंचायत, प्रखंड मानसी, जिला खगड़िया के वर्तमान मुखिया ठाकुर पासवान बताते हैं, ''...अगर कहीं बागमती का दायां तटबन्ध टूटा तो सारा पानी हमारे ही इलाके से होकर गुजरने वाला है। 1987 के बाद से इस तटबन्ध

ठाकुर पासवान

के टूटने की घटनाओं में तेजी आयी है। नदी की पेंदी का लेवेल ऊपर उठने से तबाही भी बढ़ी है और बाढ़ का पानी भी ज्यादा समय तक टिकता है। यह बात अब हम लोग समझने लगे हैं और नवम्बर से ही तटबन्ध की मरम्मत और रख-रखाव के लिए लिखा-पढ़ी शुरू करते हैं—कभी प्रखंड में, कभी कलक्टर के यहाँ तो कभी वाटरवेज में, मगर सरकार जागती है जुलाई-अगस्त के महीने में जब पानी हमें चारों ओर से घेर लेता है। उस समय सारा काम आपत्कालीन व्यवस्था के अधीन चलता है जिसमें लूट-पाट की काफी गुंजाइश रहती है और किसी की जवाबदेही कुछ नहीं बनती। मेरी उमर 71 वर्ष है। बचपन की बात याद है कि बाढ़ का पानी कभी गांव में नहीं आता था। खेती समय से खूब होती थी। खर्च कम था, स्थितियाँ खाने पीने के लिहाज से आज से बेहतर थीं। खेती चौपट होने से बेरोजगारी बढ़ी है और उसकी वजह से पलायन बढ़ा है। रोजगार गारन्टी में कुछ काम मिल जाता है मगर उसकी मजदूरी का भुगतान 15 दिन बाद पोस्ट ऑफिस के जरिये होता है मगर मजदूर को तो रोज का रोज पैसा चाहिये। यह भुगतान सरकारी तंत्र को रोज-ब-रोज गांव में करना चाहिये। हमारे जवान बस दशहरा, होली, दीवाली में ही घर रहते हैं, बाकी समय तो उन्हें बाहर ही रहना पड़ता है। पुनर्वास के लिए जिस जमीन का अधिग्रहण किया गया वह निचली ज़मीन थी, जल-जमाव वाली थी। वहां लोग कैसे जाते? फिर घर बनाने का पैसा तो किसी को भी नहीं मिला। इस पुल के निर्माण से बागमती की तो हत्या हो ही गयी मगर उसके साथ-साथ बागमती के पूर्वी और पश्चिमी क्षेत्र के रहने वालों की भी एक तरह से हत्या ही हो गयी। पश्चिम वाले क्षेत्र का पानी नहीं निकलता है और पूर्वी क्षेत्र भीषण कटाव का सामना करता है। यह पुल ऊपर और नीचे दोनों तरफ मार करता है। रही बागमती तटबन्ध की बात जिसकी वजह से हमारी इतनी तबाही हुई तो उसका एक फायदा जरूर है कि जब बरसात के मौसम में पूरा इलाका डूबने लगता है तो शरण लेने के लिए यही तटबन्ध काम भी आता है। जिसका गाँव घर कट गया उनमें से बहुत लोग अब स्थायी तौर पर इस बांध पर ही रहने लगे हैं।''[11]

ठाकुर पासवान एक और सुझाव देते हैं कि हमें कौन सी नदी किस नदी में जाकर मिलती है उसकी परिभाषा के बारे में भी सोचना चाहिये। यहाँ कोसी का लेवल ऊपर है और बागमती का

नीचे और पानी अगर अपना तल खुद ढूंढ़ता है तो कोसी आकर बागमती में मिलती है न कि बागमती जाकर कोसी में मिलती है। यह छोटी सी बात अगर इंजीनियरों की समझ में आयी होती तो इस पुल की डिज़ाइन दूसरे तरीके से बनती और तब शायद इतना नुकसान भी नहीं होता।

अलौली प्रखंड में बालू में डूबते गाँवों की एक अज़ीब सी मिसाल है आनन्दपुर मारन पंचायत का आनन्दपुर परास गाँव। जुलाई के दूसरे सप्ताह से यहाँ बाढ़ का प्रकोप बढ़ता है। जुलाई से लेकर अक्टूबर तक एक जैसा ही माहौल रहता है यहाँ। उसके बाद पानी उतरता है मगर नाले फिर भी सक्रिय रहते हैं और आने-जाने के लिए नाव के बिना काम तब भी नहीं चलता। सरकार कभी नाव की व्यवस्था कर देती है कभी नहीं भी करती है। 2009 में नाव की कोई व्यवस्था नहीं हुई थी। अगर कहीं हुई भी होगी तो वह नाव कागज की ही रही होगी। प्राइवेट नावें हैं जिसकी मदद से 5 रुपया, 10 रुपया देकर लोग हाट-बाजार कर लिया करते हैं। जुलाई से सितम्बर तक यहाँ जीवन बड़ा कष्टमय रहता है जिसमें तटबन्ध के अन्दर रहने या बाहर रहने से कोई फर्क नहीं पड़ता। 1987 में जो बाढ़ आयी थी उसमें यहाँ की तमाम जमीन बंजर हो गयी और उस पर सात-सात, आठ-आठ फुट बालू एक साल में पड़ गया। अब जो बाढ़ आती है वह अगर ज्यादा हुई तो इस ऊँची जमीन पर भी चढ़ जाती है, कम हुई तो नीचे रह जाती है। 10-12 साल के बाद जब यह बालू सड़ने लगता है तो इस जमीन पर थोड़ी बहुत रब्बी की फसल होने लगी है। यहाँ से 4-5 किलोमीटर उत्तर में फुहिया है जिसके बारे में हमने पहले चर्चा की है। यहाँ 1987 में कोसी से एक धार फूट कर इस नदी में मिल गयी थी। इस धार का नाम बहवा बाहा है। जब यह बागमती में मिल गयी तो बागमती की तरफ प्रवाह ज्यादा हो गया। इस बढ़े प्रवाह ने फुहिया के नीचे के सभी गाँवों को प्रभावित किया है और इस निचले इलाके में बाढ़ तथा कटाव की स्थिति तभी से गंभीर हुई है। गाँव के लोग कहते हैं कि इस बाहा का मुंह अगर बन्द कर दिया जाए तो उनकी हालत पहले जैसी हो जायेगी और उन्हें कुछ आराम हो जायेगा मगर यह काम करेगा कौन? इन लोगों को कौन पूछता है और कौन आता है यहाँ? समस्तीपुर के बाढ़ नियंत्रण मुख्यालय में गाँव से परिचित एक इंजीनियर की कुछ समय के लिए नियुक्ति हो गयी थी जिनके प्रयास से यहाँ कुछ कटाव निरोधक काम हुए हैं।

आनन्दपुर परास के श्रीकान्त आजाद बताते हैं, ''...हमारा जन्म तो इसी गाँव में हुआ मगर हमारे पूर्वज कभी बिशनपुर में रहते थे, वहाँ से वे लोग अलौली आये और करीब 80 वर्ष पहले वे इस गाँव में आये। उस समय बताते हैं कि यह नदी यहाँ नहीं थी, केवल एक सोता था। धीरे-धीरे यह नदी बन गयी। यह तटबन्ध सरकार की योजना थी और हम लोगों की तरफ से इसकी कोई मांग नहीं थी। 1960-62 के आस-पास इसका निर्माण हुआ होगा। तटबन्ध बन जाने के बाद तो अन्दर और बाहर दोनों तरफ के लोग बरबाद हुए, दोनों ही परेशान हैं। हमारे यहाँ मिर्च और अरहर खूब होती थी। तटबन्ध के बाहर भी इसका अच्छा उत्पादन होता था। अब हमारी जमीन ऊँची हो गयी और वहाँ खाल हो गया। तटबन्ध अगर कभी टूटा तो एक मंजिल ऊँचा पानी निकल पर उधर जाता है। इसके सामने जो पड़ेगा वह तो बरबाद ही होगा न? यहाँ से 5-7 किलोमीटर उत्तर में ही तटबन्ध टूटा करता है। खबर पहले मिल जाती है कि पानी आ रहा है तो लोग सावधान हो जाते हैं। हमारे यहाँ टूटेगा तो नीचे प्रलय ही होगी। ऊपर टूट कर नदी बाहर चली जाती है तो हमारे यहाँ पानी सूख जाता है। यहाँ जहाँ आप बैठे हैं इसके बीस फुट नीचे हमारे पुराने मकान का फर्श आपको मिलेगा। इतनी मिट्टी यहाँ पड़ी है। यह नया घर बनाने के लिए हम लोग ईंट निकालना चाहते थे, मगर पूरा खोद नहीं पाये। 5-6 फुट नीचे जाने पर बालू टूट कर गिर जाता था। यहाँ खेत वाले बरबाद हो गए क्योंकि जिसके पास जमीन नहीं है वह तो कहीं भी चला जायेगा, नौकरी करेगा, कमायेगा, खायेगा और घर भी भेजेगा। नरेगा में मर्द-औरत सब की मजदूरी बराबर है और मजदूर बाजार भाव से 10 किलो गेहूँ खरीद लायेगा। किसान इतनी मजदूरी दे नहीं सकेगा। यहाँ तो सरकार की नीतियाँ खेती को बरबाद करने के लिए हैं। हमारे यहाँ जीविका अभी भी पशुधन के सहारे चलती है।''[11]

अपने पुराने घर के फर्श पर खड़े और लिंटेल लेवेल पर हाथ रखे हुए श्रीकान्त आजाद

10.6 कील गड़ाई

इसके अलावा किसान विरोधी दूसरी व्यवस्था कील गड़ाई की है। इसकी शुरुआत ब्रिटिश अमल में हो गयी थी कि कहीं भी अगर नाव से नदी पार करने के लिए घाट है तो जो भी आदमी घाट पर नाव खड़ी करने के लिए खूंटा गाड़ेगा उसे सरकार को टैक्स देना पड़ेगा। उस समय सरकार का जो नुमाइन्दा वहाँ रहता था वह नाव की कील गाड़ने के लिए सरकार से नियत पैसा नाव वाले से लेता था और उसके बदले में नाव और उस पर लदे हुए सामान की सुरक्षा की गारंटी देता था। आजादी के बाद इस प्रथा के स्वरूप को विकृत कर दिया गया और घाट की बन्दोबस्ती नीलामी द्वारा की जाने लगी। तब इस धन्धे में असामाजिक तत्व और जरायम पेशा लोग आने लगे और उन्होंने न सिर्फ नाव की कील गड़ाई का पैसा वसूलना शुरू किया बल्कि उस पर लदे सामान पर भी मनमाना पैसा वसूलना शुरू कर दिया। अब अगर आप के बोरे में 50 किलोग्राम अनाज है तो घाट वाला जो भी फीस प्रति बोरा मांगे, आप उसे दीजिये। यह महसूल 10 रुपये प्रति बोरा तक हो सकता है।

शहरों या कस्बों में जो ट्रक या टैक्सी स्टैण्ड होते हैं वहाँ ट्रक के हिसाब से टैक्स लगता है, उस पर लदे माल के हिसाब से नहीं।

आप अपनी नाव से अपना अनाज अपने खेत से अपने घर ले जा रहे हैं और कहीं घाट पार करना पड़े तो घाट वाला 100 बोरे का हजार रुपया मांगेगा और ले भी लेगा। इस पैसे में थाने का, ब्लॉक ऑफिस का हिस्सा होता है और इन्हीं के पास आप शिकायत लेकर जायेंगे। वहाँ दो टूक जवाब मिलता है कि घाट वाले ने नीलामी में घाट खरीदा है तो वह तो पैसा लेगा ही। इतना ही नहीं, यह हिस्सा हर उस जगह पहुँचता है जहाँ किसान शिकायत लेकर जा सकता है। अगर कोई यह टैक्स नहीं देना चाहता तो या तो वह खेती करना छोड़ दे या खुद को घाट वाले से ज्यादा मजबूत साबित कर दे। दूसरा रास्ता जरा कठिन है और बहुत से किसान इस ज्यादती के चलते खेती ही छोड़ बैठते हैं।

10.7 पानी की निकासी का रास्ता कहाँ गया?

उमेश राय, ग्राम मोरों, प्रखंड हनुमान नगर, दरभंगा कहते हैं, ''...दरभंगा जिले में नेपाल से निकलने वाली 19 नदियाँ गुजरती हैं और इस जिले की भौगोलिक बनावट ऐसी है कि इन नदियों के माध्यम से बरसात के मौसम में आने वाला सारा का सारा पानी 24 घन्टे के अन्दर खेत की सिंचाई कर के निकल जाया करता था। किसी को बाढ़ से कोई नुकसान नहीं पहुँचता था। आजादी के पहले तक यह पूरा इलाका खुशहाल था और अन्न का भंडार हुआ करता था। आजादी के बाद से इस इलाके की बेबसी बढ़ती गयी और अब हालत यह है कि यहाँ की 34 प्रतिशत आबादी सिर्फ रोटी की तलाश में बाहर जाने को मजबूर है। यहाँ की नदियों के किनारे बने तटबन्ध ही एक मात्र कारण है जिनकी वजह से सारे नदी-नालों के पानी की निकासी रुक गयी और जिसे बनाने में आजादी के बाद आने वाली सभी सरकारों ने काम किया। इस मुहिम में सारे एजेन्ट लग गए और अब हालत यह है कि यहाँ बाढ़ नहीं आती, प्रलय होती है। पहले किसान बाढ़ आने का इन्तजार करते थे, मनौतियाँ मानी जाती थीं मगर अब बाढ़ से घर का बचाव कैसे हो, अनाज की रक्षा किस तरह की जाए आदि समस्याओं से निपटने की तैयारी होती है। अभी सरकार की योजना बागमती तटबन्धों को रुन्नीसैदपुर से हायाघाट तक ले आने की है। ऐसा अगर हो गया तो इलाके में एक भी घर नहीं बचेगा, चाहे वह तटबन्ध के अन्दर अवस्थित हो या उनके बाहर। स्थिति इतनी भयावह होने वाली है कि भविष्य में इस इलाके में केवल बांध रह जायेंगे, यहाँ का आदमी यहाँ से चला जोयगा। यह सिर्फ यहाँ के किसानों के साथ ही नहीं होगा, तटबन्ध बनाने वालों की दूसरी पीढ़ी की भी यही हालत होने वाली है। वह या तो शहर में जाकर मजदूरी करेंगे या ठेला खींचेंगे।

उमेश राय

दरभंगा से लेकर झंझारपुर के बीच आज की तारीख में 8 बड़ी नदियाँ हैं जिनसे होकर पानी कोसी या कमला में चला जाया करता था। अब इन सारी नदियों को जबरन अधवारा समूह की नदियों के बीच घेर कर उनके पानी की निकासी के रास्ते को रोक दिया गया है। यहाँ दरभंगा शहर और हवाई अड्डे के बीच जयनगर वाले रास्ते में 30 फाटकों का एक स्लुइस हुआ करता था जिसकी मदद से वहाँ तक का सारा पानी जीवछ, कमला और कोसी के माध्यम से निकल जाया करता था। उस पुल को हटा कर अब तीन फाटकों वाला 3 फुट का कलवर्ट बना दिया गया है। इस परिवर्त्तन की वजह से आधा दरभंगा शहर प्रायः हर साल बरसात में डूब जाया करता है। तब यहाँ की जनता रिलीफ के लिए गुहार लगाती है मगर समस्या कहाँ है यह किसी की समझ में नहीं आता और रिलीफ तो इस समस्या का समाधान है ही नहीं। अब चलिये सकरी वाले रास्ते की तरफ जहाँ पानी की निकासी वाले रास्तों पर अब घर बन गए हैं। वहाँ भी निकासी बन्द है। अधवारा समूह की नदियों से आने वाले अतिरिक्त पानी की निकासी छकौड़ी लाल के बाहा से होती थी। इस बाहा से थोड़ा बहुत पानी पहले भी छलकता था पर उससे खेतों को फायदा ही होता था। 1975 के आस-पास दरभंगा-बागमती पर जो तटबन्ध बना उसने इस बाहा का मुँह बन्द कर दिया और शहर के पानी की निकासी ठप्प पड़ गयी और शहर डूबने लगा। इसके साथ ही बागमती के दाहिने किनारे पर सोरमार हाट से हायाघाट के बीच में एक कम ऊँचाई वाला तटबन्ध हुआ करता था जिसे स्थानीय लोग पंचफुटिया बांध कहते थे। नदी में पानी अधिक होने पर बाढ़ का पानी इस बांध के ऊपर से बह जाया करता था मगर इसे ऊँचा और मजबूत कर दिया गया। इस बार नदी में बाढ़ का जो पानी आया उसने गीदड़गंज के पास तटबन्ध को तोड़ दिया और फिर सारा का सारा पानी दरभंगा शहर में। गीदड़गंज के इस गैप को तो सरकार को भरना ही था मगर इमरजेन्सी का फायदा उठाते हुए 1976 में छकौड़ी लाल बाहा को भी बांध दिया गया। अब गंडक और कमला की बाढ़ के पानी की निकासी का केवल एक ही रास्ता बचता है कि उसे हायाघाट में बने 16 तथा 17 नम्बर रेल पुल से गुजारा जाय। इन पुलों की इतनी क्षमता ही नहीं है कि वह सारे पानी की निकासी कर सकें। अब लोग डूबेंगे नहीं तो क्या होगा?

पानी की निकासी नहीं होगी तो कहीं न कहीं तटबन्ध टूटेगा ही। तब शहर में पानी आयेगा तो जरूर मगर निकलने का उसे कोई रास्ता नहीं मिलेगा। 2004 में नीतीश कुमार जी बाढ़ के समय यहाँ लहेरियासराय आये थे, उनसे स्थानीय सभी लोगों ने एक स्वर से कहा था कि यहाँ से पानी की निकासी की व्यवस्था करवा दीजिये और उसके बाद हमारे यहाँ इतनी जबर्दस्त फसल होगी कि अगले साल आप जहाँ कहेंगे वहाँ रिलीफ बांटने अपने खर्चे से हमलोग जायेंगे। हमें रिलीफ नहीं चाहिये।

दरअसल, पहले बागमती खरसर से लगभग 40 किलोमीटर दूर कलवारा में बूढ़ी गंडक में मिल जाया करती थी। यह करेह नदी तो महज

एक नाला थी। तटबन्ध बना कर बागमती को सील कर दिया और करेह, जो कि एक मामूली सा नाला था उसे नदी बना दिया गया। इसलिए जब तक खरसर में नदी का मुँह खोल कर बागमती को पुनर्स्थापित नहीं किया जायेगा तब तक यहाँ रिलीफ बंटना बन्द नहीं होगा। यही काम घोघराहा में शान्ति धार का बन्द मुँह खोल कर करना पड़ेगा।

1987 में पूरे उत्तर बिहार में जबर्दस्त बाढ़ आयी थी। हम लोग इसका जायजा लेने के लिए बिशुनपुर से लहेरियासराय के लिए निकले। लहेरियासराय से कोई 17 किलोमीटर पहले महादेव स्थान पर बागमती का बांध टूट गया था। इस घटना के आधे घन्टे बाद पानी उतरना शुरू हो गया और लगभग 24 घन्टों के अन्दर पूरे इलाके से पानी चला गया। तब जाकर लोगों की समझ में बात आयी कि वहाँ बाढ़ के पानी के टिके रहने में बागमती तटबन्ध की बड़ी भूमिका है। उसके पहले लोग बाढ़ को दैवी विपत्ति ही मानते थे। उस साल इस इलाके में हुकुमदेव नारायण यादव और विजय कुमार मिश्र (तत्कालीन सांसद) आये थे और उन्होंने भी पानी की निकासी की समस्या के समाधान के रूप में देखा और उसी के अनुरूप बयान भी दिया था। तभी हम लोगों ने बागमती संग्राम परिषद के नाम से एक संगठन बनाया और महादेव स्थान के पास जाकर संकल्प लिया कि भले ही जान देनी पड़े पर बागमती को फिर बांधने नहीं देंगे। लौटने पर बाढ़ मुक्ति संग्राम परिषद का गठन किया। हमारे गांव मोरों के बगल के गांव बसुआरा के पूर्व मुखिया हरिनारायण मिश्र ने हाई कोर्ट में अपील की कि बांध बनाने के स्थान पर जल निकासी की व्यवस्था की जाय। हाई कोर्ट का 1988 में फैसला हुआ कि सरकार दोनों पक्षों की बात सुन कर व्यवस्था करे, ऐसा निर्देश दरभंगा के कमिश्नर को दिया गया। तब यह तय हुआ था कि घोघराहा में 100 मीटर लम्बा एक स्लुइस बनेगा जिसमें एक सीमा के बाद पानी खुद-ब-खुद शान्ति धार में चला जायेगा। इस समझौते के बाद वहाँ निर्माण सामग्री का इकट्ठा होना शुरू हुआ। मगर इस काम में टालमटोल का माहौल ज्यादा था, काम कम था। हम लोग चाहते थे कि बागमती को भी साथ-साथ मुक्त किया जाय। हम लोगों ने प्रतिरोध किया और धरने पर बैठे। सरकार ने 153 लोगों को गिरफ्तार कर के जेल भेज दिया। पहले समस्तीपुर और फिर केन्द्रीय कारागार मुजफ्फरपुर में हम लोगों को 36 दिन तक रखा। हम लोगों की गैर-मौजूदगी का फायदा सरकार ने उठाया और बागमती का गैप तो भर ही दिया, घोघराहा को भी जैसे-तैसे पूरा कर के अपने कर्त्तव्य की इतिश्री कर ली। 2002 में भी तटबन्ध टूटने और उसे जोड़ने के लिए फौजदारी की नौबत आ गयी थी। जल निकासी की जरूरत तो सब समझते और कहते हैं मगर बनता और मरम्मत होता तटबन्ध ही है।

बिहार के भूतपूर्व शिक्षा मंत्री, गजेन्द्र प्रसाद सिंह का कहना है, ''...सिंघिया के पास तटबन्धों के बीच का फासला है पौन किलोमीटर और वहाँ कोल्हुआ पुल की चौड़ाई है 300 फीट इसमें कुल 6 पिलर हैं। कोल्हुआ पुल के 13 किलोमीटर ऊपर बना है बरियाही पुल जिसमें 22 पिलर हैं–राम लखन सिंह सेतु पर। बरसात में कोल्हुआ पुल पर खड़े होकर देखेंगे तो अपस्ट्रीम और डाउन स्ट्रीम में 8 फुट का फर्क नंगी आंख से नजर आयेगा। इसका असर पुल के ऊपर और नीचे दोनों तरफ पड़ता है। ऊपर के हिस्सों को यह पुल अनावश्यक रूप

गजेन्द्र प्रसाद सिंह

से डुबाता है और नीचे तेज़ी से कटाव करता है। जब तक यह पुल चौड़ा नहीं किया जायेगा और तटबन्ध पर पिचिंग नहीं होगी, हालत नहीं सुधरेगी।

यह इलाका टापू बनेगा जब रुन्नी सैदपुर से आगे चलता हुआ तटबन्ध हायाघाट में इसमें जुड़ जायेगा। जो पानी 10-15 किलोमीटर में फैल कर बहता है उसे पौन किलोमीटर में बहाइयेगा तो जो होगा वह किसी से छिपा है क्या? आज पानी खिड़की से होकर जाता है, कल छप्पर के ऊपर से जायेगा। दरभंगा से खगड़िया तक सब बरबाद होगा।''[13]

संदर्भ :

1. झा, इन्द्रकान्त; ग्राम ठेंगहा, प्रखंड तारडीह, जिला दरभंगा से व्यक्तिगत संपर्क
2. मंडल, जियालाल; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 30 मार्च 1955, पृष्ठ 71
3. सिंह, दीप नारायण; उपर्युक्त, 11 अप्रैल 1958, पृष्ठ 45
4. सादा, मन्टुन; ग्राम पैकड़ा, प्रखंड सिंहया, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपर्क
5. सिंह, विमल कुमार; ग्राम मांहे खैरा, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपर्क
6. सिंह, गंगेश प्रसाद; ग्राम कुंडल, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपर्क
7. सिंह, बबलू; ग्राम कुंडल, प्रखंड सिंधिया, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपर्क
8. यादव, राम सुधारी; ग्रामी कारांची, प्रखंड बिथान, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपक।
9. ठाकुर, सुशील; ग्राम फुहिया, प्रखंड बिथान, जिला समस्तीपुर से व्यक्तिगत संपर्क
10. पासवान, ठाकुर; ग्राम बेलहा, प्रखंड मानसी, जिला खगड़िया से व्यक्तिगत संपर्क
11. श्रीकांत आजाद; ग्राम आनन्दपुर परास, प्रखंड अलौली, जिला खगड़िया से व्यक्तिगत संपर्क
12. राय, उमेश; ग्राम मोरों, प्रखंड हनुमान नगर, जिला दरभंगा से व्यक्तिगत संपर्क
13. सिंह, गजेन्द्र प्रसाद; से व्यक्तिगत संपर्क

11

बागमती परियोजना और पुनर्वास

11.1 पृष्ठभूमि

बागमती परियोजना का निर्माण कार्य तीन स्तरों पर हुआ था। पहला निर्माण कार्य 1954–56 के बीच हायाघाट से लेकर बदलाघाट के बीच बनने वाले तटबन्धों से शुरू हुआ। यह समय आजादी के लगभग ठीक बाद का था इसलिए उसकी रवानी में समाज और देश के काम आने की ललक हर आदमी में थी। यह वह समय था जब जनता सम्बन्धित विभागों की योजनाओं पर विश्वास करती थी। जो नेता थे वह स्वतंत्रता आन्दोलन के तपे-तपाये लोग थे इसलिए उन पर भरोसा न करने का कोई सवाल ही नहीं उठता था। इस तरह से उस समय पुनर्वास के मसले पर न तो आम लोगों की कोई खास अपेक्षाएं थीं और न ही पुनर्वास को लेकर कोई खास झमेला हुआ। किसी को मुआवजे के तौर पर कुछ मिल गया तो ठीक वरना न मिलने पर भी किसी ने कोई शिकायत भी नहीं की और इसे समाज तथा देश के व्यापक हित में अपना योगदान समझ कर संतोष कर लिया। उस समय के बचे हुए पुराने लोग कहते हैं कि जिस जमीन से होकर तटबन्ध गुजरा था उस जमीन का मुआवजा उन्हें मिला था और उसके अलावा उन्हें कुछ नहीं मिला। जिनका घर दोनों तटबन्धों के बीच में पड़ गया उनमें कुछ को तटबन्ध के बाहर घर बनाने के लिए कुछ ज़मीन मिल गयी। घर बनाने के लिए किसी को कोई अनुदान नहीं मिला।

उन दिनों कोसी परियोजना में पुनर्वास का विषय जरूर कुछ चर्चा में आ गया था मगर निर्माणाधीन बागमती और बूढ़ी गंडक नदियों पर बन रहे तटबन्ध के समय पुनर्वास किसी चर्चा में नहीं था। वहाँ पुनर्वास के मसले को जैसे-तैसे निपटा देने की ही योजना थी। इस मुद्दे पर विधान सभा की कार्यवाही रपट में भी विशेष कुछ नहीं मिलता और निश्चयपूर्वक कुछ कह सकने वाले लोग भी बहुत कम ही बचे हैं। यह तटबन्ध बन जाने के कई वर्षों बाद 10 फरवरी 1965 को महावीर राउत ने विधान सभा में यह सवाल उठाया कि हायाघाट के नीचे जो लोग बांध के बीच में पड़ गए हैं उनकी हालत खराब हो गयी है और उनके बसने के लिए जमीन नहीं है। बांध बन जाने के कारण जमीन का दाम बढ़ कर 400 रुपये प्रति कट्ठा हो गया है। गरीब हरिजन इतना पैसा दे नहीं सकते। हसनपुर इलाके में 30-40 गाँवों के लोगों को बसाना होगा और सिंचाई विभाग तथा सरकार की यह जिम्मेवारी बनती है कि इन लोगों को जमीन दे।[1] उन्होंने इस सवाल को एक बार फिर विधान सभा में 31 मार्च 1965 के दिन भी उठाया जिसके जवाब में सरकार की तरफ से महेश प्रसाद सिंह ने जरूर यह स्वीकार किया था कि करेह नदी के बांध से उजड़े हुए लोगों का कोई प्रबन्ध नहीं हो पाया है। यहाँ भूमिहीन लोग तटबन्ध पर ही रह रहे हैं। उन्होंने आगे कहा कि तृतीय पंचवर्षीय योजना में निधि के अभाव के कारण अभी तक कोई कार्यवाही नही हो पायी है। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में निधि के उपलब्ध होने पर पुनर्वास की कार्यवाही की जायेगी। पुनर्वास के इस आश्वासन का मतलब था कि तटबन्ध का काम तो पहली पंचवर्षीय योजना में हो जाना था मगर पुनर्वास के लिए उसके बाद कम से कम 10 वर्ष इन्तजार करना था।[2] बागमती के निचले हिस्से में पुनर्वास का मसला एक बार फिर 17 फरवरी 1966 को उठा जब महाबीर राउत ने ही वहाँ तटबन्धों पर बसे लोगों को सरकार द्वारा हटाये जाने की धमकी दिये जाने का सवाल उठाया। उनका कहना था कि ऐसे लोग बड़ी दयनीय स्थिति में जी रहे हैं और वहाँ से हटाये जाने पर उनकी हालत और बदतर होगी। सरकार की तरफ से जो जवाब दिये गए वे गोल-मटोल थे।[3] ग्राम कुण्डल, सिंघिया प्रखण्ड, जिला समस्तीपुर के गंगेश प्रसाद सिंह बताते हैं, ''...जब यह तटबन्ध बन रहा था तब हम लोग बच्चे थे और चौथी-पाँचवीं कक्षा में पढ़ते रहे होंगे। पिताजी बताते थे कि सरकार से मुआवजे की अपेक्षा लोगों को थी मगर सरकार का यह कहना था कि प्रभावित लोगों को बॉण्ड दिया जायेगा। बॉण्ड क्या होता है इस का मतलब ही लोगों को नहीं मालुम था। जो समझते भी थे उनको भी बॉण्ड देने में इतना परेशान किया गया कि वे लोग भी थक हार कर बैठ गए और ककड़ी के मोल जमीन हाथ से निकल गयी। पुनर्वास किसी को मिला नहीं और तटबन्ध और नदी के बीच रहने वाले अधिकांश लोग तटबन्ध या उसके बगल की ज़मीन पर ही घर बना कर रह रहे हैं। इनकी संख्या में हर साल वृद्धि होती है क्योंकि जहाँ-जहाँ गांव नदी की धारा से कटते हैं या डूबते हैं, वहाँ-वहाँ के लोग तटबन्ध पर चले आते हैं।''[4]

कुछ इसी तरह की व्यवस्था के बारे में बताते हैं करांची (प्रखण्ड बिथान, जिला समस्तीपुर) के पूर्व अध्यापक राम सुधारी यादव, जिनका कहना है, ''...पुनर्वास तो एक औपचारिकता थी जिसे जैसे-तैसे पूरा कर दिया गया था। यहाँ तटबन्ध के किनारे घनी बस्तियाँ हैं। यह जमीन सरकारी है। बरसात में पूरा इलाका डूबता है क्योंकि बांध कहीं न कहीं टूटता ही है–उसका पानी आता है। बारिश का पानी है ही। किसी भी आपात् स्थिति का सामना करने के लिए तटबन्ध के ऊपर शरण ली जा सकती है। इसलिए लोग बांध के नजदीक रहना पसन्द करते हैं। कुछ परिवारों ने बांध के आस-पास जमीन खरीद कर भी घर बना लिये हैं।''[5]

बहुत से गाँवों का पुनर्वास हुआ ही नहीं और ऐसे गाँव अभी भी करेह के तटबन्धों के बीच नारकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त हैं। ऐसा ही एक गांव है दरभंगा जिले के हायाघाट प्रखंड का अकराहा जो कि दरभंगा-समस्तीपुर रेल लाइन पर पुल संख्या 17 के पूरब में बसा हुआ है। यहाँ की अविश्वसनीय जीवन शैली के बारे में बताते हैं पचपन वर्षीय दामोदर यादव। वे कहते हैं, ''...पुनर्वास तो कभी नहीं मिला। अगर मिला होता तो चले ही गए होते। हमारा गांव रेल लाइन के पूरब में है। कम से कम तीन महीनें तो पूरा पानी भरा रहता है। उस समय हम गांव छोड़ कर रेल लाइन पर या बांध पर चले जाते हैं। पानी घटता है तब लौटते हैं। बांध पर बाढ़ के समय तो सरकार रहने देती है मगर कहीं टूट-फूट हो जाए तब मरम्मत करने के लिए वहां से भी हटा देती है। हम लोगों की हालत 1987 के बाद से बहुत ज्यादा खराब हो गयी। यहां पास में खरसर के पास

दामोदर यादव

एक पंचफुट्टा (पांच फुट ऊँचा) बांध हुआ करता था। पानी ज्यादा बढ़ने पर उसके ऊपर से वह निकल जाया करता था और हमारे यहां पानी कम हो जाता था। 1987 के बाद सरकार द्वारा इसे ऊँचा और मजबूत बना दिया गया और तभी से हमारी बरबादी शुरू हो गयी। अब अगर पास में कहीं टूट जाए तो हमें फायदा होता है। दूर नीचे टूटने पर तो हमें कोई फायदा नहीं होता। जब बांध पर रहते हैं तो नाव से आकर घर-द्वार की हालत देख जाते हैं और फिर वापस बांध पर। तीन-चार महीनें तो बाहरी दुनियाँ से कोई संपर्क रहता ही नहीं है। गांव का प्राइमरी स्कूल भी इस दौरान बन्द रहता है। ...एक ही फसल होती है यहां रब्बी की। गेहूँ, मकई के अलावा अब कुछ भी नहीं उपजता। बाहर जमीन है नहीं हमारी। रिलीफ आदि भी कुछ नहीं मिलता, कभी-कभी कोई मेहरबानी कर के कुछ दे गया तो बड़ी बात है। खर्चा-पानी के लिए तो गांव से बाहर निकलना ही पड़ता है। लहेरियासराय में मजदूरी कर लें या दिल्ली चले जायें। सिर्फ गेहूँ और मकई पैदा करके तो जीवन चलने वाला नहीं है। चावल खरीदना ही पड़ता है। रोजमर्रा की चीजों, शादी-ब्याह, जीवन-मरण सब के लिए तो नगद पैसा चाहिये। हमारे गांव के अधिकांश लोग दिल्ली के आस-पास सब्जी उगाने में मजदूरी करते हैं। गांव में कुछ लोगों के पास भैसें हैं-दूध होता है, लहेरियासराय में बेच लेते हैं। बरसात के महीनें में हम चाहे जहाँ भी रहें हमारा गांव से संपर्क बना रहता है। सुनते हैं कि बांध ऊँचा और मजबूत किया जायेगा। अगर ऐसा हुआ तो पानी हमारे घर के ऊपर से बहेगा और तब तो बांध पर ही रहना पड़ेगा क्योंकि हमारी हैसियत नहीं है कि कहीं अपनी जमीन खरीद कर घर बना लें।''[6]

तटबन्धों के आस-पास या उनके अन्दर जहाँ ऐसी स्थिति है, तटबन्धों से दूर भी हालात कोई बहुत अच्छे नहीं हैं। पुरानी बागमती का वह रास्ता जिससे वह बूढ़ी गंडक से मिलती थी, उसी के बायें किनारे का गाँव है हथौड़ी, मौजे धोबीपुर टोला, जिला दरभंगा-और यहीं कच्ची सड़क के दूसरी तरफ किशनपुर बैकुण्ठ गांव है, प्रखंड वारिस नगर, जिला समस्तीपुर। यह सड़क ही दोनों जिलों की सीमा बनाती है। बाढ़ के समय यहाँ गर्दन भर पानी रहता है। उस समय लोग यहां से उठ कर गांव के चौक के पास जहाँ सड़क ऊँची है, वहां चले जाते हैं अपने जानवरों के साथ। वहां भी पानी बढ़ता है तो चौकी पर ईंटें बिछा कर पहले अनाज बचाते हैं फिर उतनी सी ही जगह में पूरा परिवार रहता है। तब भी अगर पानी बढ़ता है तो वाटरवेज के बांध पर चले जाते हैं। पानी बहुत ज्यादा बढ़ने पर हथौड़ी कोठी के पास करेह नदी के बांध पर जगह मिल जाती है-जो यहां से 2-3 किलोमीटर पड़ता है। कुछ लोग बागमती के बांध पर मधुरापुर चले जाते हैं। तीन महीना इसी तरह यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ बिस्तर हटाने का इन्तजाम करते बीत जाता है। अनाज रहता है मगर खाना बनाने का जुगाड़ नहीं बैठता। सारा जीवन नाव, बांस और तैरने पर निर्भर हो जाता है।

यहां पानी करेह का ही आता है भले ही यह नदी हायाघाट के नीचे बंधी हुई है मगर इसका तटबन्ध कहीं न कहीं हर साल टूटता ही है। तटबन्ध टूटा और यहाँ लोगों की हालत खराब हुई। फिर भी बाढ़ के पानी से फायदा होता है कि फसल अच्छी हो जाती है। इधर दो साल से तटबन्ध नहीं टूटा है तो किसानों को सिंचाई का इन्तजाम करना पड़ रहा है। सरकार की कोई व्यवस्था है नहीं। प्राइवेट बोरिंग से 75 रुपया प्रति घंटा पर सिंचाई होती है। 6 कट्ठा मकई की सिंचाई के लिए साढ़े तीन घंटा पानी देना पड़ता है। क्या बचेगा ऐसे में? स्टेट बोरिंग रहती तो इतना खर्चा नहीं पड़ता मगर उसके लिए भी बिजली चाहिये जिसकी न तो कोई निश्चितता है और न समय। दिन में तीन घंटा भी निश्चित समय तक बिजली रहे और सारे दिन न भी रहे फिर भी किसान का काम चलता मगर इतना भी नहीं हो पाता है। धोबीपुर टोला के लक्ष्मी महतो अपनी हालत बड़े दार्शनिक भाव से बताते हैं, ''...मेरे पास जमीन नहीं है। बटइया करते हैं, मेहनत करते हैं, मगर जीते शान

लक्ष्मी महतो

से हैं। मनखाप में एक साल में 12 से 15 मन अनाज मालिक को देना पड़ता है, बाकी उपज हमारी। साल में दो फसल होती है, काम चल जाता है। बटइया में आधी-आधी फसल बंटती है। खर्चा हर हालत में बटायीदार का होता है। ...खरसर में बागमती का मुँह खोल देने से तो यहाँ की हालत और भी खराब हो जायेगी। उस हालत में पुरानी बागमती के इस हिस्से पर भी बांध बनाना पड़ेगा। यह बात अलग है कि मिट्टी का बांध है तो टूटेगा ही। जब इस शरीर का ही कोई भरोसा नहीं है तो बांध का क्या भरोसा? देखिये, बांध कभी अपने से नहीं टूटता, तोड़ा जाता है। पब्लिक कुछ भी न करे तो भी बांध की रखवाली तो करती ही है।''[7]

11.2 फ़ेज-2 का पुनर्वास

तटबन्ध निर्माण का दूसरा दौर 1971 में शुरू हुआ जब बागमती पर सीतामढ़ी में ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक तटबन्ध बनाये गए। तटबन्ध निर्माण के इस दौर में आते-आते आम लोगों में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कुर्बानी देने का जज्बा समाप्ति पर था। नेताओं की नई जमात सामने आ रही थी जो भावुक तथा जुझारू कम और व्यावहारिक ज्यादा थी। ब्रिटिश शासन काल के इंजीनियरों की पीढ़ी भी धीरे-धीरे आंखों से ओझल हो रही थी और अब इन लोगों ने अपनी गलतियों और जिम्मेवारियों से दामन झाड़ लेने की कला सीख ली थी। कोसी परियोजना में भ्रष्टाचार की कहानियाँ प्राय: हर बिहारवासी की जबान पर चढ़ी हुई थीं और वहाँ विस्थापितों के साथ शासकों की डांड़ा-मेंड़ी के किस्से भी हवा में खूब तैर रहे थे। यह किस्सा दूसरी जगह उपलब्ध है इसलिए यहाँ हम उसके विस्तार में नहीं जायेंगे।[8] इन्हीं परिस्थितियों में बागमती परियोजना की दूसरी किस्त के तटबन्धों के विस्थापितों के पुनर्वास का काम शुरू होता है।

बागमती नदी पर दूसरी किस्त के तटबन्धों, ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक, के निर्माण के समय तक बिहार में कोसी तटबन्धों का निर्माण कार्य पूरा कर लिया गया था। कोसी तटबन्धों के विस्थापितों के पुनर्वास के लिए बिहार सरकार ने विधान सभा 1958 में जो नीतिगत वक्तव्य दिया था उसे यहाँ दिया जा रहा है–

''1. तटबन्धों के आस-पास बाढ़ मुक्त जमीन में पुनर्वास किये जाने वाले गाँवों के समीप ही घर बनाने के लिए पर्याप्त भूमि उपलब्ध।

2. सामुहिक सुविधाओं जैसे विद्यालय, सड़क आदि के लिए अतिरिक्त भूमि का प्रबन्ध।

3. पुनर्वास किये गए स्थानों में तालाब, जलकूप, कुएं आदि द्वारा जलापूर्ति की व्यवस्था।

4. गृह निर्माण के लिए अनुदान।

5. तटबन्ध के बीच जहाँ कृषिकार्य होगा वहाँ आने जाने के लिए यथेष्ट संख्या में नौकाओं का प्रबन्ध।''[9]

यह बात सरकार की तरफ से 1958 में कही गयी थी जबकि वहाँ तटबन्धों का निर्माण कार्य 1955 में शुरू हुआ था। 1972-73 आते-आते तक कोसी परियोजना में पुनर्वास की चर्चा बहुत ही विवादित स्तर तक पहुँच गयी थी क्योंकि वहाँ विस्थापित हुए लोग दर-दर की ठोकरें खा रहे थे और पुनर्वास की गति बहुत धीमी थी। पुनर्वास योजनाओं में टाल-मटोल का काम अब दस्तूर बन चुका था और इसी दस्तूर के मुताबिक बागमती परियोजना में भी पुनर्वास की सुधि सरकार ने तब ली जब योजना पर काम शुरू हुए 3-4 साल का समय बीत चुका था।

बिहार सरकार की एक अधिसूचना (बाढ़-1/तट-205/75/अश/3129 दिनांक 11 जुलाई 1975) के अनुसार नए तटबन्धों के निर्माण के फलस्वरूप विस्थापितों के पुनर्वास पर सरकार के निर्णय को रेखांकित करते हुए कहा गया था कि,[10]

''1. तटबन्ध के बीच बसने वाले प्रत्येक परिवार को सुरक्षित क्षेत्र में तटबन्ध से यथासंभव निकट उनकी बासडीह के बराबर जमीन दी जाए,

2. सड़क, विद्यालय, कुआँ आदि सार्वजनिक सुविधाओं के लिए अतिरिक्त भूमि दी जाए तथा उसकी मात्रा आवश्यकतानुसार निर्धारित की जाए,

3. प्रत्येक विस्थापित परिवार को तटबन्ध के अन्दर मकान की सामग्री पुनर्वास स्थल पर लाने हेतु 300/- रु० ढुलाई के रूप में दिया जाए, परन्तु जो मकान फूस के नहीं हैं, बल्कि खपरैल तथा पक्के के हैं, उनकी एक श्रेणी बनाकर उनके लिए क्षतिपूर्त्ति की दर कुछ बढ़ा कर निर्धारित की जाए,

4. पुनर्वासित ग्राम में प्रत्येक 40 पुनर्वासित परिवारों के लिए एक हैंडपम्प दिया जाए तथा उस ग्राम के समस्त पुनर्वासित परिवारों के लिए एक कुआँ की व्यवस्था की जाय। यदि पुनर्वास स्थल काफी बड़ा हो तो एक और कुआँ दिया जाय।

परिवारों की गणना, विस्थापितों के लिए भूमि के रकबे की आवश्यकता, जिला पदाधिकारी की राय से पुनर्वासित स्थल का चयन करना, सड़क, कुएं तथा हैंडपम्प के निर्माण आदि का कार्य संबंधित कार्यपालक अभियंता के जिम्में सुपुर्द रहेगा। इन कार्यों के संपादन का पूर्ण दायित्व संबंधित अधीक्षण अभियंता का होगा।''

11.3 इमरजेन्सी में लागू की गयी पुनर्वास नीति

इस अधिसूचना को सिंचाई विभाग, बिहार, पटना द्वारा ज्ञाप संख्या सी/ई-4-20367/75/12447 पटना, दिनांक 7.8.75 के माध्यम से राज्य के सभी अधीक्षण अभियंताओं तथा कार्यपालक अभियंताओं को भेज दिया गया था। यह दोनों तारीखें (11 जुलाई 1975 और 7 अगस्त 1975) देश में इमरजेन्सी (25 जून 1975) लगने के बाद की हैं और इस पुनर्वास योजना को दो अलग-अलग सन्दर्भों में देखा जा सकता है। एक तो यह कि विस्थापितों के पुनर्वास का जो मसला अब तक लटका हुआ था और जिसके लिए छिट-पुट आवाजें उठ रही थीं उनकी ओर सरकार का ध्यान गया और उसने इस पूरे प्रकरण को गंभीरता से लिया और लोक-हित में यह अधिसूचना जारी की। इसका दूसरा पक्ष यह है कि इमरजेन्सी लगने के बाद जनता के व्यक्तिगत अधिकारों की सीमा तय हो चुकी थी और सरकार जिस तरीके से भी हो सके पुनर्वास के मसले को निपटा देना चाहती थी और अब उसे इस बात की आजादी मिली हुई थी जिस पर तब किसी प्रतिवाद की कोई गुंजाइश नहीं होती।

1958 में कोसी परियोजना में दिये जाने वाले पुनर्वास के साथ अगर इस अधिसूचना के प्रावधानों की तुलना की जाए तो कुछ अन्तर जरूर दिखाई पड़ता है। नये प्रावधान में सार्वजनिक सुविधाओं के तहत मिलने वाली जमीन के साथ 'आवश्यकतानुसार' शब्द जोड़ा गया। यह 'आवश्यकता' कौन निर्धारित करेगा, इसके बारे में कोई स्पष्टता नहीं थी। कोसी परियोजना में यह जमीन बाद में रिहाइशी जमीन के 40 प्रतिशत पर निर्धारित की गयी थी। कोसी परियोजना में गृह निर्माण के लिए अनुदान की व्यवस्था थी मगर अब गृह निर्माण पर होने वाले खर्च के बजाय केवल घर के आवश्यक सामानों को पुनर्वास स्थल तक ले जाने के लिए थोड़े बहुत नकद संसाधन की व्यवस्था की गयी थी। अचल संपत्ति के बारे में यह पुनर्वास नीति बिलकुल खामोश थी और फूस से बने कच्चे घरों के लिए अनुदान की यह सीमा 300 रुपये तय की गयी थी। बाकी बेहतर घरों के लिए कुछ कहा नहीं गया था और उस पर

निर्णय आने वाले समय के लिए टाल दिया गया था। पुनर्वासित हो जाने के बाद अपनी खेती की जमीन पर कृषिकार्य में आने-जाने के लिए नावों की 'यथेष्ट व्यवस्था' के बारे में पुनः इस बार कुछ नहीं कहा गया था यद्यपि कोसी की तरह बागमती भी तटबन्धों के बीच बंधने के बाद अपनी धारा बदलेगी, यह सभी को मालुम था और बिना नाव के अधिकांश किसानों का खेतों तक पहुँचना नामुमकिन था। खेती की जमीन के बदले जमीन दिये जाने का प्रावधान न तो कोसी परियोजना में किया गया था और न ही बागमती परियोजना में इसकी कोई चर्चा थी। इतना जरूर तय हो गया था कि तटबन्धों के बीच फंसने वाले परिवार रहेंगे तो तटबन्ध के बाहर पुनर्वास में, मगर खेती-किसानी के लिए उन्हें तटबन्धों के बीच ही जाना पड़ेगा क्योंकि उनकी जमीन तो वहीं थी। जिस समय इस पुनर्वास योजना की घोषणा हुई उस समय इमरजेन्सी के कारण किसी में भी इसका विरोध करने या उसमें सुधार करने के सुझाव देने की हिम्मत नहीं थी क्योंकि अगर वह व्यक्ति सत्ता पक्ष का समर्थक होता तो वह बिना बात नेताओं की निगाहों में चढ़ता और अगर उसका संबंध किसी विरोधी पार्टी से होता तो ज़बान खोलने के साथ ही जेल के फाटक अपने आप खुल जाने का अंदेशा था।

धीरे-धीरे पुनर्वास योजना का स्वरूप कुछ और स्पष्ट हुआ। विधायक रघुनाथ झा द्वारा बागमती परियोजना में पुनर्वास की व्यवस्था पर किये गए एक अल्पकालिक प्रश्न के उत्तर में सरकार की तरफ से मुहम्मद हुसैन आज़ाद (1976) ने बताया, ''...इसके लिए स्केल यह है कि हर फैमिली को जिसको थैच्ड रूफ है, उसको 300 रुपये, जिसको टाइल्ड रूफ है उसको 500 रुपये तथा जिसको पक्का मकान है उसको 4 रुपये स्क्वायर फीट (प्रति वर्ग) के हिसाब से दिये गए हैं।''[11] इसके साथ ही आजाद ने सदन को यह भी बताया कि अब तक तटबन्धों से प्रभावित 73 गाँवों में से 18 गाँवों को इस तरह का ढुलाई-शुल्क दिया जा चुका है और 8 गाँवों के लोग तो पुनर्वास स्थलों में चले भी गए हैं। रघुनाथ झा सरकार से यह जरूर जानना चाहते थे कि बाकी गाँवों को सरकार ने किसके भरोसे छोड़ रखा है? सरकार के साथ समस्या यह थी कि वह केवल परिवार के मुखिया को ही ढुलाई शुल्क की रकम देना चाहती थी जबकि परिवार के सदस्यों का कहना था कि उनमें आपस में बटवारा हो चुका है और वह एक छत के नीचे रहते हुए भी अलग-अलग थे। एक दूसरी समस्या भी थी। बहुत से लोग यह ढुलाई शुल्क लेकर भी तटबन्धों के अन्दर अपने पुराने गाँव-घर में ही रह रहे थे, वह पुनर्वास में नहीं गए क्योंकि उनकी जमीन-जायदाद और कृषि भूमि तटबन्ध के अन्दर ही स्थित थी। सरकार की कोशिश थी कि जो लोग 'कम्पेन्सेशन' (सरकार ढुलाई शुल्क को इसी नाम से पुकारना पसन्द करती थी) ले चुके हैं वह पुनर्वास स्थल में चले जायें।[12] सरकार की तरफ से डॉ० जगन्नाथ मिश्र का कहना था कि सरकार यथाशीघ्र बाकी गाँवों को तटबन्धों के बाहर बसाने का काम करेगी। उन्होंने सदन को यह भी आश्वासन दिया कि तब तक बने तटबन्धों में 5 स्थानों पर गैप रखे हुए हैं जिनकी वजह से तटबन्धों के अन्दर नदी के पानी का लेवेल बेजा तरीके से नहीं बढ़ने पायेगा और वहाँ रहने वाले लोगों को बहुत ज्यादा परेशानी नहीं होने दी जायेगी।[13] इस पर रघुनाथ झा ने चुटकी ली थी कि यही गैप तो पटना शहर को बचाने वाले तटबन्धों में भी रखे गए थे जिनकी वजह से 1975 में अगस्त महीनें में शहर पूरी तरह से डूबने-डूबने की हालत में पहुँच गया था।[14] यहाँ यह याद दिलाना सामयिक है कि 1975 में अगस्त महीनें के अन्त में गंगा और सोन में एक साथ आयी बाढ़ के कारण बाढ़ का पानी पटना शहर में घुस आया था और वहाँ सामान्य जन-जीवन हफ्तों अस्त-व्यस्त रहा था। तटबन्धों के बीच इन खुली जगहों के कारण 1975 और 1978 में सीतामढ़ी में क्या कुछ हुआ उसकी एक झलक हम पहले देख आये हैं।

11.4 पुनर्वास, भूमि अधिग्रहण और भ्रष्टाचार

इधर पुनर्वास का मसला उठा और दूसरी तरफ ज़मीन के अधिग्रहण और विस्थापितों के बीच उसके बटवारे को लेकर भ्रष्टाचार का बाजार गर्म हुआ। इसकी वजह साफ थी। जिसकी जमीन का अधिग्रहण पुनर्वास के लिए होना तय था उसकी चिन्ता स्वाभाविक थी कि अव्वल तो उसकी जमीन का अधिग्रहण हो ही नहीं या फिर बहुत कम हो और अगर इसे टाला न जा सके तो कम से कम उसे उसकी जमीन का उचित मूल्य मिले और इसके लिए वह हर संभव कोशिश कर रहा था। जिसको पुनर्वास की जमीन की जरूरत थी और वह हर विस्थापित को थी, वह इस चिन्ता में कि कहीं पहले दौर में वह छूट न जाए और बाद में परेशानी हो, वह भी अधिकारियों को खुश रखने की कोशिश में कोई खतरा मोल नहीं लेना चाहता था। ढुलाई शुल्क में तो भुगतान नकद होने वाला था। अतः वहाँ तो किसी तरह की रोक की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। पुनर्वास से संबन्धित हर अधिकारी के दोनों हाथों में लड्डू थे। पैसा हवा में उड़ता था और उसे अधिकारियों द्वारा हाथ बढ़ा कर पकड़ लेने भर की देर थी। विधायक रामस्वरूप सिंह ने बिहार विधान सभा में बागमती परियोजना के हालात को कुछ इस तरह से बयान किया, ''...दरअसल अभी जो उसके लैण्ड एक्वीज़िशन का काम हो रहा है, उसमें बहुत भ्रष्टाचार है और बहुत बड़ी धांधली उसमें की जा रही है। वहाँ जो लैण्ड एक्वीज़िशन ऑफीसर हैं जो कि मुजफ्फरपुर में रहते हैं... वे इतनी धांधली करते हैं कि हमारे यहाँ लोग परेशान हैं। खुलेआम घूस लेते हैं, वहाँ घूस का बाजार गर्म है... बिना घूस लिए कोई काम नहीं करते। सीतामढ़ी जिला में बागमती कार्यालय है, वहाँ श्री किशोरी लाल और दूसरे लोग भी हैं जिनकी जमीन एक्वायर की गयी है, उनके साथ भी धांधली की जा रही है। बैरगनियाँ थाने के मूसाचक गाँव के लोगों से भी घूस मांगी जा रही है। तो, इस तरह की जहाँ धांधली हो रही है, वहाँ आप बागमती योजना को कैसे पूरा कर सकते हैं?''[15] सच यह था कि परियोजना जिस मुकाम पर पहुँच गयी थी वहाँ अब वह किसी के रोके रुकने वाली नहीं थी और जैसे हालात बन रहे थे उनमें योजना के आगे-आगे भ्रष्टाचार चल रहा था। वहाँ एक ओर जरूरतमन्द और परेशान हाल लोग थे तो दूसरी ओर मौके का फायदा उठाने वाले क्षमतावान सरकारी अफसर। ऐसी परिस्थितियाँ भ्रष्टाचार की उत्पत्ति के लिए खाद-पानी का काम करती हैं और थोड़े ही दिनों में यह खेती लहलहाने लगती है। बागमती परियोजना में ये कहानियाँ गढ़ी नहीं गईं, बस दुहराई भर गईं।

बहरहाल, एक ओर बहार ही बहार थी तो दूसरी ओर असमंजस और अनिश्चित भविष्य और इन दोनों के बीच बागमती परियोजना में पुनर्वास की गाड़ी किसी तरह घिसटती रही। 1980 में एक बार फिर

रघुवंश प्रसाद सिंह ने विधान सभा में पुनर्वास का प्रश्न उठाया और कहा, ''...बागमती नदी के बीच में जितने भी गाँव पड़ते हैं उनमें से बहुतों के पुनर्वास की व्यवस्था नहीं हो पाई है। नतीजा है कि हर साल वह बरबाद होते हैं और उनके जान-माल की क्षति होती है और सरकार को भी हर साल रिलीफ बांटना पड़ता है। आज तक स्लुइस गेट नहीं बन पाया है। ... इस साल तो चन्दौली और कन्सार निश्चित रूप से बह जायेगा। इसकी जिम्मेंवारी किस पर दी जाए, सरकार को या इसके अधिकारी को। कनुआनी से मकसूदपुर वाया तरियानी छपरा तक तटबन्ध का निर्माण नहीं हुआ है। एक करोड़ चालीस लाख का प्रोजेक्ट है, आज डेढ़ वर्ष से यह काम पड़ा हुआ है। ...इसी तरह से बेलसंड से चन्दौली और बेलसंड से कन्सार तटबन्ध भी अभी तक नहीं बन पाया है। ...इस विभाग में बहुत ज्यादा लूट होती है। काम नहीं होता है।''[16]

धीरे-धीरे पुनर्वास की स्थिति और भी स्पष्ट होने लगी। इसके बारे में खुलासा होता है सीतामढ़ी जिले के उप-समाहर्ता सह पुनर्वास अधिकारी की एक रिपोर्ट से जो कि 29 नवम्बर 1985 के क्षेत्र और कार्यालय निरीक्षण के बाद लिखी गयी थी। इस समय तक कुल प्रभावित गाँवों की संख्या 95 तक पहुँच चुकी थी जिनका पुनर्वास किया जाना था (यह संख्या आज भी इतने पर ही टिकी हुई है) और कुल प्रभावित परिवारों की संख्या उस समय 14,018 निर्धारित की गयी थी (आज यह संख्या 14,881 है)। यहाँ हम केवल उन परिवारों और गाँवों की बात कर रहे हैं जो ढेंग से रुन्नी सैदपुर के बीच में नदी के दोनों तटबन्धों के बीच में अवस्थित हैं। परियोजना सूत्रों के अनुसार नवम्बर 1985 तक पूरी तरह से पुनर्वासित गाँवों की संख्या मात्र 49 थी और आंशिक रूप से पुनर्वासित गाँवों की संख्या 32 थी। बाकी के चौदह गाँवों के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं थी जिसका मतलब यह लगाया जा सकता है कि इन गाँवों में पुनर्वास की प्रक्रिया शुरू ही नहीं हुई थी। परियोजना सूत्रों के अनुसार अब तक 6,742 परिवार पूर्णरूप से पुनर्वासित कर दिये गए थे जबकि 5094 परिवारों का पुनर्वास आंशिक रूप से हो पाया था। इसका यह भी मतलब होता है कि मुहम्मद हुसैन 'आजाद' ने 29 जून 1976 को बिहार विधान सभा में पुनर्वास की जो गुलाबी तस्वीर पेश की थी वह उतनी खुशगवार नहीं थी।

11.5 पुनर्वास की बदहाली पर प्रशासन की नींद टूटी

जहाँ तक पुनर्वास पैकेज का सवाल था वहाँ तो सिर्फ ढुलाई शुल्क और रिहाइशी प्लॉट के अलावा किसी परिवार को तो कुछ मिलना नहीं था। इसलिए जब आंशिक पुनर्वास की बात की जाती है तब या तो इन परिवारों को ढुलाई शुल्क नहीं मिला होगा या फिर प्लॉट का आवंटन नहीं किया गया होगा। वैसे भी पुनर्वास के प्लॉट का आवंटन किये बिना ढुलाई शुल्क के भुगतान का कोई मतलब नहीं होता। पुनर्वास बस्तियों का विकास तो सरकार को करना था जिससे इन पुनर्वासित या गैर-पुनर्वासित परिवारों को कोई लेना देना नहीं था। इस पूरे मसले पर उप-समाहर्त्ता द्वारा लिखी गयी रिपोर्ट (दिनांक 29 नवम्बर 1985) के कुछ हिस्सों को हम यहाँ नीचे उद्धृत कर रहे हैं।

''जिला कार्यालय में संबन्धित पुनर्वास सम्बन्धी संचिकाएं देखने तथा अन्य जानकारी के आधार पर पुनर्वासित व्यक्तियों की समस्याओं की जो जानकारी मुझे मिली है उनका वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है–

1. **पुनर्वासित होने वाले ग्राम के बासडीह एवं मकानों के सर्वेक्षण का कार्य अमीनों से कराया गया है जिसका पर्यवेक्षण एवं जांच वरीय पदाधिकारी द्वारा नहीं किया गया है। कुछ पंजियों में पृष्ठ संख्या आदि का प्रमाण पत्र नहीं दिया गया है। इन मूल पंजियों में कालक्रम में निहित स्वार्थ वाले व्यक्तियों द्वारा काटकूट, रबड़ से मिटा कर दूसरी स्याही से इन्दराज आदि गड़बड़ी की गयी है जिससे इन पंजियों के आधार पर किये गए कार्य गलत भी हो जा सकते हैं।**
2. **पुनर्वास कार्य योजनाबद्ध ढंग से नहीं किया गया है और सरकार द्वारा इस कार्य के लिये गठित समन्वय समिति की राय कहीं भी नहीं ली गयी है। एक ही ग्राम में कुछ लोगों को पुनर्वासित कर दिया गया है और कुछ लोगों को छोड़ दिया गया है। छोड़े गए व्यक्ति सामान्यतः कमजोर वर्ग के लोग हैं जो साधनहीन हैं और जिनकी पहुंच ऊपर नहीं है।**
3. अधिकांश पुनर्वासित ग्रामों में सामान्य सुविधा मुहय्या करने का कार्य जैसे सड़क बनाना, चापाकल लगाना आदि कार्य नहीं हुए हैं जिससे पुनर्वासित व्यक्ति कष्ट का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।
4. पुनर्वास स्थलों में जिन लोगों को बसाया गया है उसका न तो सीमांकन किया गया है और न ही उन्हें भू-स्वामित्व का कोई भी अभिलेख जैसे पर्चा आदि हस्तगत करवाया गया है। जिससे वहाँ कमजोर वर्ग के लोग सम्पन्न वर्ग के लोगों द्वारा अतिक्रमण के शिकार बन रहे हैं और भूमि पर अधिकार संबंधी समस्यायें पैदा हो रही हैं।
5. पुनर्वास के लिए जो भूमि अर्जित की गयी है उनमें से बहुत से स्थान ऐसे हैं जो बसने के उपयुक्त नहीं हैं। ऐसे स्थलों पर पुनर्वासित होने वाले लोग अभी भी तटबंधों के बीच ही बसे हुए हैं और पुनर्वास स्थल की जमीन को सबल लोग मुफ्त में जोत कर उसका उपयोग कर रहे हैं।
6. कई स्थानों पर पुनर्वास की जमीन के आवंटन के विरुद्ध अधिक मात्रा में सबल व्यक्तियों द्वारा दखल कर लिया गया है। फलतः बहुत से परिवार जिन्हें पुनर्वास की जमीन मिली थी वे अभी भी दोनों तटबन्धों के बीच नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

इसके सिवा अन्य छोटी-छोटी स्थानीय समस्याएं भी हैं जिनका हल होना आवश्यक है।''

इस रिपोर्ट को आधार बना कर सीतामढ़ी के जिलाधीश (समाहर्त्ता) ने अपनी एक रिपोर्ट सचिव, साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग तथा निदेशक, पुनर्वास एवं भू-अर्जन, सिंचाई विभाग को भी भेजी जिनका संक्षिप्त रूप नीचे दिया जा रहा है। सचिव, साहाय्य विभाग को लिखे अपने पत्र में जिलाधीश ने (पत्रांक 43 दिनांक 20.1.1986) लिखा कि,

1. ''प्रारम्भ में बागमती परियोजना से संबंधित पुनर्वास कार्य, परियोजना के बजट से परियोजना के विभिन्न आभियांत्रिक प्रमंडलों द्वारा किया जाता रहा है। सम्भवतः पुनर्वास कार्यों में

उनकी अभिरुचि की कमी और 10 वर्षों में भी इस समस्या का हल नहीं किये जाने के कारण सिंचाई विभाग द्वारा मई, 1981 में परियोजना के अधीन स्वतंत्र पुनर्वास कार्यालय की स्थापना की गयी। इस कार्यालय के लिए सिंचाई विभाग द्वारा अलग से पुनर्वास पदाधिकारी की पदस्थापना मात्र डेढ़ वर्ष के लिए हुई। शेष अवधि में अंशकालीन पदाधिकारियों के साथ यह कार्यालय सम्बद्ध रहा। फलत: स्वतंत्र कार्यालय की स्थापना के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो सकी और इस गैर-प्राकृतिक आपदाजन्य पुनर्वास के कार्य में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हो सकी। यह मानवीय समस्या अभी भी बरकरार है। जिला प्रशासन के लिए यह एक अहम समस्या तथा साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग के लिए साहाय्य कार्यों पर वार्षिक आवर्त्तक व्यय का जरिया बना हुआ है।

2. सिंचाई विभाग (बागमती परियोजना) के इस जिले के पुनर्वास कार्य की विडम्बना यह है कि इस समस्या के समाधान के किसी उपक्रम में अब तक जिला प्रशासन को सम्बद्ध नहीं किया गया है। सिंचाई विभाग द्वारा गठित पुनर्वास समन्वय समिति के अध्यक्ष समाहर्त्ता हैं। सदस्य के रूप में सम्बद्ध अनुमंडल पदाधिकारी तथा स्थानीय अंचलाधिकारी हैं। लेकिन पुनर्वास के लिए स्थल, भवन, पुनर्वासित लोगों के बीच भूमि का आवंटन, पुनर्वास स्थल के विकास आदि का कार्य बिना समिति की राय से मनमाने ढंग से किया गया है। पुनर्वासित होने वाले व्यक्तियों की राय भी नहीं ली गयी है। फलत: सिंचाई विभाग दस वर्षों से अधिक की अवधि में भी इस समस्या का समाधान नहीं कर सका है। समस्याग्रस्त जनता अपनी समस्याओं के निदान के लिए जिला प्रशासन की मुखापेक्षी है और जिला प्रशासन इस कार्य पर नियंत्रण नहीं रहने के कारण समस्या के निदान में बड़ी कठिनाई का अनुभव करता है।

3. गैर प्राकृतिक आपदाओं के निवारण हेतु दिनांक 9.10.85 को मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक बैठक हुई है जिसकी कार्यवाही साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग के ज्ञापांक 3034, दिनांक 15.10.85 द्वारा भेजी गयी है। इस बैठक के निर्णय के अनुसार साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग को गैर प्राकृतिक आपदाओं से सम्बन्धित पुनर्वास कार्यों के सूत्रण, समन्वय एवं मोनिटरिंग के लिए Overall Nodal Department घोषित किया गया है। बागमती परियोजना के कार्यान्वयन से पैदा हुए इस गैर प्राकृतिक आपदाजन्य पुनर्वास कार्य के लिए Overall Nodal Department की हैसियत से साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग को इसके नियमन में निम्नांकित बिन्दुओं पर पहल करने की आवश्यकता प्रतीत होती है–

1. पुनर्वास कार्यालय को समाहर्त्ता के नियंत्रण में कर दिया जाय। पुनर्वास के लिए स्थल चयन से लेकर पुनर्वासित व्यक्तियों के बीच भूमि वितरण तक के सारे कार्य समाहर्त्ता के अनुमोदन के पश्चात् ही किये जाएं ताकि समस्या के प्रति मानवीय दृष्टिकोण अपना कर उसका समाधान सम्भव हो सके।

2. पुनर्वास कार्य के लिए उपयुक्त होने वाली निधि जिसके लिए परियोजना के बजट में प्रावधान रहता है, निदेशक, भू-अर्जन एवं पुनर्वास, सिंचाई विभाग के माध्यम से पुनर्वास पदाधिकारी को उपलब्ध करायी जाय। अब तक मात्र वेतन, भत्ता और कार्यालय आकस्मिक व्यय की राशि ही निदेशक के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है। पुनर्वास कार्य यथा भू-अर्जन, ढुलाई भार भुगतान, भूमि सीमांकन, पुनर्वास स्थल का विकास आदि कार्यों के लिए निधि अधीक्षण अभियंता द्वारा उपलब्ध कराई जाती है जिससे बहुत सारे कार्य निधि के अभाव में लम्बित पड़े रह जाते हैं। पुनर्वास सम्बन्धी मानवीय कार्य को अभियंत्रण विभाग द्वारा तृतीय कोटि का कार्य गिने जाते रहने की परम्परा बागमती परियोजना में रही है। जबकि कल्याणकारी राज्य में इसे प्रथम कोटि में रख कर प्राथमिकता के आधार पर पहले इस कार्य का निष्पादन होना चाहिये था। कोई भी परियोजना मनुष्य के लाभ के लिये बनाई जाती है। अत: परियोजना का प्रतिकूल प्रभाव जिन थोड़े से लोगों पर पड़ता है उनके पुनर्वास की समस्या को प्राथमिकता के आधार पर निष्पादित करने के बाद ही परियोजना का कार्यान्वयन होना चाहिये। सिंचाई विभाग द्वारा इस पहलू पर अब तक ध्यान नहीं दिया गया है और समस्या नये आयाम ग्रहण कर रही है।

3. सिंचाई विभाग को कहा जाए कि यह पुनर्वास पदाधिकारी के रूप में बिहार प्रशासनिक सेवा के पदाधिकारी की ही पदस्थापना करें। पुनर्वास कार्य पूर्णत: भूमि पर अधिकार परिवर्तन से संबंधित है। पुनर्वासित व्यक्ति द्वारा धारित भूमि के अनुरूप उसके लिए दूसरी जगह भूमि अर्जन की व्यवस्था कर धारित भूमि के अनुपात में उसे भूमि उपलब्ध कराने तथा उसका सबूत देने एवं अभिलेख संधारण का कार्य पुनर्वास पदाधिकारी को करना पड़ता है। इसके साथ ही उसे विस्थापितों की भावना के अनुसार उनके लिए सुविधाजनक पुनर्वास स्थल का चयन कर उन्हें सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में बसा देना है। भू-राजस्व नियम एवं भू-अभिलेख तथा मानवीय समस्या से उलझी हुई इस समस्या का निदान प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों द्वारा ही सम्भव है क्योंकि उन्हें ही इन कार्यों का विशेष प्रशिक्षण प्राप्त है।

बागमती परियोजना अब तक सप्तम पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित नहीं की गयी है। अत: इसके लिये निधि का अभाव बना रहेगा। इस परिप्रेक्ष में परियोजना जनित गैर प्राकृतिक आपदा के स्थायी समाधान के लिए देय सीमित निधि ही उपलब्ध करा सकेंगे ऐसा अनुमान किया जा सकता है। समस्या लम्बे अर्से तक साहाय्य एवं पुनर्वास विभाग के लिए आवर्तक व्यय का विषय बनी रहेगी।''

समाहर्ता ने इसी आशय के दो पत्र (संख्या 45, दिनांक 20 जनवरी 1986 और संख्या 46, दिनांक 20 जनवरी 1986) निदेशक, पुनर्वास एवं भू-अर्जन, सिंचाई विभाग, पटना को भी लिखे।

इस पत्राचार के बाद बागमती परियोजना के पुनर्वास अधिकारी द्वारा लिखित पत्र (पत्रांक 163/पु०, दिनांक 15 अप्रैल 1986) जो निदेशक, पुनर्वास एवं भू-अर्जन, जलस्रोत विकास एवं बाढ़ नियंत्रण विभाग, बिहार-पटना को लिखा गया, उसमें कहा गया,

''...पुनर्वास का कार्य पूर्व में अभियन्ताओं द्वारा किया गया है और उनमें जो खामियाँ हैं, उनका वर्णन मुख्यालय से मैं अपनी निरीक्षण टिप्पणी में कर चुका हूँ। सबसे महत्वपूर्ण समस्या जिसका सामना मुझे

करना पड़ रहा है वह पुनर्वासित लोगों के बीच भू-स्वामित्व एवं आवंटन का प्रमाण-पत्र (पर्चा) निर्गत करना है। प्राय: सभी पुनर्वास स्थल पर पूर्व में पुनर्वास की जो कार्यवाही की गयी है, उससे सम्बन्धित सुसंगत अभिलेख कार्यपालक अभियंताओं द्वारा पुनर्वास कार्यालय में नहीं दिया गया है। साथ-साथ उनके द्वारा भू-स्वामित्व का कोई भी अभिलेख पुनर्वासित व्यक्तियों को उपलब्ध नहीं कराया गया है जिससे भूमि सम्बन्धी विवाद प्राय: सभी पुनर्वास स्थलों पर हो रहे हैं। अधिकांश पुनर्वासित व्यक्ति आवश्यकता से अधिक जमीन दखल किये हुए हैं और अभिलेख के अभाव में अतिक्रमण हटाना संभव नहीं हो पा रहा है। साथ-साथ पुनर्वासित व्यक्तियों को भू-स्वामित्व संबंधी पर्चा देने में भी कठिनाई पैदा हो रही है। क्योंकि उन्हें किस आधार पर पर्चा दिया जाए इस स्तर पर निर्णय करना संभव नहीं है।

अत: इस बिन्दु पर अनुदेश देने की कृपा की जाए कि सुसंगत अभिलेख के अभाव में पर्चा देने का आधार जमीन पर वास्तविक दखल कब्जा को माना जाए अथवा नहीं क्योंकि इस आधार पर पर्चा निर्गत करने में इस बात की संभावना है कि अतिक्रमणकारी को प्रपत्र मिल जाए और वैसे व्यक्ति, जो अब तक पुनर्वासित नहीं हुए, उनके लिए भू-अर्जन कर पुन: पुनर्वासित करना होगा। यह भी निमूलक समस्या है जिस पर सरकारी निर्णय अपेक्षित है।''

जाहिर है कि प्रशासनिक और तकनीकी ढिलाई की खींचा-तानी के बीच बागमती परियोजना में पुनर्वास का मसला फंस गया जिसमें विस्थापितों का कोई दोष नहीं था। प्रशासन स्वीकार करता है कि तटबन्धों के निर्माण के दस साल बाद भी विस्थापित लोग तटबन्धों की चक्की में पिस रहे थे जबकि अधिकारीगण मुजफ्फरपुर में रह कर बहती गंगा में हाथ धो रहे थे। यहाँ तक तो हुई दस साल में हुए पुनर्वास की सरकारी समीक्षा की बात जहाँ प्रशासन ने सारी जिम्मेवारी ज़मीन के मामलों से अनभिज्ञ इंजीनियरों के कन्धों पर डाल दी मगर जब यह जिम्मेवारी तथाकथित रूप से 'मानवीय संवेदना' से भरपूर और 'भूमि-अर्जन और उसके हस्तांतरण में प्रशिक्षित' प्रशासनिक अधिकारियों के हाथ में आयी तब भी स्थिति नहीं सुधरी जिसकी एक बानगी नीचे दी गयी तालिका 11.1 में मिलती है जिसे बागमती परियोजना के पुनर्वास विभाग ने 2009 में जारी किया था।

तालिका-11.1

पुनर्वास कार्यालय–बागमती परियोजना, सीतामढ़ी के अन्तर्गत पूर्ण रूप से पुनर्वासित परिवारों की ग्रामवार सूची।

(ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक का फ़ेज)

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिस गाँव में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	अर्जित रकबा एकड़	आवंटित रकबा एकड़
1	2	3	4	5	6	7
1.	शिवनगर	रामपुर-रुन्नी सैदपुर	123	123	अप्राप्य	अप्राप्य
2.	रक्सिया बघौनी	रामपुर-रुन्नी सैदपुर	178	178	58.54	58.54
3.	खड़का टोला	खड़का	216	216	18.74	18.74
4.	खड़का गोठ	खड़का	–	–	–	–
5.	मानपुर रत्नावली	मधौल सानी	416	416	30.71	30.71
6.	रामपुर	रामपुर	79	79	11.35	11.35
7.	महदेवा	खुरपट्टी सोहर	101	101	10.685	10.685
8.	बलुआ खरहुआँ	बलुआ खरहुआँ	–	–	–	–
9.	नुनौरा (क)	बलुआ खरहुआँ	162	162	21.905	21.905
10.	आदम बाँध	नन्दवारा, ढेंग एवं मूसाचक	242	242	16.21	16.21
11.	बेंगाही	नन्दवारा	369	369	31.90	31.90
12.	भटौलिया टोला आबादनगर	भटौलिया	44	44	7.15	7.15
13.	परसौनी	परसौनी	221	221	26.12	26.12
14.	नन्दवारा हरिजन टोला	नन्दवारा	110	110	10.20	10.20
15.	बेंगाही टोले ढेंग	बेंगाही टोले ढेंग	200	200	16.31	16.31
16.	परसा	पकड़ी परसा	115	115	10.45	10.45
17.	बेलवा पकड़ी पचहरवा	बेलवा पकड़ी पचहरवा	84	84	4.05	4.05
18.	बरियारपुर	बरियारपुर	44	44	10.45	10.45
19.	मुरहाडीह	मुरहाडीह	60	60	4.79	4.79
20.	मझौरा	परसौनी	22	22	3.96	3.96
21.	बकटपुर बनबीर	बकटपुर बनबीर	87	87	5.88	5.88

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिस गाँव में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	अर्जित रकबा एकड़	आवंटित रकबा एकड़
1	2	3	4	5	6	7
22.	कुअमा	कुअमा	16	16	2.58	2.58
23.	सोनपुरवा	सोनपुरवा	90	90	1.09	1.09
24.	कोरा भीम	कोरा खड़गी	111	111	12.36	12.36
25.	नुनौरा (ख)	पचनौर पोखर	144	144	14.15	14.15
26.	कोपगढ़	कुशहर	125	125	8.89	8.85
27.	चक-सुरगाही	चक-सुरगाही	63	63	6.51	6.51
28.	अदलपुर कुंडल	अदलपुर कुंडल	148	148	11.90	11.90
29.	चन्दौली मनहाटोला	चन्दौली तिमरा	30	30	2.50	2.50
30.	मीनापुर बलहा	मीनापुर बलहा	18	18	2.15	2.15
31.	खुरपट्टी गनौर राम टोला	खुरपट्टी बोलदिया टोला बैजनाथपुर	224	224	17.29	17.29
32.	गुलरिया मोतनागे	घोड़हाँ	175	175	16.62	16.62
33.	बेलहिया उर्फ बैजनाथपुर	बैजनाथपुर	20	20	1.25	1.25
34.	माड़र	मधकौल	151	151	11.93	11.93
35.	डुमरा	डुमरा	181	181	22.16	22.16
36.	दरियापुर	दरियापुर हसौल	167	167	12.90	12.90
37.	रुपौली नन्हकार	रुपौली	167	167	0.70	0.70*
38.	भरवारी	भरवारी	14	14	1.00	1.00
39.	सिरसिया	सिरसिया	2	2	1.08	1.08
40.	अखता टोला	सोनाखान	84	84	6.61	6.61
41.	अखता	अखता	790	790	65.00	65.00
42.	मूसाचक	मूसाचक	17	17	1.25	1.25
43.	मसहा नरोत्तम मठ	मूसाचक	360	360	18.61	18.61
44.	जोरियाही कोठिया	भटौलिया बेल	367	367	42.90	42.90
45.	असोगी टोले शिवनगर	असोगी पुरुषोत्तम	48	48	4.96	4.96
46.	जमुआ टोले बिलारदे	जमुआ टोले हसिया	78	78	13.93	13.93
47.	अखता टोले चकवा	पताही, मरपा ताहिर	668	668	84.44	84.44
48.	पताही	पताही	41	41	2.29	2.29
49.	अखता टोले कोठियार	चंडिहा	189	189	20.00	20.00
50.	बखाड़ चंडिहा	चंडिहा	उ०न०	उ०न०	उ०न०	उ०न०
51.	पिपराही जमाल/ पिपराही सुलतान	चंडिहा	306	306	36.61	36.61
52.	दोस्तिया	खैरा पहाड़ी	505	505	17.25	17.25
53.	कटैया	कटैया	1	1	0.05	0.05
54.	पकड़ी	पकड़ी	216	216	11.86	11.86
55.	अदौरी	अदौरी जुरावन छपरा	790	790	69.73	69.73
56.	मोहम्मदपुर दोस्तिया	मोहम्मदपुर	257	257	14.705	14.705
57.	चैनपुर	देकुली धरमपुर	18	18	1.90	1.90
58.	पिपराही	पिपराही	388	388	55.78	55.78
59.	इनरवा	सिंगाही इनरवा	155	155	16.16	16.16
60.	माधोपुर	सिंगाही इनरवा	88	88	9.50	9.50

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिस गाँव में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	अर्जित रकबा एकड़	आवंटित रकबा एकड़
1	2	3	4	5	6	7
61.	रतनपुर	मसौढ़ा	156	156	21.58	21.58
62.	ओकनी	चिमनपुर	179	179	14.10	14.10
63.	रामपुर कंठ	रामपुर कंठ	90	90	16.86	16.86
64.	महुआवा दोस्तिया	महुआवा	305	305	11.73	11.73
65.	पड़री	पड़री	15	15	1.16	1.16
66.	सपही	सपही	60	60	1.19	1.19
67.	झिटकाही	झिटकाही	67	67	2.30	2.30
68.	लहसुनियाँ	खोरी पाकर	246	246	12.14	12.14
69.	बेल कोट्ठा	बेल डुमर बन्ना	29	उ०न०	उ०न०	उ०न०
70.	बिशम्भरपुर नन्हकार	बहेरा	100	उ०न०	उ०न०	उ०न०
71.	इब्राहिमपुर	रैनसंकर	102	उ०न०	उ०न०	उ०न०
72.	पंचनौर टोला जैसीडीह	पंचनौर मुराही	180	उ०न०	उ०न०	उ०न०
73.	छपरा बाजार	छपरा	36	उ०न०	उ०न०	उ०न०
74.	ओलीपुर	ओलीपुर	14	उ०न०	उ०न०	उ०न०
75.	देकुली धर्मपुर टोला चैनपुर	देकुली धर्मपुर	36	उ०न०	उ०न०	उ०न०
76.	बेलवा पड़री	पचरवा	94	उ०न०	उ०न०	उ०न०
77.	खैरा पहाड़ी	खैरा पहाड़ी	25	उ०न०	उ०न०	उ०न०
78.	चक फतेया	बराही मोहन	297	उ०न०	उ०न०	उ०न०
79.	खोरी पाकर	खोरी पाकर	117	उ०न०	उ०न०	उ०न०
80.	मौलानगर सिर्फ कब्रिस्तान	मौलानगर	180	उ०न०	–	–
			अ०–अप्राप्य-पुनर्वास में आधे के करीब लोग गए होंगे।			

स्रोत : पुनर्वास पदाधिकारी, बागमती परियोजना, सीतामढ़ी।

नोट : उ०न० उपलब्ध नहीं

* यह सूचना गलत है। इतनी कम जमीन पर 167 परिवार नहीं बसाये जा सकते–लेखक।
जिन गाँवों में भूमि अर्जन की प्रक्रिया अभी तक पूरी नहीं हुई है और आधिकारिक तौर पर पुनर्वास अभी तक अधूरा है, उनका विवरण तालिका-11.2 में दिया गया है।

11.6 पुनर्वास की बहस जनता के बीच

तटबन्ध के निर्माण का काम तो 1971 में ही शुरू हो चुका था और गाँव तटबन्धों के बीच धीरे-धीरे फंसते जा रहे थे। तटबन्ध पीड़ितों की चाहत थी कि उनका पुनर्वास किया जाय। मार्च 1975 में सीतामढ़ी के बसबिट्टा बाजार में एक सीतामढ़ी जिला सिंचाई सम्मेलन आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में किसानों ने बाढ़ नियंत्रण के काम पर सन्तोष जाहिर किया मगर तब तक बागमती से सिंचाई प्रदान करने की दिशा में कोई भी काम न किये जाने पर चिन्ता भी व्यक्त की। वह नदी के तटबन्धों में जगह-जगह स्लुइस गेट का निर्माण किये जाने की मांग कर रहे थे। इस सम्मेलन में सिंचाई विभाग के मुख्य अभियंता के० पी० लाहा तथा यू० के० वर्मा भी मौजूद थे। उन्होंने सम्मेलन को आश्वस्त किया कि सिंचाई की समुचित व्यवस्था की जायेगी और आशा की गयी थी कि इस वर्ष ढेंग से कन्सार तक तटबन्ध का काम पूरा कर लिया जायेगा। ''...तटबन्धों के बीच पड़ने वाले लोगों के पुनर्वास का काम तो होगा ही किन्तु यह इतना महत्वपूर्ण और आवश्यक है कि इस ओर अधिकारियों को विशेष ध्यान देना चाहिये और किसी तरह भी शिथिलता नहीं आने देना चाहिये।''[17] बरसात में इस साल बागमती में बहुत बड़ी बाढ़ आयी थी जिसके बारे में हम पहले भी चर्चा कर आये हैं। इस बाढ़ के बाद पुनर्वास का मसला तेजी से उभरा। मुहम्मद हुसैन आज़ाद द्वारा विधान सभा में 29 जून 1976 को दिया गया बयान इस मुद्दे पर तब तक हुई स्पष्टता को दर्शाता है।

इस बात पर जरूर आश्चर्य होता है कि पुनर्वास का मतलब क्या तटबन्धों के बाहर घर बनाने के लिए दिया गया एक प्लॉट ही होता है? खेती की ज़मीन के बदले ज़मीन, उत्तर बिहार में विस्थापितों को कभी नहीं दी जा सकती, यह प्रश्न तो कोसी योजना के विस्थापितों के पुनर्वास के समय ही हल हो गया था क्योंकि उतनी ज्यादा ज़मीन (लगभग 1.20 लाख हेक्टेयर) उस घनी आबादी वाली जगह में पैदा नहीं की जा सकती थी, इसलिए यह तय हुआ था कि लोग रहेंगे पुनर्वास में

तालिका-11.2

अपूर्ण पुनर्वास वाले गाँवों का विवरण

(ढेंग से रुन्नी सैदपुर फ़ेज)

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिन गाँवों में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	बाकी बचे परिवारों की संख्या	कृत कार्यवाई	अभ्युक्ति
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	मसहा आलम	बेल डुमर बन्ना, भकुरहर एवं नन्दवारा	420	104	316	ग्राम-बेल डुमर बन्ना एवं भरकुरहर में भू-अर्जन की प्रक्रिया भूमि अर्जन कार्यालय, मुजफ्फरपुर द्वारा की जा रही है।	ग्राम-नन्दवारा का स्थल चयन प्रस्ताव हेतु अंचलाधिकारी, बैरगनियाँ के यहाँ लम्बित। स्थल चयन प्रस्ताव हेतु इस कार्यालय द्वारा एवं निदेशालय, पटना तथा अपर समाहर्ता, सीतामढ़ी द्वारा लिखा गया है।
2.	जमुआ	जमुआ टोले बिलारदे	92	82	10	–	रकबा 0.95 एकड़ अर्जित भूमि टाइटिल सूट सं० 26/78 में न्याय निर्णय के विरुद्ध जिला न्यायाधीश, सीतामढ़ी के यहाँ अपील वाद सं० 2/2000 दायर विशेष भूमि अर्जन कार्यालय मुजफ्फरपुर द्वारा अद्यतन स्थिति की सूचना की मांग की गई।
3.	बसबिट्टा टोले रघुनाथपुर	बसबिट्टा	213	0	213	नई पुनर्वास नीति 2008 के तहत अचंलाधिकारी, मेजरगंज के रकबा 14.00 एकड़ का स्थल चयन प्रस्ताव हेतु पत्र प्रेषित	अंचलाधिकारी-मेजरगंज के यहाँ लम्बित है। इस कार्यालय से मापक एवं परिमापक को अंचल कार्यालय मेजरगंज भेजा गया है। अंचल नीरिक्षक द्वारा उन लोगों को बताया गया कि स्थल चयन प्रस्ताव एक सप्ताह के अन्दर भेजा जायेगा।
4.	बसबिट्टा टोले हसनपुर	बसबिट्टा	124	90	34	इस कार्यालय के पत्रांक 240, दि० 29.07.08 द्वारा रकबा 2.11 एकड़ की अधियाचना कार्यपालक अभियंता बागमती प्रमंण्डल सं० 1, सीतामढ़ी को भेजी गयी।	कार्यपालक अभियंता, बागमती प्रमंडल सं० 1, सीतामढ़ी के पत्रांक 1022, दिनांक 4.8.08 द्वारा अधियाचना विशेष भूमि अर्जन कार्यालय, गंडक योजना, कार्या०, ग०यो०, मुजफ्फरपुर को भेजी गयी।
5.	रसूलपुर	हरपुर कलां	147	97	50	इस कार्यालय के पत्रांक 324, दि० 25.9.08 द्वारा विशेष भू-अर्जन कार्यालय, गंडक योजना, मुजफ्फरपुर से अद्यतन स्थिति की मांग की गई।	भू०अ० केस नं० 8/88-89 में दिनांक 3.9.90 को मो० 2,09,132.45 रुपयों का पंचाट घोषित।
6.	जमला	बरहरवा	174	106	68	नई पुनर्वास नीति के तहत अंचलाधिकारी, सुप्पी को रकबा 4.50 एकड़ के स्थल चयन प्रस्ताव हेतु इस कार्यालय के पत्रांक 19343, दिनांक 14.6.08 द्वारा लिखा गया है।	अंचलाधिकारी, सुप्पी के यहाँ लम्बित।

तालिका-11.2

अपूर्ण पुनर्वास वाले गाँवों का विवरण

(ढेंग से रुन्नी सैदपुर फ़ेज)

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिन गाँवों में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	बाकी बचे परिवारों की संख्या	कृत कार्यवाई	अभ्युक्ति
1	2	3	4	5	6	7	8
7.	बहेरा टोले सिजुआ	बहेरा टोले सिजुआ	92	6	86	नई पुनर्वास नीति के तहत अंचलाधिकारी, मेजरगंज को रकबा 5.50 एकड़ का स्थल चयन प्रस्ताव हेतु इस कार्यालय के पत्रांक 274, दिनांक 28.8.08 द्वारा लिखा गया है।	अंचलाधिकारी, मेजरगंज के यहाँ लम्बित।
8.	मरपा सिरपाल	मरपा सिरपाल	17	0	17	अंचलाधिकारी मेजरगंज, जिला पदाधिकारी, सीतामढ़ी को अतिक्रमणवाद चला कर अतिक्रमण हटाने हेतु पत्र प्रेषित।	इस कार्यालय के पत्रांक 336, दिनांक 22.11.07 द्वारा अतिक्रमणवाद चलाने हेतु अंचलाधिकारी-मेजरगंज, जिला पदाधिकारी-सीतामढ़ी को लिखा गया है। इस कार्यालय के स्मार पत्रांक 325, दिनांक 25.9.08 द्वारा भी लिखा गया है।
9.	पोता उर्फ तिलक ताजपुर	पोता उर्फ तिलक ताजपुर	409	335	74	नई पुनर्वास नीति 2008 के तहत अंचलाधिकारी, रुन्नी सैदपुर को रकबा 4.50 एकड़ का स्थल चयन प्रस्ताव हेतु इस कार्यालय के पत्रांक 243, दिनांक 29.7.08 द्वारा लिखा गया है।	अंचलाधिकारी रुन्नीसैदपुर के यहाँ लम्बित।
10.	मधौल सानी	बहराम नगर	371	71	300	जिला पदाधिकारी, सीतामढ़ी द्वारा दिनांक 31.5.08 को दिये गए निर्देश के आलोक में नई पुनर्वास नीति 2008 के अन्तर्गत इस कार्यालय के पत्रांक 156, दिनांक 31.5.08 द्वारा रकबा 30.37 एकड़ के अधियाचना हेतु कार्यपालक अभियंता, बागमती प्रमंडल, रुन्नी सैदपुर को भेजा गया है।	इस कार्यालय के पत्रांक 156, दिनांक 31.5.08 तथा कार्यपालक अभियंता बागमती प्रमंडल, रुन्नीसैदपुर के पत्रांक 618, दिनांक 2.6.08 द्वारा अधियाचना भू-अर्जन हेतु विशेष भू-अर्जन कार्यालय, गंडक योजना, मुजफ्फरपुर को भेजा गया है।
11.	मानपुर जऊवाँ	बहराम नगर	139	24	115		
12.	भरथी पोता उर्फ फकलिन	मझौलिया	54	0	54	समाहर्ता, सीतामढ़ी द्वारा भूमि वितरण पर लगाये गए रोक को हटाने हेतु पत्र समर्पित।	समाहर्ता सीतामढ़ी द्वारा रोक हटाने हेतु आदेश प्राप्त नहीं हुआ है। अतिक्रमण सूचना के विरुद्ध C.W.J.C.H. 10592/08 श्री जयनारायण पंजियार बनाम बिहार सरकार दायर याचिका के अन्तर्गत विभागीय पत्रांक 6477, दिनांक 2.9.08 के आलोक में प्रतिवाद पत्र दायर कर दिया गया है जिसका नं. 32214, दिनांक 24.10.08 है।

तालिका-11.2

अपूर्ण पुनर्वास वाले गाँवों का विवरण

(ढेंग से रुन्नी सैदपुर फ़ेज)

क्र० सं०	विस्थापित ग्राम का नाम	जिन गाँवों में पुनर्वास दिया गया	विस्थापित परिवारों की संख्या	पुनर्वासित परिवारों की संख्या	बाकी बचे परिवारों की संख्या	कृत कार्यवाई	अभ्युक्ति
1	2	3	4	5	6	7	8
13.	पोता उर्फ तिलक ताजपुर टोले रामनगर	पोता उर्फ तिलक ताजपुर	242	0	242	दिनांक 10.5.08 को पुनर्वास समन्वय समिति की बैठक में लिये गए निर्णय के अनुरूप अंचलाधिकारी रुन्नी सैदपुर द्वारा प्राप्त रकबा 15.30 एकड़ के स्थल चयन प्रस्ताव को इस कार्यालय के पत्रांक 154, दिनांक 31.5.08 द्वारा अधियाचना भेजी गयी।	इस कार्यालय के पत्रांक नं. 154, दिनांक 31.5.08 तथा कार्यपालक अभियंता बागमती प्रमंडल, रुन्नीसैदपुर के पत्रांक 612, दिनांक 31.5.08 द्वारा अधियाचना रकबा 15.30 एकड़ का भू-अर्जन हेतु वि०भू०अ० कार्या० ग०यो० मुजफ्फरपुर को भेजा गया।
14.	छोटकी छपरा	छपरा	56	50	6	रकबा 1.91 एकड़ भूमि अतिक्रमण में है। इस कार्यालय के पत्रांक 273, दिनांक 15.3.08 द्वारा अतिक्रमणवाद चलाने हेतु अंचलाधिकारी, तरयानी, जिला पदाधिकारी, शिवहर को लिखा गया है।	अंचलाधिकारी, तरियानी (शिवहर) के यहाँ लम्बित। इस कार्यालय के स्मरण पत्रांक 329, दिनांक 26.9.08 द्वारा लिखा गया है।
15.	बराही जगदीश	बराही जगदीश	245	177	68	इस कार्यालय के पत्रांक 37, दिनांक 11.2.08 द्वारा पारित न्याय निर्णय के सत्यापित प्रति की अभिप्रमाणित छाया प्रति निदेशालय, पटना को भेजी जा चुकी है।	माननीय उच्च न्यायालय के आदेश के आलोक में सम्प्रति स्थल पर कोई कार्रवाई संभव नहीं है। न्याय निर्णय के आगे की कार्रवाई हेतु आदेश अपेक्षित है।
		योग	**2795**	**1142**	**1653**		

स्रोत : पुनर्वास पदाधिकारी, बागमती परियोजना, सीतामढ़ी।

नोट : इन तालिकाओं में दिये गए आंकड़े बहुत ज्यादा विश्वसनीय नहीं लगते क्योंकि कई पुनर्वास स्थलों में पुनर्वासितों की संख्या और उनके लिए अधिगृहीत भूमि में बहुत असमानता है। उदाहरण के लिए भटौलिया टोले आबाद नगर के 44 परिवारों के लिए 7.15 एकड़ जमीन का अधिग्रहण हुआ जबकि इतने ही परिवारों कें लिए बरियारपुर में 10.45 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया गया। बेलहिया उर्फ बैजनाथपुर के 20 परिवारों को बसाने के लिए 1.25 एकड़ भूमि का अधिग्रहण दिखाया गया है जबकि सिरसिया के मात्र दो विस्थापितों के लिए 1.08 एकड़ जमीन का अधिग्रहण होता है। बसबिट्टा टोले रघुनाथपुर, मरपा सिरपाल, भरथी पोता उर्फ फकलिन और पोता उर्फ तिलक ताजपुर टोले रामनगर के लिए 2009 तक पुनर्वास के लिए किसी भी जमीन का अधिग्रहण नहीं हुआ था–लेखक।

मगर खेती अपनी पुश्तैनी जमीन पर तटबन्धों के बीच ही करेंगे। शायद इसीलिए यही व्यवस्था बागमती योजना के पुनर्वास में भी चला दी गयी। मगर इस बार घर बनाने के लिए सरकार की तरफ से कोई अनुदान बागमती परियोजना के विस्थापितों को नहीं दिया गया। उन्हें तो अपना जरूरी सामान उठा कर ले जाने के लिए 300 रुपयों से लेकर 1500 रुपयों की सहायता मात्र दी गयी। जहाँ तक जानकारी है, विस्थापितों के साथ इस गैर-बराबरी और अनैतिक भेदभाव के खिलाफ बिहार विधान सभा, बिहार विधान परिषद तथा दूसरी किसी अन्य संवैधानिक संस्था के अन्दर या बाहर कभी कोई आवाज़ नहीं उठाई गयी। बागमती परियोजना के विस्थापितों ने पुनर्वास के इन टुकड़ों को अपनी नियति मान कर चुप्पी साध ली। नेताओं को शायद यह लगता होगा कि अगर घरों के बनाने के लिए अनुदान की मांग की गयी तो योजना की लागत बेतहाशा बढ़ेगी और तब मुमकिन है कि योजना ही बन्द कर दी जाय। यह सोचना कि स्थानीय नेताओं को कोसी का पुनर्वास पैकेज नहीं मालुम था, बेवकूफी होगी।

बागमती नदी पर तटबन्धों के निर्माण को लेकर विवाद तो पहले से ही था। इसके लिए आज भी लगभग सभी संबद्ध व्यक्ति यह कहना नहीं भूलते कि डॉ० के० एल० राव शुरू से ही इस नदी पर तटबन्ध बनाये जाने के खिलाफ थे। यह भी बड़ी अजीब बात है कि जब डॉ० राव ने 1963 में यह बात कही होगी उस समय वह केन्द्र में सिंचाई मंत्री बन चुके थे और जब यह योजना 1969 में स्वीकृत हुई तब भी वह केन्द्र में मंत्री थे और वह तब तक केन्द्रीय सिंचाई मंत्री बने रहे जब तक बागमती के तटबन्धों का निर्माण कार्य पूरा नहीं हो गया। अगर वह सचमुच बागमती नदी पर तटबन्ध बनाने के खिलाफ थे तब योजना कैसे स्वीकृत हो गयी और कैसे तटबन्धों का निर्माण हो गया? सारी क्षमता उनके हाथ में केन्द्रित होने के बावजूद वह खामोश क्यों रह गए? इसका एक सरकारी जवाब यह हो सकता है कि सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण राज्य का विषय है, इसमें केन्द्र हस्तक्षेप नहीं करता। केन्द्र अगर राज्य की सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण योजनाओं में हस्तक्षेप नहीं करता है तो डॉ० राव कर क्या रहे थे? उन्हें सारा फैसला राज्य के नेताओं और इंजीनियरों पर छोड़ देना चाहिये था। राज्यों की अधिकांश योजनाओं में केन्द्र की वही भूमिका होती है जो गाँव में महाजन की होती है। केन्द्र पैसा दे और सुझाव न दे, यह मुमकिन नहीं है। उसे भी परिणाम चाहिये।

बिहार से कई बार विधायक/सांसद और मंत्री रहे बागमती क्षेत्र के नेता रघुनाथ झा का कहना है कि, ''यह सच है कि जब डॉ० के० एल० राव ने बागमती पर तटबन्धों के निर्माण के खिलाफ बात की थी और जब तटबन्धों का निर्माण शुरू हुआ तब भी वे केन्द्र में सिंचाई मंत्री थे। ऐसा शायद इसलिए हुआ होगा कि राज्य के सिंचाई मंत्री महेश प्रसाद सिंह तटबन्धों के प्रति आग्रह रखते थे और इन सब कामों में तो केन्द्र खुद तो खास नहीं करता है, वह तो सहयोगी भूमिका में ही रहता है।''[18]

अगर यह सच है तो फिर केन्द्रीय जल संसाधन मंत्रालय, केन्द्रीय जल आयोग और गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग किस मर्ज़ की दवा हैं और राज्यों की योजनाएं वहाँ लम्बे समय तक क्यों लम्बित रहती हैं और क्यों राज्य के सिंचाई विभाग तथा इन संस्थाओं के बीच एक ही विषय पर वर्षों तक सवाल-जवाब चलता रहता है? दरअसल सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण की योजनाएं वे मुर्गियाँ हैं जो सोने का अंडा देती हैं और उसके लिए सामर्थ्यवान लोग, चाहे वह राजनीति में हों, प्रशासन में हों या तकनीकी विभागों में ही हों, किसी भी हद तक जाने का माद्दा रखते हैं।

बिहार सरकार में दो बार विधायक और एक बार मंत्री रहे नवल किशोर शाही का कहना है, ''1975 में इमरजेन्सी लगी और उसके कुछ समय पहले डॉ० जगन्नाथ मिश्र मुख्यमंत्री बन गए थे। तब पैसा बनाने की नीयत से बागमती पर तटबन्ध निर्माण का काम शुरू हुआ। इस समय तक तटबन्ध का रेखांकन स्वीकृत नहीं था मगर परियोजना के लिए पैसा स्वीकृत करवा लिया गया था। स्थानीय लोगों के तमाम विरोध के बाद भी यह तटबन्ध बना और इसके सीधे-सीधे जिम्मेंवार डॉ० जगन्नाथ मिश्र थे। मैं 1977 में पहली बार विधायक बना और 1980 में हार गया मगर 1985 में फिर चुन कर आया। उस समय बिन्देश्वरी दुबे मुख्यमंत्री बने। 1985 में ही बागमती परियोजना में पुनर्वास और मुआवजे की बात उठी मगर तटबन्ध का रेखांकन अभी तक स्वीकृत नहीं हुआ था जबकि तटबन्ध बन चुका था। मैंने विधान सभा में यह सवाल उठाया था कि तटबन्ध निर्माण के लिए जिस जमीन का अधिग्रहण हुआ था उसके पैसे का भुगतान अब तक क्यों नहीं हुआ? तब पता लगा कि अलाइनमेन्ट ही स्वीकृत नहीं है तो भुगतान कहाँ से होगा? फिर जल्दी-जल्दी में अलाइनमेन्ट की स्वीकृति दी गयी। उसके बाद ही सब भुगतान हुआ और पुनर्वास की बात पर चर्चाएं शुरू हुईं। ...बागमती के बाएं तटबन्ध के पास एक धारा नारायणपुर के पास से बहती थी और इसका पानी मनुस्मारा और लखनेदई से होकर निकल जाता था। बागमती पर बने तटबन्ध ने यह सारी व्यवस्था ध्वस्त कर दी। अब पानी न मनुस्मारा में जा सके और न लखनदेई में। यह सब इंजीनियरों की खुराफात थी। 95 गाँव विस्थापित हो गए और उनमें से बड़ी संख्या में लोगों को रहने के लिए तटबन्धों पर आना पड़ा। बाद में कुछ लोगों को पुनर्वास मिला मगर सबको नहीं। इन सारे लोगों को बरसात के पूरे मौसम में सावधान रहना पड़ता है। तटबन्धों के अन्दर तो पानी रहता ही है मगर निकासी का रास्ता रुक जाने से बाहर भी पानी ठहर जाता है। नदी का तटबन्ध अब अपने आप टूट गया तो ठीक वरना बाहर रहने वाले लोग उसे काट कर पानी निकालने की व्यवस्था करते हैं। यहाँ तो सुनामी 1975 से हर साल आ रहा है। मनुस्मारा का

नवल किशोर शाही

पानी बागमती में नहीं जा पाता है सो 20,000 एकड़ जमीन पानी में हमेशा के लिए पानी में डूब गयी है। वहाँ के जमीन्दार तक भुखमरी के शिकार हो गए। कोढ़ में खाज की तरह रीगा चीनी मिल का पानी प्रदूषण पैदा करता है। सेवार तक जल जाता है तो धान कहाँ से होगा? ...इलाके के प्रभावशाली राजनीतिज्ञों के प्रभाव से बागमती तटबन्ध की योजना बनी। ठेकेदारों और इंजीनियरों ने खूब कमाया। बहती गंगा में राजनीतिज्ञों ने भी हाथ धोया। लूट बटे चार का मतलब किसी आदमी से सीतामढ़ी में पूछ लीजिये। एक हिस्से का काम होता था और बाकी का तीन हिस्सा समर्थ लोगों के बीच बँट जाता था। ऐसे में पुनर्वास के बारे में कौन सोचेगा?''[19]

बागमती परियोजना के अधिकारियों की धौंस के आगे परियोजना के विस्थापितों का पुनर्वास की शर्तों को स्वीकार कर लेने का विश्लेषण पूर्व विधायक राम स्वार्थ राय ने किया। उनका कहना है, ''...ढंग से पुनर्वास तो इस योजना में किसी भी गाँव का नहीं हुआ। कहीं आधा-अधूरा हुआ, कहीं नहीं हुआ। सारा पुनर्वास विधान सभा के सवाल-जवाब और आश्वासनों में भटक कर रह गया। यहाँ घर के निर्माण के लिए नहीं वरन् केवल घर का सामान पुनर्वास तक ले जाने के लिए पैसा दिया गया था। कोसी क्षेत्र के लोग शायद ज्यादा जागरूक थे इसलिए उन्होंने सरकार से घरों के निर्माण के लिए पैसा ले लेने में सफलता पायी। यहाँ के नेताओं को शायद इतनी भी समझ नहीं थी कि जो मुआवजा कोसी में मिला उस जैसी मांग यहाँ उदाहरण के तौर पर रखते और हासिल करते। वैसा यहाँ कुछ भी नहीं हुआ। यहाँ नेता चुना जाता है जाति के नाम पर, भले ही उसमें नेतृत्व का गुण हो या नहीं, समस्याओं की समझ हो या नहीं, विधानसभा या लोकसभा में मंतव्य और तर्क रखने की क्षमता हो या नहीं–यह सभी गुण गौण हैं और केवल जाति का एक होना ही सबसे बड़ा गुण है। ऐसी हालत में समाज के बारे में कौन सोचेगा? पुनर्वास के मसले पर धोखा खा जाना इन्हीं सब चीजों का कुफल है।''[20]

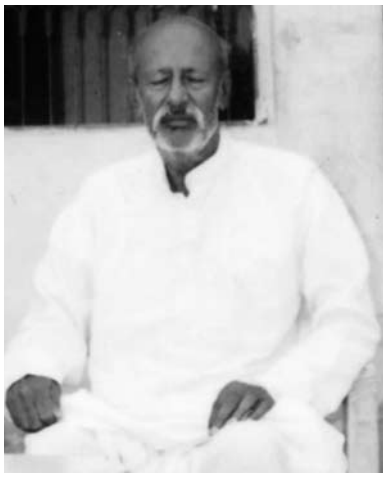

राम स्वार्थ राय

इस तरह से नेतृत्व को सीधे-सीधे जिम्मेंवार मानते हैं राम स्वार्थ राय। बात केवल कोसी पुनर्वास जैसी व्यवस्था लागू करवाने की अक्षमता पर ही नहीं रुकती। कोसी योजना के विस्थापितों के साथ कम छलावा नहीं हुआ मगर उनके पास परमेश्वर कुँअर और बैद्यनाथ मेहता जैसे नेता थे जो कि पुनर्वास की मांग को खींच कर आर्थिक पुनर्वास तक ले गए और सरकार को इस बात के लिए मजबूर किया कि वह यह स्वीकार करे कि कोसी योजना के विस्थापितों का भौतिक पुनर्वास संभव नहीं है इसलिए उनका आर्थिक पुनर्वास करना पड़ेगा। बिहार सरकार द्वारा चन्द्रकिशोर पाठक समिति की नियुक्ति और कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार की स्थापना, भले ही वह कुछ भी न करता हो, इसी कोशिश का नतीजा था। बागमती परियोजना के विस्थापितों के बारे में इस दिशा में भी किसी ने नहीं सोचा और जब सोचा ही नहीं तब कोई पहल कहाँ से होती और संघर्ष कहाँ से होता?

उधर रघुनाथ झा का कहना है, ''पुनर्वास का काम तो बागमती परियोजना में अभी तक मुकम्मल नहीं हुआ है। हजारों परिवार अभी भी तटबन्धों के अन्दर, तटबन्ध के ऊपर या बगल की जमीन पर बसे हुए हैं। परियोजना ने न जाने कितनी जमीन अपने कार्यालयों के नाम पर खरीद कर बरबाद की। सीतामढ़ी में डुमरा के पास, शिवहर में, सुप्पी में, गम्हरिया में, देकुली मठ के पास और न जाने कहाँ-कहाँ किसानों की जमीन ली गयी। गम्हरिया के पास सरकार की कितनी जमीन बरबाद पड़ी है। मशीनों में जंग लग गया। सुप्पी कॉलोनी में प्रखंड कार्यालय चल रहा है वरना लोग खिड़की दरवाजे ले गए होते। सरकार कभी भी पुनर्वास की समस्या के प्रति कोई स्पष्ट नीति नहीं बना पायी और न ही विस्थापितों की जरूरत ही समझ पायी। हम भी 1980 के पास सरकार में आ गए थे। हम से पहले रामदुलारी सिन्हा जी 1974 में सरकार में आ गयी थीं। हरिकिशोर बाबू सरकार में रह चुके थे मगर संस्थागत रूप में सरकार में इस मसले पर कोई स्पष्टता नहीं बन पायी। पुनर्वासित होने वाले लोगों का मसला बड़ा उलझा हुआ है। हर पुनर्वासित परिवार ठीक तटबन्ध के बाहर पुनर्वास चाहता है। यह हर समय संभव नहीं होता। तटबन्ध के ठीक बाहर वाली जमीन के साथ परेशानी है कि वह जमीन जिसकी है, हो सकता है उसी की जमीन पर तटबन्ध भी बना हो और उसकी जमीन भी तटबन्ध के भीतर हो। उसके साथ कितनी जोर-जबर्दस्ती होगी?''[21]

और अन्त में हम बागमती क्षेत्र के एक अन्य प्रतिष्ठित नेता हरि किशोर सिंह, जो केन्द्र में मंत्री रह चुके हैं, से पुनर्वास के बारे में उनकी राय जानते हैं। उनका कहना है, ''पुनर्वास का मसला अलग है और यथासंभव पुनर्वास दिया गया। बेहतर शायद यह हुआ होता कि शिवहर के पश्चिम में बागमती की जो पुरानी धार है, वैसे बागमती की कई धाराओं को पुरानी धार कहते हैं, उसे अगर सक्रिय किया गया होता तो नदी की प्रवाह क्षमता अधिक होती और तब तटबन्धों के बीच का फासला भी कम होता और कम संख्या में गाँवों का पुनर्वास करना पड़ता। ...अब यह तटबन्ध रुन्नी सैदपुर से हायाघाट के बीच में बनना शुरू हुआ है। पिछले 35 वर्षों से शान्ति थी। कोई निर्माण नहीं चल रहा था मगर अब हो रहा है। तकनीकी लोगों ने जरूर राजनैतिक नेतृत्व को किसी भी अनहोनी के प्रति आश्वस्त कर दिया होगा। मगर जो दु:स्थिति यहाँ सीतामढ़ी या शिवहर में है वही समय के साथ उस तरफ भी बनेगी।''[22]

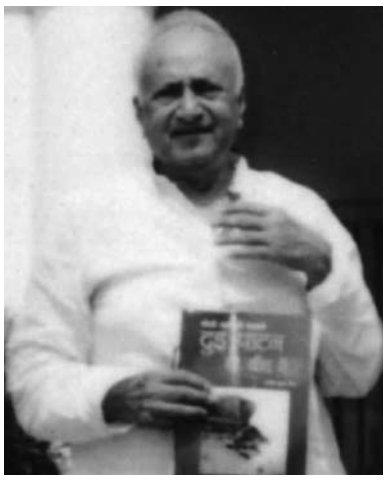

हरि किशोर सिंह

इतने बड़े लोगों द्वारा पुनर्वास के मूल्यांकन के बाद हम आम आदमी की ओर वापस मुड़ते हैं जिन्होंने इस त्रासदी को न

सिर्फ लम्बे समय तक झेला है वरन आगे भी भोगने के लिए अभिशप्त हैं। बखार (प्रखंड पुरनहिया, जिला शिवहर) के दिवाकर मिश्र बताते है, '...हमारे गाँव के लगभग 140 परिवार तटबन्ध के अन्दर हैं। उनका पुनर्वास नहीं हुआ। अगर उनके लिए जमीन अधिगृहीत भी हुई होगी तो उस पर कब्जा दूसरे-दूसरे लोगों का है। पुनर्वास दफ्तर कमाई का अड्डा बना हुआ है। मेरी जमीन पर आपका नाम चढ़ा दिया, आपकी जमीन पर तीसरे का नाम चढ़ा दिया। जैसे मरजी आये रकबा बढ़ा दिया या घटा दिया, खतियान बदल दिया–वहाँ सब चलता है। वहाँ बैक डेट में भी चीजें बदल जाती है। गाँव के लोग आपस में लड़ते हैं, खूब मुकदमेबाजी चलती है। कहने को तो पुनर्वास सबको मिला मगर जो छूट गया वे अभी तक चक्कर काट रहा है। पुनर्वास में पिपराढ़ी, बखार और कोठिया टोला के लोग हैं। यह तीनों गाँव पूरी तरह तटबन्ध के अन्दर थे। पिपराढ़ी के दो हिस्से थे–पिपराढ़ी जमाल और पिपराढ़ी सुलतान। उनके करीब 300 परिवार यहाँ होंगे और बाकी सब अभी भी अन्दर हैं। इनमें से कुछ तो पुनर्वास में आये ही नहीं और कुछ आकर वापस चले गए। हमारी खेती की जमीन तटबन्ध के अन्दर है। सुबह 7 बजे घर से निकलें तो 9.30 या 10 बजता है वहाँ पहुँचने में। इतना ही समय वापस आने के लिए चाहिये। कब और कितनी देर तक हमारा मजदूर वहाँ काम कर पायेगा। उसको भी खाना खाने और थोड़ा बहुत आराम करने के लिए बीच में समय चाहिये। हमारा खाना भी पहुँचाने घर से कोई जायेगा। इस तटबन्ध की वजह से हम लोग दर-दर के भिखारी हो गए। जिसको दस एकड़ जमीन है वह भी साल भर अपने परिवार को खाने भर के लिए अनाज नहीं उपजा पाता है।'[23]

11.7 पुनर्वासितों के साथ वायदा खिलाफी

बागमती परियोजना के विस्थापितों ने धोखा कैसे खाया वह तो अब धीरे-धीरे साफ हो रहा है मगर कितना धोखा खाया और इसके बाद भी बेहतरी की उम्मीद नहीं छोड़ी यह जानने के लिए कुछ इस तरह के गाँवों की ओर चलते हैं जिनकी उम्मीदें अभी भी कायम हैं। शुरुआत करते हैं ढेंग और बैरगनियाँ के बीच बागमती के दाहिने किनारे बसे (या अब उजड़े) मसहा आलम के विस्थापितों से–

11.7.1 हम लोग इस देश के नागरिक हैं या नहीं?–150 एकड़ क्षेत्रफल का मसहा आलम एक ऐसा गाँव है जो बागमती तटबन्धों के बीच में पड़ गया था और उसके 420 परिवारों को पुनर्वासित करने की योजना थी। यह गाँव तटबन्धों के बीच फँस तो 1971-72 के बीच गया था मगर पुनर्वास की कोई नीति न होने की वजह से गाँव के लोग वहीं पुराने घर या तटबन्ध पर रह कर बाढ़ के थपेड़े झेल रहे थे। उन दिनों अधिकारियों को पुनर्वास की जमीन और ढुलाई शुल्क पर 10 प्रतिशत घूस देनी होती थी और गाँव वाले ऐसा करना नहीं चाहते थे भले ही उनके सामने मसहा नरोत्तम गाँव के पुनर्वास की मिसाल थी जहाँ मुखिया की मध्यस्थता के कारण दस प्रतिशत का चढ़ावा चढ़ाने पर पुनर्वास हो गया था। बैरगनियाँ के अंचलाधिकारी ने बागमती परियोजना के पुनर्वास अधिकारी को पत्र संख्या 396/14-6-84 द्वारा विस्थापितों की दयनीय स्थिति के बारे में लिखा और पत्रांक 191 (सहाय्य) दि० 28.7.84 के माध्यम से पुनः याद भी दिलाया मगर रिश्वत के अभाव में यह काम हो नहीं पाया।[24] बागमती परियोजना के सूत्रों के अनुसार उन 420 परिवारों में से 104 परिवारों को बेल, डुमरबन्ना, भकुरहर और नन्दवारा गाँवों में बसाया गया है और बाकी 316 परिवारों का पुनर्वास किया जाना अभी भी बाकी है (जून 2010)।[25] मसहा आलम के विस्थापित परिवारों के अनुसार बैरगनियाँ रिंग बांध के अन्दर उनके पुनर्वास के लिए 5 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया गया जिसमें से 2.5 एकड़ नन्दवारा में तथा 2.5 एकड़ जमीन भकुरहर में अधिगृहीत हुई। इन दोनों जगहों पर कोई 35-35 परिवार बसे होंगे और इतने ही लोग पुराने गाँव में अपने डीह पर ही बने हुए हैं। कुछ लोग जिनके लिए किसी भी तरह से पुराने गाँव में रह पाना संभव नहीं था वे अपनी फसल या जमीन बेच कर रिंग बांध के अन्दर जहाँ-तहाँ बस गए। रिंग बांध के अन्दर भी बागमती नदी के दाहिने तटबन्ध के टूटने की वज़ह से और स्लुइस गेट से पानी अन्दर आने के कारण खतरा बना ही रहता है।

बाकी लोगों के लिए भकुरहर में जमीन का अधिग्रहण करने का प्रस्ताव था मगर वहाँ के भू-धारी इस तरह के अधिग्रहण के खिलाफ हाईकोर्ट से स्टे-ऑर्डर ले आये और अधिग्रहण की प्रक्रिया रुक गयी। अब जो स्थिति है वह यह कि बाकी परिवार बागमती तटबन्ध के ऊपर, ढेंग को बैरगानियाँ रेल स्टेशन से जोड़ने वाली रेल लाइन के दोनों तरफ तथा रेल-पुल के दक्षिण तटबन्ध की कन्ट्रीसाइड के बीसफुट्टी सरकारी जमीन पर अनाधिकृत तौर पर बसे हुए हैं। जो लोग रेल लाइन के किनारे बसे हैं उन्हें रेलवे अधिकारी कभी भी हटा सकते हैं। तटबन्ध पर बसे लोगों को तटबन्ध की मरम्मत और उसे ऊँचा और मजबूत बनाने में लगे इंजीनियर और ठेकेदार तथा उनके उकसाने पर पुलिस अक्सर खदेड़ती रहती है। इस गाँव के नागेन्द्र राय का कहना है, "...1972 में इस गाँव का जो बच्चा 10 साल का रहा होगा और जिसके पिता तक का पुनर्वास नहीं हुआ और जो इस समय 45-50 वर्ष का हो गया होगा, उसके खुद की और बेटी-बेटों के रहने की जगह कहाँ है? बेटियाँ तो मान लेते हैं चली गईं मगर बहुओं का क्या होगा? भाई-भाई अलग हो गए, उनके रहने के लिए ज़मीन कहाँ से आयेगी?"[26]

नन्दवारा की जिस जमीन का पुनर्वास के लिए अधिग्रहण होना था उसका फैसला जब हुआ तब उसमें गेहूँ लगा हुआ था। जैसे ही जमीन के मालिक को पता लगा कि जमीन हाथ से निकल जायेगी तब उसने एक रात के अन्दर उस जमीन को बहुत से लोगों के हाथ टुकड़ा-टुकड़ा कर के बेच दिया। रात भर में लोगों ने गेहूँ काट लिया, वहाँ झोपड़ियाँ बन गईं और जानवर लाकर बांध दिये गए। लोग डरे हुए थे कि अगर हटना पड़ा तो अपने खेतों के पास में जमीन नहीं मिलेगी। इसलिए उन्होंने 500-700 रुपये कट्ठा देकर जमीन खरीद ली। जमीन के मालिक को रैयत से भी पैसा मिला और सरकार से भी। नन्दवारा वाला पुनर्वास तो इसी तरह पूरा किया गया। 1993 में इसी पुनर्वास बस्ती के सामने बागमती का तटबन्ध टूट गया था और नदी ने बस्ती वाली पुनर्वास की पूरी आबाद जमीन एकदम साफ-सुथरी कर के गाँव वालों को वापस लौटा दी। तटबन्ध टूटने की वजह से जो बड़ा गड्ढा बना था वह सत्रह साल बाद आज भी वैसे का वैसा ही मौजूद है।

इसके बाद पुनर्वास दिलवाने वाले दलाल पैदा हुए। वे आकर गाँव वालों को दिलासा देते थे कि इतना पैसा दो तो पुनर्वास अधिकारी से बात करते हैं, इतना पैसा दो तो कलक्टर से बात करते हैं, यहाँ 20 एकड़ है,

वहाँ 42 एकड़ है, वगैरह वगैरह। लोग उन्हें पैसे देते गए मगर वह तो कटी हुई पेंदी का घड़ा था, कभी भरता ही नहीं था। पैसा देते-देते थक जाने के बाद गाँव वालों को यकीन आया कि उनके साथ कुछ स्वार्थी लोग जान-बूझ कर वैसी ही धोखा-धड़ी कर रहे हैं जैसी राज्य की सरकार उनसे पहले कर चुकी है। अब गाँव वालों का भरोसा बचा है तो सिर्फ अपने मुखिया सीता राम पर जो उनका सारा दौड़ने-धूपने का काम अपनी पूरी ताकत से कर देते हैं। सीता राम मुखिया का कहना है कि अभी पिछली साल सरकार के लोग आये थे बांध पर बसे लोगों को यहाँ से हटाने के लिए। जाड़े का दिन था, गाँव वालों ने कहा कि कोई तिरपाल वगैरह की व्यवस्था कर दीजिये तो बाल-बच्चों को थोड़ी सहूलियत हो जायेगी मगर दारोगा का कहना था कि 24 घन्टे में खाली करना पड़ेगा जबकि गाँव के लोग तीन दिन की मोहलत मांगते थे। पुलिस और ठेकेदार दोनों में से कोई भी इतना इंतजार करने के लिए तैयार न था। हम लोग कड़कड़ाती ठंड में बिना कोई व्यवस्था किये हुए जबरन अपने हटाये जाने के विरोध में सीतामढ़ी-बैरगनियाँ रेल लाइन पर धरना देकर बैठ गए और रेल रोक दी तो बैरगनियाँ से लोगों का आवागमन रुक गया।

सीता राम मुखिया

इसके अलावा बैरगनियाँ आने-जाने की कोई दूसरी व्यवस्था है भी नहीं। मामले ने जब तूल पकड़ा तब गाँव वाले एक तरफ और ठेकेदार तथा पुलिस दूसरी तरफ मोर्चा लेकर आमने-सामने आ गए। दोनों पक्षों में जम कर मार-पीट हुई और पुलिस को गोली चलानी पड़ गयी। दोनों तरफ से मुकद्दमें दायर हुए। गाँव वालों का कहना था कि हमें पुनर्वास की जमीन दे दीजिये, हम लोग अपने आप चले जायेंगे। ''...हम लोग कलक्टर से यह पूछने के लिए गए कि हम लोग इस देश के नागरिक हैं या नहीं जो हमें इस तरह खदेड़ा जा रहा है। अगर बागमती परियोजना के कारण हमारी भारत की नागरिकता समाप्त हो जाती है तो आप हुक्म कीजिये, हम नेपाल में जाकर बस जाते हैं। कलक्टर ने तब थाना प्रभारी को फोन किया कि इन लोगों को मत उजाड़िये और न ही परेशान कीजिये। उन्होंने हम लोगों से इतना जरूर कहा कि आप लोग तटबन्ध पर रह रहे हैं, रहिये मगर रास्ता मत बन्द कीजियेगा। हमने उनसे कहा कि दुपहिया तो चलेगा मगर चार पहिया वाहन के लिए वहाँ जगह ही नहीं है। दुपहिए वाहन पर तो हम लोग भी चलते ही हैं। उसके बाद से हम लोग यहाँ तटबन्ध पर बने हुए हैं।

पुनर्वास का मसला बड़ा पेचीदा है। सरकार जमीन अधिग्रहण करना चाहती है और जमीन आस-पास में कहीं है ही नहीं। आज से कोई 10-12 साल पहले सीतामढ़ी के कलक्टर ने बी०डी०ओ०, पुनर्वास अधिकारी, अंचल अधिकारी और नन्दवारा, मूसाचक तथा मसहा आलम के मुखिया को बुला कर मीटिंग की और कहा कि आप लोग मूसाचक, नन्दवारा, बेल और डुमरबन्ना में अलग-अलग जगहों पर जमीन ले लीजिये। गाँव वाले इसके लिए तैयार नहीं थे। सरकार का कहना था कि कई बार और कई स्तरों पर जमीन का अधिग्रहण करते-करते वह अब हार चुकी है और कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं है। गाँव वालों ने पूछा कि सारी क्षमता होते हुए भी सरकार अगर इतनी मजबूर है तो वे बताये कि गाँव के गरीब लोग क्या कर सकने की स्थिति में हैं? जमीन का पैसा लेने में किसी की रुचि नहीं है क्योंकि लोग कर्ज में इस तरह डूबे हैं कि पैसा मिलते ही उसके पर उग जायेंगे और वे महाजनों की तिजोरी की ओर फुर्र हो जायेगा''[27]

तालिका-11.1 के अनुसार अखता गाँव के उन सभी टोलों का पुनर्वास पूरा हो चुका है जो बागमती नदी के दोनों तटबन्धों के बीच पड़ते थे। अखता गोठ के पूर्व मुखिया महंत बृज कुमार दास का कहना है, ''अखता में अखता पूर्वी, अखता पश्चिमी और अखता उत्तरी तीन पंचायतें हैं। बागमती के पश्चिम चकवा, लोहारी टोला, बरवा टोला, पुराना अखता बाजार टोला, ततपुरवा टोला, तकिया टोला मिला कर पश्चिमी अखता का गठन हुआ। अखता गोठ एवं बाजपेयी टोला मिला कर अखता पूर्वी का गठन हुआ। मोतीपुर, सोनाखान, मलाही टोला एक साथ और मधुरापुर—इनका रेवेन्यू नंबर अलग हो गया है। रामपुर कंठ और कोढ़ियार एवं गोसाईंपुर टोला का भी रेवेन्यू नम्बर अलग है। तीन सौ वोटर कम थे जो हमने अखता गोठ से दे दिया और तब अखता उत्तरी पंचायत का गठन हुआ। हम लोग जहाँ बैठे हैं (पूर्वी तटबन्ध के पूरब) वहाँ 1966 में अखता उत्तरी और अखता पूर्वी पंचायत से होकर बागमती नदी बहती थी। ...तटबन्ध निर्माण होने के बाद 9 फरवरी 1982 के दिन, इस गांव को पुनर्वास में बसाने के लिए तत्कालीन शिक्षा राज्यमंत्री रघुनाथ झा, हसनैन साहब, समाहर्त्ता एवं सम्बन्धित पदाधिकारियों की एक बैठक हुई। उसमें अदौरी, अखता, चकफतेया आदि गांवों को बसाने का निर्णय लिया गया। अखता के विस्थापितों के लिए 76 एकड़ जमीन मिली। बागमती तब भी निजी जमीन में बहती थी, आज भी निजी ज़मीन में ही बहती है। अखता पूर्वी का बाजपेयी टोला (उर्फ भेड़िहरवा टोला), मोतीपुर टोला, मलाही टोला का कुछ अंश (कुछ कट गया था) तटबन्ध के बाहर पड़ गया। चकवा, लोहारी टोला, बरवा टोला यह अभी भी तटबन्ध के

महंत बृज कुमार दास अपनी पत्नी के साथ

अन्दर हैं। सतपुरवा बाहर था सो बाहर ही रह गया। उस समय सरकार और भू-धारियों के बीच पुनर्वास सम्बन्धी बातचीत हुई। स्थानीय बड़े भूमिधारी, जिनकी जमीन अर्जित होनी थी, उनका तर्क था कि अखता मात्र 26 या 27 एकड़ में ही है तब उससे ज्यादा ज़मीन क्यों चाहिये? मैं 1953 से मुखिया हूँ। मैंने कहा कि यह गाँव गरीब मजदूरों की बस्ती है–चार में से तीन लड़कों की बहुएँ कहाँ रहेंगी? पुनर्वास दे रहे हैं तो जमीन फाजिल देनी पड़ेगी। गाँव में फैलने की, बथान, खलिहान बनाने की आजादी होती है। भू-स्वामियों से कुछ संघर्ष हुआ। सरकार कहती थी कि जमीन कम से कम अधिगृहीत हो–भूमिस्वामी भी यही चाहते थे। हमने 82 एकड़ ज़मीन मांगी मगर 76 एकड़ पर सन्तोष करना पड़ा। अभी भी लगभग 32-33 परिवार ऐसे हैं जो सड़क पर हैं जिन्हें हम इतना सब करने के बावजूद ज़मीन नहीं दे पाये। 4-5 एकड़ और मिल गया होता तो सबको कायदे से बसा लेते। सम्बन्धित पदाधिकारी की मानसिकता आज भी नहीं बदली। आजादी मिली, अपना शासन, अपना संविधान सब कुछ मिला। बापू/नेहरू ने जो समाज उत्थान की शिक्षा दी उस पर हम चल नहीं पाये, यह दुर्बलता है। कुछ लोगों को जमीन नहीं मिली है तो कुछ को पर्चा नहीं मिला। एक लिंक रोड के लिए पिछले 28 वर्षों से मांग कर रहे हैं जो अब तक नहीं मिली। कब तक लड़ेंगे? हाथापाई करते तो फाइल सरकती। जहाँ तक पहुँचेगी वहाँ से वापस फाइल लाने में भी यही करना पड़ेगा। सामने वाला आदमी क्यों हथियार उठा रहा है–यह हमें हथियार उठाने वाले से पूछना चाहिये था। तटबंध के अन्दर कितनी ज़मीन बरबाद हुई और वहाँ कितना बालू जमा हुआ है वह जाकर अखता की ईदगाह पर देख लीजिये। ऐसी हालत में रोज़ी-रोटी का क्या होगा? ...पुरानी समाज व्यवस्था में सरदार लाठी वाला होता था। किसी के पास 40 बकरी थी जिनमें से 10 बिक गयी तो उसके पास पैसा हो गया। उसके पास पैसा देख कर किसी दूसरे को सरदर्द हो गया तो वह सरदार के पास गया। सरदार इलाज बताता है कि बकरी बेचने वाला डाइन है उसी की वजह से तुम्हें सरदर्द हो रहा है। बकरी बेचने वाले का पैसा सरदार के पहुँच गया और बेचने वाला मारा गया। संशोधित रूप में वही परिस्थिति आज भी है।''[28]

11.8 बाकी जगह भी कोई फर्क नहीं है

मसहा आलम में तो तीन चौथाई परिवारों को पुनर्वास मिला ही नहीं। सारे संपर्कों के बावजूद अखता में भी लोग छूट ही गए और वह सचमुच सड़क पर हैं। एक दूसरे गाँव बरवा टोला में पुनर्वास मिला मगर वहाँ कोई गया ही नहीं। इस गाँव के मुहम्मद शकील बताते हैं, ''...हमारा साठ सदस्यों का संयुक्त परिवार था जब पुनर्वास की बात उठी थी। हम लोग चार भाई थे और चारों जवान थे। हम लोगों को डर था कि अगर चार नाम अलग-अलग लिखवाये जायेंगे तो चारों को सरकार अलग-अलग जगहों पर बसा देगी। इस यकीन पर कि हमारे परिवार के सदस्यों की तादाद और उस समय के हमारे मकान की जमीन को देखते हुए उसी के जैसा पुनर्वास मिलेगा हमलोग इत्मीनान कर के बैठे थे। अफसोस, कुल मिला कर पूरे परिवार को 7 डेसिमल (लगभग 3,000 वर्ग फुट) जमीन मिली। हमारा पुराना घर 8 कट्ठा 10 धुर (करीब 16,000 वर्ग फुट) में था। अब वहाँ पुनर्वास में जा कर क्या करते? उस जमीन तक जाने का रास्ता भी नहीं था, हम लोगों ने रास्ते की बात उठाई जो आज तक (जून 2010) नहीं बना। वह जमीन वैसे ही पड़ी हुई है। जमीन भी नीची है और उसके नीचा होने के कारण वहाँ कमर भर पानी लगा रहता है। इसलिए गाँव का कोई आदमी वहाँ नहीं गया। हम लोगों की खेती की जमीन यहीं है। आज कल तो हालत यह है कि दस कदम चल कर मजदूर जाने को तैयार नहीं है तो 1-2 किलोमीटर जा कर कौन सा मजदूर काम करेगा? अब मेरे चार लड़के हैं, दूसरे भाई के पाँच और तीसरे के दो लड़के हैं। चौथा भाई साथ रहता है। इतने परिवार के लोग डेढ़ कट्ठे जमीन में कैसे जिन्दगी बसर करते? लाठी भांजने की ताकत हम में है नहीं, ताकत बस इतनी ही है कि आप हमसे सवाल पूछें और हम जवाब दें। बगल के चकवा गाँव वाले हाईकोर्ट गए थे पुनर्वास की जमीन के लिए और वहाँ से उनकी डिग्री भी हुई थी कि उनको हर परिवार पीछे पाँच कट्ठा जमीन मिलेगी। मगर सब डेढ़ कट्ठे में सिमट कर रह गए। एक कट्ठा करीब पौने पाँच डेसिमल होता है। किसी को भी उसका हक नहीं दिया। न जाने कितने परिवार छूट गए जो बाद में दौड़ते रह गए मगर लिस्ट में नाम नहीं जुड़वा पाये।''[29]

उधर पिपराढ़ी सुल्तान गाँव के निवासियों को शिवहर वाले पिपराढ़ी में पुनर्वास मिला। जो चला गया उसने इच्छानुसार जमीन दखल कर ली। जो रह गया वह वैसे ही पड़ा हुआ है। मरपा ताहिर गाँव के पुनर्वास के लिए जब सूची बन रही थी तब उसमें मुंशी ताहिर लिखना भूल गया और जब उन नामों के साथ मरपा की सूची का सत्यापन किया गया तब वहाँ उन नामों का कोई व्यक्ति मिला ही नहीं। दरअसल, यह सत्यापन मरपा सिरपाल में हो रहा था जो मेजरगंज प्रखंड का एक

अखता की ईदगाह-ज़मीन के ऊपर इतनी ही बची है।

गाँव है। मरपा ताहिर का नाम सूची में जुड़वाने में गाँव वालों के छक्के छूट गए और काम तभी बन पाया जब ठाकुर गिरिजा नन्दन सिंह ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल किया। गिरिजा नन्दन सिंह इलाके की बड़ी राजनैतिक हस्ती थे और विधायक तथा सांसद भी रह चुके थे।

यहाँ तो खैर गिरिजा नन्दन सिंह ने लोगों की मदद की और उनका कुछ भला हो गया मगर जहाँ मदद का हाथ बढ़ाने वाला कोई नहीं था वहाँ तो लोग अर्श से फर्श पर आ गए। ऐसे ही लोगों की त्रासदी बताते हैं बनबीर (बकठपुर) के अवधेश कुमार शर्मा जिनका कहना है, ''...पुनर्वास की जमीन का जब अधिग्रहण हो रहा था तब काफी विवाद हुआ था। एक ही व्यक्ति की जमीन मान लीजिये बांध के लिए अक्वायर हुई और उसी की जमीन पुनर्वास के लिए अक्वायर हुई तो वह आदमी तो सड़क पर आ जायेगा और इस ज्यादती के खिलाफ लड़ेगा। जब बांध यहाँ तक पहुँचा तब यहाँ तो नदी आजाद थी और तटबन्ध के बाहर भी निकल कर घूमने लगी। उसमें हम लोगों की जमीन ढह गयी। बांध आगे बढ़ा तो नदी ने अन्दर की जमीन को काट दिया, फिर हमारी ही जमीन पुनर्वास के लिए अक्वायर होती है। एक ही आदमी की जमीन को आप कितनी बार अक्वायर कीजियेगा या कटवा दीजियेगा? पुनर्वास के नाम पर आप किसी को भूमिहीन क्यों बना देंगे? बांध की बात तो समझ में आती है कि जिसकी जमीन अलाइनमेन्ट में पड़ गयी वह जायेगी मगर बाकी कामों के लिए तो कुछ तो समझदारी से काम लेना पड़ेगा। हम लोगों की जमीन बकठपुर में बनबीर गाँव में थी–वह पुनर्वास में चली गयी। हमारा बांध के अन्दर कुआं था, खलिहान था–वह सब चला गया। मान लीजिये आप का कोई बड़ा प्लॉट था और उसके बीच में से बांध बनता तो आपकी जमीन के तीन टुकड़े हो गए। बांध वाली जमीन का मुआवजा मिल गया और दोनों तरफ की जमीन से मिट्टी काट कर बांध पर डाल दी गयी। दोनों तरफ गड्ढे हो गए और तब वह बची हुई जमीन किसी काम की नहीं रही। इससे अगर आप को तकलीफ है तो लड़ाई लड़ते रहिये। कितने परिवार शून्य पर पहुँच गए। क्या हम किसी भी चीज के हकदार नहीं थे, सिर्फ इसलिए कि हमारा घर अलाइनमेन्ट के बाहर था?''[30]

11.9 इब्राहिमपुर–यहाँ शिव मन्दिर को हर साल बालू हटा कर निकालना पड़ता है

इब्राहिमपुर गाँव का पुनर्वास पूर्वी तटबन्ध के बाहर रैन संकर में दिया गया था। पुनर्वास की जमीन बहुत कम थी जिसमें परिवार के बैठने और माल-जाल रखने की कोई गुंजाइश है ही नहीं। खेत-खलिहान, टट्टी-पेशाब आने-जाने, बकरी-मुर्गी या जानवर चराने की भी कोई जगह नहीं है। जो अत्यंत गरीब हैं और किसी अन्य की जमीन में बसे हैं उसके लिए तो पुनर्वास ठीक है पर अगर जिसके पास कुछ जमीन, खेत या जानवर हैं तो पुनर्वास उसके लिए नहीं है। एक कट्ठे जमीन में दस आदमी का परिवार कैसे रह पाता? नतीजा यह हुआ कि कुछ लोग बांध पर चले गए थे, कुछ को सरेह में जहाँ कहीं भी जगह मिली वहाँ बस गए। कुछ लोग तटबन्ध के बाहर हुण्डा करके रहते हैं यानी दूसरे की जमीन पर बसे हैं और मालिक से तय किया हुआ है कि जमीन पर होने वाली उपज का एक हिस्सा उनको दे देंगे। तटबन्ध की मरम्मत के नाम पर भले ही लोगों को अभी हटा दिया हो पर, बरसात में तो सभी लोग बांध पर चले जायेंगे। नहीं जायेंगे तो मरेंगे।

बालू में दबा इब्राहिमपुर का शिव मंदिर

इस गाँव के समाजकर्मी नागेन्द्र पासवान बताते हैं, ''...पुनर्वास में लगभग 200-250 परिवार होंगे जबकि नदी और तटबन्ध के बीच में 400 के आस-पास परिवार बसे होंगे। बरसात में तो मौत दोनों के सामने खड़ी होती है चाहे वह तटबन्ध के अन्दर रहता हो या उसके बाहर। तटबन्ध के अन्दर रहने वाले लोग नदी के व्यवहार को फिर भी समझते हैं और अगर वह पानी की वजह से मरते हैं तो उनको मरते हुए देखा जा सकता है। बाहर वाला, जो कि सुरक्षित क्षेत्र में रहता है, जब वह तटबन्ध टूटने के समय मरता है तो वह बह कर कहाँ चला गया किसी को भी दिखाई नहीं पड़ता।

वहाँ तो बाढ़ के समय पति-पत्नी या मां-बेटे के सम्बन्ध भी समाप्त हो जाते हैं। हम जिन्दा बच जाएं भले ही दूसरा मर जाए का सिद्धान्त यहाँ हावी रहता है। यहाँ तटबन्ध के अन्दर की जमीन कन्ट्रीसाइड की जमीन से 14 फुट ऊपर है। इसके ऊपर 8 फुट या उससे अधिक ऊँचा तटबन्ध है। यानी कन्ट्रीसाइड की जमीन तटबन्ध के शीर्ष से 22 फुट नीचे है। अब आप ही बताइये खतरा किस पर ज्यादा है? बागमती के दोनों तटबन्धों के बीच यहाँ 3 किलोमीटर का फासला है और इस पर बना कटौंझा का पुल 300 मीटर लम्बा है। बाढ़ के समय दबाव बढ़ने पर यह पानी पुल के पीछे नदी के प्रति-प्रवाह में ऊपर उठेगा। इस नदी में बरसात के समय पानी और मिट्टी की समान मात्रा बहती है तो मिट्टी यहाँ बैठेगी और तबाही गढ़ेगी। जान बचाने के लिए लोग कहाँ जायेंगे? मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग पर भनसपट्टी में जो पुल बन रहा है वह दरअसल पुराने पुल के ऊपर बन रहा है। 15 साल और इन्तजार कीजिये, कटौंझा वाले पुल के ऊपर तीसरा पुल बनाना पड़ जायेगा। हम लोग यहाँ तटबन्ध के अन्दर हर साल घर बनाते हैं और वह हर साल बह जाता है या नदी के बालू में उसका कुछ न कुछ हिस्सा जरूर डूब जाता है मगर जिन्दा बचे रहते हैं। हमारे गाँव में एक शिव मन्दिर है। जब नदी उफान पर होती है तो उसमें पानी घुस जाता है और जब नदी पीछे हटती है आधी ऊँचाई तक मन्दिर बालू में डूब जाता है। पूजा-पाठ के लिए हम लोग हर साल बालू हटा कर शंकर जी को बाहर निकालते हैं। नदी की धारा हमारे इर्द-गिर्द घूमती रहती है कभी इधर कभी उधर। इसकी धारा निश्चित नहीं है पर हमें उससे

अपने पुराने घर के लिंटेल पर खड़े नागेन्द्र पासवान

निबटना आता है। बागमती की मूल परियोजना में सिंचाई शामिल थी, उस शब्द को ही हटा दिया गया। अब यह केवल बागमती परियोजना है। इसका क्या औचित्य है पता नहीं। बस नदी को बांधे जा रहे हैं और पानी की निकासी की कोई व्यवस्था नहीं है। 10-15 साल में कुसहा से बड़ी तबाही यहाँ होगी क्योंकि तब तक नदी कन्ट्रीसाइड से 25 फुट ऊपर होगी और तटबन्ध 35 फुट। अब ऐसा तटबन्ध पूरब में टूटे या पश्चिम में, पर टूटेगा जरूर और इसकी सारी जिम्मेंवारी सरकार की होगी। खेती की हालत यह है कि पानी नहीं बरसा तो रोपनी तक नहीं होगी, पौधे जल जायेंगे और अगर पानी खूब बरसा और नदी का पानी असमय चारों ओर फैला तो पौधा मिट्टी में खूंटी की तरह गड़ जायेगा। अब बारिश और नदी हमारी मरजी से चलें तो कुछ अनाज उपजेगा वरना सब समाप्त। गाँव में नव-सृजित स्कूल है। बच्चे हैं, अध्यापक हैं मगर पढ़ाई होती है या नहीं, यह मत पूछिये। खड़का में एक हेल्थ सेन्टर है, कभी-कभी एक नर्स आती है। कभी टीकाकरण का कोई कार्यक्रम हो जाता है। तटबन्ध से एक सुविधा जरूर हुई है कि इस पर मोटर साइकिल चल जाती है, वही एम्बुलेन्स का काम करती है। सांप काटने से लोग मरते हैं। कुत्ता काटने की न जाने कितनी घटनाएं होती हैं मगर दवा उपलब्ध नहीं है।''[31]

यहाँ से मिलती-जुलती परिस्थितियाँ हैं तटबन्धों के बीच फंसे बेलसण्ड प्रखण्ड के मौलानगर गाँव की, जिसके बारे में बताते हैं इसी गाँव के एक बुजुर्ग मुहम्मद अरशद आलम। उनका कहना है, ''...यह बांध 1977 में बनकर पूरा हुआ और 1979 की बाढ़ में लोगों के घरों में पानी घुसा और घरों का गिरना शुरू हुआ, तटबन्ध बनने के दूसरे साल। उस साल तो हम घर-द्वार छोड़ कर इसी पूरब वाले बांध पर भागे। बाढ़ जब उतर गयी तो फिर वापस आ गए। पानी 1978 में 17 जुलाई को भी बहुत ज्यादा आया था। यह वह समय था जब बांध पूरा नहीं बन पाया था। बागमती तीन धाराओं में बह रही थी। एक तो पिपराढ़ी ब्लॉक में बेलवा धार होकर दूसरा कुअमा-नारायणपुर के गैप से होकर और तीसरी यह मुख्यधारा थी जो नये तटबन्धों के बीच में बह रही थी। दो जगह खुला होने के कारण पानी फैल गया था। 1978 में 1979 से ज्यादा बाढ़ होने के बावजूद बाढ़ का उतना असर नहीं पड़ा था। पुनर्वास के लिए जमीन हमें चन्दौली में मिलने वाली थी। चन्दौली बड़े किसानों का प्रभावशाली गाँव है। वहाँ जिस जमीन का अधिग्रहण हुआ वह बड़े किसानों की नहीं वरन् कमजोर किस्म के किसानों की थी। हम लोगों को 3-4 डेसिमल जमीन मिली। यह जमीन बसने के लिए नाकाफी है, जाने का रास्ता नहीं है। अच्छी खासी जमीन पर जल-जमाव है। परिवार तो बढ़ता है उसके लिए जमीन चाहिये जिसकी वहाँ कोई गुंजाइश नहीं थी। इसलिए हम लोग यहीं रह गए। पुनर्वास में वही गया जिसके पास यहाँ कुछ नहीं था या बहुत कम था। उसे किफायत हो गयी। हमारे गाँव की सारी खेती की जमीन यहीं तटबन्धों के अन्दर है। जो बाहर पुनर्वास में चले भी गए हैं, उन सभी की कुछ न कुछ जमीन यहाँ हैं। वो या तो खुद यहाँ आकर खेती करते हैं या बटाई पर दे देते हैं। वहाँ से यहाँ आकर खेती करने वालों को 3 घन्टा आने-जाने का फाजिल समय लगता है। यहाँ नावें प्राइवेट हैं और एक बार नदी पार करने का 5 रुपया लगता है। हम लोग साल भर में प्रति परिवार दो बार खरीफ और रबी की फसल में नाव वालों को उनकी

खिदमत की एवज में अनाज देते हैं। कभी फसल मारी गयी तो पैसा दे देते हैं। सरकार पहले बरसात के महीनें में नाव का इन्तजाम करती थी। पिछले तीन-चार साल से नाव नहीं मिलती। मल्लाहों का भुगतान नहीं होता, इसलिए वे नाव चलाते नहीं हैं। ब्लॉक के अफसर कमीशन मांगते हैं। पैसा आकर पड़ा रहता है, भुगतान नहीं होता। जो कमीशन दे दे उसको पैसा मिल जायेगा वरना घूमते रहिये। दो साल से पानी यहाँ नहीं आ रहा है मगर रास्ता तो बन्द हो ही जाता है। स्कूल इस गाँव में नहीं है मगर दरियापुर में मिडिल स्कूल है। बाकी सब स्कूल तटबन्धों के बाहर हैं। बच्चों को हम लोग डुमरा मिडिल स्कूल भेजते हैं–यहाँ से 2 कि०मी० दूर। बरसात के तीन महीनें बच्चे स्कूल नहीं जाते। लड़कियाँ भी अब स्कूल जाती हैं। डॉक्टरी सहायता के लिए बेलसंड जाना पड़ता है। हाल ही में एक मास्टर साहब को हम लोग इलाज के लिए ले जा रहे थे, रास्ते में ही मर गए। हम लोग अल्पसंख्यक हैं, आन्दोलन करेंगे तो लोग उसका दूसरा मतलब लगाते हैं। मेरा घर तीन बार कट चुका है। यह हमारा चौथा मकान है। दरियापुर इतना नहीं कटा है। नदी ने नुनौरा के तीन टुकड़े कर दिये हैं। मौलानगर में अब तीन टोले हैं–300 परिवार होंगे। रोजगार का कोई साधन नहीं है। खेती-बाड़ी से ही चलता है। मिट्टी मगर वह नहीं रही जिस पर उपज होती थी। सिंचाई की समस्या है। खेती का पैटर्न नहीं बदला है यहाँ मगर पहले लागत नहीं पड़ती थी, अब हर चीज की कीमत देनी पड़ती है। ब्लॉक में बीज आया था, हम लोगों को मिला ही नहीं। सब्जी/दाल/कपड़े वगैरह की किल्लत है। कभी-कभी मालगुजारी देने भर को पैदावार नहीं होती। हमारे गांव के जवान बाहर नहीं गए रोजी-रोटी के लिए। अपनी जमीन से इतना अभी भी पैदा कर लेते हैं कि बाहर की ओर ताकना नहीं पड़ा। हमारे गाँव में शादी के लिए एक अगुआ आया था पिछले साल। हम लोगों ने उससे पूछा कि आप कितने सालों से बाहर रह रहे हैं। उनका जवाब था–यही कोई तीस साल। हमारे गाँव के बुजुर्गों का उनसे कहना कि आप का चूल्हा तीस साल पहले लटपटा गया और हम अभी भी अपनी जमीन के दम पर जिन्दा हैं। वह शादी नहीं हुई। अल्लाह का फ़ज़ल है और उसकी मेहरबानी है कि हम अभी भी अपनी जमीन से जुड़े हुए हैं। सरकारी नौकरी किसी को मिल गयी और वह चला गया तो अलग बात है।''[32]

तटबन्धों के अन्दर बसे गाँवों का बाहर की दुनियाँ से संपर्क बनाये रखने वाले नाविकों की अलग कहानी है। बरसात के मौसम में प्रखंड कार्यालय की तरफ से इन नाविकों की व्यवस्था की जाती है और उनके पारिश्रमिक का भुगतान सरकार करती है। जहाँ यह नाविक सरकार के हत्थे चढ़ गए, वहाँ उनकी दुर्गति शुरू हो जाती है। अपनी व्यथा कहते हुए इब्राहिमपुर के रंगी बैठा कहते हैं, ''...मैं 1954 से लेकर अब तक नाव चलाते चलाते बूढ़ा हो गया। दो बेटे हैं, उनको काम पर लगाया हुआ है। बागमती नदी में महादेव मठ के पास नाव रहती है। तटबन्ध के अन्दर घर है जिसे हर साल बनाना पड़ता है। 50-60 रुपये प्रति नग बांस मिलता है। कहाँ से घर बनायेंगे? जमीन क्या है–एक-दो कट्ठा होगी। उसका कोई मतलब नहीं है। मैं नाव चलाता हूँ। 2004 में चन्दौली में तटबन्ध टूटा था और 2006 में पचनौर में टूटा। उसके बाद 2007 में सरकार के लिए नाव चलाई मगर इन तीन वर्षों में से किसी का भी पैसा आज तक नहीं मिला। मैंने यहाँ ब्लॉक में भुगतान के लिए बात की तो मुझसे कहा गया कि डुमरा जाइये। वहीं पैसा मिलेगा। डुमरा गए तो वहाँ का किरानी घूस मांगता है। यहाँ पेट में दाना नहीं है, उस कफन घसीट को घूस कहाँ से देंगे? एक हजार रुपया मांगता था। वहीं सीतामढ़ी में मेरी एक बेटी रहती है उससे कुछ पैसा लेकर दिया। मेरा 2004 का 18,000 रु० और 2006 का 19,000 रुपया सरकार पर बाकी है। 2007 वाला हिसाब मुझे मालुम नहीं है। यह भी किरानी ही बतायेगा। गरीब आदमी हूँ, कितना दौड़ूंगा? इन्दिरा आवास योजना में घर मिलना था सो खाते में लिख गया कि मेरे पास घर है। चल कर के देख लीजिये, किन परिस्थितियों में मैं जी रहा हूँ। मैं तो डी०एम० से या मुख्यमंत्री से भी कहने को तैयार हूँ, कि या तो मेरा ख्याल कीजिये या अपनी गाड़ी के चक्के के नीचे दबा कर मार डालिये मुझे।''[33]

नाव जैसी एक जरूरी और उपयोगी चीज़ के प्रति सरकारी अमले का क्या रुख रहता है उसकी बिहार विधान सभा में एक मिसाल देते हैं विधायक शकूर अहमद जिनका सवाल था, ''...मैं सरकार से जानना चाहता हूँ कि तटबन्ध के नीचे जो लोग पड़ गए हैं उनके लिए सरकार को इन्तजाम करना है कि नहीं। वहाँ उनकी जमीन है, इसलिए वे हट नहीं सकते हैं। मैं जब अपने इलाके में गया था तो पता लगा कि वहाँ का बाबू मही इलाका अफेक्टेड है। वहाँ यह भी पता लगा कि नाव नहीं है। मैंने लोगों से पूछा कि यहाँ की नाव क्या हुई तो लोगों ने बताया कि चूंकि नाव पुरानी हो गयी थी इसलिए यहाँ के बी०डी०ओ० साहब ने उसको चिरवा कर जलावन में लगा दिया। ...यहाँ पर जो 20-22 नावें थीं उनको पुरानी करार कर बी०डी०ओ० साहब ने उनको चिरवा कर जलावन में लगा दिया है।''[34]

यातायात की असुविधा केवल तटबन्ध के अन्दर वालों की ही नहीं हैं। बहुत से बाहर वाले गाँव भी उसी टीस को झेलते हैं। शिवहर जिले के पुरनहिया प्रखंड के गाँव बखार की हालत भी कम बुरी नहीं है। यह लोग पहले तटबन्ध के अन्दर थे, अब पुनर्वास में हैं। इनकी सबसे बड़ी दिक्कत है कि यहाँ से निकल कर बाहर जाने का कोई रास्ता नहीं है। बरसात के मौसम में यह लोग यहाँ से निकल कर सीतामढ़ी, शिवहर की कौन कहे पड़ोस के गाँव चनडीहा भी नहीं जा सकते। अपनी बात सरकार तक पहुँचाने के लिए गाँव वालों ने संगठित होकर 2009 के लोकसभा चुनाव का बहिष्कार किया और किसी ने भी यहाँ वोट नहीं दिया। बरसात और उसके बाद के छः महीनों में कोई बीमार पड़ जाए तो उसे किसी डॉक्टर या अस्पताल तक ले जाने की कोई व्यवस्था नहीं है। अपनी हालत के बारे में गाँव वालों ने कलक्टर से लेकर प्रधानमंत्री तक को लिखा मगर कोई फायदा नहीं हुआ। बखार की पंचायत का नाम तरडीहा है जिसकी गाँव से सीधी दूरी एक किलोमीटर होगी मगर वहाँ जाने के लिए इन्हें बांध पकड़ कर अदौरी या अखता होकर जाना पड़ेगा। दोनों ही हालत में दस किलोमीटर चलना पड़ता है। सड़क चाहिये मगर बीच में रैयत की जमीन पड़ती है। वह भी पड़ोसी ही लोग हैं, उनकी ज़मीन चली जायेगी तो वह भी उजड़ जायेंगे।

तटबन्धों के अन्दर बसे लोगों के जीवन के बारे में उन जगहों को देखे बिना समझ पैदा नहीं की जा सकती। इन जगहों के रहन-सहन के बारे में बड़ा ही मार्मिक चित्रण करते हैं डुमरा के श्याम बिहारी सिंह। वह पूछते हैं, ''...आपने ठेहा देखा है? यह लकड़ी का वह टुकड़ा होता है जिसे जमीन में थोड़ा गाड़ देते हैं और उसी पर रख कर गंड़ासे से

चारा काटते हैं। गंड़ासे की हर चोट ठेहे पर पड़ती है और वह धीरे-धीरे कट कर समाप्त हो जाता है। हमारी स्थिति ठीक वैसी ही है। हर साल थोड़ा-थोड़ा कर के नदी हमारी जिन्दगी को कम कर रही है और हम चोट खाने के अलावा कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं हैं।''[35]

कन्सार (प्रखण्ड बेलसंड, जिला सीतामढ़ी) के किसान जैनुल आबदीन कहते हैं, ''...मैं दूसरों की मदद करता था, आज खुद मदद का मोहताज हूँ। कनसर का रिहायशी हिस्सा बागमती तटबन्ध के बाहर है मगर खेती की जमीन पूरी की पूरी तटबन्धों के अन्दर है और इसलिए

ज़ैनुल आबदीन

नदी के रहम-ओ-करम पर है। गाँव के लोग बताते हैं कि 1960 के आस-पास डॉ० के० एल० राव यहाँ आये थे और नदी के पानी को देख कर कहा था कि इसकी सिल्ट बहुत उपजाऊ है और इसकी धारा भी काफी तेज है। इस नदी को बांधना ठीक नहीं होगा क्योंकि यह नदी कभी एक स्थान पर बनी नहीं रहेगी। फिर पता नहीं क्या हुआ कि एक दिन यहाँ तटबन्ध बनने लगा। गाँव वालों ने शुरू-शुरू में विरोध किया फिर समाज के व्यापक हित का खयाल करके चुप रह गए। 1974-75 के आस-पास बांध यहाँ पहुँचा होगा। इसके बनने के बाद जो सब जगह हुआ वह कन्सार में भी हुआ। तटबन्ध के बाहर जल-जमाव था और अन्दर की जमीन पर बालू। ...तटबन्ध बनने के पहले मैं एक औसत किसान हुआ करता था और फिर भी सैकड़ों मन धान के साथ-साथ दलहन और तेलहन बेच लिया करता था। जिन्दगी की रफ्तार आराम से चल रही थी। अब साल में 365 दिन मैं चावल, दाल और तेल बाहर से खरीद कर खाता हूँ। इतनी तरक्की हमारी हुई है इस बांध की वजह से। नदी की धारा बदल गयी है और अब यह बायें तटबन्ध पर दबाव बनाये रखती है। पहले पानी चारों ओर फैल जाता था, बरसात में तकलीफ जरूर होती थी पर उसके बाद जबर्दस्त फसल होती थी और बाढ़ में कोई मरता नहीं था। अब फसल भी खत्म हो गयी और खतरा भी पहले से ज्यादा बढ़ गया। हमारी जमीन जो तटबन्धों के बीच फंस गयी उसकी कीमत गिरी है और वहाँ अगर खेती करनी हो तो पहले जंगल, झाड़ी, काँटा और बालू हटाइये और तब खेती के बारे में सोचिये। सारी ताकत इसी में खत्म हो जाती है। अब उस जमीन पर खेती के लिए बटाईदार तक नहीं मिलते।''[36]

रेलवे वाला बांध पूरा होगा तब हमारा हाल पूछने आइयेगा—ढेंग से रुन्नी सैदपुर वाले अलाइनमेन्ट का आखिरी बड़ा गाँव है रक्सिया। इसके बाद शिवनगर और पोता (तिलक ताजपुर) नाम के दो और गाँव पड़ते हैं। रक्सिया तक बांध पहुँचते-पहुँचते 1975 हो गया था। रक्सिया के मुहम्मद वासी बातते हैं, ''...इमरजेन्सी लग चुकी थी और जगन्नाथ मिश्र मुख्यमंत्री थे तथा रामचन्द्र अभियंता प्रमुख थे और अबदुस समद चीफ इंजीनियर थे। गाँव वाले चाहते थे कि बागमती के बायें तटबन्ध को पश्चिम की तरफ थोड़ा-सा ठेल दिया जाए तो पूरा रक्सिया गाँव तटबन्ध के बाहर आ जायेगा और उसका बाढ़ से बचाव हो सकेगा। इसके लिए लिखा-पढ़ी भी हुई और गाँव के लोग मुख्यमंत्री और चीफ इंजीनियर से पटना जाकर मिले। गाँव वालों का कहना है कि उन्हें इस बात का आश्वासन भी सरकार से मिला था। मगर जब यह लोग गाँव लौटे तो उन्हें स्वीकृत नक्शे वाले अलाइनमेन्ट पर जगह-जगह मिट्टी पड़ी दिखाई पड़ी और लगा कि सरकार की तरफ से वायदा-खिलाफी हुई है। बाद में जब चीफ इन्जीनियर समद साहब रक्सिया आये तब तक तटबन्ध का काम काफी आगे बढ़ चुका था। गाँव के लोग गुस्से में थे मगर इमरजेन्सी लगने की वजह से कुछ भी बोल नहीं सकते थे। तटबन्ध, जैसा बनना था वैसा बन गया। अब दस आना रक्सिया अन्दर और छः आना तटबन्ध के बाहर। जमीन जायदाद सब अन्दर थी जिसकी वजह से बहुत से लोग अन्दर ही रह गए, पुनर्वास मिलने पर भी बाहर पुनर्वास में नहीं आये। बहुत से लोगों को पुनर्वास में मिली जमीन के साइज पर ऐतराज था, वह जमीन लेने ही नहीं आये। कुछ ने खुद जमीन खरीद कर उस पर घर बनाया। पुनर्वास की जमीन का परचा किसी को मिला, किसी को नहीं। जिसको परचा मिला वह जायज है या फ़र्ज़ी, यह भी नहीं मालुम क्योंकि यह परचे तो घूस देने के बाद मिले हैं। तटबन्ध के अन्दर बालू का कितना जमाव होता है उसे समझने के लिए इस गाँव की ईदगाह

मु० वासी

बालू में डूबी हुई रक्सिया की ईदगाह-इसकी मीनारें कभी ज़मीन से 27 फुट ऊपर थीं

का जायजा ले लेना चाहिये। गाँव के लोग बताते हैं कि उनकी ईदगाह की यह मीनार 27 फुट ऊँची थी मगर अब उसकी मीनार का महज 4 फुट ऊपरी हिस्सा बचा है। बाकी पूरी की पूरी ईदगाह नदी के बालू में ज़मींदोज़ हो गयी है।''

रक्सिया में अभी तक तटबन्ध टूटा नहीं है मगर यह जब भी कभी ऊपर टूटता है तो पानी रक्सिया में घुसता है। रमनी, ओलीपुर, जाफरपुर, मधकौल, मांडर और चन्दौली के बाद पचनौर में 2007 में जब तटबन्ध टूटा था तब भी रक्सिया तबाह हुआ था। रक्सिया तब भी तबाह हुआ था जब तटबन्ध नीचे मधौल में टूटा था। उस समय बाढ़ के पानी ने पीछे लौट कर रक्सिया को डुबाया था। आगे मुहम्मद वासी कहते हैं, ''...मैंने खुद जमीन खरीद कर अपना घर बनाया हुआ है। पूरे गाँव में बालू पटा पड़ा है, यहाँ बाहर कुछ पैदा नहीं हो सकता। तटबन्ध के अन्दर की हालत खुद जा कर देख आइये। अभी लगता है कि हम तटबन्ध के बाहर हैं मगर यह बगल में मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी रेल लाइन बन रही है वह भी तो एक तरह का बांध ही है। हम बागमती के बायें तटबन्ध के बाहर होते हुए भी अब जल्दी ही इस तटबन्ध और रेल लाइन के बीच फंसने वाले हैं। रेलवे वाला बांध पूरा होगा तब हमारा हाल पूछने आइयेगा।''[37]

तटबन्ध निर्माण फेज-2 का आखिरी गाँव है तिलक ताजपुर उर्फ़ पोता जो 2009 में तटबन्ध टूटने के कारण सुर्खियों में आ गया था। यहाँ की हालत बयान करते हैं बैजनाथ राय। उनका कहना है, ''...हमारा मूल गांव बागमती तटबन्धों के बीच में था और हमें पुनर्वास मिला रायपुर में बांध के पश्चिम। यह तटबन्ध हमारे गांव की जमीन पर बना है और इसने गांव के दो टुकड़े कर दिये हैं। गांव में बासडीह की जमीन तटबन्ध के अन्दर थी और खेत बाहर थे। रायपुर का टोला है मधौल सानी, थाना रुन्नी सैदपुर। अन्दर 300-400 घर थे। पुनर्वास में न तो रास्ता है, न पेय जल की व्यवस्था है। मेरी जमीन 5 डेसिमल थी घर की और मुझे 5 डेसिमल मिला बाहर–उसमें कोई गड़बड़ी नहीं थी। लेकिन बहुत लोगों को कम मिला। अधिकांश लोगों के कागज भी सही नहीं हैं और प्लॉटिंग भी नहीं की गयी। यह बांध करीब तीस साल पहले बना था और यहाँ से कोई दस चेन आगे जाकर समाप्त हो जाता था। बरसात में तटबन्ध के अन्दर तो पानी रहता ही था, आगे खुला रहने के कारण नदी का पानी उलट कर पुनर्वास की जमीन में हर साल घुसता था। न तटबन्ध के अन्दर रहने लायक और न उसके बाहर। तब सारे लोग तटबन्ध पर ही आकर रहने की जगह खोजते थे। पानी घटने पर लोग अपनी-अपनी जगह चले जाते थे। तटबन्ध की मरम्मत के नाम पर चार-चार बार हम लोग यहाँ से हटाये गए हैं अब तक। घर बनाने का पैसा तो कभी मिला ही नहीं केवल घर का सामान उठा कर यहाँ लाने के लिए थोड़ा बहुत पैसा मिला था। 100 घर साहनी लोग भीतर ही हैं। बाहर रास्ता ही नहीं है। पुनर्वास की जमीन खाली है। पुनर्वास की इस जमीन को पहले के मालिक जोत रहे हैं। जिसकी जमीन यहाँ तटबन्ध के बाहर थी उसमें से कुछ लोगों ने बाहर आकर जमीन ऊँची की और अपने घर बना लिये हैं। दो साल पहले 2007 में भी खरहुआँ में यह तटबन्ध टूटा था। बागमती का पश्चिमी तटबन्ध कहीं भी टूटेगा तो पानी हमारे यहाँ जरूर आ जायेगा। बांध पर शरण लेने के अलावा हमारे पास कोई चारा नहीं है। इस बार 2009 में जिस दिन बांध टूटा

उस दिन 11 फुट ऊँचा पानी गांव में घुसा था। तटबन्ध टूटा है कुछ तो विभागीय लापरवाही से और कुछ ट्रैक्टर वालों की करनी से। रिवर साइड की जमीन कुछ दलदल जैसी थी और उधर से ही ट्रैक्टर गुजरते थे। उन्होंने तटबन्ध की ही मिट्टी काट कर रास्ता बना लिया। विभाग वाले लोग सब कुछ चुप-चाप देखते रहे, कुछ बोले नहीं, हो सकता है उनकी मिली भगत रही हो। इतने के बावजूद यह जगह ऐसी नहीं थी कि तटबन्ध टूट जाए। रिलीफ बांटने और तटबन्ध की मरम्मत करने में बहुत पैसा है। यहाँ मिट्टी के जो बोरे भर कर तटबन्ध पर रखे जा रहे हैं उसके लिए पेटी ठेकेदार को प्रति बोरा बारह रुपये का भुगतान होता है। ढाई लाख बोरे डाले जा चुके हैं अब तक (10 अगस्त 2009) तो सोचिये कितना खर्च हुआ होगा और कितना पैसा बचा होगा पेटी ठेकेदार को और मालिक को। उस हालत में कौन नहीं चाहेगा कि वह यहाँ ठेकेदारी करे और निहित स्वार्थ वाले सभी लोग क्यों नहीं चाहेंगे कि तटबन्ध टूटे। यहाँ भी मेन ठेकेदार तो एच०एस०सी०एल० ही है पर वह खुद तो कोई काम करता नहीं है, वह भी तो काम बांट देता है ठेकेदारों में। फिर वह ठेकेदार आपस में काम पाने के लिए लड़ते हैं। इंजीनियरों पर भी यहाँ बड़ा दबाव रहता है।''[38]

11.10 उजड़ा दयार-रामपुर कंठ

टूटते तटबंध के सामने किसी गाँव के पड़ने का क्या मतलब होता है, इसकी जिन्दा मिसाल सुप्पी प्रखंड, जिला सीतामढ़ी का रामपुर कंठ गाँव है जो कभी बागमती नदी के पश्चिमी किनारे पर बसा हुआ था। 1970 के दशक के 90 परिवारों तथा 213 हेक्टेयर रकबे वाला यह गाँव नदी और उसके पश्चिमी तटबन्ध के बीच में फंस गया और उसका पुनर्वास करना जरूरी हो गया। बागमती परियोजना की पुनर्वास योजना तो वही थी कि तटबन्ध के बाहर एक रिहाइशी प्लॉट मिल जायेगा, वहीं घर बना लीजिये और तटबन्धों के अन्दर अपनी जमीन पर खेती कीजिये। मगर इसके पहले कि इतनी सी भी योजना कोई शक्ल ले सके 1974 और 1975 की बरसात के मौसम में यह गाँव डूबने-उतराने लगा था। यही हालत 1978 में भी हुई लेकिन तब तक काफी जिद्दो-जहद के बाद यह तय हो चुका था कि गाँव का पुनर्वास होगा। सरकारी रिकार्डों के अनुसाार 6.826 हेक्टेयर (16.86 एकड़) जमीन का अधिग्रहण किया गया जो कि रामपुर कंठ की ही जमीन थी और बागमती के पूर्वी तटबन्ध के पूरब में थी। इसके पहले कि भू-अर्जन की प्रक्रिया पूरी हो पाती लगभग 3-4 साल का समय गाँव वालों को बागमती के निर्माणाधीन तटबन्ध पर ही अपने माल-मवेशी के साथ बिताना पड़ गया। धीरे-धीरे लोग इस पुनर्वास की जमीन पर बसने लगे और 2001 की जनगणना के अनुसार गाँव के परिवारों की संख्या बढ़ कर 259 तथा आबादी 1009 हो गयी। जाहिर है कि जितनी जमीन में 90 परिवार पुनर्वासित हुए होंगे उतनी ही जमीन पर अब उससे लगभग तीन गुने 259 परिवार बसते हैं।

इस तरह से गाँव की कुछ जमीन तटबन्ध में, कुछ पुनर्वास में और बाकी की खेती की जमीन, जो तटबन्धों के बीच थी, वह नदी के हवाले हो गयी। जैसे-जैसे नदी इस जमीन को काटती गयी या उस पर बालू बिछाती गयी, खेती की संभावनाएं कम होने लगीं और तब रोजगार की तलाश में युवकों का पलायन शुरू हो गया। 2007 में जुलाई माह के अंत में बागमती, रामपुर कंठ के पास तटबन्ध के बहुत नजदीक आ गयी और किसी अमंगल की आशंका से रामपुर कंठ पुनर्वास के लोग भयभीत हो गए क्योंकि अब पुनर्वास और नदी के बीच में तटबन्ध के नाम पर बालू की एक भीत खड़ी थी जो किसी भी वक्त जुगाली करती हुई भैंस की तरह बैठ सकती थी। 29 जुलाई के दिन गाँव वालों ने बिहार के मुख्यमंत्री, जल संसाधन मंत्री और पटना के बाढ़ नियंत्रण कक्ष को इस बात की सूचना दी। 31 जुलाई को जिले के कलक्टर को सामूहिक रूप से दुर्घटना की आशंका की सूचना दी गयी और फौरी तौर पर कार्यवाही करने की अपील की गयी और इस अपील की प्रतियाँ सभी संबद्ध अधिकारियों तथा मंत्रियों को भेजी गईं। सीतामढ़ी के अपर समाहर्त्ता ने इतना किया कि बागमती प्रमंडल सीतामढ़ी के एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर को उन्होंने सुरक्षात्मक कार्यवाही के लिए संदेश भेजा और की गयी कार्यवाही से अवगत कराने को कहा। जाहिर है कि कोई कारगर व्यवस्था नहीं हुई और बांध 18 अगस्त की रात 9 बजे दरक गया। अधिकांश घर बह गए, चारों ओर पानी फैल गया और गाँव वाले आश्रय विहीन होकर टूटे तटबन्ध के बचे हिस्से पर फूस और पॉलीथीन की बनी झोपड़ियों में आने को मजबूर हो गए। अभी बरसात के मौसम का आधा भाग बाकी था। इस बीच सीतामढ़ी के जिलाधिकारी 20 अगस्त को क्षेत्र का दौरा कर के अधिकारियों और इंजीनियरों को कुछ निर्देश देकर चले गए। टूटे बांध के गैप को भरने का काम पूर्वी तटबन्ध की तलहटी से मिट्टी काट कर चलता रहा। 23 अगस्त को एक बार फिर मुख्यमंत्री समेत तमाम अधिकारियों को गाँव वालों ने घटना की बेअसर जानकारी दी। गाँव के लोग अपने बचे हुए माल-मवेशी के साथ तटबन्ध पर थे मगर चारों ओर पानी भरा रहने के कारण उन्हें अब तक यह पता नहीं था कि नदी ने न केवल उनके आशियाने उजाड़े हैं वरन् उनके पुनर्वास वाली जमीन पर गड्ढा भी कर दिया है और वहाँ अब एक तालाब बन गया है जिसमें घर बनाना तब तक संभव नहीं होगा जब तक इसे पाटा न जाए। गाँव वाले जब अधिकारियों और इंजीनियरों के पास 7 सितम्बर को अपनी हालत बयान करने गए तब वहाँ भी उनको अवहेलना ही मिली।

यह तटबन्ध पीड़ित, जो कुछ दिन पहले तक तटबन्ध की मरम्मत की मांग कर रहे थे, बदली परिस्थितियों में उनकी जिस रिहाइशी जमीन पर नदी ने गड्ढा कर दिया था उसकी भरावट, क्षतिपूर्ति, मकानों के पुनर्निर्माण के लिए अनुदान और दुर्घटना के लिए दोषी व्यक्तियों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही और उनके निलंबन की भी मांग करने लगे। अब यह तय हो चुका था कि 134 परिवारों के घर तटबंध टूटने की घटना में बह गए थे। बताते हैं कि मुख्यमंत्री कार्यालय से 134 घरों के पुनर्निमाण के लिए अनुदान सीतामढ़ी तक पहुँचा मगर स्थानीय मुखिया ने एक तो प्रति परिवार पाँच हजार रुपये बतौर नजराने की मांग की और दूसरे, पीड़ितों की 185 लोगों की एक नई सूची सरकार को प्रेषित कर दी। इन 134 परिवारों के लोग नज़राना देने को तैयार नहीं थे और सूची में हेराफेरी का संज्ञान लेकर सरकार ने अनुदान का पैसा वापस ले लिया। इन घटनाओं का वास्ता देते हुए रामपुर कंठ वासियों ने एक बार फिर मुख्यमंत्री, आपदा प्रबन्धन मंत्री, तिरहुत कमिश्नरी के आयुक्त और सीतामढ़ी के जिलाधिकारी के सामने गुहार लगाई। यह 15 दिसम्बर 2008 की घटना है जबकि तटबन्ध को टूटे हुए एक साल से ज्यादा का समय बीत चुका था।

इसके बाद गड्ढा बनी हुई रिहाइशी जमीन पर मिट्टी भरने का काम शुरू हुआ। गाँव वालों की शिकायत है कि शायद इस काम में

ठेकेदारों को कोई खास फायदा नहीं था इसलिए उन्होंने खेती की जमीन की मिट्टी का उलट-फेर किया और रिहाइशी जमीन पर बने गड्ढे को आधा-तीया भर कर काम छोड़ कर चलते बने। यह जमीन अभी भी घर बनाने लायक नहीं थी। यह 134 परिवार फिलहाल बागमती के पूर्वी तटबन्ध पर झोपड़ी बना कर रह रहे हैं। बागमती तटबन्धों के विस्तार और ऊँचा और मजबूत करने की 792 करोड़ रुपयों की सरकार की जो योजना है उसका काम तो रुन्नी सैदपुर से ढेंग तक दिखाई पड़ता है मगर रामपुर कंठ वाले बीच के हिस्से में कोई काम नहीं हुआ है क्योंकि वहाँ तटबन्ध पर यह परिवार बसे हुए हैं। इन लोगों का कहना है कि इनकी रिहाइशी जमीन का गड्ढा सरकार भर दे और घर बनाने के लिए कुछ मदद कर दे तो वह तटबन्ध पर से हट जायेंगे। मुमकिन है सरकार भी यही चाहती हो मगर इस दिशा में अब तक कोई सार्थक प्रयास होता नहीं दीखता।

इसी दौरान 24 जनवरी 2009 को सीतामढ़ी जिले के डुमरा प्रखंड के राघोपुर बखरी गाँव में मुख्यमंत्री का जनता दरबार लगा था जिसमें रामपुर कंठ के ग्रामीणों ने अपनी मांग मुख्यमंत्री के सामने रखी थी (पावती संख्या 1301920017)। बताते हैं कि मुख्यमंत्री ने इस आशय का आश्वासन भी ग्रामीणों को दिया था कि उनका काम हो जायेगा। यह काम कितना पूरा हुआ उसकी पुष्टि इसी बात से हो जाती है कि 2 फरवरी 2010 के दिन गाँव वालों ने सीतामढ़ी के जिलाधिकारी को फिर एक आवेदन दिया जिसकी 8 में से 4 मांगे थीं,

''1. बागमती नदी कटाव से झील में तबदील पुनर्वासित जमीन की मिट्टी भराई का अधूरा काम अविलम्ब शुरू किया जाय।

2. कटाव पीड़ित 134 परिवारों को इन्दिरा आवास या मुख्यमंत्री आवास दिया जाय।

3. बागमती नदी के कटाव से पीड़ित परिवारों की धारा में ध्वस्त संपत्ति की क्षतिपूर्ति की जाए।

4. पेय जल के लिए चापाकल दिया जाय।''

जाहिर है लगभग ढाई साल की भाग-दौड़ और पंचायत के मुखिया से लेकर देश के प्रधानमंत्री तक हर दरवाजे पर दस्तक देने के बावजूद रामपुर कंठ के तटबन्ध और कटाव पीड़ित लोग वहीं हैं जहाँ वह 18 अगस्त 2007 की रात 9 बजे पहुँच गए थे। खुले आसमान के नीचे, आंधी-पानी, जाड़ा, बरसात और लू के बीच जहाँ हवा का एक झोंका उनकी झोपड़ी उड़ा ले जाने के लिए काफी है। दोपहर में तटबन्धों के बीच उड़ती हुई रेत उनकी जिजीविषा का इम्तहान लेती है। प्रशासन खुश है कि जनता कड़े से कड़ा इम्तहान पास कर लेती है, बरसात सिर पर है तो क्या हुआ? दुआ के हाथ तीन साल के बाद भी अगर ऊपर ही टँगे हुए हैं तो क्या हुआ?

रामपुर कंठ में जब बागमती का तटबन्ध 2007 में टूटा तब वहाँ के रहने वालों पर जो गुज़री या अभी तक गुज़र रही है उसकी थोड़ी सी जानकारी हमने पहले ली है पर इस दुर्घटना का एक दूसरा पहलू भी है और वह यह कि इसका जिम्मेवार कौन है? अपनी तरफ से तो गाँव वाले प्रायः उस हर मुमकिन जगह पर 29 जुलाई से गुहार लगाते रहे जहाँ से उनको उम्मीद थी कि कोई न कोई उनकी फरियाद जरूर सुनेगा मगर ऐसा हुआ नहीं और इस अवहेलना का नतीजा 18 अगस्त की शाम को आ गया। न सिर्फ ग्रामवासी वरन् स्थानीय समाचार पत्र भी इस बीच लगातार इस आशय की खबरें छापते रहे कि गाँव का वजूद खतरे में है पर किसी के कान पर जूँ नहीं रेंगी। जब तटबन्ध टूट गया तब स्थानीय प्रशासन और जल-संसाधन विभाग दोनों सावधान हुए। प्रशासन के लिए यह बहुत ही आसान है कि वह जल-संसाधन विभाग के अधिकारियों को दुर्घटना का जिम्मेवार ठहराने और उनके खिलाफ कानूनी कार्यवाही की सिफ़ारिश करे। सरसरी तौर पर देखने से यह उचित भी लगता है। जल-संसाधन विभाग भी अपनी अंदरूनी जाँच करवा कर आमतौर पर किसी छोटे तबके के अधिकारी या कर्मचारी पर इसकी जिम्मेवारी तय करता है और उसके खिलाफ कार्यवाही की सिफारिश करता है भले ही प्रशासन इस कार्यवाही से संतुष्ट हो या नहीं। यहाँ तक तो काग़जी घोड़े बड़े आराम से दौड़ते हैं मगर जैसे ही कोई कार्यवाही सचमुच करने की बात आती है तब कर्मचारियों और अफ़सरों के संघ सामने आ खड़े होते हैं कि अगर कोई कार्यवाही उनके किसी सदस्य पर होगी तो वह काम बन्द कर देंगे। तब प्रशासन भी अपना भविष्य सोच कर शांत हो जाता है क्योंकि इस तरह की आपात् स्थिति में इंजीनियर या दूसरे तकनीकी स्टाफ हड़ताल पर चले गए तो सारा गुड़ गोबर हो जायेगा। सरकार भी अपने अनुशासनात्मक कदम पीछे खींच लेती है और फिर सब कुछ आम दिनों जैसा हो जाता है।

रामपुर कंठ में जब तटबन्ध टूटा तब भी कुछ ऐसा ही हुआ था। 2007 में पूरे उत्तर बिहार में बाढ़ की स्थिति खराब थी और राज्य सरकार ने किसी भी आपात स्थिति से निबटने, व्यवस्था बनाये रखने के लिए और सुचारु रूप से राहत कार्य चलाये जाने के लिए हर प्रभावित जिले में एक विशेष जिलाधिकारी की नियुक्ति कर दी। इस साल बागमती के फेज-2 वाले तटबन्धों में पचनौर (15 जून), रमणी (28 जुलाई), खरहुआँ (27 जुलाई) और रामपुर कंठ (18 अगस्त) में चार जगहों पर दरारें पड़ीं। यह चारों जगहें सीतामढ़ी जिले में थी और कहा जाता है कि सीतामढ़ी के विशेष जिलाधिकारी की अनुशंसा पर सुप्पी के प्रखंड विकास पदाधिकारी श्री बाबू यादव ने लिखित रूप से प्रा०अभि०ई० ज्वाला प्रसाद, मुख्य अभियंता, जल-संसाधन विभाग, मुजफ्फरपुर के खिलाफ 28 अगस्त 2007 के दिन सीतामढ़ी थाना काण्ड संख्या 113/07 के माध्यम से भारतीय दंड विधान की धारा 187, 188, 269, 270, 288, 336, 491 और आपदा प्रबन्धन अधिनियम 56 के अधीन प्राथमिकी दायर की।[39] इस प्राथमिकी के बाद जो जांच हुई उसमें बागमती परियोजना–रीगा, जिला सीतामढ़ी के एक सहायक अभियंता को भा०द०वि० की धारा 187 और 288 के अंतर्गत दोषी पाया गया जबकि मुख्य अभियंता के विरुद्ध आरोपों की पुष्टि नहीं हो पायी और उन्हें इन अभियोगों से मुक्त कर दिया गया। सहायक अभियंता के विरुद्ध अंतिम प्रतिवेदन सं० 156/07 दिनांक 6 अक्टूबर 2007 को समर्पित किया गया और यह मामला माननीय न्यायालय में विचाराधीन है।[40]

सूचना के अधिकार के अधीन नागेन्द्र प्रसाद सिंह को दिये गए अपने उत्तर में अधीक्षण अभियंता, बाढ़ नियंत्रण योजना एवं मॉनिटरिंग अंचल, सिंचाई भवन, पटना ने स्पष्टीकरण दिया, ''नेपाल भाग से आने वाली नदियों में गाद के कारण बिहार भू-भाग में Meandering (घुमावदार बहाव) की स्वाभाविक प्रवृत्ति रहती है जिसके कारण तटबन्ध टूटते हैं। राज्य के सीमित संसाधनों के कारण सभी पूर्व निर्मित तटबन्धों

की अनिवार्य मरम्मती एक साथ संभव नहीं है। अत: राज्य सरकार द्वारा इस कार्य हेतु भारत सरकार से मदद प्राप्त करने की कार्यवाही की गयी है। इसके बावजूद यदि किसी स्थल पर टुटान पदाधिकारियों की लापरवाही से होता है तो नियमानुसार निगरानी शाखा, जल-संसाधन विभाग से कार्यवाही की जाती है।''[41]

इस पूरे मसले पर विभाग द्वारा जो 'नियमानुसार कार्यवाही' हुई उससे पता लगा, ''रामपुर कंठ के समीप तटबन्ध को ध्वस्त होने में तीन सप्ताह से अधिक का समय लगा। लगभग 90 मीटर की दूरी से कटाव करती बागमती की धारा तटबन्ध से महज दस मीटर की दूरी तक आ पहुँची थी। यह भी सच है कि इससे पूर्व बैम्बू पाइलिंग व एनसी क्रेटिंग के जरिये कटाव को रोकने की विभागीय कार्यवाही भी की गयी थी। बैम्बू पाइलिंग की नदी की तेज़ धारा में विलीन होते ही अभियंताओं ने अपने हाथ खड़े कर दिये। संबंधित कार्यपालक अभियंता ने स्थिति की गंभीरता को जानने के लिए कटाव स्थल तक जाना मुनासिब नहीं समझा। हद तो यह है कि नदी के द्वारा जारी खतरनाक कटाव के संबंध में तटबन्ध पर तैनात सहायक अभियंता की ओर से प्रेषित सूचना तक की परवाह नहीं की गयी। कार्यपालक अभियंता की नींद तब खुली जब तटबन्ध ध्वस्त हो चुका था।''[42] इस रिपोर्ट के आने के पहले ही सीतामढ़ी के जिलाधिकारी ने जल-संसाधन विभाग के प्रधान सचिव को बागमती प्रमंडल-1 के कार्यपालक अभियंता के निलंबन की सिफारिश कर दी थी।

इसके जवाब में बिहार अभियंत्रण सेवा के प्राय: सभी विभागों के चार हज़ार इंजीनियर 10 अक्टूबर 2007 को सामूहिक अवकाश पर चले गए। अपना नाम गोपनीय रखने की शर्त पर एक विभागीय इंजीनियर का कहना है, ''...2007 में बागमती का पूर्वी तटबन्ध कई जगह टूटा था और वहाँ जो स्पेशल डी०एम० आये उन्होंने विभाग के स्टाफ और कार्यपालक अभियन्ताओं पर डंडा चलाना शुरू किया कि दरार को जल्दी पाटो नहीं तो जेल भेज देंगे। सभी संबद्ध इंजीनियर भारी तनाव में थे। इस तरह की कार्य शैली से तो किसी भी इंजीनियर का नर्वस ब्रेक डाउन हो जायेगा या हार्ट फेल हो जायेगा। स्पेशल डी०एम० को यह पता ही नहीं था कि दरार तब तक नहीं पाटी जा सकती जब तक बाढ़ का पानी हट न जाए। तटबन्ध कोई पहली बार तो टूटा नहीं था। उसका तो टूटने का इतिहास रहा है। सरकार भी इस कमजोर बांध की सुरक्षा के प्रति चिन्तित थी। यही सब बातें जब स्पेशल डी०एम० को बताई गईं कि इंजीनियरों का मनोबल टूट जायेगा अगर उन पर इस तरह का दबाव बनाइयेगा तो उनको लगा होगा कि इंजीनियर उन्हें चैलेन्ज कर रहे हैं और इस पर उनकी नाराजगी थी। उन्होंने एफ०आइ०आर० करके पुलिस केस बना दिया तो पुलिस को जांच करनी पड़ी और उसने केस बन्द करवा दिया। बांध का समुचित रख-रखाव नहीं होगा, उसका स्लोप छीज जायेगा तो वह फिल्टर की तरह काम करने लगता है, उससे होकर पानी निकलने लगता है और वह टूटता है। अब रख-रखाव के लिए समय पर राशि ही उपलब्ध नहीं होगी तो कौन क्या कर लेगा? अगर तटबन्ध टूटने की वजह से इंजीनियर दोषी हो जाता है तो क्यों खून होने पर या दंगा होने पर प्रशासन अपने आप दोषी नहीं हो जाता है? उस पर भी प्राथमिकी होनी चाहिये और मुकद्दमें चलने चाहिये। आप किसी डॉक्टर को जेल भेजने की धमकी देकर अपने मरीज का सही इलाज नहीं करवा सकते और न ही किसी वकील को धमका कर अदालत में जिरह करवा सकते हैं।''

बहरहाल, अगर इंजीनियरों की गलती या लापरवाही से तटबन्ध टूट गया और इतने लोग बेघर हो गए और प्रशासन की लापरवाही और गलती से पिछले चार साल से वो दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं जबकि अपने जान-माल की सुरक्षा के लिए जनता ने न तो इंजीनियरों को न्यौता दिया था और न ही प्रशासन को तो लोग क्या करें? उन्होंने तो किसी न किसी को सरकार बना कर उनके हितों की रक्षा के लिए चुना था जो कि प्रशासन और जल-संसाधन विभाग को लोक-हित में नियंत्रित करता। अगर किसी को सबसे पहले कठघरे में खड़ा करना है तो यह राज्य सरकार के अलावा दूसरा कोई नहीं हो सकता। लोकतंत्र आम आदमी को यही ताकत देता है। आम जनता जिलाधिकारी या चीफ़ इंजीनियर की नियुक्ति नहीं करती पर अपने हितों की रक्षा के लिए सरकार चुनती है। जनता जब तक जागरूक होकर इस बात को नहीं समझेगी इस तरह की घटनायें होती रहेंगी।

सरकार शायद यह सोचती है कि जब योजना बनी थी तब इस गाँव के 90 परिवारों का उसने पुनर्वास कर दिया था और विस्थापितों के प्रति अपनी सारी जिम्मेवारियों से आजाद हो गयी। अब 134 परिवार फिर तैयार हो गए पुनर्वास लेने के लिए और यह सिलसिला कभी खत्म होने वाला तो है नहीं। तटबन्ध टूटता ही रहेगा और पुनर्वास की मांग उठती ही रहेगी। एक बार अगर किसी गाँव का किसी भी बहाने दुबारा पुनर्वास हो गया तो यह भूत और भविष्य दोनों के लिए मिसाल बन जायेगा। शायद इसीलिए एहतियात बरती जा रही हो कि मांगने वाले को इतना थका दो कि इस पूरी घटना को कुदरत का कहर मान ले और वह हार कर बैठ जाए।

जहाँ तक तटबन्ध और कटाव पीड़ितों का सवाल है उनको अगर पता होता कि जहाँ उन्हें पुनर्वास मिला है वहाँ तटबन्ध टूट कर उन्हें किसी भी वक्त तबाह कर सकता है तो वह पुनर्वास में आने के पहले दुबारा सोचते। उन्हें अगर यह भी पता होता कि तटबन्ध बनाना तो सरकार को आता है मगर उसे बचा कर रखना नहीं आता और अगर कोई अनिष्ट हो जाए तो उसकी जिम्मेंवारियों से पल्ला झाड़ लेना सरकारी दस्तूर होता है तो वह पुनर्वास में रहने की कभी नहीं सोचते। इन सवालों या समस्याओं का कोई सहज समाधान नहीं है सिवाय इसके कि जिम्मेवारियाँ तय हों और कानून अपना काम करे तथा उसका कुछ तो खौफ अमला तंत्र के अन्दर हो।

11.11 एक नज़र जीविका के मुख्य स्त्रोत खेती पर

तटबन्ध निर्माण का सर्वाधिक नुकसान खेती की ज़मीन को हुआ है चाहे वह तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन हो या तटबन्धों के बाहर। तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन नदी के धारा-परिवर्तन, कटाव और बालू के जमाव के कारण न सिर्फ बरबाद हुई वरन् रबी की फसल के लिए उसकी जो कुछ भी उपलब्धता होती हो वह संदिग्ध हुई है। अक्सर बालू की चपेट में आ जाने के कारण यहाँ पारम्परिक फसलों की उपज प्राय: समाप्त है। मीनापुर बलहा गाँव (प्रखंड पिपराही, जिला शिवहर) के रामाशिष का कहना है, '...भांग और धतूरा भी पैदा नहीं होता इस अन्दर वाली ज़मीन पर। पहले

दिल्ली-पंजाब लोग जानते नहीं थे, अब दिल्ली-पंजाब हमारी जरूरत हैं। बाहर से लोग पैसा न भेजें तो हमारे घरों में चूल्हा न जले।' जबकि इसी गाँव के महेश सहनी की व्यथा है, '...हमारा गाँव पूरा-पूरा तटबन्ध के अन्दर पड़ गया था। बाहर हमारी कोई जमीन नहीं थी, इसलिए पुनर्वास में आना पड़ गया। पुनर्वास मिला मगर कुछ लोग छूट गए जैसे धरमनाथ सहनी जो अभी भी बांध पर ही रहते हैं। अन्दर मेरी पाँच बीघा जमीन थी वह सब की सब नदी में चली गयी। अब जमीन के नाम पर मेरे पास कुछ भी नहीं है। अब मेरी जमीन पर से नदी कब हटेगी यह कौन जानता है? पहले अपनी जमीन पर मालिक की तरह रहते थे अब दूसरे की जमीन पर मजदूरी करते हैं क्योंकि परिवार को तो पालना ही पड़ेगा।'[43]

बालू पड़ी हुई ज़मीन जिस पर कभी धान की जबर्दस्त फसल होने के बाद रबी में गेहूँ, दलहन और तेलहन की फसल हो जाया करती थी, तटबन्ध बनने के बाद के कुछ वर्षों के लिए केवल रबी की फ़सल के लायक बच गयी। धीरे-धीरे जब बालू की परत मोटी होने लगी तब रबी भी समाप्त हो गयी। इसके बावजूद किसान कभी अपनी ज़मीन खाली नहीं छोड़ता है और वह ज़मीन में बीज डालता ही रहता है कि शायद कभी कुछ पैदा हो जाए। तटबन्धों के बीच यह सौदा अक्सर घाटे का होता है। इधर दो-तीन वर्षों से पूर्वी उत्तर प्रदेश के उन किसानों की नज़र इस इलाके पर पड़ी है जो बालू में तरबूज़, खरबूजा, फूट, खीरा और ककड़ी जैसी फसलें उगाने में महारत रखते हैं। यह लोग रैयत की ज़मीन 800 से 1000 रुपये बीघा के सालाना ठेके पर ले लेते हैं और अपनी उपज को स्थानीय या बाहरी बाज़ार में बेच देते हैं। इस व्यवस्था की वजह से कुछ किसानों को अब थोड़ी बहुत आमदनी होने लगी है। बराही जगदीश और खैरा पहाड़ी के किसानों को, जिन्होंने धान, उसके बाद गेहूँ और अब फूट-ककड़ी उपजाने की यात्रा तय की है इससे कुछ राहत मिली है।

बराही गाँव के सिया देव नारायण सिंह बताते हैं, ''...बागमती का पूर्वी तटबन्ध हमारे गाँव की जमीन पर ही है। बराही का पूरा रकबा ही 350 बीघे के आस-पास होगा। इसी में पुनर्वास भी है। 15-16 बीघा रकबा नदी ने काट दिया है। माधोपुर, इनरवा, खैरा पहाड़ी में बहुत तबाही है। जमीन पर बालू पड़ा हुआ है। बाहर मेरी 5-6 एकड़ जमीन थी और सरकार उसका भी अधिग्रहण करना चाहती थी। हमने मुकद्दमा किया। बड़ा दबाव पड़ा कि पैसा ले लीजिये और जमीन छोड़ दीजिये। हमारा कहना था कि पैसा तो चार दिन में खतम हो जायेगा मगर जमीन रहेगी तो बाल-बच्चा मेहनत करके हमेशा जियेगा, खायेगा। हमने अपनी ज़मीन नहीं दी। खैरा पहाड़ी तो पूरा का पूरा तटबन्ध के अन्दर पड़ने वाला था मगर इसी गाँव के महादेव झा के प्रयास से तटबन्ध का अलाइनमेन्ट बदला और गाँव तटबन्ध के बाहर आया। महादेव झा रिजर्व बैंक में बहुत बड़े अफसर थे और इसी गाँव के थे। दूसरे को अपनी ज़मीन पर फूट-ककड़ी उगाते देखना अब हमारी नियति है।'[44]

उधर तटबन्धों के अन्दर अदौरी की ज़मीन पर फूट और ककड़ी भी नहीं होती। अदौरी वह गाँव है जहाँ 1963 में डॉ० के० एल० राव अपने बागमती भ्रमण के क्रम में केन्द्रीय सिंचाई मंत्री बनने के बाद आये थे और गाँव वालों के अनुसार बागमती नदी पर तटबन्धों का निर्माण न किये जाने की बात की थी। तटबन्ध बनने से इस गाँव का जो हश्र हुआ उसे बताते हैं इसी गाँव के अजीत कुमार सिंह जिनका कहना है, ''...हमारे गाँव में जिसकी 5 एकड़, 10 एकड़ या 25 एकड़ जमीन है वह ज्यादातर बांध के अन्दर है जहाँ नदी अपनी मरजी के मुताबिक घूमती है। उस जमीन से हमें कुछ मिलता नहीं है। वहाँ एक एकड़ और बीस एकड़ वाले की हैसियत बराबर है। सरकार हमें उस जमीन का न्याय संगत मुआवजा दे दे और फिर उस जमीन का अपनी

बागमती परियोजना-पुनर्वास के नाम पर इतना ही मिला

मरजी से उपयोग करे। हम भी कोई अपना रास्ता खोज लेंगे। मालगुजारी बिलकुल माफ होनी चाहिये। दिक्कत यह है कि जब यह सब देखने वाला कोई बाहर से आता है तो उसको हमारी तकलीफों से कोई वास्ता ही नहीं होता है। वह अपनी समझ के हिसाब से अपनी राय बनाता है और बाकी लोगों को बताता है। वह लोग इसे पॉलिटिकल स्टन्ट भी बना सकते हैं। इससे हमारा भला तो नहीं होने वाला। 1985 में हम लोग छात्र थे और रामदुलारी सिन्हा को मेमोरण्डम दिया था कि हम लोगों की समुचित व्यवस्था की जाए। नदी तो हमारी तरफ थी ही नहीं, यहाँ तो यह बाद में आयी। थोड़ी बहुत कुर्बानी हम जन-हित में अपने भाई-बन्धुओं के लिए देने को हमेशा तैयार रहते हैं। मगर यह काम हमें उजाड़ कर तो नहीं होना चाहिये।''[45] यह बड़े अफसोस की बात है कि जिस जमीन पर 'भांग और धतूरा' भी नहीं उगता उसके लिए किसानों को मालगुजारी देनी पड़ती है। इस प्रश्न को एक बार रघुवंश प्रसाद सिंह ने बिहार विधान सभा में उठाया था जिसके जवाब में सरकार ने कहा था, ''...अनुमंडल पदाधिकारी-सीतामढ़ी की जांच के आधार पर यह पाया गया है कि बागमती नदी के तटबन्धों के बीच की जमीन उपजाऊ है। प्रतिवर्ष बाढ़ में नदी उपजाऊ मिट्टी भर देती है। बाढ़ से खरीफ की फसल की क्षति होती है तो इसकी पूर्ति रबी की फसल में हो जाती है। अतः लगान एवं सेस माफ करने का प्रश्न नहीं उठता।''[46] जनता द्वारा चुनी हुई संस्थाएं वह आखिरी दरवाजा होती है जिस पर आम आदमी दस्तक दे सकता है। जब उसका यह हाल है तो फिर कोई उम्मीद कहाँ बचती है?

11.12 पुनर्वास का तीसरा दौर–रुन्नी सैदपुर से हायाघाट

ढेंग से रुन्नी सैदपुर तक का तटबन्ध वास्तव में इस प्रखंड के शिवनगर गाँव में समाप्त होता है पर प्रचलन में रुन्नी सैदपुर नाम ही रहता है। रुन्नी और सैदपुर भी जुड़वाँ गांवों के नाम हैं। कटौंझा से, जहाँ बागमती की वर्तमान धारा मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग (एन०एच० 77) को पार करती है, रुन्नी की दूरी प्रायः 3 किलोमीटर उत्तर में है और रुन्नी से 1.5 किलोमीटर के फासले पर सैदपुर बाजार पड़ता है। लखनदेई इसी स्थान पर मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग को पार करती है। कटौंझा से प्रायः दो-ढाई किलोमीटर उत्तर-पश्चिम दिशा में बागमती के बायें किनारे पर शिवनगर और दाहिने किनारे पर तिलकताजपुर गाँव पड़ता है। बागमती के जिस तटबन्ध को ढेंग-रुन्नी सैदपुर तटबन्ध कहा जाता है, वह इन्हीं गाँवों में समाप्त हो जाता था। यहाँ से नदी का दाहिना किनारा आगे सोरमार हाट तक और बायाँ किनारा हायाघाट तक 2006 पर्यन्त मुक्त रहा करता था।

व्यावहारिक दृष्टि से यह बड़ी ही विचित्र स्थिति थी। नदी के भारतीय भाग के ऊपरी हिस्से में लगभग 60 किलोमीटर की लम्बाई में दोनों ओर तटबन्ध बने हुए हैं और तकनीकी तौर पर नदी इन दोनों तटबन्धों के बीच सीमाबद्ध है। नदी के निचले हिस्से में सोरमार हाट से बदलाघाट तक 145 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध दाहिनी तरफ और हायाघाट से फुहिया के बीच 72 किलोमीटर लम्बे तटबन्ध बायीं तरफ बने हुए हैं और बीच की लगभग 60 किलोमीटर लम्बाई पूरी तरह से खुली हुई है। जिस किसी व्यक्ति ने भी यह योजना बनाई हो और जिस किसी ने भी उसकी स्वीकृति दी हो उसे इतनी अक्ल तो जरूर रही होगी कि अगर बागमती जैसी नदी को तटबन्धों में बांध कर मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग के सामने ला कर छोड़ दिया जायेगा तो वह पहला काम यह करेगी कि बरसात के मौसम में इस सड़क की धज्जियाँ उड़ा कर रख देगी। 1975 के बाद से बागमती ने कभी भी ऐसा मौका नहीं गवाँया। यहाँ से नदी का पानी बुलेट की तरह निकलता है और हर साल मुजफ्फरपुर के औराई, कटरा तथा गायघाट प्रखंडों को डुबाता हुआ दरभंगा जिले के सिंघवारा प्रखंड होते हुए हनुमान नगर प्रखंड में प्रवेश करता है और रास्ते में पड़ने वाले सारे गाँवों को डुबाता है। हायाघाट के नीचे बागमती के तटबन्धों के बीच का फासला 800 मीटर से एक किलोमीटर है जबकि शिवनगर और तिलक ताजपुर के पास यही दूरी तीन किलोमीटर है। सभी दिशाओं में फैला हुआ बागमती का यह पानी हायाघाट से नीचे अपने 1956-58 के बीच बने तटबन्ध में होकर कैसे बहेगा और कितना बहेगा? इसी के परिणाम में निचले क्षेत्रों में जल-निकासी की भीषण समस्या तथा मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग के पूरब तथा मुजफ्फरपुर-दरभंगा मार्ग के दोनों तरफ भयंकर बाढ़ की स्थिति रहती है। इन्हीं दोनों विपत्तियों से निबटने के लिए, जिसकी अकेली वजह अदूरदर्शिता है, सम्भवतः राज्य सरकार बागमती तटबन्धों को रुन्नी सैदपुर से आगे बढ़ा कर हायाघाट ले जाना चाहती थी।

2006 के अन्त में बिहार में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन (राजग) की सरकार बनी और तब पिछले 16 वर्षों से तटबन्धों के निर्माण में जो सन्नाटा छाया हुआ था, उसमें कुछ गति आयी यद्यपि योजनाओं के प्रस्ताव, उन पर विचार और उनकी स्वीकृति की प्रक्रिया पहले से चल रही थी। बागमती परियोजना का जो काम 1980 के आस-पास रुक सा गया था वह फिर शुरू हुआ। यह तय हुआ कि 792 करोड़ रुपयों की लागत से बागमती का वह हिस्सा जो खुला हुआ था उसे शिवनगर से हायाघाट के बीच में बांध दिया जायेगा और ऐसा कर के नदी के दोनों किनारों पर बसे क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षित कर दिया जायेगा। इसके साथ ही एक लम्बे समय से तटबन्धों के रख-रखाव, उन्हें ऊँचा और मजबूत करने का और उनकी सुरक्षा बढ़ाने का जो काम रुका हुआ था, उस पर हाथ लगा।

हम पहले बता आये हैं कि इस काम की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट तैयार करने का काम हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कन्सट्रक्शन कम्पनी नाम के भारत सरकार के एक संस्थान ने किया था। योजना के अनुसार अगर तटबन्ध आगे बढ़ता है तो उसमें नये-नये गाँव बीच में फंसेंगे। इन गाँवों का पुनर्वास करना पड़ेगा, यह तय था। बागमती परियोजना के पिछली दो पुनर्वास प्रक्रियाओं के बारे में फिलहाल हम जानते हैं। 1980 से लेकर अब तक के 25-30 वर्षों में नदी घाटी योजनाओं में पुनर्वास और पर्यावरण पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों को लेकर देश में बहुत से आन्दोलन हुए। नर्मदा घाटी के बांधों, उत्तराखण्ड के टिहरी बांध तथा झारखण्ड की सुवर्णरेखा परियोजना आदि में विस्थापितों के पुनर्वास को लेकर हुए संघर्षों पर राष्ट्रव्यापी बहस हुई जिसका कुछ लाभ विस्थापितों को मिला। यह आन्दोलन अगर न हुए होते तो सरकार शायद वहाँ भी पुनर्वास की खानापूरी उसी तरह करती जैसा कि उसने उत्तर बिहार की बाढ़ नियंत्रण की योजनाओं में किया था। यहाँ पहली बार तो समाज और देश के व्यापक हित में कुर्बानी देने का जज़्बा उभार कर पुनर्वास की समस्या को निबटा दिया गया लेकिन 1970 के आस-पास के दूसरे

दौर में घर बनाने के लिए जमीन दी गयी मगर घर बनाने के नाम पर केवल ढुलाई शुल्क देकर विस्थापितों को चलता किया गया। इस घनी आबादी वाले इलाके में खेती की जमीन के बदले जमीन न तो मौजूद थी, न दी जा सकती थी और न दी गयी। राजनीतिज्ञों और इंजीनियरों ने यह मान लिया कि जब किसानों की खेती की जमीन तटबन्धों के बीच कैद हो जायेगी तब भी उस पर उसी तरह गाद जमा होगी जैसा पहले होती थी और उसकी उर्वरता कायम रहेगी और वहाँ किसी किस्म की सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ेगी। तटबन्धों के बाहर पड़ने वाली जमीन पर कभी बाढ़ नहीं आयेगी, इसलिए वहाँ भी राम-राज्य उतर आयेगा। बालू से बने तटबन्ध टूट भी सकते हैं, यह बात सरकार और उसके इंजीनियर तटबन्ध टूट जाने के बाद भी कबूल करने में काफी समय लेते हैं और इसलिए इसके बारे में योजना क्रियान्वित होने के पहले कौन और क्यों सोचता? ऐसा न होना था और न हुआ। बाद के वर्षों में यह सारी पूर्व कल्पनाएं थोथी और नाकारा साबित हुईं।

पुनर्वास के मुद्दे पर कोसी परियोजना में परमेश्वर कुअँर, बैद्यनाथ मेहता, शोभा कान्त झा और बहादुर खान शर्मा जैसे दिग्गज लोग पहले ही थक कर बैठ चुके थे यद्यपि उन्हें सरकार से थोड़ी बहुत रियायतें पाने में जरूर सफलता मिली थी। बागमती परियोजना में उस तरह के नेतृत्व का सर्वथा अभाव था और इसलिए यहाँ वैसा कोई संघर्ष भी नहीं हुआ।

इस पृष्ठभूमि में ही तीसरे दौर के तटबन्धों का निर्माण शुरू होता है। दूसरे और तीसरे दौर की इस निर्माण प्रक्रिया में करीब 25 वर्ष का फासला था। इस बीच तटबन्धों का पर्यावरण पर प्रभाव भी जाहिर हो चुका था।

जहाँ तक तटबन्धों के निर्माण से पर्यावरण पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव का प्रश्न है तो उसकी एक सूरत बनती थी कि कम से कम अब योजना शुरू होने के पहले इस दु:ष्प्रभाव का अध्ययन हुआ होता और तटबन्धों से नकारात्मक रूप से प्रभावित होने वाले लोगों को जन-सुनवाई के माध्यम से अपनी बात रखने का, भले ही सरकार उन सुझावों का संज्ञान लेती या नहीं और उन पर अनुकूल प्रतिक्रिया करती या नहीं, एक मौका मिलता। दुर्भाग्यवश 14 सितम्बर 2006 के दिन जो नया पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन कानून (एनवरायनमेन्टल इम्पैक्ट असेसमेन्ट ऐक्ट 2006) प्रभावी हुआ उसमें अब तक चली आ रही बाढ़ नियंत्रण परियोजनाओं के मूल्यांकन का प्रावधान वापस ले लिया गया और आम जनता का अपनी बात कहने का वह रास्ता भी बन्द हो गया। अब सरकार को खुली छूट है कि वह बाढ़ नियंत्रण की इस योजना पर किसी बहस से बच निकले और अपनी मनमानी करे। अब जो होना है वह यह कि शिवनगर से हायाघाट तक न सिर्फ नदी तटबन्धों के बीच कैद होगी बल्कि उसमें बहुत से नये-नये गाँव फंसेंगे। भविष्य में इन गाँवों की वही हालत होगी जैसा कि आज डुमरा, इब्राहिमपुर, मौलानगर या रक्सिया आदि गाँवों की है। जो लोग पुनर्वास पायेंगे और वहाँ रहने के लिए जायेंगे उनकी स्थिति मसहा आलम, रामपुर कंठ, अखता, कन्सार या रक्सिया से किसी भी मायने में अलग होगी यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता। रघुनाथ झा ने एक बार बिहार विधान सभा में 9 जून 1972 के दिन सरकार से पूछा था कि 'क्या सरकार को मालुम है कि पहाड़पुर, रोहुआ, कनुआनी, कटसरी, अम्बा, बेलवा, चक-फतेहा, माधोपुर, दोस्तिया, पकड़ी, कुम्मा, बनबीर, नारायणपुर, छतौना एवं धनकौल गाँव पर बागमती का कटाव हर साल होता है।' इसके जवाब में सरकार का कहना था कि प्रस्तावित बागमती बाढ़ नियंत्रण योजना के समापन के पश्चात नदी की बदलती धारा प्रवृत्ति पर नियंत्रण पा लिया जा सकेगा और उपर्युक्त गाँव की मुख्य आबादी जो तटबन्ध के बाहर पड़ती है, की बाढ़ से मुक्ति मिल जायेगी। सरकार की इस तरह की बातें लोग बहुधा मान लेते हैं क्योंकि सरकार के प्रचार तंत्र ने यह झूठ परोस दिया हुआ है कि अन्य जगहों में ऐसे पुनर्वासित लोग बड़े आराम से रह रहे हैं। इस मिथ्या प्रचार में ठेकेदार भी सरकार के सहयोग करते हैं और दुर्भाग्य से मिडिया भी।

11.12.1 दस्तूर का पाबन्द जल-संसाधन विभाग–पहले योजना पर काम, बाद में पुनर्वास–इतना कह लेने के बाद हम तीसरे दौर के पुनर्वास के बारे में चर्चा करते हैं। जैसे ही बागमती नदी पर रुन्नी सैदपुर से हायाघाट तक तटबन्धों का निर्माण शुरू हुआ, पुनर्वास की बात उठी। शुरुआती दौर में 2007 में ही यह तय हो गया था कि बड़ी संख्या में परिवार विस्थापित होंगे और उनके पुनर्वास के लिए सरकार को कुछ न कुछ व्यवस्था करनी पड़ेगी। यहाँ यह बता देना जरूरी है कि तटबन्धों के विस्तार का काम दिसम्बर 2006 में शुरू हो गया था और फरवरी 2007 में तटबन्ध एन०एच० 77 को पार करके जनार और कटौंझा तक आ पहुँचा था लेकिन 19 फरवरी 2007 को राज्य के राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग ने एक नई पुनर्वास नीति की घोषणा की। इस नीति के अनुसार राज्य के जल-संसाधन विभाग का कहना था, ''...जब बाढ़ नियंत्रण हेतु बांधों/तटबन्धों का निर्माण कराया गया है तो दोनों तरफ तटबन्धों के बीच नदी और जलधारा का स्तर काफी ऊँचा हो जाता है तथा दोनों बांधों के बीच धारा उच्च वेग से प्रवाहित होती है। फलस्वरूप पानी का स्तर बढ़ जाने के कारण दोनों तटबन्धों के बीच स्थित बस्तियाँ जलमग्न हो जाती हैं। इस कारणवश बस्तियों को बांध से बाहर समुचित स्थल पर पुनर्वासित करना आवश्यक हो जाता है। ऐसा पाया गया है कि पुनर्वास के उपरान्त भी भू-धारी मकान को खाली नहीं करते हैं तथा उसी में आवास बनाये रखते हैं। फलत: वर्षा में बाढ़ के दौरान खतरे की स्थिति उत्पन्न होने पर उन्हें बचाने के लिए कार्यवाही करनी पड़ती है। बागमती नदी के तटबन्धों के प्रस्तावित विस्तार के कारण विस्तारित तटबन्धों के बीच आवासित परिवारों को पुनर्वासित करने के लिए निर्णय लिया गया है कि प्रशासनिक स्वीकृति के दिन जो भूमि बासगीत उपयोग में होगी उसका अर्जन कर लिया जायेगा। अत: बासगीत भूमि धारकों को नयी भू-अर्जन नीति (राजस्व एवं भूमि सुधार विभागीय ज्ञापांक 15 डी०एल०ए० नीति (पुनर्वास) 07/06/395 दिनांक 19.02.2007 द्वारा निर्गत) के अनुसार भूमि, मकान आदि के लिए मुआवजा तथा अन्य लाभ देय होगा। बांधों के बीच कृषि में प्रयुक्त भूमि का अर्जन नहीं किया जायेगा। अत: इस पर भू-स्वामी का आधिपत्य बना रहेगा तथा इसके लिए कोई मुआवजा या भुगतान देय नहीं होगा। ...यह आदेश तत्काल प्रभाव से लागू होगा।''

इस ज्ञापन के साथ राज्य के जल-संसाधन विभाग ने एक विस्तृत विवरण भी सम्बद्ध अधिकारियों को भेजा जिसका आंशिक विवरण नीचे दिया जा रहा है;

1 ''भूमि का मूल्य निर्धारण

1.1 वर्तमान प्रावधान के अनुसार अर्जित की जाने वाली भूमि

का मूल्य निर्धारण भू-अर्जन हेतु धारा 4 की अधिसूचना के तुरन्त पहले समरूप भूमि के निबन्धन मूल्य के आधार पर किया जाता है। सरकार का निर्णय है कि इस मूल्य पर 50 प्रतिशत जोड़ कर अर्जित की जाने वाली भूमि का मूल्य तय किया जायेगा।

1.2 इस तरह निर्धारित मूल्य पर 30 प्रतिशत सोलेशियम देकर भू-अर्जन किया जायगा। लेकिन जहाँ भूधारी स्वेच्छा से भूमि देना चाहे, उस स्थिति में सोलेशियम की दर 60 प्रतिशत होगी।

उदाहरण :

(1) नई नीति लागू होने के पूर्व दर निर्धारण की प्रक्रिया–भूमि का दर 1.00 लाख रुपये प्रति एकड़ है तो देय राशि : 1.00 लाख रुपये एवं 30 प्रतिशत सोलेशियम यानि 30 हजार रुपये कुल 1,30,000/- (एक लाख तीस हजार रुपये) देय था।

(2) नई नीति लागू होने के पश्चात् दर का निर्धारण :

(क) **सामान्य प्रक्रिया–**भूमि का दर 1.00 लाख रुपये प्रति एकड़ है तो देय राशि 1.00 लाख रुपया पर 50 प्रतिशत राशि जोड़ी जाएगी यानी अब कुल राशि 1,50,000/- रुपये होगी। सामान्य स्थिति में 1,50,000/- रुपये पर 30 प्रतिशत सालेशियम यानी 45 हजार रुपये, कुल 1,95,000/- रुपया (एक लाख पचानबे हजार रुपये) देय होगा। इस प्रकार पूर्व में जहाँ 1,30,000/- रुपये की राशि देय होती, अब 1,95,000/- रुपये की राशि देय होगी।

(ख) **स्वेच्छा से भूमि देने पर–**भूमि का दर 1.00 लाख रुपये प्रति एकड़ है तो देय राशि 1.00 लाख रुपया पर 50 प्रतिशत राशि जोड़ दी जाएगी, यानी अब कुल राशि 1,50,000- रुपये होगी। भूधारी द्वारा स्वेच्छा से भूमि देने पर 1,50,000/- रुपये पर 60 प्रतिशत सोलेशियम यानी 90,000/- हजार रुपये, कुल 2,40,000/- (दो लाख चालिस हजार रुपये) देय होगा। इस प्रकार पूर्व में जहाँ 1,30,000/- रुपये की राशि देय होती, अब स्वेच्छा से भूमि देने की स्थिति में 2,40,000/- रुपये देय होगी।

2. आवासीय भूमि की अधिग्रहण देयता

2.1 भू-अर्जन की प्रक्रिया के अन्तर्गत यदि किसी भूधारी का आवास या आवासीय भूमि का अधिग्रहण किया जाता है तो आवासीय भूमि का जितना रकबा अधिगृहित किया जाता है, उतनी ही भूमि, अधिकतम 5 डि० आवासीय उद्देश्य हेतु अधिगृहित कर उस व्यक्ति को दी जायेगी।

2.2 अस्थायी आवास हेतु सहायता–प्रत्येक भूधारी, जिसकी आवासीय भूमि अधिगृहित की गयी हो, को अस्थायी आवास हेतु 10,000/- (दस हजार रुपये) एकमुश्त राशि सहायता स्वरूप दी जायेगी।

2.3 परिवहन सहायता–जिस भूधारी का आवासीय स्थल अधिगृहित किया गया है उसे रु० 5,000/- (पाँच हजार रुपये) अपने आवासीय सामग्रियों के परिवहन हेतु सहायता स्वरूप दिया जायेगा।

3. विस्थापित कृषक मजदूर को देयता

3.1 विस्थापित कृषक मजदूर जो दूसरे भूधारी के कृषि योग्य भूमि, जिसका अधिग्रहण किया गया है, पर विगत कम से कम 3 वर्षों से कार्य कर जीविका चलाते थे और बेरोजगार हो गए उन्हें 200 दिनों का सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी एकमुश्त एवं राष्ट्रीय/राज्य रोजगार गारंटी योजना के तहत जॉब कार्ड देय होगा।''[47]

राज्य सरकार की इस पुनर्वास नीति में इतना तो जरूर हुआ कि तटबन्धों के अन्दर बने घर के एवज में उसकी मालियत के अनुरूप मुआवजे के भुगतान का संकल्प लिया गया, घर के जरूरी और चलायमान सम्पत्ति को नये आवास में ले जाने के लिए अनुदान की व्यवस्था हुई और इन गाँवों पर आश्रित बेरोजगार हुए मजदूरों के वास्ते कुछ दिनों के लिए रोजगार की व्यवस्था करने का प्रस्ताव किया गया।

जो नहीं हुआ वह यह कि खेती की जमीन तटबन्धों के बीच ही फंसी रह गयी और यह भविष्य में उसी गति को प्राप्त होगी जैसी मीनापुर बलहा, अदौरी, खैरा पहाड़ी, डुमरा या बराही जगदीश की जमीन की हुई थी। जिन मजदूरों की रिहाइशी जमीन अपनी नहीं थी और वह मालिकों की जमीन पर घर बना कर रह रहे थे वह पुनर्वास से बेदखल हो गए। गृह निर्माण के लिए दी जाने वाली ज़मीन की सीमा 5 डेसिमल तय कर दी गयी। पुनर्वास की नीति तो तैयार हो गयी मगर उसमें वर्णित कार्यवाही के नाम पर कहीं कोई सुन-गुन नहीं थी। नतीजा यह हुआ कि जब मार्च 2007 के महीनें में तटबन्ध बेनीपुर की सीमा पर दस्तक देने लगा तब वहाँ के बाशिन्दों के कान खड़े हुए। बेनीपुर इस क्षेत्र के ख्यातिलब्ध साहित्यकार रामबृक्ष बेनीपुरी का गाँव है और यह पूरा का पूरा गाँव तटबन्धों की भेंट चढ़ जाने वाला था। अपनी साहित्यिक और राजनैतिक उपलब्धियों के इतर बेनीपुरी जी को इस बात का श्रेय भी जाता है कि वह 1936 में गाँधी जी को यहाँ पास के गाँव भरथुआ में लाने में सफल हुए थे और उन्हीं के प्रयासों से भरथुआ चौर के पानी का निस्सरण हो सका था। इस गाँव में अभी भी रामबृक्ष बेनीपुरी का एक अच्छा खासा मकान है यद्यपि वहाँ रहने वाला अब कोई बचा नहीं है। उनके जन्मदिन 23 दिसम्बर पर वहाँ जरूर साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम अभी भी होते हैं। यह गाँव और यह घर अब बागमती के थपेड़ों से कब तक बचा रहेगा और कब तक यह कार्यक्रम अपने मूल स्थान पर हो पायेगा यह तो भविष्य ही बतायेगा।

11.12.2 बेनीपुर की जल समाधि–मार्च 2007 खत्म होते न होते बेनीपुर में तटबन्ध का काम शुरू हो गया। गाँव वालों की चिन्ता थी कि बिना उनका पुनर्वास किये तटबन्ध आगे बढ़ता है तो बरसात में गाँव पानी में फंस जायेगा और उनका जीना दूभर हो जायेगा। अप्रैल 2007 को इन लोगों ने स्थानीय जूनियर इंजीनियर से लेकर राज्य के मुख्यमंत्री तक सबको अपनी स्थिति के बारे में लिखा। जब कोई हाल पूछने वाला नहीं हुआ तब यह लोग विरोध स्वरूप बांध पर ही धरने पर बैठ गए। यह लोग तटबन्ध निर्माण के पहले पुनर्वास चाहते थे। इनकी मदद के लिए आस-पास के उन गाँवों के लोग भी धरने में शामिल हो गए जो तटबन्धों के बीच फंसने वाले थे। इस धरने का संज्ञान सरकार की किसी संस्था या व्यक्ति ने तभी लिया जब ठेकेदारों को काम रुकने से नुकसान होने लगा और तभी विभागीय इंजीनियरों ने तीन महीनें के अन्दर सारी

तटबंधों के बीच रामबृक्ष बेनीपुरी का घर और वहाँ लगी उनकी प्रतिमा-कुछ भी नहीं रहेगा।

व्यवस्था दुरुस्त कर देने का आश्वासन दिया। यह मामला भू-अर्जन से संबन्धित था और पता नहीं इंजीनियरों को ऐसा आश्वासन देने की क्षमता थी भी या नहीं। इस बीच बरसात का मौसम आकर चला गया। बेनीपुर के घर-घर में पानी घुसा और एक से दो फुट तक मिट्टी भर गयी। रामबृक्ष बेनीपुरी का घर भी इससे अछूता नहीं बचा और 2007 दिसम्बर में उनका जन्मदिन समारोह मनाने के लिए घर के फर्श के ऊपर बैठी एक फुट मिट्टी को हटाना पड़ गया था। इस साल गाँव की पूरी अगहनी फसल को नदी ने धो दिया और रबी के मौसम में गाँव वालों के पास न पूंजी थी और न सूखी जमीन जिस पर वह खेती कर सकें। सरकार ने भले ही आश्वासन दे रखा हो कि तीन महीनें के अन्दर पुनर्वास का कार्यक्रम हर तरह से पूरा कर लिया जायेगा। तीन महीनें में जो हुआ वह सिर्फ इतना ही था कि जुलाई 2007 में सरकार की तरफ से बिहार के अखबारों में बिहार सरकार के जल संसाधन विभाग के प्रधान सचिव द्वारा एक विज्ञापन दिया गया, ''...नई भू-अर्जन पुनःस्थापन एवं पुनर्वास नीति 2007 दिनांक 19.02.2007 से बिहार राज्य में लागू है। इस नीति के अन्तर्गत भूमि का मूल्य तय किया जायेगा। इस मूल्य पर सामान्य प्रक्रिया अंतर्गत 30 प्रतिशत सोलेशियम दिया जायेगा। लेकिन स्वेच्छा से भू-धारी द्वारा भूमि देने पर सोलेशियम की राशि 60 प्रतिशत यानी 30 प्रतिशत ज्यादा होगी... अतः भू-धारियों से अपील है कि भू-अर्जन अधिनियम की धारा-4 (अधिसूचना) के पूर्व भूमि का पूर्ण ब्यौरा देते हुए अपनी सहमति सम्बन्धी शपथ पत्र संबन्धित विशेष भू-अर्जन पदाधिकारी को दे दें ताकि उन्हें 60 प्रतिशत सोलेशियम दिया जा सके।''[47] इस तरह से फरवरी 2007 में बनी नई पुनर्वास नीति को फाइलों से अखबार तक पहुँचने में लगभग 5 महीनें का समय लग गया और नये तटबन्धों के बीच फंसे-जीवाजोर, बेनीपुर और भरथुआ जैसे गाँवों की एक बरसात उनके छप्परों, छतों और तटबन्ध पर बीत गयी। अब इन लोगों को जाड़े के मौसम में होने वाली परेशानियों का इन्तजार था।

3 दिसम्बर 2007 को बेनीपुर निवासियों ने एक बार फिर सारे सम्बद्ध अधिकारियों और मंत्रियों को चेताया कि अगर उनके पुनर्वास के लिए कुछ नहीं किया जाता है तो वह लोग निर्माणाधीन बांध पर तो धरना देंगे ही, 15 दिसम्बर 2007 से एन०एच० 77 को भी जाम करेंगे। इस पत्र के जवाब में ठेकेदारों के स्थानीय गुण्डे धरना स्थल पर आये और धरनार्थियों की दरी, तिरपाल आदि को उठा कर फेंक दिया और उनके बैनर आदि फाड़ दिये। गाँव वालों का अभी भी यही कहना था कि उनका विरोध तटबन्ध के निर्माण से नहीं है, उनकी मांग अपने पुनर्वास की है। इस तरह का विरोध धीरे-धीरे दूसरी जगहों पर भी पनपने लगा था और सरकार ने यह तय किया कि तटबन्ध का काम उन जगहों पर रोक दिया जाए जहाँ उनका विरोध हो रहा है। जहाँ विरोध केवल नाम मात्र का है या क्षीण है वहाँ तटबन्ध का निर्माण चालू रखा जाए। ऐसा करने से विरोध करने वाले भी थक हार कर बैठ जायेंगे और निर्माण कार्य भी बदस्तूर चलता रहेगा।

उसके बाद की अद्यतन घटनाओं के बारे में बताते हैं पुनर्वास संघर्ष समिति, बेनीपुर के संयोजक रजत सिंह। उनका कहना है, ''...जीवाजोर और बेनीपुर के पुनर्वास के लिए अभी तक कुछ नहीं हुआ है। घरों की नाप-जोख 3-4 बार हुई। बिल्डिंग वाले (पी०डब्लू०डी०) भी जाकर देख कर आये । हम लोग विशेष भू-अर्जन कार्यालय में गए रतवारा। उनका कहना था कि अभी तक बिल्डिंग वालों के यहाँ से फाइल नहीं आयी है। जन-स्वास्थ्य विभाग के यहाँ से चापाकल के बारे में कोई खबर नहीं आयी है। पेड़-पौधों का मूल्यांकन वन विभाग वाले करेंगे। जिलाधीश के यहाँ भी हम लोग गए थे। वहाँ बात हुई कि रिहाइश वाली जमीन को विकसित करके हम लोगों को दिया जायेगा मगर अभी तक कुछ हुआ नहीं है। हम लोग वहीं पुरानी जगह पर ही गाँव में डूब-भस कर के जी रहे हैं। चार साल होने को आये हमें उजड़ने का संदेश मिले हुए मगर कहीं कोई सुनवाई नहीं है। हमारी फाइलें तो

रजत सिंह

अलग-अलग विभागों में घूम रही हैं और उधर तीन साल से नदी हमारे गाँव में घूम रही है मगर सरकार के यहाँ किसी को कोई जल्दी नहीं है। हमारी हालत अब यह है कि हम चारों तरफ से पानी से घिर गए हैं और भागने का भी रास्ता नहीं बचा है। सरकार का वह कानून कहाँ गया कि पुनर्वास पहले होगा योजना बनने से पहले और विस्थापितों को पहले से ज्यादा सुविधा मिलेगी क्योंकि वह लोकहित में अपनी कुर्बानी दे रहे हैं?''[48]

11.12.3 अनिश्चित भविष्य लिए हुए भरथुआ–बेनीपुर के बगल का गाँव है भरथुआ और यह भी बागमती के नये तटबन्धों के बीच फंसा हुआ एक गाँव है। यह एक बहुत ही प्राचीन गाँव हैं। कहते हैं कि राजा भतृहरि को जब वैराग्य हो गया तब वह यहीं के जंगलों में आकर रहने लगे थे और वैराग्यशतकम् की रचना उन्होंने यहीं रहते हुए की थी। यहीं पास में पंचभिखा (पंचभिण्डा) नाम का एक डीह है। कहते हैं कि भतृहरि ने यहीं डेरा-डण्डा डाला, तपस्या की और वैराग्यशतकम् लिखा। अगर यह सच है तो इस गाँव का नाम पहले कभी भतृहरि आश्रम या भतृहरि ग्राम रहा होगा जो कि अपभ्रंश होते-होते भरथुआ हो गया।

यहाँ के बाशिन्दे बताते हैं कि यह इलाका पहले जंगल था और दरभंगा महाराजा की रियासत का हिस्सा था। सन् 1672 में औरंगजेब के जमाने में जब चोटी (टिकी) पर कर लगा तो उनके पूर्वज बाबा शिवनाथ नगरकोट, कांगड़ा से यहाँ चले आये। सामने डीह पर एक बहुत बड़ा कुँआ था। वहीं उन्होंने एक सियार को देखा एक कुत्ते को खदेड़ते हुए, तब उनको लगा कि यह जरूर कोई संस्कारी जगह है सो यहीं रह गए। यहीं कटौंझा के पास शंकरपुर का गढ़ है जहाँ भुअरबार नाम का एक डकैत रहता था, वह राजा को टैक्स नहीं देता था। बाबा शिवनाथ कुछ जमीन की आशा से राजा के पास गए तो राजा ने जो दान-पत्र लिखा उसमें कहा कि पहले भुअरबार से मिल लीजिये। राजा को शायद अनुमान था कि वह डाकू उन्हें यहाँ रहने नहीं देगा। मगर बाबा का शरीर भी पर्वताकार था। बाबा ने इस जगह पर कब्जा कर लिया। बाबा तो अकेले आये थे। यहाँ परसौनी राज में मीनापुर थाने में एक भटौलिया गाँव है जहाँ ब्रह्मभट्ट लोग रहते थे और परसौनी के राजा ने ही बाबा का विवाह उस गांव में करवाया। उनके आठ लड़के हुए। उन्हीं आठों के वंशज अब यहाँ रहते हैं। बगल में एक नमोनारायण का मन्दिर है, जिसे गाँव के एक मौनी बाबा ने बनवा दिया था।

1934 के बिहार भूकम्प के समय पूरे मुजफ्फरपुर जिले में जबर्दस्त तबाही हुई थी। भूकम्प के बाद डॉ० राजेन्द्र प्रसाद (जो बाद में भारत के पहले राष्ट्रपति बने) पास के बेदौल गाँव में कैम्प कर के रहते थे और राहत कार्यों की देख-रेख किया करते थे। उनके रहने की वजह से यहाँ बहुत से नेता यहाँ आया-जाया करते थे। उन दिनों भरथुआ में इसी नाम का एक चौर हुआ करता था। बागमती नदी उन दिनों यहाँ नहीं थी, वह धरमपुर के पास बहा करती थी। भूकम्प के बाद चौर के पानी की निकासी में बड़ी बाधा पड़ी और वनस्पतियों के सम्पर्क से यह पानी सड़ने लगा और चारों ओर दुर्गन्ध व्याप्त होने लगी। प्रख्यात पत्रकार सत्यदेव विद्यालंकार राजेन्द्र बाबू के यहाँ आया-जाया करते थे। एक बार तो वह लगातार 6 महीनें यहीं रह गए। बगल के बेनीपुर में रामबृक्ष बेनीपुरी का घर था। बेदौल में इस तरह के लोगों का अच्छा जमावड़ा हुआ करता था। रामबृक्ष बेनीपुरी के सौजन्य से विद्यालंकार जी ने राजेन्द्र बाबू से गांधी जी के लिए एक चिट्ठी लिखवायी और उनसे सम्पर्क किया और उन्हें भरथुआ की व्यथा बतायी। गांधी जी ने कहा बताते हैं कि यदि वहाँ की स्थिति इतनी ज्यादा खराब है तो वह इसे खुद देखना चाहेंगे और ब्रिटिश सरकार से पानी की निकासी की सिफारिश करेंगे। अगर सरकार कुछ नहीं करती है तो फिर वह अपने संसाधन से इस पानी की निकासी करवायेंगे। गांधी जी के इतने आश्वासन पर रामबृक्ष बेनीपुरी उन्हें भरथुआ लाने में सफल हुए और नाव पर पूरा इलाका घुमाया। उन दिनों यहाँ मलेरिया फैला हुआ था और ज्यादातर लोग बीमार थे। यहाँ का पानी काला हो गया था और जलवायु स्वास्थ्य के लिए पूरी तरह से दूषित हो चुकी थी। इस तरह से भरथुआ की जल-निकासी की व्यवस्था हुई।

भरथुआ के एक अवकाश प्राप्त जेलर पंडित प्रसाद भट्ट अपने गाँव के पुनर्वास का किस्सा कुछ इस तरह बयान करते हैं, ''...हुआ यह कि जब तटबन्ध बेनीपुर से आगे बढ़ना शुरू हुआ तो हम लोगों को लगा कि हम लोग फंस जायेंगे तब हम लोगों ने तटबन्ध के निर्माण कार्य में व्यवधान उत्पन्न किया और काम बन्द करवा दिया। हम लोगों का कहना था कि नदी से जनार मात्र 13 चेन की दूरी पर था तो उसे जोड़-तोड़ करके तटबन्ध का अलाइनमेन्ट बदल कर के बाहर कर दिया तो भरथुआ जो कि नदी की धारा से 45 चेन दूर था उसे क्यों तटबन्धों के बीच फँसाया जायेगा। अगर यह तटबन्ध बनाना इतना ही जरूरी है तो फिर हमारे लिए सुरक्षा रिंग बांध बने। पुनर्वासित होना हमें मंजूर नहीं था। जब हम लोगों ने एक बार काम रुकवा दिया था तो ठेकेदारों के कुछ लोग हम लोगों को डराने-धमकाने के लिए आये थे जिसका हम लोगों ने सामूहिक विरोध किया। हम लोगों ने सरकार को यह भी चेताया कि हम लड़ेंगे, आत्मदाह कर लेंगे और अगर हम पर गोली चलाई गयी तो उससे भी निपट लेंगे पर गाँव छोड़ कर नहीं जायेंगे।

फिर हम लोग मिले अपने मंत्री देवेश चन्द्र ठाकुर से और उन्हें पूरा किस्सा बताया। उन्होंने हमारी बड़ी मदद की और बहुत से अधिकारियों से हम लोगों को मिलवाया। उन्हीं के प्रयासों से चीफ़ इंजीनियर ज्वाला प्रसाद जी यहाँ आये।

हम लोगों ने हाइकोर्ट में भी मुकद्दमा किया था। वहाँ अभियंता प्रमुख ने हलफनामा दायर किया कि यह तटबन्ध तो तीस साल पहले से स्वीकृत था तब तो किसी ने कोई विरोध नहीं किया तो अब विरोध का कोई औचित्य नहीं है। तीस साल से यह लोग क्यों सोते रहे? हमारा कहना था कि अगर हम सो रहे थे तो तीस साल से सरकार क्या जगी हुई थी? वह भी तो सो ही रही थी। विरोध तो तभी होगा जब हम प्रभावित होंगे। अब प्रभावित हो रहे हैं तो विरोध कर रहे हैं। सरकार के सामने हमारा प्रस्ताव था कि पहले हमारा सुरक्षा बांध बने तभी मुख्य बांध पर काम शुरू हो। यह प्रस्ताव मुजफ्फरपुर में मुख्य अभियंता ज्वाला प्रसाद के पास गया। वह यहाँ आये, बात की और प्रस्ताव मंजूर कर लिया। इस पर काम शुरू हुआ। जिस जमीन से होकर तटबन्ध गुजरा है उसका न तो अधिग्रहण हुआ है और न ही किसी को अभी तक मुआवजा मिला है पर गाँव के हक में सुरक्षा बांध बनाने का यह काम पूरा हो गया। यह सब ज्वाला बाबू की वजह से हुआ। 16 मई 2008 को मुजफ्फरपुर में कलक्टर के साथ बहुत से लोगों की मीटिंग हुई उसमें हमारे आपदा प्रबन्धन मंत्री देवेश चन्द्र ठाकुर भी थे। तय हुआ कि हम लोग स्वेच्छा से जमीन देंगे और तब रिंग बांध बन जायेगा। उनका कहना था कि लिखा-पढ़ी और कानूनी पेंच में पड़ेंगे तो देर हो जायेगी और पूरा गाँव ही बह जायेगा। हम लोगों की समझ में बात आयी और काम शुरू हो गया। मुआवजा अब धीरे-धीरे मिलना शुरू हो रहा है। थोड़ा बहुत झमेला हमारे गाँव के श्मसान को लेकर हुआ। तटबन्ध को पहले इसी पर से गुजार देने का कार्यक्रम था, हम लोगों ने विरोध किया कि जब शंकरपुर में कब्रिस्तान को बचाने के लिए तटबन्ध को तीन चेन खिसकाया जा सकता है या बभनगाँवाँ में भी यही काम किया जा सकता है तो भरथुआ में यह क्यों नहीं होगा? इस पर भी एक कमेटी आयी थी गाँव में, भूतपूर्व अभियंता प्रमुख बृज मोहन बाबू और कबीर साहब, एक्जीक्यूटिव इंजीनियर उसमें शामिल थे। इस कमेटी ने सिफारिश की तब कहीं जाकर हमारे गाँव का श्मसान बचा। रिंग बांध की बात इसलिए उठी कि हम लोगों का घर नहीं उजड़ेगा, जहाँ है वहीं रहेंगे। अगर ऐसा नहीं किया गया होता तो आज हम भी उसी हालत में होते जो हालत रिंग बांध के बाहर वालों की है। उनके पुनर्वास का कुछ अता-पता नहीं है अभी तक। हमने सरकार से रिंग बांध बनवा लिया है। अब हम भी मस्त हैं और सरकार भी मुक्त है। हमें दूसरे किसी रिंग बांध या उससे होने वाली किसी भी परेशानी के बारे में जानकारी नहीं है। निर्मली, महादेव मठ, भटनियाँ, करहारा, बैरगनियाँ या चानपुरा रिंग बांध आदि के विषय में हम नहीं जानते।* हम अपना पानी निकाल लेते हैं, अभी तटबन्ध को चीरा हुआ है बाद में स्लुइस बन जायेगा। हम लोग यहाँ नारायण की दी हुई जमीन पर बसे हैं–यह रिंग बांध भी भगवान की देन है। हम लोग कभी कष्ट नहीं भोगेंगे। स्लुइस गेट प्रोसेस में है। इस साल नहीं तो अगले साल जरूर बन जायेगा। देवेश ठाकुर जी मंत्री हैं, यहीं अथरी के हैं और उनका यह वायदा है। अभी हमारी हालत यह है कि हम लोग बाढ़ से तो बच गए मगर बरसात के पानी में फंस गए हैं। घर-घर के सामने पानी लगा है। निकासी का रास्ता अभी नहीं है। यह जल-जमाव बीमारी का घर है। इतने मच्छर हैं कि शाम के समय दरवाजे पर बैठ नहीं सकते। भरथुआ में करीब 400-500 घर होंगे। रिंग बांध पर साढ़े तीन करोड़ रुपया खर्च हुआ है। एक महीनें में काम खत्म हो गया। 6 मई 2008 को काम शुरू हुआ और 6 जून 2008 को खत्म हो गया। हमारे पूरे गाँव को पुनर्वासित करने में सरकार का साढ़े बारह करोड़ रुपया खर्च होने वाला था। रिंग बांध में सिर्फ 3.5 करोड़ रुपया खर्च हुआ। सरकार को भी फायदा था और हम लोग घर से बेघर नहीं हुए। यह रिंग बांध तो बन गया मगर अब इसमें भी कटाव लग गया है, हम लोगों ने ज्वाला बाबू को संपर्क किया तब उन्होंने एक और टीम यहाँ भेजी। हम लोगों का टीम से कहना था कि रिंग बांध की सुरक्षा, हमारी सुरक्षा, जान-माल की सुरक्षा का एक ही उपाय है कि यहाँ रिंग बांध के बाहरी भाग में वैसी ही पाइलिंग की जाए जैसा कि जनार के पास दाहिने तटबन्ध को बचाने के लिए की गयी है। ऐसा अगर नहीं होगा तो यह रिंग बांध सुरक्षित नहीं रह पायेगा। अब देखना है विभाग क्या करता है।''[49]

पंडित प्रसाद भट्ट

11.12.4 आगे-आगे तटबन्ध–पीछे-पीछे तबाही–जैसे-जैसे तटबन्ध आगे बढ़ेगा वैसे-वैसे इस तरह की कहानियों की, उनसे जुड़ी उम्मीदों और आश्वासनों की सूची लम्बी होती जायेगी। अभी तक तो उन गाँवों की पूरी सूची भी तैयार नहीं हुई है जहाँ से इस तटबन्ध को गुजरना है। इसका यह भी मतलब निकलता है कि दस्तूर के मुताबिक तटबन्ध का अलाइनमेन्ट अभी तक तय नहीं हुआ है। पश्चिम में औराई से लेकर पूरब में कनौजर घाट तक के लोग आशंकित हैं कि तटबन्ध मुमकिन है उनके गाँव को लील जाए।

---

* निर्मली, महादेव मठ, भटनियाँ और करहारा गाँवों/कस्बों के चारों ओर रिंग बांध कोसी परियोजना के अधीन 1950 के दशक में बनाये गए थे। इनमें से करहारा का रिंग बांध 1966 की बाढ़ में बह गया और 1971 में भटनियाँ का रिंग बांध भी बह गया। निर्मली और महादेव मठ के रिंग बांध अपने आधे दक्षिणी भाग की तबाही के बीच अभी भी सलामत हैं। इनके बारे में जानकारी लेखक की पुस्तक–दुइ पाटन के बीच में–कोसी नदी की कहानी (2006) में उपलब्ध है। चानपुरा और बैरगनियाँ रिंग बांधों के बारे में जानकारी इसी पुस्तक में अन्यत्र दी गयी है।

प्रमोद कुमार राय

कल्याणपुर, प्रखंड औराई, जिला मुजफ्फरपुर के प्रमोद कुमार राय बताते हैं, ''...जब तक यह तटबन्ध शिवनगर तक था तब तक बागमती का पानी वहाँ से निकल कर पहले मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी मार्ग से टकराता था। वहाँ सड़क आज से बहुत नीची थी और कटौंझा के पास एक लम्बा लचका था जिसके ऊपर से पानी बहना शुरू होता था। हम लोग लचके के पास पानी की स्थिति देखकर बाढ़ का अन्दाजा लगा लेते थे और सुरक्षा का इन्तजाम कर लेते थे। अब हमारा गाँव तटबन्ध के किनारे पड़ गया है। गाँव के पश्चिम में मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी रेल लाइन का निर्माण हो रहा है और उसके 1-1.5 किलोमीटर पश्चिम में मुजफ्फरपुर-सीतामढ़ी राष्ट्रीय मार्ग (एन०एच० 77) है। अब अगर तटबन्ध कहीं टूटेगा तो क्या होगा यह हमारे लिए कह पाना मुश्किल है। 2007 में बागमती तटबन्ध का विस्तार शुरू हुआ और उसके बाद इस नदी में पहले जैसा पानी नहीं आया। रेल लाइन के पश्चिम में तटबन्ध टूटने पर बाढ़ का पानी हमारे यहाँ रेल पुल से होकर आयेगा। रेल लाइन के पूर्व अगर आस-पास में कहीं टूटा तो रेल लाइन पानी को फैलने से रोकेगी और हमारा गाँव पानी में फंसेगा। अगर कभी भरथुआ के पास तटबन्ध टूटा तो हमारे गाँव का पता भी नहीं लगेगा। तटबन्ध अगर है तो कहीं-न-कहीं टूटेगा जरूर।''[50]

बाजार व्यवस्था में दूसरों का हित या फिर सामूहिक हित गौण हो चुका है इसलिए सामूहिक विरोध या सामूहिक सुझाव देने का भी रिवाज खत्म होता जा रहा है। इसी हताशा की अभिव्यक्ति होती है ग्राम भगवतपुर, प्रखण्ड गायघाट, मुजफ्फरपुर के अरविन्द यादव के बयान से। वह कहते हैं, ''...मुझे मालुम है कि हमारा पूरा का पूरा गांव बागमती के दोनों तटबन्धों के बीच चला जायेगा। हमारे यहाँ 350 बीघे का एक चौर है जिसमें से अधिकांश हमारे परिवार का है। बाबा की 300 बीघा जमीन है। सब की सब तटबन्ध के अन्दर चली जायेगी। लदौर चौर में हमारे तीन फरीक की 100 बीघा से ज्यादा जमीन है। वह भी जायेगी। नदी के उस पार बलौर निधि और पाटा मौजे की 82 बीघा जमीन हमारे परिवार की है—सबकी सब चली जायेगी। न तो कोई नौकरी है परिवार में न कोई व्यापार है। परिवार का सारा खर्च इसी जमीन से आता है। हमारी तो, मान लीजिये, कुछ हैसियत भी है, बाहर जमीन खरीद लेंगे और नये सिरे से जिन्दगी शुरू कर लेंगे। मगर जिस मजदूर के परिवार में 5 सदस्य हैं और जो रोज कमाता-खाता है वह कहाँ से जमीन खरीदेगा?''[51]

11.13 यह कैसा पुनर्वास?

बिहार में तटबन्धों के निर्माण के फलस्वरूप लोगों का जो विस्थापन हुआ और जिनका तथाकथित रूप से जैसा भी पुनर्वास किया गया उसके पीछे कुछ निश्चित मान्यताएं काम कर रही थीं। पहली मान्यता तो यह थी कि नदी के जिस स्वरूप या धारा को ध्यान में रख कर तटबन्धों का निर्माण किया जा रहा है, उसमें भविष्य में कोई परिवर्तन नहीं होगा। इसलिए जब यह प्रस्ताव किया गया कि लोग तटबन्धों के बाहर पुनर्वास में रहेंगे और खेती तटबन्धों के बीच जाकर अपनी पुश्तैनी ज़मीन पर करेंगे तब यह मान लिया गया था कि खेती की ज़मीन में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आयेगा। दूसरी मान्यता थी कि तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन पर केवल नदी की उर्वरक गाद ही फैलेगी और उन खेतों की उत्पादकता पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा। तीसरी मान्यता थी कि तटबन्ध कभी टूटेंगे नहीं और इसलिए तटबन्धों के बाहर की कन्ट्रीसाइड, पुनर्वास समेत, हमेशा नदी के थपेड़ों से सुरक्षित रहेगी। यह तीनों मान्यताएँ गलत थीं और इंजिनियरों को सच्चाई भी मालुम थी कि तटबंधों के अन्दर खेतों में बालू जमा होगा और वह खेती लायक नहीं बचेंगे तथा उनकी उत्पादकता पर नकारात्मक असर पड़ेगा। उन्हें यह भी मालुम था कि तटबंध चाहे कितना भी मजबूत बनाया जायगा, कभी न कभी यह टूटेगा और प्रलय मचायेगा। फिर भी, बागमती परियोजना का प्रारूप और डिज़ाइन तैयार करते समय इन तीनों बातों की अनदेखी की गयी और यह एक यक्ष-प्रश्न है कि तकनीक की इन सीमाओं के बारे में इंजीनियरों ने उन राजनीतिज्ञों को बताया या नहीं जिनके हाथों में परियोजना पर निर्णय लेने की अंतिम क्षमता थी। यही बात उन राजनीतिज्ञों पर भी लागू होती है कि क्या उन्होंने इंजीनियरों से योजना के इन विवादित पहलुओं पर जानकारी हासिल करने की कोई कोशिश की कि इन के उत्तर उनके योजना-प्रस्ताव में निहित है या नहीं?

योजना का प्रस्ताव करने वाले इंजीनियरों और उन पर निर्णय लेने वाले राजनीतिज्ञों के पास कोसी परियोजना में पैदा हुई इन समस्याओं बड़ा का अनुभव था और यह सब जानने के लिए उनमें से किसी को अब चीन की ह्वांग हो या अमेरिका की मिसिसिपी नदी की समस्याओं का अध्ययन करने की जरूरत नहीं थी। कोसी की पुनर्वास-समस्या को लेकर बिहार विधान सभा और विधान परिषद् में सरकार कठघरे में खड़ी होती थी जबकि 1963 में डलवा में तथा 1968 में जमालपुर में कोसी अपने तटबन्धों को तोड़ कर भविष्य में होने वाली दुर्घटनाओं के बारे में संकेत दे चुकी थी। 1966 में कुनौली में भी यही सब होने वाला था मगर नदी ने कन्ट्रीसाइड में बसे लोगों के साथ-साथ योजना में लगे इंजीनियरों को बख्श दिया था। इस तरह से तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन, पुनर्वास की स्थिति और तथाकथित रूप से बाढ़ से सुरक्षित कन्ट्रीसाइड में रह रहे लोगों की स्थिति—इन सभी से संबद्ध पक्ष वाक़िफ़ थे। भविष्य में होने वाली घटनाओं या परिस्थितियों के प्रति अनजान लोगों को तो शायद समाज और भुक्त-भोगी माफ भी कर दें मगर जान-बूझ कर समाज को विकट परिस्थितियों में ढकेल देने वाले लोगों के साथ क्या व्यवहार होना चाहिये, यह समाज को तय कर लेना चाहिये। इससे इन घटनाओं की पुनरावृत्ति में थोड़ी कमी आयेगी।

नदी के टूटते तटबन्धों ने बाढ़ से सुरक्षित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को दो हिस्सों में बांटा है। इनमें से एक तो वह लोग हैं जो तटबन्धों के निर्माण के कारण विस्थापित होकर पुनर्वास में आये और उसी जगह वह लोग भी थे जिनके गाँव घर पहले से ही उस जगह थे जो पुनर्वास के बगल में पड़ते थे जिनके लिए पुनर्वासित लोग बिना बुलाये मेहमान थे। तटबन्ध टूटने पर नदी इन्हीं दो तरह के लोगों पर चोट करती है। कोसी तटबन्ध में 2008 में कुसहा में जो दरार पड़ी उसने इन दोनों तरह के लोगों को छोड़ कर तीसरे तरह के लोगों को अपना शिकार बनाया जिनका पिछले पचास वर्षों से कोसी की बाढ़ से

कोई वास्ता ही नहीं पड़ा था। ऐसे लोगों के लिए बिहार सरकार ने एक नई पुनर्वास नीति बनाई जो निश्चित रूप से सरकार का एक स्वागत योग्य कदम था। इस पुनर्वास नीति को कुसहा दुर्घटना के पीड़ित लोगों के विकास के एक अवसर के रूप में रखा गया। नीति के क्रियान्वयन की भी व्याख्या की गयी। इस बात से भी किसी को मतभेद नहीं हो सकता। लेकिन सवाल है कि क्या इस नीति को अमली जामा पहनाया जायगा? सरकार के पिछले अनुभव से या संदिग्ध लगता है।

प्रश्न फिर भी रह जाता है कि क्या रामपुर कंठ या उस तरह के दूसरे गांवों के विस्थापित बिहार सरकार की इस सदाशयता के अधिकारी नहीं थे? क्या उनके साथ या 1987 से लेकर 2009 के बीच बिहार की अन्य नदियों के तटबंधों में पड़ी 370 दरारों के सामने पड़े लोग किसी दूसरी दुनियाँ के थे जिन्हें किसी मदद की जरूरत नहीं थी? हम 370 दरारों की बात केवल इसलिए कर रहे हैं कि यह सरकार के तेइस वर्षों की उपलब्धि और स्वीकारोक्ति है। तटबन्धों में 104 दरारें तो अकेले 1987 में पड़ी थीं। कभी भविष्य में, ईश्वर न करे, कुसहा जैसी त्रासदी की पुनरावृत्ति हो जाए तो क्या उस समय की सरकार उन लोगों की मदद करने में उसी तरह से टाल-मटोल करेगी जैसा कि वह रामपुर कंठ के बाढ़ पीड़ितों के साथ कर रही है और वह शायद इसलिए कि उनका एक बार कभी पुनर्वास किया जा चुका है? क्या रक्सिया या तिलक ताजपुर के बाढ़ पीड़ितों की सरकार से कोई अपेक्षा सिर्फ इसलिए नहीं होनी चाहिये कि यह गाँव उत्तर में तटबन्धों में पड़ी दरार को हर साल भोगते हैं और उनको यह त्रासदी भोगने की अब तक आदत पड़ जानी चाहिये थी? पचनौर, चन्दौली, मधकौल, सोनाखान, अखता आदि गाँवों के खेतों में पड़ा बालू और उसके फलस्वरूप उजड़े हुए लोग कब तक दिल्ली या पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात तथा हरयाणा के अपेक्षाकृत समृद्ध शहरों के फुटपाथों पर सोने के लिए अभिशप्त होंगे? इन सवालों का उत्तर आज नहीं तो कल खोजना ही होगा। इसका भी उत्तर खोजना होगा कि कुसहा से बनी पुनर्वास नीति भविष्य की सभी बाढ़ों में कितनी दूर तक लागू की जायेगी?

संदर्भ :

1. राउत, महाबीर; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 10 फरवरी, 1965, पृष्ठ 6
2. राउत, महाबीर; उपर्युक्त, 31 मार्च 1965, पृष्ठ 29
3. राउत, महाबीर; उपर्युक्त, 17 फरवरी 1966, पृष्ठ 1
4. सिंह, गंगेश प्रसाद; ग्राम कुंडल, प्रखंड सिंघिया, जिला समस्तीपुर, व्यक्तिगत संपर्क
5. यादव, रामसुधारी; ग्राम कराचीं, प्रखंड बिथान, जिला समस्तीपुर, व्यक्तिगत संपर्क
6. यादव, दामोदर; ग्राम अकराहा, प्रखंड हायाघाट, जिला दरभंगा, व्यक्तिगत संपर्क
7. महतो, लक्ष्मी; ग्राम हथौड़ी मौजे धोबीपुर टोला, जिला समस्तीपुर, व्यक्तिगत संपर्क
8. मिश्र, दिनेश कुमार; दुइ पाटन के बीच में–कोसी नदी की कहानी, लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून, 2006, पृष्ठ 124-149
9. सिंह, दीप नारायण; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 3 दिसम्बर 1958
10. बिहार सरकार, सिंचाई विभाग, बागमती योजना प्रतिवेदन, 1981, पृष्ठ 130
11. आज़ाद, मुहम्मद हुसैन; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 29 जून 1976, पृष्ठ 3
12. आजाद, मुहम्मद हुसैन; बिहार विधान सभा वादवृत्त, उपर्युक्त, पृष्ठ 3
13. मिश्र, डॉ जगन्नाथ; उपर्युक्त, पृष्ठ 2
14. झा, रघुनाथ; उपर्युक्त, पृष्ठ 4
15. सिंह, रामस्वरूप; बिहार विधान सभा वादवृत्त, दिनांक 15 मार्च 1975, पृष्ठ 39
16. सिंह, रघुवंश प्रसाद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 19 जुलाई 1980, पृष्ठ 41
17. बागमती योजना का कार्यान्वयन, संपादकीय-आर्यावर्त्त, पटना 10 मार्च 1975
18. झा, रघुनाथ; पूर्व मंत्री, बिहार सरकार, व्यक्तिगत संपर्क
19. शाही, नवल किशोर; पूर्व विधायक तथा मंत्री, बिहार सरकार, व्यक्तिगत संपर्क
20. राय, राम स्वार्थ; पूर्व विधायक, बिहार विधान सभा, व्यक्तिगत संपर्क
21. झा, रघुनाथ; पूर्व मंत्री बिहार सरकार तथा पूर्व सांसद, व्यक्तिगत संपर्क
22. सिंह, हरि किशोर; पूर्व केन्द्रीय मंत्री, व्यक्तिगत संपर्क
23. मिश्र, दिवाकर; ग्राम बखार-प्रखंड पुरनहिया, जिला शिवहर से व्यक्तिगत संपर्क
24. जब गाँव को डुबाया, प्रतिपक्ष, वर्ष 6-अंक 22, रविवार 30 सितम्बर 1984, पृष्ठ 5। 28 तुगलक क्रीसेन्ट, नई दिल्ली।
25. बागमती परियोजना, पुनर्वास कार्यालय, डुमरा, सीतामढ़ी–व्यक्तिगत संपर्क
26. राय, नागेन्द्र; ग्राम मसहा आलम, प्रखंड बैरगनियाँ, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
27. सीता राम; मुखिया मसहा आलम, प्रखंड बैरगनियाँ, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
28. दास, महंत बृज कुमार; पूर्व मुखिया, अखता पंचायत, प्रखंड सुप्पी, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
29. शकील, मुहम्मद; ग्राम बरवा टोला, व्यक्तिगत संपर्क
30. शर्मा, अवधेश कुमार; ग्राम बनबीर (बकठपुर), प्रखंड जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
31. पासवान, नागेन्द्र; ग्राम इब्राहिमपुर, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
32. आलम, मुहम्मद अरशद; ग्राम मौला नगर, प्रखंड बेलसंड, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
33. बैठा, रंगी; ग्राम इब्राहिमपुर, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
34. अहमद, शकूर; बिहार विधान सभा वादवृत्त, बाढ़–अनावृष्टि तथा सिंचाई पर वाद-विवाद, 12 सितम्बर 1966, पृष्ठ 28-29
35. सिंह, श्याम बिहारी; ग्राम डुमरा, प्रखंड बेलसंड, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
36. आब्दीन, जैनुल; पूर्व मुखिया-कन्सार, प्रखंड बेलसंड, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
37. वासी, मुहम्मद; ग्राम रक्सिया, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
38. राय, बैजनाथ; ग्राम तिलक ताजपुर, प्रखंड रुन्नी सैदपुर, जिला सीतामढ़ी, व्यक्तिगत संपर्क
39. नागेन्द्र प्रसाद सिंह द्वारा राज्य सूचना आयोग-पटना से सूचना के अधिकार के अधीन मांगी गयी याचिका के उत्तर में पुलिस अधीक्षक, सीतामढ़ी का उत्तर–ज्ञापांक 675/गो०, पुलिस अधीक्षक का कार्यालय, सीतामढ़ी (गोपनीय शाखा) दिनांक 28.02.2008
40. उपर्युक्त
41. नागेन्द्र प्रसाद सिंह को जल-संसाधन विभाग का पत्र सं०–बाढ़ (मो०) सि०वि०–14/2007/2255 बिहार सरकार, जल संसाधन विभाग, दिनांक 3.10.2007
42. जांच पूरी, उड़े इंजीनियरों के होश, दैनिक जागरण, मुजफ्फरपुर, दिनांक 4 सितम्बर 2007, पृष्ठ 3
43. रामाशिष तथा महेश सहनी, ग्राम मीनापुर बलहा, प्रखंड पिपराही, जिला शिवहर से व्यक्तिगत संपर्क
44. सिंह, सियादेव नारायण; ग्राम बराही, प्रखंड पुरनहिया, जिला शिवहर से व्यक्तिगत संपर्क
45. सिंह, अजीत कुमार; ग्राम अदौरी, प्रखंड पुरनहिया, जिला शिवहर से व्यक्तिगत संपर्क
46. बिहार विधान सभा वादवृत्त, 11 दिसम्बर 1980, परिशिष्ट-2, पृ० 80-81
47. बिहार सरकार; जल संसाधन विभाग–अपील, आयुक्त एवं सचिव, जल संसाधन विभाग, बिहार सरकार, The Times of India, Patna Edition, 11th May 2007
48. सिंह, रजत; ग्राम बेनीपुर, प्रखंड औराई, जिला मुजफ्फरपुर, व्यक्तिगत संपर्क
49. प्रसाद, पंडित; ग्राम भरथुआ, प्रखंड औराई, जिला मुजफ्फरपुर, व्यक्तिगत संपर्क
50. राय. प्रमोद कुमार; ग्राम कल्याणपुर, प्रखंड औराई, जिला मुजफ्फरपुर, व्यक्तिगत संपर्क
51. यादव, अरविन्द; ग्राम भगवतपुर, प्रखंड गायघाट, जिला मुजफ्फरपुर, व्यक्तिगत संपर्क

12

जुड़वाँ शहर–भारत का बैरगनियाँ और नेपाल का गौर बाज़ार

12.1 बैरगनियाँ

अध्याय–1 के चित्र–1.3 में बागमती और लालबकेया के दोआब में सीतामढ़ी के उत्तरी छोर पर नेपाल की सीमा से लगा हुआ बैरगनियाँ प्रखण्ड दिखाया गया है। लालबकेया के पूर्वी किनारे और बागमती के पश्चिमी किनारे के बीच बसे इस प्रखंड का कुल क्षेत्रफल 6,438 हेक्टेयर और आबादी 1,01,630 (2001 जनगणना) है। 24 आबाद गाँवों वाले इस प्रखंड तथा सीतामढ़ी के ही मेजरगंज प्रखंड के कुछ हिस्सों को काट कर अब सुप्पी नाम का एक नवनिर्मित प्रखंड बना दिया गया है। बैरगनियाँ का रामपुर कंठ और अखता गाँव का कुछ हिस्सा अब सुप्पी में चला गया है। इस प्रखंड का एक गाँव मधुछपरा लालबकेया के पश्चिम में अवस्थित है और दोनों नदियों के दोआब से बाहर है। इस तरह प्राय: पूरा का पूरा बैरगनियाँ प्रखंड लालबकेया और बागमती के दोआब में बसा हुआ है। बैरगनियाँ बाजार नेपाल के साथ का सीमावर्ती गाँव होने के कारण लम्बे समय से एक अच्छा खासा व्यापारिक केन्द्र रहा है जिसमें नेपाल से भी आवश्यक वस्तुओं का आयात और निर्यात होता रहा है। 1950 के दशक में बैरगनियाँ में एक डीज़ल चालित सरकारी बिजली घर हुआ करता था जिसे सरकार ने इमरजेन्सी काल में मुंबई के किसी उद्योगपति को बेच दिया। स्थानीय जनता इस के विरोध में खड़ी हो गयी। धीरे–धीरे यह विद्युत केन्द्र बन्द हो गया और इसका बहुत सा सामान और कल–पुर्ज़े लोग उठा–उठा कर ले गए। 1950 के दशक तक यहाँ चार चावल मिलें हुआ करती थीं तथा बैरगनियाँ में तेलहन और लकड़ी की एक बड़ी मंडी हुआ करती थी। मुजफ्फरपुर गजैटियर (1958) लिखता है, ''...सीतामढ़ी अनुमंडल का बैरगनियाँ बाजार अभी भी चावल की मंडी के रूप में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बैरगनियाँ और आस–पास के इलाकों में बहुत बड़ी मात्रा में धान पैदा होता है। सीमावर्ती नेपाल की तराई का हिस्सा और चम्पारण के कुछ भाग तथा गंगा घाटी के उत्तरी मैदानी क्षेत्र की गिनती धान पैदा करने वाले सर्वोत्तम क्षेत्रों में होती है।''[1] बैरगनियाँ तेलहन, कपड़ा तथा गहनों का अभी भी अच्छा बाजार है मगर चावल मिलें अब नहीं रहीं। खाद, बीज, बिजली की व्यवस्था का न होना, मजदूरों का पलायन और नेपाल में चावल मिलों का खुलना स्थानीय चावल मिलों के बन्द होने का कारण बताया जाता है। समस्तीपुर से नरकटिया गंज को जोड़ने वाली छोटी लाइन बैरगनियाँ होकर गुजरती है और यही संपर्क का एक मात्र स्थापित साधन है। इस वर्ष (2010) इसे बड़ी लाइन में बदलने का काम शुरू हुआ है। सीतामढ़ी से बैरगनियाँ आने–जाने के लिए बागमती पर कोई पुल नहीं था इसलिए नदी को नाव से ही पार करना पड़ता था। यही हालत प्रखंड के पश्चिम में लालबकेया नदी के साथ भी थी।

लालबकेया और बागमती तटबन्धों के बीच फंसे बैरगनियाँ प्रखण्ड की स्थिति बड़ी अजीब है। 11 नवम्बर 1963 के दिन जब केन्द्रीय सिंचाई मंत्री डॉ० के० एल० राव सीतामढ़ी आये थे तब स्थानीय लोगों ने उनसे बैरगनियाँ को घेरते हुए एक रिंग बांध की मांग की थी।[2] बागमती और लालबकेया नदी पर तटबन्धों के निर्माण के बाद यह रिंग बांध एक तरह से खुद–ब–खुद तैयार हो गया। तकनीकी दृष्टि से 1970 के दशक में तटबन्ध के निर्माण हो जाने के कारण इस इलाके को बाढ़ सुरक्षित क्षेत्र कहा जाता था जबकि रिंग बांध बन जाने के बाद भी इस सुरक्षित क्षेत्र की जनता वर्ष में 6 महीने अनिश्चितता और बाढ़ के आतंक में जीती थी।

हुआ यह कि जब बागमती परियोजना के अधीन लालबकेया और बागमती पर तटबन्ध बने तब बैरगनियाँ प्रखण्ड पर पूरब, पश्चिम और दक्षिण की तरफ से तटबन्धों का पहरा बैठ गया। बैरगनियाँ की उत्तरी सीमा नेपाल से लगती है अत: उधर तटबन्ध पहले नहीं बनाया गया। उत्तर की ओर से आता हुआ बारिश का पानी इस रिंग बांध के दक्षिणी छोर पर जमुआ के पास अटक जाया करता था जहाँ स्लुइस गेट बनाने के लिए एक छोटा सा गैप छोड़ा गया था। इससे पानी की निकासी हो नहीं पाती थी। इसके अलावा नेपाल सीमा से लेकर जमुआ तक जमीन का ढाल लगभग 10 मीटर है। जमुआ में 2.5 से 3 मीटर गहरा अटका पानी पीछे की ओर हिलोरें मारता था जिससे एक तिहाई से आधा बैरगनियाँ डूबता था। रिंग बांध के अन्दर के अधिकांश गाँव एक तरह से इस रिंग बांध के डूब क्षेत्र में आ गए। बागमती परियोजना से मिली बाढ़ सुरक्षा का इन गाँवों का यह पहला अनुभव था। विधायक सुरेन्द्र राम ने 1975 की बाढ़ में फंसे परेशान हाल बैरगनियाँ की कहानी कुछ इस तरह बयान की। ''...अभी भी बैरगनियाँ प्रखंड में जमुआ, अखता, चकवा, पिपराही, मझौलिया, बराही आदि पानी से घिरे हुए हैं। गत साल वहाँ 58 नावें दी गई थीं और इस बार 10 नाव दो दिन चलीं और नदी में डूब गईं और बेकार हो गईं। जब मैं 6 तारीख को यहाँ से गया और एस० डी० ओ०, श्री ए० के० चौधरी, से नाव के लिये रिक्वेस्ट किया तो उन्होंने कहा कि हम नाव देने के लिए तैयार हैं लेकिन आपके बी० डी० ओ० नहीं ले जाते हैं, 7–8 तारीख को या आज कहीं पहुँचा होगा। वहाँ के कुछ बिजिनेसमैन और कार्यकर्त्ताओं ने अपने प्राण को न्योछावर करके गाँवों में राशन पहुँचाया; 4–5 आदमी डूब गए; लेकिन इन्हीं की बदौलत उन्हें निकाला गया यह नाजुक परिस्थिति है। मैंने आपके चीफ सेक्रेटरी, राजस्वमंत्री, श्री नवल किशोर सिंह, कृषि मंत्री ऑफिस में नोट करा दिया था कि यहाँ पर किस तरह की नाजुक परिस्थिति है। 1972 में भी मुख्यमंत्री जी से इसके सम्बन्ध में कहा था कि इसके सम्बन्ध में आप कुछ उपाय करें। लेकिन आज तक कोई कारगर उपाय नहीं किया जा सका है। आज बाढ़ से समूचा घर–द्वार दह (बह) गया है। नीचे में पानी है, ऊपर खुला आसमान है और वर्षा होती है; लेकिन, एक भी टेन्ट का इन्तजाम नहीं है। लोग बाढ़ का पानी पी कर रह रहे है, लोग बीमार पड़े हुए हैं, कॉलरा हो गया है।''[3]

बाद के वर्षों में बरसात के समय यह आये दिन का किस्सा हो गया। दो नदियों के बीच में बसा होने के कारण अच्छे मौसम में भी संचार व्यवस्था यहाँ विच्छिन्न ही रहती थी। वर्षा के समय यह पूर्णत:

खत्म हो जाती थी। हालात से निबटने के लिए गाँव वालों ने संगठित होकर पानी की निकासी के लिए तटबन्ध को काटना शुरू किया। 1983 में जमुआ गाँव वालों ने तटबन्ध काटा था जिस वजह से उन पर मुकद्दमें चले। 1985 में भी लालबकेया के तटबन्धों को जमुआ के पास काटा गया और इस बार लोगों ने पहले से अधिकारियों को सूचना देकर यह अनुष्ठान संपन्न किया था। जन-विरोध का सम्भवत: खयाल करके 1985 में लोगों पर मुकद्दमें नहीं चलाये गए। 1986 में बसबिट्टा और अखता में लोगों का तटबन्धों को काटने का कार्यक्रम था जिसकी उस वर्ष आवश्यकता नहीं पड़ी। दरभंगा नरकटिया गंज रेल लाइन के दक्षिण बसे गाँव हसमा, पकड़िया, बिलारदे, मरपाकोठी, पताही, चकवा, बरवा, जोरियाही, परसौनी, बेल, बेंगाही, पंचटकी राम, पंचटकी जदू और 8 टोलों वाला बड़ा गाँव जमुआ और रेलवे लाइन के उत्तर बसे गाँव सिन्दूरिया, आदम बांध, मसहा आलम, मसहा नरोत्तम, मसहा माहटोला, मोठ टोला, बैरगनियाँ और असोगी आदि गाँव प्रति वर्ष बाढ़ की विभीषिका झेलते थे और वर्षों से फसल के नुकसान की वजह से आर्थिक दृष्टि से पूरी तरह टूट चुके थे। उसके बाद तो बैरगनियाँ का रिंग बांध न जाने कितनी बार टूटा और कितनी बार काटा गया। जहाँ अधिकारिक तौर पर इन्हें बाढ़ से सुरक्षित माना जाता था वहीं यह लोग स्वयं को मौत के कुएँ का बशिंदा बताते थे। हाल के वर्षों तक मरपा कोठी और जमुआ के आस-पास बैरगनियाँ रिंग बांध का काटा जाना एक वार्षिक कर्मकाण्ड हुआ करता था।

इधर 2008 में, रिंग बांध के निर्माण के लगभग 30 वर्ष बाद जमुआ में स्लुइस गेट के निर्माण का काम पूरा हुआ और तब जाकर हालात कुछ बेहतर हुए। इसके पहले नेपाल से लगी सीमा पर भी बांध बनाने का काम पूरा कर लिया गया था और इस तरह से अब बैरगनियाँ आदम बांध से लेकर जमुआ तक पूरा का पूरा रिंग बांध के अन्दर है।

बैरगनियाँ के नेपाल की सीमा से लगे इस उत्तरी बांध में 9 स्लुइस हैं जिनसे होकर उत्तर से पानी बैरगनियाँ शहर में घुसता है। यह सारे स्लुइस बागमती और लालबकेया के बीच में लगे हैं और इन्हीं नदियों के बीच बैरगनियाँ कस्बा और उसके प्रखंड के गाँव बसे हुए हैं। बरसात के मौसम में कस्बे की हालत बुरी हो जाती है और प्रखण्ड के दक्षिणी छोर की बदहाली में तो अभी भी कोई फर्क नहीं पड़ा है। बैरगनियाँ के एक

बैरगनियाँ तटबन्ध में बना स्लुइस

समाजकर्मी भाई ओम प्रकाश कहते हैं कि, ''...जिस समय तटबन्ध बना था तभी से यह किसी को स्वाभाविक चीज़ नहीं लगी। तटबन्ध बनने के पहले विशेषज्ञ लोगों के हवाले से जो बातें कही जाती थीं उनसे लगता था कि इस नदी को तटबन्धों के बीच नहीं बांधना चाहिये। स्थानीय प्रबुद्ध वर्ग भी, जाहिर है, यही कहता था। किसान इसका विरोध इसलिए करते थे क्योंकि उन्हें अपनी खेती के लिए नदी के पानी के साथ आने वाली गाद में बड़ी आस्था थी। वह चाहते थे कि इसे जहाँ तक संभव हो सके पूरे इलाके पर फैलने दिया जाय। तटबन्ध के निर्माण से उनकी जमीन का अधिग्रहण मिट्टी काटने के लिए, जिस स्थान से होकर तटबन्ध को गुज़रना था उसके लिए, सरकारी दफ्तरों और कर्मचारियों के आवास के लिए तथा विस्थापितों के पुनर्वास आदि के लिए किया जाना था। यह किसानों के विरोध का दूसरा कारण था। फिर लोगों को यह भी लगता

समाजकर्मी भाई ओम प्रकाश और मोतीलाल

था कि नदी पर बने तटबन्ध भविष्य में आने वाली बाढ़ से टूटते रहेंगे और नदी की पेटी हमेशा ऊपर उठती रहेगी। मैंने इस आशय का एक लेख प्रतिपक्ष नाम के अखबार में 1972 में लिखा था। इस अखबार के सम्पादक जॉर्ज फर्नान्डिस हुआ करते थे। लेकिन यह सारा विरोध सिर्फ कलम और बतकही तक था। कोई उग्र विरोध हुआ नहीं। यह योजना बनी भी तो अधूरी बनी। पूरा काम हुआ कहाँ? तटबन्ध के साथ हजारों हेक्टेयर ज़मीन की सिंचाई की बात थी। उस पर बातें तो बहुत हुईं मगर काम कुछ भी नहीं हुआ। पुनर्वास का काम अधूरा पड़ा है और लोग या तो पुनर्वास में गए ही नहीं या किसी तरह से पुनर्वास में ठुँसे पड़े हुए हैं। बैरगनियाँ प्रखंड का जो पिपराढ़ी गाँव है उसका पुनर्वास मिला शिवहर में। आधे लोग गए और आधे लोग अभी भी गाँव में हैं। जो सक्षम थे वह चले गए और जो अक्षम थे वह रह गए। हमारे यहाँ सक्षम की परिभाषा थोड़ी भिन्न है। **जिसके पास खोने के लिए कुछ भी नहीं था वह सक्षम था, वह गरीब भूमिहीन पुनर्वास में गया और जिसके पास घर-द्वार, खेती-बाड़ी थी वह उसे छोड़ कर जाने में अक्षम था, वह पुरानी जगह पर ही रह गया।** एक बार नेपाल में यहीं गौर बाजार में वहाँ के अवकाश प्राप्त इंजीनियारों ने एक गोष्ठी बुलायी और चर्चा का विषय था 'तटबन्धों के निर्माण का समाज पर दु:ष्प्रभाव'। हमने उस मीटिंग में कहा कि आप लोगों ने तो सारी उम्र तटबन्धों के निर्माण में गुजार दी तो अब उसकी हानियों पर चर्चा क्यों कर रहे हैं? क्या आप की यही इच्छा है कि आप का रोज़गार कभी खत्म न हो? इसके बाद मुझे ऐसी किसी गोष्ठी में नहीं बुलाया गया।''[4]

लालबकेया और बागमती के दोआब में बसे बैरगनियाँ का हाल के समय तक जिला मुख्यालय सीतामढ़ी से कोई सड़क संपर्क नहीं था और यहाँ तक पहुँचने के लिए इन दोनों में से किसी एक नदी को नाव से पार करना पड़ता था। 2007 में बैरगनियाँ को सीतामढ़ी से जोड़ने के लिए एक सड़क पुल का निर्माण शुरू किया गया जिसकी अपनी एक कहानी है। बैरगनियाँ प्रखंड के भकुरहर गाँव के एक स्वतंत्रता सेनानी बंशी साह हुआ करते थे। सांगोपांग गांधीवादी और आदर्श नेता, कभी किसी से कोई वैर नहीं और किसी से कोई अपेक्षा नहीं। जीविका के लिए वह जरूर बैरगनियाँ बाजार में पुरइन के पत्ते पर खुद का बनाया हुआ दही-बड़ा बेचते थे। जैसे-तैसे परिवार चल जाता था। बरसात के मौसम में जब बैरगनियाँ में बाढ़ आ जाए तो बंशी चाचा (स्थानीय लोग उन्हें इसी नाम से पुकारते थे) बैरगनियाँ में सस्ती रोटी की दुकान खोल दिया करते थे। रोटी और आलू की भुजिया लागत खर्च पर बेचते थे और पीने के पानी का इन्तजाम रखते थे। आवागमन की दृष्टि से बैरगनियाँ की दुर्दशा देखते हुए उन्होंने बागमती पर पुल निर्माण के लिए आवाज उठाना शुरू किया और कुछ न होता देख 1997 में आत्मदाह की धमकी दे डाली। प्रशासन के सजग रहने के बावजूद बैरगनियाँ में सरे-बाजार दिन में उन्होंने 20 नवम्बर 1997 के दिन आत्मदाह कर डाला। आत्मदाह की इस घटना के बाद आम जनता में आक्रोश फैला और प्रदर्शन करती हुई भीड़ उग्र हो गयी। पुलिस को 'आत्म रक्षा' में गोली चलानी पड़ी जिसमें दो अन्य लोग बिना बात मारे गए। बाद में कुछ पुलिस अधिकारियों और स्थानीय लोगों पर मुकद्दमें दायर हुए कि उन्होंने बंशी साह को आत्मदाह करने के लिए उकसाया और पुलिस पर इल्जाम था कि वह उनकी रक्षा नहीं कर पायी। फिर बात आयी गयी हो गयी। उनकी इस कुर्बानी ने पुल के मसले में नई जान फूँक दी मगर इसके पहले कि उनकी आत्मा सरकार को झकझोर पाती दस साल का समय बीत चुका था। अन्ततः नवम्बर 2007 में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के शिलान्यास के साथ इस पुल पर काम शुरू हुआ जिसका 13 जुलाई 2010 को नीतीश कुमार ने ही उद्घाटन किया। इस पुल के निर्माण के पीछे बंशी साह का बलिदान छिपा है और उन्हीं को सम्मानित करने के उद्देश्य से इस पुल का नाम बंशी चाचा सेतु रखा गया है। स्थानीय लोगों का मानना है कि इस पुल के निर्माण के बाद भी बैरगनियाँ का सीतामढ़ी से संपर्क तो जरूर हो जायेगा मगर जब तक इसका प्रसार लालबकेया के पश्चिमी किनारे तक नहीं होगा तब तक मोतिहारी/बेतिया आदि से बैरगनियाँ का सीधा संपर्क नहीं बन पायेगा। फिलहाल इस सड़क/पुल मार्ग को लालबकेया के पार ले जाने की कोई योजना नहीं है।

लालबकेया नदी पर जरूर एक लोहे का स्क्रू पाइल पुल अटल बिहारी वाजपेयी के शासन काल में स्थानीय सांसद अनवारुल हक के प्रयासों से बना था। सीमावर्ती और दुरूह क्षेत्र होने के कारण बैरगनियाँ प्रखंड के कुछ गाँव असामाजिक तत्वों के अखाड़े हुआ करते हैं। इस पुल के बन जाने से ऐसे तत्वों को परेशानी होने लगी क्योंकि लालबकेया के रास्ते आम जनता के साथ-साथ पुलिस की आवाजाही में भी सहूलियत हो गयी। बताते हैं कि इन लोगों ने पुल को नुकसान पहुँचाना शुरू किया। कमजोर हो जाने के कारण यह पुल लालबकेया की बाढ़ के

लालबकेया पर बना स्क्रू पाइल पुल

थपेड़ों को बर्दाश्त नहीं कर पाया और इसका कुछ हिस्सा टूट कर बह गया जिसकी मरम्मत आज तक नहीं हुई (जून 2010)।

बहरहाल, जमुआ में स्लुइस गेट के निर्माण और बंशी चाचा सेतु को आम जनता के लिए खोल देने के बाद बैरगनियाँ की हालत में जरूर सुधार हुआ है और अब पानी वहाँ नीचे के दो-तीन गाँवों में ही लगता है और अमूमन बिना कोई नुकसान पहुँचाये निकल जाता है। अब अगर रिंग बांध सलामत रहता है तो बैरगनियाँ में कुछ वर्षों के लिए आराम हो जायेगा मगर धीरे-धीरे नदियों का तल ऊपर उठने के साथ जल -निकासी की समस्या देखने में आयेगी और उसके लिए कुछ न कुछ व्यवस्था करनी पड़ेगी।

गौर बाज़ार—बैरगनियाँ से ही मिलती-जुलती हालत है उत्तर में साथ में लगे नेपाल के गौर बाजार की और वहाँ भी तबाही कम नहीं है। गौर बाजार के पूरब में बागमती नदी है और पश्चिम में लालबकेया है। बीच में गौर बाजार पड़ता है। यहाँ पास में नरकटिया, भलुहियाँ, पिपरा, इनरवा, देवाही आदि गाँव हैं और यह सारे के सारे बाढ़ के कारण आपदाग्रस्त रहते हैं। ब्रह्मदेवी, राजदेवी, बसन्तपुर आदि की स्थिति भी भिन्न नहीं है। यह इलाका तटबन्ध बनने के पहले भी छोटी-मोटी बाढ़ से परेशान रहता था मगर यह आपदाग्रस्त हो गया तटबन्ध बनने के बाद क्योंकि तब पानी की निकासी का रास्ता ही बन्द हो गया। अब अगर ऊपरी क्षेत्रों में जम कर 2-3 घन्टे बारिश हो गयी तो यहाँ पानी को निकलने में कम से कम 8 दिन का समय लग जाता है। इन दोनों नदियों के तटबन्धों में कहीं-कहीं जगह छोड़ी हुई है और उनसे भी पानी इधर गौर बाजार में आ जाता है। कभी-कभी यह तटबन्ध टूट भी जाते हैं तब हालत और भी खराब हो जाती है। भारत की सीमा से लेकर ब्रह्मपुरी तक तटबन्ध नहीं है। इतना हिस्सा खुला हुआ है, जिससे पानी गौर बाजार में आ जाता है और बहुत ज्यादा तबाही होती है। बंजरहा गांव लालबकेया के किनारे पड़ता है। वहाँ पानी की निकासी के लिए तटबन्ध को ही तोड़ना पड़ गया है।

लालबकेया का जो तटबन्ध है वह उत्तर में 8-9 किलोमीटर ऊपर तक जनेरवा, बेलबिछुआ तक गया है। पूरब में बागमती का तटबन्ध भी लगभग करमहिया तक चला गया है। यहाँ समस्या यह है कि पूरब में

बागमती का तटबन्ध, पश्चिम में लालबकेया का तटबन्ध और दक्षिण में बैरगनियाँ रिंग बांध बना हुआ है और इन तीन तरफ के तटबन्धों के बीच है नेपाल के रौतहट जिले का मुख्यालय गौर बाजार। बैरगनियाँ रिंग बांध के नीचे सीतामढ़ी– नरकटियागंज रेल लाइन है और वह भी एक तरह से बांध का ही काम करती है। पानी निकलने के दो ही रास्ते बचते हैं–एक बागमती वाला रेल पुल और दूसरा लालबकेया का रेल पुल। इन नदियों में पानी का लेवेल जब तक नीचे नहीं जाता तब तक गौर बाजार में पानी रहता है। बरसात के मौसम में ऐसा एक बार नहीं, कई बार होता है। लालबकेया के किनारे बंजरहा गांव है उसमें 2009 में नदी का पानी घुस गया जबकि इस बार बाढ़ कुछ खास नहीं थी। इस साल वहाँ रिलीफ बांटनी पड़ गयी।

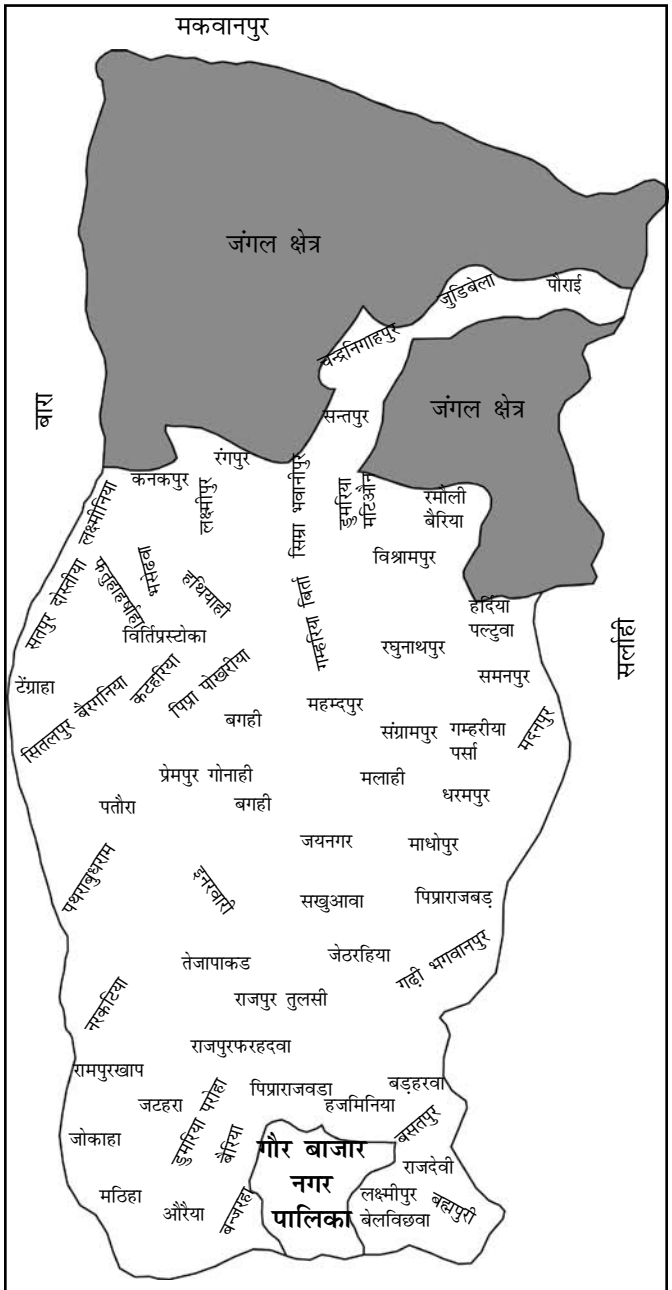

चित्र–12.1 : नेपाल का रौतहट जिला

सीतीमढ़ी जिले का बैरगनियाँ कस्बा(भारत)

उधर ज्यादा पानी आता है तो वह औरैया और मठिया में भी घुसता है। पथरा बुधराम, सरगुजवा तक पानी चला जाता है। बागमती का तटबन्ध नेपाल में ब्रह्मपुरी से शुरू होता है और उत्तर में रमौली बैरिया तक चला जाता है। बागमती के पूरब में सरलाही जिला है। बाढ़ और तटबन्ध टूटने की समस्या उस तरफ भी इसी तरह की है। गौर बाजार बैरगनियाँ तटबन्ध के उत्तरी भाग में है और इस तटबन्ध में कई जगह स्लुइस बने हुए हैं जिन्हें आमतौर पर बरसात में बन्द रखा जाता है। कभी–कभी अगर बरसात नहीं हुई तो इन स्लुइसों के माध्यम से भारत वाले हिस्से में सिंचाई के लिए व्यवस्था हो जाती है। तबाही भारत वाले हिस्से में भी कम नहीं है। वहाँ भी बागमती के पूर्वी भाग में जो तटबन्ध बना था वह मरपा सिरपाल और ढेंग को जोड़ते हुए रेल लाइन में मिल जाता है। इसमें 1993 में छः जगह दरारें पड़ीं जिससे बसबिट्टा से लेकर मोहिनी मंडल रेल स्टेशन तक की 12 पंचायतों में भीषण क्षति हुई थी। कई हिस्सों में जल जमाव हुआ जो आज भी कायम है। जहाँ दरारें पड़ी वहाँ गड्ढे बन गए जिनकी वजह से तटबन्ध आज तक नहीं बन पाया। जिस जमीन पर बालू पड़ा वह तो आज तक उस सदमे से नहीं उबरी। एक बार अक्टूबर 2009 में बंजरहा, मठिया तथा औराई जैसे गाँव पानी से जब बुरी तरह घिर गए तब इन गाँवों के लोगों ने सोचा कि बैरगनियाँ रिंग बांध को जा कर काट दें तो पानी निकल जायेगा। बाद में यह इरादा छोड़ दिया गया क्योंकि अगर यह तटबन्ध कटता है तो भारत में बड़ी तबाही होती। यह हालत तब थी जब 2009 में बहुत कम पानी आया था। साधारण वर्षों में तो उन गाँवों में घर–घर में पानी घुसता है। तब यहाँ गौर बाजार कस्बे में बरसात के समय नाव चलती है। गौर बाज़ार के रेड क्रॉस के कार्यकर्ताओं का कहना है कि, ''...1993 में बागमती में जो बाढ़ आयी थी उसमें तो सुनते हैं कि जैसे हवाई जहाज उतरता है जमीन पर उस तरह से बाढ़ का पानी आया था। करमहिया बैराज के फाटकों को खोलने के लिए चीनी इंजीनियर बराज पर आये और उसी समय पानी का जबर्दस्त रेला आया और बहुत से चीनी इंजीनियरों की लाशें भारत में मिलीं। हमारे आस–पास के गाँवों के कम से कम 200 लोग इस बाढ़ में मारे गए होंगे। इस समस्या का क्या समाधान है यह तो विशेषज्ञ लोग ही बता सकते हैं। समस्या तो बड़ी भयावह है और समाधान सुझाना हमारी क्षमता के बाहर है। ऐसे में रिलीफ बांटने के अलावा हम कर क्या सकते हैं यह जानते हुए कि यह बाढ़ समस्या का कोई समाधान नहीं है। तटबन्ध बनने के पहले बाढ़ टिकती नहीं थी, लोग खुशहाल थे। अब दो सप्ताह तक पानी भरा रहना आम बात है। सारे रास्ते बन्द और आना जाना ठप्प। सरलाही से रुपनदेही तक कहीं भी जाकर लोगों से पूछिये तो सभी निर्विवाद रूप से कहेंगे कि यह सारी समस्या तटबन्धों की वजह से है।''

संदर्भ :

1. Roy Chowdhury, P. C., Bihar District Gazetteers, Muzaffarpur, Superintendent-Secretariat Press, Bihar, Patna-1958, p. 75
2. The Indian Nation-Patna, 'K. L. Rao Surveys Bagmati', 13th Nov. 1963, p. 1
3. राम, सुरेन्द्र; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 9 अगस्त 1975, पृष्ठ 63
4. भाई, ओम प्रकाश; व्यक्तिगत संपर्क।

13

तुम्हीं बताओ कि क्या राह अख्तियार करें?

13.1 पृष्ठभूमि

अभी तक हमने बागमती, करेह और अधवारा नदी समूह के विभिन्न आयामों पर बहुत सी जानकारियां ली हैं जिनसे हमें इन नदियों के काम काज में मानवीय हस्तक्षेप की सीमा और उसके परिणाम का कुछ अन्दाजा लगता है। लक्ष्य से परियोजनाओं का दूर-दूर भागना, परिणामत: लाभार्थियों का दुर्भोग और फिर उन्हें नई नई तसल्लियाँ देकर शान्त या गुमराह करना या उन्हें सही स्थिति न बताना आदि व्यवस्था के काम करने का हिस्सा होता है। जानकारी के अभाव में आम आदमी पिसता है और जानकारी होने के बावजूद किसी संगठन के अभाव में उसकी आवाज दब जाती है।

आम आदमी देश या राज्य के संवैधानिक मंच पर किस के माध्यम से अपने आप को अभिव्यक्त करता है, प्रजातंत्र में यह बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। इन संवैधानिक संस्थाओं में जो लोग आम आदमी का प्रतिनिधित्व करते हैं, उनकी खुद की समझ कितनी है समझ होने के बावजूद उनकी कितनी बातें सुनी जाती हैं और कितनी अनसुनी हो जाती हैं, यह भी अपने आप में एक अनुत्तरित प्रश्न है। हमने देखा है कि आम जनता और उसके प्रतिनिधि मांग कुछ करते हैं, हो कुछ दूसरा ही जाता है और जो हो जाता है उसका कभी तथाकथित लाभार्थियों के साथ मिल-बैठ कर मूल्यांकन नहीं होता। ऐसी हालत में यथास्थिति बनी रहती है और सुधार की कोई गुंजाइश ही नहीं बनती।

व्यवस्था की स्थिति बैलगाड़ी के एक ऐसे गाड़ीवान की है जो उस पर माल लाद कर काठी में लालटेन टांग कर सो जाता है और उसके बैल अपनी रफ्तार से चलते रहते हैं। बीच-बीच में अगर कभी गाड़ीवान की नींद खुलती है तो वह बैलों पर दो एक चाबुक चला कर उन्हें अपनी मौजूदगी का एहसास दिला कर फिर सो जाता है। इस स्थिति को पीछे या सामने से आने वाली सभी गाड़ियाँ बड़े सहज भाव से स्वीकार करती हैं। यह इत्तिफ़ाक है कि हम इसी दौर से गुज़र रहे हैं। बिहार में सिंचाई और बाढ़ के मसले में तो इस निष्कर्ष पर शायद ही कोई विवाद होगा।

हमने बागमती और अधवारा समूह की नदियों पर बने तटबन्धों, प्रस्तावित तटबन्धों तथा उनके विकल्प के तौर पर प्रस्तावित नुनथर बांध की अद्यतन स्थिति का जाइज़ा लिया है पर देश और राज्य में इनके अतिरिक्त भी बहुत कुछ हो रहा है। इनमें से जब कुछ आयामों और योजनाओं का हम यहाँ अध्ययन करेंगे तब हमारे हस्तक्षेप का दायरा और भी ज्यादा सीमित होता दिखायी पड़ेगा। उस मुकाम पर पहुँचने के बाद हमारे लिए कौन-कौन से रास्ते खुले मिलेंगे, इस अध्याय में उन पर हम चर्चा करेंगे। इस क्रम में पहला नाम भारत की प्रस्तावित नदी जोड़ योजना का आता है।

13.2 नदी जोड़ योजना

अक्टूबर 2002 में उच्चतम न्यायालय के फैसले के बाद नदी जोड़ योजना एक बार फिर चर्चा में आयी। ऐसे दावे किये जा रहे थे कि इस योजना के क्रियान्वयन से देश में बाढ़ और सूखे की समस्या का निदान हो जायेगा।

परियोजना के दो मुख्य अंश हैं। पहले हिस्से में गंगा-ब्रह्मपुत्र घाटी की बहुत सी नदियों को जोड़ने की बात है जिसमें कोसी-घाघरा, गंडक-गंगा, घाघरा-यमुना, शारदा-यमुना, मानस-सनकोश-तीस्ता, तीस्ता-गंगा या ब्रह्मपुत्र-गंगा तथा यमुना के माध्यम से शारदा-साबरमती लिंक आदि के निर्माण का प्रस्ताव है। इसके साथ ही गंगा-सुवर्णरेखा-दामोदर-महानदी को जोड़ना भी योजना का अंग है। योजना के दूसरे भाग में, जिसे प्रायद्व ीपीय नदी जोड़ प्रकल्प कहा जाता है, उसमें महानदी, कृष्णा, गोदावरी, पेन्नार, कावेरी और वैगेई आदि मुख्य नदियाँ हैं जिन्हें जोड़ने का प्रस्ताव है। इसके अलावा केन-बेतवा, पार-तापी-नर्मदा और दमन गंगा-पिंजल जैसी नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव भी इस योजना का अंग है।

2004 के चुनाव के पहले तक राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार 5,60,000 करोड़ रुपये की इस योजना के प्रति पूरी तरह वचनबद्ध और इसके शीघ्र क्रियान्वयन के प्रति सचेष्ट नज़र आती थी। 2004 के लोकसभा चुनाव के बाद संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन (संप्रग) की सरकार सत्ता में आयी। वह इस योजना पर कदम तो फूंक-फूंक कर रख रही थी मगर शुरुआती दौर में ताल ठोंकने का स्तर पुरानी सरकार जैसा ही था।

इस परियोजना की लागत बेतरह ज़्यादा है मगर तत्कालीन राजग सरकार द्वारा यह कहा जाता रहा था कि इस राशि की व्यवस्था आंतरिक संसाधनों से कर ली जायेगी। संसाधनों की कमी न होने का आश्वासन सरकार की तरफ़ से दिया जाता रहा फिर भी एक बड़ी संख्या में प्रबुद्ध नागरिकों का मानना था कि यह राशि बहुत ही बड़ी थी और आने वाले 15 वर्षों में बढ़ कर 20,00,000 करोड़ रुपये तक पहुँच जाने वाली थी। इतने पैसों का जुगाड़ कर पाना कतई आसान नहीं है। बहुत सी नदियों पर नेपाल में प्रस्तावित बांध इस योजना के अभिन्न अंग हैं और कम से कम गंगा-ब्रह्मपुत्र क्षेत्र में नदी जोड़ योजना की सफलता इन्हीं प्रस्तावित बांधों की सफलता पर आश्रित है। ऐसी सूचना है कि भारत द्वारा नेपाल को आधिकारिक रूप से इस योजना प्रस्ताव की अभी तक जानकारी नहीं दी गयी है। जब तक भारत और नेपाल के इन प्रस्तावित बांधों को लेकर कोई संधि नहीं हो जाती तब तक गंगा-ब्रह्मपुत्र क्षेत्र में नदी जोड़ योजना का कोई मतलब नहीं होता। अगर भारत-नेपाल के बीच महाकाली संधि को उदाहरण के रूप में लिया जाए तो जो संकेत मिलते हैं वह बहुत ज़्यादा उत्साहवर्धक नहीं हैं। बराह क्षेत्र, बागमती तथा कमला परियोजनाओं पर बातचीत का सिलसिला लम्बे समय से चल रहा है मगर यह सारी वार्तायें बेनतीजा हो जाती हैं। शायद इसीलिए तत्कालीन भारत सरकार गंगा-ब्रह्मपुत्र क्षेत्र के नदी-जुड़ाव के प्रति उतनी आग्रही नहीं थी और उसकी सारी कोशिशें प्रायद्वीपीय भारत की 16 नदी-जोड़ योजनाओं पर केन्द्रित थीं। 2004 के बाद हुए सत्ता परिवर्तन से भी यथास्थिति बनी रही।

इस नदी जोड़ योजना पर बांग्लादेश को भी ऐतराज़ है क्योंकि उसे अंदेशा है कि भारत में नदियों के जुड़ने के बाद गंगा और ब्रह्मपुत्र घाटी में उसे पानी कम मिलेगा मगर भारत सरकार का उनसे यह कहना है कि यह योजना अभी परिकल्पना के ही स्तर पर है। अत: उसे चिन्ता नहीं करनी चाहिये। बांग्लादेश में सरकार और जनता दोनों ही इस योजना से चिन्तित हैं और वह एक समय उस मसले को अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक उठाने की तैयारी में थे। फिलहाल वहाँ इस मसले पर शान्ति है।

13.3 नदी जोड़ योजना और इसमें राज्यों की भूमिका

नदी जोड़ योजना की सफलता इस योजना के प्रति सम्बद्ध राज्यों की सहमति पर भी आश्रित थी। इसके लिए सभी राज्यों की सहमति चाहिये थी लेकिन केरल ने तो स्पष्ट शब्दों में इस योजना से अपना किनारा कर लिया है। पंजाब ने भी इस योजना से हाथ खींचा हुआ है। इस योजना में महाराष्ट्र की भागीदारी नहीं के बराबर है।

बिहार एक ऐसा राज्य है जिसका शुमार पानी की अधिकता वाले राज्यों में किया जाता है। राज्य की यह स्थिति उसे अन्य राज्यों के मुकाबले अलग रखती है और उसे मोल-तोल करने की ताकत देती है। राष्ट्रीय जनता दल के अध्यक्ष लालू प्रसाद यादव ने बिहार विधान परिषद्, पटना के सभा-भवन में आयोजित नदी जोड़ योजना पर एक सार्वजनिक मीटिंग में 2 अप्रैल 2003 को स्पष्ट रूप से कहा कि वह 'हमारे पानी' को कहीं भी बाहर नहीं जाने देंगे। यही बात उन्होंने 29 अप्रैल 2003 को पटना में आयोजित 'लाठी घुमावन-तेल पिलावन' रैली में भी कही थी। मगर उसी साल मई के महीने में उनके सुर में परिवर्तन आया जब उन्होंने कहा कि 'यह पानी हमारा पेट्रोल है'। इसका मतलब एकदम अलग होता है। जब तक बेचा न जाए तब तक पानी और पेट्रोल में कोई फ़र्क नहीं है। इससे संकेत मिलता है कि अगर बिहार के पानी की वाज़िब या मुंहमांगी कीमत देने के लिए कोई तैयार है तो उसे पानी को बेचने में कोई गुरेज़ नहीं है। पेट्रोल तो फिलहाल मुंहमांगी कीमतों पर बिक ही रहा है और इस तरह अगर कीमत मिल जाए तो बिहार एक तरह से नदी जोड़ योजना का समर्थन करेगा।

दिक्कत यह है कि बिहार अगर अपने पानी की कीमत मांगता है तो दूसरे देश और राज्य, जहाँ से यह पानी आता है, इस पानी पर अपना हक क्यों नहीं जमायेंगे और कीमत मांगेंगे? द्वितीय सिंचाई आयोग-बिहार सरकार 1994 के अनुसार उत्तर बिहार से होकर जितना पानी गुज़रता है उसका केवल 19 प्रतिशत स्थानीय वर्षापात से आता है। बाकी का 81 प्रतिशत पानी दूसरे राज्यों और नेपाल से आता है। अगर गंगा नदी में बरसात के मौसम में बहने वाले पानी की बात की जाए तो उस समय नदी में जितना पानी बहता है उसका मात्र तीन प्रतिशत पानी ही बिहार में गंगा का 'स्थानीय सीधी वर्षा वाला पानी' होता है। इसके अलावा जाड़े के मौसम में उत्तर बिहार की नदियों में जो पानी बहता है उसका 70 प्रतिशत भाग नेपाल से आता है। अगर बिहार अपने पानी की कीमत वसूल करने की बात करता है तो उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल और नेपाल ऐसा क्यों नहीं करेंगे? नेपाल तो पहले से ही प्रस्तावित बांधों से मिलने वाली सिंचाई की कीमत वसूल करने की तरफ़ इशारा कर रहा है। बाद में इस मसले पर बिहार विधान सभा में भी बहस हुई जिसमें विपक्षी भारतीय जनता पार्टी (जो कि उस समय केन्द्र में सत्ताधारी गठजोड़ का मुख्य घटक थी) का मानना था कि राज्य सरकार प्रस्तावित नदी जोड़ योजना की राह में रोड़े डाल रही है।

भारतीय जनता पार्टी ने 11 अगस्त 2002 को पटना में बिहार की बाढ़ समस्या पर एक सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन में इस बात पर जोर दिया गया कि नेपाल में प्रस्तावित बांधों का मसला कई दशकों से लम्बित है और अनिश्चित है। अत:, राज्य सरकार को बिहार की बाढ़ समस्या की जिम्मेवारी केन्द्र सरकार पर नहीं ठेलनी चाहिये और वह जनता के प्रति अपनी जिम्मेवारी से मुक्त नहीं हो सकती। राज्य सरकार को अपनी प्रशासनिक मशीनरी को चुस्त-दुरुस्त करके बाढ़ का स्थानीय स्तर पर ही मुकाबला करना चाहिये। जिस समय यह सम्मेलन हुआ था उस समय वर्तमान नदी जोड़ योजना चर्चा में नहीं थी मगर अब भारतीय जनता पार्टी समेत सारी राजनीतिक पार्टियां सारी समस्याओं का समाधान नदी जोड़ योजना में देखती हैं जब कि उन्हें अच्छी तरह मालूम है कि गंगा-ब्रह्मपुत्र प्रक्षेत्र में नदी जोड़ योजना का मतलब नेपाल में बांधों का निर्माण पहले है और दूसरा कुछ बाद में।

मज़े की बात यह है कि सारी नदियों को जोड़ने का काम नहरों के माध्यम से होगा। प्रान्त की सारी नहरें हर साल बरसात के मौसम में बिना नागा बेतरह टूटती रहती हैं। राज्य की तिरहुत मुख्य नहर, सारण नहर, सोन नहर, और पूर्वी कोसी मुख्य नहर आदि सभी नहरें टूटती रहती हैं। नहरों और तटबन्धों में बाढ़ के मौसम में इस तरह की दरारें पड़ना बिहार में रोज़मर्रा की घटना है। नदी जोड़ योजना में बिहार से कोसी-घाघरा, गंडक-गंगा, घाघरा-यमुना, शारदा-यमुना और यमुना-राजस्थान सम्पर्क नहरों के माध्यम से पानी गुजरात तक पहुँचाये जाने की बात है। इसी प्रकार गंगा-दामोदर-सुबर्णरेखा और सुबर्णरेखा-महानदी को जोड़ते हुए यहाँ से पानी दक्षिण में कावेरी तक ले जाने की बात है। अब अगर बिहार में नहरों और तटबन्धों की यही हालत रही तो जब भारत के पश्चिम और दक्षिण में लोग पानी का इन्तज़ार कर रहे होंगे उस समय बिहार में नहरों की मरम्मत का टेण्डर निकल रहा होगा। यही वह समय होगा जबकि बिहार में नदियों का पानी काफ़ी घट चुका होगा और तब नेपाल में बड़े बांधों के प्रस्तावित निर्माण के बावजूद बिहारी नदियों में इतना पानी नहीं होगा कि उसे दूसरी जगहों पर भेजा जा सके क्योंकि नदी जोड़ योजना के संकल्पों में यह निहित है कि पानी स्थानीय जरूरतों को पूरा करने के बाद ही आगे कहीं ले जाया जायेगा। इस तरह से इसके पहले कि नदी जोड़ योजना का क्रियान्वयन हो, इन सारे पहलुओं पर एक गंभीर विचार-विमर्श और बहस की जरूरत है। इसके अलावा नदी जोड़ योजना के पर्यावरणीय प्रभाव की जो भी जानकारी अभी उपलब्ध है उससे इतना तय लगता है कि इन नहरों के निर्माण से गंगा घाटी क्षेत्र में बुरी तरह जल-जमाव की समस्या देखने में आयेगी क्योंकि इस इलाके में ज़मीन का ढाल प्राय: सपाट है और यह नहरें वर्षा के पानी के प्रवाह में रोड़ा अटकायेंगीं। नहरों से होने वाला रिसाव भी समस्या को बद से बदतर बनायेगा और गंगा घाटी क्षेत्र की मिट्टी की बलुआही बनावट इस काम में मदद पहुँचायेगी। राज्य में निर्मित नहरों से फ़िलहाल यही हो रहा है। नदी जोड़ योजना से होने वाला विस्थापन और पुनर्वास अपने आप में एक अलग मुद्दा है जो हमेशा विवादित रहा है।

बिहार सरकार ने यहाँ की नदियों में पानी की अतिरिक्त उपलब्धता परखने और अपनी जरूरतों की खपत का अनुमान करने के लिए एक

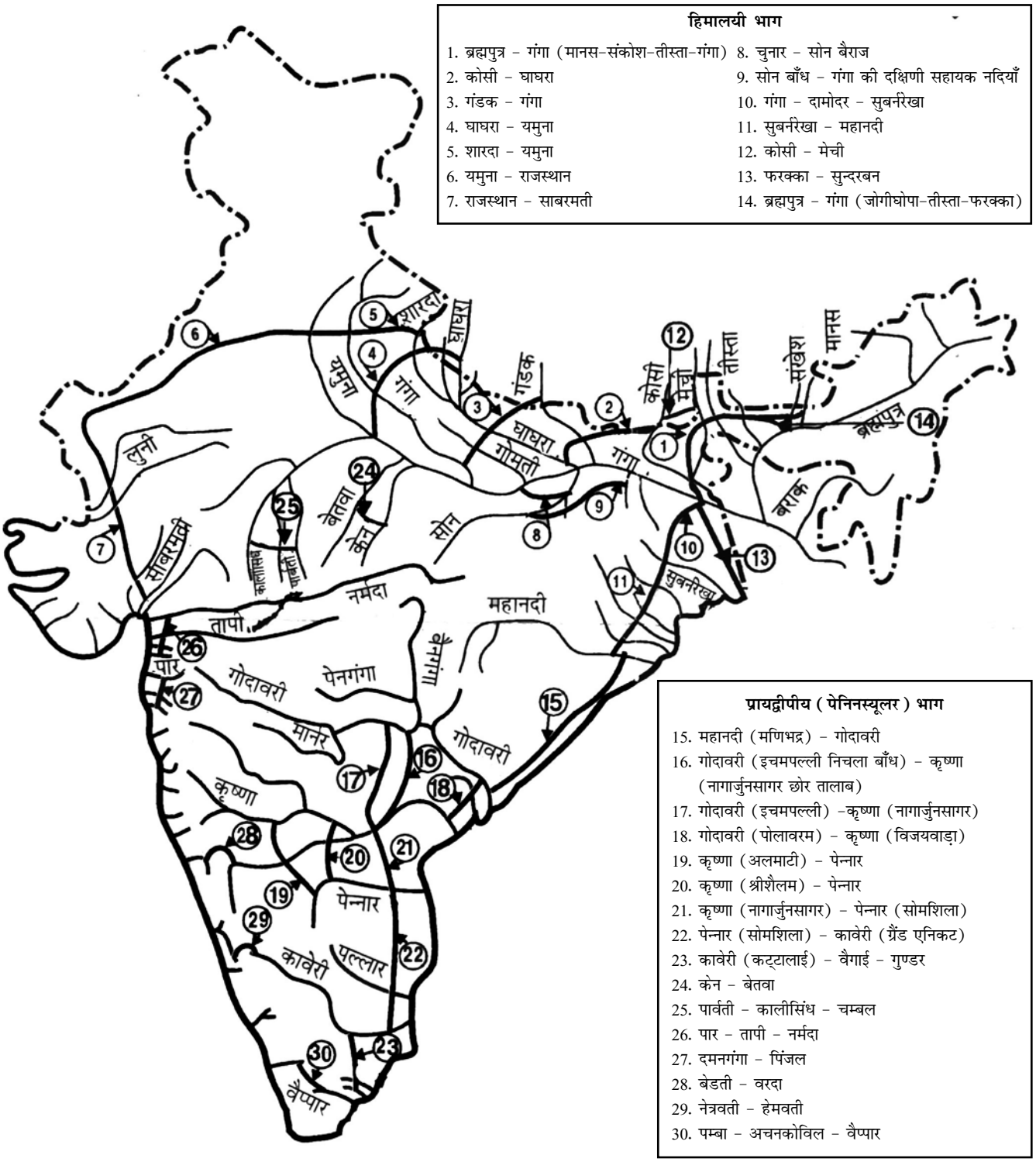

चित्र-13.1 : भारत की प्रस्तावित नदी जोड़ योजना

सात सदस्यीय वरिष्ठ इंजीनियरों की समिति का गठन किया (जुलाई 2003)।[1] इस तकनीकी समिति से यह आशा की गयी थी कि वह सरकार को यह बतायेगी कि बिहार के पास दूसरों को देने के लिए अतिरिक्त पानी है या नहीं। दिसम्बर 2003 में प्रस्तुत इस समिति की रिपोर्ट में 2050 तक राज्य में इफ़रात पानी होने की बात कही गयी है और कुछ सावधानियों के साथ नदी जोड़ योजना में 'भागीदारी की गाड़ी छूट न जाए' जैसी सिफ़ारिश की गयी है।[2]

इसके बावजूद बिहार यह सुनिश्चित कर लेना चाहता था कि इसके पहले कि यहाँ से पानी देश के दूसरे हिस्सों में स्थानान्तरित किया जाए, राज्य के विभिन्न भागों में हर मौसम में पानी की जरूरतें पूरी कर दी जायें। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है, ''आम धारणा यह है कि राज्य में पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और इसे देश के दक्षिणी और पश्चिमी क्षेत्रों में भेजा जा सकता है'' समिति ने यह बात सही नहीं मानी है। रिपोर्ट कहती है कि बिहार में जितना सतही पानी अभी उपलब्ध है, वह

सन् 2050 तक ही राज्य की जरूरतों को पूरा कर सकेगा और मुश्किल से 271 करोड़ घनमीटर पानी ही ऐसा है जिसे दूसरे राज्यों को दिया जा सकता है।[3] रिपोर्ट में इस बात पर चिन्ता व्यक्त की गयी है, ''अधिकांश पानी संचय जलाशयों के माध्यम से दूसरे राज्यों को दिया जायेगा यद्यपि नदी के बहते पानी को भी स्थानान्तरित करने की बात भी कही जाती है। पानी के इस तरह के स्थानान्तरण से यहाँ की बाढ़ की परिस्थिति पर कोई खास फर्क नहीं पड़ने वाला है।''[4] रिपोर्ट में सिफारिश की गयी है, ''नेशनल वाटर डेवलपमेन्ट एजेन्सी द्वारा बनायी गयी परियोजना में बिहार की बाढ़ की समस्या का कोई खास ध्यान नहीं रखा गया है और यह काम प्राथमिकता के स्तर पर होना चाहिये। इसके लिए (क) हिमालय से उतरने वाली सभी नदियों पर भविष्य में निर्मित होने वाले जलाशयों में, खासकर कोसी और गंडक नदी पर प्रस्तावित जलाशय की क्षमता कुल संचयन क्षमता का 10 से 15 प्रतिशत बाढ़ नियंत्रण के लिए जरूर होनी चाहिये। (ख) इन प्रस्तावित जलाशयों में भूमि संरक्षण के लिए इनके जल-ग्रहण क्षेत्रों में प्रभावकारी, कम खर्च वाले तथा लाभकारी काम हाथ में लेने होंगे ताकि (1) जलाशयों में गाद की आमद कम हो सके, (2) इन जलाशयों का प्रभावी जीवन काल बढाया जा सके और (3) यह योजना नेपाल वासियों के लिए लाभकारी साबित हो सके।''[5] समिति का प्रस्ताव था कि बिहार से गुज़रने वाली नदियों पर प्रस्तावित जलाशयों की योजना बनाने, उनके निर्माण और संचालन में बिहार को प्रारम्भ से ही शामिल करना पड़ेगा।''[6]

8 सितम्बर 2003 को नई दिल्ली में संपन्न तकनीकी सलाहकार समिति की 32वीं मीटिंग में, जिसकी अध्यक्षता केन्द्रीय जल आयोग के अध्यक्ष कर रहे थे, नेशनल वाटर डेवलपमेन्ट एजेन्सी के महानिदेशक ने सुझाव दिया था कि एन०डब्लू०डी०ए० ने पानी की उपलब्धता का जो अध्ययन किया है उसमें भूमिगत जल को शामिल नहीं किया जाना चाहिये।[7] इस सुझाव के मद्देनज़र बिहार को लगा कि एन०डब्लू०डी०ए० ने उसकी आशंकाओं पर ध्यान नहीं दिया है और उसने बिहार से संबंधित उन सभी छः नदी जोड़ योजनाओं का अध्ययन करने के लिए सितम्बर 2004 में एक दूसरी समिति नियुक्त करने का फैसला किया। बदली परिस्थिति में इस समिति ने उपलब्ध केवल सतही जल का ही अध्ययन किया। इस समिति से यह भी अपेक्षा की गयी थी कि यह (1) बिहार की बाढ़ समस्या पर अपना ध्यान केन्द्रित करेगी और कोसी-घाघरा लिंक का इस पृष्ठभूमि में अध्ययन करेगी कि उसमें कमला, बागमती, अधवारा समूह की नदियों और बूढ़ी गंडक का भी समावेश हो जाए, (2) चुनार-सोन बराज तथा कदवन एस०टी०जी० लिंक से होने वाली सिंचाई को किस तरह सर्वाधिक स्तर पर पहुंचाया जा सकेगा, उस पर अपने सुझाव देगी, (3) पम्प नहरों के माध्यम से पूर्वी बिहार में सिंचाई के रास्ते सुझायेगी और बरसात के मौसम को छोड़ कर गंगा में पानी की मात्रा कैसे बढ़ायी जाए, उस पर अपनी राय देगी, (4) राज्य की विभिन्न नदी घाटियों में प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता का पता लगायेगी।[8]

इस समिति की रिपोर्ट अप्रैल 2005 में आयी। एन०डब्लू०डी०ए० के उद्देश्यों का समर्थन करने के बावजूद इस रिपोर्ट में कहा गया, ''...एन०डब्लू०डी०ए० उन बेसिनों के विकास की पूरी तरह से अनदेखी करता है जिसको वह अधिक पानी वाला क्षेत्र बता कर वहाँ से पानी का स्थानान्तरण करना चाहता है। नदी जोड़ योजना प्रस्ताव इस बात की परवाह नहीं करता है कि तथाकथित अधिक पानी वाली नदी घाटियों में, जिनसे वह कम पानी वाली घाटियों में पानी ले जाना चाहता है, उन कम पानी वाली घाटियों के मुकाबले अधिक पानी वाली घाटियों के विकास का स्तर क्या है? उसको क्षेत्रीय विषमताओं और गैर-बराबरी की भी परवाह नहीं है। यह वर्तमान प्रस्तावित मेगा नदी जोड़ परियोजना अब तक की सबसे बड़ी और जल-संसधनों के विकास की अंतिम योजना है। इसके निरूपण और निर्माण में होने वाली जरा सी भी गलती के परिणाम उलटे और भयानक हो जायेंगे। इस गलती का कोई सुधार भी भविष्य में संभव नहीं होगा।''[9]

जाहिर है कि राज्य के दो भूतपूर्व अभियंता प्रमुखों और दो चीफ इंजीनियरों की इस समिति ने एन०डब्लू०डी०ए० के प्रस्ताव को कतई सहज भाव से नहीं लिया।

इस समिति ने राज्य में उपलब्ध पानी का अध्ययन कर के बताया कि 1994 में राज्य के द्वितीय सिंचाई आयोग ने पानी की जो उपलब्ध मात्रा स्थिर की थी उसमें खामियाँ हैं। इस समिति ने खुद गणना कर के बताया कि बिहार के सतही जल का 76.2 प्रतिशत पानी राज्य के बाहर के जल-ग्रहण क्षेत्र से आता है और केवल 23.8 प्रतिशत पानी ही स्थानीय भूमि पर सृजित होता है। राज्य की जमीन सपाट होने के कारण इस पानी को अपनी जमीन पर संचित भी नहीं किया जा सकता क्योंकि यहाँ संचयन जलाशय बन ही नहीं सकते।[10]

बिहार को बाढ़ प्रवण राज्य जरूर कहा जाता है मगर गंगा के दक्षिण वाला हिस्सा तो सूखे से प्रभावित रहता है, ऐसा समिति ने कहा है। दक्षिण बिहार में संपूर्ण राज्य के कृषि क्षेत्र का 36.82 प्रतिशत हिस्सा अवस्थित है जिस पर पानी की उपलब्धता कुल पानी की मात्र 13.87 प्रतिशत ही है। अगर सोन नदी घाटी के क्षेत्र को दक्षिण बिहार से निकाल दिया जाए तब वहाँ का कृषि क्षेत्र राज्य के कुल कृषि क्षेत्र का 24.09 प्रतिशत बचता है जिस पर पानी की उपलब्धता राज्य में कुल सतही पानी का मात्र 6.42 प्रतिशत है। अतः समिति इस नतीजे पर पहुंची, ''...इससे साफ जाहिर होता है कि इस क्षेत्र को दूसरे क्षेत्रों और नदी घाटियों से पानी स्थानान्तरित करके लाने की जरूरत है।''[11]

समिति को एन०डब्लू०डी०ए० से यह भी शिकायत थी कि उसने राज्य के जनसंख्या घनत्व का संज्ञान नहीं लिया और न ही उसने यहाँ की खाद्यान्न की जरूरतों को समझा लेकिन इस बात की सिफारिश कर दी कि किसी भी नई परियोजना में सिंचाई तीव्रता 100 से ज्यादा न रखी जाए और अगर किसी मौजूदा परियोजना में सिंचाई तीव्रता 100 से अधिक है तो उसे भी 100 पर सीमित कर दिया जाय। समिति इस सिंचाई तीव्रता को 230 से 250 के बीच में रखने का प्रस्ताव करती है।[12] बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में भी इस विशेषज्ञ समिति को ऐसी ही शिकायतें हैं क्योंकि नेपाल में प्रस्तावित बांधों में बाढ़ नियंत्रण का प्रावधान ही नहीं था। कोसी-घाघरा लिंक के बारे में समिति का कहना था कि बागमती, कमला और मसान नदियों पर हिमालय में बांध बनाने की जरूरत है और सभी बांधों में बाढ़ के पानी को रोकने के लिए प्रावधान करना होगा।[13] समिति की यह भी मांग है कि ब्रह्मपुत्र-गंगा के पानी को अगर पश्चिम के राज्यों की तरफ ले जाने का प्रयास किया जाता है तो ऐसा करने के पहले बिहार, पश्चिम बंगाल तथा बांग्लादेश के लिए पानी की जरूरतों

को ध्यान में रखना चाहिये ताकि अंतर्राष्ट्रीय अर्हताओं को पूरा करने के लिए बिहार पर दबाव न पड़े।[14]

समिति के अनुसार बिहार में पानी की प्रति व्यक्ति उपलब्धता चिन्ताजनक स्थिति में है। दक्षिण बिहार में सोन घाटी को छोड़ कर बाकी सभी नदी घाटियों में प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता स्थापित मानक से कम है और 2050 पहुँचते-पहुँचते यह उपलब्धता 500 घन मीटर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष से नीचे चली जाने वाली है। समिति का मानना है कि दक्षिण बिहार की कई नदी घाटियों में पानी की उपलब्धता दक्षिण की कृष्णा, कावेरी और पेन्नार नदी घाटी से भी कम है।[15]

इस विशेषज्ञ समिति ने बिहार की नदियों को आपस में जोड़ कर यहाँ की बाढ़ और सिंचाई समस्या का समाधान पहले खोजने का प्रस्ताव किया है। इन नदी जोड़ योजनाओं की उपलब्धि देख कर और राज्य की अपनी जरूरतें पूरी कर लेने के बाद ही बिहार यहाँ के पानी को दूसरे राज्यों में भेजने की बात सोचेगा। इस रिपोर्ट के आने के बाद राज्य सरकार ने यह आश्वासन दिया था कि अप्रैल 2006 से इस योजना पर काम शुरू होगा। फिर तय हुआ कि यह काम अप्रैल 2007 में शुरू होगा लेकिन इस बीच केवल इन योजनाओं की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट (डी०पी०आर०) तैयार करने के लिए टेण्डर जारी किये गए। जब डी०पी०आर० ही तैयार नहीं थी तो योजना पर काम कहाँ से शुरू होता? बिहार के इस योजना प्रस्ताव पर केन्द्र की राय अभी तक नहीं मिली है।

नदी जोड़ योजना का निश्चित संबंध नेपाल में प्रस्तावित बांधों से है लेकिन आधिकारिक तौर पर नेपाल को भारत द्वारा इस योजना की कोई सूचना नहीं दी गयी है। इसलिए नेपाल की इस योजना पर क्या प्रतिक्रिया होती है इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है किन्तु वहाँ का प्रबुद्ध वर्ग इस योजना प्रस्ताव से जरूर चिन्तित है। उनके अंदेशों पर हम अध्याय-4 में कुछ इशारा कर आये हैं। भारत सरकार नदी जोड़ योजना के हिमालय वाले हिस्से पर शुरू से लेकर अब तक आग्रही नहीं रही है और उसका सारा ध्यान दक्षिण भारत की योजनाओं पर ही केन्द्रित रहा। देश में चल रही नदी जोड़ योजना पर तीखी बहस और उसे खारिज करने की मांग को लेकर बहुत से क्रियाशील समूह आगे आये। इसी तरह इस योजना के समर्थन में भी काफी संख्या में लोग जुट गए।

28 जून 2009 को केन्द्रीय जल-संसाधन मंत्री पवन कुमार बंसल ने राज्य सभा को बताया, ''नदी जोड़ योजना के 30 लिंक को चिह्नित किया जा चुका है। इन तीस में से 16 योजनाओं की संभाव्यता रिपोर्ट तैयार कर ली गयी है। लेकिन यह राज्य का विषय है और केन्द्र उन पर कोई चीज़ थोप नहीं सकता। वह केवल इन कामों में मदद भर कर सकता है और पानी के न्याय संगत उपयोग में एक उत्प्रेरक की भूमिका अदा कर सकता है।'' यही बात उन्होंने राज्य सभा में 9 जुलाई 2009 को दुहरायी। लेकिन इस पूरी बहस पर एक तरह से अस्थाई रोक तब लग गयी जब संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यू०पी०ए०) सरकार के सबसे बड़े घटक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महासचिव राहुल गांधी ने सितम्बर 2009 में चेन्नई में नदी जोड़ योजना के बारे में अपनी व्यक्तिगत राय देते हुए कहा, ''...पर्यावरणीय दृष्टि से यह एक बहुत ही खतरनाक योजना है... पर्यावरण के साथ खिलवाड़ करना अच्छी बात नहीं है।'' उन्होंने आगे कहा, ''स्थानीय तौर पर नदी जोड़ का सिंचाई में वृद्धि का कुछ अर्थ हो सकता है लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर तो यह एक आपदा ही होगी।''[16] राहुल गांधी की व्यक्तिगत राय भी अभी बहुत मायने रखती है और शायद उसी का परिणाम था कि 6 अक्टूबर 2009 को नई दिल्ली में केन्द्रीय वन और पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने इसी आशय का एक बयान दिया।[17] यह दोनों ही व्यक्ति परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से वर्तमान केन्द्रीय सरकार की नुमाइन्दगी करते हैं, इसलिए इतना तो तय है कि जब तक यू०पी०ए० का शासन रहेगा तब तक नदी जोड़ योजना ठंडे बस्ते में पड़ी रहेगी। अगर कभी केन्द्र में सरकार बदली तो नदी जोड़ योजना का ज़िन्न फिर बाहर आयेगा और, मुमकिन है, पहले से ज्यादा ताकतवर हो कर सामने आये।

बिहार की अपनी नदी जोड़ योजना–अपने वायदे के अनुसार बिहार सरकार अपनी नदी जोड़ योजना पर काम कर रही है जिसका विवरण हम नीचे दे रहे हैं–[18]

बिहार सरकार द्वारा अपनी प्राथमिकताएं यथा–दक्षिण बिहार के सुखाड़ की समस्या का निदान करने, उत्तर बिहार में बाढ़ की विभीषिका को कम करने, जल निस्सरण की व्यवस्था में सुधार लाने, 250 प्रतिशत कृषि सघनता पर नहर से सिंचाई उपलब्ध कराने एवं राज्य में उपलब्ध जल संसाधन को विकसित कर इसका इष्टतम उपयोग करना है। राज्य के अन्दर की नदियों को जोड़ने की योजना की पहचान कर उनके विस्तृत योजना प्रतिवेदन को इस तरह तैयार किया गया है कि इनमें कोई अन्तर्राज्यीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय पहलू नहीं रहे किन्तु भविष्य में आवश्यकतानुसार इनका विस्तार/समन्वय अन्तर्राज्यीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय योजनाओं में से किया जा सके।

उत्तर बिहार में कोसी बेसिन से पश्चिम की ओर कमला तथा बागमती-अधवारा बेसिनों में बीच की नदियों को जोड़ कर जलांतरण करने, कोसी बेसिन से पूर्व की ओर महानन्दा (मेची) को बेसिन में बीच की नदियों को जोड़कर जलांतरण करने तथा गंडक परियोजना में जल-उपलब्धता को स्थायित्व प्रदान एवं विस्तार करने हेतु, बाया तथा बूढ़ी गंडक के जल का अंतरण करने की योजनाओं की पहचान की गयी।

इसी तरह दक्षिण बिहार में सोन-पुनपुन-हरोहर-किउल लिंक का निर्माण एवं पार करने वाली सभी नदियों से जलांतरण करने, गंगा से पम्प कर दक्षिण बिहार में जलांतरण (बाढ़-नवादा पम्प नहर एवं बक्सर पम्प नहर) करने तथा परम्परागत सिंचाई प्रणालियों यथा आहरों तथा पईनों को बेसिन सिंचाई नेटवर्क से जोड़े जोने की पहचान की गयी।

साथ ही उत्तर बिहार में बाढ़ की विभीषिका को कम करने के लिए बाढ़ प्रभावित नदी से निकट के बेसिन के बेहतर स्थिति वाली नदी में जल का अंतरण करने की योजनाएँ-कोहरा (बूढ़ी गंडक)-चंद्रावत (गंडक) लिंक, बूढ़ी गंडक-नोन-बाया-गंगा लिंक, बागमती-बूढ़ी गंडक (बेलवाधार के माध्यम) लिंक एवं कोसी गंगा लिंक योजनाओं की पहचान की गयी।

इस प्रकार पहचान की गयी कुल 18 योजनाओं में से प्रथम चरण में 6 योजनाओं का डी०पी०आर० विभिन्न परामर्शी संस्थानों के माध्यम से तैयार कराया जा रहा है।

जिन योजनाओं का विस्तृत योजना प्रतिवेदन (डी०पी०आर०) तैयार हो रहा है, वे निम्नवत् हैं–

1. बागमती बहूद्देशीय परियोजना में दो चरणों में कोसी नदी से जल हस्तान्तरण के साथ इसके प्रथम चरण में भारत नेपाल सीमा के पास ढेंग के समीप बराज निर्माण योजना का डी०पी०आर० तैयार कराया जा रहा है।
2. वर्तमान गंडक नहर प्रणाली में जल संवर्द्धन के लिये बूढ़ी गंडक एवं बाया नदी से जल का अंतरण एवं गंडक नदी पर अरेराज के समीप गंडक योजना चरण-II के अन्तर्गत एक दूसरे बराज का निर्माण।
3. सोन नहर प्रणाली की इन्द्रपुरी बराज के जल पर निर्भरता कम करने हेतु सोन नहर सिस्टम के जल में संवर्द्धन करने के लिये सोन नदी पर अरवल/बलिदाद के समीप एक बराज का निर्माण करना ताकि इन्द्रपुरी बराज पर बचे जल का उपयोग पुनपुन-हरोहर-किउल बेसिन में किया जा सके।
4. मोकामा टाल में जल-निस्सरण एवं आर्थक विकास के लिये जल का उत्तम उपयोग।
5. नवादा जिला में सकरी नदी पर बकसोती बराज योजना एवं नाटा नदी पर बने नाटा वीयर के स्थान पर नाटा बराज निर्माण कर सकरी नदी को नाटा नदी से जोड़े जाने की योजना।
6. धनारजै जलाशय तथा फुलवरिया नहर प्रणाली से सम्पर्क योजना।

उपर्युक्त के अतिरिक्त निम्नांकित 12 योजनाओं की अभिरुचि की अभिव्यक्ति आमंत्रित की गयी है एवं परामार्शियों के चयन की कार्रवाई प्रगति में है–

1. कोसी-अधवारा–बागमती सम्पर्क नहर के माध्यम से जल अंतरण करते हुए बागमती सिंचाई एवं जल निस्सरण योजना चरण-II (कटौंझा, मुजफ्फरपुर के पास बागमती पर एक अन्य बराज) एवं अधवारा बहूद्देशीय योजना का विकास।
2. भारत भाग में कोसी मेची सम्पर्क नहर का निर्माण करते हुए कोसी नदी के जल को महानन्दा बेसिन में अंतरित करते हुए क्षेत्र में सिंचाई एवं जल निस्सरण की योजना।
3. सोन-किउल सम्पर्क नहर के माध्यम से सोन के जल को एवं बाढ़-नवादा पम्प नहर योजना द्वारा गंगा जल को अंतरित करते हुए पुनपुन-हरोहर-किउल बेसिन का सिंचाई एवं जल निस्सरण हेतु बहूद्देशीय विकास।
4. कोहरा-चन्द्रावत लिंक नहर
5. बूढ़ी गंडक-नोन-बाया-गंगा लिंक नहर
6. बागमती-बूढ़ी गंडक लिंक नहर
7. कोसी-गंगा लिंक नहर
8. उत्तर बिहार की नदियों (गंगा नदी सहित) को गहरा (सिल्ट हटाने) करने की योजना।
9. कर्मनाशा/दुर्गावती-सोन सम्पर्क नहर योजना
10. सोन बेसिन में काव नदी पर बराज का निर्माण
11. बक्सर में पम्प नहर योजना द्वारा गंगा जल का दक्षिण बिहार में अंतरण।
12. बदुआ-चन्दन बेसिन का विकास।

उपर्युक्त क्रमांक 2 से 7 तक छः योजनाओं के DPR तैयार करने के कार्य हेतु NWDA से अनुरोध किया गया है जिसके अन्तर्गत पूर्व संभाव्यता प्रतिवेदन एवं संभाव्यता प्रतिवेदन तैयार करने का कार्य आरम्भ हो गया है।

यह बड़ी अजीब बात है कि जिस एन०डब्लू०डी०ए० पर राज्य सरकार उसके हितों की अनदेखी का आरोप लगाती रही है, उसी के पास वह इन योजनाओं का डी०पी०आर० बनवाने के लिए चली जाती है। हम यह भी आशा करते हैं कि ढेंग के पास बागमती पर बराज बनाने का निर्णय लेते समय नेपाल द्वारा करमहिया बराज से पानी स्थानान्तरित कर लिए जाने का संज्ञान लिया गया होगा।

13.4 बाढ़ समस्या के समाधान के लिए सतही पानी को ज़मीन के अन्दर घुसाने की विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट (2006)

बिहार की नदी जोड़ योजना संबंधी विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट (2005) के आने के साथ-साथ राज्य सरकार ने 13 अप्रैल 2005 को एक तीसरी विशेषज्ञ समिति का गठन कर डाला। इस समिति की जरूरत इसलिए पड़ी क्योंकि 6 अप्रैल 2005 को मुख्यमंत्रियों के एक सम्मेलन में प्रस्ताव आया कि कोसी नदी की बाढ़ समस्या के निदान हेतु भारत-नेपाल सीमा पर बड़े-बड़े विभिन्न स्तरीय कुएं बना कर नदी के पानी को जमीन के अन्दर भेज देने का कार्यक्रम हाथ में लिया जाए जिससे बाढ़ के पानी का काफी हिस्सा भूमिगत हो जाए और इस तरह से बाढ़ की समस्या का एक हद तक समाधान कर लिया जाय। ऐसा अनुमान किया गया था कि भूमिगत जल की समृद्धि से गरमा तक में सिंचाई की व्यवस्था हो सकेगी। बाद में इस अध्ययन में कमला और बागमती नदियों को भी जोड़ दिया गया। इस समिति की रिपोर्ट मई 2006 में आयी।

बाढ़ के पानी को भूमिगत जल की सतह तक पहुँचाने की यह तकनीक परीक्षित तकनीक नहीं है और इसके परिणामों के प्रति इंजीनियरिंग तबका अभी तक आश्वस्त नहीं है। इसलिए समिति केवल यह सुझाव देकर रह गयी, ''...जितने भी रिचार्ज ट्यूब वेल बनाने की संभावना हो उसके 10 से 15 प्रतिशत संख्या में इस तरह के कुएं पाइलट प्रोजेक्ट के तौर पर लगाये जाएं और इस तरह के कार्यक्रम की सफलता का अध्ययन करने के बाद ही आगे कोई काम हाथ में लिया जाय।''[19]

13.5 बिहार की बाढ़ समस्या की तकनीकी समिति (2008)

2007 (अगस्त) में बिहार सरकार ने राज्य के भूतपूर्व अभियंता प्रमुख नीलेन्दु सान्याल की अध्यक्षता में एक तकनीकी समिति का गठन किया। इस समिति से यह अपेक्षा थी कि वह बाढ़ के समय बड़े पैमाने पर तटबन्धों में पड़ने वाली दरारों के कारणों की जांच करेगी, बाढ़ के समय पैदा होने वाली आकस्मिक समस्याओं से निपटने के तौर-तरीके सुझायेगी, बाढ़ों के प्रबन्धन की व्यवस्था का रास्ता बतायेगी, तटबन्धों से मिलने वाली बाढ़ सुरक्षा की सफलता दर का निर्धारण करेगी, नदियों के व्यवहार को

ध्यान में रखते हुए अल्पावधि और मध्यावधि वाले संरचनात्मक उपायों की व्यावहारिकता और उनके क्रियान्वयन पर राय देगी, बाढ़ से निपटने के दीर्घावधिक कायक्रमों में केन्द्रीय सरकार की भूमिका और इन सुझावों को पूरा करने के लिए धन के स्त्रोतों को खोजने में मदद करेगी, नदियों को गहरा करने के व्यावहारिक समाधान पर अपनी राय देगी और नदियों के भारतीय भाग में गाद के परिणाम को कम करने के तरीके सुझायेगी। बाद में इस अध्ययन में बाढ़ के दौरान तटबन्धों में पड़ने वाली दरारों को पाटने के लिए आधुनिकतम उपायों की उपयोगिता पर समिति को अपनी राय देने के लिए भी कहा गया।

अपनी सिफारिशें देते हुए इस समिति की रिपोर्ट पहले तटबन्धों में पड़ने वाली दरार की परिभाषा देती है। वह कहती है, ''...टूटे तटबन्ध के बीच पड़े गैप से अगर नदी का पानी कन्ट्रीसाइड में चला जाता है तभी उसे दरार माना जायेगा। तटबन्ध के बाहर जमा पानी की निकासी के लिए अगर तटबन्ध को काट दिया जाता है तो वह दरार की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आयेगा।''[20] तटबन्धों के उन सारे गुण-दोषों का वर्णन करते हुए जो अध्याय-1 खंड 1.8 में दिये गए हैं उन के निर्माण की तकनीक को सुलभ तकनीक बताते हुए रिपोर्ट कहती है कि इसमें स्थानीय निर्माण सामग्री और मजदूरों का तुरन्त उपयोग संभव है।[21] रिपोर्ट यह जिक्र नहीं करती है कि स्थानीय निर्माण सामग्री केवल बालू ही होता है।

तटबन्धों के टूटने की घटनाओं में जानकारी के अभाव पर रिपोर्ट की बड़ी ही मायूसी भरी टिप्पणी है कि उसने जल-संसाधन विभाग से पिछले पचास से अधिक वर्षों में तटबन्धों के टूटने की घटना की जानकारी मांगी थी जो उसे नहीं मिली। रिपोर्ट कहती है, ''...बार-बार रिमाइन्डर भेजने और खुद जाकर संपर्क करने के बावजूद किसी भी चीफ़ इंजीनियर ने यह आंकड़े उपलब्ध नहीं करवाये। ऐसा शायद इसलिए हुआ होगा कि इन विभागों में इस तरह की सूचना उपलब्ध ही न हो।''[22]

इतना ही नहीं, तटबन्धों के टूटने की घटनाओं को जल-संसाधन विभाग कितनी गंभीरता से लेता है, समिति की रिपोर्ट उस तरफ भी इशारा करती है। जिस विभाग पर तटबन्धों के रख-रखाव की जिम्मेवारी है उसी के पास तटबन्धों के टूटने की घटनाओं का रिकार्ड नहीं है। उसने अपनी समस्या और जिम्मेवारी दोनों को जड़ से ही काट दिया है। न कोई जानकारी मिलेगी, न आलोचना होगी और न कोई सुझाव ही कोई दे सकेगा। जो कुछ भी होगा वह अनुमान के आधार पर होगा और अनुमानों की न तो कोई मर्यादा होती है और न ही उसके सत्यापन पर कोई उंगली उठा सकता है। इस मुद्दे पर एक संभावना और भी बनती है कि विभाग के पास तटबन्धों के टूटने की सारी सूचनाएं उपलब्ध हों और उसने सूचना छिपाने की अपनी आदत के मुताबिक समिति को इन्हें दिया ही न हो। यहाँ यह दुहराना जरूरी है कि तकनीकी समिति बिहार सरकार द्वारा नियुक्त समिति थी और उसके अध्यक्ष नीलेन्दु सान्याल कुछ वर्ष पहले इसी विभाग के सर्वे-सर्वा रह चुके थे। जब उनके विभाग द्वारा सूचना नहीं दी जाती है तो तमाम सूचना के अधिकार के बावजूद आम आदमी की क्या बिसात बनती है, इस पर किसी न किसी को चिन्ता जरूर करनी चाहिये।

इस सूचना के अभाव में समिति को यह निर्णय लेना पड़ा कि गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने कुछ तटबन्धों का मूल्यांकन करवाया था और उसी को आधार मान कर समिति अपनी राय बनाये और सिफारिशें करे। मजबूरन सान्याल समिति को गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग द्वारा पहले से किये गए ऐसे 5 मूल्यांकनों को आधार पत्र के रूप में इसलिए स्वीकार करना पड़ा कि इन में कोई भी मूल्यांकन रिपोर्ट ऐसी नदी के तटबन्धों के बारे में नहीं थी जिसमें नदी की पेटी का ऊपर उठता हुआ तल चिन्ताजनक स्तर का हो और उसके प्रवाह में बेजा तरीके से बालू आता हो। ऐसा आधार बना कर तकनीकी समिति ने अपना और जल-संसाधन विभाग दोनों का काम आसान कर लिया था जिससे बाढ़ प्रभावितों की मुश्किलें बढ़ाने का इन्तजाम खुद-ब-खुद हो गया था। ऐसा इसलिए कि उनकी सिफारिशें लोगों के लिए मायने रखती थीं।

जिन चार तटबन्धों की मूल्यांकन रिपोर्ट का समिति हवाला देती है उनमें पहली योजना उत्तर प्रदेश की बढ़इया-कोठा तटबन्ध की है जो राप्ती नदी के किनारे बना हुआ है, दूसरी योजना लखनऊ शहर सुरक्षा बांध योजना, तीसरी योजना पश्चिम बंगाल में महानन्दा नदी पर बने तटबन्ध तथा चौथी योजना बिहार के कमला बलान तटबन्धों की है। गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग द्वारा इन योजनाओं के मूल्यांकन के आधार पर समिति की रिपोर्ट इस नतीजे पर पहुँचती है, ''...इन परियोजनाओं द्वारा जो लाभ हुआ है वह तटबन्धों के निर्माण और रख-रखाव की लागत से अधिक है।''[23] कमला-बलान के तटबन्धों के मूल्यांकन के लिए गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने 1965 और 1989 में इस नदी की बाढ़ और तटबन्धों की उपयोगिता को आधार माना है। हम यहाँ बता देना चाहेंगे कि 1965 में कमला-बलान का तटबन्ध केवल जयनगर से झंझारपुर तक बना था और उस साल इसके तटबन्धों में 21 जगह दरारें पड़ी थीं जिनकी वजह से राज्य और केन्द्र में एक ही पार्टी की सरकार होने के बावजूद एक दूसरे पर बाढ़ की जिम्मेवारी को लेकर काफी कीचड़ उछली थी। झंझारपुर के रेल-सह-सड़क पुल की खामियों को लेकर केन्द्रीय रेल मंत्री डॉ० राम सुभग सिंह समेत उनके पूरे विभाग को बिहार सरकार ने कठघरे में खड़ा करने की कोशिश की थी।[24]

1989 का साल बिहार में सामान्य वर्षा का साल था और इस साल यहाँ की नदियों के तटबन्धों में दरारें लगभग नहीं के बराबर थीं और कमला के तटबन्ध प्राय: सुरक्षित थे। अगर तकनीकी समिति अपने उद्देश्यों के प्रति इमानदार रही होती तो उसे कमला-बलान के तटबन्धों का तुलनात्मक अध्ययन के लिए 2002 (दस दरारें), 2004 (26 दरारें) या 2007 (14 दरारें) के वर्षों में से किसी एक का चुनाव करना चाहिये था। ऐसा न कर के उसने पुरानी रिपोर्ट पर भरोसा किया और बिहार के जल-संसाधन विभाग के पाक-साफ होने के गुप्त एजेण्डे पर अपनी मुहर लगा दी।[25]

समिति ने पाँचवे उदाहरण के तौर पर योजना आयोग द्वारा कोसी तटबन्धों के 1980 में किये गए एक मूल्यांकन का हवाला देकर सब कुछ ठीक होने का प्रमाण पत्र जारी कर दिया। समिति यह भूल गयी कि 1980 में ही पूर्वी तटबन्ध सहरसा के सलखुआ प्रखंड में बहुअरवा के पास टूटा था। इसके पहले वह डलवा (नेपाल) में 1963, जमालपुर-दरभंगा में 1968 और भटनियाँ में 1971 में टूट चुका था। 1980 के बाद यह तटबन्ध 1984 में नवहट्टा, 1987 में गण्डौल और समानी तथा 1991 में जोगिनियाँ में भी टूट चुका था।[26] अगर हम इस नतीजे पर पहुँचें कि

इस तकनीकी समिति को कथित विषयों पर राय देने के साथ-साथ यह भी अलिखित राय दी गयी थी कि वह किसी ऐसी सच्चाई को उजागर करने की कोशिश न करे जिससे व्यवस्था को कोई तकलीफ हो तो कोई गलती नहीं होगी।

नदियों की उड़ाही से परहेज किया जाय–बाढ़ समस्या से निपटने के लिए जनता तथा राजनीतिज्ञों द्वारा एक सुझाव बार-बार दिया जाता है कि नदियों को गहरा कर दिया जाए और उससे निकलने वाली गाद को तटबन्धों पर डाल दिया जाय। कोई भी समझदार आदमी ऐसा प्रस्ताव करने से परहेज़ करेगा क्योंकि उत्तर बिहार की नदियों में गाद की जो मात्रा हर साल आती है उससे मौजूदा तटबन्धों को कई गुना ऊँचा किया जा सकता है। तकनीकी समिति की रिपोर्ट कम से कम इस बात को जरूर स्वीकार करती है। रिपोर्ट कहती है, ''...किसी नदी के अधिकतम जल-स्तर को 4 मीटर नीचे लाने के लिए नदी की खुदाई की जो लागत आयेगी उसकी दर 500 करोड़ रुपये प्रति किलोमीटर होगी। गंडक, कोसी और गंगा के मामले में तो इतनी ही लागत आयेगी। बिहार के मध्यम आकार की नदियों के अधिकतम जलस्तर को अगर 1 मीटर की गहराई से नीचे लाना हो तो उनकी पेटी को दो मीटर गहरा खंगालना पड़ेगा और उसकी लागत 20 करोड़ रुपये प्रति किलोमीटर आयेगी। बाढ़ नियंत्रण के दूसरे विकल्पों को खोजने में इससे कहीं कम खर्च होगा। कोसी या गंडक जैसी नदी की मात्र 1 मीटर खुदाई करने में प्रति किलोमीटर 200 हेक्टेयर जमीन चाहिये जिस पर खोदी गई मिट्टी रखी जा सके।''[27]

रिपोर्ट अपनी सिफारिशों में आगे कहती है कि 1980 के दशक में गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग ने अपने अध्ययन में यह पाया कि गंगा की पेटी केवल हाथीदह रेल स्टेशन के पास ऊपर उठ रही है और बूढ़ी गंडक, कमला-बलान और बागमती जैसी नदियों में जो बाढ़ आती है उसमें भारत-नेपाल सीमा पर लगे हुये पानी के प्रवाह के माप-केन्द्रों के आंकड़ों से इस बात की पुष्टि नहीं होती है कि वहाँ नदियों की पेटी ऊपर उठ रही है। ...इसलिए उत्तरी बिहार के इन ऊपरी इलाकों में नदी की तलहटी की गहराई बढ़ाने की कोई जरूरत नहीं है।''[28]

तकनीकी समिति की इस सिफारिश का तो समर्थन किया जा सकता है कि नदी की गहराई बढ़ाने की कोई जरूरत नहीं है मगर इसके लिए जो कारण बताये गये हैं वह हास्यास्पद हैं। उत्तर बिहार की नदियों के किनारे पर बसा कोई भी आदमी इस बात पर ठहाका मार कर हँसेगा कि 1980 के दशक में कमला-बलान और बूढ़ी गंडक की पेटी की सतह में किसी तरह का कोई बदलाव नहीं आया और केवल गंगा नदी की पेटी हाथीदह में ऊपर उठ रही थी। अगर भारत-नेपाल सीमा पर नदी की पेटी ऊपर नहीं उठ रही थी तो इसकी वजह वहाँ बराज की मौजूदगी है जिससे पानी छोड़े जाने पर नदी की तलहटी का लेवेल सामान्य तौर पर कुछ दूरी तक गहरा होता है मगर उसके बाद तो यह लेवेल ऊपर उठता ही है। यह बात समिति की रिपोर्ट नहीं बताती है।

यह पूरी रिपोर्ट, जिस पर बिहार सरकार के जल-संसाधन विभाग के माध्यम से बिहार की जनता की गाढ़ी कमाई का लाखों रुपया खर्च हुआ होगा, केवल गुमराह करने वाली बातों का एक पुलिन्दा है। दु:ख इस बात का है कि इस गुमराह करने वाले पुलिन्दे को भविष्य में तथ्यात्मक रिपोर्ट मान कर इसकी सिफारिशों और कथानकों का संज्ञान लिया जायेगा। इस बात को हम एक उदाहरण के साथ स्पष्ट करना चाहेंगे।

बिहार की बाढ़ के बारे में जब भी चर्चा होती है तब 1954, 1971, 1987, 2004 या 2007 की बाढ़ का नाम जरूर लिया जाता है। स्थानीय कारणों से 1965, 1966, 1968, 1978, 1998 या 2002 आदि वर्षों की चर्चा होती है। बागमती नदी की बाढ़ के बारे में जब भी बात उठती है तब 1993 की बाढ़ की चर्चा के बगैर कहानी पूरी नहीं होती। इस वर्ष की बाढ़ के बारे में हमने अध्याय-3 में चर्चा की है। बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994) तथा राज्य के जल-संसाधन विभाग की रिपोर्टों में इस बाढ़ की विस्तृत चर्चा मिलती है मगर तकनीकी समिति की यह रिपोर्ट भूल कर भी 1993 की बागमती की बाढ़ की चर्चा नहीं करती। यही हाल बिहार के जल-संसाधन विभाग की 2009-10 की वार्षिक रिपोर्ट का भी है। उसमें 1993 में बागमती/करेह के तटबन्धों में किसी भी दरार का जिक्र नहीं है। इस तबाही को जब सरकार स्वीकार करने के लिए ही तैयार नहीं है या उसे अब यह दुर्घटनाएं याद ही नहीं हैं तब उससे किसी सुधार या बदलाव की उम्मीद कैसे की जा सकती है?

मज़े की बात यह है कि इस समिति द्वारा नदियों की गहराई बढ़ाने के सम्बन्ध में राज्य सरकार को चेताये जाने के बावजूद बिहार सरकार नदियों की गहराई बढ़ाने पर आमादा है। उसका कहना है, ''...गाद जमा होने के कारण नदियों के उठते हुए तल की समस्या के निदान के लिये नदियों को गहरा करने की योजना चलायी जायेगी। प्रथम चरण में बागमती/अधवारा एवं कमला नदियों को गहरा किया जायेगा जिस पर अनुमानित व्यय 4228.00 करोड़ होगा। गहरा करने से जो मिट्टी निकलेगी उससे बांधों को ऊँचा तथा चौड़ा किया जायेगा तथा बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में बस्तियों को भी ऊँचा किया जायेगा।''[29] काश! कोई बिहार सरकार को समझाता कि 1950 के दशक में देश में 4700 गाँवों को ऊंचा करने का प्रयोग असफल हो गया था और उसे हमेशा-हमेशा के लिए छोड़ दिया गया। यहाँ यह याद दिलाना सामयिक होगा कि राष्ट्रीय बाढ़ आयोग (1980) ने इस तरह के किसी कार्यक्रम को सिरे से खारिज कर दिया था।

13.6 बिहार में जल-संसाधनों के विकास के लिए विशेष कार्य-दल की रिपोर्ट (मई 2009)

नीलेन्दु सान्याल की अध्यक्षता में गठित तकनीकी समिति की रिपोर्ट क्या कहती है और क्या छिपाती है उसकी थोड़ी बानगी हमने अभी देखी है। दो खंडों की इस रिपोर्ट को सरकार ने स्वीकार किया या नहीं इसके बारे में कोई सूचना नहीं है। अक्सर इस तरह की रिपोर्टें सार्वजनिक नहीं होतीं, होती भी होंगी तो उन्हें कितने लोग पढ़ते होंगे, यह भी प्रश्न है। लोगों ने अगर इसे पढ़ा होता तो शायद चर्चा-बहस होती, वैसा कुछ हुआ नहीं। रिपोर्ट आने के कुछ समय बाद कोसी का पूर्वी एफ्लक्स बांध नेपाल में कुसहा में टूट गया और सारी बहस का रुख उसी ओर मुड़ गया। तब किसी तरह की चर्चा की कोई गुंजाइश ही बाकी नहीं रही। मगर सरकारें अपना काम करती रहीं और इस बार भारत सरकार ने उपर्युक्त टास्क फोर्स की एक रिपोर्ट मई 2009 में जारी की। यह टास्क फोर्स किस लिए गठित हुआ, किसने किया, इससे क्या-क्या अपेक्षाएं थीं, इसके बारे में इसकी रिपोर्ट में कुछ भी नहीं कहा गया है। अपने बारह सदस्यों का नाम गिनाते हुए यह रिपोर्ट सिर्फ इतना इशारा करती है कि टास्क-फोर्स की अध्यक्षता डॉ० एस० सी० झा ने की थी। आधिकारिक तौर पर बिहार की जल-संपदा पर उपलब्ध साहित्य, बिहार की नदी घाटियों के

क्षेत्र-अध्ययन तथा राज्य के विकास की जरूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से शायद यह रिपोर्ट तैयार की गयी है।

रिपोर्ट शुरू में ही अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए कहती है कि बिहार में वृहद और मध्यम सिंचाई योजनाओं से 54 लाख हेक्टेयर तथा भूमिगत जल से 49 लाख हेक्टेयर जमीन पर सिंचाई संभव है और इस तरह राज्य के कुल क्षेत्रफल 94 लाख हेक्टेयर के मुकाबले 103 लाख हेक्टेयर पर सिंचाई की जा सकती है। बड़ी योजनाओं से अभी तक अर्जित सिंचन क्षमता 28 लाख हेक्टेयर है और वास्तविक सिंचाई केवल 16.69 लाख हेक्टेयर पर होती है। रिपोर्ट कहती है कि भूमिगत जल से सिंचाई बहुत कम क्षेत्र पर होती है। मुमकिन है कि भूमिगत जल से राज्य में कितनी सिंचाई होती है यह विभाग ने टास्क फोर्स को बताया भी न हो। लेकिन राज्य का एक फसली क्षेत्र 56 लाख हेक्टेयर और दुफसली क्षेत्र 24 लाख हेक्टेयर है, यानी कुल मिला कर 80 लाख हेक्टेयर पर खेती होती है। रिपोर्ट यह बात कहती तो नहीं है मगर यह सच है कि राज्य में अधिकांश सिंचाई किसानों के अपने पुरुषार्थ से होती है। टास्क फोर्स इस का कारण बताते हुए कहता है कि बहुत सी सिंचन क्षमता बाढ़ से असुरक्षित क्षेत्रों में अर्जित की गयी है इसलिए वह बाढ़ के समय टूट-फूट जाती है। भूमिगत जल के बारे में टास्क फोर्स का कहना है कि बिजली के अभाव में इसका उपयोग नहीं हो पाता है।[30] टास्क फोर्स आगे कहता है कि एक समय राज्य में रिवर वैली अथॉरिटी कोसी और गंडक जैसी बड़ी योजनाओं का काम देखता था लेकिन अब वह व्यवस्था है ही नहीं। ''राज्य का जल-संसाधन विभाग बहुत बड़ा है, असंगठित है, उसमें जरूरत से ज्यादा लोग काम करते हैं लेकिन पेशेवर लोगों की कमी है और पैसे का अभाव बना रहता है। आज इस विभाग की जो व्यवस्था है, प्रबन्धन है, नियुक्त कर्मचारियों का स्वरूप तथा उनकी क्षमता है, उसकी पृष्ठभूमि में यह विभाग बहु-आयामी बड़ी परियोजनाओं का क्रियान्वयन करने में अक्षम है। ज्यादा से ज्यादा यह विभाग चालू योजनाओं का रख-रखाव, उनका संचालन और अनुश्रवण कर सकता है। फील्ड के स्तर पर तो हालात इससे भी बदतर हैं।''[31] टास्क फोर्स इस विभाग की व्यवस्था में आमूल चूल परिवर्तन की सलाह देता है।

इतना कह लेने के बाद टास्क फोर्स सारी व्यवस्था में सुधार का अपना प्रस्ताव बताता है। उसके अनुसार हिमालय से शुरू होकर बंगाल की खाड़ी तक जाने वाले पानी का अधिकांश भाग राज्य से होकर गुज़रता है। उस स्थिति में राज्य की नदियों को आपस में जोड़ना, नदियों पर मौजूदा तटबन्धों के बीच एक जोड़ा नये तटबन्ध बना कर भीतर वाले जोड़ा तटबन्ध के बीच नदी को गहरा करना इस प्रयास की मुख्य रणनीति होगी। अन्दर वाले तटबन्धों के जोड़े के बीच नदी की ट्रेनिंग का काम इस तरह से किया जायेगा कि उसमें पानी का संचय हो सके, पानी की दिशा को मोड़ने के लिए संरचनाओं का निर्माण किया जायेगा जिससे उन्हें बगल की नदी या छाड़न धारा से जोड़ा जा सके और चौरों तक भी पानी पहुँचाया जा सके। इस तरह से बहते और ठहरे पानी का एक विशाल नेटवर्क तैयार हो जायेगा और किसी भी नदी से होकर जाने वाले प्रवाह को नियंत्रित किया जा सकेगा। ऐसा करने से सारी नदियाँ आपस में जुड़ जायेंगी और विभिन्न स्थानों तथा समय पर पानी की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकेगी। वर्तमान तटबन्ध, जिन्हें टास्क फोर्स बाहरी तटबन्ध कहता है, बाढ़ के पानी को रोकने का काम करेंगे। अन्दर वाले प्रस्तावित तटबन्ध और बाहर वाले तटबन्ध के बीच की जमीन के बारे में टास्क फोर्स का कहना है कि समय के साथ यह जमीन ऊँची हो गयी है और इसका उपयोग अन्दर वाले तटबन्धों के निर्माण में कर लिया जायेगा। इस तरह से दीर्घावधि में तटबन्धों के बीच बह रही नदियों के प्रवाह मार्ग की एक वैकल्पिक व्यवस्था कर ली जायेगी। हिमालय से लेकर बंगाल की खाड़ी तक बहने वाले राज्य के जल-संसाधन के व्यापारीकरण का प्रस्ताव करते हुए टास्क फोर्स कहता है कि पानी की सर्वत्र और सर्वकालिक उपलब्धता के लिए ऐसा करना जरूरी होगा। इसके लिए एक बड़े इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास की योजना बनानी होगी जिसके लिए निजी क्षेत्र के भागीदारों को आकर्षित करना होगा।

राज्य में विद्युत उत्पादन की संभावनाओं पर भी टास्क फोर्स की नज़र है और वह 500 मेगावाट विद्युत उत्पादन की क्षमता राज्य की सिंचाई नहरों में देखता है। इन योजनाओं के लिए धन मुहय्या करने के लिए भी इस रिपोर्ट में बहुत से उपाय सुझाये गए हैं।

अब इस योजना के गुण-दोष पर एक नज़र डालते हैं–

1. यह योजना अध्याय-1 के खंड-1.8 के उत्तरार्द्ध में दिये गए सिद्धान्त पर आधारित है कि अगर नदी का प्रवाह क्षेत्र कम कर दिया जाए तो उसके पानी का वेग बढ़ जायेगा, वह ज्यादा कटाव करेगा और बाढ़ में कमी आयेगी। यह प्रस्ताव अगर व्यावहारिक रहा होता तो वर्तमान तटबन्धों के बीच नदी कब की गहरी हो चुकी होती और इस समस्या पर पुनर्विचार करने की जरूरत ही नहीं पड़ती।
2. टास्क फोर्स यह भूल जाता है कि नदी के किनारे कम दूरी पर प्रस्तावित नये तटबन्धों और वर्तमान तटबन्धों के बीच गांव बसे हुए हैं और वहाँ तमाम अकल्पनीय तकलीफों के बावजूद समाज रहता है। टास्क फोर्स बाढ़ के जिस पानी को बाहरी तटबन्धों द्वारा रोक दिये जाने की बात करता है, वह बाहरी तटबन्ध अगर नहीं टूटता है तो वह इन लोगों के लिए पहले से भी ज्यादा दु:स्सह परिस्थितियाँ पैदा करेगा। उस हालत में बाहरी तटबन्ध को काटना इन लोगों की मजबूरी होगी और बाहरी तटबन्ध कटने पर वर्तमान कन्ट्रीसाइड की क्या स्थिति होगी, उसकी कल्पना ही दिल दहला देने वाली है।
3. जहाँ तक नहरों से बिजली पैदा कर लेने का सवाल है वहाँ कोसी में कटैया बिजली घर और गंडक में सूरजपुरा बिजली की क्षमता और उत्पादन का अध्ययन कर लेना चाहिये। यह सच है कि जब तक जल-संसाधन विभाग की कार्य संस्कृति में पूरा-पूरा परिवर्तन नहीं होगा और उसके किये या न किये गए कामों की जिम्मेवारी तय नहीं होगी तब तक जनता के हित में किसी भले की उम्मीद करना बेकार है।
4. जो शायद हो रहा है वह यह कि कोसी नदी की धारा को मशीनों की मदद से यथा संभव तटबन्धों और उन पर बने हुए स्परों से दूर रखने की कोशिश जारी है ताकि तटबन्धों के कटाव को रोका जा सके और कन्ट्रीसाइड की सुरक्षा बनी रहे।
5. बिहार में 2007 के बाद बाढ़ नहीं आयी है। 2008 की कोसी में कुसहा की दुर्घटना अगर नहीं होती तो वह साल भी राज्य में सूखे के वर्ष के तौर पर ही याद किया जाता। इसलिए सरकार

द्वारा कोसी को तटबन्धों के बीच रखने की कोशिश का परीक्षण अभी बाकी है।

6. बड़े पैमाने पर बिहार की नदियों पर बने तटबन्धों को ऊँचा और मजबूत किये जाने के प्रयासों का परिणाम अभी तो नहीं मगर आने वाले 10-15 वर्षों में जरूर सामने आयेगा। उस समय की सरकार क्या-क्या बहाने बना कर उस विपत्ति का सामना करेगी या नहीं करेगी, यह समय ही बतायेगा।
7. टेकनिकल समिति (2008) नदियों को गहरा करने को किसी समस्या का समाधान नहीं मानती और उस पर होने वाले खर्च को अव्यावहारिक मानती है वहीं एस० सी० झा की अध्यक्षता वाले टास्क फोर्स की सिफारिशें नदियों को नौ-परिवहन की हद तक ले जाकर उन्हें गहरा करने और जोड़ने की बात करती हैं। मुश्किल यह है कि यह दोनों समितियाँ विशेषज्ञों की हैं और सरकार द्वारा नियुक्त समितियाँ हैं।

13.7 एक और गंगा लायी जाए

इस योजना के जनक तमिलनाडु के एक इंजीनियर हैं जिनका प्रस्ताव है कि समुद्र तल से 500 मीटर की ऊँचाई पर जम्मू से लेकर मेघालय तक एक ऐसा बांध बनाया जाए जिसमें हिमालय से आने वाली सारी नदियों के पानी को इस बांध के पीछे बने जलाशय में रोक लिया जाए। इस बांध के समानान्तर एक नहर बनायी जाए जिसको बांध से जोड़ कर उसमें पानी की आपूर्ति की जाए। उस हालत में इस नहर से जम्मू से लेकर मेघालय तक नौ परिवहन की व्यवस्था हो जायेगी। नदियों के अधिकांश पानी को रोक लिए जाने के कारण बाढ़ नहीं आयेगी और पानी रहने से सिंचाई की व्यवस्था तो अपने आप हो जायेगी।

दिक्कत सिर्फ एक ही जगह है जिसकी ओर माननीय इंजिनियर का ध्यान नहीं गया वह यह कि उत्तराखंड से लेकर मेघालय के बीच की ज़मीन लगभग सपाट है और 500 मीटर ऊँचाई पर बांध बनाने के लिए नेपाल के पहाड़ी क्षेत्र का इस्तेमाल करना पड़ेगा। इतना करने के बाद यह बांध और उसके पीछे पश्चिम से पूरब तक नदियों का अटका हुआ सारा पानी न सिर्फ नेपाल के एक बड़े हिस्से को डुबायेगा वरन् उसे दो भागों में बांट भी देगा। नेपाल को जहाँ नुनथर और शीसापानी जैसे छोटे बांधों पर निर्णय लेने में साठ साल का समय कम पड़ता है तो उससे यह उम्मीद करना कि वह अपने देश की पूरी लम्बाई में बांध बनाने देने के लिए राज़ी होगा, कतई मुमकिन नहीं है।

फिर भी इस तरह की योजना का प्रस्ताव देने वाले तो मौजूद हैं ही, उसकी संभावनाओं पर विचार करने वाले नेताओं की भी कमी नहीं है। सुनते हैं कि जब 2002 में भारत की नदी जोड़ योजना पर बहस तेज़ हुई और भारत के प्रबुद्ध वर्ग ने उसकी संभाव्यता पर सवाल खड़ा करना शुरू किया तब नेशनल वाटर डेवलपमेन्ट एजेन्सी ने नदी जोड़ योजना के विकल्पों की तलाश शुरू की और ऐसे छः प्रस्तावों को चुना जिनमें इस 'अपनी गंगा' का पहला स्थान था। अगर सबसे अच्छे प्रस्ताव की स्थिति यह है तो बाकी प्रस्तावों का क्या हाल होगा, इसकी कल्पना ही की जा सकती है।

इस तरह के प्रस्तावों का क्रियान्वयन तभी हो सकता है जब देशों के बीच राजनैतिक और भौगोलिक सीमाएं न हों, बांध और जलाशय के क्षेत्र में कोई रहता न हो, निर्माणकर्ता के पास बरबाद करने के लिए अकूत संपत्ति हो और उसको कोई रोकने या समझाने वाला भी न बचा हो।

13.8 टूटते तटबन्ध

तटबन्धों का टूटते रहना तटबन्ध निर्माण की तकनीक का अविभाज्य अंग है। 1963 में कोसी का पश्चिमी तटबन्ध नेपाल में डलवा गाँव के पास टूट गया था। जब इस दरार को पाट दिया गया तब पश्चिमी तटबन्ध पर नदी के हमले डलवा से थोड़ा नीचे भारत-नेपाल सीमा पर कुनौली के पास शुरू हो गए। यहाँ कोई दुर्घटना नहीं हुई और परेशानी भी बहुत ज़्यादा नहीं हुई। कुनौली भारत में अवस्थित है। इस तरह नेपाल प्रकरण से सरकार बची हुई थी। ख़र्च और दरार पड़ने का दबाव जरूर अपनी जगह पर था। सांसद एस० एम० बनर्जी के दरार से बचाव संबंधी एक प्रश्न के जवाब में लोकसभा में तत्कालीन केन्द्रीय सिंचाई मंत्री डॉ० के० एल० राव ने 12 जुलाई 1967 को एक बयान दिया था, ''...नदी के सम्बन्ध में कोई भी यह नहीं कह सकता कि दरार पड़ेगी या नहीं। कोसी के बारे में यह बात ख़ास कर कही जा सकती है क्योंकि कोसी हमेशा पश्चिम की ओर खिसकती रही है। कोसी की इस विशिष्टता के कारण ही हमें कोसी परियोजना को हाथ में लेना पड़ा है जिसकी वजह से नदी पर लगाम कसी जा सकी और यह पिछले दस वर्षों से एक जगह बनी हुई है वरना यह दरभंगा जिले में झंझारपुर तक पहुँच गयी होती।''

यह बयान उन्हीं डॉ० के० एल० राव का है जिन्होंने चीन की ह्वांग हो घाटी की यात्रा के बाद तटबन्धों की पूरी बहस का रुख मोड़ दिया था और वह उस समय चाहते थे कि कोसी पर तटबन्धों का निर्माण बराज के निर्माण से पहले ही कर लिया जाय। उन्होंने 1967 में जो बात कही, वही बात अगर 1954 में कही होती तो कोसी पर तटबन्धों की योजना कब की कूड़ेदान में फेंक दी गयी होती। सवाल इस बात का उठता है कि तटबन्धों में कितनी दरारें पड़ें कि सरकार को लगे कि इन घटनाओं का संज्ञान लेना चाहिये। यहाँ हम तालिका-13.1 में 1987 से लेकर 2009 तक बिहार की नदियों के किनारे बने विभिन्न तटबन्धों में पड़ी दरारों की एक सूची दे रहे हैं जिसे जल-संसाधन विभाग ने 2009-10 की अपनी वार्षिक रिपोर्ट में जारी किया है। यह सूचना कितनी भरोसेमन्द है उस पर हम पहले भी थोड़ी चर्चा कर आये हैं फिर भी आधिकारिक रिपोर्ट होने के कारण इसे सही मानना सबकी विवशता है।

इस तालिका का अध्ययन करने पर यह बात साफ हो जाती है कि तटबन्धों की टूटन के बारे में सूचना देने में राज्य के जल-संसाधन विभाग की नीयत कितनी साफ है वह इसी बात से जाहिर हो जाता है कि 2008 की कोसी एफ्लक्स बांध में कुसहा में पड़ी दरार को उसने 'अन्य' के खाते में डाल दिया है। हम यहाँ याद दिला दें कि इस दुर्घटना में बिहार के पाँच जिलों के 35 प्रखंडों के 993 गाँवों में कोसी की बाढ़ का पानी फैला था जिसकी वजह से 3.68 लाख हेक्टेयर जमीन पानी में डूब गयी थी। कोई 2,22,754 घर इस एक घटना में धराशायी हो गए थे जिसकी पूर्णाहुति 527 व्यक्तियों तथा 19,323 जानवरों की जल-समाधि से हुई थी।[32] इस घटना को छिपाने या हल्का कर के प्रस्तुत करने में मुमकिन है कि व्यवस्था इस बात पर परदा डालना चाहती हो कि राज्य के जल-संसाधन मंत्री, आपदा प्रबन्धन मंत्री और आपदा प्रबन्धन विभाग

तालिका-13.1

बिहार की विभिन्न नदियों के तटबन्धों में टूटन का विवरण

वर्ष	गंडक	बूढ़ी गंडक	कमला बलान	भुतही बलान	बागमती/ करेह	अन्य	कुल योग
2009	–	–	–	–	1	1	2
2008	–	–	–	–	–	1	1
2007	1	3	14	2	7	5	32
2006	–	–	1	–	–	–	1
2005	–	–	1	–	–	4	8*
2004	–	8	26	2	17	6	59
2003	9	–	1	–	1	5	16
2002	13	–	10	–	15	4	42
2001	11	2	3	4	1	12	33
2000	–	–	3	–	–	9	12
1999	3	–	7	–	–	6	16
1998	4	8	3	–	–	9	24
1997	1	3	1	–	2	1	8
1996	1	–	3	2	6	2	14
1995	–	–	–	–	–	–	–
1994	–	–	–	–	–	2	2
1993	–	–	–	–	–	–	–
1992	–	–	–	–	–	–	–
1991	–	–	–	–	–	–	–
1990 –	–	–	–	–	–	–	–
1989	–	–	–	–	–	–	–
1988	–	–	–	–	–	–	–
1987	–	1	29	6	8	59	103[5]
कुल	**43**	**25**	**102**	**16**	**58**	**126**	**370**

* यह संख्या शायद 5 है।

5 बिहार सरकार की सारी दूसरी रिपोर्टों में 1987 में तटबन्धों में 104 दरारें बतायी गयी हैं।

स्रोत : जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार की वार्षिक रिपोर्ट 2009-2010, कार्यक्रम 2010-2011

के सचिव का घर इसी क्षेत्र में पड़ता था। बिहार की यह अकेली बाढ़ थी जिसे प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीय आपदा घोषित की थी।

इस तालिका में 1991 में कोसी तटबन्ध के जोगिनियाँ कटाव का भी जिक्र नहीं है और न ही 1987 में कोसी के पश्चिमी तटबन्ध की गंडौल और समानी में पड़ी दरार का जिक्र है। यह मुमकिन है कि इन घटनाओं को 'अन्य' खाते में डाल कर सरकार इसे असामाजिक तत्वों का काम बताना चाहती है और खुद को पाक दामन बताना चाहती हो। इस तालिका में 1993 में कमला तटबन्ध में सोहराय के पास पड़ी दरार का जिक्र नहीं है और न ही 1994 में नवटोल, बलभद्रपुर, नरुआर और बौर में 4 स्थानों पर पड़ी दरारों को गिनाया गया है। 1995 में कमला का पूर्वी तटबन्ध बेलही, निर्मला (2 स्थानों पर), खैरी (बलिया), खैरी (परसाद) और फैटकी (परसाद)-कुल मिला कर 6 स्थानों पर टूटा/काटा गया था। जल-संसाधन विभाग द्वारा तालिका-13.1 में सीधे-सीधे शब्दों में गुमराह करने वाली है और इसको तैयार करने वालों पर अनुशासनिक कार्यवाही होनी चाहिये। इसके अलावा 1993 में बागमती नदी के बसबिट्टा से लेकर रुन्नी सैदपुर तक जो 14 दरारें पड़ी थीं, उसको विभाग साफ तरीके से हजम कर गया। इस रहस्य की खोज की जानी चाहिये कि विभाग ने मांगने पर भी तटबन्धों के टूटने की घटनाओं की सूची नीलेन्दु सान्याल समिति को क्यों नहीं दी।

हमने बागमती तटबन्धों की टूटन/दरार की घटनाओं का विभिन्न स्रोतों से संकलन किया है जिसमें अधिकांश स्रोत सरकारी हैं और इसे आगे तालिका-13.2 में दिया गया है। यह मुमकिन है कि इसमें तटबन्ध टूटने की सारी घटनाओं का हवाला न आ पाया हो पर जो भी सूचना उपलब्ध है उसे स्रोत के साथ दिया गया है।

इस तालिका में हम करेह (बागमती) के हायाघाट से बदलाघाट के बीच तटबन्धों का वास्ता नहीं दे पाये हैं क्योंकि उस लम्बाई में तटबन्ध प्रायः हर साल और बेभाव टूटते हैं। तालिका-13.1 में जल संसाधन विभाग ने इन दरारों की संख्या तो बतायी है पर उनका स्थान बताने से परहेज़ किया है। अपने सन्देहों के साथ इस सूचना को स्वीकार ही कर लेना पड़ेगा। **हमें इस बात पर आश्चर्य और दुःख दोनों है कि इस तालिका-13.1 में बाढ़ की दृष्टि से देश की सबसे महत्वपूर्ण नही कोसी के टूटे हुए तटबन्धों का कोई जिक्र नहीं है। जल-संसाधन विभाग शायद यह बताने से डरता है कि एक बार कुसहा की दरार की घटनाओं का जिक्र उसने अपनी रिपोर्ट में कर दिया तो भानुमती का ऐसा पिटारा खुलेगा कि उससे उठे सवालों का जवाब देते-देते उसकी नाक में दम हो जायेगा। कुसहा से पहले की कोसी तटबन्धों में दरार की घटना का जिक्र दूसरी जगह है इसलिए हम उसके विस्तार में यहाँ नहीं जायेंगे। हमें आश्चर्य और दुःख इस बात का भी है कि तकनीकी समिति ने तटबन्धों के टूटने की जानकारी लेने के लिए बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग के पन्नों को क्यों नहीं पलटा और क्यों नहीं जल-संसाधन विभाग की वार्षिक रिपोर्टें खंगाली? यह दोनों दस्तावेज आम आदमी के लिए भी उपलब्ध है और अगर इनके बारे में तकनीकी समिति को पता नहीं था तो उनकी नीयत और कार्य क्षमता दोनों पर सन्देह पैदा होता है।**

13.9 तटबन्ध में दरारें-पैंतरे एवं बहानेबाजी

13.9.1 चूहा सिद्धांत–अमेरिका में मिसिसिपी नदी में 1912 में एक बार भयंकर बाढ़ आयी थी और उस नदी पर बने तटबन्ध पूरी तरह से तहस नहस हो गए थे। वहाँ की बाढ़ की स्थिति पर लिखी गयी एक रिपोर्ट के अनुसार उस साल मिसिसिपी नदी का पानी तटबन्धों के ऊपर होकर बहुत ही जगहों पर बह गया जिसकी वजह से उनमें 300 जगहों पर दरारें पड़ गईं। 1640 किलोमीटर लम्बे तटबन्धों में से 96 किलोमीटर लम्बाई में तो तटबन्ध एक दम साफ हो गए थे।[33] सन् 1882 के बाद मिसिसिपी घाटी में कई बार भीषण बाढ़ें आईं जो तटबन्धों के बावजूद और उनके कारण आयी थीं। उनमें से 1897 और 1903 की बाढ़ को विशेष रूप से वहाँ याद किया जाता है। इसी तरह 1927 में मिसिसिपी घाटी में आयी बाढ़ में 51,200 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र घिर गया था और कुल सम्पत्ति का नुकसान 20 करोड़ से लेकर 100 करोड़ डॉलर

तालिका-13.2
बागमती तटबन्ध में अब तक पड़ी दरारें (ढेंग से रुन्नी सैदपुर)

क्रम संख्या	वर्ष	स्थान जहाँ तटबन्ध टूटा	स्रोत	अभ्युक्ति
1.	1976	21 मई 1976 को बागमती का बायाँ तटबन्ध नारायणपुर में टूटा।	आर्यावर्त्त, 22 मई 1976 सच्चिदानन्द सिंह-बिहार विधान सभा-11 जुलाई 1977	
2.	1978	लाल बकेया का दायाँ तटबन्ध महुअवा गाँव के पास। बागमती के बायें और दायें एफ्लक्स बांध को जल-जमाव से प्रभावित ग्रामीणों ने कई स्थानों पर काटा तथा भारतीय सीमा के अन्दर तीन स्थानों पर खुद टूटा।	आर्यावर्त्त-पटना, 25 जुलाई 1978 तथा बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994) की रिपोर्ट-पृ० 460।	
3.	1979	अप्राप्य	अप्राप्य	
4.	1980	अप्राप्य	अप्राप्य	
5.	1981	अप्राप्य	अप्राप्य	
6.	1982	अप्राप्य	अप्राप्य	
7.	1983	16 जुलाई को देवापुर में 200 फुट चौड़ी दरार पड़ी।	आर्यावर्त्त, 29 जुलाई 1983।	
8.	1984	(1) बेलवाधार, (2) 17 सितम्बर को बायें तटबन्ध में दरार पड़ी। (2) बखाड़-बायां तटबन्ध	बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994), पृ० 461 बखाड़ गांव में व्यक्तिगत संपर्क	
9.	1985	(1) खोजापुर (27 जुलाई), (2) देवापुर	बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994), पृ० 460	
10.	1986	(1) बेलवाधार (26-27 जुलाई)	बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994), पृ० 461	
11.	1987	(1) दायाँ तटबन्ध चेन संख्या 598 से 614 के बीच (2) तरियानी प्रखंड में 220 से 227 चेन के बीच 2 स्थानों पर। (3) कन्सार में बायां तटबन्ध ग्रामीणों द्वारा काटा गया। कुल मिला कर 13 स्थानों पर।	बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994), पृ० 461 बिहार सरकार-जल संसाधन विभाग, बाढ़ नियंत्रण योजना एवं मॉनिटरिंग-बाढ़ तटबन्धों में ब्रीच/कट की स्थिति अप्रकाशित रिपोर्ट (1988)	
12.	1988	(1) 218 से 219 चेन के बीच 28 अगस्त के दिन तथा उसी दिन 470 चेन पर भी दरार पड़ी। इस पानी ने 665 चेन पर नदी में घुसने के क्रम में तटबन्ध को तोड़ा। (2) 242 चेन पर भी टूटा।	अधीक्षण अभियंता, बागमती परियोजना की अप्रकाशित रिपोर्ट, 1989	
13.	1989	अप्राप्य	अप्राप्य	
14.	1990	(1) पूर्वी चम्पारण के पताही प्रखंड में सेवापुर गाँव के पास लालबकेया का दायाँ तटबन्ध 28 अगस्त 1990	नवभारत टाइम्स, पटना 29 अगस्त 1990	
15.	1991	(1) दायाँ तटबन्ध-सिंघरइया गाँव के पास-4 जुलाई	नव भारत टाइम्स-पटना, 5 जुलाई 1991	
16.	1992	बिहार के लिए यह भयंकर सूखे का वर्ष था।		
17.	1993	(1) बागमती का बायाँ एफ्लक्स बांध-7 स्थानों पर बसभिट्टा, बरहरवा/2 स्थानों पर, श्रीनगर, बरियारपुर, हरपुर और परसा (2) मूसाचक-दो स्थानों पर, (3) बेलवा धार (4) 407 से 411 चेन पर चन्दौली रिंग बांध (5) जमुआ-मरपा कोठी के बीच तीन स्थानों पर ग्रामीणों ने काटा। कुल 14 स्थानों पर।	(1) बिहार राज्य द्वितीय सिंचाई आयोग (1994), पृष्ट 462, (2) जल संसाधन विभाग, बिहार सरकार-अप्रकाशित रिपोर्ट (1993)	

क्रम संख्या	वर्ष	स्थान जहाँ तटबन्ध टूटा	स्रोत	अभ्युक्ति
18.	1994	अप्राप्य	अप्राप्य	
19.	1995	कोठिया-जगदीशपुर-दायाँ तटबन्ध, 3 जुलाई 233 चेन पर	टाइम्स ऑफ इण्डिया न्यूज सर्विस, 4 जुलाई 1995	
20.	1996	कोठिया-जगदीशपुर 13 जून, तरियानी प्रखंड, जिला शिवहर	बिहार सरकार-प्रतिवेदन जल संसाधन विभाग, 1996-97, पृष्ठ 35, दैनिक हिन्दुस्तान, पटना 11 अगस्त 1996	
21.	1997	अप्राप्य	अप्राप्य	
22.	1998	सुरगाही-21 अगस्त, 108.5 चेन से 110 चेन के बीच, दायाँ तटबन्ध	राम स्वार्थ राय-पूर्व विधायक	
23.	1999	(1) लाल बकेया का दायाँ तटबन्ध सपही गाँव के पास 20 जुलाई (2) मांड़र-धरमपुर के बीच, बांयाँ तटबन्ध	(1) आर्यावर्त्त-पटना 21 जुलाई 1999 (2) सूचना के अधिकार के अधीन कामेश्वर कामति को दिया गया उत्तर तथा प्रश्न पूर्व विधायक राम स्वार्थ राय से व्यक्तिगत संपर्क	
24.	2000	(1) मधकौल चेन संख्या 275 बायां तटबन्ध (2) मांडर चेन संख्या 311 बायां तटबन्ध काटा गया था। (3) सौली	जल संसाधन विभाग, बिहार सरकार, वार्षिक प्रतिवेदन 2000-01, पृष्ठ 40/ राम स्वार्थ राय, पूर्व विधायक	
25.	2001	(1) कंसार-1 अगस्त 2001 बायां तटबन्ध	दैनिक हिन्दुस्तान 2 अगस्त 2001/विधायक राम स्वार्थ राय-व्यक्तिगत संपर्क	
26.	2002	(1) मसौढ़ा (धरमपुर पंचायत-शिवहर)-22 जुलाई (2) सिरसिया रिंग बांध-बायां तटबन्ध-24 जुलाई (3) मझौरा-23 अगस्त (4) सोनाखान-बायां तटबन्ध-10 अगस्त (5) जगदीशपुर-कोठिया-दायां तटबन्ध-26 अगस्त	बागमती परियोजना कार्यालय, डुमरा, सीतामढ़ी-व्यक्तिगत संपर्क	
27.	2003	सुरगाही-1 अगस्त	राम स्वार्थ राय-भूतपूर्व विधायक	
28.	2004	(1) ओलीपुर-रुपौली के बीच-बायां तटबन्ध-7 जुलाई (2) रमनी कोड़ा-27 जुलाई (3) चन्दौली-9 जुलाई (4) सुरगाहीं-कुशहर के बीच-10 जुलाई (5) लाल बकेया-दायां तटबन्ध-बलुआ बाजार के पास	सूचना के अधिकार के अधीन कामेश्वर कामति को दिया गया उत्तर।	
29.	2005	अप्राप्य	अप्राप्य	
30.	2007	(1) रामपुर कंठ–बायां तटबन्ध 3.94 किलोमीटर पर 19 अगस्त (2) रमनी–बायां तटबन्ध चेन 117-118, 28 जुलाई (3) पचनौर–बायां तटबन्ध चेन 480, 15 जून (4) खरहुआ–बायां तटबन्ध चेन 615, 27 जुलाई	बिहार सरकार–जल-संसाधन विभाग, प्रतिवेदन 2007-08 पृ० 31 तथा सूचना के अधिकार के अधीन नागेन्द्र प्रसाद सिंह को दिया गया उत्तर तथा गृहमंत्रालय–केन्द्र सरकार, आपदा प्रबन्धन संभाग 28 जुलाई 2007 की रिपोर्ट।	
31.	2009	(1) तिलक ताजपुर–दायां तटबन्ध 1 अगस्त 2009	सूचना के अधिकार के अधीन कामेश्वर कामति को दिया गया उत्तर।	

तक होने का अनुमान किया गया था। इस बाढ़ में 7,50,000 लोग बेघर हो गए थे और उनमें से 6 लाख लोगों को रेड क्रॉस से मिलने वाली राहत सामग्री पर महीनों गुजारने पड़ गए थे।[34] संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे समृद्ध देश का वैभव और शक्ति लोगों की तकलीफों के सामने बौनी पड़ गयी।''

1927 की मिसिसिपी नदी की बाढ़ की समीक्षा अमेरिका के इंजीनियरों के संगठन अमेरिकन सोसायटी ऑफ सिविल इंजीनियर्स ने 1928 में की। इस गोष्ठी में यह बात आयी कि तटबन्धों के टूटने का एक महत्वपूर्ण कारण तटबन्धों में चूहों, छछून्दरों और लोमड़ियों द्वारा बिल बनाना है जिनमें बाढ़ का पानी जब घुसता है तो वह अपने दबाव के कारण तटबन्धों को ध्वस्त कर देता है। अमरीकी सेना के एक अवकाशप्राप्त कर्नल टाउनसेण्ड का कहना था, ''...जमीन में बिल बनाने वाले यह जानवर अच्छे से अच्छे तरीके से बनाये गए तटबन्धों में छेद कर सकते हैं जिन्हें अगर तुरन्त बन्द न कर दिया जाए तो तबाही मच सकती है।'' टाउनसेण्ड का आगे कहना था कि मजबूत से मजबूत तटबन्धों की भी सुरक्षा चूहों, छछून्दरों, लोमड़ियों, अंधेरी रात और लापरवाह सुपरवाइजर की मेहरबानी पर ही निर्भर करती है।[35] इस बात का दूसरा पहलू यह है कि किसी भी तटबन्ध के टूटने की जिम्मेवारी इन निरीह जानवरों या सुपरवाइज़र पर डाली जा सकती है और सम्बद्ध अधिकारी इस तर्क का फायदा उठाने में कभी नहीं चूकते।

बाढ़ की समस्या को बढ़ाने में चूहों, छछूंदरों, खरगोशों और लोमड़ियों के योगदान को कम करके नहीं आंका जा सकता क्योंकि जब अमेरिका जैसे सम्पन्न और सुव्यस्थित देश में चूहे वहाँ की तकनीकी क्षमता पर भारी पड़ते हैं तो फिर भारत जैसे गरीब और दुर्व्यवस्था से ग्रस्त देश में उनका उपद्रव कितना भयंकर होता होगा इसकी कल्पना की जा सकती है। तटबन्धों की समस्या और जनाक्रोश से निबटने के लिए जल-संसाधन विभाग और सरकार किस तरह से चूहों का उपयोग अपने हक में कर लेती है, इसके कुछ बड़े ही दिलचस्प उदाहरण देखने को मिलते हैं।

यूँ तो तटबन्धों का टूटना और उसके लिए चूहों को जिम्मेवार ठहराने का काम बूढ़ी गंडक पर पूसा के पास लदौरा गाँव (जिला समस्तीपुर) में 1956 में ही शुरू हो गया था और शुरू-शुरू में लोगों ने सिंचाई विभाग द्वारा अपने बचाव के इस रास्ते पर कोई ध्यान नहीं दिया मगर जब यह रोजमर्रा की घटना होने लगी तब लोगों के कान खड़े हुए कि कहीं न कहीं कोई गड़बड़ जरूर है। फिर इसके खिलाफ आवाजें उठने लगीं। 1963 में विधान सभा में राज्यपाल के अभिभाषण पर बहस चल रही थी। उस समय भी तटबन्धों में दरार के कारण के रूप में चूहों को याद किया गया था। इस पर भोला प्रसाद सिंह की प्रतिक्रिया थी, ''...बांध क्यों टूटता है? सरकार कह सकती है कि चूहों के बिल के कारण टूटता है, मैं कहता हूँ कि जब आप चूहों के बिल को नहीं बन्द कर सकते हैं तो आप क्या कर सकते हैं? अगर चूहों के बिल को नहीं बन्द कर सकते हैं तो आप को चूहे के बिल में ही चले जाना चाहिये।''[36] उसी साल एक बार फिर बाढ़ के मौसम में बूढ़ी गंडक का पूसा-बछौली तटबन्ध लदौरा गाँव में ही टूटा। सरकार की तरफ से बिहार विधान सभा में डूमरलाल बैठा ने बयान दिया, ''...उक्त स्थान पर बांध का टूटना एक अप्रत्याशित घटना थी क्योंकि बांध काफी मजबूत बना था और स्पेसिफिकेशन के मुताबिक था। बाढ़ के पानी का दबाव वहाँ ज्यादा नहीं था। उस स्थान का निरीक्षण करने के बाद उच्च पदाधिकारी इस निर्णय पर पहुँचे कि यह घटना चूहों द्वारा किये गए छिद्रों के कारण हुई थी। बांध के टूटने के कारण लदौरा ग्राम के आस-पास टट्टी की बनी झोपड़ियों के चारों तरफ पानी जमा हो गया था जिससे उसमें रहने वाले लोग अपना सभी सामान लेकर तटबन्ध के ऊपर चले गए थे और करीब एक सप्ताह में पानी कम होने पर वे लोग अपने-अपने घरों में लौट आये।''[37]

उसी तरह, 1968 में कोसी नदी का पश्चिमी तटबन्ध अक्टूबर 1968 में जमालपुर के पास दरभंगा में पांच स्थानों पर टूट गया। उस समय राज्य में राष्ट्रपति शासन था और बहस की केन्द्र बिन्दु बिहार विधान सभा न होकर लोकसभा थी।

लोकसभा में जब इस तटबन्ध के टूटने के कारणों पर बहस हुई तो उसमें कामेश्वर सिंह का कहना था, ''...कोसी में जो बाढ़ आयी थी उसकी एक नई थ्योरी बतायी गयी कि चूहों ने सूराख कर दिये थे। मेरा कहना है कि चूहों के सूराख नहीं थे बल्कि सरकार की लापरवाही थी। छोटे-मोटे चूहों को अर्थात ओवरसीयर्स वगैरह को तो सरकार ने सस्पेन्ड कर दिया लेकिन जो मोटे चूहे थे, जो बड़े-बड़े अधिकारी हैं, जो वाकई में पैसा खाते हैं, उनके खिलाफ कोई ऐक्शन अभी तक नहीं लिया गया।''[38]

तटबन्ध टूटने के चूहा थ्योरी पर बैद्यनाथ मेहता को विश्वास नहीं था। वह इसे लीपा-पोती का जरिया और किसी भी प्रकार की जिम्मेवारी से बच निकलने का रास्ता भर मानते थे। उन्होंने बिहार विधान सभा में यह प्रश्न एक बार उठाया था। उनका कहना था, ''...आखिर यह ब्रीचेज़ क्यों होते हैं? इंजीनियर इसको देखते हैं, पूना रिसर्च इस्टीच्यूट का एप्रूवल होता है, वाटरवेज़ का एप्रूवल होता है, बड़े-बड़े विशेषज्ञों की राय से बनाये जाते हैं, तो भी ऐसा क्यों होता है? एक ही कारण मैं समझता हूँ और वह यह है कि ऐडमिनिस्ट्रेटिव लैप्सेज़ इसमें रहते हैं। अफसरों को भय नहीं रहता है कि अगर हमारी नेग्लिजेन्स की वजह से नेशनल कैलेमिटी होती है तो इसकी जिम्मेवारी उन पर होगी।''[39]

सीतामढ़ी के समाजकर्मी नागेन्द्र प्रसाद सिंह का कहना है, ''...2007 में एक बार मुख्यमंत्री के यहाँ सरकार के अफसरों, नेताओं तथा कुछ समाजकर्मियों की मीटिंग हो रही थी। मुझसे बाढ़ का हाल चाल पूछा गया। मैंने कहा कि हमारा जो इंजीनियरिंग डिपार्टमेन्ट है उसके बारे में हम लोगों की एक राय बन गयी है कि इसको फ्लड प्रोटेक्शन में कोई रुचि नहीं है, उसको फ्लड फाइटिंग में मजा आता है। फ्लड प्रोटेक्शन अगर करना है तो यह काम तो पूरे साल चलना चाहिये या बाढ़ आने के कम से कम छः महीने पहले से शुरू होना चाहिये मगर इसमें इस विभाग की रुचि नहीं है। फ्लड फाइटिंग इनके लिए ऐडवेन्चर होता है। तब बोल्डर गिराया जाता है जिसकी न कभी कोई गिनती होती है और न ही कोई हिसाब किया जाता है। बोल्डर गया पानी में और उसका बिल बन जाता है। मुख्यमंत्री ने मुझसे पूछा कि तटबन्ध कहाँ-कहाँ टूटा तो मुझे तो सब मालुम था। मधकौल, रमणी, नारायणपुर घाट आदि दर्जनों जगह का नाम उनको गिना दिया और यह भी कहा कि तटबन्ध एक ही जगह पर कई-कई बार टूटा है। उन्होंने अपने अफसरों से पूछा कि जब एक जगह मरम्मत हो जाती है तो वहीं बार-बार क्यों टूटता है? अफसर निरुत्तर थे। सच बात यह है कि कभी भी तटबंध टूटने की जिम्मेवारी तय नहीं होती, इसलिए दोषी लोगों का हौसला बढ़ा रहता है।

नगेन्द्र प्रसाद सिंह

1970 से अब तक जितनी बार और जितनी जगह तटबन्ध टूटा है उसकी जिम्मेवारी न तो सरकार लेने को तैयार है न उसके इंजीनियर। तटबन्ध टूटने की जिम्मेवारी जाती है चूहों पर कि उनके बिल बनाने की वजह से बांध टूट जाता है। चूहा सरकार और जल-संसाधन विभाग के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है वह सरकार की सभी जिम्मेवारियों के जाल को बड़ी आसानी से कुतर देता है।''

बहरहाल, चूहे अभी भी अनियंत्रित हैं और सरकार के जल-संसाधन विभाग की बहुत मदद करते हैं। पहले कभी चूहों के बिल और लोमड़ियों की मांद पर नजर रखने के लिए जल-संसाधन विभाग प्रति तीन किलोमीटर लम्बाई के लिए एक बांध खलासी की नियुक्ति करता था जिसका काम समय-समय पर इन छिद्रों को बन्द करते रहना हुआ करता था। अब यह काम हाइटेक हो गया है और इसका सारा जिम्मा फ्लड फाइटिंग फोर्स के पास चला गया है और वही इस काम को देखते या नहीं देखते हैं।

13.9.2 असामाजिक तत्वों की भूमिका–चूहों की तरह तटबन्धों के टूटने की जिम्मेवारी से बचने के लिए असामाजिक तत्वों की बहुत बड़ी उपयोगिता है। इस शब्द के चलन के पीछे अमरीकियों का तो नहीं लेकिन अंग्रेजों का हाथ जरूर है। विलियम विल्कॉक्स नाम के एक अंग्रेज इंजीनियर ने पश्चिम बंगाल में बर्द्धमान जिले की सिंचाई और बाढ़ प्रबन्धन पर एक बड़ी ही तथ्यपरक और दिलचस्प पुस्तक लिखी है। असामाजिक तत्वों का मूल तलाशने में यह अभिलेख बड़ा ही कारगर है। विल्कॉक्स लिखते हैं, ''...इस घाटी में किसान नदी के किनारे दो से ढाई फुट ऊँचे बौने तटबन्धों का हर साल निर्माण करते थे। सूखे मौसम में इनका इस्तेमाल रास्ते के तौर पर होता था। उनके अनुसार घाटी में बरसात की शुरुआत के साथ-साथ बाढ़ों की भी शुरुआत होती थी जिससे कि बुआई और रोपनी का काम समय से और सुचारु रूप से हो जाता था। जैसे-जैसे बारिश तेज़ होती थी उसी रफ़्तार से ज़मीन में नमी बढ़ती थी और धीरे-धीरे सारे इलाके पर पानी की चादर बिछ जाती थी। यह पानी मच्छरों के लारवा की पैदाइश के लिए बहुत उपयुक्त होता था। इसी समय उफनती नदी का गन्दा पानी या तो बौने तटबन्धों के ऊपर से बह कर पूरे इलाके पर फैलता था या फिर किसान ही बड़ी संख्या में इन तटबन्धों को जगह-जगह पर काट दिया करते थे जिससे नदी का पानी एकदम छिछली और चौड़ी धारा के माध्यम से चारों ओर फैलता था। इस गन्दले पानी में कार्प और झींगा जैसी मछलियों के अण्डे होते थे जो कि नदी के पानी के साथ-साथ धान के खेतों और तालाबों में पहुँच जाते थे। जल्दी ही इन अण्डों से छोटी-छोटी मछलियाँ निकल आती थीं जो कि पूरी तरह मांसाहारी होती थीं। यह मछलियाँ मच्छरों के अण्डों पर टूट पड़ती थीं और उनका सफ़ाया कर देती थीं। खेतों की मेड़ें और चौड़ी-छिछली धाराओं के किनारे इन मछलियों को रास्ता दिखाते थे और जहाँ भी यह पानी जा सकता था, यह मछलियाँ वहाँ मौजूद रहती थीं। यही जगहें मच्छरों के अण्डों की भी थीं और उनका मछलियों से बच पाना नामुमकिन था। अगर कभी लम्बे समय तक बारिश नहीं हुई तो ऐसे हालात से बचाव के लिए स्थानीय लोगों ने बड़ी संख्या में तालाब और पोखरे बना रखे थे जहाँ मछलियाँ जाकर शरण ले सकती थीं। सूखे की स्थिति में यही तालाब सिंचाई और फ़सल सुरक्षा की गारन्टी देते थे और क्योंकि नदी के किनारे बने तटबन्ध बहुत कम ऊँचाई के हुआ करते थे और 40-50 जगहों पर एक साथ काटे जाते थे इसलिए बाढ़ का कोई ख़तरा नहीं होता था और इस काम में कोई जोख़िम भी नहीं था। नदी के ऊपरी सतह का पानी खेतों तक पहुंचने के कारण ताज़ी मिट्टी की शक्ल में उर्वरक खाद खेतों को मिल जाती थी। बरसात समाप्त होने के बाद बौने तटबन्धों की दरारें भर कर उनकी मरम्मत कर दी जाती थी। विल्कॉक्स लिखते हैं, ''...कोई भी गाँव वाला इस तरह की स्पष्ट तकनीकी राय नहीं दे सकता था अगर उसने अपने बाप-दादों से यह किस्से न सुने होते या उन्होंने खुद तटबन्धों का काटते हुए उनको न देखा होता। नदी के तटबन्ध 40-50 जगहों पर क्यों काटे जाते थे-यह तर्क इस बात को रेखांकित करता है।''[40]

अंग्रेज़ों ने इस व्यवस्था को मजबूत बनाने और सुधारने का काम नहीं किया। उन्हें लगा कि चौड़ी और छिछली धाराएं नदी की छाड़न हैं और नदियों के किनारे बने तटबन्ध केवल बाढ़ से बचाव के लिए बनाये जाते हैं। उन्होंने चौड़ी-छिछली धाराओं की उपेक्षा की और उन्हें ''मृत नदी'' घोषित कर दिया और ज़मीन्दारी तटबन्धों को बाढ़ नियंत्रण के लिए मजबूत करना शुरू किया। लोगों ने फिर भी तटबन्धों को काटना नहीं छोड़ा। उधर अंग्रेज़ सरकार इस बात पर तुली हुई थी कि वह किसी भी कीमत पर लोगों द्वारा तटबन्धों के काटने की इस 'दुर्भाग्यपूर्ण घटना' को रोकेगी। उसका मानना था कि इतनी जगहों पर तटबन्ध नदी की 'अनियंत्रित बाढ़' के कारण टूटते हैं। उन्हें इस बात का गुमान तक नहीं हुआ कि तटबन्ध चोरी-चुपके किसान ही काटते हैं। उन्हें यह भी समझ में नहीं आया कि एक बड़ी लम्बाई में तटबन्धों के बीच घिरी नदी से एक ही साल में 40 से 50 स्थानों पर दरारें क्यों पड़ेंगी? तटबन्धों के अन्दर फंसी नदी की मुक्ति के लिए तो दो एक जगह की दरार ही काफ़ी है-वह इतनी जगहों पर तटबन्ध क्यों तोड़ेगी?

इस तरह की 'दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं' के पीछे स्थानीय किसानों के हाथ होने की जानकारी होने में अंग्रेजों को बहुत समय लग गया और वहीं से बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में, 'असामाजिक तत्वों' का जन्म हुआ।

बाढ़ की जिम्मेवारी को असामाजिक तत्वों के खाते में डालने की वारदातें कटिहार जिले में मनिहारी प्रखंड में अक्सर हुआ करती हैं। इस प्रखंड में मनिहारी से दो किलोमीटर पूर्व में एक गांव है मेदिनीपुर, जहाँ गाँव वाले बताते हैं ''हम लोग तीन तरफ से नदियों से घिरे हुए हैं। पूर्व में महानन्दा, पश्चिम में कारी कोसी और दक्षिण में गंगा। हमारी समस्या यही है और हमारी समस्या का समाधान भी यही है। पहले जब तटबन्ध नहीं था तब नदियाँ चढ़ती थीं तो हमारे यहाँ बाढ़ आती थी और किसी भी नदी का लेवेल कम होने पर हमारे यहाँ पानी घटने लगता था। तटबन्ध बनने के बाद हमारी समस्या गंभीर हुई है। बारिश में वैसे भी इन तीनों तटबन्धों के बीच फंसा पानी हमारे यहाँ अटकता है। कभी महानन्दा का पश्चिमी या कारी कोसी का पूर्वी तटबन्ध टूटा तो हम डूबे। तटबन्धों के बीच फँसा यह पानी अपने आप कभी निकल पायेगा क्या?''

वह आगे कहते हैं, ''गंगा का तटबन्ध काटने के अलावा हमारे पास चारा क्या है? अगर नहीं काटते हैं तो मनिहारी, मेदिनीपुर, आजमपुर टोल आदि गाँवों के कम-से-कम 5,000 लोग मरेंगे और मरने वालों में प्रखण्ड या थाने आदि के सरकारी महकमों के भी लोग होंगे। सरकार अगर दस हजार रुपये भी प्रति मृत व्यक्ति का मुआवजा दे तो 5 करोड़ रुपये होता है। काटे गए तटबन्ध की मरम्मत में दस-बीस लाख रुपये से ज्यादा नहीं लगेगा। प्रशासन के लोग तो खुद खड़ा होकर कटवाते हैं क्योंकि बाढ़ का पानी सरकारी और गैर सरकारी लोगों में अन्तर नहीं समझता। ...यह काम किस तरह से असामाजिक है? ...मामला मुकदमा कुछ नहीं होता है क्योंकि जान सबको प्यारी होती है और इस बात से हर अफसर डरता है कि अगली बाढ़ में लोगों ने थाने-पुलिस या मुकद्दमें के डर से अगर बाँध नहीं काटा तो उनका खुद का क्या होगा।''[41]

बिहार के पुराने समाजवादी नेता और कई बार विधायक रहे (अब स्वर्गीय) परमेश्वर कुँअर कहा करते थे कि नदी को मुक्त रखना चाहिये। वह सभी तटबन्ध हटा देने की बात किया करते थे। वह यह जरूर मानते थे कि कोसी और गंडक जैसी नदियों के तटबन्धों को काट देने के बाद स्थानीय लोगों को उन्हें संभालना मुश्किल हो जायेगा और यह काम सरकार को करना चाहिये मगर बाकी छोटी नदियों के तटबन्धों को हटाने का काम स्थानीय लोग भी कर सकते हैं। इसी तरह के तटबन्ध की परिस्थितिजन्य कटाई की घटना का विवरण देते हैं सीतामढ़ी के समाजकर्मी संजय सिंह 'मधु'। उनका कहना है, ''...इस जगह का नाम चैनपुर है। यहाँ पुरानी धार बागमती के पानी छलकने से जबर्दस्त जल-जमाव हुआ करता था। नदी का पानी चारों ओर फैलता था और बागमती का तटबन्ध उसे नदी में जाने से रोक देता था। यह पानी मांड़र, पर्राही, कन्सार, झौवा, चैनपुर और यादव टोली में फैलता था। गाँवों के लोगों ने स्थानीय सांसद को अपनी व्यथा बतायी। उन्होंने लोगों को आश्वस्त किया कि अगर वह चुनाव जीत जाते हैं तो यह जल-जमाव समाप्त करवा देंगे। वह चुनाव जीत भी गए क्योंकि इस मुद्दे पर उन्हें व्यापक जन-समर्थन मिल गया। जनता उनके पास यह कहने के लिए गयी कि हमारी समस्या का किसी तरह निदान करवाइये। सांसद ने यह बात प्रशासन को कही कि एक माह के अन्दर इस समस्या को हल करवाइये। उन्होंने डी०एम० और बागमती परियोजना के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर को भी लिखा मगर वहाँ जाकर बात लाल फीता शाही में फंस गयी क्योंकि उसकी स्वीकृति कई स्तरों से मिलनी थी और यह स्वीकृति तमाम प्रयासों के बाद भी नहीं मिली। महीनों बीत गए और कुछ हुआ नहीं तब गाँवों के लोगों ने मिल कर बागमती के पूर्वी तटबन्ध को काट दिया। इस कार्यक्रम में चन्दौली तक से लोग शामिल हुए थे। कई गाँवों के हजार से ज्यादा लोग काटने के लिए इकट्ठा हुए और उन्होंने बांध काटना शुरू किया। लेकिन यह लोग पेशेवर मिट्टी काटने वाले नहीं थे इसलिए उन्हें दिक्कत हो रही थी। बाद में मजदूरों की मदद से यह काम पूरा किया गया और इसमें पच्चीस हजार के आस-पास रकम खर्च हुई जिसका इन्तजाम आम जनता के चन्दे से हुआ। बांध कट जाने के बाद जल-जमाव तो खतम हो गया मगर बागमती परियोजना के इंजीनियर यहाँ जांच पड़ताल करने आये और 40-50 लोगों से पूछ-ताछ की। इंजीनियरों का कहना था कि बांध गाँव वालों ने काटा है इसलिए उसकी मरम्मत का खर्च भी उन्हीं से वसूल किया जायेगा। इस घटना से गाँव के लोग थोड़ा सहम गए और स्थानीय नेता राम चन्द्र सहनी के पास गए। एक जन-सभा की गयी जिसमें ऐलान किया कि जन-हित में बांध काटने का काम किसानों ने किया है और अगर सरकार मुकद्दमा दायर करना चाहती है तो सारे गाँवों के लोगों पर मामला दायर करे। इसके बाद डी०एम० से बात करके गाँव वालों ने उन्हें सारी कहानी बतायी और उसके बाद फिर मामला रफ़ा-दफा हो गया। बागमती परियोजना ने फिर इसकी जिम्मेवारी ली और बांध का गैप भरने का काम करवा दिया। बांध काटने का काम माघ-फागुन में हुआ था। यह 2000 के पहले की बात है। मांड़र में बांध के कट जाने के बाद बाहर सिल्टेशन भी हो गया और अब कोई समस्या नहीं है।''[42]

संजय सिंह 'मधु'

1989 में बिहार विधान सभा में हरखू झा के एक प्रश्न के उत्तर में सरकार की तरफ से यह बताया गया कि ''...1987 की अप्रत्याशित बाढ़ अवधि में कुल 104 स्थानों पर क्षति पहुँची जिनमें से 27 स्थानों पर दरारें पड़ीं और 77 स्थानों पर असामाजिक तत्वों के द्वारा तटबन्धों को काट दिया गया।'' सरकार ने यह नहीं बताया कि 27 जगह तटबन्ध अगर उसकी लापरवाही से टूटे तो क्या यह एक महान सामाजिक कार्य था?[43]

तटबन्ध काटने के बारे में भूतपूर्व विधायक राम स्वार्थ राय बताते हैं, ''...एक समय ऐसा भी था जब मैं और रघुनाथ झा मिल कर 1990 से लेकर 2004 तक हर साल 'बांध हटाओ आन्दोलन' करते थे और बीसों बार सरकार को लिखित अल्टिमेटम दिया कि या तो यथासंभव स्थानों

पर तटबन्धों में स्लुइस बना कर यहाँ की जल-निकासी की व्यवस्था को दुरुस्त करें अन्यथा तटबन्ध को हटा दें। कभी-कभी 200-400 लोगों को साथ लेकर बांध काटने के लिए निकल पड़ते थे। अन्दरूनी सच यह था कि न तो हम इस बात के लिए गंभीर थे कि तटबन्धों को काट दें और न सरकार का ही कोई ऐसा संकल्प था कि वह तटबन्ध को ऊँचा या मजबूत करे। यह सब एक दुतरफा राजनैतिक ड्रामा था जो चलता रहता था। विधान सभा में जरूर एक बार 2001 में कार्यवाही रिपोर्ट में आया होगा कि बांध काटने के प्रति हमारे जैसे लोग गंभीर थे। बागमती का पानी बहुत उपजाऊ होता है, साल में एक फसल इस इलाके में बागमती के पानी से जरूर लेनी चाहिये। इससे जमीन की उर्वराशक्ति बनी रहेगी। वैसे भी तटबन्ध टूटने की जो अधिकांश घटनाएं बतायी जाती हैं उनमें टूटना कम और स्थानीय लोगों द्वारा काटे जाने की घटनाएं ज्यादा होती हैं। मैंने बताया कि लगभग पूरी लम्बाई में तटबन्ध के किनारे कन्ट्रीसाइड नीचे है। तटबन्ध से रिसाव होता है तो बाहर वाले की फसल डूबने लगती है। वह तटबन्ध काट कर समस्या का समाधान कर लेता है। यहाँ से उत्तर में सुरगाहीं है। गाँव का नक्शा अगर आप देखेंगे तो उसमें आप को आधा बांध कुशहर में और आधा सुरगाहीं में दिखाई पड़ेगा। 2000 के पहले स्थानीय लोगों की मांग थी कि इस बांध को पूरा काट दिया जाए। सुरगाहीं, दस्तारा, कुशहर, बेलाही, सलेमपुर आदि गाँव के किसानों ने मिल कर हम से कहा कि अब हमें यह बांध नहीं चाहिये, इसे किसी तरह कटवाइये या फिर इसका कोई उपाय कीजिये। उपाय के क्रम में सबसे पहले सलेमपुर से एक ड्रेन काट कर बागमती की पुरानी धारा तक ले जाया गया। इससे लगभग आधा जल-जमाव तो समाप्त हो गया मगर आधा फिर भी बचा रह गया। 2000 के अन्त में इन गाँव वालों ने कुशहर हाई स्कूल में एक मीटिंग की और तय किया कि बांध को काट दिया जाए। यह प्रस्ताव लेकर यह लोग मेरे पास आये और कहा कि बांध तो हम लोग काट ही देंगे, आप हमें सिर्फ मामला-मुकद्दमा से बचा लीजिये। मैंने उनसे कहा कि आप लोगों को बांध काटने की जरूरत नहीं पड़ेगी, कुछ इन्तजाम करते हैं। नवीन कुमार वर्मा यहाँ के कलक्टर थे और उनके जिम्में बांध की रक्षा के लिए फोर्स था। हमने उनसे कहा कि आपका बांध तो बचेगा नहीं, कमजोर है। आप बिना बात उसकी रक्षा के लिए प्रशासनिक खर्च बढ़ायेंगे। आप खाली प्रचार करवा दीजिये कि बांध टूटने वाला है, लोग सुरक्षित स्थानों पर चले जायें। उन्होंने मेरे साथ जाकर बांध का निरीक्षण किया और उनको भी लगा कि बांध बचेगा नहीं। सौभाग्य से वह बांध बिना काटे ही 2001 में ध्वस्त हो गया। 2001 में यह काम हो गया तब जहाँ तटबन्ध टूट गया वहाँ तो जमीन पर बालू पड़ गया पर वहाँ से दूर बेलहियाँ आदि तक गाद की मोटी परत जमी। उन लोगों को बड़ा फायदा हुआ। बाद में हमने कुशहर के पास 2003 में एक स्लुइस गेट लगाने की व्यवस्था कर दी, अब वहाँ की हालत थोड़ी सुधर रही है। इसके बाद बांध पूरब में चन्दौली और बेलसंड के पश्चिम मधकौल में टूटा। मात्र एक-दो किलोमीटर के बीच तटबन्ध दो जगह टूटा, यह बड़ी अजीब बात हुई थी। मधकौल में तटबन्ध के टूटने से तरियानी से लेकर मीनापुर तक जलमग्न हो गया। चन्दौली टूटने से भी पूरे इलाके में सिल्टेशन हुआ था जबकि बेलहियाँ में केवल माटी थी। इसके अलावा यह तटबन्ध धरमपुर (1999) तथा सौली (2000) में अपने आप टूट चुका है। देकुली से नीचे मौहारी और मौला नगर में भी कन्ट्रीसाइड में जल-जमाव है। वहाँ अगर तटबन्ध खुद-ब-खुद नहीं टूटा तो लोग भविष्य में जरूर काटेंगे।''[44]

13.10 नेपाल द्वारा पानी छोड़ा जाना

उत्तर बिहार में एक आम आदमी और कभी-कभी प्रबुद्ध वर्ग की भी बाढ़ के बारे में समझदारी इतनी गलत बनी है कि यहाँ बाढ़ नेपाल द्वारा अपनी संरचनाओं से पानी छोड़े जाने के कारण आती है। यह मानसिकता एक लम्बे समय से सुव्यस्थित ढंग से राजनीतिज्ञों द्वारा गलत प्रचार-प्रसार के कारण बनी है। ऐसा करके व्यवस्था अपनी जिम्मेवारी से बच निकलती है। राजनीतिज्ञ जरूर जानते हैं कि नेपाल से उतरने वाली प्राय: सभी नदियों पर पानी को नियंत्रित करने की नेपाल की अपनी कोई व्यवस्था नहीं है। ले-दे कर कोसी और गंडक नदियों पर क्रमश: भीमनगर और वाल्मीकि नगर में बराज बने हुए हैं जिनका नियंत्रण पूरी तरह से बिहार सरकार के जल-संसाधन विभाग के हाथ में है। इन बराजों से पानी छोड़ने का काम बिहार सरकार के इंजीनियर जल-संसाधन विभाग की पूरी जानकारी और सहमति के बाद ही करते हैं। इन इंजीनियरों का वेतन भी बिहार सरकार देती है इसलिए यह इंजीनियर बिहार सरकार के कहने पर ही कुछ करेंगे। इन दो बराजों के अतिरिक्त नेपाल में कमला नदी पर गोडार में और बागमती नदी पर करमहिया में छोटे-छोटे बराज हैं जो कि नेपाल द्वारा निर्मित है तथा उनके नियंत्रण में हैं पर इनसे बाढ़ की कोई संभावना नहीं बनती क्योंकि यह संरचनाएं सीमा से काफी दूर हैं। दु:ख इस बात का है कि इस अनर्गल प्रचार में अज्ञानवश अख़बार, रेडियो और टी॰वी॰ जैसे संचार माध्यम भी मदद करते हैं जिससे यह लगता है कि नेपाल शरारतवश पानी छोड़ता है अत: उत्तर बिहार में बाढ़ की जिम्मेवारी नेपाल की है जबकि राज्य में बाढ़ की बढ़ती विभीषिका का असली दोषी सिंचाई भवन में स्थित यहाँ का जल-संसाधन विभाग है जो नेपाल पर दोष मढ़ने से पहले बाढ़ आने और तटबन्ध टूटने का जिम्मा कभी चूहों पर या कभी असामाजिक तत्वों पर मढ़ कर अपनी जिम्मेवारी से बच निकलता है।

13.11 जल-वायु परिवर्तन और बाढ़

इस विषय पर कोई विवाद नहीं है कि जल-वायु में परिवर्तन हो रहा है और इसे सभी महसूस करते हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण हमारा परिवेश गर्म हो रहा है। तापक्रम की इस बृद्धि का सीधा असर हिम-नद (ग्लेशियर) पर पड़ता है जिससे उनके पिघलने की दर बढ़ती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि वैश्विक तापक्रम बढ़ने की गति पर अगर नियंत्रण नहीं लगेगा तो ग्लेशियर पिघलेंगे और वर्षा का पानी ग्लेशियर के पिघलते पानी से मिल कर नदियों में पानी की मात्रा को बढ़ायेगा इससे बाढ़ की तबाही पहले से ज्यादा होगी और बाढ़ खत्म होने के साथ-साथ नदियों में पानी की कमी हो जायेगी और तब सूखे की स्थिति पैदा होगी। जल-वायु परिवर्तन की घटना को सत्य मानते हुए भी बहुत से वैज्ञानिक उसके परिणामों पर एकमत नहीं हैं। पृथ्वी के अलग-अलग हिस्सों में बाढ़ और सूखे की स्थिति को जल-वायु परिवर्तन से जोड़ने के इस दौर ने फिलहाल इंजीनियरों को अपनी जिम्मेवारी से पल्ला झाड़ने का एक और जरिया मुहय्या कर दिया है। अब अगर बाढ़ आये या तटबन्ध जैसी कोई संरचना टूट जाए तो इसे बड़ी आसानी से जल-वायु में हुए परिवर्तन की झोली में डाल देने

का रिवाज सा चल पड़ा है। बहुत से विद्वानों और क्रियाशील समूहों ने 2008 में कोसी नदी के एफ्लक्स बांध की घटना को जल-वायु परिवर्तन का परिणाम बताने की कुचेष्टा की थी। सच यह था कि कोसी नदी के तटबन्ध 9,50,000 क्यूसेक प्रवाह के लिए डिज़ाइन किये गए थे जब कि तटबन्ध टूटने के समय नदी में प्रवाह मात्र 1,44,000 क्यूसेक ही था। प्रशासनिक और तकनीकी लापरवाही की घटना को जल-वायु परिवर्तन का जामा पहनाने की कोशिशें बड़े पैमाने पर की गईं और सम्बद्ध पक्षों को अपना बचाव करने का एक सहज मौका मिल गया।

13.12 गाद-प्रबन्धन का यक्ष प्रश्न

सच यह है कि राज्य सरकार के पास बाढ़ की समस्या से निपटने के बहुत ज्यादा विकल्प नहीं है। वह केवल तटबन्धों का निर्माण कर सकती है और उन्हें ऊँचा और मजबूत बना सकती है। जाहिर है नुनथर या ऐसे किसी भी बांध का निर्णय नेपाल के हाथ में है जिसकी अपनी जरूरतें और प्राथमिकताएं हैं। इस पर हमारा कोई वश नहीं चलता। प्रस्तावित नदी जोड़ योजना भी कहीं न कहीं घूम फिर कर नेपाल पर ही आश्रित हो जाती है। कुल मिला कर हमारे पास दो ही रास्ते बचते हैं। पहला रास्ता नदी के पानी में आने वाली गाद का प्रबन्धन है जो कि उतना ही महत्वपूर्ण है जितना जल-प्रबन्धन और इसकी तरफ व्यवस्था का ध्यान नहीं जाता। अब तक इस दिशा में जो भी प्रयास हुआ है वह गाद विहीन पानी के प्रबन्धन के रूप में हुआ है। विभाग अगर बहुत खुश होता है तो वह वनीकरण की बात करके अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेता है। थोड़ा बहुत काम तटबन्धों में स्लुइस गेट के निर्माण का हुआ है मगर उससे जिस उद्देश्य की पूर्ति होनी थी वह हुई या नहीं उसके मूल्यांकन में विभाग की कोई दिलचस्पी नहीं है। इधर किसान स्लुइस गेट की मांग रखते हैं। स्थानीय नेतृत्व उसका समर्थन करने के साथ-साथ कभी-कभी संसाधनों की व्यवस्था भी करवा देता है। एक दफा यह काम पूरा हो गया तो सब का दायित्व समाप्त।

गाद से निबटने के दो ही तरीके हैं। एक तो भूमि क्षरण रोक कर नदी के पानी में गाद की मात्रा को नियंत्रित किया जाए जिसके लिए नदी के जल-ग्रहण क्षेत्र में बड़े पैमाने पर जंगल लगाये जाएं और कटे हुए जंगलों का पुनर्स्थापन किया जाय। भूमि क्षरण रोकने का यह आंशिक उपाय ही है। आंशिक इसलिए कि यह काम हमें नेपाल में भी करना पड़ेगा। यहाँ याद दिलाना सामयिक होगा कि जब 1955 में कोसी योजना पर काम शुरू हुआ था तब 'नेपाल को धन-हरियो वन' के नारे के साथ कोसी के जल-ग्रहण क्षेत्र में वनीकरण का काम भारत के सहयोग से शुरू हुआ था मगर दो साल के अन्दर ही अधिकारियों की अरुचि की वजह से जंगल लगाने और बचाने वालों के खेमें उजड़ गए थे। इसके अलावा भी दूसरे कारण हैं। हिमालय अपने विकास की नवजात अवस्था में हैं और अभी भुरभुरी मिट्टी का ढेर भर है। भारी भूकम्प प्रवण क्षेत्र होने के कारण वहाँ भूमि-क्षरण के साथ-साथ भूकम्पों की वजह से जमीन के धंसने की प्रक्रिया भी चलती रहती है। पहाड़ों में चलने वाले निर्माण कार्य इस प्रक्रिया को तेज करते हैं। अधिकांश वैज्ञानिक मानते हैं कि भूगर्भीय प्रक्रियाओं के सामने भूमि क्षरण रोकने वाले प्रयास बहुत कारगर नहीं हो पाते क्योंकि वहाँ प्रश्न जमीन की ऊपरी सतह को बचाने का नहीं, पूरी जमीन की खिसकने से रक्षा का हो जाता है। बाढ़ के साथ जंगलों के संबन्ध पर वैज्ञानिकों की राय एकमत नहीं है। इनमें से बहुतों का मानना है कि इस क्षेत्र में बाढ़ तब भी आती थी और नदियों की धाराएं तब भी बदलती रहती थीं जब इन जंगलों पर किसी की कुल्हाड़ी नहीं लगी थी।

गाद से निपटने का दूसरा तरीका यह हो सकता है कि उसे पानी के साथ अपने क्षेत्र तक आने दिया जाए और यथा संभव ज्यादा से ज्यादा इलाके पर फैलने दिया जाय। परम्परागत रूप से किसान यही करता आया है और नदी भी अपने भूमि निर्माण का कर्तव्य इसी तरह निभाती है। यह काम हम अपनी जमीन पर बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप या मदद के कर सकते हैं। स्लुइस गेट की मांग के पीछे भी यही सोच काम करता है कि बाढ़ के पानी के साथ नदी में आने वाली सिल्ट का भी लाभ किसानों को मिलता रहे। इस पूरी विधा पर ठंडे मन से विचार करने की जरूरत है। जहाँ तक किसानों का संबन्ध है वह सामान्य बाढ़ से कभी नहीं डरते। ऐसी बाढ़ से उसकी सिंचाई और खाद दोनों जरूरतें पूरी होती हैं। समस्या अप्राकृतिक बाढ़ से आती है जिसमें उसे तटबन्धों के टूटने से प्रलयंकारी बाढ़ों का सामना करना पड़ता है जब उर्वरक गाद के बदले बालू मिलता है।

13.13 जल-निकासी

किसी भी समस्या से निपटने के दो तरीके हो सकते हैं। एक यह कि बल प्रयोग करके दूसरे पक्ष को शान्त कर दिया जाए अथवा दूसरे पक्ष के सारे हमलों को निरस्त कर दिया जाए कि उसका हौसला ही समाप्त हो जाय। हमारी व्यवस्था ने नदियों को दुश्मन की तरह देखा है और वह उससे बल प्रयोग कर के निपटना चाहती है। यह बल प्रयोग नदियों के किनारे तटबन्ध या रिंग बांध बना कर किया गया है मगर नदियों का पलड़ा इस मुकाबले में हमेशा भारी रहा है। तालिका-13.1 में पिछले 23 वर्षों में तटबन्ध टूटने की 370 घटनाएं इसकी पुष्टि करती हैं। नदियों की बाढ़ से निपटने का दूसरा तरीका जल-निकासी का है। बाढ़ का पानी पूरे इलाके पर फैलने के बाद अगर जल्दी से निकल जाए तो अल्पकालिक असुविधा के बाद कोई दिक्कत बाकी नहीं होती। ज़मीन की उर्वरा शक्ति भी बची रहेगी। सीतामढ़ी जिले में इस व्यवस्था का उदाहरण देते हुए कोड़लहिया के चन्द्र भूषण कुमार बताते हैं, "...मुजफ्फरपुर से सीतामढ़ी

चन्द्र भूषण कुमार

के बीच में आपको अभी भी बहुत से पुराने लोहे वाले पुल देखने को मिलेंगे। उन पुलों की लम्बाई बहुत ज्यादा नहीं होती थीं मगर उनके ठीक बगल में एक लम्बा लचका हुआ करता था। समान्य स्थिति में नदी का पानी पुल से होकर गुजर जाता था मगर ज्यादा पानी होने पर लचका काम आता था और उसके ऊपर से होकर बाढ़ का पानी निकल जाता था। इससे पुल की भी रक्षा होती थी, पानी और गाद ज़्यादा बड़े इलाके पर फैलती थी और रास्ता उतने ही समय के लिए बन्द होता था जब तक लचके के ऊपर से पानी बहता था। अब सड़कें ऊँची कर दी गयीं हैं और लचके गायब हैं। अब रास्ता तो चालू रहता है मगर पानी रुक जाने से बाढ़ ज्यादा दिन टिकती हैं। वैसे बाढ़ का पानी इन ऊँची सड़कों को भी बख्शता नहीं है। उनके ऊपर से भी होकर बहता है मगर हमें डुबा कर बहता है।''[45]

दुर्भाग्यवश बाढ़ के पानी से निपटने के अब तक जो भी प्रयास हुए हैं उन्होंने जल-जमाव को स्थाई बनाया है। 2007 की बाढ़ जल-निकासी में अवरोध का बहुत कठोर उदाहरण है जिसके बारे में हमने अध्याय-3 में चर्चा की है। जल-निकासी की बात किसान तो करते हैं मगर जल-संसाधन विभाग इसे कभी गंभीरता से नहीं लेता। कोसी पर 1950 के दशक में जब तटबन्ध बने थे उसी समय दरभंगा जिले के घनश्यामपुर, बिरौल और कुशेश्वर स्थान प्रखंडों में जल-जमाव की समस्या उग्र रूप से सामने आयी। उससे निपटने के लिए बिहार सरकार की तरफ से केदार पाण्डेय ने विधान सभा में आश्वासन भी दिया था (1959)। उनका कहना था, ''...कमला और कोसी नदियों के जल का अच्छी तरह से निष्कासन करने के विषय पर भारत सरकार ने एक समिति की स्थापना का प्रस्ताव रखा है जिसमें कुछ समय लग जायेगा। अत: इस साल के कार्यकाल में उक्त काम के आरंभ होने की कोई आशा नहीं है। ...इस कमिटि का फंक्शन केवल स्कीम को एक्ज़ामिन करना ही नहीं है, बल्कि कमला और वेस्ट कोसी बेसिन में इन्टिग्रेटेड वे में फ्लड कन्ट्रोल मेज़र्स (समेकित रूप से बाढ़ नियंत्रण की प्रक्रिया-ले०) पर भी विचार करना है और उसके बाद में फैसला देना है।''[46] यह फैसला आज तक (जून 2010) नहीं दिया गया। 1988 में एक विशेष टास्क-फोर्स द्वारा जल-निकासी की कुछ योजनाएं तैयार की गईं मगर उनके क्रियान्वयन के लिए कभी पैसा ही नहीं हुआ। उसके बाद से जल-संसाधन विभाग शायद हर तीन-चार साल पर इन योजनाओं के एस्टीमेट को फिर से सुधारता रहता है और यह फाइलें केन्द्रीय जल आयोग, योजना आयोग, वित्त मंत्रालय और गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग में कहीं ठोकरें खाती रहती हैं। इधर कई वर्षों से इस सारे मसले पर एकदम चुप्पी है यद्यपि आश्वासनों की खैरात बांटने में कभी कमी नहीं होती।

1998-99 के आस-पास नमूने के तौर पर राज्य के जल-संसाधन विभाग ने जल-निकासी की कुछ योजनाओं पर काम करना चाहा मगर जब इंजीनियर इन कार्यस्थलों पर पहुँचे तो उन्हें पता लगा कि इलाके की टोपोग्राफी पूरी तरह बदल गयी है और उनके द्वारा बनायी गयी योजनाओं का उसी रूप में क्रियान्वयन हो ही नहीं सकता। तब बुद्धू लौट कर घर आ गए। अब काम तो होगा बाद में, पहले सर्वेक्षण और डिज़ाइन नये सिरे से तैयार करनी पड़ेंगी। इस दिशा में फिलहाल कोई प्रगति नहीं हो रही है।

बागमती परियोजना क्षेत्र में जो जल-जमाव की स्थिति है उसे देखने समझने के लिए बरसात के मौसम में लहेरियासराय से समस्तीपुर तक की यात्रा करनी चाहिये। उस समय यह पूरा इलाका समुद्र की तरह दिखायी पड़ता है। यह समुद्र मानव निर्मित है। ग्राम गोदाई पट्टी, पो० रुपौली, जिला समस्तीपुर के एडवोकेट रामस्वार्थ चौधरी ने लेखक को बताया कि 1954-55 के आस-पास जब करेह नदी पर तटबन्धों का निर्माण शुरू हुआ तब स्थानीय लोगों ने दरभंगा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के तत्कालीन अध्यक्ष रामानन्द चौधरी के नेतृत्व में इस निर्माण का विरोध किया था। उनका साथ देने के लिए भोगेन्द्र झा, कर्पूरी ठाकुर, सूरज नारायण सिंह, गंगा प्रसाद सिंह, महेन्द्र चौधरी, श्रीकान्त और कालीकान्त चौधरी जैसे नेता मौजूद थे। उनका कहना था कि इस निर्माण से वहाँ के जल-जमाव की स्थिति विकट हो जायेगी। तत्कालीन सिंचाई मंत्री राम चरित्र सिंह ने दरभंगा जाकर आन्दोलनकारियों को समझाया बुझाया तब जाकर आन्दोलन शान्त हुआ। कहते हैं कि राम चरित्र सिंह ने जनता को आश्वासन दिया था कि उन्हें अगर कोई नुकसान होता है तो सरकार समाधान की उचित व्यवस्था करेगी। सोरमार हाट से नीचे बने इन तटबन्धों के कारण घोघराहा में शान्ति धार का मुंह बंद हो गया और खरसर के पास बागमती की जो धारा फूट कर बूढ़ी गंडक की ओर जाती थी उसका भी मुंह बन्द हो गया। अब सारी नदियाँ सिमट कर समस्तीपुर-दरभंगा रेल लाइन के हायाघाट के पास करेह के तटबन्धों के बीच आ गयीं। रेल लाइन के पुल की यह क्षमता नहीं थी कि सारे पानी को सुगमतापूर्वक नीचे पार कर दे। उस हालत में पानी पीछे फैला और पहले से ज्यादा समय तक वहाँ रहने लगा। इसकी वजह से बाढ़ का पानी हायाघाट, बहादुरपुर और दरभंगा सदर प्रखंडों में फैलने लगा और इसका असर जाले, सिंघवारा तथा समस्तीपुर के कल्याणपुर प्रखंड तक पड़ा। इस तटबन्ध की वजह से इलाके की पूरी जल-निकासी की व्यवस्था छिन्न भिन्न हो गयी।[47]

शान्ति नदी का घोघराहा और बागमती की पुरानी धार का खरसर में मुंह बन्द हो जाने के कारण जल निकासी की गंभीर समस्याएं सामने आईं। राम सुकुमारी देवी ने बिहार विधान सभा में मांग की, ''...दूसरी बात मैं घोघराहा बांध के बारे में कहना चाहती हूँ। यह बांध भी अभी तक अधूरा ही है। सरकार ने इस पर रुपये खर्च किये लेकिन यह खर्च किया हुआ सब बेकार हो जायेगा, इसकी कोई उपयोगिता नहीं होगी अगर इसे इस साल नहीं पूरा किया गया। यदि सोरमार हाट तक बांध को पूरा नहीं किया जाता है तब वहाँ की जनता की तकलीफ दूर नहीं होगी। शान्ति नदी का मुंह घोघराहा के नजदीक बांध दिया गया है जिससे सरकार को संतोष हो गया है कि अब वहाँ पर बाढ़ नहीं आ सकेगी लेकिन बात ऐसी नहीं है। उसके पश्चिम में बहुत लो लैण्ड है जिसका नतीजा होता है कि पानी ओवर फ्लो होकर के उस इलाके में चला जाता है और यह इलाका बाढ़ पीड़ित हो जाता है... इसलिए मैं कहूँगी कि वहाँ पर जो लो लैण्ड है उस पर मिट्टी दे दी जाए जिससे जमीन ऊँची हो जाए और बाढ़ से बच सके और वहाँ के खेतों की हालत अच्छी हो जाए। एक त्रिमुहानी योजना है। वारिस नगर का जो पानी रोसेड़ा की तरफ चला जाता था आज वहाँ बांध बन जाने से वारिस नगर में ही पानी रह जाता है और वहाँ इससे बहुत नुकसान होता है। इससे बचाने के लिए वहाँ प्रबन्ध किया जाए और स्लुइस गेट बनवा दिया जाए ताकि वहाँ के लोग इस आफत से बच सकें। ...जठमलपुर, तीरा, रजपा, मलकौली इत्यादि गाँवों के लोगों के कल्याण के लिए उन गाँवों में रिंग बांध जरूरी है।''[48]

राम सुकुमारी देवी ने इस बांध की समस्या को फिर एक बार बिहार विधान सभा में उठाया। उनका कहना था, ''...मैं सुझाव देती हूँ

कि जल्द से जल्द त्रिमुहानी, खुरसंड, घोघराहा में स्लुइस गेट बनवा दें एवं घोघराहा घाट को सोरमार हाट तक एवं जठमलपुर से हायाघाट तक के बांध को पूरा कर दें। सड़कों की मरम्मत हो ताकि लोगों को रोज़ी और रोटी मिल सके और सरकार का भी काम चल सके। अभी जो लाइन जठमलपुर से सोरमार हाट तक की बनी है उसमें जठमलपुर, तीरा, रजपा, मलकौली के ग्रामवासियों की जमीन पड़ जाती है जिससे उन लोगों को अपार क्षति हुई है। अत: मेरा सुझाव है कि बांध की लाइन जठमलपुर, महादेव मठ के किनारे-किनारे होकर ही बांधे तो तो लोगों का कल्याण हो सकेगा। अगर यह सुझाव सुविधाजनक नहीं हो तो नदी के नजदीक किनारे होकर ही बांधा जाए क्योंकि वहाँ पर जबर्दस्त पुल है ही।''[49]

इस क्षेत्र के सामाजिक कार्यकर्ता उमेश राय बताते हैं, ''यह तटबंध बनने लगा था तब तीरा, रजपा और मलकौली जैसे बड़े किसानों वाले गाँवों की ज़मीन तटबन्धों में जाने लगी। तब लोगों की चिन्ता बढ़ी और तटबन्ध का अलाइनमेन्ट बदलने की बात उठी थी। इन तटबन्धों का गरीब किसानों के योग-क्षेम से कोई लेना देना नहीं था। रही निचली ज़मीन पर मिट्टी भर कर उसे ऊँचा करने की बात तो यह एक नामुमकिन सुझाव था। इतना जरूर हुआ कि शान्तिधार और खरसड़ में बागमती का मुंह जरूर बन्द हो गया।'' तटबन्धों के इस तरह के बेतहाशा निर्माण से समस्तीपुर के इलाके भी तबाही की ज़द में आने लगे। वसिष्ठ नारायण सिंह ने बिहार विधान सभा में अपनी आशंका प्रकट की थी, ''...मुजफ्फरपुर में बागमती की एक धारा हायाघाट से फूट कर वारिस नगर के प्रमुख स्थानों से गुजरती हुई बूढ़ी गंडक में वारिस नगर थानान्तर्गत ग्राम सिवैसिंह टोले रजवारा में मिल जाती है—यह पुरानी बागमती है। ...बूढ़ी गंडक का पानी करेह का पानी, शान्ति नदी का पानी सब मिलकर वारिस नगर थाने को पूर्ण रूप से क्षतिग्रस्त करता है। ...पुरानी बागमती पर बूढ़ी गंडक के संगम तक बायीं ओर हथौड़ी तक और दाहिनी ओर मादीपुर और विक्रम पट्टी गांव की सीमा तक ही बंधा है जो हथौड़ी के 16 कि०मी० नीचे तक ही है—यह चमरबांधा योजना है। बायीं ओर बंधने और दायीं ओर खुला रहने से वारिस नगर डूबता है। शांति नदी का यह तटबन्ध हायाघाट के ऊपर बांधा गया है और करेह हायाघाट के नीचे बंधी है। इससे शान्ति नदी का पानी आंशिक रूप से ही बागमती में जाने से रुकेगा और बूढ़ी गंडक का पानी उल्टा बागमती में आकर तबाही मचायेगा।''[50]

13.14 जल जमाव के खिलाफ आन्दोलन

इस तरह 1950 के दशक में जल-निकासी की तबाही का जो बीज बोया गया था वह अभी भी फल-फूल रहा है। इसकी पराकाष्ठा 1987 की बाढ़ के समय देखने में आयी जब जन-आकोश अपने चरम पर पहुँचा। उस साल बागमती नदी का तटबन्ध बहुत सी दूसरी जगहों के साथ-साथ जठमलपुर और हायाघाट में भी टूटा और टूटे तटबन्ध से निकला पानी रोसड़ा तक पहुँचा। इन तटबन्धों के टूटने की वजह से बाढ़ के पानी को रास्ता मिल गया और वह बड़ी तेज़ी से उतर गया। कहते हैं कि 1955 के बाद यह पहला मौका था जब इस इलाके में रबी की जबर्दस्त फसल हुई। इस घटना ने स्थानीय लोगों को इतना बोध तो जरूर करवाया कि उनकी समस्या बाढ़ की नहीं वरन् जल-निकासी की है और नदी का जो तटबन्ध टूट गया है उसे बांधने न दिया जाए। जल-जमाव की समस्या को लेकर वैसे भी इलाके के लोग पहले से सक्रिय थे और हर साल कुछ न कुछ धरना, प्रदर्शन आदि हुआ करता था। इस बीच सरकार को एक बार यह भी प्रस्ताव दिया था कि बेनीबाद के पास जगनियाँ में जो एक रक्सी धार निकलती है वह हायाघाट में दरभंगा-बागमती में जाकर मिलती है। उस धार का मुंह सड़क परिवहन को बनाये रखने के लिए हरकौली-चन्दौली गांव के बीच में बांध दिया गया था। उसे अगर चालू कर दिया जाए तो महेशवारा, बरुआरी और केवटसा आदि गाँवों का पानी निकल जायगा और बागमती पर दबाव कुछ कम पड़ेगा। आज कल यह धार कटरा के निकट बकुची गाँव के पास से होकर गुजरती है। यह काम भी नहीं हुआ क्योंकि इसको चालू करने में किसानों के आपसी मतभेद थे।

1987 में जब बागमती के तटबन्धों को बांधने के खिलाफ आन्दोलन मुखर होने लगा तब हुकुमदेव नारायण यादव और विजय कुमार मिश्र नेतृत्व देने के लिए आगे आये। धरना, जलूस, प्रदर्शन तथा पदयात्रा आदि के कार्यक्रम शुरू हुए। मानव कड़ी बनाने और जनता कर्फ्यू लगाने के सफल कार्यक्रम हुए और दरार पाटने का काम रुक गया। इसके बाद सरकार द्वारा आन्दोलन को तोड़ने का कार्यक्रम शुरू हुआ। दरभंगा के कमिश्नर ने कुछ लोगों को लगा कर तटबन्धों की दरार पाटने का काम शुरू करवाया और दक्षिण के लोगों की तरफ से तटबन्ध की मरम्मत करने और गैप बन्द करने के लिए आन्दोलन करवाया। अब मामला पानी की निकासी से हटकर दरभंगा और समस्तीपुर की अस्मिता पर जाकर टिक गया। जैसे तैसे मेल-मिलाप हुआ और स्थिति सम्भली। 27 अप्रैल 1988 को दरभंगा में राज्य के तत्कालीन सिंचाई मंत्री लहटन चौधरी के साथ आन्दोलनकारियों की आखिरी मीटिंग हुई जिसमें 19 सूत्री समझौता हुआ। इस मीटिंग में सरकार के सभी आला अधिकारी मौजूद थे। तब यह तय हुआ था कि घोघराहा में शान्ति धार पर एक स्लुइस फाटक बना कर नदी को फिर चालू कर दिया जायेगा। 29 अप्रैल 1988 को इस एस्केप रेगुलेटर का शिलान्यास दरभंगा के कमिश्नर ने किया। मगर रेलवे पुल को जो और लम्बा करने की बात थी वह आज तक नहीं हुई और न ही खरसड़ में बागमती का मुंह खोलने की जो बात थी वह काम हुआ। जनता का संघर्ष जारी है और फाइलें अभी तक बन्द नहीं हुई हैं। यह सरकार का अलग का कार्यक्रम था जिसका 1987 की घटनाओं या आन्दोलन से कोई वास्ता नहीं है।

कुल मिला कर दरभंगा, समस्तीपुर और खगड़िया आदि जिलों की जल-निकासी की समस्या खटाई में पड़ी हुई है और इस पर एक सम्यक अध्ययन और सघन कार्यक्रम की जरूरत हैं। टुकड़े-टुकड़े में हाथ में लिए गए कार्यक्रम समस्या का समाधान नहीं करते वह समस्या को सिर्फ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाते भर है। जिसके दरवाज़े पर समस्या पहुँचायी जाती है वह निश्चित रूप से कमजोर होता है।

सवाल इस बात का है कि किसी भी जल-निकासी की योजना में पानी को अंतत: मुख्य धारा में ही ले जाना होगा। बहुत से नदी-नाले इन नदियों के पास तक तो पहुँच जाते हैं मगर नदी में मिलने से पहले उनकी धारा मुड़ जाती हैं। मुख्य नदी की पेटी ऊपर उठी हुई है। जब तक नदियों और उनमें मिलने वाले नालों या धारों के तलों में फिर से संतुलन स्थापित नहीं होगा तब तक यह पानी नदी में जायेगा ही नहीं। यह संतुलन तभी स्थापित होगा जब नदी स्वाभाविक रूप से बहेगी। और

नदी स्वाभाविक रूप से तभी बहेगी जब तटबन्ध न रहें। यह बात राज्य का जल-संसाधन विभाग नहीं जानता है, ऐसा सोचना भी बेवकूफी होगी। उसका काम योजनाएँ बनाना और उनका क्रियान्वयन करना है और वह अपना काम कर रहा है। अपने इस निष्काम कर्म के परिणाम के प्रति उसकी कोई आसक्ति नहीं है। हमारी सांस्कृतिक विरासत भी यही है।

13.15 तटबन्धों ने आपस में लड़ाया

हम पिछले अध्यायों में देख आये हैं कि किस तरह तटबन्धों ने लोगों को बांटने का काम किया है। तटबंध के इस पार और उस पार के हित एकदम अलग होते हैं। बरसात के मौसम में यह खाई और भी चौड़ी हो जाती है जिसका परिणाम लोहासी कांड जैसी जघन्य दुर्घटनाओं अथवा चानपुरा बांध की आपस में संबंधों में दरार पैदा करने वाली घटनाओं में होता है। इसमें अक्सर एक पक्ष बांध की सलामती चाहता है तो दूसरा उसे फूटी आंखों देखना नहीं चाहता है। इससे कभी-कभी व्यापारिक हितों को भी चोट पहुँचती है। ऐसी ही एक घटना 1998 में रोसड़ा के पास घटी थी जिसके बारे में कहा जाता है कि कुछ मछुआरों ने आपसी रंजिश या प्रतियोगिता की वजह से तटबन्ध को बम से उडा दिया था। रोसड़ा के समाजकर्मी शुभमूर्ति इस घटना का विवरण देते हुए कहते हैं, ''...समस्तीपुर जिले में कोलहट्टा से लगा महेश्वर नाम का एक बहुत बड़ा चौर है। यहाँ आस-पास के गाँवों के बहुत से सहनी लोग हैं जो मछली पकड़ने का काम करते हैं। उनके आपस में कई गुट भी हैं। महेश्वर चौर मुख्यत: भिरहा गाँव के किसानों का है। थोड़े बहुत दूसरे लोग भी होंगे। जलकर मुख्यत: इन्हीं लोगों का है जिस पर सरकार का कोई अख्तियार नहीं है। मछली मारने का अधिकार आस-पास के सहनी लोग इनसे खरीद लेते हैं। चौर के मालिकों का भी संघ है मगर उसमें भी गुट हैं। अब मछुआरों के विभिन्न गुटों के बीच जिस तरह की प्रतियोगिता है, उसी तरह की प्रतियोगिता चौर के मालिकों के गुटों में भी है। अब जिसकी भी बोली सबसे ज्यादा रही हो उसने पैसा लाकर मालिकों को दे दिया मगर उसका जो प्रतियोगी रहा होगा उसे यह पूरा सौदा नागवार गुजरा और उन लोगों ने तय किया कि ऐन मौके पर बांध को काट दिया जाए तो यह पूरा सौदा ही समाप्त हो जायेगा और मछली भाग जायेगी। ऐसी हालत में उस साल जिसने चौर खरीदा है उसका पैसा डूब जायेगा। मालिकों को पैसा तो मिल ही चुका था इसलिए उनकी दिलचस्पी किसी के साथ कोई तरफदारी करने में नहीं थी।

सहनी लोग केवल मछली पकड़ने का ही काम नहीं करते, उनमें से बहुत से लोग बाहर जाकर पत्थर तोड़ने का भी काम करते हैं। पत्थर तोड़ने में विस्फोटक का इस्तेमाल होता है और यह लोग उसे प्रयोग करना जानते हैं। स्थानीय लोग बताते हैं कि तटबन्ध टूटने के पहले धमाका हुआ था जिसकी आवाज़ लोगों ने सुनी थी। इसी से शक होता है कि विस्फोटकों का प्रयोग हुआ होगा। इसके विपरीत कुछ लोगों का मानना है कि ऐसा कुछ नहीं हुआ था। नदी में उस साल बहुत पानी आया था और तटबन्ध पर दबाव था और वह अपने आप टूट गया। जहाँ तक मछलियों का सवाल है तो मालिकों को पैसा मिल ही चुका था और जिनका पैसा डूब गया, उनकी कोई औकात ही नहीं थी कि वह शोर करते। तटबन्ध टूट जाने के बाद प्राथमिकताएं बदल गईं। लोगों का बचाव करना था और उन्हें राहत पहुँचाने का काम करना था।

शुभमूर्ति

बिहार सरकार ने घटना की पूरी जानकारी हासिल करने के लिए एक कमेटी बनायी जिसकी अध्यक्षता दरभंगा के बच्चा बाबू कर रहे थे। अब यह एक व्यक्ति की कमेटी थी या समूह था यह तो पता नहीं मगर जब बच्चा बाबू यहाँ आये थे तो उनके साथ कुछ लोग और भी थे। बच्चा बाबू बड़े आदमी थे, हो सकता है उनके साथ कुछ लोग यूँ भी हो लिये हों। यह लोग नाव से कोलहट्टा जाने वाले थे मगर पानी का वेग बहुत ज्यादा था और यह लोग भिरहा से ही वापस चले गए। जाने की सूरत बनी 20-25 दिन बाद मगर फिर, जहाँ तक मैं जानता हूँ, कोई गया नहीं। उन्होंने कोई रिपोर्ट लिखी या नहीं यह स्थानीय तौर पर किसी को नहीं मालुम। किस्सा वहीं खत्म हो गया पर अपने पीछे कड़वाहट तो छोड़ ही गया।''[51]

13.16 इंजीनियर बोलते नहीं हैं मगर...

नाम न बताने की शर्त पर हमने एक वरिष्ठ इंजीनियर से बात की। उनका कहना था, ''...राजनीतिज्ञ दो तरह के होते हैं। एक वह जो बहुत सी बारीकियों को समझते हैं और उन्हें लगता है कि ऐसा करने से नुकसान ज्यादा होगा तो वह इसका विरोध करते हैं। दूसरे किस्म के राजनीतिज्ञ वह हैं जो किसी भी कीमत पर कुछ होते देखना चाहते हैं। तकनीकी मसलों में इंजीनियरों की राय सर्वोपरि होनी चाहिये मगर उसमें भी रास्ते हैं। ज्यादा आबादी फंसने जा रही होगी तो अलाइनमेन्ट बदलेगा। कहीं पुनर्वास बहुत मंहगा हो जायेगा तो रिंग बांध बनेगा। इन सभी चीजों के लिए मानक हैं और उनके पालन के लिए निर्देश हैं।

यह सच है कि हायाघाट से बदलाघाट तक के बागमती के तटबन्ध की इतना क्षमता नहीं है कि वह नदी में ढेंग, रुन्नी सैदपुर और हायाघाट के रास्ते आने वाले प्रवाह को सुरक्षित तौर पर कोसी तक पहुँचा सके। इसके लिए पुणे में मॉडल टेस्ट हो रहा है और बहुत मुमकिन है कि हायाघाट के नीचे एक तटबन्ध को शिफ्ट करना पड़ेगा। ऐसा अगर होता है तो कुछ नये गाँव तटबन्धों के बीच फंसेंगे और उनका पुनर्वास करना पड़ेगा। अब अगर लोग ऐसा नहीं चाहेंगे तो फिर यह काम नहीं होगा। लेकिन यह सब पुणे वाले मॉडेल टेस्ट पर निर्भर करेगा। इस सवाल का जवाब कि तकनीकी फैसले कौन करता है राजनीतिज्ञ या इंजीनियर तो इसका जवाब सिर्फ यह या वह में देना बड़ा मुश्किल है। ऐसा इसलिए

कि जो भारतीय मानक है उसमें बड़े विकल्प और गुंजाइशें दी गयी हैं। अगर आबादी दूसरी जगह जाने के लिए तैयार है तो उसका खर्च, वाजिब जगह की तलाश, जिस गाँव में पुनर्वास होगा उसकी सहमति और विरोध को देखना पड़ेगा। इसी सन्दर्भ में रिंग बांध के निर्माण और उसके रख-रखाव के खर्च की तुलना कर के ही कोई निर्णय लेना पड़ेगा। हमारी जो विधायिका है उसका काम है कि वह जनता की आवाज सरकार तक पहुँचाये लेकिन यह बहुत हद तक उस व्यक्ति पर निर्भर करता है जो जनता का प्रतिनिधित्व करता है। इन में से कुछ नुमाइन्दे जरूर ऐसे होते हैं जो सरकार पर प्रभाव डालते हैं और अपनी बात मनवा लेते हैं।

किसी भी अजनबी जगह पर एक इंजीनियर कितना मजबूर होता है वह मैं आपको बताता हूँ। कहीं भी भोज-भात होता है तो बहुत सारी व्यवस्था भोज-भात करवाने वाले के हाथ से निकल जाती हैं। भोज होता है तो निमंत्रित मेहमान तो आते ही हैं पर उनके अलावा बहुत से अनामंत्रित और अवांछित लोग भी आ जाते हैं। कोई मेहमान बन कर खाता है, कोई मांग कर खाता है, कुछ लोग जबर्दस्ती भी पांत में बैठ जाते हैं। अब अगर आप को अपनी इज्ज़त प्यारी है तो आप किसी को ना नहीं कर पायेंगे। अपनी व्यवस्था को बढ़ायेंगे। किसी अजनबी इलाके में भोज करेंगे तो हो सकता है कि आप पर दबाव आये कि आपको व्यवस्था हमारे जिम्मे कर देनी पड़ेगी या फलां फलां रसोइया ही आप के यहाँ खाना बनायेगा। हमारे काम में सरकार का दबाव तो रहता ही है पर उसके बाद स्थानीय सांसद, विधायक, मुखिया, सरपंच और इन सबके ऊपर रंगदार, इन सबको अगर आप खुश रख सकें तो काम कर पायेंगे वरना सबसे लड़ते रह जायेंगे।''

13.17 तटबन्धों के साथ जीवन निर्वाह

तटबन्ध अगर ठीक से काम करें तो वह बाढ़ के पानी को सुरक्षित क्षेत्रों में फैलने नहीं देंगे लेकिन इससे पानी में मिली गाद भी तटबन्धों के अन्दर ही अटक जाती है। किसान गाद के फायदे को छोड़ना नहीं चाहता है मगर उसके खेतों पर गाद तभी पड़ेगी जब बाढ़ आयेगी। बाढ़ नियंत्रण के लाभार्थी और व्यवस्था का द्वन्द्व बिना किसी सार्थक वार्तालाप और पहल के जिन्दा है।

थोड़ी देर के लिए अगर हम मान लें कि तटबन्ध अपनी जगह बने रहेंगे तब खेतों तक गाद पहुँचाने का क्या कोई प्रबन्ध किया जा सकता है? इसका समाधान कोई भी आम आदमी या विशेषज्ञ तुरंत सुझायेगा कि स्लुइस गेट के निर्माण से यह काम बड़ी सरलता से किया जा सकता है। यहाँ तक सब ठीक है मगर जब स्लुइस गेट के संचालन की बात आती है तब वहाँ जल-संसाधन विभाग का आदमी मौजूद ही नहीं रहता। अगर वह रहे तो भी गेट को उठाने और गिराने का 'जुगाड़' ठीक नहीं रहता और कुल मिला कर गेट अगर बन्द है तो वह बन्द ही रहेगा और खुला है तो खुला ही रह जाता है। कुछ दिनों बाद लोग टुकड़े-टुकड़े कर के हिस्से-पुर्जे बेच डालते हैं या स्लुइस गेट नदी की रेत में दफ़न हो जाता है। ऐसी कोई क्रान्ति भी नहीं आयी कि जल-संसाधन विभाग का कर्मचारी अपनी जवाबदेही आगे से जरूर निभायेगा।

यहाँ से स्लुइस गेट संचालन के दो रास्ते नज़र आते हैं। पहला कि विभाग पूरी जिम्मेवारी के साथ स्लुइस गेट का न सिर्फ निर्माण करे बल्कि उसका संचालन भी उसी जिम्मेवारी के साथ करे। यह शायद विभाग के कर्मचारी होने नहीं देंगे और इसी लापरवाही का कुपरिणाम है कि पूरे उत्तर बिहार में अधिकांश स्लुइस गेट जाम पड़े हुए हैं। दूसरा रास्ता यह है कि स्लुइस गेट की जगह स्लुइस वाल्व जैसी किसी व्यवस्था का आश्रय लिया जाए जो दुतरफ़ा काम करता है। यह नदी की रिवर साइड और कन्ट्रीसाइड को जोड़ने वाले पाइप की तरह काम करता है जिसमें ऑटोमैटिक वाल्व लगे होते हैं। यदि रिवर साइड में पानी ज्यादा हो तो यह वाल्व अपने आप खुल जाता है पानी कन्ट्रीसाइड में निकल जाता है। कन्ट्रीसाइड में पानी का दबाव रिवर साइड से ज्यादा होने पर वाल्व दूसरी तरफ खुलता है और पानी नदी में जाता है। दोनों तरफ समान पानी रहने पर वाल्व निष्क्रिय रहता है।

इंजीनियर कवीन्द्र कुमार पाण्डेय का कहना है, ''...दिक्कत यह होती है कि इन संरचनाओं की देख-रेख होती नहीं है। बरसात का मौसम खतम होने के बाद नदी तो उतर जाती है मगर रख-रखाव के अभाव में अगर स्लुइस वाल्व काम न करे तो कन्ट्रीसाइड में जल-जमाव बना ही रहता है। यह जल-जमाव तब भी बना रहता है जब स्लुइस वाल्व की जगह फाटक लगे हों। उस हालत में किसान पानी की निकासी के लिए इन संरचनाओं को क्षति पहुँचा कर पानी की निकासी की व्यवस्था कर लेते हैं। संरचना एक बार बना देने के बाद विभाग उनके रख-रखाव में रुचि नहीं लेता। इतना निश्चित है कि अपनी जिम्मेवारी समझते हुए कर्मठता से कर्तव्य पालन के बिना कोई भी व्यवस्था काम करने वाली नहीं है।[52] नाकारा लोगों में कर्तव्य बोध किस तरह जगाया जाए, यह एक सामाजिक समस्या है और इसका कोई तकनीकी या वैज्ञानिक समाधान नहीं है।''

बाढ़ प्रभावित जनता इसे किस रूप में लेगी या स्वीकार भी करेगी या नहीं यह बात निश्चित रूप से कही नहीं जा सकती क्योंकि अमूमन दृष्टि यही होती है कि बाढ़ से सुरक्षा या तो पूरी चाहिये या फिर नहीं चाहिये। यह बात अलग है कि बाढ़ नियंत्रण के इस तरीके की तारीफ विलियम विल्कॉक्स ने भी की थी जिसे कुछ इंजीनियर इसे नियंत्रित बाढ़ (Controlled Flooding) की संज्ञा देते हैं। ऐसा लगता है कि बागमती नदी पर इस तरह के एक प्रस्ताव पर कुछ काम 1960 के दशक में हुआ था। पूर्व केन्द्रीय मंत्री हरिकिशोर सिंह ने लेखक को बताया, ''...मुझे याद आता है कि सिंचाई विभाग के एक इंजीनियर ने एक प्रस्ताव किया था कि बागमती पर तटबन्ध मात्र 5 से 7 फुट की ऊँचाई तक के बनाये जाएं और बाढ़ के मौसम में पानी को उसके ऊपर से बहने दिया जाय। इससे गाद भी फैलेगी और सिंचाई का काम भी हो जायेगा। बाकी जरूरत भर सिंचाई ट्यूब वेल के माध्यम से कर ली जायेगी। के० एल० राव भी शायद ऐसा ही कुछ चाहते थे।''

13.17.1 तटबन्धों के अन्दर रहने वालों की सुरक्षा–एक बार यह मान लिया जाए कि तटबन्ध अब हकीकत हैं और उन्हें निरस्त नहीं किया जा सकता। इस स्थिति में क्या विज्ञान बाढ़ पीड़ितों की मदद के लिए आगे आ सकता है? शायद हाँ। तटबन्ध अगर हकीकत है तो उसके साथ-साथ यह भी सच है कि नदियों के तटबन्धों के बीच लोग रहते हैं और वह इसलिए कि बड़े बांधों के विस्थापितों से इतर इन लोगों को अपनी जीविका चलाने के लिए खेती की जमीन नहीं दी गयी थी। इन विस्थापितों से यह उम्मीद की गयी थी कि वह पुनर्वास में रहते हुए

खेती अपनी पुश्तैनी जमीन पर तटबन्ध के अन्दर करेंगे। यहाँ बता देना जरूरी है कि बिहार में कोसी तटबन्धों के बीच भारत के 380 और नेपाल के 34 गाँव हैं जिनकी कुल आबादी लगभग 12 लाख के करीब होगी। इसी तरह महानन्दा तटबन्धों के बीच 66 तथा कमला तटबन्धों के बीच 102 गाँवों की जमीन पड़ती है। बागमती तटबन्धों के बीच 95 गाँवों का विस्तृत विवरण इस पुस्तक में अन्यत्र दिया हुआ है। गंडक और बूढ़ी गंडक तटबन्धों के बीच फंसे गाँवों के बारे में जानकारी उपलब्ध नहीं है।

परिस्थिति-1 तटबंधों पर आशियाना बनाना—बरसात के मौसम में जब नदी अपने पूरे शबाब पर होती है तो इन लोगों को अक्सर अपना घर-द्वार छोड़ कर किसी सुरक्षित स्थान की तलाश करनी पड़ती है और जब चारों ओर पानी भरा हो तब नदी का तटबन्ध ही वह जगह बचती है जहाँ लोग शरण ले सकें। एसे लोगों का कम से कम तीन से चार महीने हर साल तटबन्धों पर ही बीतता है। इन में से कुछ परिवारों को तो तटबन्ध का ही आसरा बचा है और वह यहाँ स्थायी तौर पर रहते हैं। तटबन्धों पर इतने ज्यादा लोगों की रिहाइश की वजह से गाड़ियों की आवा-जाही और तटबन्धों के रख-रखाव में बाधा पड़ती है। सरकार ऐसे लोगों को तटबन्धों से हटाने का उपक्रम करती है और यदि सरकार के दबाव से हार कर यह लोग किसी तीसरी जगह चले जाते हैं तो यह जाना पुनः वापस आने के लिए ही होता है।

परिस्थिति-2 तटबन्धों के अन्दर बसे गाँवों के बाढ़ के पानी में घिरने के क्रम का निर्धारण—तटबन्धों के अन्दर बसे गाँवों को नदी की बाढ़ के तल के संदर्भ में चित्र 13.2 में दिखाया गया है। राज्य का जल-संसाधन विभाग और केन्द्रीय जल-आयोग तटबन्धों के अन्दर नदी के प्रवाह और बाढ़ के लेवेल का लेखा-जोखा रखते हैं। अगर हमें अन्दर के गाँवों और बढ़ती बाढ़ के लेवेल का पता रहे तब यह बात बड़ी आसानी से बतायी जा सकती है कि किस गांव पर कब खतरा आने वाला है और वहाँ के बाशिन्दों को अगर सुरक्षित स्थान पर ले जाना पड़े तो वह स्थान कहाँ होगा, यह पहले से निर्धारित किया जा सकता है। अगर ऐसे लोगों के लिए बाढ़ शरणालय बनाना पड़े तो उस स्थान का निर्धारण, वहाँ पहुँचने का जरिया, वहाँ कितने लोगों के लिए और कितने दिनों के लिए भोजन, पानी, औषधि, शौचालय, पशु-चारा आदि की व्यवस्था करनी पड़ेगी यह पहले से तय किया जा सकता है। बाढ़ पीड़ितों की वापसी का क्रम भी इसी आधार पर तैयार किया जा सकता है।

परिस्थिति-3 तटबन्ध टूट जाए और तटबन्ध के अन्दर एकाएक पानी उतर जाये—तटबन्धों के अन्दर बरसात के मौसम में तमाम दिक्कतों के बावजूद एक चीज जरूर अच्छी हो जाती है कि नावें हर तरफ जा सकती हैं और उस समय वहाँ परिवहन व्यवस्था सुधरी हुई रहती है। तटबन्ध टूटने की स्थिति में बाढ़ का पानी एकाएक उतर जाता है और जो जहाँ है वहीं ठहर जाता है। यातायात प्रायः ठप्प पड़ जाता है। नावें अपनी जगह फंस जाती हैं और आदमियों तथा जानवरों को कीचड़ से होकर ही कहीं जाना पड़ता है। कभी-कभी कीचड़ की गहराई का अन्दाजा भी नहीं लगता। गन्दे परिवेश में आवा-जाही करने की वजह से एक ओर बीमारियाँ फैलती हैं तो दूसरी ओर नावों के न चल पाने और सड़कों/पगडंडियों के डूबे रहने या टूट जाने से आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बन्द हो जाती है। इस स्थिति से समय रहते निपटने की तैयारी कर लेनी चाहिये। दुर्भाग्यवश होता यह है कि एक बार कहीं तटबन्ध टूट जाए तो आम धारणा यही बनती है कि अन्दर वालों को आराम हो गया। सच यह है कि संपर्क मार्ग चालू होने तक तो उनकी मुसीबतें अपनी जगह बनी ही रहती हैं, नदी का तेज़ी से उतरता पानी ज्यादा कटाव करता है जिसकी वजह से खेत कटते हैं और घरों को लिए-दिए बैठ जाने की घटनाओं में वृद्धि होती है। सब कुछ ठीक हो जाने के बाद नदी का सूख जाना, पानी की किल्लत और रेत भरी आंधी उनका पीछा नहीं छोड़ती। इन घटनाओं का संज्ञान कोई भी नहीं लेता जिस पर समाज और सरकार का ध्यान जाना चाहिये।

परिस्थिति-4 तटबन्ध का टूटना और क्रमिक रूप से सुरक्षित क्षेत्र के गाँवों का डूबना—तटबन्धों का टूटते रहना तटबन्ध निर्माण तकनीक का अविभाज्य अंग है। इन घटनाओं का रिकार्ड रखा जाना चाहिए कि अमुक स्थान पर अमुक डिस्चार्ज और पानी के अमुक लेवेल पर तटबन्ध टूटने के बाद पानी कहाँ-कहाँ, कितनी गहराई का और कितनी देर में पहुँचेगा। चित्र-13.3 में हम 1984 में नवहट्टा में जो कोसी का तटबन्ध टूटा था उसके डूब क्षेत्र का विवरण दे रहे हैं। जल-संसाधन विभाग के पास इस बात के रिकोर्ड जरूर होंगे कि बाढ़ के पानी को फैलने में कितना समय लगा और वह कितनी गहराई में विभिन्न जगहों तक पहुँचा। यदि यह सूचना उपलब्ध हो तो कम्प्यूटर की मदद से इस बात का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है कि किसी भी बाढ़ से सुरक्षित

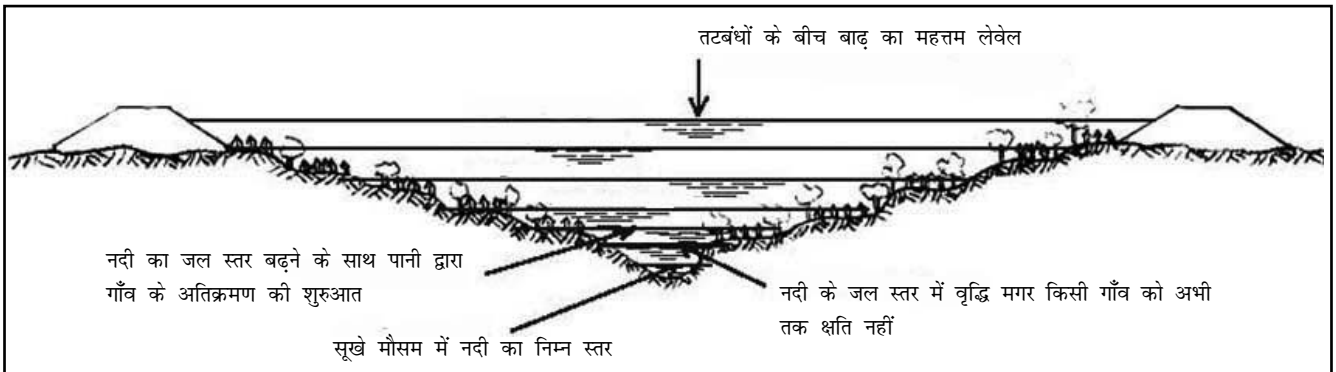

चित्र-13.2 : तटबन्धों के अन्दर अवस्थित गाँवों में बाढ़ के पानी के पहुँचने का क्रम

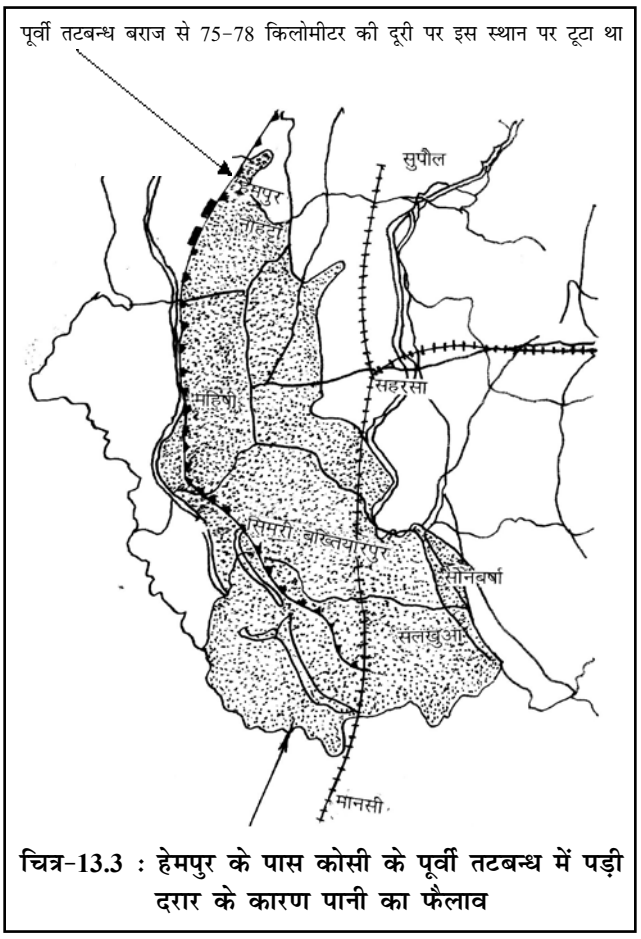

चित्र-13.3 : हेमपुर के पास कोसी के पूर्वी तटबन्ध में पड़ी दरार के कारण पानी का फैलाव

गाँव में बाढ़ का पानी पहुँचने में कितनी देर लगेगी और वहाँ पानी की गहराई बढ़ने का क्या क्रम होगा? इसके लिए जरूरी होगा कि इस तरह की गणना तटबन्ध की पूरी लम्बाई में 2-2.5 किलोमीटर के अन्तराल पर की जाए। तटबन्धों में पहले पड़ी दरारों के पिछले अनुभवों से यह काम काफी विश्वसनीय तरीके से किया जा सकता है।

अगर इस तरह की सूचना उपलब्ध हो तो बचाव और राहत कार्यों तथा आवश्यक राहत सामग्री पहुँचाने में योजनाबद्ध तरीके से काम किया जा सकता है। यहाँ हम केवल इस प्रस्ताव का एक बुनियादी खाका ही दे सके हैं मगर गणना करते समय स्थानीय धाराओं, दूसरे तटबन्ध, सड़कें, नहरें और रेल लाइनों तथा बस्तियों आदि का संज्ञान लेना पड़ेगा और उनके अनुरूप आवश्यक सुधार करने पड़ेंगे।

13.18 जल-संसाधन और आपदा प्रबंधन विभाग का विलय

बिहार की प्राकृतिक आपदायें मुख्यत: पानी के इर्द गिर्द घूमती हैं। बारिश की थोड़ी सी कमी से यहाँ सूखा पड़ता है तो हल्की सी ज्यादा बारिश बाढ़ लेकर आ जाती है। इन दोनों 'विपत्तियों' का मुकाबला आपदा प्रबंधन विभाग को करना पड़ता है और जन-संसाधन विभाग द्वारा किये या न किये गए कामों का उसे फल भोगना पड़ता है। इन दोनों विभागों में, जहाँ तक हमारी जानकारी है, कोई ताल-मेल नहीं है। व्यावहारिक तौर पर जल-संसाधन विभाग, आपदा प्रबंधन विभाग के लिए काम का जुगाड़ करता है जिसकी उसे पहले से कोई जानकारी नहीं होती। अब जल जनित 'विपत्ति' का सारा दायित्व आपदा प्रबंधन विभाग पर आ जाता है। अच्छा यह होता कि इन दोनों विभागों को एक ही मंत्रालय के अधीन कर दिया जाए ताकि आपदा प्रबंधन विभाग को कम-से-कम यह पता तो रहेगा कि उसका सहयोगी उसके लिए क्या-क्या मुसीबतें पैदा करने वाला है।

13.19 बाढ़ों के साथ जीवन निर्वाह

परम्परागत रूप से बाढ़ क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों के पास जल-संस्कृति का एक समृद्ध अनुभव होता है। इसमें भोजन संचय, ईंधन की व्यवस्था, चारे की रक्षा, सुरक्षित स्थान का निर्धारण, आवगमन की व्यवस्था, पीने के पानी का इंतजाम, आवश्यक पारम्परिक औषधियाँ तथा कृषि प्रणाली आदि का विशिष्ट स्थान होता है। जरूरत इस बात की है कि इंजीनियर/वैज्ञानिक इन चीजों का अध्ययन करके उसे आधुनिक विज्ञान की मदद से सजाने-संवारने का काम करें। हम यहाँ इनके विस्तार में नहीं जायेंगे क्योंकि इस विषय पर साहित्य अन्यत्र उपलब्ध है[53] पर इतना जरूर कहना चाहेंगे कि आम ग्रामीण और विशेषज्ञों के बीच संवादहीनता की खाई को पाटे बिना यह काम नहीं हो सकता। फिलहाल स्थिति यह है कि वैज्ञानिक/इंजीनियर ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को हीन दृष्टि से देखते हैं और उन्हें ले मैन कह कर संबोधित करते हैं। जवाब में ग्रामीण लोग भी इन विशेषज्ञों को संदेह की दृष्टि से देखते हैं और उनकी नीयत पर शक करते हैं।

हम पं० जवाहर लाल नेहरू के उस वक्तव्य से अपनी बात समाप्त करना चाहेंगे जो उन्होंने 1952 में भारत सेवक समाज की स्थापना के समय दिया था। उन्होंने कहा था, ''...कुछ हद तक हम अपने सारे संसाधनों का अनुमान लगा सकते हैं। परन्तु अपने सबसे महत्वपूर्ण संसाधन, मानवीय शक्ति तथा उसको महान उद्देश्यों की ओर प्रेरित करने वाले दर्शन का अनुमान करना मुश्किल है। जब तक हम इन विशाल मानवीय संसाधनों का उपयोग न करें और उनमें वह जोश पैदा न करें जो कि कठिनाइयों को देख कर मुस्कराये तब तक हमें कोई बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं मिलेगी। ...इसलिए हम को अपने लोगों की ओर मुड़ना होगा, उनके पास जाकर उनसे वार्तालाप करना होगा और उनके साथ काम करना होगा। समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हमें मित्र और सहयोगी की तरह काम करना होगा। हो सकता है कि हमें उनको कुछ सिखाना पड़े पर हमें उनसे भी बहुत कुछ सीखना है। अत: हमें उनके पास अपने ज्ञान के अभिमान के साथ नहीं बल्कि पूरी विनम्रता के साथ इस तीव्र आकांक्षा को लेकर जाना होगा कि हम अपने पारस्परिक श्रम से जड़ता के पहाड़ों को झकझोरें और उन्हें तोड़ दें।" क्या हम लोग उनसे भी कुछ सीखेंगे जिनके पास इन परिस्थितियों में जीने का सदियों का अनुभव है और क्या हम अपनी नदियों के साथ मित्र भाव से पेश आयेंगे? एक तरफ तकनीकी क्षमता का अहंकार जिसमें भौगोलिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों की अनदेखी और अकर्मण्यता की चाशनी मिली हुई है और दूसरी तरफ अपनी समस्या, अपनी धरती, अपने संसाधन, अपने अनुभव, अपनी परम्परा और इन सब के अनुरूप अपने विज्ञान के विकास और उपयोग का रास्ता है। समाज और देश के हित में हम किस रास्ते पर चलते हैं, यह निर्णय हमको-आपको करना पड़ेगा।

संदर्भ :

1. Lal, K. N.; Report of the Experts' Committee on Impact of Interlinking of Rivers on Bihar (2003), Water Resources Department, Govt. of Bihar.
2. ibid, Preface of the Report.
3. ibid, Chapter-VI, p-1.
4. ibid.
5. ibid, p. 2-3
6. ibid, p-3
7. Report of the Expert Committee on Impact of Interlinking of Rivers on Bihar, April 2005, Water Resources Department, Govt. of Bihar, Chapter-1, p-11.
8. ibid, p-12
9. ibid, p-10
10. ibid, p-10
11. Theme Paper, Water Resource Department, Govt. of Bihar, Impact of Interlinking of Rivers on Bihar and the State Plans to link the Rivers-2006, p-4.
12. Report of the Experts Committee (2005, op cit, Chapter-IX, p.5
13. ibid, Chapter-III, p. 17-18
14. ibid, Chapter-III, p-7
15. Theme Paper, op cit, p-7
16. राहुल गांधी का वक्तव्य इन्टरनेट के माध्यम से http://onlywaterwatch.blogspot.com/2009/09/rahul-gandhi-opposes-interlinking-of.html
17. जयराम का वक्तव्य इन्टरनेट के माध्यम से http://www.indianexpress.com/news/interlinking-of-rivers-buried-jairam-says-idea-a-disaster/525654/
18. जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार, वार्षिक रिपोर्ट 2009-2010, कार्यक्रम 2010-2011, पृष्ठ-23-25
19. Report of the Committee on Mitigation of Floods by Recharge into Ground Water in the Bagmati/Kamla and Kosi Basins-Water Resources Department, Govt. of Bihar, May 2006.
20. Report of Technical Committee on Flood Control Problems of Bihar (Vol.-1), Water Resources Department, Government of Bihar, February 2008, p-1.
21. ibid, p-2
22. ibid, p-3, para 4-2
23. Report of Technical Committee, ibid.
24. मिश्र, दिनेश कुमार; बगावत पर मजबूर मिथिला की कमला नदी, बाढ़ मुक्ति अभियान तथा घोघरडीहा प्रखंड, ग्राम स्वाराज्य संघ, मधुबनी, अगस्त 2006, पृष्ठ-39-41
25. जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार, वार्षिक रिपोर्ट 2009-2010, कार्यक्रम 2010-2011, पृष्ठ-43-44
26. मिश्र, दिनेश कुमार; दुइ पाटन के बीच में... कोसी नदी की कहानी, लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून, 2006, पृष्ठ-55-82
27. Report of the Technical Committee (2008), op. cit, Para 7.4 & 7.3, p-6
28. ibid, para 7.7, p-6
29. जल-संसाधन विभाग, बिहार सरकार, वार्षिक रिपोर्ट 2009-2010, कार्यक्रम 2010-2011, पृष्ठ-41
30. Road Map for Water Resource Development in Bihar, A Report of the Special Task Force on Bihar, Government of India, New Delhi, May 2009, p-1
31. ibid, p-3
32. आपदा प्रबन्धन विभाग, बिहार सरकार की बाढ़ से क्षति की वार्षिक रिपोर्ट 2009
33. Indian Engineering, Calcutta, December 21, 1912, pp. 350-351.
34. Indian Engineering, Calcutta, May 5, 1928, p-242
35. Townsend, C. Mc D; Transactions, American Society of Civil Engineers, Vol. 193, 1929, p-890
36. सिंह, भोला प्रसाद; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 8 फरवरी 1963, पृष्ठ-32
37. बैठा, डूमर लाल; उपर्युक्त, 13 सितम्बर 1963, पृष्ठ-10-11
38. सिंह, कामेश्वर; लोकसभा की कार्यवाही रिपोर्ट, 19 दिसम्बर 1968, पृष्ठ 305-306
39. मेहता, बैद्यनाथ; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 10 मार्च 1965, पृष्ठ-19
40. Wilcocks, Sir W; Lectures on the Ancient System of Irrigation in Bengal University of Calcutta Lectures Series, 1930.
41. मिश्र, दिनेश कुमार; बन्दिनी महानन्दा, समता प्रकाशन-पूर्वी लोहानीपुर, पटना, 1994, पृष्ठ-75
42. 'मधु', संजय सिंह; से व्यक्तिगत संपर्क
43. बिहार विधान सभा वादवृत्त, 19 जुलाई 1989, पृष्ठ-301, परिशिष्ट-2
44. राय, राम स्वार्थ; पूर्व विधायक से व्यक्तिगत संपर्क
45. कुमार, चन्द्र भूषण; से व्यक्तिगत संपर्क
46. पाण्डेय, केदार; बिहार विधान सभा वादवृत्त, 24 फरवरी 1959, पृष्ठ-7
47. चौधरी, रामस्वार्थ; से व्यक्तिगत संपर्क
48. देवी, राम सुकुमारी, बिहार विधान सभा वादवृत्त, 16 जून 1957, पृष्ठ-32
49. देवी, राम सुकुमारी, उपर्युक्त, 14 नवम्बर 1957, सूखा, पृष्ट-21
50. सिंह, वसिष्ठ नारायण, उपर्युक्त, 25 अप्रैल 1956, पृष्ठ 16-17
51. शुभमूर्ति से व्यक्तिगत संपर्क।
52. पाण्डेय, कवीन्द्र कुमार; से व्यक्तिगत संपर्क।
53. मिश्र, दिनेश कुमार; बोया पेड़ बबूल का-बाढ़ नियंत्रण का रहस्य, 2000, पृथ्वी प्रकाशन, नई दिल्ली।